ज्ञानपीठ मूर्तिदेवी जैन ग्रन्थमाला : अपभ्रंश ग्रन्थांक–१५

महाकवि पुष्पदन्त विरचित

महापुराण

भाग–१

[नाभेयचरिउ पूर्वार्ध]

हिन्दी अनुवाद, प्रस्तावना तथा अनुक्रमणिका स

मूल-सम्पादक
डॉ. पी. एल. वैद्य

अनुवादक
डॉ. देवेन्द्रकुमार जैन, एम. ए., पी-एच. डी.
प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय
इन्दौर (म० प्र०)
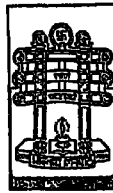
भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन

वीर नि० संवत् २५०५ : वि० संवत् २०३६ : सन् १९७९
प्रथम संस्करण : मूल्य–अड़तीस रुपये

स्व. पुण्यश्लोका माता मूर्तिदेवीकी पवित्र स्मृतिमें
स्व. साहू शान्तिप्रसाद जैन द्वारा संस्थापित
एवं
उनकी धर्मपत्नी स्वर्गीया श्रीमती रमा जैन द्वारा संपोषित

भारतीय ज्ञानपीठ मूर्तिदेवी जैन ग्रन्थमाला

इस ग्रन्थमालाके अन्तर्गत प्राकृत, संस्कृत, अपभ्रंश, हिन्दी, कन्नड़, तमिल आदि प्राचीन भाषाओंमें उपलब्ध आगमिक, दार्शनिक, पौराणिक, साहित्यिक, ऐतिहासिक आदि विविध-विषयक जैन-साहित्यका अनुसन्धानपूर्ण सम्पादन तथा उसका मूल और यथासम्भव अनुवाद आदिके साथ प्रकाशन हो रहा है। जैन-भण्डारोंकी सूचियाँ, शिलालेख-संग्रह, कला एवं स्थापत्य, विशिष्ट विद्वानोंके अध्ययन-ग्रन्थ और लोकहितकारी जैन साहित्य-ग्रन्थ भी इसी ग्रन्थमालामें प्रकाशित हो रहे हैं।

•

ग्रन्थमाला सम्पादक
सिद्धान्ताचार्य पं. कैलाशचन्द्र शास्त्री
डॉ. ज्योतिप्रसाद जैन

•

प्रकाशक
भारतीय ज्ञानपीठ
प्रधान कार्यालय : बी/४५-४७, कॅनॉट प्लेस, नयी दिल्ली-११०००१
मुद्रक : सन्मति मुद्रणालय, दुर्गाकुण्ड मार्ग, वाराणसी-२२१००१

•

स्थापना : फाल्गुन कृष्ण ९, वीर नि० २४७०, विक्रम सं० २०००, १८ फरवरी १९४४

भारतीय ज्ञानपीठ : संस्थापना 1944

मूल प्रेरणा
दिवंगता श्रीमती मूर्तिदेवी जी
मातुश्री श्री साहू शान्तिप्रसाद जैन

अधिष्ठात्री
दिवंगता श्रीमती रमा जैन
धर्मपत्नी श्री साहू शान्तिप्रसाद जैन

JÑĀNAPĪṬHA MŪRTIDEVĪ GRANTHAMĀLĀ : Apabh Grantha No. 15

MAHĀKAVI PUSPADANTA'S

MAHĀPURĀṆA

VOL. I

[NĀBHEYACARIU]

With
Introduction, Hindi Translation and Index of the verses etc.

Text Edited by

Dr. P. L. VAIDYA

Translated by

Dr. DEVENDRA KUMAR JAIN, M A., PH. D.
Professor, Department of Hindi, Govt. Arts
and Commerce College,
INDORE

BHARATIYA JNANPITH PUBLICATION

VĪRA NIRVĀṆA SAṂVAT 2505 : V. SAṂVAT 2036 : A. D. 1979
First Edition : Price Rs. 38/-

12 और 118 आकृति 7 (मार्शल कृत मोहेंजोदड़ो) कायोत्सर्ग नामक योगासनमें खड़े हुए देवताओंको सूचित करती हैं। यह मुद्रा जैन योगियोंकी तपश्चर्यामें विशेष रूपसे मिलती है जैसे मथुरा संग्रहालयमें स्थापित श्री ऋषभदेवकी मूर्तिमें। जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है, ऋषभका अर्थ है बैल जो आदिनाथका लाञ्छन है; मुहर संख्या एफ. जी. एच. फलक दोपर अंकित देवमूर्तिमें एक बैल ही बना है। सम्भव है, यह ऋषभका ही पूर्व रूप हो। यदि ऐसा है तो शैवधर्मकी तरह जैनधर्मका मूल भी ताम्रयुगीन सिन्धु सभ्यतातक चला जाता है। इससे सिन्धु सभ्यता एवं ऐतिहासिक भारतीय सभ्यताके बीचकी खोयी हुई कड़ीका भी एक उभय साधारण सांस्कृतिक परम्पराके रूपमें कुछ उद्धार हो जाता है।' (हिन्दू सभ्यता, पृ. 23-24)

ऋषभ और शिव

डॉ. मुकर्जीके 'उभय साधारण सांस्कृतिक परम्परा' शब्द बड़े महत्त्वके हैं। उभय शब्दसे यदि जैन-धर्मके प्रवर्तक ऋषभ और शैवधर्मके आधार शिवको लें तो हमें उन दोनोंके मध्यमें एक साधारण सांस्कृतिक परम्पराका रूप दृष्टिगोचर होता है : क्योंकि दोनोंमें कुछ आंशिक समता है। ऋषभदेवका चिह्न बैल है जो मोहेंजोदड़ोसे प्राप्त सील नं. 3 से 5 तकपर अंकित है तथा कायोत्सर्ग मुद्रामें स्थित आकृतियोंके साथ भी बना है। उधर शिवके साथ भी नन्दि है। इधर ऋषभदेवका निर्वाण कैलास पर्वतसे माना जाता है उधर शिव भी कैलासवासी माने जाते हैं। डॉ. भण्डारकरने शिवके साथ उमाके सम्बन्धको उत्तरकालीन बतलाया है। इसी तरह महाभारत अनुशासन पर्वमें महादेवके नामोंमें शिवके साथ ऋषभ नाम भी गिनाया है। यथा—

'ऋषभ त्वं पवित्राणा योगिनां निष्कलः शिव.।'

अध्याय 14, श्लोक 18

इस परसे यह शंका हो सकती है कि दोनोंका मूल एक तो नहीं है अथवा एक ही मूल पुरुष दो परम्पराओंमें दो रूप लेकर तो अवतरित नहीं हुए हैं ?

डॉ आर जी. भण्डारकरके मतानुसार 250 ई. के लगभग पुराणोंका पुनर्निर्माण प्रारम्भ हुआ और गुप्तकालतक यह जारी रहा। इस तरह उपलब्ध पुराण गुप्तकालकी रचना हैं। श्रीमद्भागवतमें जो ऋषभावतारका पूरा वर्णन है, उसमें स्पष्ट लिखा है कि वातरशन (नग्न) श्रमणोंके धर्मका उपदेश करनेके लिए उनका जन्म हुआ था। तथा जन्महीन ऋषभदेवजी का अनुकरण करना तो दूर रहा, अनुकरण करनेका मनोरथ भी कोई अन्य योगी नहीं कर सकता, क्योंकि जिस योगबल (सिद्धियों) को असार समझकर ऋषभदेवने स्वीकार नहीं किया, अन्य योगी उन्हींको पानेकी चेष्टा करते हैं।

यह सब जानते और मानते हैं कि भगवान् महावीर अन्तिम जैन तीर्थंकर थे और पुराणोंकी रचना उनके बहुत पश्चात् हुई है। फिर भी उनके पूर्वज ऋषभदेवको नग्न श्रमणोंके धर्मका उपदेष्टा बतलाना यह प्रमाणित करता है कि ऋषभदेव अवश्य ही ऐतिहासिक व्यक्ति होने चाहिए।

जैन महापुराण

कहा जाता है। जिनसेनरचित आदिपुराणमें सैंतालीस पर्व हैं जिनमेंसे आदिके तैंतालीस पर्व जिनसेनरचित हैं। और पुष्पदन्तके आदिपुराणमें सैंतीस सन्धियाँ हैं।

कविने अपने महापुराणकी उत्थानिकामें जिन अनेक दार्शनिकों, कवियों और ग्रन्थकारोंको स्मरण किया है उनमें केवल तीन जैन हैं—अकलंक, चतुर्मुख और स्वयंभू। इनमेंसे अन्तिम दो अपभ्रंश भाषाके महाकवि हैं। इनकी रचनाओंमें आगम सिद्धान्त ग्रन्थ धवल जयधवलका स्मरण भी किया है। यथा

'णऊ बुज्झिउ आयम सद्दधामु, सिद्धंतु धवलु जयधवलु णाम।'

षट्खण्डागम सिद्धान्तपर वीरसेन स्वामीने धवला टीका रची थी और कसायपाहुडपर उन्होंने जयधवला टीका रची थी। इसे उनके शिष्य जिनसेनने पूर्ण किया था। यही जिनसेन संस्कृत महापुराणके रचयिता हैं। अतः धवल जयधवलसे परिचित पुष्पदन्त द्वारा जिनसेनका महापुराण भी देखा होना चाहिए। क्योंकि उनके महापुराण की भी कथावस्तु तो एक ही है और शायद उसीसे उन्हें अपभ्रंशमे महापुराण रचनेकी प्रेरणा मिली हो। किन्तु उन्होंने उसका कोई संकेततक नही किया है।

दोनो पुराणोको तुलनात्मक दृष्टिसे देखनेपर दोनोंके वर्णनक्रममे कोई समानता प्रतीत नही होती। जिनसेनके महापुराणमें पर्व 4 से 11 तक भगवान् ऋषभदेवके पूर्व भवोका वर्णन है। उसके पश्चात् उनके गर्भ, जन्म, दीक्षा आदिका वर्णन है। किन्तु पुष्पदन्तके महापुराणमें प्रारम्भसे ही ऋषभदेवके कल्याणकोका वर्णन है। उसी प्रसंगमें प्रारम्भमें कुलकरोका वर्णन है तथा बीसवी सन्धिसे उनके पूर्वभवोका वर्णन है।

जिनसेनका महापुराण तो जैनोका महाभारत जैसा है। उसमें वर्ण व्यवस्था, कुलाचार, सप्त परमस्थान, तिरपन क्रियाएँ, क्षत्रियधर्म, राजनीति आदिका वर्णन है जो अन्यत्र नही है। पुष्पदन्तके महापुराणमें यह सब नही है। वह तो अपभ्रंश भाषाका एक महाकाव्य है। अपभ्रंश भाषामे भी इतनी सुललित पदावलीपूर्ण सरस रचना हो सकती है जो संस्कृत रचनाके माधुर्यसे प्रतिद्वन्द्विता कर सकती है, यह उसको देखकर ही जाना जा सकता है। उसकी पदावलीमें कादम्बरीके गद्य-जैसा शब्द विन्यास दृष्टिगोचर होता है और वह उससे कम दुरूह नही है। प्राकृत भाषाके पण्डितको भी पुष्पदन्तके इस महाकाव्यको हृदयंगम करनेमे कठिनताका अनुभव हो सकता है। अतः जिनसेनके महापुराणकी अपेक्षा पुष्पदन्तके महापुराणका हिन्दी अनुवाद कठिन है।

महापुराणका सम्पादन एवं हिन्दी अनुवाद

स्व. डॉ. पी. एल. वैद्यके प्रति कृतज्ञता ज्ञापन करना हमारा कर्तव्य है जिन्होने मूल अपभ्रंश ग्रन्थका संशोधन-सम्पादन किया और ससारको इस कृतिके महत्त्वसे परिचित कराया।

डॉ. देवेन्द्रकुमार जैनने इस महाग्रन्थका हिन्दी अनुवाद किया है। अनुवादकी दृष्टिसे सम्पूर्ण ग्रन्थ छह भागोमे प्रकाशनार्थ नियोजित है। इस साहसपूर्ण कार्यके लिए हम उनकी प्रशंसा किये बिना नही रह सकते। अनुवादमे यत्र-तत्र कुछ सैद्धान्तिक त्रुटियाँ रह गयी है। उन्होने अपनी इस कठिनाईको अनुभव करके ही अपने कृतज्ञता-ज्ञापनमें अनुवाद सम्बन्धी त्रुटियोकी सूचना देनेका पाठकोसे अनुरोध किया है। ग्रन्थमें 'भूल-सुधार' पत्रक भी दे दिया गया है। पाठक उससे लाभान्वित होगे।

प्रसन्नताकी बात है कि भारतीय ज्ञानपीठको जो सास्कृतिक-साहित्यिक आधार सस्थापक स्व श्री साहू शान्तिप्रसादजी और उनकी विदुषी धर्मपत्नी स्व. रमा जैनने दिया उसका सवर्धन करनेमे श्री साहू श्रेयासप्रसादजी (साहूजीके ज्येष्ठ भ्राता) और श्री अशोककुमारजी (साहूजीके ज्येष्ठ पुत्र) दत्तचित्त है। भविष्यमें इन सत्प्रयत्नोका प्रवाह अक्षुण्ण रहेगा, ऐसी आशा सारे विद्वज्जगत्की सार्थक होगी।

11 मार्च 1979

कैलाशचन्द्र शास्त्री
ज्योतिप्रसाद जैन

पुरोवाक्

जैन पुराण साहित्यका श्रमण संस्कृतिमे वही महत्त्व है जो वैदिकोत्तर भारतीय संस्कृतिमें रामायण और महाभारतका। महापुराणमें श्रमण संस्कृतिके मूलाधार जैनोके त्रेसठ-शलाका-पुरुषोके चरितोंका वर्णन है। 'प्रथम महापुराण' संस्कृतमें है तथा इसके दो भाग है, पहला आचार्य जिनसेन द्वारा रचित आदिपुराण और दूसरा उत्तरपुराण, जिसके रचयिता आचार्य गुणभद्र है, जो आचार्य जिनसेनके शिष्य है। आदि पुराणमे जैनोके प्रथम तीर्थंकर ऋषभनाथका वर्णन है। वे भोगमूलक समाज व्यवस्था (देव सस्कृति) के समाप्त होने-पर कर्ममूलक संस्कृति (मानव संस्कृति) के नियामक थे।

महाकवि पुष्पदन्तकृत महापुराण अपभ्रंश भाषामें है जो सभी आधुनिक भारतीय भाषाओंकी ऐतिहासिक कड़ी है। यह कृति काव्यानुभूतिके साथ जैन तत्त्वज्ञान और आचारशास्त्रकी प्रामाणिक जानकारी देती है तथा इसकी भाषा परिनिष्ठित है। इसकी शैलीका परवर्ती विकास हिन्दीकी दोहा चौपाईवाली लोकप्रिय शैलीमें देखा जा सकता है। इस ग्रन्थमें कर्ममूलक संस्कृतिका उद्भव इतने काव्यात्मक ढंगसे वर्णित है कि मैं निम्नलिखित शब्दोंको उद्धृत करनेका लोभ संवरण नही कर पा रहा हूँ—

"सुरतरुवरविणासि सुच्छाया
कम्मभूमिमूरुह संजाया।"
(2.14 9)

[कल्प वृक्षोके नष्ट होनेपर सुन्दर छायावाले कर्मभूमिके वृक्ष उत्पन्न हो गये]

महाकवि पुष्पदन्तके महापुराणका सम्पादन डॉ प. ल. वैद्यने तीन खण्डोमें (1939-1942 के बीच प्रकाशित) किया था। यह आश्चर्यकी बात है कि अभीतक इस साहित्यक और सास्कृतिक महत्त्वके ग्रन्थ-का अनुवाद किसी भारतीय भाषामें नही हुआ। यह हर्षकी बात है कि हिन्दी साहित्यके जाने-माने विद्वान् डॉ. देवेन्द्रकुमार जैनने इसका हिन्दीमें अनुवाद किया है। भारतीय ज्ञानपीठ द्वारा सात खण्डोमें प्रकाशित होनेवाले इस महत्त्वपूर्ण और गुरुतर कार्यका यह प्रथम खण्ड है। मुझे आशा और विश्वास है कि पाठक इसका स्वागत करेंगे तथा इसके द्वारा हिन्दी साहित्यमें शोधके नये क्षितिज खुलेंगे और राष्ट्रीय एकताको प्रोत्साहन मिलेगा।

देवेन्द्र शर्मा
कुलपति, इन्दौर विश्वविद्यालय इन्दौर
एव भूतपूर्व कुलपति, गोरखपुर विश्वविद्यालय
गोरखपुर

3-3-1979

स्वर्गीय सेठ जिनवरदासजी फौजदार

होशंगाबाद (मध्य प्रदेश)

की पुण्य स्मृति को

जो, मेरे लिए सम्बन्धी होने से अधिक आत्मीय मित्र थे। सम्पन्न होते हुए भी जिनका निजी एवं सार्वजनिक जीवन सादा और साफ-सुथरा था, जो अड़तालीस वर्ष की वय में ८ फरवरी १९७७ को अचानक, भरा-पूरा परिवार छोड़कर इस दुनिया से विदा हो गये।

—देवेन्द्रकुमार जैन

PREFACE

Out of the three works of the poet Puspadanta, the *Jasaharacaru* was edited by me in 1931, the second edition of which with Hindi translation by the late Dr. Hiralal Jain was recently published. The second work, the *Ṇāyakumāra-cariu*, edited by Dr Hiralal Jain was published in 1933, the second edition with Hindi translation was also recently published. The third work, the *Mahāpurāṇa* is the biggest, and it was edited by me in three volumes, 1937–1941. I spent over ten years, 1932–41 in its preparation. This is its second edition with Hindi translation by Dr. Devendra Kumar Jain, and published by the Bharatiya Jnanpith. I feel particularly happy that the above institution undertook its publication and thus made the work available to scholars. The lovers of Apabhraṁśa literature are very grateful to the Bharatiya Jnanpith

I expected that some young scholars of Apabhraṁśa would come forward to undertake some studies on this epoch-making publication. In 1964, my friend and pupil the late Dr. A. N Upadhye introduced to me a young lady who obtained her doctorate degree on the Desī words in the Mahāpurāṇa. I am sorry I do not remember her name and whereabouts. There is yet another subject, I suggest, relating to an analysis of metres used by the poet in his works which also is a necessity. Let me hope that some young scholar would come forward to undertake the problem.

The reader should note that poet Puspadanta belonged to the Digambara sect of the Jainas, while its editor is neither Digambara nor Śvetāmbara In interpreting the philosophical doctrine, he may have committed some mistakes because his knowledge of Jainism is from books. I, therefore, allow the reader to correct the editor's mistakes, if any, in the critical Notes

Poona,
11th May, 1974

—P. L. Vaidya

कृतज्ञता-ज्ञापन

महाकवि पुष्पदन्त भारतके उन इने-गिने कवियोमें-से एक हैं जिन्होंने अपने सृजनमें मानवी मूल्योकी गरिमाको धूमिल नही होने दिया। वाणी, जिनके हृदयका दर्पण है। उनकी कुल तीन रचनाएँ उपलब्ध है। उनमें-से 'जसहरचरिउ' का सम्पादन १९३१ में डॉक्टर पी. एल वैद्यने किया था। दूसरी रचना 'णायकुमार चरिउ' का सम्पादन १९३३ में स्वर्गीय डॉक्टर हीरालाल जैनने किया। ये दोनो रचनाएँ, दुबारा सम्पादित होकर हिन्दी अनुवाद सहित, हाल हीमें प्रकाशित हुई है, इनके पुनः सम्पादनका श्रेय स्वर्गीय डॉक्टर हीरालाल जैनको है। ये भारतीय ज्ञानपीठसे प्रकाशित है। महापुराण महाकविका मूल और मुख्य काव्य है जिसे हम अपभ्रंश साहित्यका आकर ग्रन्थ कह सकते हैं। इसकी रचनामें कविको लगभग छह वर्ष लगे, जबकि सम्पादनमें डॉक्टर पी एल. वैद्यको (१९३१ से ४२ तक) दस वर्ष। उनके सतत अध्यवसाय और अपभ्रंशके प्रति समर्पित भावनासे महापुराण, तीन जिल्दोंमें १९३९ से १९४२ के बीच प्रकाशित हुआ। लेकिन खेद है कि ३८ वर्षकी लम्बी अवधिमें भी, किसी भी भारतीय आर्यभाषामें इसका अनुवाद नही हुआ। १९५० के बाद भारतीय विश्वविद्यालयोमें अपभ्रंशके अध्यापनका जितना विस्तार हुआ, अपभ्रंश भाषा और साहित्यके वस्तुनिष्ठ अनुसन्धानका उतना ही संकोच हुआ।

'नाभेयचरिउ' महापुराणका एक भाग है जो आचार्य जिनसेनके आदिपुराणके समकक्ष है, शेष भागको हम उत्तरपुराण कह सकते हैं। इस प्रकार अपभ्रंशमे जैनोके समस्त शलाका-पुरुषोंके चरित्रोका काव्यात्मक भाषामें वर्णन कर पुष्पदन्तने बहुत बड़ा काम किया। उन्होने सिद्ध कर दिया कि कवि अपनी प्रतिभा और विराट् संवेदनाके बलपर किसी भी भाषामें महान् चरित्रोकी अवतारणा कर सकता है। १९३७ के आस-पास उत्तरपुराणके एक खण्ड (८१ से ९२वी सन्धि तक) हरिवंशपुराणका सम्पादन, जर्मन विद्वान् लुडविग आल्सडोर्फने किया था, (देवनागरी लिपि संस्करण, अँगरेजी भूमिकाके साथ) परन्तु वह भारतमें नही छप सका। महाकवि स्वयम्भूके पउमचरिउके हिन्दी अनुवाद '(जो भारतीय ज्ञानपीठसे प्रकाशित है) के बाद मैंने अनुभव किया कि हिन्दी अनुवादके बिना न केवल महापुराणका, प्रत्युत समूचे अपभ्रंश साहित्यका वस्तुपरक मूल्याकन नही हो सकता। अपभ्रंश भाषाके स्वरूप, प्रकृति, रचनाप्रक्रिया, देशी शब्द प्रयोग आदिके विषयमें सही विश्लेषणके लिए पुष्पदन्तका महापुराण ऐतिहासिक पृष्ठभूमि प्रस्तुत करता है। सही और प्रामाणिक अनुवादके अभावमें एक हिन्दी विद्वान्ने 'समीरइ' का अर्थ किया है, हवा में। (कृष्ण हवामें बछड़ेको उछालते हैं?) पूरा प्रसंग है—

> "महिस सिलंबउ हरिणा धरियउ
> ण करणिबन्धणाउ णीसरिउ
> दोहउ दोहणत्थु समीरइ
> मुइ मुइ माहव्व कीलिउं पूरइ"

कृष्णकी बाललीलाका चित्रण है कि "भैंसके बच्चेको हरिने पकड़ लिया, वह उनके हाथकी पकडसे नही छूट सका, दोहन जिसके हाथमें है ऐसा दुहनेवाला (ग्वाल) कृष्णको प्रेरित करता है कि हे माधव! छोडो-छोड़ो, खेल हो चुका।" यहाँ समीरइ क्रिया है, वर्तमानकाल अन्य पुरुष का एक वचन। समीरका अधिकरणका एक वचन नही।

१९७५ मे मैंने भारतीय ज्ञानपीठको महापुराणके अनुवादका प्रस्ताव भेजा, जिसे स्वीकार कर लिया गया। यह अनुवाद उसीका प्रतिफल है। अनुवाद करनेमें (खासकर अपभ्रंश काव्यके अनुवादमें) सबसे बड़ी कठिनाई अपभ्रंशके शब्दो और रचना प्रक्रिया को पहचाननेकी है, अपभ्रंश कवियोकी साकेतिक कथन-पद्धति भी बहुत बड़ी बाधा है, मूल अर्थ तक पहुँचनेमें। मैंने अनुवादको मूलगामी, सरल और मुहावरेदार बनानेका भरसक प्रयास किया है, परन्तु फिर भी यह दावा मैं नही करता कि वह एकदम निर्दोष है। पाठकोसे निवेदन है कि उनके ध्यानमें जो त्रुटियाँ आयें, वे उनकी सूचना मुझे देने का कष्ट करें, उनका कष्ट निष्फल नही होगा, वह अनुवाद को शुद्ध बनानेमें सहायक होगा।

महापुराणके अनुवादकी कुल पाँच जिल्दें हैं। पहली सामने है। दूसरी जिल्द छप रही है। इस अवसरपर मैं एक प्रकारकी रिक्तताका अनुभव करता हूँ। भारतीय ज्ञानपीठके संस्थापक साहू दम्पती (श्री शान्तिप्रसादजी और श्रीमती रमारानी) अब हमारे बीच नही हैं। मैं उन्हें भारतीय ज्ञानपीठकी स्थापनाके दिनसे जानता हूँ, मिला कभी नही। श्रीमती रमाजी ज्ञानपीठकी प्रत्येक गतिविधिमें अभिरुचि रखती थी। मूर्तिदेवी ग्रन्थमालाके सम्पादक श्रद्धेय डॉ. हीरालाल जैन और डॉ. ए. एन. उपाध्येका भी निधन हो गया। कालके आगे किसीकी नही चलती। आवागमन संसारका शाश्वत धर्म है। परन्तु उन्होने अपभ्रंश भाषा और साहित्यके क्षेत्रमें जो कार्य किया है वह जहाँ उनका सच्चा स्मारक है, वही हमारे लिए पथ-प्रदर्शक भी। इस अवसरपर उक्त विशिष्ट व्यक्तित्वोका पुण्यस्मरण करना मैं अपना कर्तव्य समझता हूँ।

ग्रन्थमालाके वर्तमान सम्पादक श्रद्धेय पण्डित कैलाशचन्द्रजी और डॉ. ज्योतिप्रसादजीका भी मैं अनुगृहीत हूँ कि उन्होने प्रस्तुत अनुवादको स्वीकृति दी। आदरणीय भाई लक्ष्मीचन्द्रजी जैनके प्रति भी मैं हृदयसे अनुगृहीत हूँ, उनकी रचनात्मक पहलके बिना, इसका इतने जल्दी छपना सम्भव नही था। इसके सयोजन और प्रकाशनमें क्रमश. सर्वश्री डॉ. गुलाबचन्द्रजी और सन्तशरण शर्माने जिस निष्ठाका परिचय दिया उनके लिए वे भी धन्यवाद और प्रशंसाके पात्र हैं।

अन्तमें श्रद्धेय डॉ. पी एल. वैद्यके प्रति अपनी कृतज्ञता निवेदित करता हूँ कि उन्होने महापुराणके अपने सम्पादित संस्करणका हिन्दी अनुवाद करनेकी अनुमति दी। भूमिकामें उन्होने इसके लिए अपनी प्रसन्नता भी व्यक्त की है। मुझे भी इस बातकी प्रसन्नता और गर्व है कि महाकवि पुष्पदन्तके महापुराणका प्रथम अनुवाद देशकी सम्पर्क-भाषा हिन्दीमें हुआ। इससे डॉ. वैद्यकी यह आशा भी पूरी होगी कि विद्वान् पुष्पदन्तके साहित्यके विविध पक्षोपर शोध-कार्य करें।

[illegible] उषानगर,
इन्दौर

—देवेन्द्रकुमार जैन

INTRODUCTION

[To the Old Edition]

The Mahāpurāṇa or Tisaṭṭhimahāpurisaguṇālaṃkāra is the earliest and the largest of the three known works of Puspadanta in Apabhraṃśa. Of the two smaller works, the Jasaharacariu was edited by me and published in the Kāranjā Jaina Series, Vol. I, 1931. The Ṇāyakumāracariu was edited by Professor Hiralal Jain and published in the Devendrakīrti Jaina Series, Vol. I, Kāranjā, 1933. I am now presenting to the reader the first volume of Puspadanta's Mahāpurāṇa comprising the Ādipurāṇa, and hope to complete the work in two more volumes. When I announced in my introduction to Jasaharacariu that I had undertaken the edition of the Mahāpurāṇa I did not realise how enormous the task before me was, and what financial and other difficulties the editor and the publishers might be involved into, but I am glad, after six long years of waiting, to offer to the linguists and the students of the Jain culture the first volume of this great work, and now I can assure the reader that if no further difficulties arise, I would offer the rest of the work within the next two or three years' time, so that all the three extant Apabhraṃśa works of Puṣpadanta will have been brought to light.

This Volume contains the first thirty-seven Samdhis out of the total of one hundred and two of the entire work. This portion is popularly known as the Ādiparva or Ādipurāna, and describes the lives of Risaha or Rsabha, the first Tīrthaṃkara, and of Bharata, the first Cakravartin. The second volume will begin with the thirty-eighth saṃdhi and end with the eightieth, and the third volume will cover all the remaining samdhis. Dr. Ludwig Alsdorf of Hamburg, Germany, has just published in Roman characters a portion of the Mahāpurāṇa under the title "Harivaṃśapurāṇa, Ein Abschnitt aus der Apabhraṃśa Welthistorie, Mahāpurāna Tisaṭṭhimahāpurisaguṇālaṃkāra von Puspadanta, Hamburg, 1936", which contains samdhis 81–92 of the work. This portion will be re-edited in Devanāgarī characters and incorporated in the third volume, so that the entire work will now be made available to the public in a uniform edition. Besides as we now possess more Mss. than Dr. Alsdorf was then able to get, improvement on his work may be possible.

The text of the entire Mahāpurāṇa will cover approximately 2000 pages of the royal size, of which the present volume contains 600. It is clear that the whole of the Mahāpurṇā could not be conveniently issued in one volume. I therefore propose to include in each volume an Introduction, dealing chiefly with the problems which concern the text of that volume only, reserving larger questions arising out of entire text for the Introduction to the third and the last volume. Moreover, Introductions to Jasaharacariu and Ṇāyakumāracariu already contain some information about the author, the language of his works, metres etc., which the reader is presumed to possess.

THE CRITICAL APPARATUS

The text of the Ādipurāṇa or of the present volume of the Mahāpurāṇa is based upon the following five Mss. fully collated.

1. G This Ms. consists of 503 leaves measuring 11" × 5". It has 8 lines to a page and about 29 letters to a line. It was written at Ghoghā Mandir, is dated 1575 of the Saṃvat era, or 1441 of the Śaka era, corresponding to 1518 A D It uses prsṭhamātrās and has brief marginal gloss. It is a well-preserved Ms., belongs to the Balātkāra Gaṇa Mandir at Kāranjā, Berar, and bears No. 524 of their list (No. 7752 of the Catalogue). It was secured for my use by Professor Hiralal Jain. It begins :—॥ ओं नमः सिद्धेभ्यः ॥ सिद्धिवहूमणरंजणु etc., and ends :—इय महापुराणे तिसट्ठिमहापुरिसगुणालंकारे महाकइपुप्फयंतविरइए महाभव्वभरहाणुमण्णिए महाकव्वे सगणहररिसहणाहभरहणिव्वाणगमणं णाम सत्ततीसमो परिच्छेओ समत्तो ॥ ३७ ॥ आइयं पव्वं समत्तं ॥ शुभ भवतु संघस्य ॥ स्वस्ति श्री सं० १५७५ वर्षे शाके १४४१ प्र० दक्षणायने ग्रीष्मऋतौ द्वि... ष्ठवदि ७ रवी घोघामदिरे श्रीमूलसंघे सरस्वतीगच्छे बलात्कारगणे श्रीमत्कुंदकुंदाचार्यान्वये भट्टारकश्रीपद्मनदिदेवाः तत्पट्टे भट्टारकश्रीदेवेन्द्रकीर्तिदेवास्तत्पट्टे भट्टारकश्रीविद्यानन्दिदेवास्तत्पट्टे भ० श्रीमल्लिभूषणदेवास्तत्पट्टे भ० श्रीलक्ष्मीचद्र तच्छिष्य मुनीश्रीनेमिचद्र। देशावूंबडज्ञातीयगाधी श्रीपति तस्यागना बाई सभू तयोः पुत्र गाधी कारुआ गाधी साता। तेषा मध्ये बा० सभू तया लिखाप्य प्रदत्तमिदमादिपुराणशास्त्रं मुनिश्रीनेमिचद्रेभ्यः ॥ शुभं भवतु ॥ श्रीरस्तु ॥ ग्रं० ८००० ॥ भ० लक्ष्मीचंद्रेभ्य प्रदत्तं ॥ चिरं नंदतु ॥ शुभ भूयात् ॥

This is one of the best and the most authentic of the Mss. of the work that I possess. My text therefore is based mainly on this Ms. There have been a few—indeed very few—occasions when I had to adopt a reading other than the one given in it, but I feel confident that there were sufficient reasons for doing so on every such occasion.

2. K. This is a paper Ms. containing 732 pages measuring 16" × 4". Of these 732 pages, 288 are covered by the Ādipurāṇa or Ādiparva as it is called there. Each page contains 8 lines with about 50 letters to a line. The Ms. is carefully written and has copious marginal gloss. The words of the text are separated by a vertical stroke between words to be separated. Occasional

use of pṛṣṭhamātrās is noticed. The Ms. is decorated with thick red lines indicating the margin and there are three dots in red ink of the size of a four-anna silver coin, two in margins and one in the centre of the page where a square blank space is left. It seems that these dots represent the holes of a palm leaf Ms. from which this Ms. may have been copied. I secured this Ms. through my friend and pupil, Professor A. N. Upadhye of the Rajaram College, Kolhapur, who obtained it from his friend Mr. Tatyasaheb Patil of Nandni, near Kolhapur. It begins :—॥ ओ नमो वीतरागाय ॥ सिद्धिवहूमणरंजणु etc., and the Ādipurāṇa portion ends :—इय महापुराणे तिसट्ठिमहापुरिसगुणालंकारे महाकइपुप्फयंतविरइए महाभव्वभरहाणुमण्णिए महाकव्वे सगणहररिसहनाहभरहणिव्वाणगमणं णाम सत्ततीसमो परिच्छेउ समत्तो ॥ आइपव्वं समत्तं ॥. It adds in a different hand : भ० श्रीवीरचंद्रास्तत्पट्टे भ० लक्ष्मीचंद्रास्तत्पट्टे भ० ज्ञानभूषणास्तत्पट्टे भ० श्रीप्रभाचंद्राणां पुस्तकं ॥ The Uttarapurāṇa portion ends :—इय महापुराणे तिसट्ठिमहापुरिसगुणालकारे महाभव्वभरहाणुमण्णिए महाकव्वे वीरजिणिदणिव्वाणगमणं णाम दुत्तरसयपरिच्छेयाणं महापुराण समत्तं ॥ छ ॥ ग्रंथाग्र ॥ श्लोकसंख्या २०००० (?) ॥ शुभं भवतु ॥ We find on the final blank leaf :—भ० लक्ष्मीचंद्रास्तत्पट्टे भ० श्रीवीरचद्रास्तत्पट्टे भ० श्रीज्ञानभूषणास्तत्पट्टे भ० श्रीप्रभाचद्राणा पुस्तकं ॥ It adds further in a different hand : भ० श्रीवादिचंद्रास्तत्पट्टे भ० श्रीमहीचंद्रास्तत्पट्टे भ० श्रीमेरुचंद्राणां पुस्तकं ॥

The entire work seems to be written in one hand, in fact this is the only Ms. of the whole of the Mahāpurāṇa, i. e., Ādipurāṇa and Uttarapurāṇa, written in one hand, that I have so far discovered. This Ms. seems to preserve the text as in G described above, but seems to be corrected to the version represented by the M B P group of Mss., in a different hand. This Ms. thus represents a mixed text. It is however easy to decipher what the original reading might have been. The gloss in the margin is more copious than in the Ṭippaṇa of Prabhācandra, (for which see below). There is no indication of the age of the Ms. although its original, probably a palm-leaf Ms , represents the older of the two recensions of our text. The corrections made therein to make it agree with a later recension of our text represented by the M B P group are made in a different hand, perhaps after about three generations of monks who owned it.

3. M. This Ms. consists of 470 leaves measuring $11'' \times 4\frac{1}{2}''$. It has 8 lines to a page and about 33 letters to a line. It is written in Mathurā, in 1883 of the Saṃvat era, i. e. in 1826 A. D. It is written in good modern hand and has some gloss in the margin, but not so copious as in K. or in the Ṭippaṇa of Prabhācandra. It belongs to the Deccan College Collection, now deposited at the Bhandarkar Oriental Research Institute, Poona, and bears No. 1050 of 1887–91 It begins :—ओ नमो वीतरागाय ॥ सिद्धिवहूमणरंजणु etc. and ends :—इय महापुराणे तिसट्ठिमहापुरिसगुणालंकारे महाकइपुप्फयंतविरइए महाभव्वभरहाणुमण्णिए महाकव्वे सगण-

हरिसहणाहभरहणिव्वाणगमणं णाम सत्ततीसमो परिच्छेओ समत्तो ॥ संधि ३७ ॥ संवत् १८८३ का मित्ती वैशाख शुक्ल ३ बुधवासरे ॥ शुभं भवतु ॥ लिखितं श्रीमथुरापुरीमध्ये ब्राह्मण स्यामलाल ॥ श्रीजिनधर्मप्रतिपालक श्रीमहाराजाधिराजश्रीकुमरजी चपारामजी पठनार्थं वा परोपकारार्थं ॥ शुभं दीर्घायुर्भवति पुत्रवृद्धिर्भवति ॥ श्रीजिनधर्मप्रवर्तनं करोति ॥ श्री आदिनाथेभ्यो नमः ॥ समाप्तोय आदिपुराण ॥ शुभ ॥

4. B. This Ms. consists of 306 leaves measuring 11″ × 5″. It has 9 lines to a page and about 33 letters to a line. It belongs to the Balātkāra Gana Mandir at Kāranjā, Berar, and bears No. 523 of their list (No. 7753 of the Catalogue) It was secured for my use by Prof. Hiralal Jain of Amraoti. It was written at Yoginīpura, i. e , Delhi, in 1659 of the Samvat era, i. e., 1602 A. D The Ms. is worn out, and its margins are decayed. It is an indifferently written Ms., omits portions mechanically while copying from its original, and has no gloss at all. I was at one time inclined to stop collating it, but did not do so for the simple reason that I thought I might find in it a version not influenced by the marginal gloss. I was however disappointed to see that the Ms. was very indifferently prepared. It begins·—ओं नमो वीतरागाय ॥ सिद्धिवहूमणरंजणु etc., and ends —इय महापुराणे तिसट्ठिमहापुरिसगुणालंकारे महाकइपुप्फयंतविरइए महाभव्वभरहाणुमण्णिए महाकव्वे सगणहररिसहनाहभरहनिव्वाणगमणं णाम सत्ततीसमो परिच्छेओ समत्तो ॥ संधि ३७ ॥ आदिपुराण खंडद्वयेन जात ॥ श्लोकमानेनाष्टसहस्राणि अंकतो ग्रंथ ८००० ॥ अक्षरमात्रपदस्वरहीनं व्यंजनसंधिविवर्जितरेफं ॥ साधुभिरेव मम क्षमितव्य को न विमुह्यति शास्त्रसमुद्रे ॥ योगिनीपुरदुर्गस्थाने जलालदीनसाहिअकबरराज्ये अथ संवत्सरेस्मिन् श्रीविक्रमादित्यराज्ये संवत् १६५९ पौषसुदि ४ बुधवासरे श्रीमूलसंघे बलात्कारगणे सरस्वतीगच्छे कुंदकुंदाचार्यान्वये भट्टारकश्रीसिंघकीर्तिदेवा....... .....

5. P. This Ms. is incomplete and has lost a portion at the end. The available portion of it consists of 305 leaves measuring 11½″ × 5″. It has 9 lines to a page and about 30 letters to a line. It belongs to the Deccan College Collection, now deposited at the Bhandarkar Oriental Research Institute, Poona, and bears No. 370 of 1879–80. It seems to be a very old Ms , edges of leaves being worn out. There is a profuse marginal gloss. The prsthamātrās are used. The available portion ends with a part of the third kaḍavaka of the 28th saṃdhi (see foot-note 8 on this kaḍavaka on page 433 of our edition). This Ms. preserves a recension which is metrically correct, i. e., it uses [illegible] and ओ as they are required for their correct metrical value almost uniformly. I found it therefore very convenient to follow it for this purpose, and hence have not recorded variants like पणविवि and पणवेवि [illegible] represents the metrically correct form. It begins :—स्वस्ति ॥ ओ [illegible] etc., and ends with चामर° in XXVIII. 3. 11.

In addition to these five Mss. fully collated, I came across three more Mss. of the Mahāpurāṇa. Of these one is deposited in the Sena Gana Mandir [illegible] (No. [illegible] of Rai Bahadur Hiralal's Catalogue of Mss, in C. P. &

Berar). I examined it on the spot during my visit to that place in 1927. This Ms. was got copied at her own cost by a lady ancestor of the famous Chaware family of Kāranjā and presented by her to the Bhaṭṭāraka 'of the temple. It is dated Wednesday the 8th of the dark half of Kārtika of 1591 of the Saṃvat era, i. e., 1534 A.D. As I could not secure it for full collation, I prepared some trial collations from it, but as they did not reveal any difference in the variants other than those found in M B P, I dropped the idea of incorporating them in my apparatus. The two other Mss. belong to the Deccan College collection, now deposited at the Bhandarkar Oriental Research Insitute, Poona. One of them bears No. 1140 of 1891–96. It is incomplete and carelessly written. It contains the first 19 saṃdhis only, and is dated the 5th day of the bright half of Jyeṣṭha of 1848 of the Saṃvat era, i. e., 1791 A. D. I made some trial collations from this Ms. but found the variants agreeing with those of M B P and hence did not collate it further. The other Ms. from the Bhandarkar Oriental Research Institute bears No. 1139 of 1891–95. It is dated Wednesday, the 10th of the bright half of Phālguna of 1925 of the Saṃvat era. i. e., 1868 A. D. This Ms. consists of three parts written in three different hands and on two different kinds of paper. The first part consists of 142 leaves and contains the text of the first sixteen saṃdhis. The second part contains 177 leaves which are numbered from 1 to 177, and not from 143. The third part contains the remaining 33 pages, numbered from 178, but written by a different person. I made some trial collations from this Ms. also, but did not find variants different from those found in M B P, and hence did not collate it further. This Ms. puts dots at places where the writer was unable to decipher his original either because it was illegible or damaged. Besides, these last named Mss. are considerably modern and could, on that account too, be ignored.

By far the most important aid for fixing the text and preparing the critical apparatus was obtained from the Ṭippaṇa of Prabhācandra (T in the Critical Apparatus). I secured a Ms. of this Ṭippaṇa on the Ādipurāṇa portion from the Deccan College collection, now deposited at the Bhandarkar Oriental Research Institute, Poona, which bears No. 563 of 1876–77. This Ms. measures 13¼" × 5½", has 51 leaves, with 13 lines to a page and 45 letters to a line. The script used is peculiar in that words like द्वितीय are written like द्वितय There is no indication as to its age, but from appearance it seems to belong to the 16th century A. D. It begins :—ओं नमो वीतरागाय ॥ प्रणम्य वीरं विबुधेन्द्र- संस्तुतं निरस्तदोषं वृषभं महोदयम् । पदार्थसंदिग्धजनप्रबोधकं महापुराणस्य करोमि टिप्पणम् ॥१॥ [illegible] सिद्धिरनन्तचतुष्टयप्राप्तिः [illegible]. It ends:—इति [illegible]

समासा ॥ समस्तसंदेहहरं मनोहरं प्रकृष्टपुण्यं प्रभव जिनेश्वरम् । कृतं पुराणे प्रथमे सुटिप्पणं सुखावबोधं निखिलार्थदर्पणम् ॥ इति श्रीप्रभाचन्द्रविरचितमादिपुराणटिप्पणकं पंचासश्लोकहीणं सहस्रद्वयपरिमाणं परिसमाप्ता ॥ शुभ भवतु ॥

I also examined a Ms of Prabhācandra's Tippaṇa on the Uttarpurāṇa which I obtained, through the kindness of Professor Hiralal Jain, from Master Motilal Sanghi of Jaipore This Ms. measures 12″ × 5½″, has 57 leaves with 13 lines to a page and about 31 letters to a line. It begins:-ओं नमः सिद्धेभ्यः ॥ वंमहो परमात्मन. । It ends .—श्रीविक्रमादित्यसंवत्सरे वर्षाणामशीत्यधिकसहस्रे महापुराणविषमपदविवरणं सागरसेनसैद्धान्तान् परिज्ञाय मूलटिप्पणका चालोक्य कृतमिदं समुच्चयटिप्पणं अज्ञपातभीतेन श्रीमद्बला ....रगणश्रीसंघाचार्यसत्कविशिष्येण श्रीचन्द्रमुनिना निजदोर्दण्डाभिभूतरिपुराज्यविजयिन. श्रीभोजदेवस्य ॥१०२॥ इति उत्तरपुराणटिप्पणकं प्रभाचन्द्राचार्यविरचितं समाप्तम् ॥ अथ संवत्सरेस्मिन् श्रीनृपविक्रमादित्यगताब्द. सवत् १५७५ वर्षे भाद्रवासुदि । बुद्धदिने । कुरुजागलदेशे । सुलितानसिकंदरपुत्र सुलितानइब्राहिमु राज्यप्रवर्तमाने श्रीकाष्ठासंघे मथुरान्वये पुष्करगणे । भट्टारकश्रीगुणभद्रसूरिदेवा. । तदाम्नाये जैसवाल्लु चौ. टोडरमल्लु । इदं उत्तरपुराणटीका लिखापितं ॥ सुभ भवतु ॥ मांगल्यं ददाति लेखकपाठकयोः ॥ This Ms. is dated Samvat 1575, i. e. 1578 A. D

On examining the colophon of the author of the Ṭippaṇa we learn some very important and interesting particulars about the manner of its composition. We learn that the Tippaṇa was composed in the year 1080 of the Vikrama era, i e, 1023 A D., i. e, within sixty years of the completion of the Mahāpurāṇa by Puspadanta, we also learn that king Bhoja of Dhārā was then ruling in Malwa; that Prabhācandra consulted the works of Sāgarasena for his Tippana, that he also consulted the orginal Tippaṇa, probably of Puspadanta himself (मूलटिप्पणका चालोक्य), and prepared a collected Tippaṇa (समुच्चयटिप्पणं) on the Mahāpurāṇa, embodying the original Tippaṇa. An author's writing a Tippana on his own work may appear somewhat strange, but it is not altogether impossible, for I had an occasion to examine Mss written by the authors of the 16th century in their own hand bearing also a gloss in their own hand, and I feel certain that these authors must have borrowed the mentality of writing a gloss on their own works from their forefathers I therefore think that Puspadanta must have written a short gloss on the difficult words of his work, this gloss must have been amplified by Prabhācandra, and that the process of amplification must have continued still further down. The gloss found in Mss.

tion of the date, 1080 of the Vikrama era, i. e., 1023 A. D. and of the reign of King Bhoja in our Ms., we must regard that reference to a subsequent copy of the work, perhaps by Prabhācandra himself. Our Ms. of the Tippana again does not contain the stanza तत्त्वाधारमहापुराण etc. Prabhācandra might have added this stanza in a subsequent copy of his work at a later date, which assumption may also explain the reference to king Jayasiṃhadeva.

The critical apparatus described above divides the Mss. into two groups, one comprising G and K, and the other M, B and P, not only because of the general agreement of the variants noted, nor on account of additions or omissions to the original text in a particular group (see page 514), but also on the strength of the agreement of the *Praśasti stanzas* found at the beginning of several saṃdhis. I have already alluded to this topic in my Introduction to Jasaharacariu (page 21), but I think it is necessary to discuss it in detail as it throws considerable light on the Ms. tradition of the works of Puspadanta and also the principle on which I have grouped the Mss. and valued them.

THE PRAŚASTI STANZAS OF THE MAHĀPURĀṆA[1]

When I had an occasion to study the manuscript material for my edition of Jasaharacariu, I discovered that certain Mss. contained, at the commencement of a saṃdhi, stanzas in praise of the poet's patron, Nanna, while others did not record them. In the course of the collation of Mss. I also discovered the fact that those Mss. which contained these praśasti stanzas agreed very closely in one set of variants, while those Mss which did not contain these stanzas agreed very closely in equally another set of variants On further examination I found that those Mss. which did not give the praśasti stanzas presented an older recension of the text, while those that contained these stanzas presented a later and amplified recension. In the case of the Jasaharacariu the amplified passages were located and their author and his date found out. As that interpolator, who lived four centuries after the poet, had nothing to do with the poet's patron, I was convinced that the poet himself must have composed these praśasti stanzas, and was forced to advance a hypothesis that the poet himself, with the help he obtained from his patron, must have got made two or three sets of copies of his work, in one of which he wrote, at leisure, at first in the margin perhaps, some stray stanzas glorifying his patron, while other set or sets had already gone out of his hand without the addition of these stanzas This hypothesis, briefly enunciated on

1. Some of the Praśasti stanzas are put together by P. [illegible] Nathuram Premi [illegible] on Puspadanta in Jain Sāhitya Saṃśodhaka, Vol II, No 1, 1923.

page 21 of the Introduction to Jasaharacariu, enabled me then to fix up that Mss. S and T of the work presented an older version. I had there an occasion to test the correctness of the hypothesis by referring to one of the Praśasti stanzas of the Mahāpurāṇa, viz.,

दीनानाथधनं सदाबहुजनं प्रोत्फुल्लवल्लीवनं
मान्याखेटपुरं पुरंदरपुरीलीलाहरं सुन्दरम् ।
धारानाथनरेन्द्रकोपशिखिना दग्धं विदग्धप्रियं
क्वेदानीं वसतिं करिष्यति पुन श्रीपुष्पदन्तः कविः ॥

which puzzled the historian in respect of the fixing of the date of the composition of the Mahāpurāṇa, in as much as the plunder of Mānyakheṭa, a well-ascertained historical event of 972 A. D., was referred to by the poet in the middle of the work in the above mentioned stanza found in the Kāranjā Ms. at the beginning of the 50th saṃdhi, while the completion of the Mahāpurāṇa in the Krodhana year, i. e., in 965 A. D. was an equally certain event. I found that the stanza did not occur in my Ms. K. This fact coupled with the absence of praśasti stanzas in my best Mss. of the Jasaharacariu enabled me to advance the hypothesis set out above, which further examination of a large number of Mahāpurāṇa Mss. fully corraborates. The Ṇāyakumāracariu of Puṣpadanta, which was then being prepared for the Press by my friend Professor Hiralal Jain, did not contain any praśasti stanzas in any of his Mss., and hence I could not test the accuracy of my hypothesis there. I therefore proceeded to collate the praśasti stanzas occurring at the beginning of the saṃdhis of the Mahāpurāṇa. I have not so far discovered a Ms. of the Mahāpurāṇa which has no praśasti stanzas . at the same time I have found that Mss. do not agree in giving them all. I have however found that groups of Mss. agree amazingly in giving a stanza at a particular place or omitting it altogether. A smaller number of stanzas was found in my Mss. G and K of the Ādipurāṇa, while the remaining Mss. gave a much larger number of them. I therefore regard that G and K preserve an older, if not the oldest, recension of the text of the Ādipurāṇa. I think that these stanzas do not form an integral part of the text and hence they are relegated to notes in the Critical Apparatus. I however believe that they were composed by the poet himself as nobody could be interested in glorifying Bharata to such extent. I also believe that the poet composed these stanzas long after he had completed the composition of the Mahāpurāṇa. At any rate the stanza दीनानाथधनं etc. he could not have written before 972 A. D., i. e., seven years after the completion of the Mahāpurāṇa. As the question of these stanzas is important for the manuscript tradition and as they throw considerable light on the relation of

the poet with his patron Bharata and allied topics, I give them all arranged in groups, i. e., (a) those found in G and K; (b) those found in other Mss. of the Ādipurāṇa; (c) those found in Poona, Kāranjā and K of the Uttarapurāṇa portion; and (d) those found exclusively in the Jaipore Ms. I have also numbered them consecutively for easy reference in the next section.

(a) 1. (i) आदित्योदयपर्वतादुरुतराच्चन्द्रार्कचूडामणे-
रा हेमाचलतः कुबेरनिलयादा सेतुबन्धाद् दृढात् ।
आ पातालतलादहीन्द्रभवनादा स्वर्गमार्गं गता
कीर्तिर्यस्य न वेद्मि भद्र भरतस्याभाति खण्डस्य च ।

This stanza states that the fame of Bharata, the patron and friend of Khaṇḍa, i. e., the poet himself, has pervaded the entire universe. The stanza is found at the commencement of the 3rd saṃdhi in G and K, but at the beginning of the 2nd saṃdhi in the remaining Mss. (See foot-note on page 18 and also note the variants.)

2. (ii) सौभाग्यं शुचिता क्षमा भुजबलं शौर्यं वपुः सुन्दरं
सत्य सर्वजनोपकारकरणं वृत्तं स्वकं सन्मतम् ।
हे विद्वन् भरतस्य भूतिजननं विद्यार्थिनामाशु य-
स्यैकैकं गुणमङ्गमूर्जितधिया पुंसामचिन्त्यं भुवि ॥

This stanza mentions some of the qualities which Bharata the poet's patron, possessed. This stanza is found exclusively in G and K at the beginning of the fourth saṃdhi.

3. (iii) भ्रूलीला त्यज मुञ्च सगतकुचद्वन्द्वादिक वक्षसा
मा त्वं दर्शय चारुमध्यलतिका तन्वङ्गि कामाहृता ।
मुग्धे श्रीमदनिन्द्यखण्डसुकवेर्बन्धुर्गुणैरुन्नतः
स्वप्नेऽप्येष पराङ्गना न भरत. शौचोदधिर्वाञ्छति ॥

This stanza states that Bharata, the poet's friend and patron, is so virtuous that he would never think of the wife of another person. The stanza is found at the beginning of the 5th saṃdhi in G and K, and in other Mss. also at the same place. (See footnote on page 72 and also note the variants.)

4. (iv) एको दिव्यकथाविचारचतुरः श्रोता बुधोऽन्यः प्रियः
एकः काव्यपदार्थसंगतमतिश्चान्यः परार्थोद्यतः ।
एकः सत्कविरन्य एष महतामाधारभूतो विदां
द्वावेतौ सखि पुष्पदन्तभरतौ भद्रे भुवो भूषणम् ॥

This stanza brings out the characteristics of the poet and his patron, both of them adorning the earth, The stanza is found in G and K at the beginning of the eighth saṃdhi, but in all others at the beginning of the 9th saṃdhi.

5 (v) जगं रम्मं हम्मं दीवओ चन्दविम्वं
घरित्ती पल्लंको दो वि हत्था सुवत्थं ।
पिया णिद्दा णिच्चं कव्वकीला विणोओ
अदीणत्त चित्त ईसरो पुप्फदन्तो ॥

This stanza states that the poet Puṣpadanta is a king in as much as he has the nobility of mind: the whole world is his fine mansionhouse, the moon the lamp, the ground his bed-stead, his arms his clothing, sleep his beloved and poetry his pastime. The stanza is found in G and K, and in all other Mss. at the beginning of the tenth saṃdhi, and also at the beginning of the fiftieth saṃdhi of the Uttarapurāna in Poona, Jaipore and Kāranjā Mss.

6. (vi) णाइन्दसुरिन्दणरिन्दवन्दिया जणियजणमणाणन्दा ।
सिरिकुसुमदसणकइमुहणिवासिणी जयइ वाईसी ॥

7. (vii) तन्त्रीवाद्यैरनिन्द्यैर्वरकविरचितैर्गद्यपद्यैरनेकैः
कान्तं कुन्दावदातं दिशि दिशि च यशो यस्य गीतं सुरौघैः ।
काले तृष्णाकराले कलिमलमलितेऽप्यद्य विद्याप्रियो गा
सोऽयं संसारसारः प्रियसखि भरतो भाति भूमण्डलेऽस्मिन् ॥

Of these the first stanza glorifies the poetic genius of Puṣpadanta and the second glorifies Bharata, the poet's patron, for his appreciation of learning in the Kali age. These stanzas are found in G and K at the beginning of 30th saṃdhi and in MBP and others of this group at the beginning of 29th saṃdhi.

8. (viii) प्रतिगृहमटति यथेष्टं वन्दिजनैः स्वैरसङ्गमावसति ।
भरतस्य वल्लभासौ कीर्तिस्तदपीह चित्रतरम् ॥

The stanza notes that it was strange on the part of Bharata still to cherish love for fame, conceived as his wife, when she wanders wantonly in every house and freely dallies with bards. This stanza is found in G and all Mss. of the other group, but is missing in K. The want of agreement in G and K in this respect, however, strengthens my hypothesis that these stanzas do not form an integral part of the text, but were composed by the poet at a later stage and added in the margin of some of the copies of his work that he still had with him.

The agreement existing between G and K regarding the location of the above-mentioned praśasti stanzas led me to believe that they formed a group by themselves. This belief of mine was confirmed by a general agreement of the variants and also by non-inclusion of a long passage, found in Mss of the other group and noted by me in the Critical Apparatus on page 514 of the printed text. Further, the fact that the number of praśasti stanzas in the other group is much larger than in this group indicates that this group of

Mss. represents an older recension than the other one. Occasional disagreement between G and K is due to the fact that K represents a mixed version, the text in it being corrected on the model of the text in the MBP group at numerous places. I have noted all such places in the Critical Apparatus where I was able to read the original and the corrected variants, but at places the pigment or the ink was applied rather thick which made it difficult for me to decipher the Ms. correctly.

The second group of Mss. in my Critical Apparatus is represented by M, B and P. Besides these, I had an occasion to consult three more Mss, one from the Seṇa Gaṇa Bhāṇḍāra at Kāranjā and two from the Bhandarkar Oriental Research Institute, Poona. All the Mss. of this group contain the Praśasti stanzas, (i) and (iii-viii) given above. Over and above this they also contain the following ;—

(b) 9. (i) बलिजीमूतदधीचिषु सर्वेषु स्वर्गितामुपगतेषु ।
संप्रत्यनन्यगतिकस्त्यागगुणो भरतमावसति ॥
(Found at the beginning of the third saṃdhi.)

10 (ii) आश्रयवशेन भवति प्राय. सर्वस्य वस्तुनोऽतिशयः ।
भरताश्रयेण संप्रति पश्य गुणा मुख्यता प्राप्ताः ॥
(Found at the beginning of the fourth saṃdhi.)

11. (iii) श्रीवाग्देव्यै कुप्यति वाग्देवी द्वेष्टि संततं लक्ष्म्यै ।
भरतमनुगम्य साम्प्रतमनयोरात्यन्तिक प्रेम ॥
(Found at the beginning of the sixth saṃdhi.)

12. (iv) हंहो भद्र प्रचण्डावनिपतिभवने त्यागसंख्यानकर्ता
कोऽयं श्यामः प्रधानः प्रवरकरिकराकारबाहु॰ प्रसन्नः ।
धन्यः प्रालेयपिण्डोपमधवलयशोधौतधात्रीतलान्तः
ख्यातो बन्धु॰ कवीना भरत इति कथं पान्थ जानासि नो त्वम् ॥
(Found at the beginning of the seventh saṃdhi.)

13 (v) मातर्वसुधरि कुतूहलिनो ममैत-
दापृच्छत. कथय सत्यमपास्य शाठ्यम् ।
त्यागी गुणी प्रियतम. सुभगोऽतिमानी
किं वास्ति नास्ति सदृशो भरतार्यतुल्यः ॥
(Found at the beginning of the eighth saṃdhi,)

14. (vi) सूर्यात्तेज (?) गभीरिमा जलनिधेः स्थैर्यं सुराद्रेर्विधोः
सौम्यत्वं कुसुमायुधात्सुभगता त्याग बलेः संभ्रमान् ।
एकीकृत्य विनिर्मितोऽतिचतुरो धात्रा सखे साम्प्रतं
भरतार्यो गुणवान् सुलब्धयशसः खण्ड॰ (?) कवेर्वल्लभः ॥
(Found at the beginning of the eleventh saṃdhi.)

15. (vii) तीव्रापद्दिवसेषु बन्धुरहितेनैकेन तेजस्विना
संतानक्रमतो गतापि हि रमा कृष्टा प्रभोः सेवया ।
यस्याचारपदं वदन्ति कवयः सौजन्यसत्यास्पदं
सोऽयं श्रीभरतो जयत्यनुपम. काले कलौ सांप्रतम् ॥

(Found at the beginning of the thirteenth saṃdhi and also at the beginning of the thirty-fourth saṃdhi.)

16. (viii) केलासुब्भासिकन्दा धवलदिसिगउग्गिण्णदन्तङ्कुरोहा
सेसाहीबद्धमूला जलहिजलसमुब्भूयपिण्डीरवत्ता ।
बम्भण्डे वित्थरन्ती अमयरसमयं चन्दविम्बं फलन्ती
फुल्लन्ती तारथोहं जयइ नवलया तुज्झ भरहेस कित्ती ॥

(Found at the beginning of the fourteenth saṃdhi.)

17. (ix) त्यागो यस्य करोति याचकमनस्तृष्णाङ्कुरोच्छेदनं
कीर्तिर्यस्य मनीषिणां वितनुते रोमाञ्चचर्चं वपुः ।
सौजन्यं सुजनेषु यस्य कुरुते प्रेम्णोऽन्तरा निर्वृतिं
श्लाघ्योऽसौ भरतः प्रभुर्वत भवेत्काभिर्गिरां सूक्तिभिः ॥

(Found at the beginning of the fifteenth saṃdhi. It is also found at the beginning of the 95th saṃdhi of the Uttarapurāṇa in K, and in Poona and Jaipore Mss.)

18. (x) बलिभङ्गकम्पिततनु भरतयश सकलपाण्डुरितकेशम् ।
अत्यन्तवृद्धिगतमपि भुवनं वि (वं ?) भ्रमति तच्चित्रम् ॥

(Found at the beginning of the seventeenth saṃdhi. It is also found at the beginning of the 102nd saṃdhi of the Uttarapurāṇa in K, and in Poona and Jaipore Mss.)

19. (xi) शशधरबिम्बात्कान्तिस्तेजस्तपनाद्गभीरतामुदधेः ।
इति गुणसमुच्चयेन प्रायो भरतः कृतो विधिना ॥

(Found at the beginning of the eighteenth saṃdhi. It is also found at the beginning of the thirty-ninth saṃdhi of the Uttarapurāṇa in K, and in Poona and Jaipore Mss.)

20. (xii) श्यामरुचि नयनसुभगं लावण्यप्रायमङ्गमादाय ।
भरतच्छलेन संप्रति कामः कामाकृतिमुपेतः ॥

(Found at the beginning of the nineteenth saṃdhi.)

21. (xiii) फणिनि विमुह्यतीव मेचकरुचि कचनिचयेषु योषिता-
मलकिषु मूर्च्छतीव हसतीव तमालतलेषु पुञ्जितम् ।
मदमुचि माद्यतीव लोलालिनि वरकरिगण्डमण्डले
दिशि दिशि लिम्पतीव पिबतीव निमीलयतीव खङ्गणे (?) ॥

(Found at the beginning of the twentieth saṃdhi.)

22. (xiv) यस्य जनप्रसिद्धमत्सरभरमनवमपास्य चारुणि
प्रतिहतपक्षपातदानश्रीरुरसि सदा विराजते ।

वसति सरस्वती च सानन्दमनाविलवदनपङ्कजे
स जयति जयतु जगति भरतेश्वर सुखमयममलमङ्गलः ॥
(Found at the beginning of the twenty-first saṃdhi).

23. (xv) मदकरिदलितकुम्भमुक्ताफलकरभरभासुराननां
मृगपतिनादरेण यस्या धृतमनघमनर्घमासनम् ।
निर्मलतरपवित्रभूषणगणभूषितवपुरदारुणा
भारतमल्ल सास्तु देवी तव बहुविधमम्बिका मुदे ॥
(Found at the beginning of the twenty-second saṃdhi).

24. (xvi) अङ्गुलिदलकलापमसमद्युति नखनिकुरुम्बकर्णिकं
सुरपतिमुकुटकोटिमाणिक्यमधुव्रतचक्रचुम्बितम् ।
विलसदतनुप्रतापनिर्मलजलजन्मविलासि कोमलं
घटयतु मङ्गलानि भरतेश्वर तव जिनपादपङ्कजम् ॥
(Found at the beginning of the twenty-third saṃdhi).

25 (xvii) हिमगिरिशिखरनिकरपरिपाण्डुरधवलितगगनमण्डलं
पुलकमिवातनोति केतकतरुवरतरुकुसुमसंकरे ।
विकसितफणिफणासु सुरसरितो मणिरुचिगतमधः क्षिते-
रिदमतिचित्रकारि भरतेश्वर जगतस्तावकं यशः ॥
(Found at the beginning of the twenty-fourth saṃdhi).

26. (xviii) उन्नतातिमनुमात्रपात्रता (?) भाति भद्र भरतस्य भूतले ।
काव्यकीर्तिघण्टारवो गृहे यस्य पुष्पदन्तो दिशागजः ॥
(Found at the beginning of the twenty-fifth saṃdhi).

27. (xix) घनधवलताश्रयाणामचलस्थितिकारिणा मुहुर्भ्रमताम् ।
गणनैव नास्ति लोके भरतगुणानामरीणा च ॥
(Found at the beginning of the twenty-sixth saṃdhi).

28 (xx) गुरुधर्मोद्भवपावनमभिनन्दितकृष्णार्जुनगुणोपेतम् ।
भीमपराक्रमसारं भारतमिव भरत तव चरितम् ॥
(Found at the beginning of the twenty-seventh and thirty-seventh saṃdhis).

29. (xxi) मुखनलिनोदरसद्मनि गुणधृतहृदया सदैव यद्वसति ।
चोज्जमिदमत्र भरते शुक्लापि सरस्वती रक्ता ॥
(Found at the beginning of the twenty-eighth saṃdhi).

30 (xxii) बम्भण्डाहुण्डलखोणिमण्डलुच्छलियकित्तिपसरस्स ।
खण्डेण समं समसीसियाइ कइणो न लज्जन्ति ॥
(Found at the beginning of the thirty-second saṃdhi).

31. (xxiii) विनयाङ्कुरखातवाहनादौ नृपचक्रे दिवमीयुषि क्रमेण ।
भरत तव योग्यसज्जनानामुपकारो भवति प्रसक्त एव ॥

(Found at the beginning of the thiry-third saṃdhi. It is also found at the beginning of the fortieth saṃdhi of the Uttarapurāṇa in Poona and Jaipore Mss., but is missing in K).

32. (xxiv) इति भरतस्य जिनेश्वरसमर्थैकशिरोमणेर्गुणान्वक्तुम् ।
मातुं च वार्धितोयं चुलुकै' कस्यास्ति सामर्थ्यम् ॥

(Found at the beginning of the thirty-fifth samdhi).

It will thus be seen that the MBP group of Mss. which I fully collated for my work and at least three more Mss., one from Seṇa Gaṇa Bhāṇḍāra at Kāranjā and two from Poona, contain as many as twenty-four more stanzas at exactly the same point in the Ādipurāṇa portion. Some of these are repeated in some Mss. of the Uttarapurāna, no doubt, still the evidence strongly supports me to group them together. The variants in the text that they give justify the above view.

The above conclusion led me to see if similar groups of Mss. existed for the Uttarapurāṇa also. Unfortunately the number of the available Mss of the Uttarapurāṇa is very small, viz., four. Of these one is my K, the second comes from the Bhandarkar Institute, Poona, the third from Jaipore and the fourth from the Balātkāra Gana Bhāṇḍāra at Kāranjā. On examination I found that Poona and Kāranjā Mss. agree in putting certain stanzas at a place, particularly those four that are given at the beginning of the 50th samdhi, while K omits these very stanzas there and the Jaipore Ms. distributes them over four different samdhis from 50th onwards. I give below these stanzas with their location in the four Mss. mentioned above.

(c) 33. (i) वरमकरोदपारतरविवरमहिकिरणेन्दुमण्डलं
यदपि च जलधिवलयमधिलंघ्य विधेस्तदन्तरं दिशः ।
विगलितजलपयोदपटलद्युति कथमिदमन्यथा यश.
प्रसरदमादमल्लकदनाभारत भुवि भरत साम्प्रतम् ॥

(Found in the Poona and Kāranjā Mss. at the beginning of the 41st and the 47th saṃdhis. The Jaipore Ms. has it only at the 41st. K does not give it anywhere).

34 (.ii) भास्वानेककलावतोऽस्य च भवेद्यन्नाम तन्मङ्गलं
सर्वस्यापि गुरुर्बुध. कविरयं चक्रे अयं च (?) क्रम. ।
राहुः केतुरय द्विषामिति दधत्साम्यं ग्रहाणा प्रभुः
संप्रत्योदय (?) मातनोति भरतः सर्वस्य तेजोधिकः ॥

(Found in the Poona and Kāranjā Mss. at the beginning of the 50th along with two following and जगं रम्मं हम्मं etc (see stanza 5 above). The Jaipore Ms. gives this stanza alone at the 50th, and K does not give it anywhere)

35. (iii) सया सन्तो वेसो भूसणं सुद्धसीलं
सुसंतुट्ठं चित्तं सव्वजीवेसु मेत्ती ।
मुहे दिव्वा वाणी चारुचारित्तभारो
अहो खण्डस्सेसो केण पुण्णेण जाओ ॥

(Found in the Poona and Kāranjā Mss. at the 50th, the Jaipore Ms. gives it at 49th, and K does not give it anywhere).

36. (iv) दीनानाथधनं सदाबहुजन प्रोत्फुल्लवल्लीवनं
मान्याखेटपुरं पुरंदरपुरीलीलाहरं सुन्दरम् ।
धारानाथनरेन्द्रकोपशिखिना दग्धं विदग्धप्रियं
क्वेदानीं वसतिं करिष्यति पुनः श्रीपुष्पदन्तः कविः ॥

(Found in the Poona and Kāranjā Mss. at the 50th, in the Jaipore Ms. at 52nd, and K does not give it anywhere).

37. (v) अत्र प्राकृतलक्षणानि सकला नीतिः स्थितिश्छन्दसा-
मर्थालंकृतयो रसाश्च विविधास्तत्त्वार्थनिर्णीतयः ।
किं चान्यद्यदिहास्ति जैनचरिते नान्यत्र तद्विद्यते
द्वावेतौ भरतेशपुष्पदशनौ सिद्धं ययोरीदृशम् ॥

(Found in all the four Mss. at the beginning of the 59th saṃdhi).

38. (vi) बन्धुः सौजन्यवार्धेः कविकुलधिषणाध्वान्तविध्वंसभानुः
प्रौढालंकारसारामलतनुविभवा भारती यस्य नित्यम् ।
वक्त्राम्भोजानुरागक्रमनिहितपदा राजहंसीव भाति
प्रोद्यद्गम्भीरभावा स जयति भरते धार्मिके पुष्पदन्तः ॥

(Found in all the four Mss. at the beginning of the 63rd saṃdhi).

39. (vii) आखण्डोड्डमरारवं डमरुकं चण्डीशमाश्रित्य यः
कुर्वन् काममकाण्डताण्डवविधिं डिण्डीरपिण्डच्छवेः ।
हसाडम्बरडिण्डमण्डललसद्भागीरथीनायकं
वाञ्छन्नित्थमहं कुतूहलवती खण्डस्य कीर्तिः कृते. ॥

(Found in all the four Mss. at the beginning of the 64th saṃdhi).

40. (viii) आजन्मं (?) कवितारसैकधिषणासौभाग्यभाजो गिरा
दृश्यन्ते कवयो विशालसकलग्रन्थानुगा बोधतः ।
किं तु प्रौढनिरूढगूढमतिना श्रीपुष्पदन्तेन भोः
साम्यं बिभ्रति (?) नैव जातु कविता शीघ्रं ततः प्राकृते ॥

(Found in all the four Mss. at the beginning of the 65th saṃdhi).

41 (ix) यस्येह कुन्दामलचन्द्ररोचिःसमानकीर्तिः ककुभां मुखानि ।
प्रसाधयन्ती ननु बंभ्रमीति जयत्वसौ श्रीभरतो नितान्तम् ॥

42 (x) पीयूषसूतिकिरणा हरहासहार-
कुन्दप्रसूनसुरतीरिणिशक्रनागाः ।

क्षीरोदशेषबलसत्तम (?) हंस (?) चेव
किं खण्डकाव्यधवला भरतः स यूयम् (?) ॥

(Both these stanzas are found in all the four Mss. at the beginning of the 66th saṃdhi).

43. (xi) इह पठितमुदारं वाचकैर्गीयमानं
इह लिखितमजस्रं लेखकैश्चारु काव्यम् ।
गतवति कविमित्रे मित्रता पुष्पदन्ते
भरत तव गृहेऽस्मिन् भाति विद्याविनोदः ॥

(Found in all the four Mss. at the beginning of the 67th saṃdhi).

44. (xii) चञ्चच्चन्द्रमरीचिचञ्चुरचुराचातुर्यचक्रोचिता
चञ्चन्ती विचटच्चमत्कृतिकविः प्रोद्दामकाव्यक्रियाम् ।
अञ्चन्ती त्रिजगन्ति कोमलतया बान्धुर्यधुर्या रसैः
खण्डस्यैव महाकवेः सभरताश्रित्यं कृतिः शोभते ॥

(Found in all the four Mss. at the beginning of the 68th saṃdhi).

45. (xiii) लोके दुर्जनसंकुले हतकुले तृष्णाकुले नीरसे
सालंकारवचोविचारचतुरे लालित्यलीलाधरे ।
भद्रे देवि सरस्वति प्रियतमे काले कलौ साप्रतं
क यास्यस्यभिमानरत्ननिलयं श्रीपुष्पदन्तं विना ॥

(Found in all the four Mss. at the beginning of the 80th saṃdhi).

The following three stanzas are found only in the Jaipore Ms.

(d) 46. (i) सोऽयं श्रीभरतः कलङ्करहितः कान्तः सुवृत्तः शुचि
सज्ज्योतिर्मणिराकरो प्लुत इवानर्घ्यो गुणैर्भासते ।
वंशो येन पवित्रतामिह महामन्त्राह्वयः प्राप्तवान्
श्रीमद्वल्लभराज―कटके यश्चाभवन्नायकः ॥

(Found at the beginning of the 42nd saṃdhi).

47. (ii) वापीकूपतडागजैनवसतीस्त्यक्त्वेह यत्कारितं
भव्यश्रीभरतेन सुन्दरधिया जैनं सुराणा (पुराणं ?) महत् ।
तत्कृत्वा प्लवमुत्तमं रविकृतिः (?) संसारवार्धेः सुखं
कोऽन्यत् (?) स्वसहसो ? स्ति कस्य हृदयं तं वन्दितुं नेहते ॥

(Found at the beginning of the 45th saṃdhi).

48. (iii) संजुडियजाणुकोप्परगीवाकडिवन्धणावयवो ।
अणुहवइ वेरियं तुज्झ जं पावइ लेहओ दुक्खं ॥

(Found at the beginning of the 58th saṃdhi).

It will be seen from the account of these praśasti stanzas that even the Uttarapurāṇa Mss. preserve three different recensions, K representing the oldest, the Poona and Kāranjā Mss. the middle and the Jaipore Ms. the

youngest. Leaving the question of the genealogy of the Mss. of the Uttarapurāṇa for the time being, I present below in genealogical form the relation of the different Mss. of the Ādipurāṇa :—
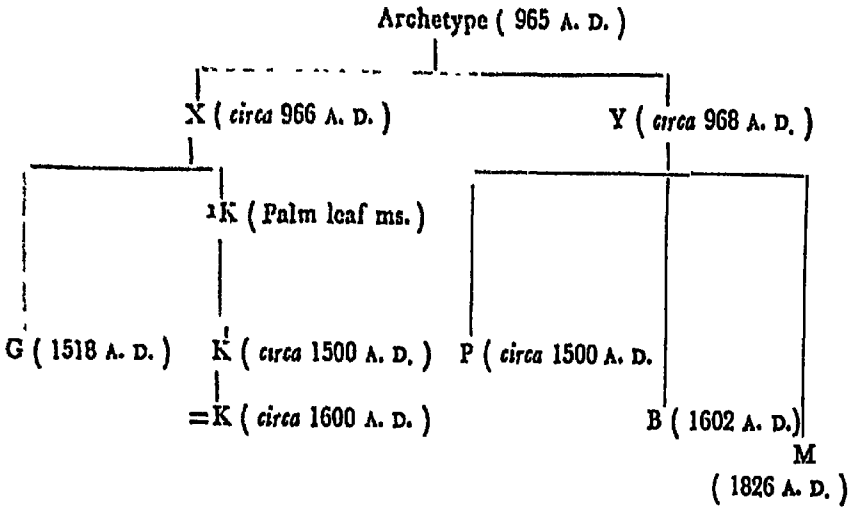
BHARATA, THE PATRON OF PUSPADANTA

There are in all 48 praśasti stanzas found in the Mss. of the Mahāpurāṇa. Of these stanzas, six, viz., 5, 6, 16, 30, 35 and 48 are in Prakrit and the remaining are in Sanskrit. The Prakrit of these stanzas is grammatically correct and graceful, but we cannot say the same about the Sanskrit of the same. Prakritisms occur there pretty often (e. g. चोज्जं in 29). The subject matter of these stanzas covers topics such as homage to the goddess of learning (वाईसी, 6) and Ambikā (23), the poet Puṣpadanta himself (5, 30, 36, 39, 40, 45), the poet and his Mahāpurāṇa (37), the relation between Bharata, the patron, and the poet (1, 4, 14, 26, 35, 37, 38, 42, 43, 44), and the glorification of Bharata, the poet's patron (remaining stanzas). Bharata is mentioned and glorified in the body of the work (I. 3–8. XXXVII. 3–5, CII. 13) and also in the Ghattā lines and the puṣpikā at the end of each saṃdhi (महाभव्वभरहाणुमण्णिए महाकव्वे) of the Mahāpurāṇa. There are three stanzas in Sanskrit in some Mss. of the Jasaharacariu glorifying Nanna, Bharata's son and successor in office, and a long praśasti at the end of the Ṇāyakumāracariu (page 112) gives some details about the same. On the strength of the information supplied by these it is possible to construct a short biography of Bharata to whose generosity the world owes this epic poem in Apabhraṃśa.

1. The asterics indicate conjectural Mss.

We have now an excellent account of the *Rāṣṭrakūṭas and their Times* by Dr. A. S. Altekar (Poona, 1934). We find that a few pages (115–123) are devoted there to the political events of Kṛṣṇa III (939–968 A. D.). We also have there a section dealing with education and literature (Chapter XIV) of the period. And yet, we do not find any reference in the book to Bharata, the minister of Kṛṣṇa III, nor do we find any reference to the Poet. On the contrary we read on page 412 a remark to the effect that there is hardly any output of Prakrit Literature during the period. Puṣpadanta, under the patronage of Bharata and his son Nanna, composed three works in Apabhraṃśa, which covering as they do over 2000 pages of the size of the present volume, cannot be easily ignored, nor can Bharata, the patron of learning, be neglected, who constantly urged on the poet to make the best use of his gifts. It will not therefore be out of place to construct the story of the life of Bharata, the forgotten patron of Prakrit Literature, from out of the material like the references in the works of Puṣpadanta and the praśasti stanzas.

Kṛṣṇa III is known in Puṣpadanta's works by three names : Tuḍiga, Suhatuṅgarāya (Sk. Subhatungarāja) कृष्णराज and Vallabhanṛpa. He came to the throne in 939 A. D., and ruled up to 968 A. D. In this year he was succeeded by his younger brother Khoṭṭigadeva. It was during the reign of Khoṭṭigadeva, in 972 A. D., that Mānyakheta, the capital of the later Rāṣṭrakūṭas, was plundered by the king of Dhārā. Bharata was the minister of Krsṇa III. Nanna, Bharata's son, also, is mentioned as a minister of Suhatuṅgarāya, i e., Krsna III. Bharata however was still living when Puṣpadanta's Mahāpurāṇa was completed, i. e., upto 965 A D. As Kṛṣṇa III died in 968 A. D., we have to suppose that Bharata must have died between 965 and 968 A D., so that his son, Nanna, could succeed his father by 968 A. D. After the death of Bharata, Nanna extended his patronage to Puspadanta and induced him to write Jasaharacariu and Ṇāyakumāracariu.

Bharata seems to have come from the family of Koṇḍella gotra (Sk. Kauṇḍinya). This was a rich family and held the office of ministers (महामत्ताहुय. वंश, 46), but had become poor. There are references which indicate that Bharata regained the lost wealth of his family by devoted service to his master (संतानक्रमतो गतापि हि रमा कृष्टा प्रभो सेवया). His grandfather's name was Annaiya or Annayya. His father's name was Aiyaṇa or Airaṇa and his mother was called Devi. Bharata had no brother or near relative (बन्धुरहितेन, 15). He was married to Kundavvā and had seven sons, viz., Devalla, Bhogalla, Naṇṇa, Sohana, Guṇavamma, Dangaiya and Santaiya. Ṇaṇṇa is mentioned as the son of Kundavvā and it is not unlikely that Bharata had more wives

than one. All the seven sons of Bharata were still living in 965 A. D., while Ṇaṇṇa is stated to have succeeded his father already in 968 A. D. We have therefore to presume that his two elder brothers died following the death of their father or that Ṇaṇṇa had some special qualification to supercede his brothers in the office of his father.

Bharata is described by Puspadanta as possessing dark complexion (श्यामः प्रधान., 12, श्यामरुचि, 20) He had a beautiful figure and is likened to the god of love (20). He had a good physique (भारतमल्ल, 23), and held the office of a general in the army of Kṛsṇa III (वल्लभराज....कटके यश्चाभवन्नायकः, 46). He also held the portfolio of the minister of charities in the royal household (प्रचण्डावनिपतिभवने त्यागसंख्यानकर्ता, 12). He had a gentle dress and courteous manners and speech (सया सन्तो वेसो, मुहे दिव्वा वाणी, 35). He was fond of learning (विद्याप्रिय., 7). He combined in him wealth and learning (श्रीरुरसि, सरस्वती वदनपङ्कजे, 22). It was impossible to count his virtues as it is impossible to count the waters of the sea (11 ; 12) He had a pure character (स्वप्नेप्येषपराङ्गना न वाञ्छति, 3). He was in fact a rendzvous of all virtues, most striking among them being his generosity. Poems were being recited in his house, copyists prepared copies of works Thus, since Puspadanta became the friend of Bharata, his house became a meeting place of the learned (43). He was always generous to the needy and so held a place amongst generous persons of the past such as Bali, Jīmūtavāhana, Dadhīcı, Vınayānkura and Śātavāhana (9, 31). His fame travelled far and wide (1). He had countless virtues as he had countless enemies (27), who experienced the same miseries as copyists experienced while toiling (48). One graceful act on his part was to induce Puṣpadanta to write the Mahāpurāṇa and to offer him the necessary help for this purpose. In fact, instead of spending his wealth in building wells, lakes, ponds and Jaın temples, he used ıt on the preparation and propagation of the Jain epic with the help of which he would cross the ocean of saṃsāra with comfort (47)

The Poet Puspadanta came of a Brahmin family of Kāśyapa gotra. His father's name was Keśava and mother's name was Mugdhādevī. Both of them were devotees of Siva, but were later converted to Jaınism. Puspadanta had a dark complexion and a lean body. He does not seem to have married He was in extreme poverty, had neither property nor house, and yet he possessed a lord's noble mind (5). He seems to have been in the court of a king named Bhairava or Vīrarāja, and wrıtten a poem on him, but being insulted there, left his court, and came to Mānyakheṭa, modern Malkhed, which was then the capital of the Rāṣṭrakūṭas, and very prosperous (36). There he

stayed in a grove of trees, outside the town; two citizens, Indrarāja and Annaiya by name, saw him there and persuaded him to go to the house of Bharata where he would have a good reception. The poet was at first unwilling because of his bitter experiences of the wicked world in the past. He was however assured by these men that Bharata was a man of a different type, that he was so kind and noble. The poet thereupon went to him, had a good reception, as assured. After a few days' rest Bharata requested him to write the Mahāpurāṇa so that his poetic gifts could be rightly used It was in this way that the poet began his Mahāpurāṇa in the house of Bharata in the Siddhārtha year of the Śaka era, i. e. in 959 A. D. The poet was out of mood after he had completed his Ādipurāṇa, i. e., the first thirty-seven saṃdhis, and halted there for s me time. The goddess of learning appeared before him and encouraged him to resume the work. Bharata also induced him to complete the work. The poet thereupon finished his work in the Krodhana year of the Śaka era, i e., in 965 A D. He seems to have been highly pleased with his performance, and out of satisfaction and ju t pride he wrote—

अत्र प्राकृतलक्षणानि सकला नीतिः स्थितिश्छन्दसा-
मर्थालंकृतयो रसाश्च विविधास्तत्त्वार्थनिर्णीतयः ।
किं चान्यद्यदिहास्ति जैनचरिते नान्यत्र तद्विद्यते
द्वावेतौ भरतेशपुष्पदशनौ सिद्धं ययोरीदृशम् ॥ (37)

in the same spirit which prompted Vyāsa of the Mahābhārata to say—

यदिहास्ति तदन्यत्र यन्नेहास्ति न तत्क्वचित् ।

For the Mahapurāṇa is as sacred to the Jains as the Mahābhārata is to the Hindus The poet attributed the successful completion of the work as much to his genius as to the generosity of Bharata. His fame as poet travelled far and wide as that of Bharata for his generosity. It appears that Bharata died within three years of the completion of the Mahāpurāṇa, Nanna succeeded him in the office, extended his patronage to Puspadanta and asked him to write two more poems in Apabhraṃśa, Jasaharacariu and Ṇāyakumāracariu. The glory of the Rāṣṭrakūṭas, however, soon came to the end. Their capital, Mānyakheṭa, was plundered in 972 A. D., and the poet became destitute once more (क्वेदानीं वसतिं करिष्यति पुनः श्रीपुष्पदन्तः कविः , 36)

WHAT IS A MAHĀPURĀṆA ?

The Digambara Jains hold that their sacred literature consisting of Pūrvas and Aṅgas is lost, they do not therefore accept the authority of the Canon of the Śvetāmbaras. The Canon, according to the Digambaras, consists of four divisions : (i) Prathamānuyoga, lives of Tīrthaṃkaras

and other great men of the faith; in other terms, the kathā literature; (ii) Karaṇānuyoga, description of the geography of the universe; (iii) Caraṇānuyoga, rules of conduct for monks and laymen; and (iv) Dravyānuyoga, philosophical categories or philosophy. According to this classification works like the present text fall under the category of Prathamānuyoga.

The Mahāpurāṇa is a term peculiar to the Jain literature and means a great narrative of the ancient times. There are purāṇas or old tales in the Jain Literature, but they narrate the life of a single individual or holy person. The Mahāpurāṇa, on the other hand, describes the lives of sixty-three prominent men of the Jain faith. Jinasena uses the term Mahāpurāṇa as a synonym for Triṣaṣṭilakṣaṇa, while Hemacandra calls his work on the theme as Triṣaṣṭiśalākāpuruṣacarita, i. e., the lives of sixty-three promiment men (Salākāpuruṣa). Puṣpadanta uses the term Mahāpurāṇa to alternate with Tisaṭṭhimahāpurisaguṇālaṃkāra, Adoration of the Virtues or qualities of Sixty-three Great Men. The term purāṇa is defined in the Hindu Literature as follows :—

सर्गश्च प्रतिसर्गश्च वंशो मन्वन्तराणि च ।
वंशानुचरितं चैव पुराणं पञ्चलक्षणम् ॥

The purāṇa deals with the five topics, viz., the creation, the dissolution or secondary creation, dynasties, epochs between the Manus and the history of the dynasties. This definition is applicable to our Mahāpurāṇa as well; for we do find the five topics mentioned above in our work. Still it is interesting to see how the Jains themselves interpret the term. Jinasena who is a predecessor of Puṣpadanta in the writing of a Mahāpurāṇa says :—

तीर्थेशामपि चक्रेशां हलिनामर्धचक्रिणाम् ।
त्रिषष्टिलक्षणं वक्ष्ये पुराणं तद्द्विषामपि ॥
पुरातनं पुराणं स्यात्तन्महन्महदाश्रयात् ।
महद्भिरुपदिष्टत्वान्महाश्रेयोनुशासनात् ॥
कविं पुराणमाश्रित्य प्रसृतत्वात्पुराणता ।
महत्त्वं स्वमहिम्नैव तस्येत्यन्यैर्निरुच्यते ॥
महापुरुषसंबन्धि महाभ्युदयशासनम् ।
महापुराणमाम्नातमत एतन्महर्षिभिः ॥ I. 20-23.

"I shall recite the narrative of sixty-three ancient persons, i. e. of the Tīrthaṃkaras, of the Cakravartins, of Baladevas, of half-Cakravartins (i. e. Vāsudevas) and of their opponents (i. e., of Prati-Vāsudevas) The work is called 'purāṇa' because it is a narrative of the ancients. It is called 'great' because it relates to the great (Persons), or because it is narrated by the

great (sages) or because it teaches (the way to) great bliss. Other writers say that, because it originated with the old poet it is called 'purāṇa' and it is called 'great' because of its intrinsic greatness. The great sages have called it a Mahāpurāṇa because it relates to great men and because it teaches the bliss." A Ṭippaṇa on I. 9. 3 of our text seems to make a distinction between *aihāsa* and *purāṇa* and says that *aihāsa* means the narrative of a single individual while *purāṇa* i. e. Mahāpurāṇa means narratives of sixty-three great men (अइहास एकपुरुषाश्रिता कथा; पुराण त्रिषष्टिपुरुषाश्रिताः कथाः पुराणानि). The Mahāpurāṇa therefore is a work on the lives of sixty-three great men of the Jain faith, and thus occupies the same place of importance as the Mahābhārata or the Rāmāyaṇa in Hinduism. The Mahāpurāṇa however lacks the unity of the Mahābhārata or of the Rāmāyaṇa and therefore cannot be called and epic in the strictest sense of the term.

The sixty-three great men whose lives are described in a Mahāpurāṇa are classified under five heads. I give their names below for ready reference :—

(a) The Tīrthaṃkaras (24) : (1) वृषभ or ऋषभ; (2) अजित; (3) शंभव or संभव; (4) अभिनन्दन; (5) सुमति; (6) पद्मप्रभ; (7) सुपार्श्व (8) चन्द्रप्रभ; (9) पुष्पदन्त or सुविधि; (10) शीतल; (11) श्रेयांस, (12) वासुपूज्य; (13) विमल, (14) अनन्त; (15) धर्म; (16) शान्ति; (17) कुन्थु; (18) अर; (19) मल्लि; (20) सुव्रत; (21) नमि; (22) नेमि; (23) पार्श्व, and (24) महावीर.

(b) The Cakravartins (12) · (1) भरत, (2) सगर; (3) मघवन्; (4) सनत्कुमार; (5) शान्ति; (6) कुन्थु; (7) अर; (8) सुभौम or सुभूम; (9) पद्म, (10) हरिषेण; (11) जयसेन or जय, and (12) ब्रह्मदत्त.

(c) The Vāsudevas (9) : (1) त्रिपृष्ठ; (2) द्विपृष्ठ; (3) स्वयंभू; (4) पुरुषोत्तम; (5) पुरुषसिंह; (6) पुरुषपुण्डरीक, (7) दत्त; (8) नारायण; and (9) कृष्ण.

(d) The Baladevas (9) : (1) अचल; (2) विजय; (3) भद्र; (4) सुप्रभ; (5) सुदर्शन, (6) आनन्द; (7) नन्दन; (8) पद्म, and (9) राम (बलराम).

(e) The Prati-Vāsudevas (9) : (1) अश्वग्रीव; (2) तारक; (3) मेरक, (4) मधु; (5) निशुम्भ; (6) बलि; (7) प्रह्लाद; (8) रावण; and (9) मगधेश्वर or जरासंध.

It is to be noted that Sānti, Kunthu and Ara Tīrthaṃkaras as well as Cakravartins.

WORKS ON SIXTY-THREE GREAT MEN

The oldest known published work on sixty-three great men is the Mahāpurāṇa or more accurately Ādipurāṇa of Jinasena (*circa* 850–875 A. D.) Jinasena calls his work Trisaṣṭilakṣaṇamahāpurāṇasaṃgraha, and thus seems to have planned a complete Mahāpurāṇa. He was however unable to complete it, probably on account of his death. We get from his hand forty-two parvans only of the Ādipurāṇa, the remaining five parvans of the Ādipurāṇa and the

whole of the Uttarapurāṇa being written by his disciple Guṇabhadra and completed in 820 of the Saka era, i. e., in 898 A. D., at Vaṅkāpura, under the patronage of Lokāditya, a feudatory of Akālavarṣa *alias* Kṛṣṇa II (880-914 A. D.) This Mahāpurāṇa is written in Sanskrit, and printed twice, first at Kolhapur with a Marāthi translation by Kallappa Niṭve and again at Indore with a Hindi translation by Pandit Lalaram Jain. It is written from the point of view of the Digambara Jains.

The second known work on the subject is the present work and belongs to the Digambara sect of the Jains.

The third work is the Triṣaṣṭiśalākāpuruṣacarita by Hemacandra. It is a Śvetāmbara work and is written in Sanskrit. It is one of the last works of Hemacandra and so may have been written about 1170–72 A. D. It was published by the Jaina Dharma Prasāraka Sabhā of Bhavnagar in 1905–9, and a reprint of it is being issued at present.

The Jain Granthāvalī published in 1965 of the Vikrama era, i. e. in 1907–8 records three works named Mahāpuruṣacarita on page 229. One of them is by Sīlācārya (*circa* 925 of the Vikrama era, i. e. 888 A. D.), is written in Prakrit and its Mss. are said to be deposited in the famous Patan Bhandar No. 4 and also at Jesalmer Bhandar. The same book mentions another work on the subject in Prakrit by Amarasūri on the authority of Bṛhaṭṭippaṇikā. It mentions a third work in Sanskrit on the theme by Merutuṅga, Mss. of which are deposited in two Bhandars at Patan and also at Ahmedabad.

THE GLOSS ON THE CONSTITUTED TEXT

The reader will notice that the bottom portion of the printed text is divided into two part. The first part, separted from the text by a wavy line gives the variants found in the Mss. or recorded in the margin of Mss, and also in the Ṭippaṇa of Prabhācandra. The second part, separated from the first part by a double line, gives a short gloss on the text in Sanskrit. I have culled it from the marginal notes in Mss. G, K, M and P, and also from the Ṭippaṇa of Prabhācandra. In selecting the gloss for this purpose I have kept in mind the difficulties which a reader is likely to meet with while going through the text, and I hope that if the reader is equipped with a good knowledge of the Sanskrit language and literature and some elementary knowledge of the grammar of the Prakrit and Apabhraṃśa dialects, he wil be able to understand the text easily with the help of this gloss. Extracts from Prabhācandra's Ṭippaṇa, where they appeared to be interesting but rather extensive to be accommodated at the bottom of the text are given in the notes at the end. I hope this method

of supplying the gloss at the bottom of the page will be appreciated by the reader as it taxes him less, and helps me to reduce the volume of notes. It should be noted that I have not retouched the text of the gloss, but have retained it as it was found in Mss. even though I felt at times tempted to improve upon uncouth Prakritisms or unwarranted historical allusions (see for example, the gloss on कइवइ विहियसेव on page 8).

ACKNOWLEDGMENT OF OBLIGATIONS

It now remains for me to perform the pleasant duty of thanking all those who, one way or another, assisted me in the production of the present volume. I must thank in the first place the Trustees and the Secretaries of the Manikchand Digambara Jaina Granthamālā who were kind enough to find the necessary fund for the preparation and publication of this volume, and I feel sure they will also find the necessary funds to complete the work. The poetic genius of Puspadanta required the benevolent encouragement of his patron Bharata in the 10th century. After the plunder of Mānyakheta in 972 A. D. the poet became desolate and remained uncared for about a thousand years, and had it not been for the help that the Trustees of the Series offered to the Editor, his efforts to bring the poet out of oblivion would have been of no avail. The spirit of Puspadanta will thus take a special delight in having once more discovered the spirit of his former patron regenerated in the Trustees of the Series. The Editor hopes that the same spirit will find a few thousand rupees more to enable him to complete the task that he has undertaken to rescue from oblivion this monumental work of the Poet.

To Professor Hiralal Jain of King Edward College, Amraoti, I owe a special debt of gratitude. He moved heaven and earth to find the funds for this publication. He has helped me in various other ways, in securing the loan of Mss. from Kāranjā and Jaipore, and in sending me bits of information that he came across. To Pandit Nathuram Premi, the veteran savant of Jain literature and an adventurous publisher of Jain works, I also tender my heartfelt thanks.

I would like to record here my sense of high appreciation of the services which Mr. R. G. Marathe, M. A., formerly my pupil and now professor of Ardha-Māgadhī at the Willingdon College, Sangli, rendered me in the preparation of this work. He did a lot of copying work for me and helped me at the time of collation as well.

Nowrosjee Wadia College, Poona
August 1937

—P. L. Vaidya

भूमिका

कवि पुष्पदन्तकी तीन रचनाओंमें-से, जसहरचरिउका मैंने 1931 में सम्पादन किया था जिसका दूसरा संस्करण, स्व. डॉ. हीरालाल जैन द्वारा कृत हिन्दी अनुवादके साथ, हाल ही में प्रकाशित हुआ है। दूसरी रचना 'णायकुमारचरिउ' का सम्पादन स्व. डॉ. हीरालाल जैनने किया जो हिन्दी अनुवादके साथ 1933 में प्रकाशित हुआ। तीसरी रचना 'महापुराण' सबसे बड़ी है जिसका मैंने तीन जिल्दोंमें सम्पादन किया, 1937 से लेकर 1941 तक। इसकी तैयारीमें मुझे 1932 से 1941 तक, कुल दस वर्षका समय लगा। यह दूसरा संस्करण है, जो डॉ. देवेन्द्रकुमार जैनके हिन्दी अनुवादके साथ, भारतीय ज्ञानपीठ द्वारा प्रकाशित है। मैं विशेष रूपसे प्रसन्न हूँ कि उक्त संस्थाने इसका प्रकाशन किया और इस प्रकार विद्वानोंको उक्त ग्रन्थ उपलब्ध कराया। अपभ्रंश साहित्यके प्रेमी भारतीय ज्ञानपीठके अत्यन्त कृतज्ञ हैं।

मैंने आशा व्यक्त की थी कि अपभ्रंशके कुछ युवा अनुसन्धायक आगे आयेंगे और इस युगान्तरकारी रचनाका अध्ययन करेंगे। 1964 में मेरे मित्र और शिष्य स्व. डॉ. ए. एन. उपाध्येने एक युवतीसे मेरा परिचय कराया था कि जिसने महापुराणके देशी शब्दोंपर पी-एच. डी. डिग्री प्राप्त की थी। मुझे खेद है कि उसके नाम और जीवनके बारेमें मुझे कुछ भी स्मरण नहीं है। अब भी एक विषय है, जिसका मैं सुझाव देता हूँ, जो कवि द्वारा प्रयुक्त छन्दोंके विश्लेषणसे सम्बन्धित है। यह भी एक आवश्यकता है। मुझे आशा करना चाहिए कि कतिपय युवा अनुसन्धायक आगे-आगे आकर इस समस्यापर काम करेंगे।

पाठक देखेंगे कि कवि पुष्पदन्त जैनो के दिगम्बर सम्प्रदायसे सम्बद्ध थे जबकि उसका सम्पादक न दिगम्बर है और न श्वेताम्बर। अतः सम्भव है कि दार्शनिक सिद्धान्तोंकी व्याख्यामें उससे कुछ गलतियाँ हो गयी हों, क्योंकि मेरा जैनधर्म सम्बन्धी ज्ञान किताबी है। इसलिए मैं अपने पाठकोंको सम्पादककी गलतियोंको ठीक करनेकी अनुमति देता हूँ यदि टिप्पणियोंमें गलतियाँ हो तो।

पुणे
11 मई 1974

—पी. एल. वैद्य

परिचय

[प्राचीन संस्करण]

महापुराण या त्रिषष्टिमहापुरुषगुणालंकार पुष्पदन्तके तीन ज्ञात अपभ्रंश ग्रन्थोंमें-से सबसे प्राचीन और बड़ा है। दो छोटी रचनाओंमें-से जसहरचरिउका सम्पादन मैंने किया था जो कारंजा जैन सिरीज जिल्द 1, 1931 में प्रकाशित हुई। णायकुमारचरिउका सम्पादन प्रोफेसर डॉ. हीरालाल जैनने किया जो देवेन्द्रकीर्ति जैन सीरिज जिल्द 1 कारंजा से 1933 मे प्रकाशित हुआ, मैं अब पाठकोके सम्मुख महापुराणका पहला खण्ड प्रस्तुत कर रहा हूँ जो आदिपुराणके समकक्ष है, और आशा करता हूँ दो और जिल्दोंमें इसे पूरा कर सकूँगा। जब मैंने जसहरचरिउकी भूमिकामें यह घोषणा की थी कि मैंने महापुराणके सम्पादनका काम अपने हाथमें लिया है, उस समय मैंने कल्पना तक नही की थी कि यह कितना कठिन कार्य है, और यह कि सम्पादक और प्रकाशकोको आर्थिक तथा दूसरी कितनी कठिनाइयाँ होंगी। परन्तु मैं प्रसन्न हूँ कि प्रतीक्षाके लम्बे छह वर्षोके बाद भाषाविज्ञानके अध्येताओं और जैनसंस्कृतिके विद्यार्थियोको उस महान् कार्यका पहला खण्ड भेंट कर सका। अब मैं पाठकोंको यह विश्वास दिला सकता हूँ कि यदि दूसरी कठिनाइयाँ नही आयी तो मैं, आगामी दो या तीन वर्षोंमें शेष भाग भेंट कर सकूँगा जिससे पुष्पदन्तके अपभ्रंशके तीन महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ प्रकाशमे आ सकें।

इस जिल्दमें कुल 102 सन्धियोंमें-से 37 सन्धियाँ हैं। यह खण्ड प्रसिद्धितः आदिपर्व या आदिपुराणके रूपमें ज्ञात है, और यह ऋषभ जीवनका वर्णन करता है, जो पहले तीर्थंकर है, और भरतका जो पहले चक्रवर्ती है। दूसरी जिल्द अडतीसवी सन्धिसे प्रारम्भ होती है और अस्सीवीं सन्धिमें समाप्त होती है। तीसरी जिल्दमें शेष सन्धियाँ पूरी होंगी। डॉ. लुडविग अल्सफोर्ड (हमबर्ग जर्मनी) ने हालमें रोमन लिपिमें, महापुराणके एक भागका 'हरिवंशपुराण' नामसे प्रकाशन किया है, जिसमें 81 से 92वी तक सन्धियाँ है। इस भागका देवनागरी लिपिमें सम्पादन किया जायेगा, जो तीसरे भागमें सम्मिलित किया जायेगा, जिससे समूचा काव्य जनताको एकरूपमें उपलब्ध हो सके। इसके सिवाय हमारे पास इतनी अधिक पाण्डुलिपियाँ है, (उसकी तुलनामे जो डॉ॰ अल्सफोर्डके समय उपलब्ध थी) इनसे उनके कार्यमें कुछ सुधार होना सम्भव है।

महापुराणका सम्पूर्ण पाठ लगभग रायल आकारके दो हजार पृष्ठोंमें समाप्त होगा, उनमें-से यह जिल्द 600 पृष्ठोकी है। इससे स्पष्ट है कि समस्त महापुराण एक जिल्दमें सुविधाजनक ढगसे नही आ सकता था। इसलिए मेरा विचार है कि प्रत्येक जिल्दमें भूमिका दी जाये, जिसमें उस जिल्दसे सम्बन्धित समस्याओका विचार हो। जहाँ तक सम्पूर्ण रचनासे सम्बन्धित बड़े प्रश्नोका सम्बन्ध है, मैं उनका विचार तीसरी और अन्तिम जिल्दके लिए सुरक्षित रखता हूँ। इसके अतिरिक्त जसहरचरिउ और णायकुमारचरिउकी भूमिकाओंमें कवि पुष्पदन्तकी भाषा छन्द आदिके विषयमें कुछ जानकारी दी है, आशा की जाती है कि पाठक उसे वहाँसे प्राप्त कर लेंगे।

दी क्रिटीकल एपेरेटस पृष्ठ 14 से 19 तक अर्थ स्पष्ट है, इसमें आधारभूत पाण्डुलिपियोका विवरण है।

महापुराणके प्रशस्ति छन्द

जब मुझे जसहरचरिउके सम्पादनके सिलसिलेमें पाण्डुलिपि सामग्रीके अध्ययनका अवसर मिला तो मैंने पाया कि कुछ पाण्डुलिपियोंमें सन्धिके प्रारम्भमें कविके आश्रयदाता नन्नकी प्रशंसामें कुछ छन्द है,

जबकि कुछ पाण्डुलिपियोमें इनका उल्लेख नही है। पाण्डुलिपियोकी तुलनाके प्रसंगमें इस तथ्यका पता लगा कि जिन पाण्डुलिपियोमें ये प्रशस्तिपरक छन्द हैं, उनमें पाठोकी विभिन्नतामें घनिष्ठ समानता है, जिन पाण्डुलिपियोमें उक्त प्रशस्तियाँ नही है उनमें विभिन्नताओका दूसरा रूप है। और आगे परीक्षा करनेपर मैंने पाया कि जिन पाण्डुलिपियोंमें प्रशस्ति छन्द नही है उनमें पाठोका प्राचीनतम रूप है। जसहरचरिउके प्रसंगमें बहुत-से अबतक उनके लेख और डेट पहचान ली गयी हैं। चूँकि उक्त पाण्डुलिपिकारको जो कविके चार सौ साल बाद हुआ, कविके आश्रयदातासे कुछ नही लेना-देना था। मुझे यह विश्वास हो गया कि इन प्रशस्तियोकी रचना कविने स्वयं की होगी, और उसे यह परिकल्पना बढानेके लिए बाध्य होना पडा कि कविको स्वयं आश्रयदातासे जो सहायता मिली, उससे उसने अपने काव्य की दो-तीन प्रतियाँ करायी उनमें-से एकमें प्रमादसे हाशियामें कुछ फालतू छन्द लिखने पडे। कि जिनमे आश्रयदाताकी प्रशंसा थी, जब कि दूसरी प्रति या प्रतियाँ इन प्रशस्तियोंके बिना ही, उनके हाथसे बाहर चली गयी। सक्षेपत. इस परिकल्पना से कि जो पृष्ठ 21 (जसहरचरिउकी भूमिका) पर अंकित है, मैं यह तय कर सका कि पाण्डुलिपियाँ एस और टी, प्राचीन रूपका प्रतिनिधित्व करती है। और तब मुझे इस बातका अवसर मिला कि मैं महापुराण की एक प्रशस्तिका हवाला देकर इसे बताऊँगा।

'दीनानाथधनं सदाबहुजनं प्रोत्फुल्लमानं वनं
मान्याखेटपुरं पुरंदरपुरी लीलाहरं सुंदरम्।
धारानाथनरेन्द्रकोपशिखिनादग्धंविदग्धप्रियं
क्वेदानी वसतिं करिष्यति पुनः श्रीपुष्पदंतः कवि ॥"

इस प्रशस्तिने विद्वानोंको महापुराणकी रचनाकी तिथि तय करनेमें बहुत परेशान किया, और इसी प्रकार मान्यखेटके लूटे जानेके विषयमें। कविने प्रशस्तिके बीच जिस प्रसिद्ध ऐतिहासिक घटनाका उल्लेख किया है (जो 972 ए. डी. में घटी) वह कारंजाकी प्रति में मिलती है, पचासवी सन्धिके अन्तमे जब कि महापुराणकी समाप्तिकी निश्चित तिथि क्रोधन संवत्सर (965 A D) है। मैंने पाया कि उक्त प्रशस्ति मेरी प्रति (K) में नही है, यह तथ्य मेरी जसहरचरिउकी प्रति (जो सबसे अच्छी है) से भी मेल खाता है। इससे मैं उक्त परिकल्पनाका खण्डन कर सका, यह बात महापुराणकी दूसरी पाण्डुलिपियोके परीक्षणसे सिद्ध है। उस समय पुष्पदन्तकी एक रचना णायकुमारचरिउकी जो प्रेसकापी मेरे मित्र डॉ. हीरालाल जैन द्वारा तैयार की जा रही थी उसमें ये प्रशस्तियाँ नही थी, इसलिए मैं अपनी परिकल्पनाकी उसे पुष्टि नही कर सका। तब मैंने उन प्रशस्तियोंकी तुलना करनेके लिए आगे बढ़ा कि जो महापुराणकी सन्धियोके प्रारम्भमे हैं। मुझे अभी तक एक भी पाण्डुलिपि ऐसी नही मिली जिसमे प्रशस्तियाँ न हो, इसके साथ मैंने यह भी पाया कि सभी पाण्डुलिपियोकी प्रशस्तियोंमें समानता नहीं है। फिर भी मैंने यह देखा कि एक वर्गकी पाण्डु-लिपियाँ कुछ प्रशस्तियोंको आश्चर्यजनक ढगसे एक जगह रखने या उन्हें नही रखनेके पक्षमें हैं। मेरी आदि-पुराणकी जी. और के पाण्डुलिपियोमें भी थोड़ी संख्यामें प्रशस्तियाँ है, परन्तु दूसरी पाण्डुलिपियोमें वे बड़ी संख्यामें हैं। इसलिए मैं जी. और के. पाण्डुलिपियोंको अधिक प्राचीन मानता हूँ भले ही वे अधिक पुरानी न हो। मेरी धारणा है कि ये प्रशस्तियाँ महापुराणके पाठके गठनात्मक अंग नही हैं इसलिए उनका समाहार आलोचनात्मक टिप्पणियोमें किया गया है। फिर भी मेरा विश्वास है कि इनकी रचना कविने स्वय की होगी, कोई दूसरा इनकी रचना नही कर सकता, क्योकि उसका इस सीमा तक भरतकी प्रशंसा करनेमें दिलचस्पी नही हो सकती थी। मैं यह भी विश्वास करता हूँ कि कवि रचनाओको पूरा करनेके बहुत बाद इनकी रचना की होगी। किसी भी हालतमें, 'दीनानाथ धन' प्रशस्ति छन्द कवि 972 A. D. के पहले नही लिख सकता था, जो महापुराणके पूरा होनेके सात वर्ष बादकी घटना है। इन छन्दोका प्रश्न पाण्डुलिपियोकी

परम्पराके विचारसे महत्त्वपूर्ण है और इसलिए भी क्योंकि इससे कविके आश्रयदाता भरतसे सम्बन्ध और दूसरे सम्बद्ध प्रकरणोंपर प्रकाश पड़ता है। मैंने इन पाण्डुलिपियोंका विभाजन निम्नलिखित वर्गोंमें किया है :

(1) वे प्रशस्तियाँ जो 'जी' और 'के' प्रतियोंमे है।

(2) जो आदिपुराणकी दूसरी प्रतियोमें है।

(3) वे जो पुणे, कारंजा और उत्तरपुराण (के) में हैं।

(4) वे जो केवल जयपुरकी प्रतिमें है।

इसी क्रममें मैने क्रमाक दिया है जिससे कि आगेके विभागोमें सुविधासे सन्दर्भ दिया जा सके।

(a) 1. (i) आदित्य........

इस छन्दमें भरतके यशका वर्णन है, जो कविका मित्र और आश्रयदाता है। कविका कहना है कि भरत और उसका यश समूचे विश्वमें व्यात है। यह प्रशस्ति तीसरी सन्धिके प्रारम्भमें है, 'जी' और 'के' प्रतियोमें, परन्तु बाकी दूसरी पाण्डुलिपियोके दूसरी सन्धियोमे है।

2 (ii) सौभाग्य...

यह छन्द भरतकी कुछ विशेषताओंका वर्णन करता है। यह 'जी' और 'के' पाण्डुलिपियोकी चौथी सन्धिके प्रारम्भमें है।

3. (iii) भ्रूलीला....

इसमें कविता है कि भरत इसलिए भी गुणी है कि वह कभी दूसरेकी पत्नीके विषयमें नही सोचता, यह 'जी' और 'के' पाण्डुलिपियोंको पाँचवी सन्धिके प्रारम्भमें पाया जाता है।

4. (iv) एको दिव्य....

इसमें कवि और उसके आश्रयदाता भरतकी विशेषताओंका उल्लेख हैं; यह 'जी' और 'के' आठवी सन्धिमें है, जब कि दूसरी पाण्डुलिपियोंमें नौवीं सन्धिके अन्तमें है।

5. (v) जगं रम्मं....

इस छन्दमें कवि स्वयंको ईश्वर बताता है। राजा होते हुए भी उसके चित्तमें उदारता है।

6. (vi) स्पष्ट है

7 (vii) स्पष्ट है

8. (viii) स्पष्ट है।

छन्द viii यह अंकित करता है कि यह आश्चर्यकी बात है जो कीर्ति हर घर भ्रमण करती है और चारणोके साथ स्वेच्छासे रहती है, वह अब भी भरतकी वल्लभा है। यह छन्द 'जी' प्रतिके साथ दूसरी सब प्रतियोमें है। परन्तु 'के' में नही है। इस प्रकार 'जी' और 'के' पाण्डुलिपियोंमें असमानताका यह अभाव मेरी इस स्थापनाको दृढ करती है कि उक्त प्रशस्तियाँ महापुराणकी अनिवार्य अंग नही है, फिर भी बादमें कविने इसकी रचना की है। 'जी' और 'के' प्रतियोंमे प्रशस्तियोके स्थानको लेकर जो एकरूपता और समानता है उससे मेरी इस धारणाको बल मिलता है कि वे एक वर्गकी है। दूसरे वर्गोंमें प्रशस्तिकी सख्या अधिक है।

(b) 9. (i)

10, 11, 12, 13, 14, 15, 16, 17, 18, 19, 20, 21, 22, 23, 24, 25, 26, 27, 28, 29, 30, 31, 32, 33, 34, 35, 36, 37, 38, 39, 40, 41, 42, 43, 44, 45, 46,47, 48 प्रशस्तियोंकी टिप्पणियाँ स्पष्ट हैं।

भरत, पुष्पदन्तका आश्रयदाता

इस प्रकार पुष्पदन्तके महापुराणमे कुल 48 प्रशस्तियाँ हैं इनमें 6 क्रमाक 5, 6, 16, 30, 35 और 48 प्राकृतमें हैं और शेष संस्कृतमें हैं। उक्त छन्दोकी प्राकृत शुद्ध और शालीन है। परन्तु यही बात संस्कृतके विषयमें नही कही जा सकती। कभी-कभी उसमें बीचमें प्राकृत आ जाती है (जैसे चोज्जें, 29वाँ छन्द) इन छन्दोमें सरस्वतीकी वन्दना (22), अम्बिका (23) आदिका वर्णन है। कवि स्वय अपने (1, 4, 14, 26, 27, 35, 38, 42, 43, 44) और अपने आश्रयदाता भरतके गौरवके विषयमे कहता है। इसके अतिरिक्त (3–8 XXXVII, 3–5,13) और घत्ता पंक्तियो और पुष्पिकाओमें भरतका उल्लेख है। जैसे (महाभव्य भरत द्वारा अनुमत इस काव्यमें)।

जसहरचरिउकी कुछ पाण्डुलिपियोंमें भी सस्कृतमें तीन छन्द है जिनमें भरतके पुत्र नन्न और उत्तराधिकारीका वर्णन है। णायकुमारचरिउके अन्तमें एक लम्बी प्रशस्ति है जिसमें नन्नके वारेमें विशेष जानकारी है। इन सूचनाओके आधारपर भरतकी जीवन रेखा प्रस्तुत की जा सकती है कि जिसकी उदारताके कारण विश्वको अपभ्रंश महाकाव्य मिल सका।

अब हमारे पास राष्ट्रकूटो और उनके समयका शानदार लेखा है (डॉ. ए. एस. आल्टेकर द्वारा लिखित) जिसमे कुछ पृष्ठो (115–123) में कृष्ण तृतीय (939–964 A D) के समयकी राजनीतिक घटनाओका उल्लेख है। उसके एक अध्याय (XIV) में राष्ट्रकूटोकी शिक्षा और साहित्यके वारेमें वर्णन है। फिर भी उसमे भरतका सन्दर्भ नही है, जो कृष्ण III का मन्त्री था। इसके विपरीत पृ 412 में यहाँ तक उल्लेख है कि आलोच्यकालमें शायद ही किसी प्राकृत साहित्यकी रचना हुई हो, जबकि पुष्पदन्तने मन्त्री भरत और उसके पुत्र नन्नके आश्रयमें तीन अपभ्रंश काव्योकी रचना की जो दो हजार पृष्ठोके बराबर है। कवि और उसके आश्रयदाताओंको न तो भुलाया जा सकता है और न उपेक्षा की जा सकती है। इसलिए यहाँ-पर प्राकृत साहित्यके विस्मृत आश्रयदाताके जीवनकी संक्षिप्त रूपरेखा देना अप्रासंगिक न होगा, उस सामग्रीके आधारपर जो प्रशस्तियोके रूपमें उपलब्ध है।

पुष्पदन्तके साहित्यमें कृष्ण III के तीन नाम है तुडिग, सुह-तुंगराय (शुभ तुंगराज) कृष्णराज और वल्लभनृप। वह 939 A. D. में गद्दीपर बैठा और 968 A. D तक उसने शासन किया। इसके बाद उसका छोटा भाई खुटिग देव गद्दीपर बैठा, जिसके शासनकालमें 972 मे राष्ट्रकूटोकी राजधानी मान्यखेट धारा नरेशके द्वारा लूटी गयी। भरत कृष्ण III के मन्त्री थे। भरतके पुत्र नन्नको भी शुभतुंगरायका मन्त्री बताया गया है। जब पुष्पदन्तने अपना महापुराण पूरा किया, उस समय भरत जीवित थे, यानी 965 A.D. तक और चूँकि कृष्ण III की मृत्यु 968 में हुई, इससे यह अनुमान करना पड़ता है कि भरतका निधन 965 से 968 के बीच हुआ, इसीलिए उसका पुत्र नन्न उत्तराधिकारी बना 968 में। नन्नने पुष्पदन्तको अपना संरक्षण दिया और जसहरचरिउ तथा णायकुमारचरिउ लिखनेकी प्रेरणा दी।

भरत कोण्डिल्ल गोत्रके मालूम होते हैं। यह एक सम्पन्न परिवार था जिसके सदस्य मन्त्री बनते थे (महामंत्राह्वय.), परन्तु वह दरिद्र हो गया था। इस बातके सकेत और प्रमाण है कि भरतने अपने वंशके गौरव और समृद्धिको फिरसे स्थापित किया, अपने स्वामीकी एकनिष्ठ सेवा कर। (संतानक्रमतो गतापि हि रमा कृष्टा प्रभोः सेनया) उनके पितामहका नाम अन्नय्या था और उनकी माँका नाम देवी था। भरतका कोई भाई या सगा-सम्बन्धी नही था। (बंधुरहितेन), उसका विवाह कुन्दव्वासे हुआ था, और उसके सात पुत्र थे। देविल्ल, भोगिल्ल, नन्न, सोहन, गुणवम्मा (वर्म्मा), दगइया और संतइय्या। नन्नको कुन्दव्वाका पुत्र बताया गया है और यह असामान्य नही है कि भरतकी और पत्नियां रही हो। भरतके सातो पुत्र इस समय तक (965) जीवित थे। लेकिन जब 968 में नन्न भरतका उत्तराधिकारी बना,

तो हमे यह कल्पना करनी पड़ती है कि या तो उसके दो बड़े भाई मर चुके थे या फिर उसमें कोई विशेष योग्यता थी कि जिससे उसने अपने दो बड़े भाइयोंको वरिष्ठताका अतिक्रमण किया और वह पिताकी जगह मन्त्री बना।

पुष्पदन्त के अनुसार भरतका रंग साँवला था, परन्तु आकृति सुन्दर थी और वह प्रेमके देवताके समान था। वह कृष्ण III के समय सेनापति थे। उनका स्वास्थ्य अच्छा था। वह दान और राजकीय भवन-के मन्त्री थे। उनकी वेशभूषा सुन्दर थी, आदतें सुसंस्कृत थी। वह विद्याव्यसनी थे। उनका चरित्र पवित्र था। उनमें अगणित गुण थे और अगणित उदारता थी।

महाकवि पुष्पदन्त ब्राह्मण परिवारके थे। इनका गोत्र कश्यप था। पिताका नाम केशव और माताका मुग्धादेवी। ये दोनो शिवके भक्त थे। बादमें उन्होने जैनधर्म ग्रहण कर लिया। उनका रंग काला और शरीर दुबला-पतला था। शायद वह अविवाहित थे। वह अत्यन्त गरीब थे, उनके पास घर-जायदाद कुछ भी नही था। फिर भी उनकी प्रतिभा दिव्य थी। वह पहले किसी शैव राजा (भैरव या वीर राजा) के दरबारमे थे, और सम्भवतः उन्होने उनपर कविता लिखी थी, परन्तु वहाँ उनका अपमान हुआ और वह मान्यखेट चले आये, आधुनिक मलखेडा, जो उस समय राष्ट्रकूटोकी राजधानी थी, और बहुत उन्नत थी। वहाँ वह नगरके बाहर वृक्षोके उद्यानमें रहे। इन्द्रराज और नागैया दो विद्वान्‌ने उन्हे मनाया और भरतके पास चलनेका अनुरोध किया। उन्हें यह आश्वासन दिया गया कि भरत बहुत शालीन व्यक्ति है। कुछ दिन ठहरनेके बाद भरतने महाकविसे काव्यरचना करनेकी प्रार्थना की। पहले तो उसने अपनी अनिच्छा व्यक्त की परन्तु बादमें उसने भरतका प्रस्ताव स्वीकार कर लिया क्योकि भरतके अनुसार इसीमें उसकी काव्यप्रतिभाका उपयोग था। उसने सिद्धार्थ वर्ष (959 A. D) में भरतके घरमें काव्यरचना शुरू की। आदिपुराणकी रचना करनेके बाद कविका मन उचाट हो गया। लेकिन उसे सपनेमें सरस्वती दिखी और उसने काव्य-रचनाकी प्रेरणा दी। तब कविने अपना काव्य पूरा किया। इस कार्यके सम्पादनसे कविको सन्तोष और गर्व दोनो थे। जैसा कि उसकी निम्नलिखित पंक्तियोसे स्पष्ट है :

अत्र प्राकृतलक्षणानि सकला नीतिः स्थितिश्छन्दसा
अर्थालङ्कृतयो रसाश्च विविधास्तत्त्वार्थनिर्णीतय.।
किं चान्यद्यदिहास्ति जैनचरिते नान्यत्र तद्विद्यते
द्वावेतौ भरतेशपुष्पदशनौ सिद्धं ययोरीदृशम्।

यह वही भाव है जिसमें व्यासने कहा था—

"यदिहास्ति तदन्यत्र यन्नेहास्ति न तत्क्वचित्"

इसलिए यह महापुराण जैनोके लिए उतना ही पवित्र है जितना हिन्दुओके लिए महाभारत। कवि महापुराणको पूर्ण करनेका श्रेय एक ओर अपनी प्रतिभाको और दूसरी ओर भरतकी उदारताको देता है। जिस तरह उसका यश दूर-दूर तक फैला, उसी प्रकार भरतकी उदारता भी दूर-दूर प्रसिद्ध हो गयी। ऐसा अनुमान है कि महापुराण समाप्त होनेके तीन वर्षके भीतर भरतका निधन हो गया। भरतके स्थानपर नन्न उत्तराधिकारी बना और उसने महाकविको आश्रय प्रदान किया, तथा अपभ्रंशमें और काव्य रचनेकी प्रेरणा दी। कविने जसहरचरिउ और णायकुमारचरिउकी रचना की। उसके बाद राष्ट्रकूटोके गौरवका अन्त हो गया कि जब 972 में मान्यखेट धारानरेश द्वारा लूट लिया गया, और कवि आश्रयविहीन होकर कहता है, क्वेदानी वसतिं करिष्यति पुनः श्री पुष्पदन्तः कविः। (36)

महापुराण क्या है ?

दिगम्बर जैनोका कहना है कि उनका पवित्र साहित्य (पूर्व और अंग) खो गया है। इसलिए वे श्वेताम्बरोके शास्त्रोके प्राधिकार (अथोरिटी) को नही मानते। दिगम्बरोके अनुसार शास्त्रके चार भाग हैं। (१) प्रथमानुयोग, जिसमें तीर्थंकरो और अन्य जैन महापुरुषोकी जीवनियाँ होती हैं, तथा कथा साहित्य होता है। (२) करणानुयोग, इसमें विश्वका भूगोल होता है। (३) चरणानुयोग—इसमें मुनियो और गृहस्थोंके आचरणके नियम रहते हैं। (४) द्रव्यानुयोग—जो दार्शनिक श्रेणीका होता है। इस विभाजनके अनुसार यह कृति प्रथमानुयोगमें आती है।

महापुराण, जैन साहित्यमें एक विशेष शब्द है जिसका अर्थ है प्राचीन समयका महान् वर्णन। परन्तु वह एक व्यक्तिगत या पवित्र जीवन का वर्णन करते हैं। जब कि महापुराण त्रेसठ प्रमुख जैन व्यक्तियोंके जीवनका वर्णन करता है। इसका दूसरा नाम त्रिषष्टिशलाकापुरुष है जब कि हेमचन्द्र इसे त्रिपष्टिशलाका चरित कहते हैं। पुष्पदन्त त्रिषष्टी पुरुष गुणालंकारके विकल्पमें 'महापुराण' नाम रखते हैं। यानी गुणोंका अलंकरण या त्रेसठ महापुरुषोंके गुण। पुराण शब्दकी हिन्दू साहित्यमें यह परिभाषा है।

सर्गश्च प्रतिसर्गश्च वंशो मन्वन्तराणि च
वंशानुचरितं चैव पुराणं पञ्चलक्षणम् ॥

पुराण पाँच प्रकरणोका विचार करते हैं; उत्पत्ति, प्रलय, वंश और मन्वतर मनु और वंशोंका इतिहास। यह परिभाषा हमारे महापुराणपर भी लागू होती है। क्योकि इन पाँच प्रकरणोको हम इसमें पाते है। फिर यह देखना दिलचस्प होगा कि जैन इस शब्दकी किस प्रकार व्याख्या करते हैं। जिनसेन, जो पुष्पदन्तके पूर्ववर्ती है, अपने पुराण में लिखते हैं—

मैं त्रेसठ प्राचीन महापुरुषोंके पुराणको कहूँगा। इसमें तीर्थंकरों, चक्रवर्तियों, वासुदेवों, बलभद्रों तथा प्रतिवासुदेवोका वर्णन है। यह रचना पुराण इसलिए है क्योकि इसमें प्राचीनोका इतिवृत्त है। यह महान् इसलिए है क्योकि इसमें महापुरुषोंका वर्णन है। अथवा इसका वर्णन ग्रेट (महान्) मुनियोके द्वारा किया गया है। अथवा यह इसलिए महान् है क्योकि यह महान् शिक्षा देता है। दूसरे लेखक कहते हैं चूँकि इसका प्रारम्भ पुराने कवियोंसे हुआ है, इसलिए यह पुराण है, और यह 'महान्' इसलिए कहलाता है, क्योंकि इसमें आन्तरिक महानता है। महान् मुनियोने इसे महापुराण इसलिए कहा है क्योकि इसका सम्बन्ध महापुरुषोंसे है, और यह महान् शिक्षा देते हैं। हमारे टैक्स्टके छन्द 1,9,3 के टिप्पण में इतिहास और पुराण का अर्थ स्पष्ट किया गया है। उसके अनुसार, इतिहास एक व्यक्तिके वर्णनको कहते हैं जब कि महापुराणमे त्रेसठ शलाका पुरुषोका वर्णन होता है। (अइहास एकपुरुषाश्रया कथा, पुराण = त्रिषष्टिपुरुषाश्रिता कथा पुराणानि)। इसलिए, जैनधर्मके त्रेसठ महापुरुषोके जीवनोका वर्णन करनेवाला काव्य महापुराण है, और इसलिए जैनोमें महापुराण महत्त्वका वही स्थान रखता है, जो महाभारत या रामायण हिन्दुओंमें। फिर भी इसे एपिक काव्य नही कहा जा सकता, इस शब्दके सही अर्थमें, क्योकि इसमें रामायण या महाभारतकी तरह एकता (unitiy) की कमी है। जिन त्रेसठ महापुरुषोका वर्णन महापुराणमें है, वे पाँच वर्गोंमे विभक्त है। तात्कालिक सन्दर्भके लिए मैं उनके नाम नीचे दे रहा हूँ।

नाम देवनागरी लिपिमें हैं। 24 तीर्थंकर, 12 चक्रवर्ती, 9 वासुदेव, 9 प्रतिवासुदेव, 9 बलदेव (बलराम)

इनमें शान्ति, कुन्थु और अर्ह तीर्थंकर और चक्रवर्ती दोनो थे।

त्रेसठ महापुरुषोंपर कार्य

त्रेसठ महापुरुषोंपर प्रकाशित सबसे प्राचीन महापुराण, अथवा अधिक सही नाम आदिपुराण है जो जिनसेन द्वारा रचित है। (880-875 A D) जिनसेनने अपनी रचनाको "त्रिषष्टि लक्षण महापुराण संग्रह" कहा है और इस प्रकार उन्होंने सम्पूर्ण महापुराणकी योजना बनायी होगी परन्तु किसी प्रकार वह इसे पूरा नहीं कर सके, सम्भवतः अपनी मृत्युके कारण। उनके द्वारा रचित आदिपुराणके कुल 42 पर्व हैं, बाकी बचे हुए पांच पर्व तथा समूचा उत्तरपुराण उनके शिष्य गुणभद्रने 820 शक संवत् (898) में पूरा किया, बंकपुरामें, लोकादित्यके सरक्षणमें। लोकादित्य, अकालवर्ष एलियाज कृष्ण II का (880-914 ई. सं.) सामन्त था। यह महापुराण संस्कृतमें लिखित है, और जो दो बार प्रकाशित हुआ। पहला कोल्हापुरमें कल्लप्पा नितवेके मराठी अनुवादके साथ, दूसरी बार इन्दौरसे हिन्दी अनुवादके साथ (अनुवादक पं लालाराम जैन)। यह दिगम्बर जैनोंके दृष्टिकोणसे लिखित है। दूसरा ज्ञात महापुराण इस विषयपर यह है। और यह भी दिगम्बर जैन दृष्टिकोणसे लिखा गया है। तीसरा महापुराण है 'त्रिषष्टि लक्षण पुरुष चरित' जो हेमचन्द्र द्वारा लिखित है। यह श्वेताम्बर महापुराण है और संस्कृतमें लिखित है। यह हेमचन्द्रकी रचनाओंमे अन्तिम है। इसलिए यह 1170-72 के बीच लिखा गया होगा। यह जैनधर्म प्रसारक सभा, भावनगर द्वारा 1905 में प्रकाशित हुआ और इसका दूसरा संस्करण प्रकाशित किया जा रहा है। 1965 में प्रकाशित जैन ग्रन्थावलीमें (1907-8) में तीन महापुराणोंके नाम हैं (पृ. 229) उनमें पहला शीलाचार्यका है (888 A. D.), यह प्राकृतमें लिखित है और इसकी पाण्डुलिपियां प्रसिद्ध पाटन भण्डारमें सुरक्षित हैं, ऐसा कहा जाता है। इसको सं. 4 है और जैसलमेर भण्डारमें है। इस महापुराणमें ही यह उल्लेख है कि इस विषय पर दूसरा प्राकृत महापुराण अमरसूरि द्वारा लिखित है On the authority of बृहत् टिप्पणिका। यह तीसरे महापुराणका उल्लेख करती है जो संस्कृतमें है, जो मेरुतुंगकी थीमपर है। इसकी पाण्डुलिपियां अमरपाटन और अहमदाबादमें सुरक्षित हैं।

पाठक देखेंगे कि मुद्रित ग्रन्थके नीचेका हिस्सा दो भागोंमें विभक्त है। पहले भागको एक लकीरके द्वारा मूल ग्रन्थसे अलग कर दिया गया है। इसमें पाठान्तर हैं और प्रभाचन्द्रकी टिप्पणियां हैं। दूसरा भाग पहले भाग से अलग है, उसमें संस्कृतमें मूल ग्रन्थके सरल पर्यायवाची शब्द दिये गये हैं जिन्हें मैंने जी. के. एम. और पी पाण्डुलिपियोंके किनारोंपर लिखी गयी टिप्पणियों और प्रभाचन्द्रके टिप्पणोंसे चुना है। सरल पर्यायवाची शब्दोंके इस चयनमें मैंने इस बातका ध्यान रखा है कि मूल सम्पादित ग्रन्थको पढते समय पाठकोंको क्या कठिनाइयां आ सकती हैं। मुझे आशा है कि यदि पाठकको संस्कृत भाषा और साहित्यका अच्छा ज्ञान है, तथा उसे प्राकृत व्याकरण और अपभ्रंशका मामूली ज्ञान है तो इन पर्यायवाची शब्दोंकी सहायतासे वह आसानीसे मूल पाठको समझ सकता है। जहाँ प्रभाचन्द्रके टिप्पणोंका सारभूत अंश रुचिकारक मालूम होनेके बजाय विस्तृत प्रतीत हुए उन्हें, टिप्पणियोंके रूपमें अन्तमें दे दिया गया है। मैं आशा करता हूँ पृष्ठके नीचे सरल पर्यायवाची शब्दोंको देनेकी यह पद्धति पाठकोंके द्वारा सराही जायेगी क्योंकि इससे उन्हें कम श्रम होगा, और मुझे इस जिल्दका विस्तार कम करनेमें सहायता मिलेगी। यह ध्यानमें रखना चाहिए कि मैंने पर्यायवाची शब्दोंके पाठको नहीं छुआ है, बल्कि उसको उसी रूपमें सुरक्षित रखा है, जिस रूपमे वह पाण्डुलिपियोंमें उपलब्ध है। यद्यपि कई बार मुझे इस बातका प्रलोभन हुआ है कि मैं अधकचरे प्राकृत प्रयोगों और अनावश्यक ऐतिहासिक उल्लेखोंको सुधारूँ, (उदाहरणके लिए देखिए पृष्ठ 8 कइवइ विहियसेउका सरल पर्यायवाची)।

कृतज्ञता ज्ञापन

अब उन सबके प्रति आनन्ददायक धन्यवाद देनेका कर्तव्य पूरा करना मेरे लिए शेष रहता है कि जिन्होंने किसी न किसी रूपमें इस जिल्दको पूरा करनेमें मदद की है। सबसे पहले मैं माणिकचन्द्र दिगम्बर जैन ग्रन्थमालाके न्यासधारियों और मन्त्रियोंको धन्यवाद देता हूँ कि जिन्होंने इस जिल्दको तैयार करने और प्रकाशित करनेके लिए आवश्यक धनराशि जुटायी। और मुझे पूरा विश्वास है कि वे इस-कार्यको पूरा करनेके लिए और धनराशि उपलब्ध करायेंगे। पुष्पदन्तकी काव्य प्रतिभाको, दसवीं सदीमें अपने आश्रयदाता भरतके उदार प्रोत्साहनकी जरूरत थी। ई. स. 972 मे मान्यखेटके विध्वंस और लूटके बाद कवि निराश हो गया और एक हजार वर्ष तक उपेक्षित रहा, और यदि ग्रन्थमालाके न्यासधारियोंने इस सम्पादककी सहायता न की होती तो इस महाकविको विस्मृतिके गर्तसे निकालनेका उसके प्रयत्न निरर्थक सिद्ध होते।

पुष्पदन्तकी आत्माको इस प्रकार विशेष आनन्द होगा कि उन्होंने एक बार फिर अपने पूर्व आश्रयदाताकी आत्माकी खोज पुस्तकमालाके न्यासधारियोंमें कर ली। इस सम्पादकको आशा है कि वही आत्मा कुछ हजार रुपयोंको उपलब्ध करायेगी कि जिससे उसने (सम्पादकने) जो काम हाथमें लिया है उसे वह पूरा कर सके, जिससे कविके अविस्मरणीय काव्यको नष्ट होनेसे बचाया जा सके।

प्रोफेसर हीरालाल जैन किंग एडवर्ड कालेज अमरावतीके प्रति मैं कृतज्ञताका विशेष ऋण अनुभव करता हूँ। उन्होंने इस जिल्दके प्रकाशनके लिए आकाश पाताल एक कर दिया। उन्होंने दूसरे अन्य रूपोंमें भी मेरी सहायता की, जैसे कि पाण्डुलिपियोंको कारंजा और जयपुरसे उधार दिलाने और उन छोटी सूचनाओंको मुझ तक पहुँचानेमें कि जो उनको ज्ञात हुईं। जैन ग्रन्थोंके साहसी प्रकाशक और जैन साहित्यके अनुभवी विद्वान् पण्डित नाथूराम प्रेमीको भी मैं हृदयसे धन्यवाद देता हूँ।

अपने भू. पू. शिष्य और अब विलिंगडन कालेज सांगलीमे अर्धमागधीके प्रोफेसर श्री आर. जी. मराठेके प्रति मैं यहाँ अपनी प्रशंसाके उच्चभावको व्यक्त करता हूँ कि उनकी उस सेवा और निष्ठाके लिए जो उन्होंने इस काममें मुझे दी। मेरे लिए उन्होंने प्रतिलिपि करनेका बहुत बड़ा काम किया और मिलान करनेके समय भी मेरी सहायता की।

नौरोजी वाडिया, कालेज
पूना
अगस्त 1937

—पी. एल. वैद्य

प्रस्तावना

अपभ्रंश कवि पुष्पदन्त और उनका नाभेयचरिउ

मान्यखेटका उद्यान

पुष्पदन्त—अपभ्रंशके ही नही—अपितु भारतके महान् कवियोमें-से एक हैं। कल्पना कीजिए दसवी सदीके मध्योत्तर कालकी। एक व्यक्ति लम्बा रास्ता पार कर, राष्ट्रकूट राजाओकी राजधानी 'मान्यखेट'के उद्यानमें पहुँचता है। वह थका हुआ है और चाहता है कि विश्राम कर ले। इतनेमें दो आदमी आते है और कविसे कहते है कि आप नगरमें चलकर विश्राम करें। सम्भ्रान्त व्यक्तियोका यह अनुरोध आगमें घीका काम करता है। कवि आगबबूला होकर कहता है—"पहाडकी गुफामें घास खा लेना अच्छा परन्तु दुर्जनोके बीच रहना अच्छा नही। यह अच्छा है कि आदमी मांकी कोखसे जन्म लेते ही मर जाये, परन्तु यह अच्छा नही कि सवेरे-सवेरे वह किसी दुष्ट राजा का मुख देखे।" अनुरोध करनेवाले व्यक्ति जिद्दी हैं और वे कविको मन्त्री भरतके पास ले जानेमें सफल हो जाते हैं। यह व्यक्ति ही, अपभ्रंशके महाकवि पुष्पदन्त हैं।

भरत और पुष्पदन्त

मन्त्री भरत कविके स्वभाव और पूर्व इतिहाससे परिचित है। वह अत्यन्त नम्रतासे कहता है—"हे कविवर, तुम्हारा नाम चन्द्रमासे लिखित है (यशस्वी है), तुमने वीर शैव राजाकी प्रशंसामें काव्य लिखकर मिथ्यात्वका जो बन्ध किया है, वह तभी मिट सकता है कि जब तुम प्रायश्चित्त करो। तुम भव्य-जनोके लिए देवकल्प हो, अतः आदिनाथके चरितभारको काव्य-निबद्ध करनेके लिए अपने कन्धोंका सहारा दो। वाणी कितनी ही अलंकृत, सुन्दर और गम्भीर हो, वह तभी सार्थक है कि जब उसमें कामदेवका संहार करनेवाले प्रथम जिन ऋषभके चरितका वर्णन किया जाये।"

उदासी

कवि भरतका अनुरोध टाल तो नही पाता, लेकिन वह जानता है कि उस-जैसे अत्यन्त भावुक सासारिक क्षुद्रताओके कटु आलोचक और फक्कड़ व्यक्तिके लिए इसका निर्वाह करना कितना कठिन है ? वह जब महापुराणकी सैंतीस सन्धियाँ पूरी कर चुकता है तो उसका मन अचानक उचाट हो आता है, अकारण एक गहरी उदासी उसे कई दिनों तक घेरे रहती है। कविके अनुसार सरस्वतीके हस्तक्षेप करनेपर ही उसकी यह उदासी टूटती है। कविके शब्दोमें—

"किसी कारण मनमें कुछ असुन्दर घटित हो जानेपर यह महाकवि कई दिनो तक उदास रहता है। एक रात सपनेमें सरस्वती उससे कहती है—"कवि, तुम पुण्य वृक्षके लिए मेघके समान हो, तुम अरहन्तको नमस्कार करो," वह मुडकर देखता है, तो वहाँ पूर्णचन्द्रमाके प्रकाशके सिवाय-कुछ नही था। वह चारो ओर देखता है, परन्तु उसे कुछ भी नही दिखाई दिया। यह देखकर कवि विस्मित है, और अपने कक्षमें चुपचाप उधेड-बुनमे है। इतनेमें मन्त्री भरत आता है और कविसे कहता है—"कविवर, तुम उदास क्यो हो ? क्या तुम्हें प्रेत लग गया है ? काव्य सृजनमें अपना मन क्यो नही लगाते ? क्या मुझसे कोई अपराध हो गया है, या किसीने तुमसे भला-बुरा कह दिया है ? तुम जो-जो कहोगे वह सब मैं करूँगा। और जबतक तुम कुछ नही कहते तबतक मैं हाथ जोड़कर यही बैठा रहूँगा। तुम अस्थिर और असार जीवनमूल्योंके लिए

अपनी आत्माको मोहकी कीचड़में क्यो सानते हो ? तुम्हें वाणीरूपी कामधेनु सिद्ध है उससे नवरसरूपी दूध क्यो नही दुहते ?"

कविका उत्तर है—"यह कलियुग पापोसे मलिन और विपरीत है; निर्दय, निर्गुण और अन्यायकारी, इसमें जो-जो दिखाई देता है, वह अन्यायजनक है। सूखे हुए वनकी तरह, फलहीन और नीरस। दुनियाके लोगोका राग (स्नेह) सन्ध्याकालके रागके समान है, मेरा मन धनमें प्रवृत्त नही होता। भीतर अतिशय उद्वेग बढ रहा है, एक-एक पदकी रचना करना भारी जान पड़ता है। फिर मैं जो कुछ कहूँगा उसमे दोष ढूँढा जायेगा, मैं यह नही समझ पाता कि यह दुनिया सज्जनोके प्रति खिची-खिची क्यो रहती है ? उसी तरह कि जिस तरह धनुष पर चढी हुई डोरी।" कवि के इस उत्तरसे उसकी उदासीका कारण छिपा नहीं रहता। पैसा कमाना जिसके सृजनका उद्देश्य न हो, और जो स्वार्थजन्य क्षुद्र कुटिलताओसे घृणा करता हो, उसके लिए सृजनका एकमात्र उद्देश्य आत्माकी शान्ति और मनकी पवित्रता ही हो सकती थी। वह कहता है—

> मज्झु कइत्तणु जिणपयभत्तिहि
> पसरइ णउणिय जीविय-वित्तिहि ॥

कवि मन्त्री भरतसे कहता है कि मैं अकारण स्नेहका भूखा हूँ, इसी कारण वह उसके घरमें रहा है। क्या इसका अर्थ यह निकाला जाये कि कविकी उदासीका कारण शायद यह था कि सैंतीसवी सन्धि तक पहुँचते-पहुँचते उसे भरतसे वह अकारण स्नेह नही मिल रहा था जिसके लिए उसने यह महान् उत्तर-दायित्व अपने ऊपर लिया था।

दुर्जन-निन्दा

कविको दुर्जनोंसे जितनी चिढ़ थी उतनी शायद ही किसी दूसरे कविको रही हो। इक्यासवी सन्धि मे वह फिर दुर्जनोको आडे हाथो लेता है, परन्तु अबकी बार उसकी मुद्रा भिन्न है। इसका कारण सम्भवत. यह है कि अबतक अपने कविकर्ममें उसे काफी यश मिल चुका था। वह लिखता है—

"मैं काव्यका रचयिता और पण्डित हूँ, अनेक सुजनोंका प्यारा। परन्तु दुष्टका स्वभाव ही दूसरोंके दोषोको ग्रहण करना है। इसलिए मैं उसका प्रतिकार नही करता। मेरा काम काव्य करना है, दुर्जनका काम निन्दा करना। वह अपना काम करे, मैं अपना काम करूँ। दोनोका नतीजा पण्डित ही जानेंगे। मेरी विमल कीर्ति अपने कोमल और सरस पद दुष्टोके गलो और कपोलोपर रखती हुई तीनो लोकोमे विचरण करेगी।" 81/12।

आत्मविनय

गर्वोक्तियोंके बावजूद कविमें गहरी आत्मविनय थी। वह लिखता है—"मैं निर्दय और पापकर्मा हूँ, आज भी मैं कुछ भी धर्म नही जानता। मेरा विवेक मिथ्यात्वके सौन्दर्यसे रजित है, मैं जिनवरके वचनोसे अपरिचित हूँ। अभी तक मैं ऐसे कथान्तरोकी रचना करता रहा हूँ जो शृंगार-चेतनासे निरन्तर भरपूर थे, पर लो मैं अब महापुराणकी रचना करता हूँ। लो मैं अपने हाथोसे सूर्यको ढक रहा हूँ। लो मैं समुद्रको कलशसे उलीच रहा हूँ।"

प्राचीन परम्पराका उल्लेख करते हुए वह कहता है—"मन्त्री भरतने मुझसे इस काव्यकी रचना करवायी। यद्यपि मैं पण्डित नही हूँ, व्याकरण, छन्द और देशी नही जानता, जो कथा विश्ववन्द्य आचार्यों द्वारा सम्मानित है उसे मैं किस प्रकार प्रारम्भ करूँ ? मैं अकलक कणचर, कपिल, वेदपाठी, सुगत और चार्वाकके अभिप्रायोको नही जानता। मैंने पातजलके महाभाष्यके जलको नही पिया। मैं अत्यन्त पवित्र इतिहास और

पुराणोंको भी नही जानता, भावोंके राजा भारवि, भास, व्यास, कोमलगिरि कालिदास, चतुर्मुख, स्वयंभू, श्रीहर्ष, द्रोण, कवि ईसान और बाणको भी मैंने नही देखा। धातु, लिंग, समास, गण, कर्म, करण, क्रिया, सन्धि, कारक, पद समाप्ति और विभक्तियोको मैं नही जानता। शब्दधाम, आगमको भी मैं नही जानता कि जिनके नाम सिद्धान्तधवल और जयधवल है। जड़ताका नाम करनेवाले चतुर रुद्रट और उनके अलंकार-सारको मैंने नही देखा। मैंने पिंगल प्रस्तार नही पढा। यश जिनका चिह्न है, और जो लहरोसे निरन्तर अभिषिक्त है, ऐसा सिन्धु (सेतुबन्ध काव्य) मेरे चित्तपर नही चढा। न मैंने कलाकौशलमें मन लगाया। मैं विचारोकी दुनियामें जन्मजात मूर्ख हूँ। निरक्षर और चर्म रुक्ष। यह सब होते हुए भी मैं मनुष्यके रूपमें घूमता हूँ। महापुराण अत्यन्त दुर्गम होता है। घडेसे समुद्रको कौन माप सकता है। अमरो, सुरों और गुरुजनोके लिए सुन्दर जिस महापुराणकी रचना बडे-बडे मुनियोंने की है, मैं भी उसका कुछ वर्णन करता हूँ।"

आत्मपरिचय

पुष्पदन्तका जीवन संघर्षोंसे भरा हुआ था। यह सोचना गलत है कि जो लोग भौतिक आवश्यक-ताओंसे मुँह मोडकर निःस्पृह हो जाते है उनके जीवनमें संघर्ष नही होता। पुष्पदन्त निःस्पृह थे, परन्तु अत्यन्त भावुक और स्वाभिमानी होनेसे उन्हें मानसिक तनाव बहुत झेलना पड़ा। महापुराणकी अन्तिम प्रशस्तिमें अपना परिचय उन्होने इस प्रकार दिया है—

"अमीरो और गरीबोके प्रति समदृष्टि रखनेवाला मैं मुक्तिरूपी वधूका दूत हूँ। माँ मुग्धादेवी और पिता केशवभट्ट। गोत्र कश्यप। सरस्वतीके साथ विलास करनेवाला। पापपटलसे दूर रहनेवाला। सूने घरो और मन्दिरोमें निवास करनेवाला। पुराने वल्कल और चीवरोको धारण करनेवाला। न घर-बार और न स्त्री। नदियों, बावड़ियो और तालाबोमें नहा लेना, और दुर्जनोसे दूर रहना। धूल-धूसरित शरीर, धरतीका बिछौना और हाथोका आच्छादन। सदैव सन्यास मरणकी इच्छा रखनेवाला। अर्हत्के ध्यानका योगी, और भरतके आश्रयमें रहनेवाला। अपने सृजनसे लोगोको पुलकित करनेवाला। कविकुलतिलक अभिमान मेरु।"

वह कितने अपरिग्रही और स्वाभिमानी थे, यह उन छन्दोसे स्पष्ट है, जो उनकी पाण्डुलिपियोमें यत्र-तत्र बिखरे हुए है। एक उदाहरण देखिए—

"जगं रम्मं हम्मं दीवओ चन्दविम्बं
धरित्ती पल्लको दो वि हत्था सुवत्थं
पियाणिद्दा णिच्च कव्वकीला विणोओ
अदीणत्तं वित्तं ईसरो पुप्फदन्तो"

छन्द कहता है कि पुष्पदन्त ईश्वर है, सुन्दर संसार उसका घर है, चन्द्रबिम्ब दीपक है, धरती पलंग है, और दो हाथ वस्त्र है, नित्य आनेवाली नीद प्रिया है, काव्यक्रीडा विनोद है, चित्त अदीन है।

एक राजा क्रूर हिंसाके द्वारा ऐश्वर्यके साधन जुटाता है फिर भी सुख-शान्तिसे नही रह पाता। कवि पुष्पदन्त आत्माकी स्वाधीनता और मनकी कल्पनामे उसे यदि पा लेता है तो उसके ईश्वरत्वको चुनौती कौन दे सकता है?

जिन सज्जनोने मान्यखेट नगरके उद्यानमे ठहरे हुए कविकी भेंट भरतसे करायी थी, उनके नाम थे इन्द्रराज और अन्नइया। कविको मन्त्री भरतके शुभतुंग भवनमें ठहराया गया। भरतके अनुरोधपर कविको महापुराणकी रचनामें सिद्धार्थ संवत्सरसे लेकर क्रोधन संवत्सर तक (959 ई. से 965) कुल छह वर्ष लगे। संस्कृत महापुराण (जिनसेनका आदिपुराण और गुणभद्रका उत्तरपुराण) इस दृष्टिसे ईसवी 898 से पूर्वका सिद्ध होता है। महापुराण 102 सन्धियो 1907 कडवकोमें पूरा हुआ है। इसका दूसरा नाम तिसट्ठि महा-

पुरुषगुणालंकार (त्रिषष्टि महापुरुषगुणालंकार) है। कविकी तीसरी रचना 'जसहरचरिउ' है जिसकी चार सन्धियोमें कुल 138 कड़वक हैं। दूसरी रचना है 'णायकुमारचरिउ'। स्वर्गीय डॉक्टर हीरालाल जैनने लिखा है (णायकुमारचरिउकी भूमिका पृ. 17) कि सिद्धार्थ और क्रोधन 60 वर्षीय संवत् चक्रके विशेष वर्षोंके नाम हैं। इनमें क्रोधन संवत्सर सिद्धार्थ संवत्सरके पीछे आता है। णायकुमारचरिउमे कृष्णराज और नन्नका उल्लेख है। णायकुमारकी रचनाके समय कवि नन्नके घरमें रह रहा था।

"मुद्धई केसव भट्टपुत्तु
कासवरिसिगोत्ते विसालचित्तु
णण्णहो मंदिरि णिवसंतु संतु
अहिमाण मेरु गुणगण महंतु"—१/२

अपने शिष्य नाइल्ल और शीलभट्टके अनुरोधपर कवि कहता है—

"पडिवज्जमि णण्णु जि गुण महंतु"

स्वीकार करता हूँ कि नन्न गुणोंसे महान् है। १।५

'णायकुमारचरिउ' की अन्तिम प्रशस्तिसे स्पष्ट है कि नन्न भरत मन्त्रीका पुत्र था। जसहरचरिउ इसके बादकी रचना है।

आश्रयदाता भरत

इसमें सन्देह नही कि काव्य मनुष्यकी उदात्त और स्वतन्त्र अभिव्यक्ति तथा सृजन शक्तिका सर्वोत्तम माध्यम है। इसके साथ, इसमें भी सन्देह नही कि भारतीय कविको अपने सृजनके लिए किसी न किसी आश्रयकी खोज करनी पड़ी है। इसलिए भारतमें जो भी काव्य (आर्ष काव्यको छोड़कर) लिखा गया वह राजनीति या धर्मके आश्रय और प्रेरणासे ही लिखा गया। स्वतन्त्र भारतमें भी यही स्थिति है। देशमें मिश्रित अर्थ व्यवस्था की तरह 'सृजन' भी दो क्षेत्रोमें विभक्त हैं। एक सरकारी क्षेत्रमें और दूसरा व्यक्तिगत क्षेत्रमें। आर्थिक दृष्टिसे स्वतन्त्र लेखन द्वारा स्तरीय जीवन जीनेकी परिस्थितियाँ इस समय देशमें नही हैं, वे निकट भविष्यमें होगी इसकी कोई सम्भावना कम से कम मुझे तो नही दिखाई देती। स्वतन्त्रता पानेके बाद भारतीय लेखकने अभिव्यक्तिकी स्वतन्त्रताका हनन स्वयं किया और अब अपनी चरित्र हत्याका दोष वह दूसरोंपर मढ़ना चाहता है। ऐसा वह कभी प्रतिबद्धताके नामपर करता है, और कभी 'मुखौटा' का नारा लगाकर और कभी प्रयोगवादके नामपर। काव्यमूल्यों और जीवनमूल्योमें गहरी खाई—प्रयोगवादी और नयी कविताकी सबसे बड़ी दुर्बलता है जिसे वह प्रतीकों और बिम्बोंमे छिपाकर कलात्मक चमत्कार उत्पन्न करना चाहता है। उसका सबसे बड़ा चरित्र है कलामें आम आदमीकी बात करना और जीवनमें 'खास आदमीका जीवन जीना।' लेकिन इसके लिए अकेला सर्जक ही दोषी नही है, जिस देशके पूरे कुएँमें भाँग पडी हो, उसमें किसी एक वर्गको यह दोष देना कि कम से कम उसे नशेमें नही होना था, न्यायसंगत नहीं है। फिर भी कुछ व्यक्तित्व मिल जायेंगे कि जिन्होने जीवनमूल्य और काव्यमूल्यको एक साथ जिया। कायदेसे मुझे इस प्रसंगको नही कुरेदना था, परन्तु यह सृजन और आश्रयके प्रश्नसे शाश्वत रूपसे जुड़ा हुआ है, अत यह देख लेना जरूरी था कि उसका हल खोजा जा सका है या नही। जहाँ तक पुष्पदन्तका सम्बन्ध है, उनकी जीवनकी आवश्यकताएँ थोड़ी थी। आश्रयदाता भरत और उसके बाद, उसीके पुत्र नन्नने अपनी प्रशस्ति लिखवानेके लिए नही, अपितु 'नाभेयचरित' की रचनाके लिए कविसे आतिथ्यकी अभ्यर्थना की थी। बीच-बीचमें उसका मन उचटा भी, परन्तु भरतने चतुराईसे काम लिया। पुष्पदन्तने गौरवके साथ भरतके नामका उल्लेख अपने काव्यमें किया है; प्रत्येक सन्धिके अन्तमें उसे महाभव्य विशेषण दिया है, भरत कौडिन्य

गोत्रके थे। इनके पितामहका नाम अन्नय था और पिताका ऐयण। माँका नाम था देवी। पत्नी कुंदव्वासे भरतके सात पुत्र हुए—देवल्ल, भोगल्ल, नन्न, सोहन, गुणवर्म, दंगय्य और संतय्य। भरत श्यामशरीर और दृढ व्यक्तित्ववाले थे। उन्होंने अपने कुलका उद्धार किया। बादमें वह राष्ट्रकूट नरेश कृष्णराज III के मन्त्री, सेनानायक और दानविभागके अधिष्ठाता बने। भरतके बाद कवि नन्नके आश्रयमें था, जो थोड़ा नामका लोभी था। उसके निकटके लोगोंने कविसे काव्यमें सर्वत्र नन्नके नामका उल्लेख करनेका अनुरोध किया। कृष्णराज III के बाद उसका पुत्र खुट्टिगदेव गद्दीपर बैठा। उसके समय धारानरेश श्री हर्षदेवने आक्रमण करके मान्यखेटको धूलमें मिला दिया। यह 972 ईसवीकी बात है। णायकुमारचरिउकी रचनाके समय कृष्णराज III का ही शासनकाल था। महापुराणकी रचना कन्नू पिल्लईके एफेमेरिसके अनुसार (जसहरचरिउ द्वि. सं. की भूमिका पृ. 21) 11 जून 965 में समाप्त हो चुकी थी। लगता है इसके बाद मन्त्री भरतका निधन हो गया और उसका पुत्र नन्न महामन्त्री पदपर प्रतिष्ठित हुआ। 'णायकुमारचरिउ' मे कविका उल्लेख है—

सिरिकण्हरायकरयल-णिहिय असिजलवाहिणि दुग्गयरि
धवलहरसिहरि-हय मेहउलि पविउल मण्णखेडणयरि।

काव्यके प्रारम्भमें सरस्वतीके प्रसादकी कामना करता हुआ कवि मान्यखेड नगरीको श्रीकृष्णराजकी हाथमें स्थित तलवाररूपी नदीसे दुर्गमतर[1] बताता है और कहता है कि उसके धवलगृहके शिखरोंसे मेघकुल आहत हो उठते हैं। यहाँ कृष्ण और उनकी तलवारका पानी है, परन्तु कविसे काव्यरचनाका अनुरोध करनेवाला भरत नहीं है, उसकी जगह उसका पुत्र नन्न है। भरतके नामकी अनुपस्थितिका कारण उनका निधन ही हो सकता है। दक्षिणके राष्ट्रकूट वंश और मालवाके परमार वंशमे जो आक्रमण और प्रत्याक्रमण-का सिलसिला चला, उसका अन्त परमार सीयक (श्रीहर्षदेव) ने 972 मे मान्यखेडके ध्वंसके रूप मे किया। यह ऐतिहासिक सत्य है। स्व. डॉ. हीरालाल जैनका कहना है कि पुष्पदन्तने मान्यखेडकी इस लूटको अपनी आँखो देखा था, और सम्भवतः उस ध्वंसका चित्रण जसहरचरिउकी अन्तिम प्रशस्तिमें किया है। प्रशस्तिका वास्तविक अंश इस प्रकार है—

"जणवयणीरसि दुरियमलीमसि
कइणिंदायरि दुस्सह दुहयरि
पडिय कवालइ णर कंकालइ
बहु रंकालइ अइ दुक्कालइ
पवरागारि सरसाहारि
सण्हिं चेलि वर तंबोलि
महु उवयारिउ पुण्णि पेरिउ
गुणभत्तिल्लउ णण्णु महल्लउ
होउ चिराउसु वरिसउ पाउसु"

—जनपद नीरस और दुरितोंसे मलिन है। कवियोंको निन्दा करनेवाला और असह्य दुखोंको करने-वाला जिसमें कपाल और नरकंकाल पड़े हुए हैं, अनेक दरिद्रोंके घर अत्यन्त अकाल फैला हुआ है।"

---

1 स्व. डॉ. जैनने दुग्गयर शब्दका मूल दुर्गम माना है। परन्तु दुग्गयर, दुर्गमतरसे बना है। व्युत्पत्ति होगी दुग्ग अ अर दुग्गय् →अरदुग्गयर। उक्त नगरी खाईसे घिरी होनेके कारण दुर्गम थी, परन्तु तलवारवाहिनीसे दुर्गमतर हो उठी।

मेरी विनम्र धारणामें यह जनपदके लोगोंकी संवेदनशून्यता, पापवृत्ति और अकालसे उत्पन्न होनेवाली गरीबी एवं विनाशका सामान्य कथन है। यह तो इस देशकी सनातन नियति है, वह महापुराणकी समाप्तिके समय थी। गोस्वामी तुलसीदास जब अपना रामचरितमानस समाप्त कर रहे थे तब भी वह थी। अतः उसका सम्बन्ध—सीयक द्वारा की गयी मान्यखेटकी लूटसे उत्पन्न विनाशसे जोडना तर्कसंगत नहीं है। जिस देशमें (विशेषतः दक्षिण में) भयकर गरीवी रही हो, उसमें कोई कविको सम्मान और सम्पन्नतासे रखे, तो उसके प्रति कृतज्ञता प्रकट करना उसका कर्तव्य हो जाता है। जैसा कि आगे कवि कहता है कि ऐसे विषम, अशान्त और मरणधर्मा समयमें नन्नने मुझे बडे भवनमें रखा, सरस भोजन दिया, सुकुमार चिकने रेशमी वस्त्र और बढिया पान दिया, इस प्रकार उसने पुण्यप्रेरित होकर कविका उपकार किया—गुणोंका भक्त नन्न सचमुच महान् है, वह चिरजीवी हो, पावस खूब बरसे—4। 3। (जसहरचरिउ)।

पुष्पदन्त ई. 559 से मान्यखेड नगरके शुभतुग भवनमें महामन्त्री भरतके समयसे रह रहे थे, नन्नने भी उन्हें रखकर अपने पिताकी परम्पराका निर्वाह किया। सीयकके आक्रमणसे उत्पन्न परिस्थितिके कारण नहीं। पुष्पदन्तने राष्ट्रकूटोंकी राजधानी मान्यखेट को लुटते देखा था, यह उनकी इस प्रशस्तिसे स्पष्ट है :

"दीनानाथधनं सदा बहुजनं प्रोफुल्ल-वल्लीवनं,
मान्यखेटपुरं पुरदरपुरी-लीलाहरं सुन्दरम्।
धारानाथनरेन्द्र-कोप-शिखिना दग्धं विदग्ध प्रियं,
क्वेदानी वसतिं करिष्यति पुनः श्रीपुष्पदन्तः कविः॥"

इसमें जहाँ एक ओर मान्यखेटको दीन-अनाथोंका धन-जनसंकुल, पुष्पित लता-वनवाला और इन्द्रपुरीकी लीलाका अपहरण करनेवाला बताया गया है, वहीं दूसरी ओर धारा नरेशकी कोपज्वालामें ध्वस्त भी। कविके सम्मुख प्रश्न है कि वह अब कहाँ रहेगा ?

महापुराणकी कुछ पाण्डुलिपियोंमें इस श्लोकके प्रक्षिप्त होनेके कारण, महाकविके कालनिर्णयके विषयमें बहुत बडी समस्या खड़ी हो गयी थी। परन्तु डॉ. पी. एल. वैद्यने उसे प्रक्षेप मानकर उसका हल कर दिया। मेरा अनुमान है कि 'जसहरचरिउ' की रचना समाप्त करनेके कुछ समय बाद ही धारानरेशने मान्यखेटपर आक्रमण किया होगा, और तब कविके सम्मुख रहनेका संकट खड़ा हुआ होगा। नहीं तो 'जसहरचरिउ' में वह अवश्य इसका प्रत्यक्ष उल्लेख करते। इस प्रकार कविके दोनों आश्रयदाता भरत और नन्न (दोनों बाप-बेटे थे) राजपुरुष थे परन्तु, उन्होंने कविको पूरा सम्मान और अकारण स्नेह दिया जिससे वह त्रेसठ शलाका पुरुषोंके चरित गूँथनेके बाद णायकुमारचरिउ और जसहरचरिउकी रचना कर सके तथा एक ही आश्रयमें लगातार १३ वर्ष रहकर वह काव्य रचना करते रहे।

काव्यका उद्देश्य

क्रोधन संवत् (11 जून 965) आसाढ सुदी दसवींके दिन महापुराणको समाप्त करते हुए आजसे एक हजार वर्ष पहले विश्वके मंगलकी कामना करता हुआ कवि कहता है—"मेघ प्रचुर धाराओंसे बरसे, यह धरती अनेक धान्योंसे खूब पके, देश खुश हो, सुभिक्ष खूब बढे, लोगोंका व्यक्तित्व अच्छा हो, उनका दुहरा व्यक्तित्व दूर हो, भरतको शान्ति मिले कि जिसने अपने वचनका पूरी तरह निर्वाह किया है।" (102/4) काव्यके अनन्त श्रमके अनन्तर कविकी यही कामना है :

'इह दिव्वहु कव्वहु तणउ फलउ लहु जिणणाहु पयच्छउ
सिरि भरहहु अरुहहु जहिं गमणु पुप्फयतु तहिं गच्छउ।"

—इस दिव्य काव्य-सृजनका फल जिन भगवान् मुझे यही दें कि जहाँ चक्रवर्ती भरत और अरहन्त भगवान्का गमन हुआ है, वही मेरा गमन हो।

संसारमें दुःखके अनेक कारणोमें सबसे बड़ा कारण है विषमताकी प्रतीति, जो चित्तकी अशान्तिका सबसे बड़ा कारण है। दुःखमें मानव चित्त अशान्त देखा ही जाता है परन्तु सुखमें वह इससे भी अधिक अशान्त रहता है। ऐसे लोग भी, जो सामाजिक, राजनीतिक या आध्यात्मिक दृष्टिसे ऊँचे पदोपर हैं, मानसिक दृष्टिसे घोर अशान्त हैं।

तुलसीदासने कहा है :

"अस विचार रघुवंस मनि हरहु विसम भवपीर"

भवपीर, दुनियाकी पीडा विषमता है, विषमताजन्य यह पीडा समताके बोधसे ही दूर की जा सकती है। इसी प्रकार जैन कवियोके चरितगानका उद्देश्य भी वही है, जो तुलसीदासके रामचरितके गानका।

रघुवंस भूसन चरित यह नर कहहिं सुनहिं जे गावही।
कलिमल मनोमल धोइ बिनु श्रम रामधाम सिधावही॥

काव्य सम्बन्धी विचार

कवि पुष्पदन्त सरस्वतीकी वन्दना करते हुए जो कुछ कहते हैं, एक तरहसे वह उसका काव्यके प्रति अपना दृष्टिकोण है। कविने लिखा है—"देवी सरस्वती हर्षजनक सुन्दर और मधुर बोलती है, वह अपने कोमल पद-विलासके साथ रखती हैं, वह अत्यन्त प्रसन्न गम्भीर और स्वर्ण शरीरवाली है। चन्द्ररेखाके समान कान्तिमयी और कुटिल है, अलंकारोसे युक्त वह छन्दके अनुसार चलती है। वह अनेक शास्त्रोके गौरवको धारण करती है, वह चौदह पूर्वों और बारह अगोसे परिपूर्ण है। सात भंगिमाओवाली वह जिनवरके मुखकमलसे पैदा हुई है। ब्रह्माके मुखमें निवास करनेवाली, शब्दसे उत्पन्न, कल्याणकी विधात्री और सौन्दर्य (शोभा) की खान है। महायोद्धाकी तरह सुन्दर पदयोजनावाली है, जो महाकवियोको यश प्रदान करनेवाली है।" पुष्पदन्तका कहना है कि काव्यका आश्रय महान् होना चाहिए, इससे उसका महत्त्व बढ जाता है, उसी प्रकार, जिस प्रकार कमलिनीपर स्थित पानीकी बूँदें मोती-सी चमकती हैं। जो अनुभूति महान् आश्रयको लेकर चलती है, वह पूर्ण गौरव धारण करती है। महान् आश्रयको प्रबन्ध-काव्यका विषय बनानेमे एक सुविधा यह भी है कि उसमें नाना रसोकी अभिव्यक्तिका अवसर मिल जाता है।

पुराण, महापुराण और चरित काव्य

पुष्पदन्तने काव्यके अन्तमे स्पष्ट रूपसे स्वीकार किया है कि उसने भरतके अनुरोधपर नाना रस-भावसे युक्त पद्धडियामें महापुराणकी रचना की। इससे स्पष्ट है 'पद्धडिया' उस युगमें अपभ्रंश काव्योकी विशेष लोकप्रिय शैली थी, इसीलिए उन्होने उसे अपनाया। वह मूलतः कवि थे, और जैनधर्म उन्होंने बादमें स्वीकार किया था। अतः यह स्वाभाविक ही था कि महापुराणको काव्यका रूप देते हुए वे उसमें परिवर्तन करते। आर्हती वाणीसे क्षमा माँगते हुए वह लिखते हैं—"गणधरोंके द्वारा निर्दिष्ट इस काव्यकी रचना करते समय मुझ बुद्धि-विहीनने जिनेन्द्रके मार्गमें जो कुछ कम-अधिक कहा है, उसके लिए अर्हंत् वचनोसे उत्पन्न होनेवाली आदरणीय सरस्वती (जिनवाणी) मुझे क्षमा करे।" सैद्धान्तिक दृष्टिसे महा-पुराण काव्यके अधिकाश नायक कामदेवके अवतार है, जो कामचेतना (रागचेतना) का संहार करनेवाले

हैं। परन्तु कामचेतनाका संहार करना इतना आसान नहीं है। खासकर काव्य प्रक्रियामें काम-संहारकी अभिव्यक्ति और भी कठिन है। क्योंकि रागचेतनाको जबतक अनुभूतिके स्तरपर सम्प्रेषणीय नहीं बनाया जाता, तबतक उसकी व्यर्थता या नश्वरतामें-से विकसित होती हुई वीतरागता अनुभूतिका विषय नहीं बन सकती। 'महापुराण' कई चरित काव्योंका संकलन है, प्रत्येक चरित काव्य अपनेमें स्वतन्त्र हैं। उनके सभी नायक प्रतिष्ठित, सम्पन्न और कुलीन हैं। अन्य महापुराणोंकी तरह पुष्पदन्तका महापुराण भी कई चरित काव्योंकी मणिमाला है। इसमें मुख्य रूपसे तीर्थंकर आदिनाथका चरित महत्त्वपूर्ण और आकारमें बडा है। यह उसका पहला खण्ड है।

पुष्पदन्तके पहले संस्कृतमें इस प्रकारके प्रबन्ध-काव्यको पुराण-काव्य कहनेकी प्रथा थी। आदि-पुराण, पद्मपुराण, हरिवंशपुराण इत्यादि। परन्तु विमलसूरिने अपने प्राकृत काव्यको 'पद्मपुराण' न कहकर पउमचरिअ कहा, जब कि अपभ्रंश कवि स्वयंभूने 'पउमचरिउ'। आचार्य गुणभद्रके अनुकरणपर पुष्पदन्तने त्रेसठशलाकापुरुषोंके चरित मणियोंसे महापुराणरूपी महाहार जिनभक्तिके धागेसे गूँथकर भक्तजनोंके लिए समर्पित किया है। 'महापुराण' से कविका अभिप्राय क्या था, इसके बारेमें वह भरतके प्रश्नके उत्तरमें ऋषभनाथसे कहलवाता है—

"महापुराण वह है जिसमें त्रिलोक, देश, नगर, राज्य, तीर्थ, तप, दान, शुभ प्रशस्त आठ स्थानोंका कथन हो। (2।1)। यहाँ ऋषभने महापुराणकी जिन विशेषताओंका उल्लेख किया है, वे सब पुष्प-दन्तके इस नाभेयचरिउमें हैं। फिर भी वह अपने काव्यको नाभेय पुराण न कहकर नाभेयचरित कहता है। परन्तु उनके संकलनको महापुराण कहता है। इससे स्पष्ट है कि अपभ्रंश कवियोंका अपने काव्यको चरितकाव्य या महापुराण कहनेमें कोई विशेष आग्रह नहीं है। ऐतिहासिक दृष्टिसे भारतीय काव्यमे प्रबन्ध काव्यकी दो धाराएँ हैं—(१) पौराणिक चरितोंपर लिखे गये काव्य, (२) सांसारिक व्यक्तियों-के चरितोंपर लिखे गये काव्य। बुद्ध और महावीर यद्यपि ऐतिहासिक व्यक्ति हैं, राम-कृष्ण पौराणिक व्यक्ति हैं।

फिर भी अन्य भारतीय राजाओंकी तुलनामें उनके चरित लोकोत्तर चरित हैं। बुद्ध और महावीर-का प्रभाव आध्यात्मिक है। आध्यात्मिक उपलब्धियोंके कारण ही उनके व्यक्तित्वकी छाप भारतीयोंके हृदय-पर है। इसलिए प्रसिद्ध संस्कृत कवि अश्वघोषने बुद्धचरित लिखकर चरित काव्यकी नींव डाली। इसके विपरीत कालिदासने रघुवंशकी रचना की। जिसमें रघुवंशकी कई पीढ़ियोंके राजपुरुषोंका वर्णन है। लेकिन बाणभट्टने हर्षचरित लिखकर, अश्वघोष द्वारा स्थापित चरितकाव्यकी परम्पराको तोड़ दिया। उत्तर राजपूत कालमे रासो काव्य-परम्परा चली, जिसके प्रवर्तनका श्रेय चन्दवरदायीको है। ये रासो काव्य उस अवहट्ठ भाषामें है, जो अपभ्रंशकी परवर्ती विकास है, कुछ लोग इसे उत्तरकालिक अपभ्रंश भी कहते हैं। इन रासो काव्योंके नायक समकालीन राजन्य वर्गके शासक है, जिन्हें सामन्ती चरित्रके ह्रासोन्मुख अवशेषके रूपमें स्वीकार किया जाना चाहिए। उनमें जो ऐश्वर्य और ओज है, वह कवियोंका दिया हुआ है। शैलीके विचारसे ये रासो काव्य पद्धडिया शैलीकी तुलनामें बहु छन्दवाली शैलीको अपनाते है, हालाँकि उसमे बहुत-से छन्द प्राकृत परम्पराके भी है। अपने समयके प्रबन्ध-काव्य शैलियोंको स्पष्ट करते हुए संस्कृत समीक्षक राजशेखरका कहना है कि इतिहास भी पुराणका एक भेद है। उसके दो भेद हैं : परक्रिया और पुराकल्प।

"परक्रिया पुराकल्प इतिहासगतिर्द्विधा
स्यादेकनायका पूर्वा द्वितीया बहुनायका।"

परक्रियामें एक नायक प्रधान होता है—जैसे रामायण। पुराकल्पमें अनेक नायक होते है, जैसे महाभारत। इस दृष्टिसे रघुवश पुराकल्प है जबकि बुद्धचरित परक्रिया। पुराणकी परिभाषा राजशेखरने इस प्रकार की है—

"सर्गः प्रतिसंहारः कल्पो मन्वतराणि वंशविधिः।
जगतो यत्र निबद्धं तद्विज्ञेयं पुराणमिति।"

(१) व्यापक सृष्टि, (२) अवान्तर सृष्टि, (३) प्रलय मन्वन्तर और वंश वर्णन।

ऊपर ऋषभदेवके हवाले पुष्पदन्तने पुराणकी जो परिभाषा दी है, उसकी कई बातें इससे मिलती-जुलती हैं। राजशेखरका यह कथन महत्त्वपूर्ण है कि इतिहास भी पुराणका एक भेद है। रामायण और महाभारतको देखते हुए राजशेखरका कथन सटीक है। जैन चरित काव्योका विकास भी पुराणोसे हुआ। पुष्पदन्तका महापुराण केवल इस अर्थमें पुराकल्प है क्योकि उसमें कई चरित-काव्योका सकलन है, परन्तु वे एक दूसरेमें गुंथे हुए नही हैं। यह सच है कि रासो काव्योंमें अपभ्रंश चरित काव्योकी पद्धडिया पद्धतिका अनुसरण नही है, परन्तु रामचरित मानस और पद्मावतमें उसका परवर्ती विकास स्पष्ट रूपसे देखा जा सकता है। रासो काव्योके नायकोंकी प्रशंसासे कुढ़कर ही तुलसीदासने लिखा है—

"कीन्हें प्राकृत जन गुणगाना
सिर धुनि लाग गिरा पछिताना"

अवतारी रामकी लोकलीलाओके कारण लोगोको उनके व्यक्तित्वमे प्राकृत जनका भ्रम न हो जाये इसके लिए अपने समूचे काव्यमें तुलसीदास सावधान करते चलते हैं। श्रीमद्भगवद्गीताके अनुसार अवतार धर्मकी स्थापनाके लिए होता है जबकि जैनोका विश्वास है कि लोककल्याणकी भावनासे पूर्व जन्ममें कोई जीव तीर्थंकर प्रकृतिका बन्ध करता है, फिर स्वर्गसे च्युत होकर तीर्थंकरके रूपमें अवतरित होता है, तीर्थंकर यद्यपि पूर्ण मनुष्य है, परन्तु पुराणोमें उनका जो वैभवसे पूर्ण और अतिरंजित वर्णन मिलता है, वह उन्हें अवतारी बना देता है। तीर्थंकरोसे कुछ हलके स्तरपर बलभद्रो, नारायणो और प्रतिनारायणोकी कल्पना की गयी है, इन सबके चरितो को आधार बनाकर ही अपभ्रंशके जैन चरित-काव्य रचित हैं, जिन्हे कथाकाव्य भी कहा जा सकता है। धनपालकी 'भविसयत्तकहा' को कुछ आलोचकोने चरित-काव्यसे भिन्न माना है। परन्तु शिल्प-शैली और विषयकी दृष्टिसे ऐसा मानना किसी भी प्रकार उचित नही। यहाँ एक बात विचार कर लेना भी प्रसंग प्राप्त है। कुछ विद्वानोकी धारणा है कि अपभ्रंश जैन चरित काव्योमे केवल उनके नायकोंके दीक्षा, तप और मोक्षका वर्णन है, वस्तुतः ऐसा नही है। पुष्पदन्तने प्रत्येक सन्धिके अन्तमें लिखा है—"त्रेसठ महापुरुषोके गुणालंकारोसे युक्त इस महापुराण में"। यहाँ अलंकारका अर्थ है भौतिक ऐश्वर्य; और गुणका अर्थ है आध्यात्मिक ऐश्वर्य। इस प्रकार उनके जीवनमें प्रवृत्ति और निवृत्ति दोनोंका समन्वय है।

अपभ्रंश कथा-काव्य और हिन्दी प्रेमाख्यानक काव्य

एक शोध प्रबन्धका शीर्षक है "अपभ्रंश कथा-काव्य और हिन्दी प्रेमाख्यानक," इससे यह भ्रम हो सकता है कि अपभ्रंश चरित-काव्यसे अपभ्रश कथाकाव्य अलग है, और उनका हिन्दी प्रेमाख्यानक काव्यसे सम्बन्ध है। एक तो तात्त्विक दृष्टिसे अपभ्रंशमें चरित-काव्य और कथाकाव्यमे अन्तर नही है, दूसरे प्रेमाख्यानक काव्यसे तथाकथित अपभ्रश काव्यका कोई सम्बन्ध नही। सम्भवत' यह भ्रम प्रेमकाव्य और प्रेमाख्यानक काव्यमें अन्तर न समझनेके कारण उत्पन्न हुआ प्रतीत होता है। प्रेमकाव्य प्रेमकथापर आधारित विशुद्ध लौकिक काव्य है; इस प्रकारके लोकप्रेमका वर्णन अपभ्रंश काव्योंमें भी है। परन्तु प्रेमाख्यानक काव्य वे सूफी काव्य है जिनमें प्रेमकहानीको माध्यम बनाकर, आध्यात्मिक प्रेमकी अभिव्यक्ति की जाती है। इश्क-मजाजीसे इश्कहक़ीक़ीको पानेका प्रयास किया जाता है। सूफी-साधनामें सूफियोका यह दर्शन है कि सृष्टि खुदाका जलवा है, जर्रे-जर्रेमें उसका नूर व्याप्त है, अतः दुनियावी प्रेमको प्रतीक मानकर वियोगकी गहन

अनुभूतिके द्वारा काव्यमें उसका मानसिक प्रत्यय ही 'प्रेमाख्यानक' काव्य है। उसमें प्रेमाख्यान एक साधन है, जिसमें प्रसंग या प्रकृतिके प्रत्यक्ष संकेतो द्वारा अज्ञातके प्रति प्रेमका प्रत्यय कराया जाता है। इस प्रकारकी प्रेमसाधना भी जैनदर्शन-जैसे वीतराग-दर्शनपर आधारित अपभ्रंश चरित-काव्योमें कल्पना तक नही की जा सकती। मुझे विश्वास है कि नव-अनुसन्धानकर्ता ऊपरी-ऊपरी तुलनाके बजाय गहराईसे काव्यगत प्रवृत्तियों और प्रेरणाओकी छान-बीन करेंगे। जहाँ तक पुष्पदन्तका प्रश्न है, उन्होने स्पष्ट शब्दोमें लिखा है कि उनका यह नाभेयचरित धर्मके अनुशासनके आनन्दसे भरा हुआ है। राग सवेदनाओंका उनके काव्यमें चित्रण है, परन्तु उसका उद्देश्य अज्ञातके प्रति राग संवेदना पैदा करना नही है।

एक कविके रूपमें पुष्पदन्तने राजसत्ताकी खुली और कडी आलोचना की है। परन्तु यह भी नियतिका क्रूर व्यंग्य समझिए कि उन्हें राजपुरुषके आश्रयमें रहना पड़ा। एक जगह वर्णन है कि राजलक्ष्मीसे क्या, जहाँ चामरोकी हवासे गुण उड़ा दिये जाते है। सज्जनता अभिषेक-जलसे धुल जाती है। राजलक्ष्मी दर्प और अविवेकसे भरी हुई है, मोहसे अन्धी और स्वभावसे दूसरोको हत्या करनेवाली है, सप्ताग राज्यके भारसे भरित है, पिता और पुत्र दोनोंके साथ एक साथ रमण करती है, कालकूटसे जन्मी है। वह मूर्खोमें अनुरक्त है और विद्वानोसे विरक्त है। अपने समयके राजन्यवर्गको परिभाषित करते हुए बाहुबलि कहता है—

"जो बलवान् चोर है वह राजा है, दुर्बलको और प्राणहीन बनाया जाता है। पशुके द्वारा पशुके मांसका अपहरण किया जाता है और मनुष्यके द्वारा मनुष्यका धन। रक्षाकी इच्छाके नामपर लोग एक समूह बनाते है, और किसी एक राजाकी आज्ञाका पालन करते हुए निवास करते हैं। मैंने तीनो लोकोको देख लिया है कि सिंह कभी भी झुण्ड बनाकर नही रहते। हे दूत, मुझे यही अच्छा लगता है कि मान भंग होने पर मर जाना अच्छा; जिन्दा रहना अच्छा नही?"

"जो बलवतु चोरु सो राणउ   णिव्वलु पुणु किज्जइ णिप्पाणउ
हिप्पइ मिगहु मिगेण हि आमिसु   हिप्पइ मणुयहु मणुएण वसु
रक्खाकंखइ जूहु रएप्पिणु   एक्कहु केरी आण लएप्पिणु
ते णिवसंति, तिलोइ गविट्ठउ   सीहहु केरउ वंदु ण दिट्ठउ"

यह कथन यद्यपि बाहुबलिका है जो जैन पौराणिक काल गणनाके अनुसार करोड़ों वर्ष पूर्व हुए। फिर भी वास्तविकता यह है कि उसमें कविके समयकी सामन्तवादी मनोवृत्तिका चित्रण है। यह युग (१०वी सदी) स्वदेशी सामन्तवाद (आभिजात्यवाद) के ह्रासका युग था। राज्य हथियानेके लिए देशमें व्यापक मारकाट और लूटपाट मची हुई थी। बाहुबलि अपने पिताके द्वारा दिये गये राज्यसे सन्तुष्ट है, परन्तु उसका सन्तोष उस समय आक्रोशमें बदल जाता है कि जब दूत उससे बड़े भाई भरतकी अधीनता मान लेनेका प्रस्ताव करता है, वह कहता है—

"केसरि केसरु वरसइ थणयलु   सुहडहु सरणु मज्झु धरणीयलु
जो हत्थेण छिवइ सो केहउ   किं कियंतु कालाणलु जेहउ"

सिंह की अयाल, वरसतीका स्तन, सुभटकी शरण और मेरी धरती, जो हाथसे छूता है, मैं उसके लिए कालानल और यमके समान हूँ। पुष्पदन्तके समय आभिजात्य वर्गमें तीन ही बातें प्रमुख थी—स्त्रीकी कुलीनता, भूखण्ड और शरणागतकी रक्षा।

रागचेतना

'नाभेयचरिउ' से यदि धर्मके अनुशासनको निकाल दिया जाये, तो पूरा काव्य रागचेतनासे भरा हुआ प्रतीत होगा। यह रागचेतना विशुद्ध मानवी रागचेतना है। रागचेतनाका अभिप्राय यहाँ मानवी प्रणयसे है, जिसके मूलमें रति है। रतिकी व्यंजना, व्यक्तिगत दृष्टिसे यद्यपि सम विषम है, परन्तु सामाजिक दृष्टिसे एकदम विषम है। पुष्पदन्त भारतीय सामन्तवादके क्षयकालमें जन्मे थे, जिसमें बहुपत्नीप्रथा विकृतरूपमें प्रचलित थी। सत्ताके विस्तार के साथ, अनेक स्त्रियोंका संग्रह, आज भले ही बुरा माना जाये, परन्तु सामन्तवादी युगमें आध्यात्मिक दृष्टिसे इसका औचित्य यह कहकर सिद्ध किया जाता था कि यह पुण्यका फल है। 'नाभेयचरिउ' मे कुछ स्वतन्त्र आख्यान है जिनके नायक रागचेतनाके एक-एक क्षणको भोगनेके बाद ही दीक्षा ग्रहण करते है :

संयोगकी और भी लीलाएँ देख लीजिए :—

'काहि वि विरहसिहि पउलिउ पलु धवलु वि कमलु हुवइ णीलुप्पलु
सहइ कामु महु समयागमणें णिहय कावि पिय समयागमणें
मउलिय फुल्लिय मल्लिय काणणि मंडणु देइ पुरधि ण काणणि
णिग्गय-पल्लव-णवसाहारहु मुयइ तित्ति विरहिणि साहारहु
पइं मेल्लेप्पिणु लवइ व कोइल सुहयत्तें किर भूसइ को इल
मुहमरु परिमल मिलिय सिलीम्मुह जे ते णं कंदप्प सिलिम्मुह
का वि चवइ पिय हउं तुह रत्ती अज्जु गइय महु दुक्खें रत्ती ॥
का वि भणइ पिय करि केसग्गहु वियलउ मालइ-कुसमपरिग्गहु।
का वि कहइ लइ चुंवहि वयणउं अवरु म देहि किं पि पडिवयणु'
घत्ता—'णउ मेल्लइ कवि बोल्लइ म करहि काइं वि विप्पिउ''
घरु वित्तु वि णिय चित्तु वि सयलु वि तुज्झु समप्पिउ ॥

किसीका मास विरहकी ज्वालासे पक जाता है और सफेद कमल नीला हो जाता है, वसन्तका समय आ जानेपर भी वह कामको सहन करती है, और प्रियका समय आ आनेपर आहत हो उठती है। वनमें बन्द मल्लिका खिल उठती है परन्तु, वह अपने कानमें उसका अलंकार धारण नही करती। नव आम्र वृक्षोमें पल्लव निकल आये है, परन्तु, विरहिणी सहकारमें तृप्त होना छोड़ देती है : पतिको छोडकर वह कोयलकी तरह बोलती है, आहत होनेपर कौन धरती को अलंकृत करता है। मुख पवनके सौरभसे जो भ्रमर इकट्ठे हो रहे थे, कामदेवके बाणोंके समान थे, कोई कहती है—हे प्रिय, मैं तुममें अनुरक्त हूँ, आजकी रात, दुःखमें कटी है। कोई कहती है—हे प्रिय, तुम मेरे बालोको बाँध दो। मेरा मालतीके फूलोंसे बँधा हुआ चूड़ापाश गिर रहा है। कोई कहती है, 'लो मेरा मुँह चूम लो और किसी दूसरेको प्रति वचन मत दो'। कोई उन्हें नही छोडती है, और कहती है कि कुछ भी बुरा मत करना। मैंने अपना घर, धन और चित्त सब कुछ तुम्हे सौंप दिया।

कामदेव बाहुबलिके प्रति नगर-वनिताओके ये उद्‌गार, हमें भी प्रसिद्ध हिन्दी कवि सूरदासकी गोपियोंकी याद दिला देते है, कि जब वे कृष्णकी वंशी की टेर सुनकर, आर्यपथकी जरा भी परवाह न करते हुए, चल देती है। इसमें सन्देह नही यह स्पष्टतः आर्यमर्यादाका उल्लंघन था। परन्तु सामाजिक दृष्टिसे जो मर्यादाएँ उचित होती है आध्यात्मिक दृष्टिसे वे कभी-कभी त्याज्य हो उठती है। यहां गोपियां, आत्माकी प्रतीक है, और कृष्ण ब्रह्म के। दोनोकी लीलाके गानका उद्देश्य मनुष्य रागचेतनाको भावनाके स्तर पर आन्दोलित कर व्यापक बनाना है। कृष्णकी यह विशेषता है कि वे लीलाओमें भाग लेते हुए भी तटस्थ है।

बाहुबलिको देखकर नगर-वनिताएँ अपनी प्रतिक्रियाएँ व्यक्त करती है, पर वह स्वयं तटस्थ हैं। यह राग-चेतनाके आलम्बनका चित्रण है, इसके आधारपर यह नही कहा जा सकता कि नगर-वनिताएँ हीन चरित्र की थी। हिन्दी कवि जायसी रत्नसेन और पद्मावतीके जिस प्रेमाख्यानको अपने काव्य 'पद्मावत' का आधार बनाते हैं उसका अपभ्रंश कथा-काव्योके उद्देश्य और रचना प्रक्रियासे कोई सम्बन्ध नही।

जिनभक्ति

'नाभेयचरित' का सबसे प्रमुख स्वर है 'जिनभक्ति'। जब कवि कहता है कि उसका यह चरित-काव्य धर्मके अनुशासनसे भरा है, तो इस धर्म अनुशासनमें भक्तिका स्थान महत्त्वपूर्ण है। यह भक्ति कविका अपना आविष्कार नही है, वह परम्परासे प्राप्त है फिर भी उसमें अभिव्यक्तिकी मौलिकताके साथ कविकी निजी अनुभूति भी है। मंगलाचरण और स्तुतिके अवतरणोका उल्लेख न करते हुए—यहाँ केवल कविकी अनुभूतिसे सम्बद्ध भक्तिके प्रसंगोंका विचार किया जायेगा।

शेषनाग धरणेन्द्र, "आदिनाथके विभिन्न नामोंकी व्याख्या करता हुआ कहता है :—

'भव विणासी भवो　　सिव पयासी सिवो
चित्ततमहोइणो　　दोस विजयी जिणो
पावहारी हरो　　तं पराणं परो
देव देवो तुमं　　ताहि दीणं ममं
णिग्गुणो णिद्धणो　　दुम्मई णिग्घिणो
परहरावासओ　　गहिय परगासओ
माणओ मेच्छहो　　रोहिओ रिंच्छओ
जाय ओ है भवे　　णारओ रउरवे
तुम्ह पडिकूलिमा　　जा कया सा कमा
एम भुत्ता भए　　आसि काले गए ॥' 8/8

हे आदि जिन, आप भव (संसार) का नाश करनेवाले भव हैं। शिवको प्रकाशित करनेवाले शिव हैं, चित्तके अन्धकारके लिए सूर्य हैं, दोषोंको जीतनेवाले जिन हैं, पापोंका हरण करनेवाले हर हैं, तुम श्रेष्ठोमें श्रेष्ठ हो, हे देवदेव, मुझ दीनको बचाओ, निर्गुण निर्धन दुर्मति निर्घृण, मैं, पर गृहमें निवास करनेवाला, और दूसरोका अन्न खानेवाला। मैं जन्मान्तरोमें मनुष्य म्लेच्छ रोहित, और रीछ हुआ हूँ, मैं संसार और रौरव नरकमें गया हूँ। हे देव, मैंने जो तुमसे प्रतिकूल आचरण किया है, उसका फल मैंने पा लिया है बीते समयमे।

धरणेन्द्र पाताल लोकका स्वामी है, और वह ऋषभके दोनो सालोंको विजयार्द्ध पर्वतकी समृद्ध श्रेणियाँ प्रदान करता है। ऐसी स्थितिमें उसका यह कहना कि मैं दूसरेके घरमें रहता हूँ, दूसरेका दिया खाता हूँ, "तो यह कविके जीवनका निजी सन्दर्भ है, जिसे वह धरणेन्द्रके मुखसे कहलाता है। इस समय कवि मन्त्री भरतके घरमें रह रहा है।"

दार्शनिक दृष्टिसे जैनधर्ममें भक्तिका महत्त्व दूसरे स्थान पर है, क्योंकि सृष्टि अनादि निधन है, जीव स्वयं अपना कर्त्ता-भोक्ता है, तीर्थंकर उसमें कुछ नही कर सकते। इस तथ्यसे जैन दार्शनिक परिचित थे, फिर भी यदि वे भक्ति करते हैं तो उसका कारण यह है कि ऐसा करना उनका स्वभाव है!

जो पद सेवइ तहु होइ सोक्खु　　तुह पडिकूलहु संभवइ दुक्खु
तुहुं पुणु दोहिं मि मज्झत्थभाउ　　इह एहउ फुडु वत्थुहि सहाउ

णिंदिज्जइ रवि पित्ताहिएहिं चंदु वि वाएण विवाइएहिं
ते दोण्णि वि एयहं किं करंति ससहावें णहयलि संचरंति
ससि सूरोसहि संघाउ जेम भुवणो वयारि जिण तुहुं मि तेम।
सरु दूसिवि जो ण वि पियइ वारि तहु तण्हइ णिवडइ तिव्वमारि"
जो रसइ तासु तिसणासु सज्जु सरवरहु ण एण ण तेण कज्जु"
जिह 'गरुलमंतु' गरलंतयारि तिह तुहुं वि सहावें दुरियहारि ॥"10/1

इन्द्र कहता है—"हे स्वामी, जो तुम्हारी सेवा करता है, उसे सुख होता है, तुमसे जो प्रतिकूल है उसको दु:ख होता है। परन्तु आप दोनोंमें मध्यस्थ हैं। इस संसारमें यही वस्तुका स्वभाव है।

पित्तकी अधिकतावाले सूर्यकी निन्दा करते हैं और वायुविकारसे पीडित लोग चन्द्रमा की। लेकिन ये दोनों (सूर्य और चन्द्रमा) इनका क्या करते हैं ? वे तो स्वभावसे आकाशमें विचरण करते हैं। चन्द्रमा और सूर्यके औषधि-संघातकी तरह, हे जिन आप भुवनका उपकार करते हैं। लेकिन जो सरोवरको दोष लगाकर उसका पानी नही पीता वह प्याससे तड़पकर मर जाता है। परन्तु जो पानी पी लेता है, उसकी प्यास शीघ्र मिट जाती है। सरोवरका न इससे मतलब और न उससे। जिस प्रकार गरुड़मन्त्र स्वभावसे विषका अपहरण करता है, उसी प्रकार हे जिन, आप स्वभावसे पापका अपहरण करनेवाले हैं।" इस प्रकार यद्यपि जिन भगवान्, सुख-दुखके प्रति मध्यस्थ हैं। उन्हें दुनियावालोंके सुख-दुखसे कुछ नही लेना-देना, फिर भी यदि उनके प्रति अनुकूलता रखनेवाले सुख और प्रतिकूलता रखनेवाले दु:ख पाते है, तो ऐसा नही है कि इससे उनकी मध्यस्थता भंग होती है, और ऐसा भी नही है कि लोगोंको सुख-दुखकी सापेक्ष अनुभूति नही होती। कवि सूर्य-चन्द्रमा और सरोवरके उदाहरणोंके द्वारा दोनोंमें (आराध्यकी तटस्थता और आराधककी सुख-दुख प्राप्तिके बीच) तारतम्यका सूत्र स्थापित करता है। यह सूत्र है स्वभाव। चन्द्रमा-सूर्य और सरोवरका काम है प्रकाश और पानी देना; इसके अतिरिक्त यदि लोग उनसे कुछ और ग्रहण करते हैं तो यह उनका स्वभावगत दोष है। प्रश्न है कि जब मनुष्यका स्वभाव ही उसके सुख-दुखके लिए उत्तरदायी है तो फिर जिनवरकी भक्ति करनेसे क्या लाभ ? स्वभावकी भक्ति करनी चाहिए ? बात ठीक है ? स्वभावकी भक्तिके लिए भी उसकी पहचान जरूरी है। जिनवरका स्वरूप आत्माके इसी सहज स्वभावकी पहचान कराता है। यहाँ सुखका तात्पर्य आत्म-सुख है ? जिनभक्तिसे भौतिक सुखकी आशा करना व्यर्थ है। जिनेन्द्रका स्वभाव पापोंका अपहरण करना है, पापोंके अपहरणका अर्थ है रागचेतनासे अलिप्तता। जब व्यक्ति रागचेतनासे दूर होता है तो उसकी पुण्य-पापकी भौतिक इच्छाएँ स्वत: शान्त हो जाती हैं और वह आत्माके सहज स्वरूपको जान सकता है ? इस प्रकार भक्ति—सहज आत्म-स्वरूपकी पहचानका निमित्त कारण है। पुत्र, भरत चक्रवर्ती, अपने पिता ऋषभ जिनकी भक्ति करता हुआ कहता है कि जीवनकी सार्थकता जिनेन्द्रभक्तिमें है।

जय भासिय एयाणेय भेय जय णग्ग णिरंजण णिरुवमेय
सकमत्थइं कम कम लाइं ताइं तुह तित्थु पसत्थु गयाइं जाइं
णयणाइ ताइं दिट्ठोसि जेहिं सो कंठु जेण गायउ सरेहिं
ते धण्ण कण्ण जे पइं सुणन्ति ते कर जे तुह सेसणु करंति ॥
ते णाणवन्त जे पइं मुणन्ति ते सुकइ सुयण जे पइं थुणन्ति
तं कव्वु देव जं तुज्झु रइउ सा जीह जाइ तुह णाउं लइउ
तं मणु जं तुह पयपोम लीणु तं धणु जं तुह पूयाइ खीणु।
तं सीसु जेण तुहुं पणविओसि ते जोइ जेहिं तुहुं झाइयोसि।

तं मुहुं जं तुह संमुहउं थाइ विवरंमुहुं कुच्छिय गुरुहुं जाइ
तेल्लोक्क ताय तुहुं मज्झु ताउ धण्णेहिं कहिं मि कह कह विणाउ। 10/7

एकानेक भेदोंको बतानेवाले आपकी जय हो; हे नग्न निरंजन और अनुपमेय आपकी जय हो; वे ही चरणकमल हैं जो आपके प्रशस्त तीर्थ तक जाते हैं? वे ही नेत्र सफल हैं जिन्होंने आपको देखा है; वही कण्ठ कण्ठ है जिसने आपका गान किया है। वे ही कान धन्य हैं जो आपको सुनते हैं; वे ही हाथ हाथ हैं, जो आपकी सेवा करते हैं। वे ही ज्ञानी हैं जो आपको गुनते हैं, वे ही सुजन कवि हैं जो आपकी स्तुति करते हैं; हे देव, वही काव्य है जो आपके लिए रचित है, वही जीभ है जिसने तुम्हारा नाम लिया, वह मन है जो तुम्हारे चरण कमलोंमें लीन है। वही धन है जो तुम्हारी पूजामें क्षीण है। वही शिष्य है जिसने तुम्हे प्रणाम किया है; वे ही योगी हैं जिन्होने तुम्हारा ध्यान किया है; वही मुख है जो आपके सम्मुख स्थित है। गुरुसे विमुख मुख कुत्सित हो जाता है।

हे त्रिलोकपिता, तुम मेरे पिता हो; मैं धन्य हूँ कि किसी प्रकार आपका नाम ले पाता हूँ? 'धण्णे हिं' की जगह, धण्णों हं, पाठ उचित है।

इस प्रकारके उद्‌गार, यद्यपि पुष्पदन्तके पूर्व मिलते हैं, परन्तु यहाँ इनका उल्लेख, महापुराणमे वर्णित भक्तिके समग्र स्वरूपको देखनेके लिए है।

जिनके नामकी महिमा बताता हुआ भरत चक्रवर्ती कहता है :

"हे आदिजिन, आप सिद्ध, मन्त्र और सिद्धौषधि हो, तुम्हारा नाम लेनेसे सांप नही काटता; आपके नामसे मतवाला हाथी भाग जाता है। आपके नामसे आग नही जलाती; शत्रुसेना अस्त्ररहित होकर डर जाती है, तुम्हारा नाम लेनेसे शत्रुओको सन्तुष्ट करनेवाली शृंखलाएँ टूट जाती है। तुम्हारे नामसे नर समुद्र तर जाता है, और क्रोध और दर्पकी ज्वाला शान्त हो जाती है, हे केवल किरण रवि, तुम्हारे नामसे रोगसे पीड़ित नीरोग हो जाते है।" 10/8

ये उद्‌गार आराध्य की महिमा और लोकोत्तर महिमामूलक विश्वास पैदा करनेके लिए हैं, यह विश्वास आत्म-विश्वासका जनक है, यही वह विश्वास है जो व्यक्तिको शक्ति, उत्साह और प्रेरणा देता है।

छोटे छन्दमें एक स्तुति देखिए :

जय सयल भुवणयल।
मल हरण इसि सरण।
वर चरण समधरण।
भव तरण जरमरण।
परि हरण जय वरण। 1/37

प्रकृतिचित्रण

प्रकृतिचित्रणके स्वरूप और उसके प्रकारोंके विषयमें हिन्दी आलोचकोंकी धारणा भ्रमपूर्ण है। काव्य-का मुख्य उद्देश्य मनुष्यकी अनुभूतियोंको अभिव्यक्त करना है। प्रकृति भी मनुष्यकी अनुभूतियोंको प्रभावित करती है। कभी प्रत्यक्ष रूपमे और कभी अप्रत्यक्ष रूपमें। कभी वह, सीधे भावोंको जन्म देती है, और कभी उत्पन्न भावोंको सचरित करती है। वैसे तो मनुष्य प्रकृतिकी गोदमें खेल-कूदकर बड़ा होता है, लेकिन जहाँ तक काव्यका सम्बन्ध है, मनुष्य और प्रकृतिको जोड़नेवाला तत्त्व है 'समय'। समयके विभिन्न प्रभाव और प्रतिक्रिया प्रकृतिमें विविध दृश्योंकी रचना करते हैं और मनुष्य-हृदयमें विविध भावोंकी। समयका यह प्रभाव ही कविके भावसे प्रकृतिके दृश्यको जोड़ता है। उक्त कारणोसे प्रकृतिके दो रूप स्पष्ट हैं—एक आलम्बन

और दूसरा उद्दीपन। कभी-कभी यथातथ्य और अलंकृत रूपमें भी प्रकृतिका चित्रण होता है। अलंकार या नारीकरण रूपमें प्रकृतिचित्रण, प्रकृतिका वर्णन नहीं माना जा सकता। महापुराणमें देशकी भौगोलिक स्थितिके वर्णनके साथ प्रकृतिका अलंकृत और यथातथ्य वर्णनके रूपमें प्रकृतिका चित्रण मिलता है।

जैसे मगधदेशके परिचयमें उसकी प्राकृतिक स्थितिका चित्रण है :

"जहाँ नवपल्लवोंसे सघन कुसुमित और फलित नन्दन वन है, जहाँ घूमती हुई काली कोयल ऐसी मालूम होती है, मानो वनलक्ष्मीके काजलका पिटारा हो। उड़ती हुई भ्रमरमाला ऐसी प्रतीत होती है जैसे श्रेष्ठ इन्द्रनीलमणिकी मेखला हो, सरोवरमें उतरी हुई हंसपंक्ति ऐसी मालूम होती है, मानो सज्जन पुरुषकी चलती-फिरती कीर्ति हो, हवासे प्रेरित जल ऐसे मालूम होते हैं जैसे रविके द्वारा सोखे जानेके भयसे काँप रहे हों। जहाँ कमलोंका लक्ष्मीके साथ स्नेह है और चन्द्रमाके साथ विरोध है, यद्यपि वे दोनों समुद्रसे उत्पन्न हुए हैं, परन्तु जड़ (जल) लोग इस तथ्यको नहीं जानते।"

"अंकुराइं णवपल्लवघणाइं कुसुमिय फलियइं णंदणवणाइं।
जहिं कोयल हिंडइ कसण पिंडु वण लच्छिहे णं कज्जल करंडु।
जहिं उड्डिय भमरावलि विहाइ पवरिंदणील मेहलिय णाइ।
ओयरिय सरोवरि हंसपंति चलधवलवाइं सप्पुरुष कित्ति।
जहिं सलिलइं मारुय पेल्लियाइं रवि सोस भएण व हल्लियाइं।
जहिं कमलहं लच्छिइ सहुं सणेहु सहुं ससहरेण वड्ढउ विरोहु।
किर दो वि णाइं महण्णुब्भवाइं जाणंति ण तं जणु संभवाइं।" 1/12

मगध देशकी प्रकृतिका यह वर्णन, अलंकृत शैलीमें है। उसमें प्रकृतिके सौन्दर्यका वर्णन प्रकृतिके उपकरणोंके द्वारा ही है। यदि सरोवरमें तैरती हुई हंसपंक्ति सज्जनकी कीर्तिकी तरह है, तो वहीं, पानी इसलिए काँप रहा है कि सूर्य अभी उसे सोख लेगा। जड़ लोगोंका स्वभाव यह है कि वे अपने मतलबसे प्यार करते हैं, लक्ष्मी और चन्द्रमा दोनों समुद्रसे उत्पन्न हैं, परन्तु कमलोंका लक्ष्मीसे स्नेह है और चन्द्रमासे विरोध।

डूबते हुए 'सूरज' का कवि उत्प्रेक्षाके द्वारा यह बिम्ब उभारता है :

रवि अत्थ सिहरि संपत्तु ताम
रत्तउ दीसइ ण रइहि णिलउ णं वरुणासा वहु घुसिण तिलउ
णं सग्ग लच्छि माणिक्कु ढलिउ रत्तुप्पलु णं णह-सरहु घुलिउ
णं मुक्कउ जिणगुणमुद्धएण णिय राय पुंजु मयरद्धएण
अद्धद्धउ जलणिहि जलि पइट्ठु णं दिसि कुंजर कुंभयलु दिट्ठु IV/15

इतनेमें सूर्य अस्ताचलपर पहुँच गया, वह ऐसा लगता है मानो रतिका घर हो, मानो पश्चिम दिशा-रूपी वधूका केशर तिलक हो, मानो स्वर्गकी लक्ष्मीका माणिक्य ढल गया हो। मानो आकाशके सरोवरसे रक्तकमल गिर गया हो, मानो जिनवरके गुणोंमें अनुरक्त होकर कामदेवने अपना रागसमूह छोड़ दिया हो, मानो समुद्रके जलमें आधे डूबे हुए दिशारूपी हाथीका कुंभस्थल हो।

ठीक सूर्यास्तके बाद चन्द्रमा उगता है :

णं पोमाकर यलल्हसिउ पोमु णं तिहुयण सिरि लायण्णधामु
सुर उब्भव विषम समावहारु तरुणि यल विलुलिय सेयहारु
ण अमिय बिंदु-संदोहु रुंदु जस वेल्लिहि केरउ णाइं कंदु IV/16

मानो लक्ष्मीके हाथसे कमल छूट पड़ा हो, मानो त्रिभुवनकी लक्ष्मीके सौन्दर्यका घर हो, मानो सुरतिसे उत्पन्न विषम श्रमका परिहार हो, मानो युवतीजनोके स्तनपर आन्दोलित श्वेतहार हो। मानो अमृत बिन्दुओं-का सुन्दर समूह हो, मानो यशरूपी लताका अंकुर हो।

पुष्पदन्तको प्रकृतिका ऐसा संश्लिष्ट चित्रण बहुत पसन्द है जिसमें प्रकृतिकी पृष्ठभूमिमें जिनवर ऋषभ तपस्या कर रहे हैं, इसमें श्लेषका चमत्कार है :—

गिरि सोहइ चुय महु आसवेंहि जिणु सोहइ रुद्धहिं आसवेंहिं
गिरि सोहइ वियलियणिज्झरेंहिं जिणु सोहइ कम्महुं णिज्जरेंहिं 37/19

किसी अशुभ प्रसंगके प्रारम्भका आभास कवि सूर्यास्तसे देता है। भरत बाहुबलिमे सन्धिवार्ता असफल होनेपर दोनों पक्षोमें युद्धकी तैयारी होने लगती है, इसी बीच सूर्य घपसे डूब जाता है :

कविकी कल्पनाः—

ता परिल्हसिउ दिणमणी णं सिरोमणी गयणकामिणीए।
अत्थं पडिणिवेइओ रुइ विराइओ णाइ जामिणीए॥

तब दिनमणि (सूर्य) इस प्रकार खिसक गया जैसे आकाशकी लक्ष्मी यामिनीने कान्तिसे युक्त अपना शिरोमणि अस्तको निवेदित कर दिया हो। दिवसके प्रवेशका निषेध कर दिया गया।

"ना वेसहि भणेवि अइरत्तउ दिवसहु दिण्णु दीवु सिहितत्तउ
णं चउ पहरहिं वणु अहिकंतिहि जायउ लोहियद्दु णहदंतिहि
णाइं पवाल कुंभु दिसणारिइ घरिवि मुक्कु दिक्करिणियारिइ
पउलिवि तलिवि दलिवि दलवट्टिवि जीवरासि जगभायणि घट्टिवि।
उग्घाडिवि ससहर मुह णिद्धहि संमुहियहि तियसासामुद्धहि
णं सिंदूर करंडु क्षसच्छिइ दाविउ लवण जलहि जललच्छिइ।
मयरंदुल्लोलु व जगकमलहु णिउ वाएण वरुणमुहकमलहु
गोमिणीइ हरिरइरसभरिउ पोमरायवत्तु व वीसरिउ।
अत्यमियउ जाइवि अवरासइ रत्तु मित्तु णंगिलियउ वेसइ॥

पुणु दीसइ संझारायएण भुवणु असेसु वि रत्तउ
सहुं गिरि दरिसरि णंदणवर्णाहि लक्खारसिणं घित्तउ" ॥23॥

तुम प्रवेश मत करो ऐसा कहकर मानो दिवसके लिए अत्यन्त रक्त और शिखाओंसे सन्तप्त दीप दे दिया गया। मानो अत्यन्त कान्तिवाले आकाशरूपी गजके चारो प्रहर (प्रहार और प्रहर) के कारण वन रक्तसे लाल हो गया, मानो दिग्गजकी पत्नी दिशारूपी नारीके द्वारा प्रवालघट ग्रहण कर छोड़ दिया गया है, मानो विश्वरूपी पात्रमें जीवराशिको (कि जो दण्डविहीन जनोके लोहूसे आरक्त है) काटकर, तलकर, कूट-पीसकर दिशापथोंमें उसी प्रकार छितरा दिया गया जैसे कालके द्वारा अण्डा फेंक दिया गया हो। जिनकी आँखें मछलीके समान हैं, लवण समुद्रकी ऐसी लक्ष्मीको अपना सिन्दूरका पिटारा दिखाया हो मानो विश्वरूपी कमलके परागके उच्छलनकी वायु ले गया हो, मानो गोमिनीके द्वारा फेंका गया कृष्णके क्रीडारससे भरा हुआ पद्मराग मणिका पात्र हो। सूर्य पश्चिम दिशामें जाकर डूब गया, मानो अपने अनुरक्त मित्रको वेश्याने निगल लिया हो। फिर अशेष भुवन सन्ध्यारागसे आरक्त हो गया॥

'सन्ध्याराग' के प्रति कविका विशेष मोह रहा है। इस शब्दका उल्लेख उसने कई बार किया है। सन्ध्याराग कविकी कल्पना कई रंगोंमें रँगती है।

संझारायजलणु जो भमियउ	सो तमजल कल्लोलहिं समियउ
संझाराय घुसिणु जं संकिउ	तं तमोह मयणाहें ढंकिउ
संझारायविडंबि जो फुल्लिउ	सो तमतंबेरवइ पेल्लिउ
चंदमइंदें तमकरि भग्गउ	किं जाणहुं सो तासु जि लग्गउ।
मयणिहेण दीसइ सुहयारउ	तप्पवेसु वइरिहिं मल्लारउ
विसइ गवक्खहिं घणचलि घोलइ	वहुहारु व ससि तेउ णिहालइ
रंधायारु वियउ अंधारइ	दुद्ध संक पयणइ मज्जारइ
रइ-पासेय बिंदु तेणोज्जलु	दिट्ठु भुयगहिं णं मुत्ताहलु।
दिट्ठउ कत्थइ दीहायारउ	घरि पइसंतउ किरणुक्केरउ
मोरें पंडरु सप्पु वियप्पिवि	मुद्धें कइ व ण गहिउ झडप्पिवि। 6/24

पश्चिम दिशामें जो सन्ध्याराग (सान्ध्य लालिमा) की आग लगी थी उसे अन्धकाररूपी जलने शान्त कर दिया, जो सन्ध्यारागरूपी केशरकी शंका की गयी थी उसे तम-समूहरूपी सिंह ने नष्ट कर दिया। सन्ध्यारागरूपी जो वृक्ष खिला हुआ था उसे अन्धकाररूपी गजराजने उखाड़ फेंका। चन्द्रमारूपी सिंहने अन्धकाररूपी गजको भगा दिया, क्या वही उसके घुटनोंमें लग गया? मृगके बहाने वह सुन्दर दिखाई देता है, सफेद रूपमें वह शत्रुओंको सुन्दर दिखाई देता है, वह गवाक्षोंसे प्रवेश करता है, स्तनतलपर व्याप्त होता है और इस प्रकार शशिका प्रकाश वधूहारकी तरह जान पड़ता है। अन्धकारमें वह रन्ध्राकार दिखाई देता है, बिल्लीके लिए दूधकी आशंका उत्पन्न होती है, चाँदनीसे उज्ज्वल, पसीनेकी बूँद ऐसी मालूम होती है मानो साँपका मुक्ताफल हो। कहीं घरमें प्रवेश करता हुआ किरण-समूह सर्पके समान दिखाई देता है। भोला मयूर उसे सफेद साँप समझकर किसी प्रकार झटपट उसे पकड़ता भर नहीं।

उक्त अवतरणमें प्रकृति सौन्दर्य और अलंकार सौन्दर्य मिला हुआ है। सन्ध्यारागका आग बनना, अन्धकारका जल बनना, सन्ध्यारागपर केशरकी शंका, तो अन्धकारका सिंहकी भूमिका ग्रहण करना, सन्ध्यारागका वृक्षके रूपमें खिलना और अन्धकारका उसे गज बनकर उखाड़ना, यहाँ तक तो सन्ध्याराग और अन्धकारका संघर्ष है। उसके बाद जब चन्द्ररूपी सिंह अन्धकारके महागजको परास्त कर देता है, फिर अन्धकार और चन्द्रके मिले-जुले रूपके चित्र कवि अंकित करता है। अन्तमें चन्द्रमाका उद्दीपन रूप आता है। जो भ्रान्ति उत्पन्न करता है, सचेतन मानवोंको ही नहीं, पशुवर्गको भी।

इसके ठीक बाद दूसरा दृश्य प्रभातका है :

"ताम उग्गमिउ सूरु पुव्वासइ	रइ-रंगु व दरिसिउ कामासइ
किंसुय कुसुम पुंजु णं सोहिउ	णं जगभवणि पईउ पवोहिउ
चारु सूर वंसहु णं कंदउ	लोहिउ ससिरोसेण दिणिंदउ
मज्झु परोक्खइ आवइ पाविय	कमलिणि वेल्लि भणिवि संताविय
एम भणंतु व गयणि व लग्गउ	णं रयणियरहु पच्छइ लग्गउ।" 16/26

इतनेमें पूर्व दिशामें सूर्य उग आया, कामाशाने उसे रतिरंगके समान देखा। वह ऐसा शोभित था जैसे टेसूके खिले हुए फूलोंका समूह हो। मानो विश्वरूपी भवनमें दीप प्रज्वलित कर दिया गया हो। मानो सुन्दर सूर्यवंशका अंकुर हो। दिनेन्द्र चन्द्रके रोषसे नाराज होकर लाल है कि यह पापी मेरे परोक्षमें आया तथा कमलिनीको बेल समझकर इसने सताया। ऐसा कहता हुआ वह उस चन्द्रमाके पीछे लग गया। चन्द्र और सूर्यके बीच टक्करके मूलमें सामन्तवादी रागचेतना है। जब पुराण युगके उदात्त नायकों (कुछ अपवाद छोड़कर) के वर्ग सुन्दर स्त्रीके लिए झगड़ते रहे हैं, तो आखिर सूर्य-चन्द्रमा भी प्रकृतिके उदात्त

नायक हैं। कवि भी प्रकृतिके कार्यकलापोंपर उसी भावनासे आरोप करता है जो उसके मनमें होती है, उसका मन भी युगमानसकी उपज होता है।

भरत-बाहुबलि संवाद और द्वन्द्व

भरत-बाहुबलि संवाद नाभेयचरितका सबसे अधिक हृदयस्पर्शी अंश है। बड़ा भाई भरत दिग्विजयके बाद अयोध्या लौटता है। उसका चक्र नगरीमे प्रवेश नही करता। क्योंकि अभी भरतकी दिग्विजय अधूरी है, अधूरी होनेका कारण बाहुबलि सहित उसके शेष निन्यानवे भाइयोंका भरतकी अधीनता न मानना है। भरत अपना दूत भेजता है। दूसरे भाई अधीनता माननेके बजाय जिनदीक्षा ग्रहण कर तप करने चले जाते हैं, परन्तु बाहुबलि अधीनता माननेसे इनकार कर देता है। द्वन्द्वका मूल कारण यही है। सेनाओंमें टकराहटको रोककर वृद्ध मन्त्री द्वन्द्व युद्धकी सलाह देते हैं। भरत युद्धमें हार जाता है। जीतकर भी बाहुबलि धरतीका भोग नही करता, वह जिनदीक्षा ग्रहण कर लेता है। कविने समूचे प्रसंगका सुकुमार और मार्मिक वर्णन किया है। भाषा अनुभूतिमयी और प्रसंगके अनुकूल है। चक्र अयोध्याकी सीमापर ठहर गया है, भरत चकित है कि ऐसा क्यों हुआ।

> अक्क मियक्कउ बाहिरि थक्कउ णावइ दइवें खीलिवि मुक्कउ
> णउ पइसइ पुरि चक्कु णिरुत्तउ सुइघरि णं अण्णाय विढत्तउ
> माया णेह णि वंघणि मित्तु व पत्र दाणि पाविट्ठहु चित्तु व

"जैसे अतिक्रान्त सूर्य रुक गया, मानो देवने कीलकर छोड़ दिया, निश्चय ही चक्र नगरीमे प्रवेश नही करता। उसी प्रकार जिस प्रकार पवित्र घरमें अन्यायकी बढती प्रवेश नही करती, जिस प्रकार परपुरुषसे अनुराग करनेमें सतीका चित्त प्रवेश नही करता।

इन चीजोंका प्रवेश जिस प्रकार असम्भव है, उसी प्रकार उस चक्रका प्रवेश असम्भव हो गया।

भरत दूत भेजता है, और वह बाहुबलिकी प्रशंसा करता है :

> जय कुसुमाउह रइ रमणीवर अलि माला जीया संधिय सर
> पइ पेच्छिवि घोलइ उप्परियणु वियलइ णारिहि णीवीवंघणु
> चिहुरभारु दिढवंधु वि पसिढिलु हवइ रयंपु सवइ सोणीयलु
> रंभा णव रंभा इव डोल्लइ रइवाएं आहल्ल वि हल्लइ
> देव तिलोत्तम तिलतिल खिज्जइ विरहें उव्वसि उव्वेज्जइ
> मेणइ मीणि व थोवइ पाणिइ पिय संतप्पइ रवियर माणिइ

"हे रति रमणीके वर, हे अलिमालाकी प्रत्यंचापर सरका सन्धान करनेवाले कामदेव आपको देखकर स्त्रियोंके दुपट्टे हिल उठते हैं। स्त्रियोकी नीवीकी गांठ खुल जाती है, अच्छी तरह बँधा हुआ चिकुरभार ढीला पड़ जाता है, शुक्र निकलने लगता है और कटितल टपकने लगता है, नेत्रयुगल चलता और मुड़ता है; शरीरमें पसीना बढ़ने लगता है। रंभा नव-कदली वृक्षकी तरह काँप उठती है, और रतिकी हवासे वह अधिक हिल उठती है। हे देव! तिलोत्तमा आपके कारण तिल-तिल खिन्न हो उठती है। विरहमें उर्वशी उद्विग्न है। मेनका उसी प्रकार तड़प रही है जिस प्रकार थोड़े पानीमे मछली तड़प उठती है, भले ही वह पानी सूर्य-किरणोंमे सन्मानित हो।" इसके बाद जब दूत सन्धिकी बात करता है तो बाहुबलि भड़क उठता है :

बाहुबलिका दो-टूक उत्तर है—

"संघट्टमि लुट्टमि गयघडहु दलमि सुहड रणमग्गि।
पहु आवउ रावउ महाबलु महु बाहुबलिहि अग्गइ॥"

"मैं युद्ध करूँगा। महागजघटाको लोट-पोट करूँगा और युद्धके मार्गमें सुभटका संहार करूँगा।"

दूत लौटकर भरतसे कहता है :—

"विसमुदेउ बाहुबलि णरेसरु णेहु ण संघइ संघइ गुणि सरु
कज्जु ण बंधइ बंधइ परियरु संधि ण इच्छइ इच्छइ संगरु
पइं ण पेच्छइ पेच्छइ भुयबलु आण ण पालइ पालइ णिय छलु।
माणु ण छंडइ छंडइ भयरसु दयवु ण चिंतइ चिंतइ पोरुसु
संति ण मण्णइ मण्णइ कुलकलि पुहइ ण देइ देइ बाणावलि।" 26/21.

"हे देव! बाहुबलि विषम राजा है, वह आपसे स्नेह नहीं जोड़ता, डोरीपर तीर जोड़ता है, वह काम नहीं साधता परिकर साधता है, सन्धि नहीं चाहता, युद्ध चाहता है, आपको नहीं देखता, अपने बाहुबलको देखता है, वह तुम्हारी आज्ञा नहीं पालता, अपना छल पालता है। वह मान नहीं छोड़ता भयरस छोड़ देता है, वह दैवकी चिन्ता नहीं करता, पौरुषकी चिन्ता करता है, वह शान्तिको नहीं मानता, कुलकलहको मानता है।"

दूतके इस प्रतिवेदनमें बाहुबलिके चरित्रके साथ पुष्पदन्तकी भाषाका चरित्र भी मुखरित है।

अपने हाथों अपने भाईकी पराजय देखकर बाहुबलि आत्मग्लानिसे भर उठता है, अपनेको कोसता हुआ वह कहता है :—

"चक्कवट्टि णियगोत्तहु सामिउ जेण महंत भाइ ओहामिउ
हा किं किज्जइ भुयबलु मेरउ जं जायउ सुहिदुण्णयगारउ
महि पुण्णालि व केण ण भुत्ती रज्जहु पडउ वज्जु समसुत्ती
रज्जहु कारणि पिउ मारिज्जइ बंधवहुं मि विसु संचारिज्जइ"

जिसने अपने गोत्रके स्वामी अपने बड़े भाईको पराजित किया (ऐसा मैं नीच हूँ) हा! क्या किया जाये जो मेरा बाहुबल सज्जनके प्रति अन्यायकारी हुआ। इस धरतीरूपी वेश्याका भोग किसने नहीं किया, राजपर गाज गिरे, यह कहावत बिलकुल ठीक है, राज्यके लिए पिताको मार दिया जाता है, और भाइयोंको विष दे दिया जाता है, राज्यसत्ताके लिए पिता और भाइयोंकी हत्या केवल सामन्तवादकी ही विशेषता नहीं थी। वह प्रजातन्त्रमें भी है और रूप बदलकर चरित्र-हत्याके रूपमें जीवित है। बाहुबलिका दीक्षा-ग्रहण करना उनकी व्यक्तिगत समस्याका हल है, राष्ट्रीय समस्याका नहीं। भरत और बाहुबलिका द्वन्द्व उनका घरेलू मामला था। जबतक समाज और राष्ट्र है, तबतक राज्यका होना जरूरी है। क्योंकि अराजक जनपदमें मत्स्य न्यायका बोलबाला होता है। फिर भी बाहुबलिका दीक्षा-ग्रहण इस तथ्यका प्रतीकात्मक संकेत है कि राजनीतिक मूल्योंसे मानवीय मूल्योंका महत्त्व अधिक है। राज्यका उद्देश्य ऐसी व्यवस्था उत्पन्न करना है कि जिससे समाजमें मानवी मूल्योंकी प्रतिष्ठा हो। यहाँ एक प्रश्न यह उठता है कि अपने पिता ऋषभके जीवित रहते हुए भरतका सत्ता-विस्तारके लिए दिग्विजय करना, दूसरोंका राज्य हड़पना कहाँ तक उचित था? भरत, ब्राह्मणवर्णकी स्थापना करनेके बाद जब ऋषभजिनसे यह पूछता है कि उसने यह उचित किया या अनुचित, तो ऋषभ उसके इस कार्यको बुरा बताते हैं, वे ब्राह्मणवर्णकी स्थापनाको नैतिक मूल्यों-के हितमें नहीं मानते। परन्तु वे भरतसे साम्राज्य विस्तारके लिए कुछ नहीं कहते। लेकिन जब 'बाहुबलि'

कहता है कि कुछ बलवान् उचक्के जनसुरक्षाके नामपर व्यूह बनाते हैं और एकको नेता बनाकर राष्ट्रका शोषण शुरू कर देते हैं—तो प्रश्न उठता है, बाहुबलि अपने भाईसे यह कह रहा है या 'पुष्पदन्त' अपने समयकी राजनीतिक लूट-खसोटकी आलोचना कर रहे हैं ? भरत जब हिमवान् पर्वतकी 'वृषभ' चोटीपर जाता है, तो उसपर वह अनेक राजाओंके नाम खुदे हुए देखता है।

मनुष्योंके द्वारा लिखित अक्षरों और दिवंगत राजाओंके हजारो नामोसे वह वृषभ पर्वत चारों ओरसे आच्छादित था। भरत जहाँ देखता है, वहाँ वह पर्वत शिखरको नाम सहित पाता है। भरत सोचता है कि मैं अपना नाम कहाँ लिखूँ ?

"अण्णण्णहिं रायहिं भुत्तियइ इह एयइ वसुमइ धुत्तियइ
वोलाविय के के णउ णिवइ भोइंधहु मुज्झइ तो वि मइ
धण्णु परमेसरु एक्कु पर जो हुउ पव्वइयउ मुएवि घर" ॥ 15/6

एकके बाद एक राजाके द्वारा भोगी गयी इस धूर्त धरतीके द्वारा कौन-कौन राजा अतिक्रान्त नहीं हुए, फिर भी मोहसे अन्धे व्यक्तिकी मति भ्रमित होती है, लेकिन एक परमेश्वर ऋषभ धन्य है कि जिसने धरतीका त्याग कर संन्यास ग्रहण किया। पुरोहित भरतसे कहता है :

"परु फेडवि जिह घेप्पइ पुहइ तिह णामु वि फेडिज्जइ णिवइ" ॥ 15

हे राजन् ! जिस प्रकार दूसरेको नष्ट कर धरती ग्रहण की जाती है, उसी प्रकार नाम भी नष्ट कर (अपना नाम लिखा जाता है) भरत और पुरोहितका यह संवाद विश्वके राजनीतिक इतिहासका प्रतीक विश्लेषण है। भारतीय सन्दर्भमें देखा जाये तो हिमालय पर्वतके वृषभ पर्वतपर अंकित नामाक्षरोंसे लेकर दो साल पूर्व लाल किलेमें गाड़े गये कालपात्र तक एक ही प्रवृत्ति सक्रिय दिखाई देती है—सत्ता और नामकी भूख। जैन पौराणिक दृष्टिसे ऋषभ और भरतके बीच राजाओंके होनेका प्रश्न नहीं उठता। हाँ, पुष्पदन्तके समय तक भारतीय इतिहासमें कई राजवंशोंका उत्थान-पतन हो चुका था। अतः भरतके उक्त उद्गारोंको वस्तुतः पुष्पदन्तके समकालीन राजनीतिक और सामाजिक परिवेशमें देखा जाना चाहिए।

□

विषय-सूची

साथ देवोंके द्वारा अभिषेक। (१५) स्नानके बाद अलंकरण। (१६) जिनका वर्णन। (१७) गन्धोदककी वन्दना। (१८) सामूहिक उत्सव (१९) स्तुति। (२०) विभिन्न वाद्योंके साथ इन्द्रका नृत्य; उसकी व्यापक प्रतिक्रिया। (२१) जिनशिशुको लेकर अयोध्या आना; उनका वृषभ नामकरण।

सन्धि ४ .... ७०–९१

(१) देवियो द्वारा बालकका अलंकरण; विद्याभ्यास और समस्त शास्त्रों और कलाओका ज्ञान। (२) जिनका यौवनवय प्राप्त करना। (३) जिनकी स्तुति। (४-५) शैशव क्रीड़ा। (६) नाभिराज द्वारा विवाहका प्रस्ताव। (७) पुत्रकी असहमति और कामक्रीड़ा और विषयसुखकी निन्दा। (८) चारित्रावरण कर्मके शेष होनेके कारण ऋषभदेवकी विवाहकी स्वीकृति; कच्छ और महाकच्छकी कन्याओंसे विवाहका प्रस्ताव। (९) विवाहकी तैयारी। (१०) मण्डपका निर्माण। (११) वाद्यवादन; कंकणका बाँधा जाना। (१२) वरवधू। (१३) कामदेवका धनुष तानना; वाद्य-वादन; कन्यादान। (१४) दोनो कन्याओका पाणिग्रहण। (१५) सूर्यास्त होना। (१६) चन्द्रोदयका वर्णन। (१७) नाट्य प्रदर्शन। (१८) विभिन्न रसोंका नाट्य। (१९) सूर्योदय। ऋषभ जिन राज्य करने लगे।

सन्धि ५ .... ९२–११५

(१) यशोवतीका स्वप्न देखना। (२) स्वप्नफल पूछना। (३) गर्भवती होना; पुत्रजन्म। (४) चूड़ाकर्म और अलंकरण। (५) बालकका बढना; सौन्दर्यका वर्णन; सामुद्रिक लक्षण। (६) रूप चित्रण और ऋषभ द्वारा प्रशिक्षण। (७-८) नीतिशास्त्रका उपदेश। (९-१०) क्षात्रधर्मकी शिक्षा। (११) राजनीतिशास्त्र। (१२) राज्य-परिपालनकी शिक्षा। (१३) अन्य पुत्रोका जन्म। (१४) बाहुबलिका जन्म और यौवनकी प्राप्ति। (१५) प्रथम कामदेव बाहुबलिके नवयौवन और सौन्दर्यकी नगरवनिताओ पर प्रतिक्रिया। (१६-१७) नगर-वनिताओंकी चेष्टाएँ। (१८) ब्राह्मी और सुन्दरीको ऋषभ जिनका पढ़ाना। (१९) कल्प-वृक्षोंकी समाप्ति, ऋषभके द्वारा असि मसि आदि कर्मोंकी शिक्षा। (२०) उस समयकी समाज व्यवस्थाका चित्रण। (२१) गोपुरोकी रचना। (२२) ऋषभ द्वारा धरतीका परिपालन।

सन्धि ६ .... ११६–१२७

(१-२) ऋषभ राजाके दरबार और अनुशासनका वर्णन। (३-४) इन्द्रकी चिन्ता कि ऋषभ जिनको किस प्रकार विरक्त किया जाये। (५-९) नीलांजनाको भेजना और संगीत शास्त्रका वर्णन। नीलांजनाका नृत्य करना और अन्तर्धान होना।

सन्धि ७ .... १२८–१५७

(१-१४) बारह उत्प्रेक्षाओंका कथन। (१५-१९) आत्मचिन्तन और लौकान्तिक देवो द्वारा सम्बोधन। (२०-२१) दीक्षाका निश्चय, और भरतसे राजपाट सम्हालनेका प्रस्ताव; प्रतिरोध करनेके बावजूद भरतको राजपट्ट बाँध दिया गया। (२२) सिंहासनपर आरूढ़ भरत और ऋषभनाथ। (२३) वाद्य गान और उत्सवके साथ अभिषेक। (२४) ऋषभ भगवान् द्वारा दीक्षा-ग्रहणके लिए प्रस्थान। (२५-२६) सिद्धार्थवनका वर्णन; दीक्षा ग्रहण करना।

कथासार

सन्धि १

आवश्यक मंगलाचरण, प्रारम्भिक परिचय और प्रतिज्ञाके अनन्तर कवि बताता है कि अन्तिम तीर्थंकर महावीरका समवसरण राजगृहके विपुलाचल पर्वतपर आता है। मगधराज श्रेणिक महावीरकी वन्दनाभक्ति करनेके लिए जाता है।

सन्धि २

समवसरणमे वन्दनाभक्तिके बाद राजा श्रेणिक गौतम गणधरसे पूछता है कि महापुराणकी अवतारणा किस प्रकार हुई। गौतम गणधर सृष्टिका संक्षिप्त वर्णन करते हुए बताते हैं कि भोगभूमिका क्षय होनेपर कर्मभूमि प्रारम्भ होती है। क्रमशः चौदह कुलकरोका जन्म हुआ। अन्तिम कुलकर नाभिराज और मरुदेवीसे प्रथम तीर्थंकर ऋषभ जिनके जन्मके समय इन्द्रके आदेशसे कुवेरने अयोध्या नगरीकी रचना की।

सन्धि ३

अतिशय और चमत्कारोके बीच ऋषभ जिनका जन्म होता है। इन्द्रके नेतृत्वमें देव सुमेरु पर्वतपर शिशु जिनका अभिषेक करते है। अनेक उत्सवोके बाद शिशु माताको सौपकर देवता चले जाते हैं।

सन्धि ४

धीरे-धीरे ऋषभ जिन शैशव क्रीड़ाएँ समाप्त करते हैं। पिताके अनुरोधपर ऋषभसे कच्छ और महाकच्छकी कन्याओ यशोवती और सुनन्दाका विवाह हुआ।

सन्धि ५

यशोवतीसे भरतका जन्म। बड़े होनेपर ऋषभ उसे ज्ञान-विज्ञान और कलाओंमे दीक्षित करते हैं। यशोवतीसे सौ पुत्र उत्पन्न हुए और एक कन्या ब्राह्मी। सुनन्दासे कामदेव, बाहुबलि और सुन्दरी। ऋषभ धरतीका सुशासन करते है। चूँकि उन्होने कर्मभूमिके प्रारम्भमें इक्षुरसका पान करना सिखाया था अतः उनका कुल इक्ष्वाकुकुल कहलाया।

सन्धि ६

इन्द्र सोचता है कि ऋषभ भोग-विलासमें लीन है, यदि उन्होने दीक्षा ग्रहण कर धर्मका उपदेश नही किया तो जैनधर्मका उच्छेद हो जायेगा। वह नीलांजनाको ऋषभके दरबारमें नृत्य करनेको भेजता है। नर्तकी नाचते-नाचते मृत्युको प्राप्त होती है। ऋषभ जिनको वैराग्य उत्पन्न हो जाता है।

सन्धि ७

वह बारह भावनाओका चिन्तन करते है। भरतको शासन-भार देकर और परिवारसे विदा लेकर अनेक राजाओके साथ दीक्षा ग्रहण करते हैं।

सन्धि ८

ऋषभ जिन छह माहका कठोर तपश्चरण करते है। उनके साथ जिन राजाओने दीक्षा ग्रहण की थी वे उससे डिग गये। ऋषभ जिनके साले तथा महाकच्छ एव कच्छ पुत्र नमि-विनमि जो कार्यवश बाहर गये हुए थे, आये और तलवार लेकर प्रतिमायोगमें स्थित ऋषभ जिनके सम्मुख खडे हो गये। उनका कहना था कि उन्हें कुछ नही मिला जब कि दीक्षा लेते समय ऋषभ जिनने सारी धरती अपने पुत्रोको बाँट दी। पाताल लोकमें धरणेन्द्रका आसन काँपता है, और वह वहाँ आकर ऋषभ जिनकी वन्दनाभक्ति करता है। बादमें धरणेन्द्र उन्हें विजयार्ध पर्वतपर ले जाकर उत्तर और दक्षिण श्रेणियाँ प्रदान करता है। वे दोनो विद्याधर श्रेणियाँ थी। नमि-विनमि इसे ऋषभ जिनकी भक्तिसे उत्पन्न पुण्यका परिणाम मानते है।

सन्धि ९

छह माहके बाद ऋषभ जिन आहार ग्रहण करने जाते है। हस्तिनापुरका राजा श्रेयास स्वप्न देखता है, वह अपने बडे भाई कुरु राजा सोमप्रभसे स्वप्नका फल पूछता है। सोमप्रभ बताते है कि तुम्हारे घर कोई महान् आदमी आयेगा। द्वारपाल ऋषभ जिनके आनेकी सूचना देता है, दोनों भाई दर्शनके लिए जाते है। उसे पूर्वजन्मके स्मरणसे आहार देनेकी विधि ज्ञात हो जाती है। वह इक्षुरसका आहार देता है। देव रत्नोकी वृष्टि करते है। ऋषभ जिन पुरिमताल उद्यानमें पहुँचकर तप करते है। उन्हें केवलज्ञान प्राप्त होता है। इन्द्र समवसरणकी रचना करता है।

सन्धि १०

ऋषभ जिन धर्मका कथन करते है। भरत समवसरणमें उपस्थित होता है।

सन्धि ११

ऋषभ द्वारा तिर्यंच जीवोंका कथन।

सन्धि १२

भरतका दिग्विजयके लिए प्रस्थान। उसे चौदह रत्नोकी प्राप्ति होती है। वह गंगा नदीके तटपर पहुँचता है। गंगासे उपहार प्राप्त कर भरत पहाडोंके अन्तरालमें बसी घोष बस्तीमें जाता है। वहाँसे आगे बढता है।

सन्धि १३

मगधराजको जीतकर वह दक्षिण द्वारके वरदामा तीर्थके लिए प्रस्थान करता है। वरतनुको जीतता है। सिन्धुनदीकी ओर कूच करता है।

सन्धि १४

विजयार्ध पर्वतकी विजय। म्लेच्छ मण्डलका पतन। आवर्त और किलातकी हार।

सन्धि १५

हिमवन्त पर्वतके लिए कूच। भरत महीधरपर अपना नाम अंकित करता है। उसमें उसने यह लिखा—"मैं कामका क्षय करनेवाले प्रथम तीर्थंकर ऋषभ जिनका पुत्र हूँ, नामसे भरत, जो धरतीका श्रेष्ठ भरताधिपति माना जाता है। मैंने हिमवन्तसे लेकर समुद्र पर्यन्त धरतीको स्वयं जीता है।" नमि और विनमि राजाओंसे भेंट। कैलास पर्वतपर जाकर वह ऋषभ जिनसे भेंट करता है।

सन्धि १६

दिग्विजयके उपरान्त भरत चक्रवर्ती अयोध्या वापस आता है। परन्तु उसका चक्र नगर सीमाके भीतर प्रवेश नहीं करता। कारण यह था कि बाहुबलि सहित भरतके सौ भाई उसके अधीन नहीं थे। भरत अपना दूत भेजता है। उसके सगे भाई, सांसारिक सुखोंके लिए अधीनता स्वीकार करनेके बजाय ऋषभ जिनसे दीक्षा ग्रहण कर लेते हैं। बाहुबलि न तो भरतकी अधीनता स्वीकार करता है और न दीक्षा ग्रहण करता है।

सन्धि १७

दोनोंमें युद्ध छिड़ता है। मन्त्री सेनाओंके युद्धको रोककर द्वन्द्व युद्धकी सलाह देते हैं। भरत तीनों युद्धोंमें हार जाता है।

सन्धि १८

बाहुबलि अपने बड़े भाईकी पराजयसे दुःखी हो उठते हैं। अनुतापके साथ वे भरतको समझाते हैं और उनसे क्षमा माँगते हैं। वह ऋषभ जिनके पास जाकर दीक्षा ग्रहण करते हैं। भरत राजपाट सँभालते हैं। कुछ समय बाद भरत ऋषभ जिनवरकी वन्दना करने जाते हैं। वह उनसे बाहुबलिको केवलज्ञान न होनेका कारण पूछते हैं। ऋषभ जिन बताते हैं कि मानकषायके कारण बाहुबलि मुक्तिसे वंचित है। भरत जाकर अपने भाईसे क्षमा याचना करते हैं। बाहुबलिको केवलज्ञान प्राप्त होता है। भरत अयोध्या वापस आकर अपना राज-काज देखते हैं।

शुद्धि-पत्र

	संधि	पृ०	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१.	२.१६.७	३९	४	कुम्भस्थलके समान	कुम्भस्थलपर
२.	५.१५.१४	१०८	३	हृदयका अपहरण	सुन्दर आँखोंवाली स्त्रियोंके हृदयका अपहरण
३.	,,	,,	९	शान्तिका	तृप्तिका
४.	,,	,,	१०	कोयल	कोयलकी तरह
५.	७.६.९	१३३	३	वारवार	खाया, धुना, घायल किया और गिराया जाता है बारबार
६.	१०.३.१२	२२१	९	भापाओं	भाषाओं
७.	११.३५.१५	२७३	१	जिसमें रत नक्षत्र पल्य ये लोग भरतके द्वारा पूज्य भी हैं	भरतके द्वारा पूज्य ग्रहनक्षत्र, जिन भगवान्‌में रत हैं
८.	१३ ६.४	३०३	११	पूरित रहता है नाशका क्या वर्णन करूँ ?	पूरित किया करता है विस्तारका क्या वर्णन करूँ ?
९.	१३.११.१२	३११	१	उस अवसपर	उस अवसरपर
१०.	१४.८.१३	३२१	१	गिरिघाटी	गिरिघाटियो
११.	१४ १२.९	३२५	१	स्वय वोघ	स्वयं बाँध लिया
१२.	१६.२५.१२	३७७	६	क्या जाने वह उसीको लग गया	क्या वही उसके जानुओं (घुटनो) को लग गया।

□

हिन्दी अनुवाद के कुछ संशोधन

कृपया सुधार कर पढ़ें

पृष्ठ पंक्ति	
२६-४-१०	सम्मत्त वियक्खडु—सम्यक्त्व से विचक्षण (सम्पन्न)।
२२९-९-१५	आहारक शरीर किन्ही विशेष मुनियोके होता है।
२३१-११-५	ये पर्याप्तक अपर्याप्तक तथा सूक्ष्म और स्थावर होते है'''साधारण प्रकार के वनस्पति जीवोका श्वासोच्छ्वास और आहार साधारण होता है और प्रत्येक जीवोका अलग-अलग होता है।
२३३-१३	जम्बूद्वीप, धातकीखण्ड, पुष्करवरद्वीप, वारुणीद्वीप, क्षीरवरद्वीप, घृतवरद्वीप, मधुद्वर-द्वीप, नन्दीश्वरद्वीप, अरुणवरद्वीप, अरुणाभास, कुण्डलद्वीप, शखवरद्वीप, रुचकवरद्वीप, भुजगवरद्वीप, कुशगवरद्वीप, क्रौंचवरद्वीप'''साधिक एक हजार योजनका विस्तारवाला पद्म (कमल) है। दो इन्द्रिय (शंख) बारह योजन लम्बा देखा गया है। तीन इन्द्रिय (चिऊँटी) तीन कोसका है। चार इन्द्रिय (भौरा) एक योजन प्रमाणवाला है।
२३५-१४	गंगा आदि नदियोके प्रवेश मुखमें नौ योजनके होते है, तथा कालोद समुद्रमें नदी प्रवेश मुखमें १८ योजन और मध्य समुद्रमे छत्तीस योजन लम्बे होते हैं।''''''
२३५-१४	जिनेन्द्र भगवान्के द्वारा कही गई अवगाहना एक बालिस्त की होती है।'''अगुलके असंख्यातवें भाग होती है।
२३७-	मनुष्य और तिर्यंचोंके छहो संस्थान होते हैं। मन्थर गमन करनेवाली चन्द्रमुखी स्त्री रत्नोके शंखावर्तक योनि होती है।
२३९-३	दक्षिण भरतका विस्तार पांच सौ छब्बीस योजन है, उत्तरमें इतना ही विस्तार ऐरावत क्षेत्रका है। घत्ता—क्षेत्रसे चौगुना क्षेत्र और पर्वतसे चौगुना पर्वत है।
२४१-५	उसके ऊपर पद्म सरोवरसे तीन रूपसे दुगुणा महापद्म नामका सरोवर है अर्थात् उसकी लम्बाई-चौड़ाई-गहराई पद्मसे दुगुनी है।
२४३-४	रुचकगिरि और इष्वाकारगिरि हैं।
२४३-७	घत्ता—वहाँ कोई एकऊरु धारी है।
२४३-८-६	मरकर भवनवासी और व्यन्तर होते हैं।
२४३-८-१२	कल्पवासी देवोमें उत्पन्न होते है।
२४५-१०-७	भार धारण करनेवाले अभव्य उपरिम ग्रैवेयकमें देव होते हैं।
२४७-११-४	मच्छ और मनुष्य सातवें नरक तक जाते है।
२४७-११-७	मनुष्य और तिर्यंच'''शलाका पुरुष नही हो सकते।
२४९-१३-७	वहाँ मिथ्यादृष्टियोका विभंगज्ञान होता है और जो जिनमतमे दक्ष सम्यग्दृष्टि होते है उन्हें सम्यक् अवधिज्ञान स्वभावसे होता है।

पृष्ठ पंक्ति

२५३–१९–२ पाँचवी भूमिमें एक सौ पच्चीस धनुष ऊँचा शरीर होता है। इस प्रकार शरीर बढ़ता जाता है और आपत्ति भी भीषण होती जाती है।

२५५–२०–२ सर्वत्र उत्तम आयुसे शब्दसे उत्कृष्ट आयु जानना चाहिये।

२५५–२०– घत्ता......दो कल्पोमें गृहोंकी ऊँचाई छह सौ योजन है।

२५५–२३– उससे ऊपरके दो कल्पोमें घरोंकी ऊँचाई पाँच सौ योजन, उससे ऊपरके दो कल्पोंमें साढे चार सौ योजन, उससे ऊपरके दो कल्पोमें चार सौ योजन, उससे ऊपरके दो कल्पोमें साढ़े तीन सौ योजन, उससे ऊपरके दो कल्पोमें तीन सौ योजन और उससे ऊपरके चार कल्पोमें अढ़ाई सौ योजन देवगृहोकी ऊँचाई है। उससे ऊपर तीन अधो-ग्रैवेयकोमें दो सौ योजन, उससे ऊपर तीन मध्यग्रैवेयकोमें डेढ सौ योजन, उससे ऊपर तीन उपरिम ग्रैवेयकोमें सौ योजन, ऊपर-ऊपर अनुदिशोमें पचास योजन और अनुत्तरोमें पचीस योजन ऊँचाई है।

२६१–२६–११ फिर सौधर्मादि प्रत्येक स्वर्गमें क्रमसे सौधर्ममें पाँच पल्य, ऐशानमें सात पल्य, सानत्कुमारमें नौ पल्य, माहेन्द्र स्वर्गमें ग्यारह पल्य, ब्रह्म स्वर्गमे तेरह पल्य, ब्रह्मोत्तरमें पन्द्रह पल्य, लान्तवमें सतरह पल्य, कापिष्ठमें उन्नीस पल्य, शुक्रमें इक्कीस पल्य, महाशुक्रमें तेईस पल्य, शतारमें पचीस पल्य, सहस्रारमें सत्ताईस पल्य, आनतमें चौंतीस पल्य, प्राणतमें इकतालीस पल्य, आरणमें अड़तालीस पल्य और अच्युतमें पचपन पल्य आयु होती है।

२६१–२६ घत्ता...उससे ऊपर एक-एक सागर अधिक।

२६३–७ ज्योतिष देवोका अवधिज्ञान संख्यात योजन होता है। यह जघन्य क्षेत्र है।

२६३–२८–७ अट्ठाईस, इस प्रकार एक-एक घटाते हुए सोलहवें स्वर्गमें देव बाईस हजार वर्षोंमें आहार (मानसिक) ग्रहण करते हैं।

२६५ घत्ता—नारकियोके चार गुणस्थान होते हैं और देवोंके भी चार होते हैं।

२६७ घत्ता—अनन्तानुबन्धी क्रोध...

२६७–३१–२ संज्वलन क्रोध...

२७१–३४–२ धर्म, अधर्म, आकाश और कालके साथ रूपसे रहित हैं....धर्म और अधर्म समस्त त्रिलोकमे व्याप्त हैं।...परमाणु अशेष अविभाज्य है।

२७१–३४– घत्ता—पुद्गलके छह प्रकार हैं—सूक्ष्मसूक्ष्म, सूक्ष्म, सूक्ष्मस्थूल, स्थूलसूक्ष्म, स्थूल, स्थूलस्थूल।

□

महापुराण

पुप्फयंतविरइयउ महापुराणु

संधि १

१

सिद्धिवहूमणरंजणु परमणिरंजणु भुवणकमलसरणेसरु ॥
पणविवि विग्घविणासणु णिरुवमसासणु रिसहणाहु परमेसरु ॥ध्रुवं॥

१

सुपरिक्खिय रक्खियभूयतणुं पंचसयधणुण्णयदिव्वतणुं ।
पयडियसासयपयणयरवहं परसमयभणियदुण्णयरवहं ।
५ सुहसीलगुणोहणिवासहरं देविंदथुयं दिव्वासहरं ।
जुइणिज्जियमंदरमेहलयं पविमुक्कहारमणिमेहलयं ।
सोहंतासोयरमियविवरं उव्वासियबहुणारयविवरं ।
सुरणाहकिरीडपहिट्ठपयं अइपवरपसायपहिट्ठपयं ।
णवतरणिसमप्पहभावलयं णिरुदुस्सहदुम्मयभावलयं ।
१० हरिमुक्ककुसुमचित्तलियणहं अरुहंतमणंतजसं अणहं ।
सीहासणछत्तत्तयसहियं उद्धुरियपरं सकिवं सहियं ।
दुंदुहिसरपूरियभुवणहरं बंधूअफुल्लसंणिहणहरं ।
पुरुएवजिणं जियकामरणं दूरुज्झियजम्मजरामरणं ।
विरयं वरयं णियमोहरयं उद्धूयभीमणियमोहरयं ।
१५ पणमामि रविं केवलकिरणं मत्तासमयं भणियं किर णं ।

घत्ता—अवरु वि पणविवि सम्मइं विणिहयदुम्मइं कोवपावविद्धंसणु ॥
जासु तित्थि मइं लद्धउ णाणसमिद्धउ णिम्मलु सम्मदंसणु ॥ १ ॥

२

णिम्महियमाणमायासयाहं जिणसिद्धसूरिसुयदेसयाहं ।
साहूण वि चरणंभोरुहाइं णहदरिसियसुरणयमुहाइं ।
कयहरिसु सरसु सुमहुरु चवंति कोमलपयाइं लीलाइ दिंति ।
गंभीर पसण्ण सुवण्णदेह कंतिल्ल कुडिल णं चंदरेह ।
५ सालंकारी छंदेण जंति बहुसत्थअत्थगारव वहंति ।

---

१. १ B देविंदथुवं । २ M °दुम्महं° । ३ MBP अरहंत° । ४. MBP सिंहासण° । ५. MB पुरएव° । ६ T notes पणयामिरविं as p and explains it as पणयामीति पाठे पणयो मोह, स एव यामी नाम रात्रिस्तस्या रविं स्फेटकम् । ७ M णिम्मल° ।

२ १ M °जिणदेवयाह, but सुयदेवयाहं in the margin । २ MBG णहे दरिसिय° । ३ M बहुमत्थगारव सवहति, but adds सत्थ in margin; P बहुअत्थगंथगारव वहंति ।

पुष्पदन्त-विरचित महापुराण

(हिन्दी अनुवाद)

सिद्धिरूपी वधूके मनका रंजन करनेवाले, अत्यन्त निरंजन (पापोंसे रहित), विश्वरूपी कमल-सरोवरके सूर्य, विघ्नोंका नाश करनेवाले, तथा अनुपम मतवाले ऋषभनाथको मैं प्रणाम करता हूँ।

१

जो अच्छी तरह परीक्षित है, जिन्होंने पृथ्वी-जलादि पांच महाभूतोंके विस्तारकी रक्षा की है, जिनका शरीर दिव्य और पांच सौ धनुप ऊँचा है, जिन्होने शाश्वत पदरूपी (मोक्ष) नगरका पथ प्रकट किया है, जिन्होने परमतोके एकान्त प्रमाणोका नाश किया है, जो शुभशील और गुण-समूहके निवास-गृह हैं, जो देवोंके द्वारा सस्तुत और दिशारूपी वस्त्र धारण करनेवाले (दिगम्बर) हैं, जिन्होंने अपनी कान्तिसे मन्दराचलकी मेखलाको जीत लिया है, जिन्होने हार और रत्न-मालाओंका परित्याग किया है, जो क्रीड़ारत श्रेष्ठ पक्षियोंसे युक्त अशोकवृक्षसे शोभित हैं, जिन्होने अनेक नरकरूपी विलोंको उखाड़ दिया है, जिनके चरण देवेन्द्रोंके मुकुटोसे घर्षित है, जिन्होने प्रचुर प्रसादोंसे प्रजाओंको आनन्दित किया है, जिनका प्रभामण्डल नवसूर्यकी प्रभाके समान है और जो (प्रमाणहीन होनेके कारण) अत्यन्त असह्य, मिथ्यागमके भावोंका अन्त करनेवाले हैं, जिनके कारण इन्द्रके द्वारा बरसाये गये पुष्पोंसे आकाश पुष्पित और चित्रित है, जो अनन्त यशवाले पापसे रहित अर्हत् हैं, सिंहासन और तीन छत्रोंसे युक्त हैं, जो मिथ्यावादियोका नाश करनेवाले कृपालु तथा हितकारी हैं, जो दुन्दुभियोंके स्वरसे विश्वरूपी घरको आपूरित करनेवाले हैं, जिनके नख दुपहरिया पुष्पोंके समान आरक्त हैं, जो कामदेवसे युद्ध जीत चुके हैं, जिन्होने जन्म, जरा और मृत्युको दूरसे छोड़ दिया है, जो मलसे रहित और वरदाता हैं, जो नियमो (व्रतों) के समूहमे लीन हैं, जिन्होंने अपनी मोहरूपी भीषण रजको नष्ट कर दिया है, और जो मत्तासमय (.मात्रा परिग्रह-को शान्त करनेवाले—मात्रा समय छन्द) कहे जाते हैं, ऐसे केवलज्ञानरूपी किरणोंसे युक्त सूर्य, जिन भगवान्को मैं प्रणाम करता हूँ।

घत्ता—और भी मैं (कवि पुष्पदन्त), जिन्होने दुर्गतिका नाश कर दिया है ऐसे, तथा क्रोधरूपी पापका नाश करनेवाले सन्मतिनाथको प्रणाम करता हूँ कि जिनके तीर्थकालमें ज्ञानसे समृद्ध पवित्र सम्यग्दर्शनको मैंने प्राप्त किया ॥१॥

२

मान, माया और मदरूपी पापोंका नाश करनेवाले, अर्हन्त, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय और साधुओके आकाशमे देवताओंके मुखोंको प्रणत दिखानेवाले चरणकमलोंमें मैं कवि (पुष्पदन्त) प्रणाम करता हूँ। जो (सरस्वती) हर्ष उत्पन्न करनेवाला सरस और मधुर बोलती हैं, जो अपने कोमलपदों (चरणो, पादों) से लीलापूर्वक चलती हैं, जो गम्भीर, प्रसन्न और सोनेके समान शरीरवाली है, मानो कान्तिमयी कुटिल चन्द्रलेखा हो; चन्द्रलेखा कान्तिसे युक्त और कुटिल होती है सरस्वती भी स्वर्ण देहवाली होनेसे कान्तिमयी एवं कुटिल (वक्रोक्ति संयुक्त) है। जो अलंकारोसे युक्त और

चोद्दहपुव्विल्ल दुवालसंगि जिणवयणविणिग्गय सत्तभंगि ।
चउमुहमुहवासिणि सद्दजोणि णीसेसहेउ सा सोहछोणि ।
दुक्खक्खयकारिणि सोक्खखाणि पणवेवि सरासइ दिव्ववाणि ।
धम्माणुसासणाणंदभरिउ पुणु कहमि णिरहु णाहेयचरिउ ।

१० घत्ता—जेण सुएण सुहोहइं तिहुयणखोहइं होंति चारुकल्लाणइं ॥
उप्पज्जंति पसत्थइं मुणियपयत्थइं मणुयहो पंच वि णाणइं ॥२॥

३

तं कहमि पुराणु पसिद्धणामु सिद्धत्थवरिसि भुवणाहिरामु ।
उब्बद्धजूडु भूभंगभीसु तोडेप्पिणु चोडहो तणउ सीसु ।
भुवणेक्करामु रायाहिराउ जहिं अच्छइ तुडिगु महाणुभाउ ।
तं दीणदिण्णधणकणयपयरु महि परिभमंतु मेपाडिणयरु ।
५ अवहेरियखलयणु गुणमहंतु दियहेहिं पराइउ पुप्फयंतु ।
दुग्गमदीहरपंथेण रीणु णवयंदु जेम देहेण खीणु ।
तरुकुसुमरेणुरंजियसमीरि मायंदगोंछगोंदलियकीरि ।
णंदणवणि किर वीसमइ जाम तहिं विण्णि पुरिस संपत्त ताम ।
पणवेप्पिणु तेहिं पवुत्तु एम्व भो खंड गलियपावावलेव ।
१० परिभमिरभमररवगुमगुमंति किं किर णिवसहि णिज्जणवणंति ।
करिसरवहिरियदिच्चक्कवालि पइसरहि ण किं पुरवरि विसालि ।
तं सुणिवि भणइ अहिमाणमेरु वरि खज्जइ गिरिकंदरि कसेरु ।
णउ दुज्जणभउंहावंकियाइं दीसंतु कलुसभावंकियाइं ।

घत्ता—वर णरवरु धवलच्छिहे होउ म कुच्छिहे मरउ सोणिसुहणिग्गमे ॥
१५ खलकुच्छियपहुवयणइं भिउडियणयणइं म णिहालउ सूरुग्गमे ॥३॥

४

चमराणिलउड्डावियगुणाइं अहिसेयधोयसुयणत्तणाइं ।
अविवेयइं दप्पुत्तालियाइं मोहंधइं मारणसीलियाइं ।
सत्तंगरज्जभरभारियाइं पिउपुत्तरमणरसयारियाइं ।
विससहजम्मइं जडरत्तियाइं किं लच्छिइ विउसविरत्तियाइं ।
५ संपइ जणु णीरसु णिव्विसेसु गुणवंतउ जहिं सुरगुरु वि वेसु ।
तहिं अम्हहं लइ काणणु जि सरणु अहिमाणें सहुं वरि होउ मरणु ।

---

४. M चोद्दह°; P चउदह°; T चोद्दस° । ५ T मुणि° । ६. M °विणग्गय° । ७. P सद्दत्थजोणि ।
८. P तिहुयणु खोहइं ।

३ १ MP ओवद्ध° and gloss in M उत्कृष्टकेशपाशम्; B नवद्धजूड । २. M वंदीण° । ३. MP मेवाडि°; B मेवाड° । ४. K मायंदगोंदगोदलिय° । ५. MBP खज्जउ । ६. M हउंहावंकियाइं; BP भउहावंकियाइं ।

४. १. MBP देसु ।

छन्दके द्वारा चलती है, जो बहुतसे शास्त्रोंके अर्थगौरवको धारण करती है, जो चौदह पूर्वों और बारह अंगोंसे युक्त है, जो जिनमुखसे निकली हुई सप्तभंगोंसे सहित है, जो ब्रह्माके मुखमें निवास करनेवाली एवं शब्दयोनिजा है, जो निश्रेयस् की युक्ति और सौन्दर्य की भूमि है, जो दुःखोंका क्षय करनेवाली और गुणोंसे महान है, ऐसी दिव्यवाणी सरस्वती देवीको प्रणाम कर मैं धर्मानुशासनके आनन्दसे भरे हुए, तथा पापसे रहित नाभेय चरित (आदिनाथके चरित) का वर्णन करता हूँ।

घत्ता—जिस (आदिपुराण) चरितको सुननेसे मनुष्यको सुखोंके समूह और त्रिभुवनको क्षुब्ध करनेवाले सुन्दर पाँच कल्याण प्राप्त होते हैं, तथा पदार्थोंको जाननेवाले प्रशस्त पाँचो ज्ञान उत्पन्न होते हैं ॥२॥

३

मैं जिसमें सुन्दर प्रसिद्ध नाम महापुराणका सिद्धार्थ वर्षमें वर्णन करता हूँ। जहाँ (मेल्पाटी नगरमें) नीलकमलोंके केशपाशवाले भ्रूभंगसे भयंकर सिरको नष्ट करनेवाला, विश्वमें एकमात्र सुन्दर राजाधिराज महानुभाव तुडिग (कृष्ण तृतीय) राजा विद्यमान है। दीनोंको प्रचुर स्वर्णसमूह देनेवाले ऐसे उस मेल्पाटि नगरमें धरतीपर भ्रमण करता हुआ, खलजनोंकी अवहेलना करनेवाला, गुणोंसे महान् कवि पुष्पदन्त कुछ ही दिनोमे पहुँचा। दुर्गम और लम्बे पथके कारण क्षीण, नवचन्द्रके समान शरीरसे दुबला-पतला वह, जिसके आम्रवृक्षके गुच्छोंपर तोते इकट्ठे हो गये हैं और जिसका पवन वृक्ष-कुसुमोंके परागसे रंजित है ऐसे नन्दनवनमे जैसे ही विश्राम करता है वैसे ही वहाँ दो आदमी आये। प्रणाम कर उन्होंने इस प्रकार कहा—"हे पापके अंशको नष्ट करनेवाले कवि खण्ड (पुष्पदन्त कवि), परिभ्रमण करते हुए भ्रमरोंके शब्दोंसे गूँजते हुए इस एकान्त उपवनमें तुम क्यों रहते हो? हाथियोंके स्वरोंसे दिशामण्डलको बहरा बना देनेवाले इस विशाल नगरवरमें क्यों नहीं प्रवेश करते?" यह सुनकर अभिमानमेरु पुष्पदन्त कवि कहता है— "पहाड़की गुफामें घास खा लेना अच्छा, परन्तु कलुषभावसे अंकित, दुर्जनोंकी टेढ़ी भौंहे देखना अच्छा नहीं।"

घत्ता—अच्छा है श्रेष्ठ मनुष्य, धवल आँखोंवाली उत्तम स्त्रीकी कोखसे जन्म न ले, या गर्भसे निकलते ही मर जाये, लेकिन यह अच्छा नहीं कि वह टेढ़ी आँखोंवाले, दुष्ट और भद्दे प्रभु-मुखोंको सवेरे-सवेरे देखे ॥३॥

४

जो चामरोंकी हवासे गुणोंको उड़ा देती है, अभिषेकके जलसे सुजनताको धो देती है, जो अविवेकशील है, दर्पसे उद्धत है, मोहसे अन्धी और दूसरोंको मारनेके स्वभाववाली है, जो सप्तांग राज्यके भारसे भारी है जो पुत्र और पिताके साथ रमणरूपी रसमें समानरूपसे आसक्त है, जिसका जन्म कालकूट (विष) के साथ हुआ है, जो जड़ोंमें अनुरक्त है और विद्वानोंसे विरक्त है, ऐसी लक्ष्मीसे क्या? सम्पत्तिमें मनुष्य सब प्रकारसे नीरस होता है, जहाँ गुणवान् तक द्वेष्य होता है, वहाँ हमारे लिए तो, वन ही शरण है। (कमसे कम) स्वाभिमानके साथ मृत्युका

अम्भयइइंदराएहिं तेहिं आयेण्णिवि तं पहसियमुहेहिं ।
गुरुविणयपणयपणवियसिरेहिं पडिवयणु दिण्णु णायरणरेहिं ।

घत्ता—जणमणतिमिरोसारण मयतरुवारण णियकुलगयणदिवायर ॥
१० भो भो केसवतणुरुह णवसररुहमुह कव्वरयणरयणायर ॥४॥

५

वंभंडमंडवारूढकित्ति अणवरयरइयजिणणाहभत्ति ।
सुहतुंगदेवकमकमलभसलु णीसेसकलाविण्णाणकुसलु ।
पाययकइकव्वरसावउद्धु संपीयसरासइसुरहिदुद्धु ।
कमलच्छु अमच्छरु सच्चसंधु रणभरधुरधरणुग्घुट्ठखंधु ।
५ सविलासविलासिणिहियथेणु सुपसिद्धमहाकइकामधेणु ।
काणीणदीणपरिपूरियासु जसपसरपसाहियदसदिसासु ।
पररमणिपरंमुहु सुद्धसीलु उण्णयमइ सुयणुद्धरणलीलु ।
गुरुयणपयपणवियउत्तमंगु सिरिदेवियंबगब्भुब्भवंगु ।
अण्णइयतणयतणुरुहु पसत्थु हत्थि व दाणोल्लियदीहहत्थु ।
१० महमत्तवंसधयवडु गहीरु लक्खणलक्खंकियवरसरीरु ।
दुव्वसणसीहसंघायसरहु ण वियाणहिं किं णामेण भरहु ।

घत्ता—आउ जाउ तहो मंदिरु णयणाणंदिरु सुकइकइत्तणु जाणइ ॥
सो गुणगणतत्तिल्लउ तिहुयणि भल्लउ णिच्छउ पइं संमाणइ ॥५॥

६

जो विहिणा णिम्मिउ कव्वपिंडु तं णिसुणिवि सो संचलिउ खंडु ।
आवंतु दिट्ठु भरहेण केम वाईसरिसरिकल्लोलु जेम ।
पुणु तासु तेण विरइउ पहाणु घरु आयहो अब्भागयविहाणु ।
संभासणु पियवयणेहिं रम्मु णिम्मुक्कडंमु णं परमधम्मु ।
५ तुहुं आयउ णं गुणमणिणिहाणु तुहुं आयउ णं पंकयहो भाणु ।
पुणु एवं भणेप्पिणु मणहराइं पहरीणझीणतणुसुहयराइं ।
वरण्हाणविलेवणभूसणाइं दिण्णइं देवंगइं णिवसणाइं ।
अच्चंतरसालइं भोयणाइं गलियाइं जाम कइवयदिणाइं ।
देवीसुएण कइ भणिउ ताम भो पुप्फयंत ससिलिहियणाम ।

---

२ MBP आयण्णिय; G आयण्णवि । ३. MB तिउरोसारण ।

५ १ MBPK °वलुद्धु, but G °रसायउद्धु and marginal gloss रसावबुद्ध.; T also रसावउद्धु and explains it as परिज्ञातरसः । २ MBP °धरणुग्घिट्ठखंधु । ३ MP °घेणु । ४. P सिरिअम्वदेवि° B सिरिदेविअम्व° । ५ M आउज्जाहं । ६ P °भत्तिल्लउ though marginal gloss °चिन्तक ।

६. १ B omits this line । २. B omits *a* of this Line । ३. M पुणु एण, P पुणु एम । ४. MBP पहझीणरीणतणु° । ५. B दिण्णाइं देवगइणिवसणाइ ।

होना अच्छा। यह सुनकर अम्मइया और इन्द्रराज दोनों नागरनरोंने हँसते हुए तथा भारी विनय और प्रणयसे अपने सिरोंको झुकाते हुए यह प्रत्युत्तर दिया—।

घत्ता—जनमनोंके अन्धकारको दूर करनेवाले, मदरूपी वृक्षके लिए गजके समान, अपने कुलरूपी आकाशके सूर्य, नवकमलके समान मुखवाले, काव्यरूपी रत्नोंके लिए रत्नाकर, हे केशव-पुत्र (पुष्पदन्त) ॥४॥

५

जिसकी कीर्ति ब्रह्माण्डरूपी मण्डपमें व्याप्त है, जो अनवरत रूपसे जिनभगवान्‌की भक्ति रचता रहता है, जो शुभ तुंगदेव (कृष्ण) के चरणरूपी कमलोंका भ्रमर है, समस्त कलाओं और विज्ञानमे कुशल है, जो प्राकृत कृतियोंके काव्यरससे अवबुद्ध है, जिसने सरस्वतीरूपी गायका दुग्ध पान किया है, जो कमलोके समान नेत्रवाला है, मत्सरसे रहित, सत्य प्रतिज्ञ, युद्धके भारकी धुराको धारण करनेमे अपने कन्धे ऊँचे रखनेवाला है, जो विलासवती स्त्रियोके हृदयोंका चोर है, और अत्यन्त प्रसिद्ध महाकवियोंके लिए कामधेनुके समान है, जो अकिंचन और दीनजनोकी आशा पूरी करनेवाला है, जिसने अपने यशके प्रसारसे दसों दिशाओको प्रसाधित किया है, जो परस्त्रियोसे विमुख है, जो शुद्ध स्वभाव और उन्नत मतिवाला है, जिसका स्वभाव सुजनोंका उद्धार करना है, जिसका सिर गुरुजनोंके चरणोंमे प्रणत रहता है, जिसका शरीर श्रीमती अम्बादेवीको कोखसे उत्पन्न हुआ है, जो अम्मइयाके पुत्रका पुत्र है, प्रशस्त जो हाथीके समान, दान (दान और मदजल) से उल्लसित दीर्घ हस्त (सूँड़ और हाथ) वाला है, जो महामन्त्री वंशका गम्भीर ध्वजपट है, जिसका शरीर श्रेष्ठ लक्षणोसे अंकित है, जो दुर्व्यसनरूपी सिंहोंके संहारके लिए श्वापदके समान है, ऐसे भरत नामके व्यक्तिको क्या आप नही जानते ?

घत्ता—आओ उसके घर चलें, नेत्रोंको आनन्द देनेवाला वह सुकवियोके कवित्वको अच्छी तरह जानता है। गुणसमूहसे सन्तुष्ट होनेवाला वह, त्रिभुवनमे भला है और निश्चय ही वह तुम्हारा सम्मान करेगा ॥५॥

६

जिसे विधाताने काव्यशरीर बनाया है, ऐसा खण्डकवि पुष्पदन्त यह सुनकर चला। आते हुए भरतने उसे इस प्रकार देखा जैसे सरस्वतीरूपी नदीकी लहर हो। फिर उसने घर आये हुए उस (पुष्पदन्त) का प्रमुख अतिथि-सत्कार विधान किया तथा प्रिय शब्दोंमे सुन्दर सम्भाषण किया—"तुम मानो दम्भसे रहित परमधर्म हो, तुम आये अर्थात् गुणरूपी मणियोंका समूह आ गया, तुम आ गये अर्थात् कमलोंके लिए सूर्य आ गया।" इस प्रकार पथसे थके और दुर्बल शरीरके लिए शुभकर सुन्दर वचन कहकर, उसने (भरतने) उन्हें उत्तम स्नान, विलेपन, भूषण, देवांग वस्त्र तथा अत्यन्त स्वादिष्ट भोजन दिया। जब कुछ दिन बीत गये, तो देवीसुत (भरत) ने कहा—'चन्द्रमाके समान प्रसिद्ध नाम हे पुष्पदन्त, अपनी लक्ष्मी विशेषसे देवेन्द्रको

१० णियसिरिविसेसणिज्जियसुरिंदु गिरिधीरु वीरु[6] भइरवणरिंदु ।
पइं मण्णिउ वण्णिउ वीरराउ उप्पण्णउ जो मिच्छत्तराउ[7] ।
पच्छित्तु तासु जइ करहि अज्जु ता घडइ तुज्झु परलोयकज्जु ।
तुहुं देउ को वि भव्वयणबंधु पुरुएवचरियभारस्स खंधु[8] ।
अब्भत्थिओ सि दे देहि तेम णिव्विग्घें लहु णिव्वहइ जेम[9] ।

१५ घत्ता—अइललियए गंभीरए सालंकारए वायए ता किं किज्जइ ॥
जेइ कुसुमसरवियारउ अरुहु भडारउ सब्भावें ण थुणिज्जइ ॥६॥

७

सियदंतपंतिधवलीकयासु ता जंपइ वरवायाविलासु ।
भो देवीणंदण जयसिरीह किं किज्जइ कव्वु सुपरिससीह ।
गोवज्जिएहिं णं घणदिणेहिं सुरवरचावेहि व णिग्गुणेहिं ।
मइलियचित्तहिं णं जरघरेहिं[1] छिद्दण्णेसिहिं णं विसहरेहिं ।
५ जडवाइएहिं णं गयरसेहिं दोसायरेहिं णं रक्खसेहिं ।
आचक्खियपरपुट्ठीपलेहिं वरकइ णिंदिज्जइ हयखलेहिं ।
जो बालवुड्ढसंतोसहेउ रामाहिरामु लक्खणसमेउ ।
जो सुम्मइ कइवइ विहियसेउ तासु वि दुज्जणु किं परि म[2] होउ ।
घत्ता—णउ महु बुद्धिपरिग्गहु णउ सुयसंगहु णउ कासु वि केरउ बलु ॥
१० भणु किह करमि कइत्तणु ण लहमि कित्तणु जगु जि पिसुणसयसंकुलु ॥७॥

८

तं णिसुणिवि भरहें वुत्तु ताव भो कइकुलतिलय विमुक्कगाव ।
सिमिसिमिसिमंतकिमिभरियरंधु मिल्लेवि कलेवरु कुणिमगंधु ।
ववगयविवेउ मसिकसणकाउ सुंदरपएसि किं रमइ काउ ।
णिक्कारणु दारुणु बद्धरोसु दुज्जणु ससहावें लेइ दोसु ।
५ हयतिमिरणियरु वरकरणिहाणु ण सुहाइ[1] उलूयहो उइउ[2] भाणु ।
जइ ता किं सो भंडियसराहं णउ रुच्चइ वियसियसिरिहराहं ।
को गणइ पिसुणु अविसहियतेउ मुक्कउ छणयंदहु[3] सारमेउ ।
जिणचरणकमलभत्तिल्लएण ता जंपिउ कव्वपिसल्लएण ।
घत्ता—णउ हउं होमि वियक्खणु ण मुणमि लक्खणु छंदु देसि ण वियाणमि ।
जा विरइय जयवंदहिं आसि मुणिंदहिं सा कह केम समाणमि[4] ॥८॥
१०

---

६ B वीरभइरव । ७. MBPK °भाउ, but GT मिच्छत्तराउ and gloss °राग ।
८ M पुरएव° । ९ M जय ।

७. १. T जरहरेंहि । २. PC ण ।

८. १ MBP सुहाय । २. P उयउ । ३. P छणइंदहु । ४. P पयासमि but marginal gloss कथं समानयामि वर्णयामि ।

जिसने जीता है, ऐसा गिरिकी तरह धीर और वीर भैरवराजा है। तुमने उस वीर राजाको माना है और उसका वर्णन किया है (उसपर किसी काव्यकी रचना की है) इससे जो मिथ्यात्व उत्पन्न हुआ है। यदि तुम आज उसका प्रायश्चित्त करते हो तो तुम्हारा परलोक-कार्य सध सकता है। तुम भव्यजनोंके लिए बन्धुस्वरूप कोई देव हो। तुमसे अभ्यर्थना की जाती है (मैं तुमसे प्रार्थना करता हूँ) कि तुम पुरुदेव (आदिनाथ) के चरितरूपी भारको इस प्रकार खँधा दो जिससे वह बिना किसी विघ्नके समाप्त हो जाये।

घत्ता—उस वाणीसे क्या? अत्यन्त सुन्दर गम्भीर और अलंकारोंसे युक्त होनेपर भी जिससे, कामदेवका नाश करनेवाले आदरणीय अर्हत्की सद्भावके साथ स्तुति नहीं की जाती ॥६॥

७

तब, अपनी सफेद दन्त पंक्तिसे दिशाओंको धवलित करनेवाला और वरवाणीसे विलास करनेवाला पुष्पदन्त कवि कहता है—"विजयरूपी लक्ष्मीकी इच्छा रखनेवाले पुरुषसिंह देवीनन्दन (भरत) काव्यकी रचना क्यों की जाये? जहाँ हत दुष्टोंके द्वारा श्रेष्ठ कविकी निन्दा की जाती है, जो मानो (दुष्ट) मेघदिनोंकी तरह गो (वाणी/सूर्यकिरणों) से रहित हैं, (गो वर्जित) जो मानो इन्द्रधनुषोंकी तरह निर्गुण (दयादि गुणों/डोरीसे रहित) हैं, जो मानो जाटोंके घरोंकी तरह मैले चित्तोंवाले है। जो मानो विषधरोंकी तरह छिद्रोंका अन्वेषण करनेवाले हैं, जो मानो जड़वादियोंकी तरह गतरस है, जो मानो राक्षसोंकी तरह दोषोंके आकर है, तथा दूसरोंकी पीठका मांस भक्षण करनेवाले (पीठ पीछे चुगली करनेवाले) है, जो (प्रवरसेन द्वारा विरचित सेतुबन्ध काव्य) बालकों और वृद्धोंके सन्तोषका कारण है, जो रामसे अभिराम और लक्ष्मणसे युक्त है, और कइवइ (कपिपति=हनुमान्—कविपति=राजा प्रवरसेन) के द्वारा विहितसेतु (जिसमे सेतु—पुल रचा गया हो) सुना जाता है ऐसे उस सेतुबन्ध काव्यका क्या दुर्जन शत्रु नहीं होता? (अर्थात् होता ही है)।

घत्ता—न तो मेरे पास बुद्धिका परिग्रह है, न शास्त्रोंका संग्रह है, और न ही किसीका बल है, बताओ मैं किस प्रकार कविता करूँ? कीर्ति नहीं पा सकता, और यह विश्व सैकड़ों दुष्टजनोंसे संकुल है" ॥७॥

८

यह सुनकर, तब महामन्त्री भरतने कहा—"हे गर्वरहित कविकुलतिलक, बिलबिलाते हुए कृमियोंसे भरे हुए छिद्रोंवाले सड़ी गन्धसे युक्त शरीरको छोड़कर, विवेकशून्य स्याहीकी तरह काले शरीरवाला कौआ, क्या सुन्दर प्रदेशमे रमण करता है? अत्यन्त करुणाहीन, भयंकर और क्रोध बाँधनेवाला दुर्जन स्वभावसे ही दोष ग्रहण करता है। अन्धकारसमूहको नष्ट करनेवाला और श्रेष्ठ किरणोंका निधान, तथा उगता हुआ सूर्य यदि उल्लूको अच्छा नहीं लगता तो क्या सरोवरोंको मण्डित करनेवाले तथा विकासकी शोभा धारण करनेवाले कमलोंको भी वह अच्छा नहीं लगता? तेजको सहन नहीं करनेवाले दुष्टकी गिनती कौन करता है? कुत्ता चन्द्रमापर भौंका करे।" तब जिनवरके चरणकमलोंके भक्त काव्यपण्डित (पुष्पदन्त) ने कहा—

घत्ता—"मैं पण्डित नहीं हूँ, मैं लक्षणशास्त्र (व्याकरण शास्त्र) नहीं समझता। छन्द और देशीको नहीं जानता और जो कथा (रामकथा) विश्ववन्द्य मुनीन्द्रोंके द्वारा विरचित है उसका मैं किस प्रकार वर्णन करूँ? ॥८॥

९

अकलंककविलकणयरसयाइं　　दियसुगयपुरंदरणयसयाइं ।
[1]दत्तिलविसाहिलुद्धारियाइं　　णउ णायइं भरहवियारियाइं ।
णउ पीयइं [2]पायंजलजलाइं　　अइहासपुराणइं णिम्मलाइं ।
भावाहिउ [3]भारवि भासु वासु　　कोहलु कोमलगिरु [4]कालियासु ।
५ चउमुहु सयंभु सिरिहरिसु दोणु　　[5]णालोइउ कइ ईसाणु बाणु ।
णउ धाउ ण लिंगु ण [6]गणु समासु　　णउ [7]कम्मु करणु [8]किरियाणिवेसु ।
णउ संधि ण कारउ पयसमत्ति　　णउ जाणिय मइं एक्क वि विहत्ति ।
णउ बुज्झिउ [9]आयमु सद्दधामु　　[10]सिद्धंतु धवलु जयधवलु णामु ।
पडु रुद्दडु जडणिण्णासयारु　　परियच्छिउ [11]णालंकारसारु ।
१० पिंगलपत्थारु समुद्दि पडिउ　　ण [12]कया वि महारइ चित्ति चडिउ ।
जसइंधु सिंधु कल्लोससित्तु　　ण कलाकोसलि हियवउ णिहित्तु ।
हउं बप्प णिरक्खर कुक्खिमुक्खु　　णरवेसें हिंडमि चम्मरुक्खु ।
अइदुग्गमु होइ महापुराणु　　कुडएण मवइ को जलणिहाणु ।
अमरासुरगुरुयणमणहरेहिं　　जं आसि [13]कियउ मुणिगणहरेहिं ।
१५ तं हउं मि कहमि भत्तीभरेण　　किं णहि ण भमिज्जइ महुयरेण ।
एहु विणउ पयासिउ सज्जणाहं　　मुहि [14]मसिकुंचउ [15]कउ दुज्जणाहं ।

घत्ता—घरे घरे [16]भसउ असारउ दुण्णयगारउ विवरोक्खए किं अक्खइ ।
[17]लइ मइं सो [18]मोक्कल्लिउ खलु दुब्बोल्लिउ लेउ दोसु जइ पेक्खइ ॥९॥

१०

चारणावासकेलाससेलासिओ　　किंणरीवेणुवीणाझुणितोसिओ ।
सामवण्णो सउण्णो पसण्णो सुहो　　आइदेवाण देवाहिभत्तो बुहो ।
[1]गोम्मुहो संमुहो होउ जक्खो महं　　चिंतयंतस्स एयं असेयं कहं ।
विग्घविद्दावणी चारुचक्केसरी　　सत्थसारंभकल्लोलमालासरी ।
५ वेरिणि[2]द्दारिणी सुंभणी थंभणी　　आसि जम्मंतरे होंतिया बंभणी ।
साहुदाणेण संजाइया जक्खिणी　　णाणसम्मत्तवंती गुणावेक्खिणी ।
उज्जयंतत्थलीकाणणावासिणी　　सव्वभासासमूहं समुब्भासिणी ।
सुंदरे मंदरे कंदरे [3]कीलिरी　　तुंगणग्गोहपारोहहिं[4]दोलिरी ।
पिक्कमायंदगोच्छेण[5] डिंभं णियं　　संथवंती हसंती चवंती पियं ।
१० खुद्दवाईविवेयावहा वाइणी　　अंबिया गोरि गंधारि सिद्धाइणी ।

---

९. १. B दत्तिल° । २. MBP पायंजलि° । ३. M भारहिं; B भारहभासु । ४ MBP कालिदासु । ५ MP णालोयउ । ६ BP गुण । ७. M कम्म । ८ MBP किरियाविसेसु । ९. M आयम° । १०. MBP धवलजयधवलणामु । ११. M णालकारु सारु । १२. B कयाइ । १३ K कहिउ । १४ MB कुच्चउ । १५. M किउ । १६. G भमइ । १७ MB लहु । १८ MB मोकल्लिउ ।
१०. १ MBP गोमुहो । २. MB °णिद्धारणी; P °णिहारणी । ३. P कीलिणी । ४. P °हिंदोलिणी । ५. MBP °गोंछेण ।

९

अकलंक (जैनाचार्य), कपिल (सांख्यदर्शनके प्रवर्तक), कणयर (कणाद—वैशेषिक दर्शन-के प्रवर्तक) के मतो, द्विज (वेदपाठी-कर्मकाण्डी), सुगत (बौद्ध) और इन्द्र (चार्वाक) के सैकड़ों नयों, दत्तिल और विसाहिलके द्वारा रचित संगीतशास्त्र और भरत मुनिके द्वारा विचारित नाट्य-शास्त्रको मैने ज्ञात नही किया। पतंजलिके भाष्यरूपी जलको मैने नही पिया। निर्मल इतिहास और पुराण, भावाधिप भारवि, भास, व्यास, कोहल, कोमलवाणीवाले कालिदास, चतुर्मुख, स्वयम्भू, श्रीहर्ष, द्रोण, कवि ईशान और बाणका भी मैंने अवलोकन नही किया। न मैंने धातु, लिंग, गण, समास, न कर्म, करण, क्रियानिवेश, न सन्धि, कारक और पद समाप्तिका, और न ही मैंने एक भी विभक्तिका ज्ञान प्राप्त किया। शब्दोके धाम, सिद्धान्त ग्रन्थ धवल और जयधवल आगमोंको भी मैंने नहीं समझा। जड़ताका नाश करनेवाले कुशल रुद्रट और उनके अलंकारसारको भी मैने नहीं देखा। न मै पिंगल प्रस्तारके समुद्रमें पड़ा। और न ही कभी यशसे चिह्नित लहरोंसे सिक्त सिन्धु मेरे चित्तपर चढ़ा। और न मैंने कलाकौशलमे अपने मनको लगाया। मै बेचारा जन्मजात मूर्ख हूँ। चर्मसे आच्छादित वृक्ष (ठूँठ)-सा मनुष्यके रूपमे घूम रहा हूँ। महापुराण अत्यन्त दुर्गम होता है, घड़ेसे समुद्रको कौन माप सकता है? देवों, असुरों और गुरुजनोंके लिए सुन्दर मुनियो एवं गणधरोने जिस महापुराणकी रचना की है, मै भी भक्तिभावसे भरकर उसकी रचना करता हूँ। क्या आकाशमे भ्रमरके द्वारा न घूमा जाये (क्या वह भ्रमण न करे)? यह विनय मैंने सज्जन लोगोंके प्रति की है, दुर्जनोंके मुखपर तो मैने स्याहीकी कूँची ही फेरी है।

घत्ता—घर घरमें घूमता हुआ असार दुर्नय करनेवाला दुष्ट परोक्षमे क्या कहता है? खोटे बोलनेवाले दुष्टको लो मै मुक्त करता हूँ। यदि उसे दोष दिखाई देता है तो वह उसे ग्रहण करे ॥९॥

१०

जो मुनीश्वरोके निवासस्थान कैलास पर्वतके शिखरपर निवास करता है, किन्नरियोंकी वेणु-वीणाओंकी ध्वनियोंसे सन्तुष्ट होता है, जो श्यामवर्ण पुण्यात्मा प्रसन्न शुभ है, आदिदेव ऋषभका देवाधिभक्त और बुध है, ऐसा वह गोमुख यक्ष इस अप्रमेय कथाका चिन्तन करते हुए मेरे सम्मुख हो। जो विघ्नोका नाश करनेवाली, शास्त्रोके साररूपी जलोकी कल्लोलमालाओं-पर चलनेवाली, शत्रुओंका विदारण करनेवाली, जन्मान्तरमे हिंसा करनेवाली और स्तम्भन विद्यावाली ब्राह्मणी थी, जो साधुदानके कारण, सम्यक्दर्शन और ज्ञानसे युक्त, गुणोकी अपेक्षा करनेवाली यक्षिणी हुई। जो गिरिनार पर्वतपर निवास करनेवाली सर्वभाषासमूहको प्रकाशित करनेवाली, ऊँचे वटवृक्षोंपर निवास करनेवाली हँसती हुई और प्रिय बोलनेवाली है। जो क्षुद्र-वादियोंके विवेकका अपघात करनेवाली, वादिनी, अम्बिका, गौरी, गान्धारी, सिद्धायनी तथा

पोमवत्ताहवत्ता पवित्ता सई णायचूडामणी देवि पोमावई ।
कव्ववित्थारदुत्तारमग्गे सही ठाउ[६] मज्झं मुहे देवया भारही ।
होउ बुद्धी महासत्थसामग्गिणी एरिसो छंदहो भणणए सग्गिणी ।

घत्ता—मइं णिम्मियहो उयारहो[७] सहगहीरहो जो णरु भसइ णिबंधहो ॥
१५ जणदुव्वयणहिं दड्ढहो तहो दुवियड्ढहो दुज्जसु होउ[८] मयंधहो ॥१०॥

११

अहवा हउं णिग्घिणु पावयम्मु[१] ण वियाणमि अज्ज वि किं पि धम्मु ।
मिच्छा[२]हिरामरंजियविवेउ ण वियाणमि जिणवरवयणभेउ ।
उग्गय[३]रसभावणिरंतराइं अलियाइं जि कहमि कहंतराइं ।
लइ हत्थे झंपमि णहु सभाणु लइ कलसि समप्पमि जलणिहाणु ।
५ लइं[४] तुच्छबुद्धि णिण्णट्ठणाणु लइ अक्खमि एउ महापुराणु ।
लइ णिदउ दुज्जणु मच्छरेण लइ कहमि[५] कव्वु किं वित्थरेण ।
करिमयरमीणजलयरवमालि चललवणजलहिवलयंतरालि ।
दोचंदसूरपयडियपईवि जंबूतरुलंछणि जंबुदीवि ।
खारंभोणिहिसामीवसंगि सुरसिहरिहि सठिउ दाहिणंगि ।
१० सरिगिरिदरितरुपुरवर[६]विचित्तु एत्थत्थि पसिद्धउ भरहखेत्तु ।
तहु मज्झि परिट्ठिउ मगहदेसु[७] जं वण्णहुं सक्कइ णेय सेसु ।
मुहि घुलइ[८] जासु जीहासहासु जसु णाणि णत्थि दोसावयासु ।

घत्ता—सीमारामासीमहिं[९] पविउलगामहिं गज्जंतहिं धवलोहहिं ॥
सोहइ हलहरजत्थहिं दाणसमत्थहिं णिच्चं चिय णिल्लोहहिं ॥११॥

१२

अंकुरियइं णवपल्लवघणाइं कुसुमियफलियइं णंदणवणाइं ।
जहिं कोइलु हिंडइ कसणपिंडु वणलच्छिहे णं कज्जलकरंडु ।
जहिं उड्डिय भमरावलि विहाइ पवरिंदणीलमेहलिय णाइ ।
ओयरिय[१] सरोवरि हंसपंति चल धवल णाइं सप्पुरिसकित्ति ।
५ जहिं सलिलइं मारुयपेल्लियाइं रविसोसभएण व हल्लियाइं ।
जहिं कमलइं[२] लच्छिइ सहुं सणेहु सहुं ससहरेण वड्डउ विरोहु ।
किर दो वि ताइं महणुब्भवाइं जाणंति ण तं जडसंभवाइं ।
जहिं उच्छुवणइं रसगब्भिणाइं[३] णावइ कव्वइं सुकइहिं तणाइं ।

---

६ B omits this foot. ७ BP उवयारहो and gloss in P उपकारस्य उदारस्य वा । ८ K होइ ।

११ १ M पावकम्मु । २ MB मिच्छाहिमाण°, P मिच्छाहिमाण but gloss मिथ्याभिराम° । ३. M उग्गव° and gloss उत्कट । ४. MBP अइतुच्छ° । ५ MBP करमि । ६. M पुरवर । ७ B मगहएसु । ८. M घुलय । ९ MB °रामहिं; P °रामारम्महिं ।

१२ १. M अवयरइ, BPT उवयरइ । २ MBP कमलहुं सहुं । ३ P °गब्भिराइ ।

कमलपत्रोंके समान मुखवाली, पवित्र सती, ज्ञानकी चूड़ामणि, पद्मावतीदेवी पवित्र सती हैं, ऐसी वह, मेरे काव्य विस्तारके इस दुस्तर मार्गमे सहायक हो, देवी भारती मेरे मुखमें स्थित हो। मेरी बुद्धि महाशास्त्रोंकी सामग्रीसे सहित हो। इस प्रकारका छन्द सर्गिणी छन्द कहा जाता है।

घत्ता—मेरे द्वारा रचित उदार शब्दसे गम्भीर निबन्ध (महाकाव्य) की जो मनुष्य निन्दा करता है, जनताके दुर्वचनोंसे दग्ध उस मदान्ध दुर्विदग्धको (दुनियामें) अपयश मिले ॥१०॥

११

अथवा मै अदय और पापकर्मा हूँ, मै आज भी कुछ भी धर्म नही जानता। मिथ्यात्वके सौन्दर्यसे रंजित विवेकवाला मै जिनवरके वचनोके रहस्यको नही जानता। मै अनवरत रसभाव उत्पन्न करनेवाले झूठे कथान्तरोंको कहता रहा हूँ। लो मै सूर्यसे सहित आकाशको अपने हाथसे ढँकना चाहता हूँ। लो मैं समुद्रको घडेमे बन्द करना चाहता हूँ। मै तुच्छ बुद्धि और नष्टज्ञान हूँ, (फिर भी) लो यह महापुराण कहता हूँ। लो दुर्जन ईर्ष्यासे निन्दा करे। लो मै काव्य करता हूँ। विस्तारसे क्या ? जलगजों, मगरों, मत्स्यो और जलचरोंके कोलाहलसे व्याप्त चंचल लवण समुद्रके वलयमे स्थित, दो-दो सूर्यो और चन्द्रोसे आलोकित होनेवाले तथा जम्बुवृक्षोसे शोभित जम्बूद्वीप है। उसमे सुमेरुपर्वतके, लवणसमुद्रकी समीपता करनेवाले, दक्षिणभागमे, प्रसिद्ध भरत क्षेत्र है, जो नदियों, पहाड़ों, घाटियों, वृक्षों और नगरोसे विचित्र है। उसके मध्यमे मगध देश प्रतिष्ठित है, शेषनाग भी उसका वर्णन नहीं कर सकता, यद्यपि उसके मुँहमे हजार जीभे चलती हैं, और उसके ज्ञानमे दोषके लिए जरा भी गुंजाइश नही है।

घत्त—वह मगध देश, सीमाओ और उद्यानोसे हरे-भरे बड़े-बड़े गांवो, गरजते हुए वृषभ-समूहों, और दान देनेमें समर्थ लोभसे रहित कृषकसमूहोसे नित्य शोभित रहता है ॥११॥

१२

जिसमे अंकुरित, नये पत्तोंसे सघन फूलों और फलोंवाले नन्दनवन हैं। जिसमें काले शरीरवाला कोकिल घूमता है मानो जो वनलक्ष्मीके काजलका पिटारा हो, जहाँ उड़ती हुई भौंरों-की कतार ऐसी शोभित होती है। जैसे इन्द्रनील मणियोकी विशाल मेखला हो। सरोवरोमे उतरी हुई हंसोंकी कतार ऐसी मालूम होती है जैसे सज्जन पुरुषकी चलती-फिरती चंचल कीर्ति हो। जहाँ हवासे प्रेरित जल ऐसे मालूम होते हैं जैसे सूर्यके शोषणके डरसे कांप रहे हो। जहां कमल लक्ष्मीसे स्नेह करते हैं लेकिन चन्द्रमाके साथ उनका बड़ा विरोध है। यद्यपि दोनों समुद्रमन्थनसे उत्पन्न हुए है लेकिन जड़ (जड़ता और जल) से पैदा होनेके कारण वे इस बातको नही जानते। जहाँ ईखोंके खेत रससे परिपूर्ण हैं, मानो जैसे सुकवियोके काव्य हों। जहां लडते हुए भैंसों और बैलोके उत्सव होते रहते है, जहां मथानी घुमाती हुई गोपियोंकी ध्वनियां होती रहती हैं, जहाँ

जुज्झंतमहिसवसहुच्छवाइं मंथामंथियमंथणिरवाइं ।
१० चँवलुद्धपुच्छवच्छाउलाइं कीलियगोवालइं गोउलाइं ।
जहिं चउरंगुल कोमलतणाइं घणकणकणिसालइं करिसणाइं ।
घत्ता—तहिं छुहधवलियमंदिरु णयणाणंदिरु णयरु रायगिहु रिद्धउ ॥
कुलमहिहरथणहारिए वसुमइणारिए भूसणु णं आइद्धउ ॥१२॥

१३

संकेयागयविरहीयणाइं सासोयपवड्ढियकंचणाइं ।
बहुलोयदिण्णणाणाफलाइं णावइ कुलाइं धम्मुज्जलाइं ।
जहिं महुँगंडूसहिं सिंचियाइं विंभरियाहरणहिं अंचियाइं ।
सीमंतिणिपयपोमाहयाइं वियँसंतविडववुड्ढीगयाइं ।
५ पियमण्णियसुहवाणासणाइं जहिं संदरिसियवाणासणाइं ।
पडिखलियसूरभावियरणाइं उज्जाणइं णं भावियरणाइं ।
उक्कलियँालइं णवजोव्वणाइं णिरु सच्छइं णं सज्जणमणाइं ।
जहिं सीयलाइं झसमाणियाइं परकज्जसमाणइं पाणियाइं ।
जहिं जणुँलुंचणु कंटयकरालु जलि णलिणे लिहक्कावियउ णालु ।
१० बाहिरि णिहियउ वियसंतु कोसु भणु को वण ढंकइ गुणहिं दोसु ।
जहिं भमरु तहिं जि संठिउ सुहाइ संगहु सिरिणयणंजणहु णाइं ।
घत्ता—कुसुमरेणु जहिं मिलियउ पवँणुल्ललियउ कणयवण्णु महु भावइ ॥
दिणयरचूडामणियइ णहकामिणियइ कंचुउ परिहिउ णावइ ॥१३॥

१४

जहिं कीलागिरिसिहरंतरेसु कोमलदलवेल्लिहरंतरेसु ।
सिक्खंति पक्खि दरदावियाइं विडमणियमम्मणुल्लावियाइं ।
जहिं पिक्कसालिछेत्ते घणेण छज्जइ महि णं उप्परियणेण ।
पंगुत्ते दीहें पीयलेण णिवडंतरिंछपल्लवचलेण ।
५ जहिं संचरति बेंहुगोहणाइं जव कंगु मुग्ग ण हु पुणु तेंणाइं ।
गोवालबाल जहिं रसुँ पियंति थलसररुहसेज्जायलि सुयंति ।
मायंदकुसुममंजरि सुएण हयचंचुएण कयसण्णुएण ।
जहिं समयल सोहइ वाहियालि वाहणपयहय वित्थरइ धूलि ।
हरि भामिज्जंति कँसासणेहिं अण्णाणिय णाइं कुसासणेहिं ।
१० णिज्जंति णाय कण्णारएहिं णाय व्व णायकण्णारएहिं ।
रुज्झंति गयासा ईरिएहिं सीस व्व गयासाईरिएहिं ।

४ M धवलुद्धपुच्छ° ।

१३ १. P वियसंति but gloss विकसित । २. M उक्कलिवालइ । ३. PK जणुलुंचणु । ४ MBP उद्धुल्ललियउ and gloss in P उच्छलित ।

१४ १ MP गाईहणाइ । २. MBP तिणाइं । ३ MBP महु, gloss in M मिष्टरसम् but in P इक्षुरसम् । ४. MBPK कुसासणेहिं but gloss in K तर्जनकेन ।

चपल पूँछ उठाये हुए बच्छोंका कुल है, और खेलते हुए ग्वालबालोंसे युक्त गोकुल हैं। जहाँ चार-चार अंगुलके कोमल तृण है और सघन दानोंवाले धान्योंसे भरपूर खेत है।

घत्ता—उस मगध देशमे चूनेके धवल भवनोंवाला नेत्रोके लिए आनन्ददायक राजगृह नामका समृद्ध नगर है, जो ऐसा लगता है मानो कुलाचलरूपी स्तनोंको धारण करनेवाली वसुमती-रूपी नारीने आभूषण धारण कर रखा हो ॥१२॥

१३

जिसके उद्यान-वन, कुलोंके समान, संकेतागत विरहीजन [संकेतसे जिनमें विरहीजन आते हैं / पक्षमे जिनमे संकेतसे विरहीजन नही आते], साशोकप्रवर्द्धितकंचन [जिनमे अशोक वृक्षोंके साथ चम्पक वृक्ष बढ़ रहे है / पक्षमे, हर्षके साथ स्वर्ण बढ़ रहा है], बहुलोक दत्त नाना फल (बहुत लोकोमे नाना प्रकारके फल देनेवाले) और धर्मोज्ज्वल (धर्म/अर्जुन वृक्षसे उज्ज्वल, धर्मसे उज्ज्वल) हैं। जहाँ उद्यान, मधु (पराग और मद्य) के कुल्लोंसे सिंचित भावी रणके समान है। जो विंभरित (विस्मृत और विस्मित कर देनेवाले) आभरणोंसे अंचित हैं, जो सीमन्तिनियोंके चरणकमलोसे आहत हैं, जो बढ़ते हुए वृक्षोसे वृद्धिको प्राप्त हो रहे हैं, जिनमे (उद्यानोंमे) कोयलोंके द्वारा मान्य सुभग 'आण' शब्द किया जा रहा है, (रण मे) प्रियाओके द्वारा मान्य सुभग आज्ञा शब्द (गजमुक्ता लाओ, युद्ध जीतकर आना इत्यादि) किया जा रहा है, जहाँ (उद्यानोंमे) बाण और अर्जुन वृक्ष दिखाई दे रहे है, जहाँ (रण मे) धनुष और बाण दिखाई दे रहे हैं। जहाँ (उद्यानो और युद्धमे) सूर्य एवं शूरवीरोंकी प्रभाका विचरण अवरुद्ध हो रहा है, जहांका जल नवयौवनकी तरह उत्कलित (कल्लोलमालासे शोभित और कलि रहित) है, जो सज्जनोंके मनोंकी तरह अत्यन्त स्वच्छ है, मत्स्योंके द्वारा मान्य जो जल दूसरोंके कार्यके समान शीतल है। जहाँ (सरोवरोंमे) कमलने अपना कांटोंसे भयंकर, लोगोंको नोचनेवाला नाल पानीमे छिपा लिया है, तथा विकासको प्राप्त होता हुआ कोश बाहर रख छोड़ा है, बताओ कौन गुणोसे अपने दोषको नही ढकता। जहाँ-जहाँ भ्रमर है, वहाँ-वहाँपर वह लक्ष्मीके नेत्रोके अंजनके संग्रहके समान शोभित होता है।

घत्ता—पवनसे उड़ता हुआ, सुनहला, मिश्रित कुसुम-पराग मुझ कवि (पुष्पदन्त) को ऐसा लगता है, मानो सूर्यरूपी चूड़ामणिवाली आकाशरूपी लक्ष्मीने कंचुकी—वस्त्र पहन रखा हो ॥१३॥

१४

जहाँ क्रीड़ापर्वतोके शिखरोंके भीतर कोमल दलवाले लतागृहोमे पक्षीगण थोड़ा-थोड़ा दिखना, और विटोके द्वारा मान्य कामकी अव्यक्त ध्वनि करना सीख रहे है। जहाँ पके हुए धान्यके खेतोंसे भूमि ऐसी शोभित है मानो उसने उपरितन वस्त्रके प्रावरण (दुपट्टे) को ओढ़ रखा हो। जो (प्रावरण) लम्बा, पीला और गिरते हुए शुकोंके पंखोके समान चंचल है। जहाँ अनेक गोधन जौ, कंगु और मूँग खाते हैं, फिर घास नही खाते। जहाँ गोपालबाल रसका पान करते हैं और गुलाबके फूलोंकी सेजपर सोते है। जहाँ क्रोध करनेवाले शुकने अपनी चोचसे आम्रकुसुमकी मंजरीको आहत कर दिया है। जहांपर समतल राजमार्ग शोभित है। उसपर वाहनोंके पैरोंसे आहत धूल फैल रही है। जहाँ सईसोके द्वारा घोड़े घुमाये जा रहे हैं, जैसे खोटे शासनोंसे अज्ञानीजनोंको घुमाया जाता है। महावतोके द्वारा हाथी वशमे किये जा रहे है, जैसे सपेरोके द्वारा

आसयर दिंति सिक्खावयाइं णं मुणिवर गुणसिक्खावयाइं ।
कप्पूरविमीसु पवासिएहिं जहिं पिज्जइ सलिलु पवासिएहिं ।

घत्ता—ससिपहपायारहिं[1] गोउरदारहिं जिणवरभवणसहासहिं ॥
१५ मढदेउलहिं विहारहिं घरवित्थारहिं वेसावासविलासहिं ॥१४॥

१५

जं सोहइ जहिं अविहंडियाइं गयणं[1] व केउसयमंडियाइं ।
सिरि[2] णिहियकणयकलसइं घराइं णावइ अहिसित्तजिणेसराइं ।
अवियाणियकरदप्पणविसेसि माणिक्कखइभित्तीपएसि ।
दीसइ सविंबु महुमत्तियाहिं मण्णिवि सवत्ति हम्मइ तियाहिं ।
५ जहिं अलिउलु अलयावलि मिलंतु णिद्धाडिउ सासाणिलि घुलंतु ।
अंगणवावीसयदलहु जाइ जलकीलिरबालावयणि ठाइ ।
संजणियबहलमयरंदरंगु जहिं सररुहु संबोहइ पयंगु ।
तं चेय खुडइ मत्तउ विहंगु सिरिहरहो असुंदरु दुट्ठसंगु ।

घत्ता—जहिं दीसइ तहिं भल्लउ णयरु णवल्लउ ससिर[3]विअंतविहूसिउ ॥
१० उवरिविलंबियतरणिहे सग्गे घरणिहे णावइ पाहुडु पेसिउ ॥१५॥

१६

जहिं मणहरु सोहइ हट्टमग्गु बहुसंथउ णं जडचट्टवग्गु ।
जहिं णेहहो भरिउ विहाइ भाणु पूरिउ पत्थेणं[1] कणेहिं दोणु ।
कामिणिकमवियलियकुंकुमेण णिल्हसइ जंतु जहिं जणु कमेण ।
कणिरे[2]णियसुकिंकिणिणीसणेहिं गुप्पइ णिवडंतहिं भूसणेहिं ।
५ खुप्पइ गयमयहयफेणपंकि तंबोलुग्गालइ जणियसंकि ।
जहिं राउलु रेहइ रयणजडिउ णं अमरविमाणु णहाउ पडिउ ।
जहिं धूवधूमकयमणवियार जलहरभंतिएं णच्चंति मोर ।
जहिं विजयवडहदुंदुहिसरेहिं सुव्वइ[3] ण किं पि णारीणरेहिं ।
णवदिणयरकरतंबिरइ गोसि वित्थिण्णइ जहिं पंगणपएसि ।

१० घत्ता—झेंदुउ जयसिरिसारहिं रायकुमारहिं चलचोवाणहिं ताडिउ ॥
जणियजणाणूरायहिं परकइवायहिं णायइ लोउ भमाडिउ ॥१६॥

१७

तहिं सेणिउ णामें अत्थि राउ गारुडगुरु व्व विण्णायणाउ ।
ध[illegible]सु द[illegible]खु संजायवेउ रिउवंसडहणि णं जायवेउ ।

---

५. MBP [illegible]।

१५. १. MBP [illegible]। २. M [illegible]°। ३. M °[illegible] [illegible]।

१६. १. P [illegible]। २. MBP [illegible]°। ३. P [illegible]।

साँप वशमे किये जाते हैं। सवारोंके द्वारा हाथी और घोड़े रोके जा रहे हैं; जैसे निराश आचार्यों द्वारा शिष्योंको रोक लिया जाता है। खच्चरोंको शिक्षा शब्द कहे जा रहे हैं; मानो मुनिवर गुणव्रतों और शिक्षा व्रतोंको दे रहे हैं। जहाँ प्याउओंपर ठहरे हुए प्रवासियोंके द्वारा कपूरसे मिला हुआ पानी पिया जाता है।

घत्ता—जिनके परकोटे चन्द्रमाकी प्रभाके समान हैं ऐसे; गोपुर द्वारवाले हजारों जिन-मन्दिरों, मठों, देवकुलों, विहारों, गृह विस्तारों, वेश्याओंके आवासों और विलासोंमे-से ॥१४॥

१५

जो उसी प्रकार शोभित है कि जिस प्रकार निरन्तर सैकड़ों ग्रहोंसे आकाश। जिनके अग्र-भागपर स्वर्णकलश रखे हुए है, ऐसे घर इस प्रकार मालूम होते हैं, मानो उन्होंने जिनभगवान्‌का अभिषेक किया हो। जिनमे हाथके दर्पण विशेष ज्ञात नही होते, माणिक्योंसे रचित ऐसी दीवारोमें, मदिरासे मत्त स्त्रियोंको अपना बिम्ब दिखाई देता है, सौत समझकर वह उनके द्वारा पीटा जाता है, जहाँ भ्रमर समूह अलकावलीसे घुल-मिल गया है, लेकिन चक्राकार घूमते हुए उसे श्वासके पवनने निकाल दिया है। वह आँगनकी बावड़ीके कमलोंपर जाता है, और पानीमे क्रीड़ा करती हुई बालाके शरीरपर बैठता है वहाँ; जिसे प्रचुर पराग प्रेम उत्पन्न हो गया है ऐसे कमलको सूर्य सम्बोधित करता है, (उसे खिलाता है) उसीको मतवाला हंस खुटक लेता है। श्रीधर (कमल और धनवान्) का दुष्ट साथ असुन्दर होता है।

घत्ता—वह नगर जहाँ देखो वही भला तथा चन्द्रकान्त-सूर्यकान्त मणियोंसे भूषित नया दिखाई देता है। जिसके ऊपर सूर्य विलम्बित है ऐसी धरतीके लिए मानो स्वर्गने उसे उपहारके रूपमे भेजा हो ॥१५॥

१६

जहाँ मनोहर हाट-मार्ग शोभित हैं, जो मानो बहुसंस्तुत (रत्नमणि आदि वस्तुओं / अनेक शास्त्रोंवाला) मूर्ख शिष्यवर्ग हो। जहाँ मान, (तेल मापनेका पात्र), स्नेह (तेल) से भरा हुआ शोभित है। जहाँ प्रस्थ (अन्न मापनेका पात्र) के द्वारा द्रोण इस प्रकार भर दिया गया है जिस प्रकार बाणोंसे द्रोणाचार्य आच्छादित कर दिये गये थे। स्त्रियोंके पैरोसे विगलित कुमकुमसे युक्त मार्गसे जाता हुआ मनुष्य फिसल जाता है। रुनझुन करती हुई किंकिणियोंके स्वरों-वाले गिरते हुए गहनोंसे वह गिर पड़ता है। गजोंके मद और घोड़ोंके फेनोंकी कीचड़मे और शंका उत्पन्न करनेवाले ताम्बूलोंकी पीकमे खप जाता है। जहाँ रत्नोंसे विजड़ित राजकुल ऐसा लगता है मानो आकाशसे अमरविमान आ टपका हो। जिन्हें धूपके धुएँसे मनमें शंका उत्पन्न हो गयी है ऐसे मयूर जहाँ मेघोकी भ्रान्तिसे नृत्य करते है, जहाँ विजय नगाड़ोंकी दुन्दुभियोंके स्वरोंके कारण नर-नारियोको कुछ भी सुनाई नही देता। जहाँ प्रांगण प्रदेशमें नवदिनकर की किरणोंसे आरक्त प्रभातके फैलनेपर—

घत्ता—विजयश्रीमे श्रेष्ठ राजकुमारोंके द्वारा चंचल चौगानोंसे प्रताड़ित गेंद ऐसी मालूम होती है, मानो लोगोंमें अनुराग उत्पन्न करनेवाले, परमतके वादी कवियों द्वारा लोगोंको भ्रमित कर दिया गया हो ॥१६॥

१७

उसमे श्रेणिक नामका राजा है जो गारुड़ गुरु (गरुड़ विद्याका जानकार) के समान, विज्ञातणाय (नागोका जानकार / न्यायका जानकार) है जो कार्योंमे कुशल फुरतीवाज और

सीयामणु व्व रामाहिरामु सूरो इव परदुल्लंघधामु ।
णियसमयणिसेवियइट्ठकामु पावणि व पयंडुद्दामथामु ।
१० पविदंडो इव णिद्दलियलोहु मयमारउ व्व णासियमओहु ।
वयधारि व गुरुयणि मुक्कमाणु सुरवरकरि व्व अविहंडदाणु ।
जोईसरु व्व ह्यरोसहरिसु णं खत्तधम्मु थिउ होवि पुरिसु ।
जाणइ विग्गहु[1] संधाण ठाणु णं वेयायकरणु[2] महापहाणु ।
सत्तंगु वि पालइ रज्जु केम पयईणिबद्धु णियदेहु जेम ।
१५ पवणो इव फेडियसंदमेहु गोवालु व कयमहिसीसणेहु ।
मंडलियमउडपरिहिट्ठचरणु जिणणाहु व णिहिलणिरायसरणु ।
घत्ता—णवरेक्कहिं[3] दिणि राणउ सो आसीणउ[4] सिंहासणि दीहरकरु ॥
चेल्लिणिदेविइ[5] मंडिउ णं अवरुंडिउ वल्लरीइ सुरतरुवरु ॥१७॥

१८

अतुलियबल[1]खलकुलपलयकालु जामच्छइ मेइणिसामिसालु ।
तामायउ तहिं उज्जाणवालु सिरसिहरचडावियबाहुडालु ।
अणवरयविहियसामंतसेव सो पभणइ भो भो णिसुणि देव ।
कुसुमसरपसरपसमणसमत्थु णीसेसमंगलासउ पसत्थु ।
५ अहिसयरखयर[2]णरणमियपाउ तेल्लोक्कणाहु जिणु वीयराउ ।
आहंडलणिम्मियसमवसरणु चउदेवणिकायाणंदकरणु ।
चउतीसातिसयविसेसवंतु अरहंतु महंतु अणंतु संतु ।
परमप्पउ परमु महाणुभाउ तित्थयरु वीरु देवाहिदेउ ।
उप्पाइयकेवलु[3] विमलणाणु अट्ठविहपाडिहेराहिहाणु ।
१० जगदुरियतिमिरणिहणेक्कभाणु विउलेइरि[4] पराइउ वड्ढमाणु ।
तं णिसुणिवि दुज्जणहियसल्लु परपुरदावाणलु सुहडमल्लु ।
परिवड्ढियजिणधम्माणुराउ आसणु मुएवि रायाहिराउ ।
लहु पणविउ सत्तपयाइं गंपि एहउ थुइवयणु करंतु[5] किं पि ।

१७ १. MBP विग्गहु संधाणु ठाणु । २. MBP वइयाकरणु । ३ MBP अवरेक्कहिं । ४. P सह आसीणउ । ५ M चेल्लणदेवी°; B चेल्लिणि° P चेल्लणदेविहि ।

१८. १ B °वलु । २ M °खयरणिव° । ३. MB °केवलविमल° । ४ M विउलइर । ५ MBP कहंतु ।

MBP have at the commencement of this Samdhi the following stanza in praise of the poet and his patron :—

आदित्योदयपर्वताद्गुरुतराच्चन्द्रार्कचूडामणे-
रा हेमाचलत कुबेरनिलयादा सेतुबन्धाद् दृढात् ।
आ पाताळतलादहीन्द्रभवनादा स्वर्गनागं गता
गीर्नियस्य न वेद्मि भद्र भरतस्याभाति गण्डस्य च ॥

GK give it at the beginning of the third Samdhi and have [illegible] for [illegible], [illegible] for चूडामणे and कीर्ति यस्य न वेद्मि for गीर्नियस्य न वेद्मि ।

मानो शत्रुओंके वंशको जलानेमें अग्नि। सीताके मनके समान, जो रामाभिराम (जिसे राम और रामा सुन्दर है), है जो सूर्यके समान दूसरोंके द्वारा अलंघ्य है। जो अपने समयके अनुसार कार्योंको सम्पादित करनेवाला है, जो हनुमान्‌के समान अपना स्थैर्य प्रकट करनेवाला है, वज्रदण्डकी तरह, जिसने लोह (लोहा / लोभ) को नष्ट कर दिया है, जो व्याधाकी तरह मयसमूह (मद / मृग समूह) को नष्ट करनेवाला है, व्रतधारीकी तरह जो गुरुजनोंके प्रति विनीत है, ऐरावत गजकी भाँति जो अखण्डित'दानवाला है, योगीश्वरके समान, क्रोध और हर्षको नष्ट करनेवाला है, मानो क्षात्रधर्म ही पुरुष रूपमें स्थित हो गया हो। वह विग्रह और सन्धिके स्थानको जानता है, मानो वह महामुख्य वैयाकरण हो। वह सप्तांग राज्यका पालन इस प्रकार करता है, जैसे प्रकृतियोंसे निबद्ध उसकी देह हो। पवनके समान जिसने मन्दमेह (मन्द मेघ / मेधा—बुद्धि) को नष्ट कर दिया है। गोपालके समान जो महिषी (पट्टरानी और भैंस) से स्नेह करनेवाला है। जिनके चरण माण्डलीक राजाओंके मुकुटोंसे घर्षित है ऐसा वह जिनेन्द्रनाथके समान निखिल मनुष्य राजाओंकी शरण है।

घत्ता—एक दिन लम्बी बाँहोंवाला वह राजा अपने सिंहासनपर बैठा हुआ था। चेलना देवीसे शोभित वह ऐसा जान पड़ता था मानो नवलताओंने कल्पवृक्षको आलिंगित कर लिया हो ॥१७॥

१८

अतुलित बलवाला, शत्रुकुलके लिए प्रलयकालके समान, धरतीका श्रेष्ठ स्वामी वह राजा जब बैठा हुआ था कि इतनेमे, जिसने सिररूपी शिखरपर अपनी बाहुरूपी डालें चढ़ा रखी हैं,[२] ऐसा उद्यानपाल वहाँ आया। अनवरत सामन्तोंकी सेवा करनेवाला वह कहता है—"हे देव, सुनिए, कामदेवके बाणोंके प्रसारको शान्त करनेमे समर्थ, समस्त मंगलोंके आश्रय, प्रशस्त, सूर्य, विद्याधर और मनुष्योंके द्वारा वन्दनीय-चरण, त्रिलोक स्वामी जिन, वीतराग, इन्द्रके द्वारा जिनका समवसरण बनाया गया है, जो चारों निकायोंके देवोंको आनन्द देनेवाले चौंतीस अतिशय विशेषोंसे युक्त हैं, ऐसे अर्हत् महान् अनन्त सन्त परमात्मा परम महानुभाव वीर तीर्थंकर देवाधिदेव जिन्हे केवलज्ञान उत्पन्न है, ऐसे विमलज्ञानवाले, आठ प्रातिहार्योंके चिह्नोंवाले, विश्वके पापरूपी अन्धकारको दूर करनेके लिए एकमात्र सूर्य, स्वामी वर्धमान विपुलाचलपर आये हैं। यह सुनकर, शत्रुओके हृदयोके लिए शल्यके समान, शत्रुनगरके लिए दावानल, सुभटोमे मल्ल, तथा जिसका जिनधर्मके लिए अनुराग बढ़ रहा है ऐसे उस राजाधिराजने आसन छोड़कर, शीघ्र सात पैर चलकर, निम्नलिखित स्तुति वचन कहते हुए प्रणाम किया।

---

१. सप्तधातुओसे। २. लम्बे हाथोवाला।

घत्ता—जय पयपणमियसुरगुरु जय तिहुयणगुरु सामिय सयलपयाहिय ॥
१५ जय णिहयणियामय भरहणियामय पुप्फयंततेयाहिय ॥१८॥

इय महापुराणे तिसट्ठिमहापुरिसगुणालंकारे महाकइपुप्फयंतविरइए महाभव्वभरहाणु-
मण्णिए महाकव्वे सम्मइसमागमो णाम पढमो परिच्छेओ समत्तो ॥ १ ॥

॥ संधि ॥ १ ॥

घत्ता—बृहस्पति जिनके चरणोमे प्रणत है ऐसे हे त्रिभुवन गुरु और समस्त प्रजाका हित करनेवाले, आपकी जय हो। अपने समस्त रोगोका नाश करनेवाले तथा भरतक्षेत्रके नियामक सूर्य और चन्द्रसे भी अधिक तेजवाले जिन, आपकी जय हो ॥१८॥

इस प्रकार त्रेसठ महापुरुषोके गुणालंकारवाले महापुराणमें महाकवि पुष्पदन्त द्वारा विरचित तथा महाभव्य भरत द्वारा अनुमत महाकाव्यका सन्मति समागम नामका पहला परिच्छेद समाप्त हुआ ॥१॥

संधि २

पणिवाउ करेवि पसण्णमणु भत्तिरायरहसुच्छलिउ ॥
सो णरवइ सहुं णियपरियणिण पासु जिणिंदहु संचलिउ ॥ ध्रुवकं ॥

१

पहयाणंदभेरि बलु चल्लिउ पुरणारीयणु हरिसुप्पेल्लिउ ।
भाविणि का वि देवगुणभाविणी चलिय स कमलहत्थ णं गोमिणि ।
का वि सचंदण सहइ महासइ णं मलयइरिणियंववणासइ ।
कुवलउ का वि लेइ जसधारिणि णं वररायवित्ति रिउदारिणि ।
५ रुप्पयथालु का वि घुसिणालउ ससिबिंबु व संझारायालउ ।
पवरकसणगंधोहकरंबउ उवरज्जंतु व णवरविबिंबउ ।
कणयवत्तु काइ वि करि धरियउ इंदणीलमउ मोत्तियभरियउ ।
णावइ णहयलु उडुविप्फुरियउ गुरुचरणारविंदु संभरियउ ।
का वि ससंख समुद्दसही विव का वि सकलस णिहाणमही विव ।
१० का वि सदप्पण वेसावित्ति व का वि सरस कइकव्वपउत्ति व ।
का वि जिणिंदभत्तिपब्भारें णच्चइ भरहभाववित्थारें ।
काहि वि विट्ठउ पयडु थणत्थलु णाइं णिरंगकुंभिकुंभत्थलु ।
मयणंकुसवणरेहारुणियउ समवंतेण पिएण ण गणियउ ।
काहि वि घुलइ हारु मणिमंडिउ णावइ कामें पासउ मंडिउ ।
१५ झल्लरिपडहमुइंगसहासहिं वज्जंतहिं जयजयणिग्घोसहिं ।
घत्ता—आरूढउ महिवइ मत्तगइ मयजलघुलियचलालिगणे ॥
णं महिहरि केसरि खरणहरु पवणुल्लियतमालवणे ॥१॥

२

चोइउ कुंजरु कमसंचारें गंडालीणभमरझंकारें ।
चामरचवलें छत्तंधारें गच्छमाणु सहुं णियपरिवारें ।
पत्तु णरेसरु तियसरवण्णउं दिट्ठउ समवसरणु वित्थिण्णउं ।
णिम्मिउं सइं सोहम्मपहाणें ठियउ एक्कजोयणपरिमाणें ।
५ माणखंभमणितोरणदामहिं कप्पियकप्पपायवारामहिं ।
जलखाइयधूलीपायारहिं तियससरासणवण्णवियारहिं ।

---

१. १. M पणवाउ । २ MB °रयसु° । ३. MBP रहसुप्पेल्लिउ । ४. MBP देवगुरुभाविणी । ५ MBP सहत्यकमल । ६. P णं रवि° । ७. MBP °वणियउ । ८. BP पिएण व । ९ MBP घुलिय । १० MBP आरूढु महीवइ ।

२. १. M छत्तें धारें, P छत्ताधारें । २ P णिय सह परिवारें ।

सन्धि २

प्रणाम कर प्रसन्न मन, भक्तिराग और हर्षसे उछलता हुआ वह राजा अपने परिजनके साथ जिनेन्द्र भगवान्‌के पास चला।

१

आनन्दकी भेरी बजाकर सेना चली। नगरका नारी-समूह हर्षसे प्रेरित हो उठा। देवके गुणोंकी भावना करनेवाली कोई भामिनी हाथमे कमल लेकर इस प्रकार चली, मानो लक्ष्मी हो। चन्दन सहित कोई महासती ऐसी शोभित होती है मानो मलयपर्वतके ढालकी वनस्पति हो। कोई यशस्विनी कुवलय (नीलकमल) को लेती है, वह ऐसी मालूम होती है, मानो शत्रुका विदारण करनेवाली श्रेष्ठ राजाकी वृत्ति हो। कोई केशरसे युक्त चाँदीका थाल लेती है जो सन्ध्यारागसे युक्त चन्द्रबिम्बके समान लगता है। श्रेष्ठ काली गन्ध (कालागुरु) के समूहसे सहित वह (थाल) ऐसा प्रतीत होता है मानो राहुसे ग्रस्त नवसूर्य बिम्ब हो। किसीने स्वर्णपात्र अपने हाथमे ले लिया, इन्द्रनील मणियोंवाला और मोतियोसे भरा हुआ जो नक्षत्रोंसे विस्फुरित आकाशके समान जान पड़ता है। किसीने गुरुके चरण-कमलोंका स्मरण किया। शंखसे युक्त कोई समुद्रकी सखीके समान जान पड़ती है। कलशसे सहित कोई खजानेकी भूमिके समान है। कोई वेश्यावृत्तिके समान दर्पण सहित है। कोई कविकी काव्य-उक्तिके समान सरस है। कोई जिनेन्द्रकी भक्तिके प्रभारके कारण भरतमुनिके संगीतके विस्तारके साथ नृत्य करती है। किसीका खुला हुआ स्तन-स्थल कामदेवरूपी महागजके कुम्भ-स्थलकी तरह दिखाई दे रहा है। मदनांकुश (नखों) के घावोंकी रेखासे लाल होनेपर भी उस (स्तन-स्थल) पर उपशमभावसे युक्त प्रियने कुछ भी ध्यान नही दिया। किसीका मणिमण्डित हार ऐसा प्रतीत होता था, मानो कामदेवने अपना पाश मण्डित कर लिया हो। बजते हुए हजारो झल्लरी, पटह और मृदंग आदि वाद्यो तथा जय-जय शब्दोंके साथ—

घत्ता—मदजलके कारण मँडराते हुए चंचल भ्रमरोंसे युक्त मत्तगजपर राजा ऐसा सवार हो गया, मानो पवनसे आन्दोलित तमालवनवाले पहाड़पर तीव्र नखवाला सिंह आरूढ़ हो गया हो ॥१॥

२

महावतने पैरोंके संचालनसे हाथीको प्रेरित किया। गण्डस्थलमे लीन भ्रमरोंकी झंकार तथा चमरोसे चपल, तथा छत्रोंकी छायावाले अपने परिवारके साथ जाता हुआ राजा वहाँ पहुँचा और उसे देवोसे रमणीय विस्तृत समवसरण दिखाई दिया। जिसे सौधर्म्यं स्वर्गके इन्द्रने स्वयं निर्मित किया था और जो एक योजन प्रमाण क्षेत्रमे स्थित था। जो मानस्तम्भों और मणियोंके वन्दनवारों, कल्पित कल्पवृक्षोके उद्यानो, जलपरिखाओं और धूलिप्राकारो, चैत्यगृहों, नाना

वल्लीवणपरिभमियसरालहिं[3] चेईहरणाणाणडसालहिं ।
सुरणरविसहरथोत्तवमालहिं खयरुच्चाइयकुसुमोमालहिं[4] ।
गंभीरहिं भुवणयलाऊरहिं वज्जंतहिं बहुमंगलतूरहिं ।
१० स रि ग म प ध णी सरसंघायहिं तुंबुरुणारयगेयणिणायहिं ।
उव्वसिरंभाणच्चणभावहिं कणरणंतआलावणिरावहिं ।
जं रेहइ तहिं राउ पइट्ठउ परमेसरु भवडंमुहु दिट्ठउ ।

घत्ता—सीहासण[5]सिहरासीणु जिणु णिम्मलु जणजणणत्तिहरु[6] ॥
पारद्धउ थुणहुं णराहिविण भुवणंभोरुहदिवसयरु ॥२॥

३

जय सयल- भुवणयल- ।
मलहरण इसिसरण ।
वरचरण- समधरण ।
भवतरण जरमरण[1]- ।
५ परिहरण जय वरुण- ।
वइसवण- जमपवण- ।
दणुदमण- सिरिरमण- ।
दिवसयर- फणिखयर- ।
ससिजलण- सिरणमण- ।
१० मउडयल- मणिसलिल- ।
धुयविमल[2]- कमकमल ।
जय णिहिल- विहिकुसल ।
णयमुसल- हयपबल- ।
सुयसबल- दियकविल- ।
१५ सिवसुगय- कइकुणय[3]- ।
वहदलण मयमलण[4] ।
सवरहिय दुहरहिय[5] ।
मुणिमहिय महमहिय ।
सुरहिरस- विससरिस ।
२० कुसुमसर- अणवसर ।
जय दुरह- हरिसरह ।
बुहतिलय सुहणिलय ।
रइविलय जुइवलय ।
जियतरणि जय करुणि ।

---

३. M वल्लिय° । ४. MBP सुकुसुममालहिं । ५ MBP सिंहासण° । ६. B जिणु जणणत्ति° ।

३. १ B जल्मरण । २ BP धुवविमल । ३ MBP कयकुणय° but GK कइकुणय and T कविकुनय° ।
४ MBP मयमहण । ५. B omits दुहरहिय ।

नाट्यशालाओं, सुरों, नटों और विषधरोंके स्तोत्रों, कोलाहलों, विद्याधरोंके द्वारा उठायी गयी पुष्पमालाओं, भुवनतल आपूरित करनेवाले बजते हुए मंगलवाद्यों, सा रे ग म प ध नी स आदि स्वरोंके संघातों, तुम्बुरु और नारदके गीतविनोदों, उर्वशी और रम्भाके नृत्यभावों तथा बजती हुई वीणाओंके स्वरोंसे शोभित था। ऐसे समवसरणमें राजाने प्रवेश किया और सामने परमेश्वरको देखा।

घत्ता—सिंहासनके शिखरपर आसीन, पवित्र, लोगोंकी जन्मपीड़ाका हरण करनेवाले, विश्वरूपी कमलके लिए सूर्यके समान वीर जिनेन्द्रकी राजाने स्तुति प्रारम्भ की ॥२॥

३

समस्त भुवनतलका मल दूर करनेवाले, आपकी जय हो। ऋषियोंके शरणस्वरूप श्रेष्ठ चरण तथा समता धारण करनेवाले, भवसे तारनेवाले, बुढ़ापा और मृत्युका हरण करनेवाले, यम, पवन और दनुका दमन करनेवाले, लक्ष्मीसे रमण करनेवाले, मुकुटतलके मणियोंके जलसे जिनके पवित्र चरणकमल धोये गये हैं ऐसे हे समस्त विधानमें कुशल, आपकी जय हो (मुनिधर्म और गृहस्थ धर्मकी रचनामें)। न्यायरूपी मूसलसे प्रबलोंको आहत करनेवाले, शास्त्रोंसे सबल, द्विज, कपिल, शिव और सुगतके कुनयोंके पथको नष्ट करनेवाले, मदका नाश करनेवाले, स्वपर भावसे शून्य तथा दुःखसे रहित, मुनियोंसे पूज्य महामहनीय, दुग्धरस और विषके रसमें समानभाव रखनेवाले, कामदेवकी पहुँचसे परे, हे देव आपकी जय हो। पापरूपी सिंहके लिए अष्टापदके समान, पण्डितोंमें प्रवर, सुखके निवास, रतिका विलय करनेवाले, द्युतिके मण्डल, सूर्यको जीतनेवाले हे करुण, आपकी

२५ जडदुमिर- मणभमिर-।
घणतिमिर- हरमिहिर।
जय सुमुह जय समह।
जय सुमण जय[6] गयण-।
चुयसुमण- पह[7]गमण।
३० जय[8] चलियचमरिरुह जय ललियसुरकुरुह।
जय[9] गहिरमहुरझुणि जय चरमपरममुणि।
जय विसयविसिगरुल जयधवल जसधवल।
जय रसियजसवडह गयगरुह जय अरुह।
घत्ता—सीहासणछत्तालंकरिय उत्तारेप्पिणु चउगइहे॥
३५ [10]जय मयमयणिवहमयाहिवइ मइं णेज्जसु पंचमगइहे॥३॥

४

इय [1]वंदिवि जिणु पालियरट्ठउ पयारहमइ कोट्ठि णिविट्ठउ।
संभवंतभव[2]भारभयंगउ भूवइ भत्तिभारणवियंगउ।
पुच्छइ महिवइ संजमधारा अक्खहि गोत्तमसामि भडारा।
पावणासु चउवग्गाइण्णउं जेम महापुराणु अवइण्णउं।
५ तं णिसुणिवि आघोसइ गणहरु वासारत्ति पत्ति णं जलहरु।
सुणि सेणिय मयमोहविहीणहि अरहंतावलीहि वोलीणहि।
णाइ णंतु भाविणिहि णिरुत्तउ एहउ वीरजिणिंदें वुत्तउ।
पढमु समासमि कालु अणाइउ सो अणंतु जिण[3]णाणे जोइउ।
जगपरिणामहु सो सहयारिउ अरसु अगंधु अरूउ अभारिउ।
१० मुणइ को वि सम्मत्तवियक्खणु णिच्छयकालु पवत्तणलक्खणु।
घत्ता—भो मुणिपयपंकयभमर णिव तच्चु ण कासु वि हउं रहमि॥
ववहारकालु परमेट्ठिमुहिं जिह णिसुणिउं तिह तुह कहमि॥४॥

५

अणुअंतरयरु समउ भणिज्जइ आवलि तेहिं असंखहिं किज्जइ।
ऊसासु[1] वि आवलिहिं दु संखहिं सत्तूसासहिं थोवउ लेक्ख[2]हि।
सत्तहिं थोवएहिं लवु भणियउं इह पियकारिणितणएं मुणियउं।
होंति महामुणिचित्तावडियहि सड्ढ जि अट्ठतीस लव[3] घडियहि।

---

६. MBP गयणयल° । ७. B णहगमण । ८. B omits this line. ९. B omits this line. १०. MB जय जय मयणिवह° ।

४. १. MBP वंदिय । २. MBP भवभाव°; K भवभाव° but corrects in to भवभार°; T भवभाव° but explains it as संसारे परावर्ताः प्रचुराः । ३. MBP जिणणाहें ।

५. १. M ओसासु । २. MBP लक्खहि । ३. MBP लव.।

जय हो। जड़ोंका दमन करनेवाले, मनको भ्रमित करनेवाले, सघन अन्धकारके लिए सूर्य, हे सुमुख और सम दृष्टि रखनेवाले आपकी जय हो। हे सुमन! आपकी जय, जिनके लिए आकाशसे सुमनोंकी वर्षा की जाती है ऐसे हे आकाशगामी, आपकी जय हो। जिनपर चमर ढोरे जाते हैं, ऐसे आपकी जय। हे सुन्दर कल्पवृक्ष, आपकी जय। हे गम्भीर मधुर ध्वनि, आपकी जय। हे अन्तिम तीर्थंकर आपकी जय। हे विषयरूपी सर्पके लिए गरुड़, विश्वके लिए मंगलस्वरूप यशसे धवल आपकी जय हो। जिनके यशके नगाड़े बज रहे हैं ऐसे हे अनिन्द्य अर्हन्त आपकी जय हो।

घत्ता—सिंहासन और छत्रोंसे अलंकृत तथा मदरूपी मृगोंके लिए सिंहके समान आपकी जय हो। चार गतियोंसे उद्धार कर, आप मुझे पाँचवी गति (मोक्ष) में ले जायें ॥३॥

४

राष्ट्रका पालन करनेवाला राजा श्रेणिक, इस प्रकार जिनेन्द्र भगवान्‌की वन्दना कर, ग्यारहवें कोठेमे जाकर बैठ गया। उत्पन्न होते हुए विश्वभारके भयसे डरकर वह भक्तिके भारसे विनत शरीर हो गया। राजाने पूछा—"संयमको धारण करनेवाले आदरणीय गौतम, बताइए कि पापका नाशक तथा चार पुरुषार्थोंसे परिपूर्ण महापुराण किस प्रकार अवतरित हुआ।" यह सुनकर गौतम गणधरने इस प्रकार घोषणा की कि जैसे पावस ऋतु आनेपर मेघ गरज उठे हों। उन्होंने कहा—'हे श्रेणिक, सुनो। मद और मोहसे रहित अरहन्तोंकी समाप्त हो रही परम्पराका न आदि है, और न होनेवाली परम्पराका अन्त है। वीर भगवान्‌ने निश्चयरूपसे यह कहा है। सबसे पहले संक्षेपमें बताता हूँ कि काल अनादि और अनन्त है जिसे जिनभगवान्‌ने अपने केवलज्ञानसे देखा है। इस विश्वके परिणमनमे वही सहायक है, वह अरस, अगन्ध, अरूप एवं भारहीन है। संसारके प्रवर्तनके कारणस्वरूप इस निश्चयकालको, सम्यक्त्वसे विलक्षण कोई विरला मनुष्य ही जान सकता है।

घत्ता—मुनियोके चरणकमलोंके भ्रमर हे राजन्! मै किसी भी तत्त्वको छिपा नहीं रखूँगा। परमेष्ठी भगवान्‌के मुखसे जिस रूपमे व्यवहार कालको मैने सुना है वह, मै वैसा ही तुम्हें बताता हूँ ॥४॥

५

एक अणु जितने समयमें आकाशके एक प्रदेशसे दूसरे प्रदेशमें जाता है, उसे समय कहते हैं, असंख्य समयोंकी एक आवली कही जाती है। संख्यात आवलियोंसे एक उच्छ्वास बनता है। सात उच्छ्वासोंका एक स्तोक समझना चाहिए। सात स्तोकोंका एक लव कहा जाता है—ऐसा प्रियकारिणी त्रिशलाके पुत्र महावीरने समझा है। महामुनियोंके चित्तमें आनेवाली नाड़ीमे साढ़े

५ घडियहिँ दोहिँ मुहुत्तहु अवसरु तीसहिँ तेहिँ जाइ णिसिवासरु।
तेत्तियहिँ जि दिर्[4]यसहिँ विरइज्जइ मासु महारिसिणाहहिँ गिज्जइ।
बिहिँ मासहिँ उडु[5]माणु णिबद्धउ उडुहिँ तीहिँ पुणु अयणु पसिद्धउ।
बिहिँ अयणिहिँ संवच्छरु वुच्चइ पंचहिँ वच्छरेहिँ जुगु वुच्चइ[6]।
बिहिँ जुगेहिँ दसवरिसइं जायइं दहगुणियइं सयसंखइ आयइं।
१० सउ दहेहिँ ताडिज्जइ जामहिँ आवइ अट्टसहासु वि तावहिँ।

घत्ता—सो सहसु वि दहहउ दससहँ[7]सु होइ समासिउ मइं णिउणु ॥
ते दह वि दहहिँ जइ गुणइ गुणि तो उप्पज्जइ लक्खु पुणु ॥५॥

६

संखाणाणिहिँ णिम्मिउं चंगउ चउरासीलक्खहिँ पुव्वंगउ।
जाणिज्जइ फुडु अक्खियमेत्ती लक्खसएण जि कोडि पवत्ती।
पुव्वंगें पुव्वंगु णिहम्मइ जइ तो इह अवरु वि अवगम्मइ।
वरिसहं सत्तरि कोडिउ लक्खहं छप्पण्णेव ताउ सहसं[1]खहं।
परमागमि जं देवें बद्धउ पुव्वप[2]माणु एउ तं लद्धउ।
५ पव्वु णउदु कुमुदु वि पउमक्खउ णलिणु कमलु तुडियउ वि ससंखउ।
अडडु अममु हाहा हूहू तिह जाणहि जिणवरेण जाणिउं जिह।
मचलय लय वि महालइयंगउ पुणु वि महालयणामपसंगउ।
सीसपकंपिउ हत्थ[3]पहेलिउ अचलप्पु वि वीरें उम्मीलिउ।
णाणाणामपमाणहिँ भेज्जउ एत्तिउ कालु होइ संखेज्जउ।
१०
घत्ता—परमाणु अट्ठ जइ मेलवहिँ तो तसरेणु समुब्भवइ ॥
अट्ठहिँ तसरेणुहिँ पिंडयहिँ एक्कु जि रहरेणु[4]उ हवइ ॥६॥

७

अट्ठहिँ रहरेणुयहिँ समग्गहिँ चिहुरग्गउ अट्ठहिँ चिहुरग्गहिँ।
लिक्ख[1] भणिय पुणु अट्ठहिँ लिक्खहिँ[2] सियसिद्धत्थु कहिउ णिहयक्खहिँ।
अट्ठहिँ सरिसवेहिँ परिमाणिउ जवपमाणु देवागमि आणिउं[3]।
परमप्पयदिट्ठउ को दूसइ अट्ठजवंगुल सूरि समासइ।
छंगुलु पाउ विहत्थि दुवाई दोहिँ ताहिँ किर रयणि वि हूई।
५ चउरयणिलु दंडु भणि भावहि दंडहिँ अट्ठसहासिहिँ पावहि।
जोयणु तं पि सयहिँ गुणिज्जइ पंचहिँ[4] पुणु लोयहु दंसिज्जइ।
एस महाजोयणु वक्खाणिउं जं जगमाणकरणु अहिणाणिउं।
तस्स पमाणें खम्मइ खोणी[5] परिवट्टुलिय सपरियर[6]तिउणी।

---

४. MBP दिवसहिँ। ५. MBP रिउमाणु। ६ MBP वुच्चइ। ७. MBP दससहस।
६. १. K सहंसक्खहं। २ M पुव्वे पमाणु। ३. B हत्थपहिल्लउ; P °पहिल्लिउ। ४ MBP रहरेणू।
७. १ MBP लिहक्ख। २. MBP लिहक्खहिँ। ३. M जाणिउ। ४. MBP पंचहिँ लोयहुं पुणु दरिसिज्जइ। ५. MBP खोणी। ६ TP सपरिरय and adds सपरिरयेति पाठेऽप्ययमेवार्थः।

अड़तालीस लव होते है। दो घड़ियोसे मुहूर्तका अवसर बनता है और तीस मुहूर्तोका दिन-रात होता है। दिनोंसे मास बनता है ऐसा, महाऋषि—नाथके द्वारा कहा गया है। दो माहोसे ऋतुमान बनता है, तीन ऋतुमानोसे फिर अयन प्रसिद्ध होता है। दो अयनोंसे एक वर्ष बनता है और पाँच वर्षोका युग कहा जाता है। और दो युगोंसे दस वर्ष बनते हैं। उनमें दसका गुणा करने-पर सौ साल होते हैं। जब १०० मे दसका गुणा किया जाता है तो एक हजार वर्ष होते हैं।

घत्ता—दससे आहत होनेपर वह हजार दस हजार होता है, थोड़ेमें मैंने ऐसा गुना है। उन दस हजारका भी जब दससे गुणा किया जाये तो एक लाख उत्पन्न होते हैं ॥५॥

६

संख्याज्ञानियों (गणितज्ञों) ने यह अच्छी तरह जाना है कि चौरासी लाख वर्षोका एक पूर्वांग होता है। कथन मात्रसे यह जान लिया जाता है कि सौ लाखका एक करोड़ कहा जाता है। जब पूर्वांगसे पूर्वांगका गुणा किया जाये तो और भी संख्या जानी जाती है, सत्तर करोड़ एक लाख छप्पन हजार वर्षोका एक सह संख्य होता है। परमागम मे देव (जिनेन्द्र) ने जैसा निबद्ध किया है, उस पूर्वके प्रमाणको यहाँ जान लिया। पूर्व नियुत कुमुद, पद्म, नलिन, संख सहित तुस्य, अट्ट, अमंग, ऊहांग और ऊहाको उसी प्रकार जानो कि जिस प्रकार जिन भगवान्‌ने कहा है। और भी मृदुलता, लता, महालतांग और फिर महालता नामका प्रसंग आता है। शिरःप्रकम्पित, हस्तप्रहेलिका और अचल काल हैं, उसे महावीर प्रभुने प्रकाशित किया है। इस प्रकार नाना नाम और प्रमाणोसे विभाजित इतना संख्यात काल होता है।

घत्ता—यदि आठ परमाणुओंको मिला दिया जाये, तो एक त्रसरेणु उत्पन्न होता है और आठ त्रसरेणुओंके मिलनेपर एक रथरेणुकी उत्पत्ति होती है ॥६॥

७

आठ रथरेणुओंके मिलनेपर एक बालाग्र बनता है, आठ बालाग्रोंकी एक लीख कही जाती है। आठ लीखोंसे एक सफेद सरसों बनता है, ऐसा महामुनियोंने कहा है। आठ सरसोंको इकट्ठा करनेपर एक जौका आकार बनता है ऐसा जिनागममें कहा गया है। परमपदमें स्थित लोगोके द्वारा जो देखा जाता है उसमें कौन दोष लगा सकता है? मुनि लोग संक्षेपमे आठ जौका एक अंगुल बताते हैं। छह अंगुलोंका एक पाद होता है, दो पादकी एक वितस्ति, दो वितस्तियोंका एक रत्नी, चार रत्नियोंका एक दण्ड मनमें भाता है। हजार दण्डोंका एक योजन होता है, उस योजन-को आठ हजारसे गुणित किया जाये और फिर उसे भी पाँच सौसे गुणा किया जाये, और फिर लोकको दिखाया जाये। इस प्रकार महायोजन कहा जाता है और जिसे जगको मापनेका आधार समझा जाता है। उसके प्रमाणसे धरती खोदी जाये, अपनी परिधिसे तीन गुनी अधिक गोल-गोल।

१० कत्तरियहि अविहायहिं[7] सुहुमुहुं सा पूरिज्जइ सिसुअविरोमहुं।
होउ पहुच्चइ लेक्खें म गणहि संवच्छरसइ एक्कु जि अवणहि।
जइयहुं रोमरासि सा खिज्जइ तइयहुं पलिओवमु ध्रुवु[8] पुज्जइ।
तेहिं असंखिहिं उद्धारुल्लउ दीवसमुद्दपमाण परुल्लउ।
तं पि असंखगुणिउं अद्धारउ भव[9]ठिदिआउपमाणाधारउ।
१५ होइ समुद्दोवमु चुअणाडिहिं पल्लोवमदहकोडाकोडिहिं।
घत्ता—तेत्तियहिं जि सायरसमहिं फुडु कालचक्कु मइं लक्खियउ॥
लइ एउ वि अवरु वि पुणु भणमि केवलणाणें अक्खियउ॥७॥

८

सुसमसुसमु[1] अण्णेक्कु वि सुसमउ सुसमदुसमु[2] पुणु दुस्समसुसमउ[3]।
दुस्समु अइदुस्समु पविहत्ता[4] इय छक्काल वीरपण्णत्ता।
ए ओहामियदावियइड्ढिहिं परिभमंति जगि हाणिपवुड्ढिहिं।
सुयबलविहवसरीरिसरीरहिं धम्मणाणगंभीरिमधीरहिं।
५ वड्ढंतेहिं होइ उच्छप्पिणि ओहट्टंतएहिं अवसप्पिणि।
सायराहं विंभियगिव्वाणहिं चउतिदुकोडाकोडिपमाणहिं।
तीहिं मि कालहिं तिण्णि विहत्तइं दहविहविडविपसाहियखेत्तइं।
दरिसियमाणवदेहारोयइं इच्छासंणिहमाणियभोयइं।
छच्चउदुधणुसहाससरीरइं[5] वोरक्खामलमेत्ताहारइं।
१० तिण्णिदुएक्कपल्लथियजीवइं रयणाहरणविहूसिय[6]गीयइं।
उत्तिमज्झिमाइं णिकिट्ठइं भोयभूमिचिधाइं पइट्ठइं।
घत्ता—णउ सत्तु असेसु वि मित्तु तहिं सीहु गइंदें सहुं वसइ॥
लायण्णवण्णविब्भमभरिउ जणवयजोव्वणु णउ ल्हसइ॥८॥

९

बहुवोलीणइ तइयइ कालइ थियपल्लोवमट्ठभायालइ।
अट्ठारहधणुसयतणु थिरजसु पलिओवमदहमंसु चिराउसु।
पडिसुइ णामें जायउ कुलयरु पुणु तेरहसयचावपईहरु।
अममियाउ राउ संथरगइ अवरु वि हूवउ णामें सम्मइ।
५ पुणु णं माणुसवेसु अणंगउ अट्ठसयाइं सरासणतुंगउ।
अडडपमाणियाउ खेमंकरु संभूयउ सुभूयखेसंकरु।
सत्तसयाइं पंचसत्तरि धणु उच्छिउ अण्णु वि उप्पण्णउ मणु।
खेमंधरु णामें णं दिग्गउ तुडियदइं जीवेप्पिणु सो मउ[1]।
सयसत्तउ पंचासहिं[2] जुत्तउ ग[3]त्तपमाणउ जासु पउत्तउ।
१० कमलजीवि सीमंकरु भण्णइ तहु चरित्तु जइ सुरगुरु वण्णइ।

७ MBP अविभायहिं। ८. MP ध्रुउ, B धुवु। ९ MBP हवइ तियमाउ°।
८. १. MP सुसमुसुसमु। २. MBP सुसमुदुसमु। ३. MBP दुस्समुसुसमउ। ४. P पवहंता but gloss प्रविभक्ता' पृथग्गुणिताः। ५. MBP छच्चउदुवणुसहास°। ६. MBP विहूसियगीवहिं।
९ १ MP मुउ। २ MBP पण्णासहिं। ३. MBP गत्तमाणु जगि जासु पउत्तउ।

और जो कैंचीसे न काटे जा सकें ऐसे सूक्ष्म मेषके बच्चोंके रोमोंसे उसे भरा जाये। जब वह भर जाये तो उसे गिनो मत। सौ सालमें एक बाल निकालो, जब वह रोमराजि समाप्त हो जाये तब निश्चयसे एक व्यवहार पल्य पूरा होता है। उन असंख्य पल्योंसे एक उद्धारपल्य बनता है, और असंख्यात उद्धारपल्योंसे एक द्वीप समुद्र प्रमाण काल बनता है। उसमें भी असंख्यातका गुणा करनेपर एक अद्धा पल्य बनता है जो जन्म, स्थिति, आयु और प्रमाणका धारक होता है। दस करोड़ पल्योंके बराबर घटिकाओंके समाप्त होनेपर एक सागर प्रमाण समय होता है।

घत्ता—इतने ही सागरोंके बराबर कालचक्रको मैंने लक्षित किया है, लो मैं वैसा ही बताता हूँ कि जैसा केवलज्ञानीने कहा है ॥७॥

८

सुषमा-सुषमा एक और सुषमा, सुषमा-दुखमा फिर दुखमा-सुषमा, दुखमा, अति दुखमा भगवान् महावीरके द्वारा विज्ञप्त, ये छह काल विभाजित है। यह कालचक्र क्रमशः ऋद्धिको घटाता बढ़ाता हानि और वृद्धिको करता हुआ लोकमें घूम रहा है। जब बाहुबल, वैभव, मनुष्य, शरीर, धर्म, ज्ञान, गाम्भीर्य और धैर्य बढ़ते हैं, तो उत्सर्पिणी काल होता है, और जब ये चीजें घटती हैं तब अवसर्पिणी काल होता है। देवताओंको चकित करनेवाले इन कालोंका समय, क्रमशः तीन, चार और दो कोड़ाकोड़ी सागर प्रमाण होता है, तीनों काल तीन प्रकारसे विभक्त हैं। इनमें दस प्रकारके कल्पवृक्षोंसे प्रसाधित क्षेत्र हैं। मनुष्यके शरीर नीरोग दिखाई देते है। इच्छाके अनुसार भोगोंको प्राप्त करते हैं। मनुष्योंके शरीर क्रमशः छह, चार और दो हजार धनुष प्रमाण होते है, उनका आहार क्रमशः बेर, बहेड़ा और आँवलेकी मात्राके बराबर होता है। उनकी आयु क्रमशः तीन, दो और एक पल्यकी होती है। शरीर रत्नों और अलंकारोंसे विभूषित होते है। इस प्रकार भोगभूमिके चिह्न प्रकट हुए—उत्तम, मध्यम और जघन्य।

घत्ता—जहाँ कोई शत्रु नहीं होता। सभी मित्र है। सिंह हाथीके साथ रहता है, तथा लोगोंका लावण्य रंग और विलाससे परिपूर्ण वय और यौवन नष्ट नहीं होते ॥८॥

९

तीसरा काल बीतनेपर, जब पल्योपमके आठवें भाग बराबर समय रह गया, तब प्रतिश्रुति नामका दीर्घायुवाला कुलकर उत्पन्न हुआ, स्थिर यशवाला जो अठारह सौ धनुष प्रमाण शरीरका था उसकी आयु पल्योपमके दसवें भागके बराबर थी। फिर तेरह सौ धनुष प्रमाण शरीरवाला अमितायु और मन्थर गतिवाला सन्मति नामका कुलकर उत्पन्न हुआ। फिर कामदेवके समान तथा आठ सौ धनुष प्रमाण शरीरवाला, अडड बराबर आयुसे युक्त प्राणियोंका कल्याण करनेवाला क्षेमंकर कुलकर उत्पन्न हुआ। फिर सात सौ पचहत्तर धनुष प्रमाण शरीरवाला एक और मनु हुआ, उसका नाम क्षेमन्धर था और वह दिग्गज था, जो एक तुट्य वर्ष प्रमाण जीवित रहकर मर गया। फिर जिसका शरीर सात सौ पचास धनुष प्रमाण कहा जाता है ऐसे सीमंकर-

णलिणाउसु किर को णउ भण्णइ वाणासणहं सरीरसमुण्णइ।
सत्तसयइं पंचुत्तरवीसइं जासु जिणिंदभडारउ भासइ।
सिरिकरपल्लवलालियकंधरु सो संजायउ पुणु सीसंधरु।
पणुवीसुज्झियएहिं दिहिगारउ कोदंडहं सएहिं गरुयारउ।
१५ तेत्तिएहिं पुणु गुणमणिमंडिउ विमलवाहु हुउ पंडापंडिउ।
एक्कु वि पोमु जासु संजीविउ मुउ सुहकम्में सुरहरु पाविउ।
छहसयपणहत्तरिइ पसाहिय जासु देहउच्छेहु पसाहिय।
कम्मुयाहं कामिणिकयविंभउ णामें सुपसिद्धउ चक्खुब्भउ।
पडसंगाउ महीयलि अच्छिउ पच्छा खयकालेण णियच्छिउ।
२० पुणु वि जसस्सि पुणचंदाणणु उप्पण्णउ पत्थिवपंचाणणु।
घत्ता—छहुमाणइं सयइं कोणासणहं पण्णासाहियाइं गणमि॥
तहु देहुद्धत्तणु एत्तडउ जीविउ कुमुदु एक्कु[10] भणमि॥९॥

१०

एयहु अक्खियाइं जेत्तियइं जि पंचवीसरहियइं तेत्तियइं जि।
पुणु जायहु वलतुलियगइंदहु धणुसयाइं अहिचंदणरिंदहु।
कुमुयंगाउणिवद्धपमाणहु णिउ सो कालें अमरविमाणहु।
पंचसयइं पुणु सयसंजुत्तइं चावहं जासु जिणेण णिउत्तइं।
५ णउदाउसु महिवइ संजायउ इह चंदाहु णाम विक्खायउ।
तहु पच्छइ गच्छंतें कालें उच्छिज्जंतें सुरतरुजालें।
अज्जवलोयहु आसि पहाणउ हुउ मरुएउ णाम वहुजाणउं।
सायरवीढहं सयइं महिड्ढिउ पंच पंचहत्तरइं पवड्ढिउ।
गउ सो णउयंगउ जीवेप्पिणु थिउ सुरहरि सुरवोंदि लएप्पिणु।
१० सड्ढइं पंचसयइं रणचंडहं देहपमाणु जासु धणुदंडहं।
पव्वाउसु पय पालहुं जाणइ पुणु हुउ मणु णामेण पसेणइ।
कंडमोक्खकरणाहं सउण्णउ पंचसयाइं सवायइं उण्णउ।
पुव्वकोडिजीवियसंपुण्णउ सुद्धवुद्धि सब्भावाउण्णउ।
तिहुअणभवणखंभु णं दिण्णउ संतत्तुज्जलकंचणवण्णउ।
१५ गुरुउद्धरियवंसु वरमेहलु दावियकप्पतरुवरामयहलु।
भूसणरयणकिरणहयतमयलु सयणुतेयउज्जोइयणहयलु।
मउडसिहरु हारावलिणिज्झरु सरवरसेवाजोग्गधराधरु।
णं अवयरियउ जंगमु मंदरु णं णहणिवडिउ देउ पुरंदरु।

---

४. MP जिणिंदु भडारउ। ५. MBP एक्कु पोमु जा सो संजीवउ। ६. MBP कामुयाहं। ७. BP वाणासणहं। ८. MBP गणिउं। ९. MBP देहुच्चत्तणु। १०. MBP भणिउं।

१० १ MBP चावहिं। २. MBP चंदाहणामु। ३. MBP उच्छिज्जंतें। ४. MBP add after this line दीहवाहु उरयलवित्थिण्णउ। ५ B °खंसु णं मेहलु। ६. M °जोग°; BP °जोग्ग°। ७. MBP जंगममंदरु।

की आयु कमलांक प्रमाण थी। उसके चरितका वर्णन बृहस्पति ही कर सकता है। नलिनके बराबर आयुवाले उसे कौन नहीं जानता। जिनेन्द्र भगवान्ने जिसके शरीरकी ऊँचाई सात सौ पचीस धनुष प्रमाण बतायी है, तथा जिसके कन्धे लक्ष्मीके कर-पल्लवोंसे लालित हैं ऐसा सीमंधर कुलकर उत्पन्न हुआ। सीमन्धरकी आयुसे पचीस वर्ष कम अर्थात् सात सौ धनुष प्रमाण ऊँचाई-वाला भाग्यशाली पण्डितोंमे चतुर, उतने ही गुणोसे मण्डित विमलवाहन कुलकर उत्पन्न हुआ, जिसका जीवन एक पद्म प्रमाण था। उसने मरकर स्वर्ग प्राप्त किया। जिसके शरीरकी ऊँचाई छह सौ पचहत्तर धनुष प्रमाण थी। कामिनियोंको विस्मयमें डालनेवाला सुप्रसिद्ध नाम चक्षूद्भव उत्पन्न हुआ। वह एक पद्म समय धरतीपर जीवित रहा। बादमें क्षयकालने उसे समाप्त कर दिया। फिर पूर्णेन्दुके समान मुखवाला और राजाओमें सिंह यशस्वी नामका कुलकर हुआ।

घत्ता—मैं, पचास अधिक ऋतुओंकी संख्याके बराबर अर्थात् छह सौ पचास धनुष प्रमाण, उसके शरीरकी ऊँचाई गिनता हूँ और उनका जीवन-काल एक कुमुद प्रमाण बताता हूँ ॥९॥

१०

यशस्वीकी जितनी ऊँचाई बतायी गयी है, उसमें पचीस वर्ष कम, अर्थात् छह सौ पचीस धनुष प्रमाण शरीरवाला अभिचन्द राजा हुआ जो शक्तिमे हाथियोंको तौलता था। उसकी आयु एक कुमुदांगके बराबर निबद्ध थी। वह भी समय आनेपर अमरविमानमें चला गया। फिर सौ सहित पाँच सौ अर्थात् छह सौ धनुष प्रमाण जिसका शरीर, जिनेन्द्रने बताया है, पल्यके १० हजार करोड़ वर्षके बराबर आयुवाला ऐसा विख्यात चन्द्राभ नामका राजा हुआ। उसके बाद समय बीतनेपर कल्पवृक्षोंकी परम्परा नष्ट होनेपर, आर्यलोकका प्रधान मरुदेव नामका बहुज्ञानी राजा हुआ, जो पचहत्तर सहित पांच सौ अर्थात् पांच सौ पचहत्तर धनुष प्रमाण शरीर-वाला था, वह नौ अंग प्रमाण जीवित रहकर देवशरीर प्राप्त कर स्वर्गलोक चला गया, फिर जिसकी आयु एक पूर्व प्रमाण, जो प्रजाका पालन करना जानता था, ऐसा प्रसेनजित् नामका मनु हुआ। उसका शरीर सवा पांच सौ धनुष प्रमाण ऊँचा था। पूर्वकोटि आयुसे परिपूर्ण जो शुद्ध बुद्धि और सद्भावसे आपूरित था। तपे हुए सोनेके रंगके समान जो मानो त्रिभुवनरूपी भवनका आधार स्तम्भ था। अपने भारी वंशका उद्धार करनेवाला, श्रेष्ठ मेखलासे युक्त, कल्प-वृक्षके अमृतफलोंको दिखानेवाला, आभूषण रत्नोंकी किरणोंसे तममलको नष्ट करनेवाला, अपने शरीरके तेजसे आकाशतलको आलोकित करनेवाला, मुकुटरूपी शिखरसे और हारावलिके निर्झर-से युक्त जो ऐसा लगता था मानो सुरवरोंके सेवायोग्य धराको धारण करनेवाला मन्दराचल ही अवतरित हुआ हो, या मानो आकाशसे इन्द्रदेव गिर पड़ा हो।

१० घत्ता—हुउ पच्छइ आयहं तेरहइं बाहुद्धारियभुवणभरु ॥[८]
जियलोयहो णाहि व णाहिपहु णरसंथुउ कुलयरु पवरु ॥१०॥[९]

११

णहयलि जंत जणेण ण याणिय[१] पहिलएण रविससि वक्खाणिय ।
अण्णु वि रुइरुक्खक्खइ दिट्ठइं बिंदुयबिंदुएहिं उवरिट्ठइं ।
बीएण वि लोयहु भयरिट्ठइं अहरत्तइं णक्खत्तइं सिट्ठइं ।
हूया जे मृग[२] दारुण जइयहुं तइयएण ते साहिय तइयहुं ।
५ सिंगि णक्खि[३] दाढि वि परिहरिया सोम्म[४] सुलक्खण णियडइ[५] धरिया ।
चोत्थएण[६] पुणु णउ उप्पेक्खिउ लोउ मृगहिं[७] खज्जंतउ रक्खिउ ।
ताडिय ते दृढदंडपहारिहिं पंचमेण बहुबुद्धिपयारिहिं ।
वियलियफल तरु विरइयमेरइ अज्जव सुणिरोहिय णियकेरइ ।
पविरलदुमकालइ कुज्झंता फललोहें कोहें जुज्झंता ।
१० छट्ठएण मणुणा अणुयंधें[८] वारिय णर कयसीमाचिंधें ।
घत्ता—कुलयरपवरेण वि संत्तमेण[९] णियमइविहवें[१०] भाविउ ॥
पल्लाणिवि हयगयवरवसहभारारोहणु[११] दाविउ ॥११॥

१२

अट्ठमेण चंगउ उवएसिउ डिंभयदंसणभउ णिण्णासिउ ।
णवमएण सुयमुहससि दरिसिउ तं जोइवि[१] जणु हियवइ हरिसिउ ।
खणु जीवेप्पिणु मुउ सोमालहुं दहमें[२] केलि पयासिय वालहुं ।
एयारहमइ कुलयरि जायइ णंदणि माणवचंदहु[३] हूयइ ।
५ जीउ ण वज्जइ कइवयदिवसइं बारहमइ हुइ बहुयइं वरिसइं ।
णंदइ पय पयाइ संजुत्ती तेरहमेण वियप्पिय वित्ती ।
विहियइं सरिसमुद्दजलजाणइं गयणलग्गगिरिवरसोवाणइं ।
तक्कालइ जायइं णिम्मग्गइं कुसरि कुसायर कुकुहर दुग्गइं ।
घत्ता—जाएं[४] मणुणा चोद्दहमइण[५] णरसिसुणालइ खंडियइं ॥
१० कसणब्भइं थियइं णहंगणइ चलसोदामणिसंडियइं ॥१२॥

८. MBP °भुवणहरु । ९ MBP कुलयरपवरु ।

११. १. M ण जाणिय । २ MBP मिग । ३. M सिंगि य णक्खि, B सिंगणक्खि । ४. MBP सोम । ५ B णियडयधरिया । ६. P चऊथएण । ७. MBP मिगहिं । ८ MBP अणुवधें । ९. P सत्तमइ । १० MBP भावियउ । ११ MBP दावियउ ।

१२ १ P जोएप्पिणु हियवइ । २. P दहमइं । ३. MBP माणवचिंदहु । ४. MBP जायएं । ५ MBP चउदहमइण ।

घत्ता—इन तेरह कुलकरोंके बाद, अपने बाहुओंसे भुवनभारको उठानेवाले नरोंसे संस्तुत महान् कुलकर नाभि राजा हुए, जो मानो जीवलोकके लिए धुरीके समान थे ॥१०॥

११

आकाशतलमे जाते हुए जो आदमीके द्वारा नहीं जाने जाते थे, पहले कुलकरने उन्हें सूर्य और चन्द्रमा कहा। और भी जो ज्योतिरंग कल्पवृक्षोंके नष्ट हो जानेपर बिन्दुओं-बिन्दुओंपर स्थित दिखाई देने लगे। दूसरे कुलकरने (सन्मतिने) भी लोकके लिए उत्पातस्वरूप दिन-रात और नक्षत्रोंका कथन किया। और अब जो भयंकर पशु उत्पन्न हुए, तो तीसरेने उनके पशुस्वरूपका वर्णन किया। सीगों, नखों और दाढ़ोंवाले पशुओंको छोड़ दिया और जो सौम्य और सुलक्षण थे, उन्हे अपने पास रख लिया। चौथे कुलकरने भी उपेक्षा नही की तथा पशुओंके द्वारा खाये जाते हुए लोककी रक्षा की। पांचवेंने दृढ़ दण्डोंके प्रहारों और अनेक बुद्धिप्रकारोंसे उन्हे प्रताड़ित किया। छठे कुलकर सीमन्धरने विगलित फलवाले वृक्षोंको मर्यादायुक्त अपनी आज्ञासे सीधे सुनिबद्ध किया। वृक्षोंके उस अभावकालमें नष्ट होते हुए, तथा फलोंके लोभ और क्रोधसे झगड़ते हुए लोगोंको आग्रहके साथ मना किया।

घत्ता—सातवें श्रेष्ठ कुलकरने भी अपनी बुद्धिके वैभवसे विचार किया तथा जीन कसकर अश्व, गज एवं श्रेष्ठ बैलोंपर भार लादना सिखाया ॥११॥

१२

आठवेंने सुन्दर उपदेश दिया और बच्चेके देखनेके डरको दूर कर दिया (उसके पूर्व पिता पुत्रका मुख और आँखें देखे बिना मर जाते थे)। नौवें कुलकर यशस्वीने पुत्रके मुखरूपी चन्द्रमाको देखना बताया। उसे देखकर लोग अपने मनमें प्रसन्न हुए। लेकिन बालक एक क्षण जीवित रहकर मर गया। दसवें कुलकर अमिचन्द (अमृतचन्द्र) ने सुकुमार बालकोंकी क्रीड़ा दिखलायी। ग्यारहवे कुलकर चन्द्राभके होनेपर मानवसमूहके पुत्र उत्पन्न होने लगे। लेकिन कुछ दिनोंके बाद उनका जीव नही बचता, बारहवें कुलकर मरुदेवके होनेपर वे जीवित रहने लगे और प्रजा पुत्रादिसे संयुक्त होकर आनन्दसे रहने लगी। तेरहवें कुलकर प्रसेनजित्ने उनकी आजीविकाकी चिन्ता की। उसने समुद्र-नदियोंके लिए जलयान बनाये। आकाशको छूनेवाले पहाड़ोंपर सोपान बनाये गये। उन्हीके समय उत्पाती नदियों और समुद्रोंमे निश्चित मार्ग बनाये गये तथा पहाड़ोंमे दुर्ग रचे गये।

घत्ता—चौदहवें कुलकर नाभिराजके उत्पन्न होनेपर मानव-शिशुओंके नाल काटे जाने लगे, और सुन्दर बिजलियोंसे अलंकृत काले बादल आकाशरूपी आँगनमे स्थित हो गये ॥१२॥

१३

विसेकालिंदिकालणवजलहरपिहियणहंतरालओ ।
धुयंगयगंडमंडलुड्डावियचलमत्तालिमेलओ ॥
अविरलमुसलसरिसथिरधारावरिसभरंतभूयलो ।
हयरवियरपयावपसरुग्गयतरुतणणीलसद्दलो ॥
५ पडुतडिवंडणपडियवियडायलरुंजियसीहदारुणो ।
णच्चियमत्तमोरगलकलरवपूरियसयलकाणणो ॥
गिरिसरिदरिसरंतसरसरभयवाणरमुक्कणीसणो ।
महियलघुलियमिलियदुंदुहसयवयसालूरपोसणो ॥
घणचिक्खल्लखोल्लखणिखेइयहरिणसिलिंवकयवहो ।
१० वियसियणवकलंवकुसुमुग्गयरयपिंजरियदिसिवहो ॥
सुरवइचावतोरणालंकियघणकरिभरियणहहरो ।
विवरमुहोयरंतजलपवहारोसियसविसविसहरो ॥
पियपियपियलवंतवप्पीहयमग्गियतोयबिंदुओ ।
सरतीरुल्ललंतहंसावलिझुणिहलवोलसंजुओ ॥
१५ चंपयचूयचारचवचंदणचिंचिणिपीणियाउसो ।
वुट्टो झत्ति जस्स कालम्मि जए सुहयारि पाउसो ॥
मुग्गकुलत्थकंगुजवकलवतिलेसीवीहिमासया ।
फलभरणवियकणिसकणलंपडणिवडियसुयसहासया[10] ॥
ववगयभोयभूमिभवभूरुह सिरिणरवइरमासही ।
२० जाया [11]विविहधण्णदुमवेल्लीगुम्मपसाहणा मही ॥

घत्ता—तं पेक्खिवि[12] जणवउ संचलिउ मउ मेल्लेप्पिणु झत्ति तहिं ॥
लच्छीथणपेल्लियवच्छयलु अच्छइ णाहिणरिंदु जहिं ॥१३॥

१४

किं तडयडइ पडइ फोडइ घर विप्फुरंतु णिरु भेसावइ णर ।
चंकइं हरियाणणु किं दीसइ देव देव किं गज्जइ वरिसइ ।
गयणोवइदु तेत्थु णिसण्णा एवहिं अवर के वि उप्पण्णा ।
अण्णइं धण्णभरियइं णिप्फण्णइं णियमेव [illegible]संचिण्णइं ।
अज्जइं जए [illegible]अवियाणा दीहरमुक्खायासें रीणा ।
भोगाभोग्गु तेत्थु किं होसइ तं णिसुणेप्पिणु महिवइ घोसइ ।
[illegible] रसंतु [illegible] सो [illegible] जं चंकइं दीसइ तं सुरधणु ।
जा [illegible] सा विज्जुल पंचवण्णचंचियकोमलदल ।

१३

जिसमें विष यमुना और कालके समान (काले) नवमेघोंने आकाशके मध्यभागको ढँक लिया था, जो गजोंके हिलते हुए गण्डस्थलोंसे उड़ाये गये भ्रमरसमूहके समान था, जिसने अविरल मूसलाधार धारावाहिक वर्षासे भूतलको भर दिया था, जो सूर्यकी किरणोंके प्रतापको नष्ट करनेवाला, निकलते हुए वृक्षों और तृणोंके समान नीले पत्रोंसे नीला और हरा-भरा था, तथा वज्र और बिजलियोके पतनसे ध्वस्त पर्वतपर गरजते हुए सिंहोंसे भयंकर था, जिसमें नाचते हुए मतवाले मयूरोंके सुन्दर शब्दसे समस्त कानन गूँज उठा था, जिसमे पहाड़की नदियों और घाटियोमें बहते हुए जलोके स्वरोंसे भयभीत वानर शब्द कर रहे थे, जो धरतीमे फैले हुए और मिले हुए डुंडुह (निर्विष सांप), सर्पो और मेढकोंको पोषण देनेवाला था, जो कीचड़की कोटरों और गड्ढोमे रखे हुए मृगशावकोंका वध करनेवाला था, जिसमे खिले हुए नवकदम्बके कुसुमोसे निकली हुई धूलसे दिशापथ पोले थे, इन्द्रधनुषके तोरणोंसे अलंकृत मेघरूपी गजोंसे, जिसमें आकाशरूपी घर भरा हुआ था। बिलोंके मुखपर पड़ते हुए जलप्रवाहोंसे, जिसमे विषैले विषधर क्रुद्ध हो रहे थे। जिसमे पिउ-पिउ-पिउ बोलते हुए पपीहोके द्वारा जलकी बूँदें माँगी जा रही थी। सरोवरोके किनारोंपर उल्लसित होती हुई हंसावलीकी ध्वनियोके कोलाहलसे जो युक्त था। जो चम्पक, आम्र, चार, चव, चन्दन और चिंचिणो वृक्षोंके प्राणोंका सिंचन करनेवाला था, ऐसा पावस जिस कुलकरके समय जगत्‌मे शीघ्र बरस गया। धरती मूँग, कुलत्थ, कंगु, जौ, कलम (सुगन्धित धान्य), तिल, अलसी, व्रीहि और उड़दसे युक्त हो उठो। जिसपर फलके भारसे झुकी हुई बालोंके कणोंके लालची हजारों शुक गिर रहे हैं, जिससे भोगभूमिके कल्पवृक्ष विदा हो चुके है, और जो (भूमि) राजाकी लक्ष्मीकी सखी है, ऐसी वह भूमि विविध धान्यों, वृक्षो और लतागुल्मोंसे प्रसाधित हो उठी।

घत्ता—उस भूमिको देखकर, जनपद अहंकार छोड़कर शीघ्र ही वहाँ चला, जहाँ लक्ष्मी-के स्तनोसे सटा है वक्षःस्थल जिसका, ऐसा नाभिनरेन्द्र विराजमान था ॥१३॥

१४

जनोंने कहा—"यह तड़-तड़ करके क्या गिरता है, जो धरतीको फोड़ रहा है? अत्यन्त चमकता हुआ यह लोगोंको डराता है। वक्र यह हरा और लाल क्या दिखाई देता है? हे देव, हे देव, यह क्या गरजता और बरसता है? गत कल्पवृक्ष जहाँपर स्थित थे, इस समय वहाँपर दूसरे वृक्ष उग आये हैं। और दानोसे भरे हुए पौधे निष्पन्न हुए हैं जो नित्य ही पक्षियों और पशुओके द्वारा चुगे जाते है। उपायको नही जाननेवाले हम लोग जड़ है और लम्बी भूखके क्लेशसे दु.खी है। उनमे खाने योग्य और न खाने योग्य क्या होगा।" यह सुनकर राजा घोषणा करता है, "जो गरजता हुआ बरसता है। वह नवघन है, जो टेढ़ा दिखाई देता है वह इन्द्रधनुष है। जो चलती है और पहाड़को नष्ट कर देती है, वह बिजली है। कल्पवृक्षोंके नष्ट

सुरतरुवरविणासि सुच्छाया कम्मभूमिभूरुह संजाया ।
१० कडुयगरलु णीरसु वंचिज्जइ जं महुरउ सुसाउ तं चिज्जइ[3] ।
खत्तियवंसत्थलथिरकंदें एम भणेप्पिणु णाहिणरिंदें ।
णिवडमाणु अब्भुद्धरियउ अणु हत्थिकुंभि किउ मट्टियभायणु ।

घत्ता—कणकंडणसिहिसंधुक्कणइं पयणविहाणइं भावियइं ॥
कप्पाससुत्तपरियट्टणइं[4] पडपरियम्मइं[5] दावियइं ॥१४॥

१५

तासु घरिणि मरुएवि भडारी जाहि रूवसिरि अइगरुयारी ।
अमरहं पंतिइ पयपणवंतिइ लंघियाइं अम्हइं णयवंतिइ[1] ।
कमयलराएं काइं गविट्ठउ एम णाइं णेउरहिं पघुट्ठउ ।
पण्हिहिं रत्तउ चित्तु[2] पदंसिउं अंगुलियाहिं सरलत्तु पयासिउं ।
५ अंगुट्ठुण्णइइ जं गूढइं गुप्फइं[3] तं किर पिसुणइं मूढइं ।
णीरोमउ विसिरउ वट्टुलियउ मसिणउ सोहियाउ उज्जलियउ ।
जंघउ कमहाणिइ ओहरियउ दिट्ठउ[4] णं खलमित्तहं किरियउ ।
गूढइं णरवइसंतामासइं वायरणाइं व रइयसमासइं[5] ।
णिविडसंधिबंधइं णं कव्वइं देविहि जण्हुयाइं अइभव्वइं ।
१० ऊरुयखंभ[6] णराहिवदमणहु तोरणखंभाइं व रइभवणहु ।
जेण ससुरणरु[7] तिहुयणु जित्तउ कामतच्चु जं देवहिं वुत्तउ ।
दिण्ण थत्ति तहु सोणीविंवहु किं वण्णमि गरुयत्तु णियंबहु ।

घत्ता—गंभीर णाहि तहि मज्झु किसु उयरु सतुच्छउ दिट्ठु मइं ॥
संसग्गवसें गुणु कासु हुउ जो णवि जायउ[8] जम्मि सइं ॥१५॥

१६

तिवलीसोवाणेहिं चडेप्पिणु रोमावलिकुहिणी लंघेप्पिणु ।
सिहिणगिरिंदारोहणदोरइ लग्गउ वम्महु मोत्तियहारइ ।
पियवसियरणु वसइ भुयमूलइ सुइसोहग्गु जाहि हत्थयलइ ।
णेहवंधु[1] मणिवंधि परिट्ठिउ लायण्णें समुद्दु[2] ण संठिउ ।
५ जाहि तणउं तं जणियवियारउं महुरउ इयरहु केरउ खाइउ ।
कंठलीह णउ कंवू[3] पावइ परसासाऊरिउ कंह[4] जीवइ ।
णियंडणिविट्ठउ जियससिकंतिहि[5] धोयहि धवलहि दंतहु पंतिहि ।

३. P पिज्जइ । ४. MBP परियट्टणइं । ५ P °पडियम्मइं ।

१५ १ T णइकतीए but adds : णइयतिइ इति पाठे आकाशादागत्येत्यर्थः । २. MBP वित्तु पदरिसिउ, T वित्तु वृत्तत्वम् । ३ MBP गुंफइं । ४. P दिट्ठा ण । ५. M समाणइ । ६. MBPK ऊरुखम । ७ MBP ससुरयणु । ८ M नवितयह ।

१६ MBP णनिबंधु । २. BP समुद्दु णं । ३. MB कनुउ, P कंवुउ and gloss शङ्खः । ४ M कहिं । ५. M चिरिट° ।

होनेपर अच्छी छायावाले ये कर्मभूमिके वृक्ष उत्पन्न हुए हैं। जो कड़ुवा-विषैला और नीरस फल है उससे बचना चाहिए, और जो मधुर तथा सुस्वादु है उसे खाना चाहिए।" क्षत्रियरूपी वंश-स्थलके प्रथम अंकुर नाभिराजाने, यह कहकर नष्ट होती हुई प्रजाका उद्धार किया। हाथीके कुम्भस्थलके समान उन्होंने मिट्टीका घड़ा बनाया।

घत्ता—(उन्होंने) दानोका फटकना, आगको धौंकना आदि और भोजन बनानेके विधानोको उत्पन्न किया। तथा कपाससे सूत खीचना और कपड़ा बुननेका कर्म बताया ॥१४॥

१५

आदरणीया मरुदेवी उनकी गृहिणी थी जिनकी रूपश्री गौरवको बढ़ानेवाली थी। जिसके नूपुरोंने जैसे यह की कि आकाशसे आयी हुई देवपंक्तिने चरणतलों (तलुओं) के राग (लालिमा) में क्या पाया कि जो उसने हमारी उपेक्षा की। एड़ीके निचले हिस्सोंने अपना अनुरक्त चित्त बता दिया। अँगुलियोने अपनी सरलता प्रकाशित कर दी। अँगूठोंकी उन्नतिके कारण गूढ़ गाँठें हैं, जो दुष्ट और कठोर है, रोमविहीन, शिरारहित, गोल, चिकनी, सुन्दर और उजली जाँघें क्रमिक-हीनतासे नीचे-नीचे अपकर्षको प्राप्त होती हुईं, दुष्ट मित्रोंकी क्रियाको प्रकट करती हैं। जो राजाओंकी मन्त्रणाकी भाषाकी तरह गूढ़ है, जो व्याकरणकी तरह समास (समास और मांस) से रचित है, मानो वे सघन सन्धिबन्धोंसे युक्त काव्य है। देवीके घुटने अत्यन्त भव्य हैं, जिसके जांघोंरूपी खम्भे राजाओंके दमनके लिए थे अथवा रतिके भवनके लिए तोरण खम्भोंके समान थे। जिसने देवों और मनुष्यों सहित त्रिभुवनको जीत लिया है, जिसे देवों द्वारा कामतत्त्व कहा जाता है, मानो उसने इस देवीके कटि-बिम्बको स्थिरता प्रदान की है, उसके नितम्बोंकी गुरुता-का वर्णन मैं क्या करूँ ?

घत्ता—उसकी गम्भीर नाभि, दुबले मध्यभाग और तुच्छ (छोटे) उदरको मैने देखा है संसर्गके कारण किसीमे कोई गुण नही आता, यदि वह गुण जन्मसे उसमे स्वयं पैदा नहीं होता ॥ १५ ॥

१६

त्रिबलियोंकी सीढ़ियोसे चढ़कर, रोमावलीरूपी मार्ग पार कर, कामदेव स्तनरूपी गिरीन्द्र-पर चढ़नेके लिए डोरस्वरूप मुक्ताहारसे जा लगा। प्रियका वशीकरण मन्त्र, जिसके भुजमूलमें निवास करता है, और पवित्र सौभाग्य हथेलीमे। स्नेहबन्ध, जिसके मणिबन्ध (प्रकोष्ठ) मे स्थित है, लावण्यमे समुद्र जिसके सम्मुख नही ठहरता, वह जिसके लिए है, उसीके लिए मधुर है, दूसरेके लिए विकार (रोग) जनक और खारा है। उसकी कण्ठरेखाको शंख नही पा सकता, दूसरोंके श्वासोंसे आपूरित होकर वह क्यों जीवित रहता है ? चन्द्रमाकी कान्तिको जीतनेवाली

अहरबिंबु रेहइ रायालउ　　　मुत्तावलियहिं णाइं पवालउ।
अम्हहं ठाइ कयाइ[6] ण संमुहु　　　उज्जुउ णासावंसु वि दुम्मुहु।
१०　भउंहउं वंकत्तणु वि ण सहियउ　　　णयणहिं गंपि व कण्णहुं कहियउ।
णिसिदिणि ससि रवि गयणविलंबिय　　　बिण्णि वि गंडयलइ पडिबिंबिय।
कुंडलसिरि वहंति धवलच्छिहिं　　　जिणजणणियहि सलक्खण[7]कुच्छिहिं[8]।
कुडिलालय भालयलि णिरंतर　　　मुहकमलहु घुलंति णं महुयर।
अंवरु[9] वि ताहं भारु विवरेरउ　　　मुहससहरभएण णं तमरउ।
१५　तरुणिहे पट्टि[10] पइट्ठउ[11] दीसइ　　　कुसुमरिंक्खसीसियउ विहासइ।

घत्ता—[12]पणवंतिउ अमरविलासिणिउ छाहिणिहेण णिहीणियउ ॥
　　चारुत्तणकंखइ सुंदरिहिं पयणहदप्पणलीणियउ ॥१६॥

१७

तियसमहीरुहपिहियदसासइ　　　भारहवरिसहु मज्झुद्देसइ।
णं जियलोउ समुग्गयसंतिइ　　　सरयागमु णं छणससिकंतिइ।
णं सज्जणु गुणिलोयपसंसइ　　　णं आलिंगिउ धम्मु अहिंसइ।
पीवरपीणपयोहर[1]कयकरु　　　ताइ समउ सो पच्छिमकुलयरु।
५　अच्छइ णाहिणरेसरु जइयहं　　　सुयरइ[2] सुरवइ णियमणि तइयहं।
सुरणरवंदणिज्जु जगि[3] सारउ　　　गुरुसंसारमहण्णवतारउ।
कामकंदकप्परणकुठारउ[5]　　　होसइ एयहुं भवणि भडारउ।
इय संचिंतिवि पुणु परिछिण्णउं　　　इंदें धणयहु पेसणु दिण्णउं।
धणय धणय लहु करि णिरु भल्लउ　　　पुरवरु चउदुवारु[6] सोहिल्लउ।
१०　ता तं पेसणु जक्खें लइयउं　　　खणि साकेयणयरु पविरइयउं।

घत्ता—जहिं पवणाइरियवसेण[7] णंदणवणइं सुपत्ताइं ॥
　　णच्चंति फुल्लमुहमुक्केण[8] मयरंदेण व मत्ताइं ॥१७॥

१८

जहिं सरवरि सिरिपयसंफासें　　　वियसइ कमलु णाइं संतोसें।
परभुत्ते[1] विमुक्कमदोसें　　　अहवा णंदिउ को वं[2] ण कोसें।
तं तेहउ वि पीलु[3] किं भंजइ　　　महुयरउलु णं रोसें रुंजइ।
सो तहु दाणु देइ किं भीयउ　　　अवरु वि गरुयउ होइ विणीयउ।

---

६. P कयावि। ७ MBP सुलक्खण°। ८. P °कुक्खिहिं। ९. MB अविरुवि। १० K पुट्ठि। ११ P वइच्छउ। १२ BP पणमंतिउ।

१७. १. M पओरुह°। २ MPT सुमरइ, B सुअरइ and gloss स्मरति। ३. MBP जग°। ४ B °समुग्गव°। ५ MB °कुढारउ, K °कुठारउ but ccrrects it to °कुढारउ। ६ MBP चउदुवार-सोहिल्लउ। ७ MBP पवणायरिय°। ८ MBP °मुक्कएण।

१८ १ M परिभुत्तें। २ P को वि। ३ P कह।

धोयी हुई धवल, दन्त पंक्तिके निकट रहनेवाला, लालिमाका घर अधर-बिम्ब ऐसा शोभित होता है जैसे मोतियोंकी मालामें प्रवाल (मूँगा) हो। वह हमारे सामने कभी भी नहीं ठहरता, सीधा नासिका वंश भी दुर्मुख (दुष्ट) दो मुखवाला है। भौहोंका टेढ़ापन भी सहन नहीं किया गया (नेत्रोंके द्वारा), और उन्होंने जाकर कानोंसे कह दिया। दिन-रात आकाशमें अवलम्बित रहनेवाले सूर्य और चन्द्रमा दोनों उसके गण्डतलमें प्रतिबिम्बित है, और वे धवल आँखोंवाली तथा लक्षणोंसे युक्त कोखवाली प्रथम जिनेन्द्रकी माताके कुण्डलोंकी शोभाको धारण करते हैं, उसके भालतलपर घुँघराले बाल निरन्तर ऐसे जान पड़ते है, मानो मुखरूपी कमलपर भ्रमर मँड़रा रहे हैं। और भी उनका विपरीत भार ऐसा ज्ञात होता है, मानो मुखरूपी चन्द्रमाके डरसे तमका प्रवाह उस तरुणीकी पीठमें प्रविष्ट होता हुआ दिखाई देता है, और जो कुसुमरूपी नक्षत्रोंसे मिला हुआ शोभित होता है।

घत्ता—प्रणाम करती हुई प्रतिबिम्बके बहाने अपनेको हीन समझती हुई देवस्त्रियाँ, उस सुन्दरीके सौन्दर्यकी आकांक्षासे पैरोंके नखरूपी दर्पणमें लीन हो गयी ॥१६॥

१७

भारतवर्षके कल्पवृक्षोंसे आच्छादित दसों दिशाओंवाले मध्यदेशमें, जिसके हाथ पुष्ट और स्थूल स्तनोंपर हैं, ऐसे अन्तिम कुलकर नाभिराजा, उस मरुदेवीके साथ इस प्रकार रहते थे, मानो उत्पन्न शान्तिके साथ जीवलोक, मानो पूर्ण चन्द्रमाकी कान्तिके साथ शरदागम; मानो गुणी जनोंकी प्रशंसाके साथ सज्जन, मानो अहिंसाके साथ धर्म आलिंगित हो। जब वह अन्तिम कुलकर उसके साथ रह रहे थे तब इन्द्र अपने मनमें विचार करता है कि जगमे श्रेष्ठ देवों और मनुष्योंके द्वारा वन्दनीय, महान् संसाररूपी समुद्रसे तारनेवाले, कामरूपी जड़को काटनेके लिए कुठार, आदरणीय आदि जिन इन दोनोंसे उत्पन्न होंगे। यह सोचकर उसने निश्चय कर लिया और कुबेरके लिए आदेश दिया—"हे कुबेर, तुम शीघ्र चार द्वारोंवाला सुन्दर अत्यन्त भला नगरवर बनाओ।" तब उस आदेशको यक्षने स्वीकार कर लिया, और शीघ्र ही उसने साकेत नगरकी रचना कर डाली।

घत्ता—जहाँ पवनरूपी आचार्यके कारण सुन्दर पत्तोंवाले (सुपात्रोंवाले) नन्दन वन, पुष्पोंके मुखोंसे मुक्त परागसे मतवाले होकर नृत्य कर रहे है ॥१७॥

१८

सरोवरमे जहाँ लक्ष्मीके चरण-स्पर्शसे कमल सन्तोषके साथ विकसित होता है, दूसरोंके द्वारा भुक्त और अन्धकारके दोषसे मुक्त अपने कोश (धन, जो तम अर्थात् क्रोधसे मुक्त है, अथवा कोश परागका घर) से कौन आनन्दित नहीं होता। उस वैसे कमलको बालगज क्यों नष्ट करता है? मानो इसी कारण मधुकरकुल क्रोधसे आवाज करता है। वह गज क्या डरकर उसे (भ्रमरकुलको) दान (मदजल) देता है, दूसरा भी महान् व्यक्ति विनीत होता है!

५ वडपारोहइ हिंदोलंतिहिं जोइउ जक्खिहिं दरपहसंतिहिं ।
जहिं कई अइपहसणरसधारउ सुइ णियदिट्ठि चिवइ सवियारउ ।
रत्तउ सारसियहि जहिं सारसु को वि परिट्ठिउ अहिणवु सारसु ।
सहइ तमालंधारयसारिउ जहिं कलु कोइलु लवइ णिरारिउ ।
पवरंबयकलियहि ढोइयकरु महिलहिं को ण होइ चाडुययरु ।
१० जहिं भाविणि ण करइ परपइरइ बीउ धरित्तिहि को उ ण पइरइ ।
अट्ठारहवरसासविहत्तइं जहिं सयमेव सुपकइं छेत्तइं ।

घत्ता—जहिं धण्णइं कणभरपणमियइं परिभसंति सच्छंद पसु ।
वणसेरिहसिंगपहारचुउ महिसिहिं पिज्जइ उच्छुरसु ॥१८॥

१९

छुडु छुडु भोयभूमि जहिं विती रिद्धिसमिद्ध विसुद्ध धरित्ती ।
चिंतिउ चिंतिउ देंति ण थक्कइ पुव्वब्भासु ण मेल्लहुं सक्कइ ।
जहिं थलि थलकमलोवरि सुप्पइ पइ पइ पउमहु पंके लिप्पइ ।
दक्खारसु णरेहिं चक्खिज्जइ फलु अउव्वु काइं मि भक्खिज्जइ ।
५ कुवलयधरणिउ णं णिवईहउ जहिं परिहाउ वहंति पईहउ ।
णं भविस्सजिणजम्मोयरियउ ण्हवणारंभहु णाणासरियउ ।
बहुमाणिक्कमऊहपहावहिं णं गयणंगणु सुरवइचावहिं ।
असियसियारुणवण्णवियारहिं जं सोहइ सत्तहिं पायारहिं ।

घत्ता—जं दियहि दिवायरकंत रविकिरणहिं सिहिभावहु गयउ ॥
१० तं णीवइ णिसि ससियरपुसियससिमणिजलधाराहयउ ॥१९॥

२०

मरगयकयघरि पक्खविहूसिउ जहिं चंचुइ लक्खिज्जइ पूसउ ।
इंदणीलघरि णहविप्फुरणें विमलें मोत्तियदामाहरणें ।
जाणिज्जइ सामा पहसंती णाहें णवकुंदुज्जलदंती ।
कणयरइयमंदिरि वियरंती अवरेंविसंझाराउ वहंती ।
५ करकंकणु करफरिसें जाणइ णेउरु सद्देण जि अहिणाणइ ।

४ BP कइवइ पहसण° । ५ M को ण । ६ MBP अहिणव° । ७. MBP कलु । ८. P णउ ।
९ MBP खेत्तइं । १०. MBP पणवियइं ।

१९. १. BP °समिद्धिविसुद्ध । २. P मेल्लहुं । ३ MB पउमें पंकहु घिप्पइ, P पउमहु पंकेहिं घिप्पइ । ४. MB दक्खारसु णरेहि जहिं पिज्जइ । ५. M adds after this line : मुहमहुरत्ति मिरिय भक्खिज्जइ, and gloss मुखस्य मधुरत्वे सति; P reads in its place मुहमहलंति मिरिय भक्खिज्जइ, and after it reads किंणरमिहुणिहिं लयहरि गिज्जइ, फलु अउव्वु काइं मि भक्खिज्जइ । ६. MB add after this line किंणरमिहुणिहि लयहरि गिज्जइ, जिणु गाइज्जइ जिणु पुज्जइ । ७ M जहिं परिहा वहंति पयईहउ । ८ MBP °पहावें । ९ MBP °चावें ।

२०. १ B पंग° । २ MBP अवरु वि । ३ MBP करफंसें ।

वटवृक्षके तनोंपर झूलती हुई और थोड़ा-थोड़ा मुसकाती हुई यक्षणियोंके द्वारा जहाँ अत्यन्त हास्य रसको धारण करनेवाला वानर देखा जाता है, और जो विकारपूर्वक अपनी दृष्टि शुक-पर डालता है, जहाँ सारसीमे अनुरक्त कोई सारस, सरस आवाज करता हुआ स्थित है। जहाँ तमाल वृक्षोंके अन्धकारकी लक्ष्मीका शत्रु चन्द्रमा शोभित है, जहाँ कोकिल अत्यन्त सुन्दर आवाज करता है, और जो प्रवर आम्र कलिकामें अपनी चोंच (कर) ले जाता है, महिलाके प्रति कौन मनुष्य चाटुकार नही होता। जहाँ स्त्री दूसरेके पतिसे रमण नहीं करती, जहाँ धरतीमे कोई बीज नही डालता। जहाँ अठारह प्रकारके धान्योंसे विभाजित खेत अपने-आप पक जाते है।

घत्ता—जहाँ धान्य कणोंके भारसे झुके हुए है, पशु स्वच्छन्द विचरण करते हैं, और जंगली भैंसाओंके सीगोंके प्रहारसे च्युत ईख-रस भैंसोंके द्वारा पिया जाता है ॥१८॥

१९

जहाँ हाल हीमें भोगभूमि समाप्त हुई है और धरती ऋद्धियोंसे समृद्ध और विशुद्ध है। चिन्तित (वस्तुओं) को देते हुए भी जो नही थकती, मानो जो अपने पूर्व अभ्यासको छोड़नेमें असमर्थ है। जहाँ जमीनपर, गुलाबोंके ऊपर सोया जाता है और पग-पगपर कमलकी पराग-पंकसे लिप्त होना पड़ता है। जहाँ मनुष्योंके द्वारा द्राक्षा रसका पान किया जाता है और कोई अपूर्व फलका भक्षण किया जाता है। जहाँ पृथिवीमण्डलकी भूमियाँ मानो राजाओंकी आकांक्षाओंके समान हैं, जहाँ लम्बी-लम्बी परिखाएँ बहती हैं, जो मानो भावी जिनेन्द्रके जन्मके अवसरपर स्नानको प्रारम्भ करनेके लिए अवतरित हुईं नाना नदियाँ हों। प्रचुर माणिक्योंकी किरणोंके प्रभावोंसे वह नगर ऐसा प्रतीत होता है मानो नाना इन्द्रधनुषों और लाल रंगोंवाले सात परकोटोंसे शोभित है।

घत्ता—जो नगर दिनमे सूर्यकान्त मणिकी किरणोंसे अग्निभावको प्राप्त होता है (जल उठता है) वही रातमे चन्द्रकान्त मणियोंकी धाराओसे आहत होकर शान्त हो जाता है ॥१९॥

२०

जहाँ पन्नोंके बने घरोंमें, पंखोंसे विभूषित, शुक अपनी चोंचसे पहचाना जाता है, इन्द्रनील मणिके घरोंमें, नवकुन्द पुष्पके समान उज्ज्वल दाँतोंवाली हँसती हुई श्यामा, आकाशको आलोकित करते हुए स्वच्छ मुक्तामालाके आभरणसे (प्रियके द्वारा) पहचानी जाती है। स्वर्णनिर्मित मन्दिरमें विचरण करती हुई, सन्ध्यारागको धारण करनेवाली वह हाथके स्पर्शसे कंगनको जानती

दहिकुट्टिमयलि दइएं आणिउ कलरावेण हंसु परियाणिउ ।
तहिं जि पडीवउं जहिं सियणिवसणु ठविउ ण पेच्छइ अइभोलउ जणु ।
फलिहसिलालयमज्झि णिविट्ठउ पिहियकवाडु वि वहुवरु दिट्ठउ ।
पोमरायमंडवि आसीणी जेत्थु का वि हरिणच्छि पहाणी ।
१० घुसिणपिंडु ण णियंति विसूरइ जहिं सोहाइ ण सग्गु वि पूरइ ।
चंदणचिक्खिल्लें पहु चिहुइ जहिं कप्पूरधूलि णहि उड्डइ ।

घत्ता—ण कलागमु अक्खरु णेय गुरु णउ दासत्तणु संविहिउ ॥
वइसवणें एक्केकु जि मिहुणु जहिं आणिवि माणिवि णिहिउ ॥२०॥

२१

मंदिरि मंदिरि सहसा भरियइं तोरणाइं रयणहिं विप्फुरियइं ।
गिज्जंतें मंगलसंघाएं देवदिण्णपडुपडहणिणाएं ।
घरसंचारियकलस वि दिट्ठा सरयब्भेसु वं चंद पइट्ठा ।
णिम्मुप्पाइयसुरयणहरिसहिं संमज्जियदप्पणयलसरिसहिं ।
५ विहुतारावलिदिणयरपंगणु दीसइ भूमिहि सयलु णहंगणु ।
गुरुअघासणभयवसणडियउ णं सोहइ पायालइ पडियउ ।
इहु सो दिट्ठउ इट्ठु महारउ इय णं भणिवि णयणपियारउ ।
भवणसिहरचडिएं खे लंबिउ जहिं णवजलहरु मोरें चुंबिउ ।
णउ चोरउलु विरोहि ण राउलु सूलभिण्णु णउ दीसइ देउलु ।
१० बंभणु वणिवरु ण हलु ण हालिउ णउ पासंडिउ को वि कवालिउ ।
धम्मु ण धणुहुं ण जिणवइभासिउ पसुवह वाहिं ण वेएं घोसिउ ।
वेस ण कत्थइ वइसियजुत्ती अज्जव सव्व णारि कुलउत्ती ।
जहिं ण महव्वय पंचाणुव्वय कुच्छियकारिणि णउ कारुय पय ।

घत्ता—सामण्णइं सयलइं माणुसइं जहिं एक्कु वि सुविसेसिउ ॥
१५ सियपुप्फयंतु सो णाहिणिउ जो भरहेण विहूसिउ ॥२१॥

इय महापुराणे तिसट्ठिमहापुरिसगुणालंकारे महाकइपुप्फयंतविरइए महाभव्वभरहाणुमण्णिए महाकव्वे उज्झाणयरीवण्णणं णाम दुइज्जो परिच्छेओ समत्तो ॥ २ ॥

॥ संधि ॥ २ ॥

---

४ M फलिहसिलायलमज्झि, BP °सिलायलि मज्झि । ५. MBP पउ but gloss in P पन्थाः ।
२१ १ MBP °संचारिम° । २ MBK य । ३. विरोहु । ४ P कपालिउ । ५ MBP जिणवर° । ६ M पसुवह वहणु ण; B पसुवहु वहणु ण, P पसु अहवाहणु । ७ MBP णारि सव्व । ८. K णाहिणिवु ।

है, और शब्द करनेसे नूपुरको पहचानती है। प्रियके द्वारा धवलशिलापर लाये गये हंसको वह कलरवसे जान पाती है, धवल वस्त्र जहाँ गिर जाता है वह वहाँ ही पड़ा रहता है, आदमी वहाँ इतना भोला है कि रखे हुए वस्त्रको नहीं पहचान पाता। स्फटिक मणिके घरमें स्थित वरवधूको किवाड़ लगे रहनेपर भी देख लिया जाता है। पद्मराग मणियोंके मण्डपमें बैठी हुई एक रमणी केशरपिण्ड नहीं देख पड़नेके कारण दुःखी हो उठती है। सौन्दर्यमें स्वर्ग भी, जिसकी पूर्ति नहीं कर सकता। जहाँ रास्ते चन्दनकी कीचड़से आर्द्र है, और कपूरकी धूल आकाशमें नहीं उड़ती।

घत्ता—जहाँपर न कलागम है और न अक्षर, न गुरु है और न दासता बनायी गयी है। कुबेरके द्वारा एक-एक जोड़ा (युगल) लाकर और मानकर रख दिया गया है ॥२०॥

२१

घर-घरमें शीघ्र ही रत्नोंसे विस्फुरित तोरणोंको, गाये गये मंगलगीत समूहों और देवोंके द्वारा आहत पटहनिनादोंके साथ बाँध दिया गया। घरमें संचरित होनेवाले कलश भी दिखाई दिए जो शरद्के मेघोंके समान ऐसे लगते थे कि चन्द्रमा प्रविष्ट हुए हों। जिसमें नित्य देवताओंके लिए हर्ष उत्पन्न किया जाता है, और जो पोंछे गये दर्पणतलकी तरह है ऐसी भूमिमें प्रतिबिम्बित आकाशरूपी आंगन (जो चन्द्रमा, तारावलि और दिनकरका आंगन है) ऐसा शोभित होता है, मानो अत्यन्त लम्बे समय तक स्थित रहनेके डरसे प्रवंचित होकर जैसे पाताललोकमें पड़ा हुआ है। जहाँ प्रासादोंके शिखरोंपर चढ़े हुए मोरने यह मानकर कि यह हमारा नेत्रप्यारा इष्ट दिखाई दिया है, नवजलधर (नवमेघ) को चूम लिया। वहाँ न चोरकुल था, न विरोधी राजकुल था। और न त्रिशूलभिन्न देवकुल दिखाई देता था। जहाँ न ब्राह्मण था और न वणिकवर। न हल था और न किसान। न सम्प्रदाय था और न कापालिक। जहाँ क्षत्रिय धर्म नहीं था और न जिनेश्वरके द्वारा भाषित धर्म, न व्याधाके द्वारा किया गया और वेदोंके द्वारा घोषित पशुवध था। न वेश्या थी और न वेश्याकी युक्ति थी। समस्त नारियाँ और कुलपुत्रियाँ सीधी थीं। जहाँ न महाव्रत थे और न अणुव्रत। और न बुरा करनेवाली शिल्पजीवी प्रजा थी।

घत्ता—समस्त मनुष्य सामान्य थे, वहाँ एक भी आदमी विशेष नहीं था। श्वेतपुष्पके समान दाँतोंवाला वह नाभिराजा था, जो भरत (क्षेत्र, भरतभव्य मन्त्री) से विभूषित था ॥२१॥

इस प्रकार महाकवि पुष्पदन्त द्वारा विरचित और महाभव्य भरत द्वारा अनुमत (त्रिषष्टि महापुरुष गुणालंकारवाले महापुराणके अन्तर्गत) महाकाव्यमें अयोध्यानगरी-वर्णन नामका दूसरा परिच्छेद समाप्त हुआ ॥२॥

संधि ३

तहिं जाम मणोज्जु[1] भुंजइ रज्जु णिच्चलु णाहिणरिंदु ॥
मंडियसविमाणु कालपमाणु चिंतइ ताम सुरिंदु ॥ ध्रुवकं ॥

१

एहहि[2] महिणाहें माणियहे उयरइ मरुएविहि राणियहे ।
छम्मासहिं[3] होसइ परमजिणु णासइ ण कम्मु मुत्तीइ विणु ।
५ सम्मत्तसमत्तणु संभरमि गब्भासयसोहणु लहु करमि ।
लइ एउ जि कज्जु महुं तणउं दुक्खालमि पेसणु घणघणउं ।
इयँ[4] चिंतिवि पुणु हियवइ धरिय छणससिमुहि पीणपयोहरिय ।
सिरि हिरि दिहि देवी ललियकर वर कंति किंत्ति लच्छी य वर ।
छ वि एयउ चारु चवंतियउ पणएण णएण णवंतियउ[5] ।
१० इंदीवरदीहरणेत्तियउ सुरणाहणिहेलणु पत्तियउ ।
वेल्लहललयाणिहगत्तियउ[6] देविंदे झत्ति पउत्तियउ ।
घत्ता—जाइवि णरलोउ भुंजियभोउ णाहिणरेसहु[7] गेहु ॥
जिणगब्भणिवासु दुक्कियणासु सोहहु देविहि देहु ॥१॥

२

ता संचलियउ सुररमणियउ मेहलरंखोलिरे[1]रमणियउ ।
कयसग्गालयणिग्गमणियउ मयमंथरसिंधुरगमणियउ ।
तेल्लोक्कमारमणदमणियउ विरयाहुं[2] मि रयमणदमणियउ ।
कुंडलचेंचइयकवोलियउ[3] णं मयणें बाणकओलियउ[4] ।
५ जंतिउ जोयंति ण के सियउ अलिसंणिहभंगुरकेसियउ ।

GK give at the commencement of this samdhi आदित्योदयपर्वतादुत्तरात् for which see footnote on Second Samdhi; MBP give the following stanza :—

वलिजीमूतदधीचिषु सर्वेषु स्वर्गितामुपगतेषु ।
संप्रत्यनन्यगतिकस्त्यागगुणो भरतमावसति ॥

१. १. MBP भोज्जु । २. MP एयहि, B एवहि । ३. MBP छहि मासहि । ४ MBP इय चिंतेविणु हियवइ । ५ P णमंतियउ । ६ M °लयाणियवत्तियउ, BP °लयाणिय° । ७. MBP °णरेसरगेहु ।

२. १. T reads °रंखोलन° but adds : रंखोलिरेति पाठे मेखलया रंखोलनशीलया विलसनशीलया रमणीया. । २. MBP विरयाहिं but gloss विरताना यतीनाम् । ३. B कोडलचेंचइयं°; M °चिंचइयं° । ४ B वाणकम्मु लियउ, P वाणकवोलियउ and gloss वाणकृतरेखाः ।

सन्धि ३

जब उस अयोध्यामें नाभिराजा निश्चल और सुन्दर राज्यका भोग कर रहे थे, तब अपने विमानसे मण्डित इन्द्र कालके प्रमाणका (तीसरे कालके अन्तका) चिन्तन करता है।

१

"इस राजाकी मानिनी रानी मरुदेवीके उदरसे छह माहमे परमजिन जन्म लेंगे। भोगके विना कर्मका नाश नहीं होता। मै सम्यक्त्वकी समग्रता दिखाता हूँ, शीघ्र ही गर्भाशयका शोधन कराता हूँ। लो मेरा यही काम है कि मैं अतिशय सेवाका प्रदर्शन करूँ।" यह विचारकर उसने शीघ्र अपने मनमे पीन पयोधरोंवाली छह चन्द्रमुखियोंका ध्यान किया। सुन्दर हाथोंवाली, श्रेष्ठ श्री, ह्री, धृति, उत्तम कान्ति, कीर्ति और लक्ष्मी देवियाँ सुन्दर बोलती हुई प्रणय और नयसे नमन करती हुईं, नीलकमलके समान दीर्घ नेत्रोंवाली वे इन्द्रके घर पहुँची। बेलफलकी लताके समान शरीरवाली उनसे देवेन्द्रने शीघ्र कहा—

घत्ता—मनुष्यलोकमे जाकर नाभिराजाके, भोगोंका भोग करनेवाले घरमें मरुदेवीकी उस देहका शोधन करो जिसमें पापोंके नाश करनेवाले जिनगर्भका निवास होगा ॥१॥

२

तब करधनियोंसे रमणीय देवस्त्रियाँ चल पड़ी। स्वर्गालयसे निर्गमन करनेवाली, मदसे मन्थर महागजके समान चलनेवाली, त्रैलोक्यके लक्ष्मीपतियोके मनका दमन करनेवाली, तथा विरक्तोंमे कामदेवकी हलचल उत्पन्न करती हुई, कुण्डलोसे शोभित कपोलोंवाली वे ऐसी लगती थी मानो कामदेवने अपनी तीरपंक्ति सँभाल ली हो। अपने शरीरके तेजसे आकाशको आलोकित

करती हुई, विचित्र वस्त्रोंसे आन्दोलित होती हुई, नय और सप्तभंगीकी विधिसे बोलती हुई, मिथ्यात्व और मदके कारणोंका निरसन करती हुई, इन्द्रादि देवोंमें अनुरक्त रहनेवाली वे मानो दानवारि (इन्द्रादि देवों)में लीन रहनेवाली भ्रमरियाँ थीं जो दानवारि (मदजल)में रत रहती है।

घत्ता—ये और दूसरी कन्याएँ मनुष्यनियोंका रूप धारण कर अत्यन्त भक्तिभावके साथ श्री मरुदेवीके पास आयी ॥२॥

३

सुरवर लोकसे च्युत कोमल मृणालकी तरह कोमल भुजावाली परमेश्वरी आर्यसुताको देवकुमारियोंने इस प्रकार देखा मानो (उसकी रचनामें) विधाताका विज्ञान समाप्त हो गया हो। सर्वांग और अवयवोंसे सुलक्षण, नाग, सुर और नरोंके मनको उत्तेजित करनेवाली, चारणोंके द्वारा वन्दनीय चरण युगलोंवाली उसकी अत्यन्त सुन्दर स्तोत्रोंसे देवियोंने स्तुति की—"हे विश्वगुरुको जन्म देनेवाली माँ तुम्हारी जय हो, स्तनतलपर हिलते हार मणिवाली तुम्हारी जय हो, कर्मरूपी काननके लिए आग लगानेवाली लकड़ीके समान आपकी जय हो, धर्मरूपी वृक्षके जन्मको धारण करनेवाली, आपकी जय हो, तुम्हें देख लेनेपर पापमल नष्ट हो जाता है और सोचा हुआ फल प्राप्त हो जाता है। तुमने महिला-जन्मका फल प्राप्त कर लिया। तुम्हारी कोखसे जिनश्रेष्ठका जन्म होगा।"

घत्ता—अत्यन्त सरस नृत्य करता हुआ, हाथोंकी अंजली बनाकर पैरोंमें पड़ता हुआ, अमर-विलासिनी-समूह वहाँ पहुँचता है और सेवा करना चाहता है ॥३॥

४

कोई देवीके ललाटपर तिलक करती है, कोई दर्पण आगे रखती है, कोई श्रेष्ठ रत्नाभरण अर्पित करती है, कोई केशरसे चरणका लेप करती है, कोई मधुर स्वरमे गाती-नाचती है। कोई दूसरा विनोद प्रारम्भ करती है, पैनी छुरीवाली कोई परिरक्षा करती है। कोई दण्ड लेकर द्वारपर स्थित है। कोई-कोई आख्यान कहती है, कोई दिये गये क्रीड़ाशुकको धारण करती है। कोई बार-बार विनयसे नमन करती है। कोई गंगाके जलसे स्नान कराती है। कोई माला, उजला वस्त्र और सुगन्धित लेप देती है। भाग्यविधाता, सुखनिधि और अभीप्सित जिनेन्द्रदेवको प्रकट होनेके जब छह माह रह गये तो राजाके आँगनमे निधियोमे धन रखनेवाले कुबेररूपी मेघने रत्नोंकी बरसा की।

घत्ता—सरोवरके कमलपर हंसिनीके समान, सुन्दर और सुखद, तथा ठीक है अग्रभाग जिसका, ऐसे शयनतलपर वह मेरुदेवी सोती है। जिसके उरतलपर हारावली झूल रही है ऐसी वह स्वयं स्वप्नावली देखती है ॥४॥

५

पत्तिया सणाहणेहरत्तिया।
सुत्तिया णिमीलियच्छिवत्तिया।
कामए णिसाविरामजामए।
इच्छए सुहावहं णियच्छए।
कंतयं चउप्पयारदंतयं। ५
णिब्भरं झरंतदाणणिज्झरं।
संसयं सरासणाहवंसयं।
तुंगयं मिलंतमत्तभिंगयं।
वारणं गिरिंदभित्तिदारणं।
एंतयं बलेण ढेक्करंतयं। १०
गोवइं अलद्ध[1]जुज्झगोवइं।
दुद्धरं फुरंतणक्खपंजरं।
भासुरं घुलंतकंधकेसरं।
को[2]वणं जलंतपिंगलो[3]वणं।
भीसणं [4]मुँहा विमुक्कणीसणं। १५
सीहयं विलंबमाणजीहयं।
अंचियं दिसागएहिं [5]सिंचियं।
लच्छियं विसुद्धपंकयच्छियं।
रुंदयं पहुल्लदामदं[6]दयं।
संमुहं समुग्गयं सुहारुहं। २०
भाहरं सुदूसहं तमीहरं।
हंसयं खमाणसेक्कहंसयं।
रत्तयं सरंतरे तरंतयं।
रम्मयं चलं झसाण जुम्मयं।
उब्भडं [7]धियंभकुंभसंघडं। २५
मायरं प[8]हुल्लपंकयायरं।
सायरं र[9]संतवारिभीयरं।
आसणं [10]मयारिरूवभूसणं[11]।
सुंदरं पुरंदरस्स मंदिरं।
सोहणं महाहिणो णिहेलणं। ३०
उंचयं[12] अणेयरण्णसंचयं[13]।
दित्तयं हुयासणं पलित्तयं।

---

५ १. PGT record a *p* अलट्ठ and add : अलट्ठ इति पाठे अलट्ठो अगूरो युद्धे गोपतिर्यस्य। २. M गोभग। ३. MB °लोअण। ४ MBP मुहोविमुक्क°। ५ M °सिचयं। ६. MPT °दुंदयं। ७ BT रियन and gloss in T वियंभोऽमृतजलम्। ८. P पफुल्ल°। ९ MBP सरंत°। १०. M मयारि°। ११. MBP °भीगनं। १२. MBP उच्चयं। १३ B °रयण°।

५

अपने स्वामीके स्नेहमें पगी हुई, आँखोंकी पलकें बन्द कर सोती हुई पत्नी, कामद रात्रिके अन्तिम प्रहरमे शुभ करनेवाले (स्वप्नों) को अपनी इच्छासे देखती है—सुन्दर चार प्रकारके दांतोंवाला, पूर्ण, मदजल धाराको झरता हुआ प्रशंसनीय धानुष्क वंशीय, ऊँचा, जिसपर मतवाले भ्रमर मड़रा रहे है, ऐसा पहाड़ोंकी दीवालोंको विदीर्ण करनेवाला गज। आता हुआ जोर-जोरसे दहाड़ता हुआ, जिसे लड़नेके लिए प्रतिद्वन्द्वी बैल नही मिला है, ऐसा बैल; दुर्धर नखसमूहसे विस्फुरित, भास्वर, कन्धेकी अयालको घुमाता हुआ, क्रुद्ध चमकती हुई पीली आँखोंवाला, भीषण मुखसे शब्द करता हुआ, जीभको निकालता हुआ सिह; पूजित दिग्गजोंके द्वारा अभिषिक्त और पूजित, खिले हुए कमलोंके समान आंखोंवाली लक्ष्मी, विशाल दो पुष्पमालाएँ, सामने उगता हुआ शुभ किरणोंवाला (चन्द्रमा), प्रभाका घर, अत्यन्त दुःसह रात्रिका हरण करनेवाला हंसक (सूर्य), (जो आकाशरूपी सरोवरका एकमात्र हंस था), सरोवरमें तैरता हुआ अनुरक्त और सुन्दर, मछलियोंका चंचल जोड़ा, प्रकट जलसे भरे हुए कलशोंका जोड़ा। खिले हुए कमलोंका आकर और शोभा बढ़ानेवाला सरोवर; गरजते हुए जलसे भयंकर समुद्र; सिह है आभूषण जिसका ऐसा आसन अर्थात् सिंहासन; सुन्दर इन्द्रका विमान; सुहावना महानागका घर; ऊँची रत्नराशि; चमकती हुई और जलती हुई आग।

घत्ता—इय जोइवि सुद्ध पुणु पडिबुद्ध सिविणइ जं जिह दिट्ठु ॥
तइयइ पच्चूहे अरुणमऊहे रायहु तं तिह[14] सिट्ठु ॥५॥

६

ता णरवइ णारीसारियहे अक्खइ मरुएविभडारियहे ।
दिट्ठेण गइंदें गुरुहुं गुरु होसइ णंदणु पयपणयसुरु ।
गोणाहें गोमंडलु धरइ सीहेण सविक्कमु वित्थरइ ।
सिरिदंसणि लहइ तिलोयसिरि दामेण वि जाणहि पुरिसहरि ।
५ पावइ पविहररइयचणउं जं दिट्ठउ पइं सयलंछणउ ।
तं होसइ सुउ जणमणहरणु जं पुणु वि पलोइउ खरकिरणु ।
तं मोहंधारविणासयरु भव्वयणणलिणवणदिवसयरु ।
झसजुयलें होही सोक्खणिहि कुंभेहिं वि सुरअहिसेयविहि ।
कमलायरसायरेहि विहिं मि गुणवंतु गहिरु भुवणहं तिहिं मि ।
१० सिंहासणेण पंचमिय गइ पावेसइ दंसणसुद्धमइ ।
दिट्ठेहिं तियसणायहं घरेहिं सेवेवउ देविहिं विसहरेहिं ।
रयणोहें जिणसंपत्तिफलु णिड्डहइ हुयासें कम्ममलु ।
घत्ता—सिविणयफलु अज्जु णिरु णिरवज्जु कहमि ण रक्खमि गुज्झु ॥
जगलग्गणखंभु धम्मारंभु होसइ णंदणु तुज्झु ॥६॥

७

ता तम्मि पत्तम्मि तइयम्मि कालम्मि णक्खत्तसोहंतगयणंतरालम्मि ।
कप्पद्दुमच्छेयपयणियवियारम्मि ससिबिंबरविबिंबधत्थंधयारम्मि ।
अवसप्पिणीसप्पिणीसंपवेसम्मि णरभोयपब्भारसुहभरियगासम्मि ।
मायामहामोहबंधणइं लुंचेवि साराइं पउराइं पुण्णाइं संचेवि ।
५ सोलह वि तवभावणाओ पहावेवि जगणमियतित्थयरणामं समज्जेवि ।
इंदियइं णिंदियइं णिग्घिणइं भंजेवि तेत्तीसजलणिहिसमाणाउ भुंजेवि ।
जम्मंतरानद्धसुक्कियपहावेण हिमहारणीहारसियवसहरूवेण ।
आसाढमासम्मि किण्हम्मि बीयम्मि संपत्तए उत्तरासाढरिक्खम्मि ।
सव्वत्थसिद्धीविमाणाउ ओयरइ परमेसरो जणणिगब्भम्मि संचरइ ।
१० सरयब्भमज्झम्मि रुइरुंदइंदु व्व सयवत्तिणीपत्तए तोयबिंदु व्व ।
आया सुरा गब्भवासं णमंसेवि सग्गं गया रायदेविं पसंसेवि ।
तव्वासराए व देवाहिवाणाइ रक्खिवदणाइंदपालिज्जमाणाइ ।
जक्खेण माणिक्कवुट्ठी कया ताम मासेहिं तिहिं हीणु संवच्छरो जाम ।
घत्ता—उयरत्थु अबाहु वड्ढइ णाहु तणुकिरणइं पसरंति ॥
गब्भेविहि देहे णं णवमेहे णवरवियर णिग्गंति ॥७॥
१५

---

१४ B तिं ।

६ १. M पलोइउ, P पलोयउ । २. MB सेवेवउ ।

७ १. B कुमार्ग । २. M °रुदंदु व; T °इंदु व । ३. MBP रायदेवी । ४. MBP जलिय°, but T भरिय° गर्भेऽन्नाः ।

घत्ता—वह मुग्धा सपनोंको देखकर जाग उठी, और स्वप्नोंमें उसने जिस प्रकार जो देखा था, लाल-लाल किरणोंवाला सवेरा होनेपर, उसने उसी प्रकार राजासे कहा ॥५॥

६

तब राजा नारियोमे श्रेष्ठ आदरणीय मरुदेवीसे कहते हैं, "गजेन्द्र देखनेसे तुम्हारा पुत्र, देवोंसे प्रणतपद और गुरुओंका गुरु होगा। गोनाथ (बैल) देखनेसे पृथ्वी धारण करेगा। सिंह देखनेसे वह पराक्रमका विस्तार करेगा, लक्ष्मी देखनेसे त्रिभुवनको लक्ष्मी धारण करेगा, पुष्पमाला देखनेसे उसे पुरुष श्रेष्ठ समझो, और जो तुमने चन्द्रमा देखा है, उससे वह इन्द्रके द्वारा की गयी अर्चा प्राप्त करेगा, जो तुमने सूर्य देखा है, उससे तुम्हारा पुत्र जनमनोंके लिए सुन्दर, मोहान्धकार-का विनाश करनेवाला और भव्यजनरूपी कमलवनके लिए दिवाकर होगा; मीनयुग्म देखनेसे सुखनिधि होगा, और घड़ोको देखनेसे देवता उसका अभिषेक करेंगे। दोनो समुद्र और सरोवर देखनेसे वह त्रिभुवनमे गुणवान् और गम्भीर होगा। सिंहासन देखनेसे दर्शनसे विशुद्धमति वह पांचवी गति (मोक्ष) प्राप्त करेगा। देवों और नागोके घरोको देखनेसे देव और नाग उसकी सेवा करेंगे। रत्नोंका समूह देखनेसे वह जिन-सम्पत्तिका फल प्राप्त करेगा, और (तपकी) आगमें कर्ममलको जलायेगा।

घत्ता—आज मैं निर्दोष कर्मफल कहता हूँ, कुछ भी गुह्य नही रखता। तुम्हारा पुत्र जग-का आधारस्तम्भ और धर्मका आरम्भ करनेवाला होगा ॥६॥

७

तब वहीं, उस कालके आनेपर कि जब आकाशका अन्तराल नक्षत्रोसे शोभित था, कल्प-वृक्षोके नष्ट हो जानेसे जनतामें असन्तोष बढ़ रहा था, सूर्य और चन्द्रके बिम्ब अन्धकार नष्ट करने लगे थे, अवसर्पिणीकालरूपी नागिन प्रवेश कर चुकी थी, मनुष्यके भोगो और प्रचुर सुखोको काल अपने ग्रासमें भर चुका था, तब माया-महामोहके बन्धन तोड़ने, श्रेष्ठ प्रचुर पुण्योंका संचय करने, सोलह तपभावनाओंकी प्रभावना, विश्वके द्वारा नमित तीर्थंकर नामके समार्जन, निर्घृण और निन्दनीय इन्द्रियोंको नष्ट करने, तैंतीस सागर आयु भोगनेके लिए जन्मान्तरमे बाँधे गये पुण्यके प्रभावसे, हिम-हार और नीहारके समान सफेद बैलके रूपमे आसाढ़ माहके कृष्णपक्षकी द्वितीयाको उत्तराषाढ़ नक्षत्रमें, सर्वार्थसिद्धि विमानसे अवतरित होकर परमेश्वर जिनने माताके गर्भमे उसी प्रकार प्रवेश किया जिस प्रकार सुन्दर चन्द्रबिम्ब शरद् मेघोंके बीच तथा जलबिन्दु कमलिनी पत्रके बीच प्रवेश करता है। देवता आये और गर्भवासको नमस्कार तथा राजदेवोकी प्रशंसा करके चले गये। उस दिन राक्षसेन्द्रो और नागेन्द्रों द्वारा मान्य इन्द्रराजकी आज्ञासे कुबेरने रत्नोंकी वर्षा की। तबतक कि जब वर्षमे ३ माह कम थे, (अर्थात् ९ माह)।

घत्ता—उदरके भीतर स्वामी बिना किसी बाधाके बढ़ने लगे। उनके शरीरकी किरणें मरुदेवीकी देहपर इस प्रकार प्रसरित होने लगी, मानो सूर्यकी किरणें नवमेघपर प्रसरित हो रही हो ॥७॥

८

मासम्मि चइत्ते[1] पक्खे कसणे अहिमयरवारि फुंडणवमिदिणे[2] ।
उत्तरआसाढारिक्खवरे जोयम्मि वंम्हि[3] वहुसोक्खयरे ।
जिणु तियसालावणीहिँ झुणिउ मरुदेविइ[4] णंदणु संजणिउ ।
५ उत्तत्तदित्ततवणीयछवि सुरवइदिसाइ णं वालरवि ।
णं विप्फुरंतु अरणीइ सिहि णं दक्खालिउ[5] धरणीइ णिहि ।
णं जीवसहाउ सिद्धसहए णं अत्थु महाकइकयकहए ।
णं अमयलवेहिँ जि णिम्मविउ णं गुणगणु पुंजेप्पिणु ठविउ ।
जगु णरयपडंतउ[6] णँवि[7] सहिउ णं धम्में पुरिसरूवु गहिउ ।
१० घत्ता—जणतमणिण्णासु लोयपयासु कित्तिवेल्लिवरकंदु ॥
मयमलपब्भट्ठु कुवलयइट्ठु उइउ जिणाहिवचंदु ॥८॥

९

णाणतिएण णिएण णिरुत्तें[1] लक्खणवंजणचच्चियगत्तें ।
उप्पण्णे णाहे हयदप्पो जाओ इंदस्सासणकंपो ।
कप्पेसुं ससहावे णाया घंटाटंकारा संजाया ।
उट्ठिय णिण्णासियदिण्णाया जोइसवासे सीहणिणाया ।
५ वेंतरदेवावासवएसुं[2] वज्जंते पडहा विवरेसुं[3] ।
संखरवो भावणभवणेसुं संपण्णो खोहो भुवणेसुं ।
णाउं णाणेणं णिप्पावं भूमीभाए हूयं देवं ।
वुड्ढो चित्ते धम्माणंदो चलिओ सक्को[4] सक्को चंदो ।
हत्थिंदो ऐरावयणामो[5] वेउव्वियसरीरपरिणामो ।
१० गलियकवोलमओलजलद्दो रणझणंतगेज्जावलिसद्दो ।
कच्छरिच्छमालाछुरियंगो कण्णचमरविणिवारियभिंगो ।
पत्तो मत्तो[6] मंदरमेत्तो लीलायंतो वहुविहदंतो ।
कंतिपसाहियणहमित्ताइं दंति दंति सरसयवत्ताइं ।
पत्ते पत्ते सुरतरुणीओ[7] णच्चंतीओ थोरथणीओ ।
१५ इय दट्ठूणं तमिहमलंघं चडिओ सोहम्मीसो सिग्घं ।
सव्वत्थ वि धयछत्तरवण्णं सव्वत्थ वि चामरसंछण्णं ।
सव्वत्थ वि गयणाणाजाणं सव्वत्थ वि धावंतविमाणं ।
सव्वत्थ वि पसरियउल्लोवं सव्वत्थ वि जयदुंदुहिरावं ।
सव्वत्थ वि सरगेयरसालं सव्वत्थ वि उव्वाइयमालं ।
२० तरुपल्लवियं पिव णहवलयं सोहइ सुरवरवायावलयं ।

८ १. B चइत्तहो, P चइति । २. MBP फुडु । ३. MBP वंभि । ४. M मरुदेविं; B मरुदेवे; P मरुदेवी° । ५. P दिक्खालउ and gloss दर्शित. । ६. MP णरइ पडंतउ । ७. MB णउ ।

९. १. MBP णिउत्तें । २ P °पएसु । ३. MBP विपरेसुं but gloss in P विपरेसुं विवरेषु गगनेषु T परेसुं उत्तमेषु । ४. MB सक्को सुक्को । ५. P अइरावय° । ६. MB पत्तो । ७. MBP सरवरतरुणीओ ।

८

चैत्र माहके कृष्णपक्षमें रविवारको स्पष्ट नवमीके दिन, उत्तराषाढ़ नक्षत्रमें बहुसुखद ब्रह्म-योगमें देवोंके आलापोंमें ध्वनित (प्रशंसित) पुत्रको मरुदेवीने जन्म दिया। तपाये हुए सोनेके समान वर्णवाले वह ऐसे लगते थे मानो पूर्वदिशामें बालरवि हो, मानो अरणियों (लकड़ी विशेष, जिसके घर्षणसे अग्नि पैदा होती है) से ज्वाला निकल रही हो, मानो धरतीने अपनी निधि दिखायी हो, मानो सिद्ध श्रेणीने जीवका स्वभाव दिखाया हो, मानो महाकवि द्वारा रचित कथाने अपना अर्थ दिखाया हो, मानो वह अमृत कणोंसे निर्मित हो, मानो गुणगणको इकट्ठा करके रख दिया गया हो, जब नरकमे गिरता हुआ विश्व नहीं सध सका, तो इसलिए मानो धर्मने पुरुषरूप ग्रहण कर लिया हो।

घत्ता—जनोंके तमका नाशक, लोकको प्रकाशित करनेवाला, कीर्तिरूपी बेलका अंकुर, मृगलांछनसे रहित कुमुदोंके लिए इष्ट जिनराजरूपी चन्द्र उदित हुआ है ॥८॥

९

निश्चय ही अपने तीन ज्ञानों, तथा लक्षणों (शंख, कुलिश आदि) तथा व्यंजनों (तिलक, मसा आदि) से युक्त शरीरके साथ, जिननाथके जन्म लेनेपर इन्द्रका आहतदर्प आसन काँप उठा। कल्पवासियोंने अपने स्वभावसे जान लिया। घण्टोंकी टंकार-ध्वनि होने लगी। ज्योतिषदेवोंके भवनोंमे दिग्गजोंको नष्ट कर देनेवाले निनाद हुए, व्यन्तरदेवोंके आवासों और शिविरोंमे पटह गरज उठे। भवनवासी देवोंके विमानोंमे शंखध्वनि होने लगी, विश्वमें क्षोभ फैल गया। ज्ञानसे इन्द्रने जान लिया कि भूलोकमें निष्पाप देवका जन्म हुआ है। उसके चित्तमे धर्मानन्द बढ़ गया। इन्द्र चला, सूर्य चला और चन्द्र चला। तब ऐरावत नामका मतवाला हाथी, जो वैक्रियिक शरीरके परिमाणवाला था, जो झरते हुए गण्डस्थलके मदजलसे गीला था, जो रुनझुन बजती हुई घण्टियोसे ध्वनित था, जो वरत्रारूपी नक्षत्रमालासे स्फुरित शरीरवाला था, जो कानोके चामरोसे भ्रमरा-वलिको उड़ा रहा था, जो मन्दराचलके समान था, आ पहुँचा। लीलाओसे पूर्ण बहुविध दाँतों-वाला। उसके प्रत्येक दाँतपर, अपनी कान्तिसे आकाशके सूर्योको आलोकित करनेवाले सरोवरके कमल थे। पत्र-पत्रपर स्थूल स्तनोवाली देवनारियाँ नृत्य कर रही थीं। इस प्रकार अलंघनीय उस ऐरावतको देखकर सौधर्म स्वर्गका इन्द्र उसपर शीघ्र चढ़ गया। सर्वत्र ध्वज छत्रोंसे सुन्दर था, सर्वत्र चमरोसे आच्छादित था। सर्वत्र नाना यान जा रहे थे, सर्वत्र विमान दौड़ रहे थे, सर्वत्र मण्डप फैले हुए थे, सर्वत्र जयदुन्दुभिका शब्द हो रहा था, सर्वत्र स्वर और गीतोकी मिठास थी। सर्वत्र उठी हुई मालाएँ थी। तरुओसे पल्लवित और कल्पवृक्षोसे व्याप्त आकाश सर्वत्र सोह रहा था।

घत्ता—णवतणुरोमंचु दावइ उंचु[8] जिणभवि हरिसु वहंति ।
तरु[9] चलदलपाणि णडइ व खोणि भावें वहुरसवंति ॥९॥

१०

महिसेहिं मेसेहिं आसेहिं भासेहिं ।
हंसेहिं मोरेहिं कुररेहि[1] कीरेहिं ।
सरहेहिं करहेहिं दुरएहि[2] वसहेहिं ।
दीवीतरच्छेहिं [3]रिंछेहिं मच्छेहिं ।
५ सारंगसीहेहिं तरुगिरिहिं मेहेहिं ।
सिहि जम महाभीस णेरिय समुद्देस ।
मारुय[4] कुवेरंक ईसाण णीसंक ।
मज्झम्मि खामाहिं मुद्धाहि सामाहिं ।
छणयंदवयणाहिं[5] णवणलिणणयणाहिं[6] ।
१० थणघुलियहाराहिं पसरियवियाराहिं ।
घयरट्ठगामिणिहिं[7] सोहंतकामिणिहिं ।
गयणोवडंतीहिं सरसं णडंतीहिं ।
वज्जंतवज्जेहिं कीलंतखुज्जेहिं ।
वाहूरविल्लेहिं ढुक्कंतमल्लेहिं ।
१५ वहुविहविलासेहिं मंगलणिघोसेहिं ।
संचल्लिया एम्व णाणाविहा देव ।

घत्ता—पावेवि अउज्झ परमदुगेज्झ[8] परियंचेवि तिवार ।
फणि दिणयर[9] चंदु भणइ सुरिंदु जय णाहेय कुमार ॥१०॥

११

गयणग्गलग्गहिमणिहसिहरु पइसेप्पिणु णाहिणरिंदघरु[1] ।
जंपिवि पियवयणइं णिवपवरे मायहि मायासिसु देवि करे ।
अमयासणगणसंमाणियए कड्ढिउ देविइ इंदाणियए ।
सहसक्खें दिट्ठउ परमपरु कमलसरे[2] णं णवदिवसयरु ।
५ छज्जइ अण्णाणतमोहहरु णं अंकुरत्ति थिउ धम्मतरु ।
णं वद्धउ सिवसुहकणयरसु णं पुरिसरूवि संठियउ जसु ।
णं सयलकलायरु[3] उग्गमिउ णं एक्कहिं लक्खणपुंजु किउ ।
देविइ दिज्जंतु[4] णियच्छियउ सोहम्मिंदेण पडिच्छियउ ।

---

८ MBP उच्चु । ९. MBP तरु वरदलपाणि ।

१०. १. BP कुररेहि । २ MB दुरहेहि । ३ MB रिच्छेहि । ४. B मारुव । ५ MBP °वयणेहि । ६ MBP °णयणेहि । ७ MBP गामिणिहि । ८. MBP परदुगेज्झ । ९. MP °दिणयरु ।

११ १ M °णरिंदु घरु । २. MB पोमसरे । ३. BP सयलु कलायरु । ४. MB णिज्जंतु ।

घत्ता—धरती, जिनेन्द्र भगवान्‌के जन्मपर हर्ष धारण करती हुई, अपना नव तृणांकुरोंका ऊँचा रोमांच दिखाती है, और अनेक रसभावोंसे युक्त, वृक्षोंके चलदलवाले हाथोंवाली वह भावसे नृत्य करती है ॥९॥

१०

महिषों, मेषों, अश्वों, उलूकों, हंसों, मोरों, कुररों, कीरों, शरभों, करभों, गजों, बैलों, चमकती हुई आँखोंवाले रीछों, मत्स्यों, सारंगों, सिंहों, वृक्षों, पहाड़ो और मेघोंपर सवार होकर अग्नि, महाभयंकर यम, नैऋत्य, वरुण (समुद्रेश), मारुत, कुबेर और शंकाहीन ईशान आदि देव आये। मध्यमें क्षीण, मुग्धा पूर्ण चन्द-मुखी, नव-कमलोंके समान आँखोंवाली, स्तनोंपर हिलते हारोंवाली, प्रसरणशील विकारोंसे युक्त, हंसकी तरह चलनेवाली, आकाशसे उतरती हुई सरस नृत्य करती हुई सुन्दर रमणियों तथा बजते हुए वाद्यों, क्रीड़ा करते हुए वामनों, बाहुओंसे शब्द करते आते हुए मल्लो, बहुविधविलासों और मंगल शब्दोंके साथ, इस प्रकार नाना प्रकारके देव चले।

घत्ता—अत्यन्त दुर्ग्राह्य अयोध्या पहुँचकर तीन बार उसकी प्रदक्षिणा कर नाग, दिनकर, चन्द्र और सुरेन्द्रने कहा, "हे नाभेय कुमार! आपकी जय हो।" ॥१०॥

११

जिसके हिम-सदृश शिखर आकाशके अग्रभागको छूते हैं ऐसे नाभिराजाके घरमें प्रवेश कर नृपश्रेष्ठसे प्रिय बातें कर माताके हाथमे मायावी बालक देकर, देवोंके द्वारा सम्माननीय इन्द्राणी उसे बाहर ले गयी। इन्द्रने उन परमश्रेष्ठको देखा मानो नवसूर्यने कमलसरोवरको देखा हो। अज्ञानरूपी अन्धकारके समूहको नष्ट करनेवाले वे ऐसे लगते हैं, मानो धर्मका वृक्ष अंकुरित हो उठा हो; मानो शिवसुखरूपी स्वर्णरस बाँध दिया गया हो, मानो यश पुरुषके रूपमें रख दिया गया हो, मानो सम्पूर्ण कलाधर (पूर्णचन्द्र) उग आया हो, मानो लक्षणोंका समूह एक जगह

वरवंदारयवंदहिँ णैविउ पणवेप्पिणु अंकग्गइ ठविउ ।
१० को ण गणइ पुण्णंपरिप्फुरिउ ईसाणे धवलछत्तु धरिउ ।
चमरइं धिवंति अमराहिवइ साणक्कुमारमाहिंदवइ ।
घत्ता—जगु जित्तउ जेहिँ णिम्मिउ तेहिँ अणुयहिँ देवहु देहु ।
तं सुइरु णियंतु दससयणेत्तु विम्हिउँ पुलइयदेहु ॥११॥

१२

पुणु पभणइ महुं हयकम्ममलु बहुलोयणत्तु जायउ सहलु ।
एहउं तिहुयणपरमेसरहो जं दिट्ठउं रूवु जिणेसरहो ।
इय घोसिवि पुणु पुणु जोइयउ इंदें अइरावउ चोइयउ ।
परमेट्ठि लएप्पिणु भमियगहे सच्छरु सामरु संचलिउ णहे ।
५ भेयसयइं सणउयइं जोयणहं महि मुइवि ठाणु तारायणहं ।
तेत्थाउ सुदूँसहकरपसरु जोयणहिँ पसाहियसरयसरु ।
उप्परि दहहिँ जि रवि परिभमइ पुणु असियहिँ ससि सइं संकमइ ।
चउहु जि रिक्खोहु णिरिक्खियउ पुणु तेत्तिएहिँ बुहु लक्खियउ ।
तिहिँ सुक्कु तिहिँ जि सुरगुरु भणमि तिहिँ अंगारउ तिहिँ सणि गणमि ।
१० सउ एम दहुत्तरु लंघियउ सुद्धायासु वि आसंघियउ ।
सहँसाइं गंपि अट्ठाणवइ अवरु वि जोयणसउ तियसवइ ।
एत्तेण जि सोहइ दीहरिय जोयण पण्णास पँवित्थरिय ।
अट्ठेव समुण्णय हिमविमल अद्धिंदुसरिच्छी पंडुसिल ।
जहिँ तहिँ पत्तेण पवित्ततणु जय जय पभणंतें परमजिणु ।
१५ देवाहिवेण तेल्लोक्कहिउ तहि उप्परि सीहासणि णिहिउ ।
घत्ता—पहु सहइ णिसण्णु कंचणवण्णु असहियतेयपसंगु ॥
णं कुरुहकरेहिँ वेल्लिहरेहिँ मंदरु ढंकइ अंगु ॥१२॥

१३

जिणणाहहु भावें मेरुगिरि णं हरिसें दावइ णियसिरि ।
णं पणमइ फलभरणमियतरु णं घेल्लइ चमरीमय चमरु ।
णं कोइलकलरवेण चवइ णं फलिहसिलासणाइं ठवइ ।
पक्खालंतु व पहुकमकमलु आणइ जवेण णिज्झरणजलु ।
५ लिंपइ व सविणय पणयवसेण करिणिहसणचुयचंदणरसेण ।
जोयइ व रूवु सु सियासियहिँ अहिणवणलिणच्छिहिँ वियसियहिँ ।
णच्चइ व पणच्चियणीलगलु गायइ व रुणुझुणियरँणिय भसलु ।
णं कुसुमामोएं णीससइ णं रयणरयणपंतिहिँ हसइ ।

५. MBP णमिउ । ६. MB पुण्णपविप्फुरिउ । ७ MBP विंभिउ ।

१२ १ T p णयसयइं and explains it as णयसयइं इति पाठेऽप्ययमेवार्थं । २. P सुदूसहु । ३. B णिरेक्खियउ । ४. M सहसइं गपिणु; BP सहसा गपिणु । ५ M सवित्थरय, BP सवित्थरिय ।

१३. १. M पणवइ । २ M घल्लय । ३. M सुझुणिय° । ४. MBP °रुणिय ।

रख दिया गया हो, दिये जाते हुए बालकको देवीने देखा, देवेन्द्रने उसे स्वीकार कर लिया। श्रेष्ठ चारणसमूह द्वारा वन्दनीय उन्हे प्रणाम कर गोदके अग्रभागमें रख दिया गया। पुण्यसे स्फुरायमान व्यक्तिको कौन नही मानता ? ईशान इन्द्रने उनके ऊपर धवलछत्र रख दिया। अमरेन्द्र सनतकुमार और माहेन्द्रपति उनके ऊपर चमर ढोरते है।

घत्ता—"जिन अणुओंसे विश्व जीता गया है, उन्हींसे देवका शरीर निर्मित हुआ है"—इस बातका देर तक विचार करनेवाला इन्द्र विस्मित और पुलकित हो उठा।

१२

वह पुनः कहता है कि "मेरा कर्ममल नष्ट हो गया है और मेरे अनेक नेत्रोका होना सफल हो गया है कि जो मैंने त्रिभुवनके परमेश्वर जिनेश्वरका यह रूप देख लिया है।" यह घोषित कर उसने बार-बार भगवान्‌को देखा और फिर अपने ऐरावतको प्रेरित किया। परमेष्ठी जिनेन्द्रको लेकर, अप्सराओं और देवोंके साथ वह भ्रमण करते हुए ग्रहोंवाले आकाशमें चला। सात सौ नब्बे योजन धरती छोड़नेपर तारागणोंका स्थान है। उससे, दस योजन ऊपर असह्य किरणोके प्रसार-वाला शरद्‌कालीन सरोवरोंको खिलानेवाला सूर्य परिभ्रमण करता है। उसके अस्सी योजन ऊपर चन्द्रमा निरन्तर परिक्रमण करता है। उससे चार योजन ऊपर अश्विनी आदि सत्ताईस नक्षत्र देखे जाते हैं। फिर वहाँसे उतनी ही दूरीपर बुध दिखाई देता है। वही मै शुक्र और बृहस्पतिका कथन करता हूँ। वही मै मंगल और शनिको गिनता हूँ। इस प्रकार एक सौ दस योजन चलनेपर उन्होंने शुद्ध आकाश पार किया। फिर वह एक हजार अट्ठानबे योजन जाता है। फिर इन्द्र एक सौ योजन जाता है। इतनी ही (सौ योजन) लम्बी और पचास योजन विस्तृत, आठ योजन ऊँची, हिमकी तरह स्वच्छ अर्द्धचन्द्रके आकारको पाण्डुशिला जहाँ शोभित है, वहाँ पहुँचनेपर, जय-जय-जय करते हुए देवेन्द्रने पवित्र शरीर, तीनों लोकोंका कल्याण करनेवाले परम जिनको उस शिलाके ऊपर सिंहासनपर स्थापित कर दिया।

घत्ता—असह्य तेजवाले स्वर्णके रंगके स्वामी उसपर विराजमान ऐसे शोभित हो रहे हैं, मानो मन्दराचल, लताओंको धारण करनेवाले वृक्षरूपी हाथोंसे शरीरको ढकता है ॥१२॥

१३

जिननाथके भावपूर्वक मानो वह हर्षसे अपनी लक्ष्मी दिखाता है, मानो फलभारसे नमित वृक्षोंसे प्रणाम करता है। मानो उनपर चमरीमृग चमर ढोरते हैं। मानो कोयल सुन्दर शब्दमे बोलती है, मानो स्फटिक मणियोंकी शिलाएँ स्थापित करता है। वेगसे झरनोके जलको लाता है और प्रभुके चरण-कमलोंका प्रक्षालन करता है। हाथियोके संघर्षणसे गिरे हुए चन्दनरससे जो प्रणयसे विनयपूर्वक जैसे लीपता है। जो अपनी सित-असित अभिनव कमलरूपी आँखोंसे जैसे उनका रूप देखता है, नाचते हुए मयूरोंसे युक्त वह जैसे नाचता है, जिसमे गुनगुनाते हुए भ्रमर है, जैसे गाता है। मानो वह कुसुमोके आमोदसे निश्वास लेता है, मानो वह रत्नरूपी दाँतोंकी पंक्तियोंसे हँसता है।

घत्ता—संठिउ मणिरंगि मंदरसिंगि चंपयवासविसीसे ॥
१०　जिणु सासयसोक्खु णावइ मोक्खु थिउ तेलोक्कहु सीसे ॥१३॥

१४

ता हयाइं भेरिझल्लरीमुइंग[1]संखतालकाहलोइं[2] वज्जयाइं ।
खिब्भिसेहिं पाणिपायकुंचियाइं णच्चियाइं वासणाइं[3] खुज्जयाइं ॥
भूयजक्खकिंणरेहिं खेयरेहिं रक्खसेहिं णायणाइणीसएहिं ।
आयएहिं पूरियं णिरंतरं णहंतरं भवंतभावभाविएहिं ॥
५　बालहंसगामिणीहिं इंदचंदकामिणीहिं गाइयाइं मंगलाइं ।
दब्भदोव[4]पूयवीयमट्टियाकणेहिं ताइं णिम्मियाइं णिम्मलाइं ।
उद्धबद्धणिद्धचारुचीरमंडवे फुरंतमोत्तिएहिं मंडिऊण ।
लोयतावकारणाइं कुच्छियाइं वंछियाइं छोड्डिऊण[5] ॥
सहिऊण णायरेग सायरेण सासणामरे वरे पओसिऊण ।
१०　गंधधूवफुल्लदीवतोयतंदुलण्णजण्ण[6]भायए णिवेसिऊण ॥
सक्कचिच्चिकालणेरिअण्णवाणिले कुवेरसूलिणे[7] समच्चिऊण ।
मंतपुव्वियं विहिं सुहावहं समागमे समासियं समासिऊण ॥
जीय देव णंद वद्ध सिद्ध बुद्ध सुद्धसील सामिसाल भाणिऊण ।
दोहएहिं[8] दोधएहिं खंधएहिं चित्तवित्तसंथुईहिं माणिऊण ॥
१५　मंदरं[9] छिवंतियाइ वद्धदेवपंतियाइ खीरसायरंतियाइ ।
वोमयं कमंतियाइ धंतियाइ थंतियाइ जंतियाइ एंतियाइ ॥
हारदोर[10]कंचिदामवंभसुत्तकंक[11]णालिकुंडलाहिं भूसिएहिं ।
आइबीयकप्पपुंगमेहिं आसणासिएहिं सम्मयाहिलासिएहिं ॥
अट्ठजोयणोयरेहिं एक्ककंठवित्थरेहिं अब्भयं णिसुंभएहिं ।
२०　हुंदहोपयच्छिएहिं पाणिणा पडिच्छिए उग्गयंवुथंभ[12]एहिं ॥
चंदणेण चच्चिएहिं पुप्फदामवेढिएहिं णं घणेहिं संभएहिं ।
एक्कमेक्कढोइएहिं पोम[13]पत्तछाइएहिं सायकुंभकुंभएहिं ॥
सिंचिओ पुणंचिओ णमंसिओ पसंसिओ पसाहिओ महाइदेवो ।
कामकोहमोहलोहमाणडंभच[14]प्फलत्तवज्जिओ हयावलेवो ॥

२५　घत्ता—जो णाणविसुद्धु जिणु सइंवुद्धु सो ण्हाविउ लइ ण्हाइ ।
झसवासहु तोउ भत्तउ लोउ सूरहु दीवउ देइ ॥१४॥

---

१४ GK mention at the beginning पिंगलाणंदो णाम दंडओ; MBP have विंगलाणंदो णाम छंदो । १. M °मुयंग° । २. MB °काहलाइवज्जयाइं । ३. MB वावणाइं । ४. P °दोव्व° but gloss दूर्वा । ५ K छडिऊण । ६. M °जण्ण° । ७. BP °सूलिणो । ८ KT दूहएहिं । ९. MB मन्दिरं; K मन्दिरं but corrects it to मन्दरं । १०. P °डोर° । ११. P कंकणाहिं° । १२. MBP °विन्भएहिं, but gloss in P उद्गतोच्छलितजलबिन्दुभिः । १३. P पोमवत्त° । १४. P °चप्पलत्त° ।

घत्ता—चम्पककी वाससे मिश्रित सुन्दर मन्दराचल शिखरपर स्थित जिन ऐसे मालूम हुए मानो शाश्वत सुखवाला मोक्ष त्रिलोकके ऊपर स्थित हो ॥१३॥

१४

इतनेमे तूर्यवादक देवोंके द्वारा भेरी, झल्लरी, मृदंग, शंख, ताल और कोलाहल आदि वाद्य बजा दिये गये। अपने हाथ-पैर आकुंचित करते हुए वामन और कुबड़े नाचने लगे। आये हुए भूत, यक्ष, किन्नरों, विद्याधरों, राक्षसों, सैकड़ों नाग-नागिनियोके द्वारा अनुरागसे भरकर निरन्तर आकाश गुंजा दिया गया। बालहंसके समान चलनेवाली इन्द्र और चन्द्रकी महिलाओके द्वारा मंगल गीत गाये गये। दर्भ, दूब, अपूप, बीज और मिट्टीके कणोसे निर्मल मंगल रचे गये। ऊपर बँधे हुए चिकने और सुन्दर कपड़ेके मण्डपमे, चमकते हुए मोतियोंसे अलंकृत कर लोक-सन्तापकी कारणरूप कुत्सित इच्छाओको छोड़कर, चतुर इन्द्रने आदरपूर्वक शासन-देवोंको आह्वान कर और सन्तुष्ट कर, गन्ध, धूप, फूल, दीप, जल, तन्दुल और अन्न आदि यज्ञांशोंको रखकर, इन्द्र, अग्नि, यम, नैऋत्य, अर्णव, पवन, कुबेर और ईशान दिग्पालोकी अर्चना कर, मन्त्रपूर्वक जिनआगममे प्रतिपादित सुखद विधिका आश्रय लेकर, हे देव जियो, प्रसन्न होओ, बढ़ो, हे सिद्ध बुद्ध शुद्धाचरणवाले स्वामिश्रेष्ठ, यह कहकर दोहों, बोधकों, स्कंधकों, चित्रवृत्तोंवाली स्तुतियोसे मानकर, मन्दराचलको छूनेवाली, तथा क्षीरसमुद्र तक फैली हुई, आकाशका अतिक्रमण करती हुई, दौड़ती हुई, ठहरती हुई, जाती हुई, आती हुई, बँधी हुई देवपक्तिके द्वारा हार, दोर, स्वर्ण, करधनी, यज्ञोपवीत, कंगनपंक्ति और कुण्डल आभूषणोसे अलंकृत, आसनोंपर स्थित सम्यक् अभिलाषा रखनेवाले, आठ योजन लम्बे और एक योजन विस्तृत मेघपटलको नष्ट करनेवाले, लो यह कहते हुए, प्रथम और द्वितीय स्वर्गके देवेन्द्रोंके द्वारा हाथसे दिये गये, जिनसे जलकी बूँदे गिर रही हैं, ऐसे चन्दनसे चर्चित, पुष्पमालाओं-से वेष्टित, जो मानो जलसे भरे मेघोके समान हैं ऐसे एक दूसरेके द्वारा ले जाये गये, कमल पत्रोसे ढके हुए स्वर्ण कलशोंसे, काम, क्रोध, मोह, लोभ, मान, दम्भ और चपलतासे रहित, पापसे दूर महान् आदिदेव (ऋषभ) को अभिषिक्त किया गया, पुनः पूजा गया, नमन किया गया, सराहा गया और प्रसाधित किया गया।

घत्ता—जो जिनेन्द्र ज्ञानविशुद्ध स्वयं बुद्ध हैं, उन स्नातको—समुद्रको जलस्नान कराता है। भक्त लोक सूर्यको दीपक दिखाता है ॥१४॥

१५

णिम्मलहु जि ण्हाणु विराइयउ मंगलहु जि मंगलु गाइयउ।
परमेट्ठिहि जाणियसंवरहो किं अंबरु दिण्णु णिरंबरहो।
किं भूसणु भूसणि संणिहिउ किं जगमंडणि मंडणु लिहिउ।
पविसूइइ ववगयभवरिणहो विंधेप्पिणु सवणजुयलु जिणहो।
५ विच्छूढइं मणिमयकुंडलइं णं ससहरदिणयरमंडलइं।
चयलब्भपिसायहु णट्ठाइं णाहेयहु सरणु पइट्ठाइं।
किं कोसिएण जगसेहरहो सिरि सेहरु बद्धउ मणहरहो।
गलरेहाजित्ते वलियएण हेट्ठामुहेण परिघुलियएण।
हियउल्लउ हारें सेवियउ जडजाएं किं पि ण भावियउ।
१० घत्ता—जो सालंकारु किमलंकारु सुरवर तासु करंति।
महु हियवइ भंति णउ लज्जंति रूवु काइं ढंकंति ॥१५॥

१६

किं बुद्धि ण हूई सुरयणहो मणिबंधु महग्घउ कंकणहो।
कडिसुत्तउ कडियलि वलइयउ किंकिणिसरु चवइ व पुलइयउ।
किं सीहणियंबहु एह सिरि लइ अच्छइ तं सेवंतु गिरि।
कमजुइ संणिहियउ झणझणइ मंजीरजुयलु इय णं भणइ।
५ जं भव्वजीवसंतइसरणु संसारमहाजलणिहितरणु।
कोमलसरलंगुलिदलकमलु णहकिरणपसरहयतिमिरमलु।
मइं लद्धउ जिणवरपयजुयलु महु जायउ भूसणत्तु सहलु।
जं करणकालि सिहिताविय‌उ तं तवहलु णं विहिदावियउ।
घत्ता—सुरसायरतोउ णाहविओउ ण सहइ विरइयण्हाणु।
१० मंदरगिरिगुज्झि महिरुहमज्झि णं घल्लइ अप्पाणु ॥१६॥

१७

दूराउ वहंतु णियच्छियउ सीसेण सुरेहिं पडिच्छियउ।
वंदिज्जइ जिणतणु परिलुढिउ कक्करकंदरणिवडणि सुढिउ।
णिज्जइ देवेहिं करेण करु गुरुसंगें को णउ होइ गुरु।
पंकयकेसररयधूसरिउ कस्सीरयराएं पिंजरिउ।
५ वणकुंजरकुंभत्थलखलिउ करडयलगलियमयपरिमलिउ।
संचलियसिलिम्मुहचित्तलिउ णाणामणिकिरणहिं संवलिउ।
परिघोलइ सिहरिदहु तणउं णं पंचवण्णु उप्परियणउं।

---

१५. १. P जगमंडणु मंडणि। २. P विंवेविणु। ३. MBP जाणियउ। ४ EP ढक्कंति।

१६. १ P सिहं°। २ M भूसणत्तु जायउ। ३. P महिहर°।

१७. १ P सीसेहिं। २ MBP परिट्ठुलिउ। ३ K °णिवडणसुटिउ। ४. P करेहिं। ५ PT कासीरय°।
६. MBP सिम्मीमुह°।

१५

निर्मलको भी स्नान कराया गया। मंगलका भी मंगल गाया गया। संवरको जाननेवाले दिगम्बर परमेष्ठीको अम्बर वस्त्र क्यों दिया गया? जो भूषणस्वरूप हैं उन्हें भूषण क्यों पहनाया गया, जो जगमण्डन हैं उनपर मण्डन क्यों किया गया? संसारके ऋणसे मुक्त जिनके दोनों कानोंको वज्रसूचीसे वेधकर मणिमय कुण्डल पहना दिये गये, मानो चन्द्र और दिनकरके मण्डल हों, जो मानो चंचल राहुसे भागकर नाभेयकी शरणमें आये हों। विश्वश्रेष्ठ सुन्दर ऋषभके सिरपर इन्द्रने मुकुट क्यो बांध दिया? गलेकी रेखासे जीता गया, झुका हुआ अधोमुख आन्दोलित हारके द्वारा हृदयकी सेवा की गयी, जो जड़जात (जड़से उत्पन्न, और जलसे उत्पन्न मोती) को कुछ भी अच्छा नही लगा।

घत्ता—जो स्वयं सालंकार हैं, देवता उसे अलंकार क्यों पहनाते हैं, मेरे हृदयमें भ्रान्ति है कि उन्हें शर्म नहीं है, वे रूपको क्यों ढकते है ॥१५॥

१६

क्या देवोंको बुद्धि नही उपजी कि उन्होंने कंकणोंका महार्घ मणिबन्ध और कटिसूत्र कटितलमे बांध दिया। किंकिणीका स्वर रोमांचित होकर कहता है क्या सिंहके नितम्बमें यह शोभा है? लो यही कारण है कि वह पहाड़की सेवा करता हुआ वही रहता है। दोनो चरणोंमे झन-झन करते हुए नूपुरोंका जोड़ा यह कहता है कि जो भव्यजीवोकी परम्पराके लिए शरणस्वरूप हैं, जो संसाररूपी महासमुद्रसे तारनेवाले हैं, जो कोमल स्वरों और अंगुलियोंके दल कमलवाले हैं, और (ज्ञान रूपी) सूर्यके प्रसारसे तिमिरमलको नष्ट कर देते है, मैंने ऐसे जिनवरके चरणयुगलको पा लिया है, मेरा भूषण होना सफल हो गया। बनाये जाते समय मुझे जो आगमे तपाया गया, मानो विधाताके द्वारा दिखाया गया, यही मेरे तपका फल है।

घत्ता—स्नान करानेवाला क्षीरसमुद्रका जल अपने स्वामीका वियोग सहन नही करता इसीलिए मन्दराचलसे गुह्य वृक्षोंके मध्यमे अपनेको डाल देता है ॥१६॥

१७

देवोने दूरसे बहते हुए उसे देखा और अपने सिरसे उसे अंगीकार कर लिया। जिनके शरीरसे लुढ़का हुआ और कठोर गुफाओमे गिरनेसे दुःखित उसे देवोंने हाथो हाथ ले लिया। गुरुके साथ कौन गुरु नही होता। कमलपरागकी धूलसे धूसरित केशरकी लालिमासे पीला, वनगजोके गण्डस्थलोसे पतित, गजकपोलोंसे झरते हुए मदजलसे सुगन्धित, चलते हुए भ्रमरोसे चित्रित नाना मणि-किरणोसे मिश्रित स्नानजल ऐसा लगता है मानो सुमेरु पर्वका पचरंगा दुपट्टा उड़ रहा

णहिं णहयरेहिं महियलि णरेहिं पायालि पडंतउ विसहरेहिं ।
धावंतु थंतु वियलंतु चलु वंदिउ सव्वण्हुहि ण्हाणजलु ।
१० घत्ता—इच्छियगुरुसेव चउविह देव हरिसें कहिं मि णमंति ॥
उट्ठंत पडंत पुरउ णडंत वारवार पणवंति ॥१७॥

१८

केण वि वाइत्तउं वाइयउ केण वि सुइमिट्ठउ गाइयउ ।
केण वि बहुसुकिउ संचियउ केण वि भावालउ णच्चियउ ।
सवलहणउं केण वि ढोइयउ केण वि आहरणु णिवेइयउ ।
केण वि थोत्तइं पारद्धाइं केण वि तोरणइं णिबद्धाइं ।
५ पडिहारु को वि हुउ दंडधरु कु वि पासि परिट्ठिउ खग्गकरु ।
पडु पढइ का वि अणुराइयउ केण वि मालउ उच्चाइयउ ।
कासु वि आलावणि णिद्धतणु जहिं छिप्पइ तहिं तहिं करइ मणु ।
सरलंगुलिताडिय रणझणइ णिज्जीव वि जिणवरगुण थुणइ ।
तहिं अवसरि कयणाणावयणु थुइ गुरुहि करइ दससयणयणु ।
१० आयासु जि आयासहु सरिसु उवमाणु ण तुज्झु को वि पुरिसु ।
जइ पइं जि समाणउं पइं भणमि ता परमेसर किं पइं थुणमि ।
घत्ता—जो कहइ कएण कइ कव्वेण जिणवर तुह गुणरासि ॥
सो णिरु लहुएण करचुलुएण मूढु मवइ जलरासि ॥१८॥

१९

तुह थोत्तवित्तस्स चित्तं णवं देमि अहमीस धिट्ठत्तणेणेव वंदेमि ।
घणलाहलोलेहिं संगहियसंगेहिं परणारिहिंसाणुसाणंदियंगेहिं ।
पसुमंसमज्जंबुधाराविलुद्धेहिं कुलजाइविण्णाणगावावरुद्धेहिं ।
मयघुम्मिरच्छीहिं मिच्छत्तिरूढेहिं कह दीससे तं महामोहमूढेहिं ।
५ असिवत्तदुग्गंतराले घडंताण णरयम्मि घंते महंते पडंताण ।
जमपासणिप्पीडियाणं सवाहीण जिण को करालंवणं देइ देहीण ।
इणं मो जयंजम्मवासं णिहंतूण परमं पयं णेइ को तं पमोत्तूण ।
जय कालकालग्गिजालावलीकंद जय इंदणाइंदलच्छीलयाकंद ।
जय घोरसंसारकंतारणित्थार जय दव्वपज्जायसंभावणासार ।
१० जय मारसिंगारपब्भारणिब्भेय जय दीहदालिद्ददोहग्गविच्छेय ।
जय दुव्विणीयंतरंगाण दुण्णेय जय णाह णीराय णीसल्ल णाहेय ।
जय देव कंठीरवुव्वूढपीढत्थ जय कूरचित्तेसु भत्तेसु मज्झत्थ ।

७ MBP कहव । ८. MBP पणमति ।
१८ १ B णाणावयणु तणु । २ P णरु ।
१९ १ K वंदासि । २ MBP °लाहलोहेहिं । ३. MBP °गारावलुद्धेहिं । ४. M मिच्छत्ति° । ५. B जयजम्म° ।

हो। नभमे नभचरों, धरतीपर मनुष्यों और पातालमें विषधरोंने गिरते, दौड़ते, ठहरते, विगलित होते चंचल, सर्वज्ञके स्नानजलको वन्दना की।

घत्ता—गुरुकी सेवाकी इच्छा रखनेवाले चार प्रकारके देव हर्षसे कहीं भी जलका नमस्कार करते हैं। उठते-पड़ते सामने नाचते हुए वे बार-बार प्रणाम करते हैं ॥१७॥

१८

किसीने बाजा बजाया, किसीने श्रुतिमधुर गाना गाया, किसीने प्रचुर पुण्यका संचय किया। किसीने भावपूर्ण नृत्य किया। किसीने विलेपन भेंट दिया। किसीने आभूषण दिये, किसीने स्तोत्र शुरू किये, किसीने तोरण बाँधे। कोई दण्डधारी प्रतिहारी बन गया। कोई हाथमें तलवार लेकर पास खड़ा हो गया। धर्मानुरागसे युक्त कोई सुन्दर पढ़ने लगा। किसीने माला ऊँची कर ली। किसीकी वीणा स्निग्धतर हो उठी। जहाँ-जहाँ वह स्पर्श करता है वही मन हो जाता है। स्वर और अँगुलियोसे ताड़ित वह रुनझुन करती है, निर्जीव होते हुए भी, जिनवरके गुणोंकी स्तुति करती है। उस अवसरपर सहस्रनयन इन्द्र अपने नाना मुख बनाकर गुरुकी स्तुति करता है, "आकाश आकाशके समान है, तुम्हारा उपमान कोई भी मनुष्य नहीं हो सकता। हे जिनवर, जब आप आपके ही समान कहे जाते हैं तो हे परमेश्वर, मैं आपकी क्या स्तुति करूँ ?

घत्ता—हे जिनवर, जो स्वनिर्मित काव्यसे तुम्हारी गुणराशिका कथन करता है वह मूर्ख अत्यन्त छोटे हाथरूपी करछलसे जलराशिको मापना चाहता है ॥१८॥

१९

हे जिनवर, तुम्हारे स्तवनके आचरणमें मै अपना नवीन चित्त देता हूँ। हे ईश, मै धृष्टतासे ही तुम्हारी वन्दना करता हूँ। जो धनलाभके लालची, संगृहीतका संग्रह करनेवाले, परस्त्रियोंकी हिंसा और अपहरणसे आनन्दित होनेवाले, पशुमांस और मद्यकी जलधारामे लुब्ध होनेवाले, कुल जाति और विज्ञानके गर्वसे अवरुद्ध, मदसे घूमती हुई आँखोंवाले, मिथ्यात्वपर चढे हुए और महामूढ़ हैं, उनके द्वारा वह कैसे देखा जा सकता है। असिपत्रोसे दुर्गम अन्तरालमें घटित होते हुए, महान्धकारमय नरकमे पड़ते हुए, यमके पाशसे अत्यन्त पीड़ित और सब प्रकारसे हीन शरीरधारियोके लिए हे जिन, कौन हाथका सहारा देता है ? मेरे इस जगजन्मवासको नष्ट कर, तुम्हे छोड़कर कौन मुझे परमपदमे ले जा सकता है ? कालरूपी कालाग्निकी ज्वालावलीके लिए मेघतुल्य तुम्हारी जय हो। इन्द्रों और नागेन्द्रोंकी लक्ष्मीरूपी लताके अंकुर आपकी जय हो। संसारके घोर कान्तारसे निस्तार दिलानेवाले आपकी जय हो; द्रव्यों और पर्यायोंकी सम्भावनाओं-के सार, आपकी जय हो; कामके शृंगारके भारका भेदन करनेवाले आपकी जय हो; दीर्घ दारिद्र्य और दुर्भाग्यका छेदन करनेवाले आपकी जय हो। दुर्विनीत हृदयवालोके लिए अज्ञेय आपकी जय हो, वीतराग शल्यहीन हे नाभेयनाथ, आपकी जय हो। सिंहासनपर स्थित हे देव, आपकी जय। दुष्टचित्तों और भक्तोंमे मध्यस्थ चित्त, आपकी जय।

घत्ता—जय मंथरगामि तिहुयणसामि एत्तिउ मग्गिउ देहि ॥
जहिं जम्मु ण कम्मु पाउ ण धम्मु तहु देसहु मइं णेहि ॥१९॥

२०

देवं थुणहविऊण भत्तीइ णविऊण ।
पडुपडहणाएहिं थगिदुगिगघाएहिं[1] ।
दुणिकिटिमटकेहिं[2] झंझंसघोकेहिं ।
भेभंतभंभाहिं[3] ढक्काहुडुक्काहिं ।
५ करडाहिं संखेहिं झल्लरिहिं मद्दलहिं[4] ।
तालेहि काहलहिं अण्णहिं असंखेहिं ।
बहिरियदसासेहिं जयतूरघोसेहिं ।
बहुवयणु बहुणयणु करपिहियपिहुगयणु ।
हरिसेण विच्छुरिउ[5] णियतरुणिपरियरिउ ।
१० विविहंगहारेहिं रसभावसारेहिं ।
उप्पयइ परिवडइ[6] आहंडलो णडइ ।
धम्माणुराएण पयजुयणिवाएण ।
सुरमहिहरो फुडइ महिवीढु कडयडइ ।
परिभमइ थरहरइ णियदेहु संवरइ ।
१५ रोसेण फुंफुवइ[7] फणि फरुसु विसु मुयइ ।
विसजलणु वित्थरइ धगधगइ हुरुहुरइ ।
तावेण कढकढइ जलयरकुलं लुढइ ।
जलही वि[8] झलझलइ सेरं[9] समुल्लसइ ।

घत्ता—रिक्खइं णिवडंति दिसउ मिलंति महिविवरइं फुट्टंति ॥
२० णच्चंतें इंदें णयणाणंदें गिरिसिहरइं तुट्टंति ॥२०॥

२१

इय णच्चिवि गिण्हिवि उसहसिरि आरूढु सवारणखंधि हरि ।
सच्छरु सविबुहु लहु संचलिउ पवणंदोलियधयवडलुलिउ ।
संगीयसद्दकोलाहलेण खे धावंतें सुरवरबलेण ।
तणुकंतिभारवारियविहुणा उप्परि एंतेण[1] देवपहुणा ।
५ दीसइ अहत्थु णक्खत्तगणु णं णहसरि फुल्लिउ[2] कमलवणु[3] ।

---

२०. १. MB ठगदुगिग°; P थगदुगिग° । २. MB दुणिकिट्टिमटकेहिं; P दुणिकिट्टमटकेहि । ३. MBP भंभंत° । ४ MBP मंदलहिं । ५. MBP विप्फुरिउ । ६ P पडिवडइ । ७. MB पुप्फुवइ । ८. MBP जलणिहि वि । ९. MB सरसं ।

२१. १. P उप्परि यंतेण but gloss आगच्छता । २. B णहसिरफुल्लिउ, P णहसरफुल्लिउ । ३. K कुसुमवणु ।

घत्ता—हे मन्थरगामी त्रिभुवनस्वामी, आपकी जय हो, इतना माँगा हुआ दीजिए कि जहाँ जन्म नहीं है, कर्म नही है, पाप नहीं है और न धर्म है, उस देशमें मुझे ले जाइए ॥१९॥

२०

देवको स्नान करा कर, भक्तिसे प्रणामकर, पटुपडहके नादों, थारी-दुगिगके आघातों, दुणि-किटिम और टक्कों, झंझा और सघोक्को, भेभंत-भंभाहो, ढक्का और हुडुक्कों, करडों, काहलों, झल्लरियों, मद्दलो, ताल और शंखो और भी असंख्यों दिशाओंको बहरा बना देनेवाले जयतूर्य घोषोके द्वारा, जिसके अनेक मुख हैं, अनेक नेत्र है, जिसने हाथोसे विशाल आकाशको आच्छादित कर रखा है, हर्षसे विह्वल तरुणीजनसे घिरा हुआ ऐसा इन्द्र रसभावोंसे श्रेष्ठ विविध अंग निक्षेपोंके द्वारा उछलता है, गिरता है, और धर्मके अनुरागसे नृत्य करता है। पैरोके गिरनेसे सुमेर पर्वत फट जाता है। धरतीपीठ कड़कड़ होता है। शेषनाग घूमता है, थर्राता है, अपना शरीर सम्हालता है, क्रोधसे फुफकारता है, कठोर विष उगलता है, विषकी ज्वाला फैलती है, धक-धक हुरहुर करती है, तापसे कड़कड़ करती है, जलचरसमूहको नष्ट करती है। समुद्र भी चमकता है, स्वेच्छासे उल्लसित होता है।

घत्ता—नक्षत्र टूटते हैं, दिशाएँ मिलती हैं, महीविवर फूटते हैं, नेत्रोंके लिए आनन्ददायक इन्द्रके नाचनेपर गिरिशिखर टूट जाते हैं ॥२०॥

२१

इस प्रकार नृत्य कर और श्री ऋषभको लेकर इन्द्र अपने ऐरावतके कन्धेपर चढ़ गया। अप्सराओ और देवोके साथ वह चला। वह पवनसे आन्दोलित ध्वजपटोंसे चंचल था। संगीतके कोलाहलके शब्दके साथ सुरबलके आकाशमे दौड़नेपर तथा शरीरकी कान्तिके भारसे चन्द्रमाको निवारण करनेवाले इन्द्रके ऊपरसे आनेपर नीचे स्थित नक्षत्रगण ऐसा दिखाई देता था, मानो

णं मोत्तियमंडवु मेइणिहि जिणु ण्हाणंतिहि मंदाइणिहि ।
सियजलकणणियरु समुच्छलिउ णं दीसइ दसदिसासु घुलिउ ।
उज्झाउरि झत्ति पराइयउ रायंगणि लोउ ण माइयउ ।
उत्तरिवि करिहि हरि आइयउ मायापियरहुं सिसु ढोइयउ ।
१० तिहुयणपरिपालणपरमविहि संगहिय तेहिं सो णाणणिहि ।
विसु धम्मु तेण भाइ त्ति पहु भासियउ पुरंदरेण विसहु ।
घत्ता—जगभरहु समत्थु पुण्णपसत्थु णंदणु लेवि अदीण ॥
सुरसंथुयपाय हरिसिय माय पुप्फयंति आसीण ॥२१॥

इय महापुराणे तिसट्ठिमहापुरिसगुणालंकारे महाकइपुप्फयंतविरइए महाभव्वभरहाणुमण्णिए महाकव्वे जिणजम्माहिसेयकल्लाणं णाम तइओ परिच्छेओ सम्मत्तो ॥ ३ ॥

॥ संधि ॥ ३ ॥

---

४. MBP add after this foot : संतोसवसेण पलोइयउ; G gives it in the margin in second hand, but K does not give it at all. ५. M ताइ त्ति । ६. BP पुप्फयंतआसीण ।

आकाशरूपी नदीमें कमलवन खिला हो मानो धरतीका मोतीमण्डप हो, मानो जिनके स्नानके अन्तमें मन्दाकिनीका श्वेत जलकणसमूह उछल पड़ा हो, और दसों दिशाओंमें व्याप्त दिखाई दे रहा हो। वह शीघ्र अयोध्या नगरीमें पहुँचा, लोक राजाके प्रांगणमे नही समा सका। ऐरावतसे उतरकर इन्द्र आया, और उसने माता-पिताको पुत्र दे दिया। ज्ञाननिधि उसने उनसे त्रिभुवन-परिपालनकी विधि संगृहीत की। चूँकि उनसे (जिनेन्द्रसे) धर्म शोभित है, इसलिए इन्द्रने उन्हें वृषभ कहा।

घत्ता—जगभारमे समर्थ, पुण्यसे प्रशस्त, और अदीन पुत्रको लेकर सुन्दर स्थानपर बैठे हुए, देवोसे संस्तुत चरण माँ हर्षित होती है ॥२१॥

इस प्रकार त्रिषष्टि पुरुषगुणालंकारवाले महापुराणमें, महाकवि पुष्पदन्त द्वारा विरचित महा-भव्य भरत द्वारा अनुमत इस महाकाव्यमें जिनजन्माभिषेक कल्याण नामक तीसरा परिच्छेद समाप्त हुआ ॥३॥

संधि ४

घरि पुणरवि सयणहिं परियणहिं जिणजम्मुच्छवु जो रइउ ।
तं पेच्छेवि विसंहरु णरु खयरु सुरवरु कोउ ण विम्हइउ ॥ ध्रुवकं ॥

१

जंभेट्टिया—तणुअणुरुवइं रंजियरूवइं ।
देवि पसत्थइं भूसणवत्थइं ॥१॥

घोलंतउ मालइमालियाउ थणथण्णामयधारालियाउ ।
कंकेल्लिपल्लवाइयकराउ धाईउ समप्पिवि अच्छराउ ।
५ किंकर गिव्वाण अणंत देवि सिसुणाहहु णिरु भावें णवेवि ।
तं गुरुजुयलुल्लउं विमलणाणि पुज्जेवि पसंसिवि कुलिसपाणि ।
पुच्छिवि गउ सयमहु सघरु जाम कोसलपुरि वड्ढइ वालु ताम ।
उत्ताणसेज्ज णिम्मुक्कगंथु णं सिद्धिहि केरउ णियइ पंथु ।
वड्ढंतें वड्ढइ हिरिविसेसु खेलंतें खेलइ दिहिविलासु ।
१० बइसंतें बइसइ सिरि चलच्छि रंगंतें रंगइ समउ लच्छि ।
पसरंतें पसरइ सुथिरकंति उट्ठंतें उग्गमइ कित्ति ।
भासंतएण खलियक्खराइं बुद्धइं बावण्ण वि अक्खराइं ।
चिरु धरियइं दरदेंतें पयाइं संभरियइं पुव्वंगहं पयाइं ।
जिणससिणा लेते तणुकलाउ विण्णायउ चउसट्ठि वि कलाउ ।
घत्ता—करणिड्डिइ थिरसंभूयमइ मइइ सत्थु संमाणियउं ।
१५ तं [10]चिंतंतें परमेसरेण ओहिइ जगु परियाणियउं ॥१॥

GK have at the commencement of this Samdhi the following stanza :—

सौभाग्यं शुचिता क्षमा भुजबलं शौर्यं वपुः सुन्दरं
सत्य सर्वजनोपकारकरणं वृत्त स्वकं सन्मतम् ।
हे विद्वन् भरतस्य भूतिजननं विद्यार्थिनामाशु य-
स्यैकैकं गुणमङ्गमूर्जितधिया पुंसामचिन्त्यं भुवि ॥

MBP have the following stanza :—

आश्रयवशेन भवति प्रायः सर्वस्य वस्तुनोऽतिशयः ।
भरताश्रयेण सप्रति पश्य गुणा मुख्यता प्राप्ता. ॥

१. १ MBP पेच्छिवि । २. M विसिहरु । ३. MB विभयउ, P विंभियउ । ४. MBP वाइयउ । ५. MB तग्गुरु° । ६. P पुछिवि । ७. P णिमुक्क°; K णिमुक्क° but corrects in to णिम्मुक्क° । ८ MBP खेल्लतें खेल्लइ । ९. MBP चरियइं । १०. MBP णं चिंतंतें ।

सन्धि ४

घरमें फिरसे स्वजनों और परिजनोंके द्वारा जिनजन्मका जो उत्सव किया गया, उसे देखकर विषधर, नर, विद्याधर और देवेन्द्र कौन ऐसा था जो विस्मित नहीं हुआ ?

१

शरीरके अनुरूप और रूपको रंजित करनेवाले प्रशस्त भूषण और वस्त्र देकर, मालती-मालाओंको घुमाती हुई, स्तनोंमे दूधरूपी अमृतधारावाली, अशोक वृक्षके पल्लवोंके समान हाथों-वाली अप्सराओंको धायके रूपमे सौंपकर, अनन्तदेवोंको किंकरके रूपमें देकर, अत्यन्तभावसे शिशु स्वामीको नमस्कार कर विमल ज्ञानवाले नाभिराज और मरुदेवी, दोनोंकी पूजा और प्रशंसा कर और अनुमति लेकर वज्रपाणि (इन्द्र) अपने घर चला गया, अयोध्यामे बालक दिन दूना रात चौगुना बढ़ने लगता है। सेजपर लेटा हुआ नग्न बालक ऐसा लगता है मानो सिद्धिके मार्गको देख रहा हो। बालकके बढ़नेपर ऋद्धि विशेष बढ़ती है, खेलनेपर धैर्यका विलास खेलने लगता है। उसके बैठनेपर चंचल आँखोंवाली लक्ष्मी बैठ जाती है। चलनेपर लक्ष्मी साथ चलती है। प्रसार करनेपर स्थिर कान्ति फैलने लगती है। उसके खड़े होनेपर कीर्ति उठ खड़ी होती है। स्खलित अक्षर बोलनेपर भी उसने बावन ही अक्षर जान लिये। धरतीपर थोड़े-थोड़े पद रखते हुए, चिर पूर्वांग-पद उसे स्मरणमें आ गये। जिनरूपी चन्द्रमाके शरीरकी कलाएँ ग्रहण करते ही उसने चौसठ कलाओंका ज्ञान प्राप्त कर लिया।

घत्ता—इन्द्रियोकी वृद्धिसे उनकी बुद्धि दृढ़ होती है, दृढ़ बुद्धिसे वह शास्त्रका सम्मान करते है। और शास्त्रका चिन्तन करते हुए परमेश्वरने अवधिज्ञानसे विश्वको जान लिया ॥१॥

२

जंभेट्टिया—समदमभूलउ जमसाहालउ।
सुकयहलुग्गमो जिणकप्पदुमो ॥१॥

असरामरएहिं सिंचिज्जमाणु सोहइ पुण्णेण पवड्ढमाणु।
देहे णिच्चं चिय णिम्मलत्तु महिमंदरधरणु अणंतु सत्तु।
५ णीसेयविंदु सुरहित्तु पउरु वणरुहु वि हारणीहारगउरु।
वरवज्जरिसहणारायणासु संघडणु पहिल्लउ पवलधासु।
जहिं जहिं जि तहिं जि सोहाणिहाणु तहुं अवरु वि समचउरंसठाणु।
जगसारु सुरूउ [10]सुलक्खणत्तु पियहियमियवयणु णिहित्तचित्तु।
अइसय दह जासु परं पसिद्ध जम्मेण समउ धम्में णिवद्ध।
१० णं पुरिसरूवपरिमाणु लद्धु विहिकरणब्भासविसेसु[12] सिद्धु।

घत्ता—जसु को वि ण संणिहु भुवणयलि परमजिणिंदहु णिरुवमहो।
ससि दिणयरु मंदरु मयरहरु किं उवमाणउं देमि तहो ॥२॥

३

जंभेट्टिया—गुणगणसण्णयं ववगयदुण्णयं।
तोसियजणमणं को वण्णइ जिणं ॥१॥

जो ससहरु सो तहु कंतिपिंडु चिंतंतु व हुउ सकलंकु खंडु।
दिणयरु तहु तेएं जित्तु णाइं णहयलि भमेवि अत्थवणु जाइ।
५ जो सुरगिरि सो तहु ण्हवणवीढु जं महिमंडलु तं तेण गीढु।
जं जगु तं तहु जसपसरठाणु जं णहु तं तहु णाणप्पमाणु।
जो जलणिहि सो तहु कायकोंडु जो वम्महु सो भयमुक्ककंडु।
जो वरकरि सो वाहणु मयंधु सीहु वि तहु सिंहासणि णिवद्धु।
पसु कामधेणु हयसहियहेउ जो वग्घु सो वि पाविट्ठु जीउ।
१० जो कप्परुक्खु सो कट्ठु कट्ठु देवेण समाणु ण को वि दिट्ठु।

घत्ता—सुर किंकर दासिउ अच्छरउ सुरवइ घरि वावारि जहिं।
तिहुयणु कुडुंबु परमेसरहो सिरिविलासु किं भणमि तहिं ॥३॥

---

२ १. B जिणु। २ MBP अणतसत्तु। ३ MBP णिस्सेय°। ४. MBP पवरु but gloss in P प्रचुरः। ५. MBP °विसह°। ६ MBP संहणणु। ७ MBP पवलथामु but gloss in P प्रचुरतेज. बलं वा। ८ MB तह, P तहुं। ९ MB जगसारसुरूवु, P जगसारसरूउ। १० MBP सलक्खणत्तु। ११ MB °वयणु विहत्त° and gloss in M निर्मलहृदय. P °वयणविहित्त° and gloss आरोपितचित्त.। १२. MBP विसेससिद्धु but gloss in P °विशेष सिद्ध°।

३. १. MBP °पुण्णयं but gloss in P सान्वयम्। २. MBP वज्जिय° but gloss in P व्यपगत°। ३. M णहयलु। ४. P तहु सो। ५. MBP ण्हाणपीढु। ६. MBP कायकुंडु, P ण्हाणकुंडु। ७. P वग्घु वि सो। ८ M पाविट्ठ°। ९. MBP तिहुयणपहुत्तु।

२

जिसका मूल समता और दम है, जिसकी यम नियमरूपी शाखाएँ हैं। जिससे पुण्यरूपी फलोंका उद्गम होता है, ऐसा वह जिनरूपी कल्पवृक्ष, देवोंके अमृतसे सीचा गया और पुण्यसे बढ़ता हुआ शोभित है। उनके शरीरमें नित्य निर्मलता है, और मन्दराचलको धारण करनेकी अनन्त शक्ति है; स्वेद बिन्दुओंसे रहित, प्रचुर सुरभि है; जिनका रुधिर भी हार और नीहारकी तरह गौर वर्ण है। श्रेष्ठ वज्रवृषभनाराच संहनन नामका प्रबल शक्तिवाला उनका पहला शरीर-संघटन है। जहाँ-जहाँ भी देखो वहाँ शोभानिधान, उनका दूसरा समचतुरस्र संस्थान था। जगमे श्रेष्ठ सुरूप और सुलक्षणत्व, प्रिय-हितमित वचन और एकनिष्ठ चित्त। जिनके जन्मके समयसे ही निबद्ध प्रसिद्ध दस अतिशय हैं। मानो उन्होंने पुरुषरूपके परिमाणको प्राप्त कर लिया है (उसकी उच्चताको पा लिया है), और विधाताके निर्माणका अभ्यास विशेष उन्हे सिद्ध हो गया है।

घत्ता—निरुपम परम जिनेन्द्रके समान भुवनतलमें कोई नही है, उनके लिए चन्द्रमा, दिनकर, मन्दर और समुद्रका क्या उपमान दूँ? ॥२॥

३

गुणगणसे युक्त, दुर्नयोसे रहित, जनमनको सन्तुष्ट करनेवाले जिनका वर्णन कौन कर सकता है? जो चन्द्रमा है वह उनकी कान्तिपिण्डका विचार करता हुआ कलंकित और खण्डित हो गया। सूर्य उनके तेजसे जीता जाकर मानो आकाशमें घूमकर अस्तको प्राप्त होता है। जो सुमेरुपर्वत है वह उनका स्नानपीठ है, जो धरतीमण्डल है, उसे उन्होंने ग्रहण कर लिया। जो जग है, वह उनके यशके प्रसारका स्थान है; जो नभ है, वह उनके ज्ञानका प्रमाण है; जो समुद्र है, वह उनके शरीरके प्रक्षालनका कुण्ड है। जो कामदेव है, उसने डरसे अपना धनुष छोड़ दिया है; जो ऐरावत है, वह मदान्ध वाहन है। सिंह भी उनके सिंहासनसे बांध दिया गया है; कामधेनु पशु है, जिसने अपने हितके कारणको नष्ट कर दिया है; जो बाघ है, वह भी पापी जीव है; जो कल्प-वृक्ष है वह भी काष्ठ (कष्ट) कहा जाता है। देवके समान कोई भी दिखाई नही दिया।

घत्ता—जहाँ देव, अनुचर, अप्सराएँ, दासियाँ और इन्द्र घरमे काम करनेवाले हैं, और त्रिभुवन ही परमेश्वरका कुटुम्ब है, वहाँ मैं उनके विलासका क्या वर्णन करूँ? ॥३॥

४

जंभेट्टिया—सेसवलीलिया कीलणसीलिया।
पहुणा दाविया केण ण भाविया ॥१॥

पविरइयविविहकीलावियार समयं रमंति सुरवरकुमार।
तणुतेओहासियतरणिबिंबु घग्घरमालालंकियणियंबु।
५ धूलीधूसरु ववगयकडिल्लु सहजायकविलकोंतलजडिल्लु।
णिवरमणिहिं लइउ महायरेण अमरिंदाणियहिं करंकरेण।
णिज्झइ चिरसंचियसुकयरयणु जेण जि अवलोइउ मुद्धवयणु।
सो तहिं जि णिवद्धउ केम्व ठाइ णवकमलालुद्धउ भमरु णाइ।
केण वि पहसाविउ हंसगामि केण वि वोल्लाविउ भव्वसामि।
१० केण वि काइं वि खेलणउं दिण्णु कइ कीरु मोरु अवरु वि रवण्णु।
गिव्वाणु को वि हुउ तंवचूलु कु वि वरतुरंगु कु वि दिव्वु पीलु।
कु वि मेसु महिसु भुयबलसहल्लु कु वि अप्फोडइ होएवि मल्लु।
सोवंतउ कु वि सुइहारएण परियंदइ अम्माहीरएण।

घत्ता—होहल्लरु जो जो सुहुं सुअहिं पइं पणवंतउ भूयगणु।
१५ णंदइ रिज्झइ दुक्कियमलेण कासु वि मलिणु ण होइ मणु ॥४॥

५

जंभेट्टिया—धूलीधूसरो कडिकिंकिणिसरो।
णिरुवमलीलउ कीलइ बालउ ॥१॥

रंगंतु संतु जं किं पि धरइ इंदु वि ण हु तं थामेण हरइ।
धरणिंदु वि चंदु व संवरेवि लहुयारी हत्थंगुलि धरेवि।
५ वलु जोक्खइ को जि जिणेसरासु कंपावियमेइणिमहिहरासु।
सो णीसासेण य जाइ तासु णहु लंघेवइ फिर सत्ति कासु।
पुणु चूलाकरणिज्जइ कयम्मि उम्मिल्लइ भल्लइ णववयम्मि।
संपुण्णचंदमंडलमुहेण मरुएविसहासइतणुरुहेण।
देवंगवरवरणिवसणेण घोलंतविविहमणिभूसणेण।
१० भुयहेलंदोलियदिग्गएण चलपाणिवेणुदंडग्गएण।
हउ कंदुउ गयणे समुच्छलंतु णं दीसइ सयमहघरहु जंतु।
णिम्मुक्कजीउ णिहिट्ठमग्गु गुणिसंगें को णउ लहइ सग्गु।

४. १. MBP °लंविय° । २. P चिरु । ३. MBP सुद्धवयणु । ४. M जेम । ५ MBP भसलु । ६. M हंसगमणि । ७ MB खेल्लणउं । ८ MBP दिव्वु पीलु । ९ MBP महिसु मेसु । १० B omits this foot । ११ P परिइंदइ । १२ MB हुल्लरु । १३. M जो हो; BP होहो ।

५ १. MBP तं ण हु । २. P वि चंदु वि । ३. MBP जो जि । ४. MBP °करणुज्जइ । ५. MBP देवंगवत्थवर° । ६ MBP भुयवलअन्दोलिय°, but T हेला अनायासम् । ७. MBP दंडुगगएण । ८. M गुणसंगें । ९. B लहउ ।

४

शैशवकी क्रीड़ाशील जो लीलाएँ प्रभुने दिखायीं वे किसे अच्छी नहीं लगीं। विविध क्रीड़ा-विलास रचनेवाले सुरवर कुमार उनके साथ खेलते है, जिन्होंने (जिनने) शरीरके तेजसे सूर्य-बिम्बको पराजित कर दिया है, जिनका नितम्ब (कटि प्रदेश) घुँघरुओंकी मालासे अलंकृत है, जो कटिसूत्रसे रहित और धूल-धूसरित हैं, जो सहज उत्पन्न कपिल केशोसे जटा-युक्त हैं, ऐसे ऋषभ बालकको, राजरानियो और देवोकी इन्द्राणियोंने हाथोंहाथ लिया। जिसने भी उनका मुग्ध मुख देखा उसने अपने चिरसंचित पुण्यरत्नको जान लिया, और वह वही (मुखकमलपर) निबद्ध होकर नवकमलोंपर लुब्ध भ्रमरकी भाँति रह गया। किसीने उस हंसगामीको हँसाया, किसीने उन्हें भव्य स्वामी कहा। किसीने उन्हें कोई खिलौना दिया—कपि, कीर, मोर और कोई दूसरा सुन्दर खिलौना। कोई देव मुर्गा बन गया, कोई श्रेष्ठ अश्व और कोई दिव्य गज। कोई मेष और महिष। कोई भुजबलमें श्रेष्ठ मल्ल होकर ताल ठोकता है, सोते हुए बालकको कोई कानोंको मधुर लगनेवाली लोरी गाकर झुलाता है।

घत्ता—हो-हो, तुम्हारी जय हो, सुखसे सोओ, तुम्हें प्रणाम करता हुआ भूतगण प्रसन्न रहता है, ऋद्धि प्राप्त करता है, और पापके मलसे किसीका भी मन मलिन नही होता ॥४॥

५

धूलसे धूसरित, कटिमें किंकिणियोंका स्वरवाला और अनुपम लीलावाला बालक क्रीड़ा करता है, चलते-चलते जो कुछ भी पकड़ लेता है, उसे इन्द्र भी अपनी पूरी शक्तिसे नहीं छुड़ा पाता। उनकी छोटी-सी अँगुली पकड़नेके लिए धरणेन्द्र और चन्द्र भी समर्थ नही हो पाते। मेदिनी और महीधरको कँपानेवाले जिनेश्वरके बलका कौन आकलन कर सकता है? वह उनके निश्वाससे ही उड़ जाता है, आकाशको लाँघनेकी शक्ति किसके पास है? फिर चूड़ाकर्म हो जाने-पर भली नववय प्रकट होनेपर सम्पूर्ण चन्द्रमण्डलके समान मुखवाले, मरुदेवी महासतीके पुत्र श्रेष्ठ, देवांग वस्त्र धारण करनेवाले, चंचल विविध आभूषणोंसे युक्त, बालकके द्वारा भुजक्रीड़ासे दिग्गजको हिलानेवाले, चंचल हाथसे वेणुके अग्रभागसे आहत गेंद आकाशमे उछलती हुई ऐसी दिखाई देती है, मानो देवेन्द्रके घर जा रही हो। जीव रहित, परन्तु निर्दिष्ट मार्गवाला कौन

णिवडंतउ संचारेवि णेइ समवयसहुं तं छिवहुं मि ण देइ।
पहरें पहरें सो [10]जाइ केम दिसलाणिहे संमुहु सूरु जेम।
५ घत्ता—पडिछंदउ पुरिसरूवकरणे णाइं विहाएं संगहिउ।
णवजोव्वणभावि जाम चडिउ णायणरामरेहिं महिउ ॥५॥

६

जंभेट्टिया—कंचणगोरउ धीरो[1] गोरउ।
परिरक्खियपउ णिववंदियपउ ॥१॥

सिरिरमणीरमणुद्दामरंगु धरणिंदुच्छंगे णिवेसियंगु।
वरुणोवरि पाय परिट्ठवंतु पवणामरि करपल्लव[2] घिवंतु।
५ पणवंति[3] पुरंदरि दिट्ठि देंतु उव्वसिहि सरसु णाडउ णियंतु।
जक्खिदचमरविज्जिज्जमाणु समभाउत्तासियकुसुमबाणु।
फणिंदउवारियविणिरुद्धदारु[4] आलोइयतियसत्थाणसारु।
णं छणससि पवरूययायलत्थु जहिं अच्छइ पहु सिंहासणत्थु।
तहिं पत्तउ कुलयरु भणइ एम्व भो णिसुणि णिसुणि देवाहिदेव।
१० किं ण हवइ कद्दमि कमलसंडु पाहाणपुंजि णावकणयपिंडु।
आसामुहि मिहिरु महासऊहु सिप्पिउडि विमलि[5] मोत्तियसमूहु।
हउं पिउ तुहु सुउ इयं[6] किसहिमाणु भुवणत्तइ किर णाणु जि पहाणु।
णहभायहुं पासिउ को महंतु को तुज्झ वि अग्गइ बुद्धिमंतु[7]।
णियणेहें अहव जडत्तणेण हउं भणमि किं पि धिट्ठत्तणेण।
१५ घत्ता—वालत्तणु दूरज्झिउ जइ वि तो वि ण णारिहिं उधरि मइ।
किज्जइ विवाहु सुकुमार तुह जेण [8]पवड्ढइ लोयगइ ॥६॥

७

जंभेट्टिया—पविमलवोहिणा मोहविरोहिणा।
लद्धसमाहिणा हयदप्पाहिणा ॥१॥
विहुणा उत्तं ताय ण जुत्तं।
भणियमयणं एयं वयणं।
५ कयसंसारं मोहंधारं।
अट्टिणिछण्णं किमिउलपुण्णं।
पयलियमुत्तं मंसविलित्तं।
णाडणिवद्धं अइणोणद्धं।

---

१०. M जाय।

६. १. MBP धीरउ। २ MBP °पल्लउ। ३. MB पणवंत°। ४. MBP °वारु। ५ MBP विमल°। ६ MBP इउ। ७. MP बुद्धियंतु। ८. MBP पवत्तइ।

गुणोंको संगतिसे स्वर्ग प्राप्त नहीं करता ? गिरती हुई बालको वह चलानेके लिए ले जाता है और अपने समान वय बालकोको छूने तक नही देता। प्रहार-प्रहारमे वह इस प्रकार जाता है, जिस प्रकार दिशाकी मर्यादाके सम्मुख सूर्य।

घत्ता—मानो पुरुषका रूप बनानेके लिए विधाताने प्रतिबिम्ब संग्रहीत किया था। जब वह नवयौवनको प्राप्त हुए तो नाग, नर और देवोंके द्वारा पूजे गये ॥५॥

६

स्वर्णकी तरह गोरे, समर्थ और ज्ञानरत, प्रजाकी रक्षा करनेवाले, और राजाओंके द्वारा वन्दित चरण। लक्ष्मीरूपी सुन्दरीके रमणके लिए विस्तीर्ण रंगभूमि, धरणेन्द्रकी गोदमें अपना शरीर रखते हुए, वरुणके ऊपर पैर स्थापित करते हुए, पवनदेवपर हथेली डालते हुए, प्रणाम करती हुई इन्द्राणीपर दृष्टि देते हुए, उर्वशीका सरस नाटक देखते हुए, कुबेरके चमरोंसे हवा किये जाते हुए, समभावसे कामदेवको त्रस्त करते हुए, नागेन्द्ररूपी प्रतिहारसे अवरुद्ध द्वारवाले, और देवताओंके स्थानसारको देखनेवाले प्रभु सिंहासनपर बैठे हुए ऐसे लगते थे, मानो पूर्णचन्द्र महान् उदयाचलपर स्थित हो। तब कुलकर नाभिराज वहाँ आकर इस प्रकार कहते हैं—"हे देवाधिदेव सुनिए, सुनिए, क्या कीचड़में कमलसमूह नही होता ? क्या पत्थरोंके समूहमे नवस्वर्णपिण्ड नही होता ? दिशाके मुखमे महान् किरणोंवाला सूर्य, विमल सीप-सम्पुटमे मोती-समूह, नही होता ? मै पिता, तुम पुत्र, यह कैसा अभिमान ? तीनों लोकोमे ज्ञान ही मुख्य है। आकाश मार्गसे बड़ा कौन है ? तुम्हारे आगे बुद्धिमान् कौन है ? अपने स्नेहसे अथवा जड़तासे धृष्टतापूर्वक मै कुछ कहता हूँ।

घत्ता—यद्यपि तुम्हारा बचपन दूर छूट गया है तब भी तुम्हारी मति स्त्रियोके ऊपर नही है। हे सुकुमार, विवाह कीजिए जिससे लोककी गति बढ़ सके" ॥६॥

७

तब प्रबल बोधवाले, मोहके विरोधी, समाधि प्राप्त करनेवाले और मनके दर्पको दूर करनेवाले प्रभु बोले, "हे तात, कामका समर्थन करनेवाले ये शब्द युक्त नहीं हैं। संसारके बढ़ाने-वाले मोहान्धकारसे युक्त, हड्डियोंसे कसा हुआ, कृमिकुलसे पूर्ण, प्रगलित मूत्रवाला, मांससे लिपटा,

लालागिल्लं रुहिरजलोल्लं ।
१० वहुमलकलुसं धरियपुरीसं ।
कुच्छियगंधं णवविहरंधं ।
णिद्दासत्तं पडइ पमत्तं ।
णिसि णिद्दाणं[1] मडयसमाणं ।
उट्ठइ मुद्धं धणकणलुद्धं ।
१५ पहसमसंतं[3] कारिसंजंतं ।
हिंडइ दियहे णिवडइ विरहे ।
तरुणियणकए असुहरणहए[4] ।
वाहिविलीणं मुक्खारीणं ।
पित्तपलित्तं सेंभपसित्तं ।
२० पवणपहग्गं माणवियंगं ।
सेवंताणं गुणवंताणं ।
होइ ण सोक्खं वड्ढइ दुक्खं ।

घत्ता—परसंभउं वाहासयसहिउं विच्छिण्णउं रयबंधयरु ।
इहुँ जं सुहुं लद्धउं इंदियहिं तं कह सेवइ विउसु णरु ॥७॥

८

जंभेट्टिया—ता कुलकारिणा णायवियारिणा ।
सुहहलसाहिणा भणियं णाहिणा ॥१॥
भो भो कयसुरणरखयरसेव सच्चउ णरजम्मु ण रम्मु देव ।
वंछइ सुहुं भुंजइ णवर दुक्खु वेढंढतें विहडइ बुद्धिचक्खु ।
५ चुक्कइ ण कयंतहो मरणभीरु सच्चउ जि असुइसंभउ सरीरु ।
सच्चउ इंदियसुहुं सुहु ण होइ सच्चउ तुहुं परलोयावलोइ ।
सच्चउ संसारु असारु जइ वि लइ महु उवरोहें वप्प तइ वि ।
कलहंसवाणि वरवयणकमलु परिणहि सपणय पणइणिहिं जमलु ।
तं णिसुणिवि जिणु णियसीसु धुणिवि थिउ हेट्ठामुहु भवियव्वु मुणिवि ।
१० चिंतइ परमेसरु अवहिवंतु णयविणयचारि सिरिधरिणिकंतु ।
अज्ज वि महु चरियावरणु कम्मु तेसट्ठिलक्खपुव्वहं अगम्मु ।
ता जाणिवि णियतणयंतरंगु समहिच्छियरमणीरमणसंगु ।
सहसा गुरुगाइँ पेसियइँ रयणाहरणोहविहूसिएहिं ।

घत्ता—ता कच्छमहाकच्छाहिवइधूयउ धणभरभग्गियउ ।
फलपत्तपुजपल्लवकरिहिं मंतिहिं जाइवि मग्गियउ ॥८॥

१५

७ १ MB णिद्दाणं । २ MBP णिद्दाणं and gloss in P स्थानम् । ३ B पहसमगतं । ४ B [illegible] । ५ MBP [illegible] । ६, MP पित्तपलित्त, B पित्तपलित्तं । ७, MBP दय ।

८, १ M [illegible], PP [illegible] । २ MB [illegible], P [illegible] । ३ MBP [illegible] । ४ MBP [illegible] । ५ MB [illegible] । ६ MBP [illegible] ।

स्नायुओंसे बद्ध, चर्मसे लिपटा, लारको खानेवाला, रक्तजलसे आर्द्र, प्रचुर मलसे कलुष, मैलेको धारण करनेवाला, कुत्सित गन्धवाला, नौ प्रकारके छन्दवाला, (यह शरीर) निद्रामें आसक्त होकर प्रमत्तकी तरह पड़ जाता है, रातमें, सोये हुए मृतकके समान। (सबेरे) मूर्ख उठता है, धनकणसे लुब्ध। कृत्रिम यन्त्रके समान, पथके श्रमसे थका हुआ, दिनमे घूमता है। प्राणोंको हरण करनेवाली युवतियोके विरहमे पड़ता है। रोगसे ग्रस्त, भूखसे खिन्न, पित्तसे प्रदीप्त, श्लेष्मासे युक्त, पवनसे भग्न, मानव-स्त्रियोके शरीरका सेवन करते हुए गुणवानोंको सुख नही होता, दुःख ही बढ़ता है।

घत्ता—दूसरेसे उत्पन्न, सैकड़ों व्याधियोंसे युक्त, क्षायिक कर्मरूपी बन्धका करनेवाला जो सुख इन्द्रियोंसे प्राप्त है, विद्वान् उसका सेवन क्यों करता है?" ॥७॥

८

तब न्यायका विचार करनेवाले शुभफलके वृक्ष कुलकर स्वामी (नाभिराज) ने कहा, "सुर, नर और विद्याधरोंने जिनकी सेवा की है ऐसे हे देव, यह सच है कि मनुष्य जन्म सुन्दर नहीं है, वह सुख चाहता है, परन्तु दुःख भोगता है। बड़े होनेपर बुद्धिरूपी आँख चली जाती है, मौतसे डरता है, परन्तु यमसे नही चूकता। सचमुच मनुष्य शरीर अपवित्रतासे जन्मा है। सचमुच इन्द्रियसुख सुख नही होता। सचमुच तुम परलोकमे सुखकी इच्छामे कुशल हो। सचमुच यद्यपि संसार असार है तब भी हे सुभट, मेरे अनुरोधसे सुन्दर हंसकी तरह वाणीवाली श्रेष्ठ कमलमुखी दो प्रणयिनियोंसे प्रणयपूर्वक विवाह कर लो।" यह सुनकर ऋषभजिन अपना सिर पीटते हुए और होनहारका विचार कर नीचा मुख करके स्थित हो गये। अवधिज्ञानी नय-विनयके विचारक लक्ष्मी-रूपी गृहिणीके कान्त परमेश्वर अपने मनमे सोचते है—"आज भी मुझमे चारित्रावरण कर्म है, जो तेरह लाख पूर्व तक अलंघ्य है।" तब अपने पुत्रके अन्तरंगको, यह जानकर कि वह रमणियोंसे रमण करनेका इच्छुक है, कुलकर नाभिराजके द्वारा प्रेषित और रत्नाभूषणसे विभूषित—

घत्ता—फल, पत्र, फूल और पल्लव हाथमे लिये हुए मन्त्रियोंने कच्छ और महाकच्छ राजाओसे उनकी स्तनभारसे नम्र कन्याएँ माँगी ॥८॥

९

जंभेट्टिया—कयमहिराहहो तिहुयणणाहहो ।
दिज्जउ सवलयं कण्णाजुयलयं ॥१॥

ता कच्छमहाकच्छाहिवेहिं घरु जाइवि सिरपणवियपएहिं ।
दिण्णउ णाहेयहु सुंदरीउ कामालवालरुहवेल्लरीउ ।
५ पारद्धहु परमेसहु विवाहु आयउ सुरयणु हरिकरिविवाहु ।
गय कुसुमंजलिहर लोयवाल सुहि बंधव पुण्णमणोहराल ।
कुंअरिहिं करि अंगुत्थलउ छूढु पहिलउ पेमंकुरु णं विरूढु ।
गुमुगुमियभमियचलमहुयरोहु कउ मंडउ विविहदुवारसोहु ।
माणिक्कमुक्कझुंबुक्कफुरिउ णवसायकुंभखंभेहिं धरिउ ।
१० चंदोवचीणपट्टेहिं छइउ महिदेविइ णावइ मउडु लइउ ।

घत्ता—असलिंदणीलमणिपंतियहिं णिविडकरोलिहिं भूसियउ ।
णं तिमिरहु रवियरतासियहो सरणु णिवासु पयासियउ ॥९॥

१०

जंभेट्टिया—भम्भपसाहिउ विद्दुमसोहिउ ।
संझामेहउ णं महिमागउ ॥१॥

कत्थइ रुप्पयभित्तिहिं सुहाइ सरयब्भखंड णिम्मविउ णाइं ।
कत्थइ वि फलिहुज्जलु भूमिरंगु णं गंगतरंगु पवित्तियंगु ।
५ कत्थ वि मुत्ताहलदिण्णछाउ णं णक्खत्तंचिउ गयणभाउ ।
कत्थ वि हरियारुणमणिवरिट्ठु आहंडलधणुमंडलु व दिट्ठु ।
अहिणवदुमपल्लवतोरणेहिं णावइ वसंतु माणिउ वणेहिं ।
पवणुद्धुयणहयलघुलियकेउ णरणिहयतूरसंगलणिणाउ ।
पाडहियकरंगुलिणिहसणेण दंकुंदकुंदकयणीसणेण ।
१० पडहुल्लउ कुडुवें छित्तु तेम झं धो त्ति दो त्ति रउ हुयउ जेम ।

घत्ता—भंभाभेरीसरसंखुहिउ पहु पुण्णाणिलेण चलिउ ।
आवेप्पिणु तहु मंडवहु तले णीसेसु वि तिहुयणु मिलिउ ॥१०॥

---

९ १ P °पणमियं° । २. K °वेल्लरीउ । ३ MBP कय°: MP °कुसुमंजलियर । ४ MBP मणोरहाल । ५ MP कुवरिहिं; B कुवरेहिं । ६ MBP सरण° ।

१०. १. M संझसमेहउ । २ MBP महि आगउ । ३ MB °तरंगपवित्तिय° । ४ MBP हरियारुणु । ५ MBP दकुकुंविकु । ६. MBPT कुडवें ।

९

"भूमिकी शोभा बढ़ानेवाले त्रिभुवननाथको कंगन सहित अपनी दोनों कन्याएँ दो।" तब कच्छ और महाकच्छ राजाओने घर जाकर, सिरसे चरणोंमें प्रमाण करते हुए, नाभेय (ऋषभ) को कामकी आलवाल (क्यारी) में उत्पन्न होनेवाली लताओंके समान वे सुन्दरियाँ दे दीं। परमेश्वर-का विवाह प्रारम्भ हुआ। अश्व, गज और पक्षियोके वाहनवाला सुरगण विवाहमे आया। कुसुमांजलि लिये हुए लोकपाल (विवाहमे) आये। पुण्यसे मनोहर सुधी बान्धवजन आये। कुमारियोंके हाथमे अँगूठियां पहना दी गयी, मानो पहला प्रेमांकुर फूटा हो। जिसमे गुनगुनाता हुआ चंचल भ्रमरसमूह घूम रहा है, और जिसमे विविध द्वारोसे शोभा है, ऐसा मण्डप बनाया गया, माणिक्य और मोतियोंके गुच्छोसे विस्फुरित, नव स्वर्णस्तम्भोंपर आधारित। चन्द्र चीनांशुक-से आच्छादित मानो धरतीरूपी देवीने मुकुट बांध लिया हो।

घत्ता—सघन किरणोंवाली, स्वच्छ इन्द्रनील मणियोकी पंक्तियोंसे अलंकृत वह मण्डप ऐसा जान पड़ रहा था, मानो रविकिरणोंसे त्रस्त अन्धकारके लिए शरण-स्थल बना दिया गया हो ॥९॥

१०

स्वर्णसे प्रसाधित विद्रुमसे शोभित वह ऐसा लगता है जैसे भूमिगत सन्ध्यामेघ हो। कहीं चाँदीकी दीवालोंसे ऐसा लगता है जैसे शरद्के मेघ निर्मित कर दिये गये हो, कही स्फटिक मणियोसे उज्ज्वल क्रीड़ाभूमि है, मानो पवित्र अंगवाली गंगाकी तरंग हो, कही मोतियों द्वारा की गयी कान्ति है, मानो नक्षत्रोसे युक्त आकाश-भाग हो। कहीपर हरे लाल मणियोंसे वरिष्ठ, वह इन्द्रधनुष मण्डलके समान है। अभिनव वृक्षोंके पल्लव-तोरणोसे ऐसा लगता है कि वनोंने वसन्तका उत्सव मनाया हो। हवासे उड़ती हुई पताकाएँ आकाशतलमे व्याप्त हैं, मनुष्योके द्वारा आहत तूर्योकी मंगलध्वनि हो रही है, पटहवादककी अंगुलीके ताडन, दक कुन्द कुन्दकके शब्द और डण्डेसे पटह इस प्रकार ताडित हुआ कि जिससे झंधोत्ति दोत्ति शब्द हुआ।

घत्ता—भंभा और भेरियोके शब्दोसे क्षुब्ध प्रभु पुण्यरूपी पवनसे प्रेरित होकर चले। अशेष त्रिभुवन आकर उस मण्डपके नीचे मिल गया ॥१०॥

११

११

जंभेट्टिया—हवइ[1] सुहद्दउ करडासद्दउ।
रसइ मुइंगउ हसइ अणंगउ ॥१॥

दं दं दं दं टिविलाइ उत्तु[2] जिणु भणइ हउं मि दंदेण मुत्तु।
अणुहुंजिउ जं भवसइ भमंतु[3] णं भासइ तं तं तं भणंतु।
५ संसारु जि वीणाणिक्कलत्तु मणि संजोयइ[4] वल्लहु[5] कलत्तु।
बहुछिद्दवंसु जं विद्धु जेण तं कहइ णाइं महुरें रवेण[6]।
किं महल्लु जो भोयणउ लहइ सो परु वि परस्स तलप्प सहइ।
काहलवयणइं वित्थारियाइं णं मुहपवणेणोसारियाइं।
आऊरिय णीसासेण संख बहिरंध मूय पंगु वि असंख।
१० कंसालइं तालइं सलसलंति विहडेप्पिणु मिहुणा इव मिलंति।
आलग्गदोरंदुल्लयाइं[7] णं तूरिय णरतरुफुल्लयाइं।

घत्ता—संणद्धइं पहरपडिच्छिरइं आउज्जइं गज्जंति किह।
जिणणाहहु घरि रइरंगि हुए मयणरायसेण्णाइं जिह ॥११॥

१२

जंभेट्टिया—का वि णियाणणं का वि सहीयणं।
मंडइ बहुवरं का वि हु मंदिरं ॥१॥

ता तियसपुरंधिहिं बहुवराहं णरणारीहिं मि पंकयकराहं।
पाडियउ सलोणहं[1] काइं लोणु चामरु जि पडउ संजणियमाणु।
५ गाइज्जइ मंगलु अवरु धवलु संणिहियउ कलसचउक्कु धवलु।
सो सुत्तेण जि सुत्तिउ विहाइ णीसुत्तु ण जडसंगहु मुएइ।
तरुणिहिं उच्चायवि[2] कवउ ण्हाणु गोरंगइ पाणिउ धावमाणु।
सोहइ लायण्णे विप्फुरंतु णावइ चामीयररसु गलंतु।
सियसुहुमइं वत्थइं परिहियाइं आहरणइं ससहररुइहियाइं।
१० मंदारोमालिउ[3] लइउ मउडु दीसइ णं सुरगिरिसिहरु वियडु।
देवहु देवयठवणाइ काइं लोइयमग्गे णिहियाइं ताइं।
आणंदें णच्चिउ सयणु बंधु[4] बद्धउ कंकणु णं णेहबंधु।

घत्ता—भमरावलिजीयारवमुहलु मणसंखोहणपुलइयउ[5] ॥
कंदप्पें रूसिवि जिणवरहो णिययसरासणु वलइयउ ॥१२॥

---

११. १. MBP हुवइ। २. MBP वुत्तु। ३. MBP भवसयभमंतु। ४. BP संजोइय। ५. MBP वल्लह कलत्तु। ६. MBP सरेण। ७ M °दोरंहि दुल्लयाइं; BP °दोरंदिहुल्लयाइं।
१२ १. M सलोयहुं; BP सलोणहु। २. BP उच्चाइवि। ३ MB मदारमालउल्लइय°; P मंदारयमालउ लइय। ४. MBP णच्चिय सयणवघु। ५ MBP मणसंखोहणु।

११

डिमडिमका शब्द होने लगता है। मृदंग बजता है, कामदेव हँसता है। टिविली दं-दं-दं-दं कहती है मानो जिन कहते हैं कि मैं भी नारीयुगलसे मुक्त हूँ। सैकड़ों भवोंमें घूमते हुए जो उन्होंने भोगा है, मानो, वही-वही-वही बोलते हुए यही कहते हैं। संसार ही वीवाका शब्द है जो मनमे वल्लभ और कलत्र (पति-पत्नी) को जोड़ता है। जिस कारणसे बहुछिद्र बाँसको (बाँसुरीके रूपमें) बेधा गया है, मानो वही वह मधुर स्वरमें कह रहा है (कि वधू ही एकमात्र रमण स्थल है)। वह मृदंग भी क्या जो भोजनक (?) (वादक) को प्राप्त होता है। वह श्रेष्ठ होते हुए भी दूसरेका कर-प्रहार सहता है। काहलके शब्द फैल गये हैं, मानो मुखके पवनके द्वारा वे दूर हटा दिये गये है। निःश्वासोंसे शंख आपूरित हो गये, असंख्य बहरे-अन्धे-मूक और पंगु भी आपूरित (धनसे सन्तुष्ट) हो गये है। कंसाल और ताल सलसल करते हैं, मिथुनोंकी तरह अलग होकर फिर मिलते है। दरवाजोपर लगे हुए वृत्त ऐसे मालूम होते है मानो मनुष्यरूपी वृक्षके फूल हों।

घत्ता—प्रहारकी प्रतिइच्छा रखनेवाले सन्नद्ध आतोद्य वाद्य इस प्रकार गरजते हैं मानो जैसे जिननाथके घर रतिरंग होनेपर कामदेवका सैन्य हो ॥११॥

१२

कोई अपने मुखको, कोई सखीजनको, कोई वधूवरोंको और कोई घरको सजाती है। देवोंकी इन्द्राणियो और मनुष्यनियोने कमलकरोंवाले सुन्दर वधूवरोके ऊपर नमक क्यों उतारा ? संजनितमान चामर भी गिर पड़े। मंगल और धवल गीत गाये जाने लगे। धवल चार कलश रख दिये गये। सूत्रसे बँधे हुए वे ऐसे प्रतीत होते हैं कि जैसे निश्रुत (श्रुतरहित = मूर्ख) जड़के संगको नही छोड़ते। तरुणियोके द्वारा उठाकर स्नान कराया गया, गोरे अंगोंपर दौड़ता हुआ और सौन्दर्यसे चमकता हुआ पानी ऐसा लगता है, मानो द्रवित स्वर्णरस हो, सफेद और सूक्ष्म वस्त्र पहना दिये गये और चन्द्रकान्तिके समान कान्तिवाले आभरण भी। मन्दारमालासे युक्त मुकुट पहना दिया गया जो मानो विशाल सुरगिरि-शिखरके समान दिखाई देता है। देवोंके लिए देवताओंकी स्थापना क्यो ? फिर भी लोकाचारसे वहाँ देवता स्थापित किये गये। स्वजन बन्धु आनन्दसे नाच उठे। स्नेहके बन्धनके प्रतीक रूपमे कंकण बाँध दिया गया।

घत्ता—भ्रमरावलीकी डोरीके शब्दसे मुखर मनके क्षोभसे पुलकित कामदेवने क्रुद्ध होकर जिनवरके ऊपर अपना धनुष तान लिया ॥१२॥

१३

जंभेट्टिया—विरइयठाणउ संधियबाणउ ।
उग्गयरोमउ विलसइ कामउ ॥१॥
असुणंतियाइ पुरिमिल्लु भाउ हा किं रईइ पयडियउ राउ ।
हा वम्मह तुहुं[1] मि णिवारिओ सि हा हे वसंत किं पेरिओ सि ।
५ किं वग्गहु लग्गहु अज्जु ईसि णिवडेसहु कइहिं[2] वि तवहुयासि ।
णं गज्जिउ दुंदुहि भणइ एम्व किं तुज्झु वि रिउ देवाहिदेव ।
फणिसुरणरखयरकउच्छवेण विरसंत[3]तूरजयजयरवेण ।
संचल्लिउ परिणहुं जिणकुमारु आवंतहु तहु तहिं धरिउ दारु[4] ।
णं संसारहु घोसिउ णिसेहु हा किं तुहुं परिणहि चरमदेहु ।
१० तहि देवि णिबंधु चवेवि[5] चारु भवणंति पइट्ठउ भुवणसारु ।
फेडिउ मुहवडु णं मेहपडलु दिट्ठउ मुहु णं छणयंदु[6] विमलु ।
कंपिउ कुंअरिहिं[7] णववरभएण करु धरिउ णाइं तिलरिणकएण
कच्छाहिवेण भिंगारु लेवि पालिज्जसु धवलच्छिउ भणेवि ।
घत्ता—जं पाणिउं छूढउं तासु करे विविहासासाहंचियउ ॥
१५ णं तेण मणालवाल[8]णिलउ मोहमहातरु सिंचियउ ॥१३॥

१४

जंभेट्टिया—कयसियसेविहे जसवइदेविहे ।
वरहु अणिंदहे अवि य सुणंदहे ॥१॥
णयणेसु णयण लग्गा तिरिच्छ मच्छेहिं णाइं पडिखलिय मच्छ ।
पियणेहाऊरिय वित्थरंति णावइ सुइसुसिरहिं पइसरंति ।
५ चित्ताइं चित्ति मिलियाइं केम गयवर णइसलिलइं सलिलि जेम ।
कमणीयकामिणीबद्धणेहि णियतणुपडिबिंबउ[1] दइयदेहि ।
दिट्ठउ पडिवक्खासंकियाहिं तं कह व कह व बुज्झिउ पियाहिं ।
एक्केणुव्वाइय एक्क तरुणि वीएण सुएण दुइज्ज घरिणि ।
वेण्णि वि लेप्पिणु णीसरिउ णाहु णं कप्परुक्खु वेल्लीसणाहु ।
१० ओसीससयहिं[2] संथुव्वमाणु वेइयमणिवट्टि जगेक्कभाणु ।
उक्कोइयकामरसोल्लियाहिं आसीणउ सामउं वहुल्लियाहिं ।
घत्ता—वइसाणरु जासु गहेहिं सहुं पणवइ पय महियलि घुलइ ॥
सो वरइत्तु जि कुलसंतियरु होमे[3] धूमु जि संभवइ[4] ॥१४॥

---

१३. १ MB तुहु वि णिवारिओ । २. MBPT कइयवि । ३. MBP विलसंत°; K विरसंतु । ४. MBP वारु । ५. MB चरेवि । ६. P छणइदु । ७. MB कुवरिहिं; P कुमरिहिं । ८. MB मुणालवाल° ।
१४. १ MB पडिविविउ । २ MBP आसीसएहिं । ३. M सोमें । ४. MBP सगिलइ ।

१३

जिसने मुट्ठी बाँध ली है तथा बाणोंका सन्धान कर लिया है, और जिसे रोमांच हो आया है, ऐसा कामदेव विलसित है। अफसोस है कि पूर्वके भावको जानते हुए रतिने रागभावको क्यों प्रकट किया ? हे वसन्त, तुम भी निवारित कर दिये गये थे। हाँ, हे वसन्त, तुम क्यों प्रेरित हो रहे हो। क्यों उत्पात मचाते हो और ईश्वरके पीछे लगते हो ? कभी भी तुम तपकी ज्वालामें पड़ सकते हो। मानो गरजती हुई दुन्दुभि यह कहती है कि हे देवाधिदेव, क्या तुम्हारा भी शत्रु हो सकता है ? नागों, सुरों और मनुष्योंके द्वारा किये गये उत्सव और बजते हुए तूर्यके जय-जय शब्दके साथ जिनकुमार ऋषभनाथ विवाह करनेके लिए चले। आते हुए उन्हें दरवाजेपर रोक लिया गया मानो संसारसे उन्हें मना कर दिया गया हो, कि हे चरम-शरीरी तुम क्यों विवाह करते हो ? वहाँ नेग (निबन्ध) देकर और सुन्दर बात कर भुवनश्रेष्ठ वह भवनके भीतर प्रविष्ट हुए। उन्होंने मुखपट खोला, मानो मेघपटल उघाड़ दिया हो, उन्होंने मुँह देखा मानो पूर्णचन्द्र देखा हो। नव वरके भयसे कुमारियाँ काँप गयीं। स्नेहके ऋणके कारण उन्होंने उनका हाथ पकड़ लिया, कच्छके राजाने भृंगार लेकर और यह कहकर कि धवल आँखोंवाली इनका पालन करना।

घत्ता—जो उनके हाथपर पानी छोड़ा उसने विविध आशाओंरूपी शाखाओंसे सहित, और मनरूपी क्यारीमें स्थित मोहमहावृक्षको सींच दिया ॥१३॥

१४

उसने कहा—'लक्ष्मीसे सेवित यशोवती देवी और अनिन्द्य सुनन्दा देवीका वरण करो।' उनके नेत्रोंसे तिरछे नेत्र इस प्रकार लग गये मानो जैसे मत्स्योंसे मत्स्य प्रतिस्खलित हो गये हों, प्रियके स्नेहसे भरी हुई उनकी आँखें इस प्रकार फैलती हैं जैसे कानोंके विवरोंमें प्रवेश करना चाहती हैं। चित्तोंसे चित्त इस प्रकार मिल गये जैसे गजवरसे गजवर और नदियोंके जल, पानी (समुद्र) में मिल गये हों। सुन्दर स्त्रियोंमें जिसका स्नेह निबद्ध है ऐसे प्रियके देहमें उन्होंने अपना रूप प्रतिबिम्बित देखा। शत्रुपक्षकी आशंका रखनेवाली प्रियाओंने बड़ी कठिनाईसे उसे समझा। उन्होंने एक हाथसे एक तरुणीको उठा लिया, और दूसरेसे दूसरी तरुणीको। दोनोंको लेकर स्वामी निकले, मानो लताओंसे सहित कल्पवृक्ष हो। सैकड़ों आशीर्वादोंसे संस्तुत, विश्वके एकमात्र सूर्य, वह उत्पन्न कामरससे परिपूर्ण वधुओंके साथ बैठ गये।

घत्ता—दूसरे ग्रहोंके साथ अग्नि जिनके चरणोंपर गिरता है और धरतीपर लोटता है, वही वर कुलकी शान्ति करनेवाला है होम करनेसे तो केवल धुआँ उत्पन्न होता है ॥१४॥

१५

जंभेट्टिया—मत्तोचारयं विग्घणिवारयं ।
परिरक्खियजयं तह वि हु तं कयं ॥१॥

देवासुरेहिं संगीयमाणु चलचामरेहिं विज्जिज्जमाणु ।
रमणिहिं सहुं रमणु णिविट्ठु जाम रवि अत्थसिहरि संपत्तु ताम ।
५ रत्तउ दीसइ णं रइहि णिलउ णं वरुणासावहुघुसिणतिलउ ।
णं सग्गलच्छिमाणिक्कु ढलिउ रत्तुप्पलु णं णहसरहु घुलिउ ।
णं मुक्कउ जिणगुणसुद्धएण णियरायपुंजु मयरद्धएण ।
अद्धद्धउ जलणिहिजलि पइट्ठु णं दिसिकुंजरकुंभयलु दिट्ठु ।
चुउ णियछविरंजियसायरंभु णं दिणसिरिणारिहि तणउ गब्भु ।
१० आहिंडिवि भुवणु अलद्धवासु णं गयउ रयणु रयणायरासु ।
लच्छीहि भरंतिहि कणयवण्णु णिच्छुट्टवि कलसु व जलि णिसण्णु ।
वारिहिरहल्लिमालोवणीउ णं उल्हाणउ जगभवणदीउ ।

घत्ता—पुणु संझादेवयसदिस महि रंजिवि राएं विप्फुरिय ।
कोसुंभु चीरु णं पंगुरिवि णाहविवाहइं अवयरिय ॥१५॥

१६

जंभेट्टिया—कज्जलसामलो उडुदसणुज्जलो ।
पत्तउ भीयरो तमरयणीयरो ॥१॥

वियलंतउ मुक्कचउत्थपहरु तें पीयउ संझारायरुहिरु ।
महिपंकयमयरंदु व घणेण आवंतें अलिउलसंणिहेण ।
५ पुणु भुवणु तिमिरछण्णउं विहाइ रविविरहें थिउ कालउं जि णाइ ।
हालिद्दु वत्थु णं परिहरेवि थक्कउ णीलंबरु पंगुरेवि ।
ता उइउ चंदु सुरवइदिसाइ सिरिकलसु व पइसारिउ णिसाइ ।
सइं भवणालउ पइसंतियाइ तारादंतुरउ हसंतियाइ ।
णं पोमाकरयलल्हसिउ पोमु णं तिहुयणसिरिलायण्णधामु ।
१० सुरउब्भवविसमसमावहारु तरुणीथणविलुलिय सेयहारु ।
णं असेयविंदुसंदोहु रुंदु जसवेल्लिहि केरउ णाइं कंदु ।
माणियतारासयचत्तफंसु णं णहसरि सुत्तउ रायहंसु ।
आयासरंगि ससहावगीदु णं कामएवअहिसेयवीढु ।
णं इंदहु धरियउ धवलछत्तु तहेविइ णं दप्पणु णिहित्तु ।

---

१५. १. MBP मंतुच्चारय । २. P णिवद्दु । ३. MBP घुलिउ । ४. MBP गलिउ । ५ MBP कणच्छवि-रंजियगारयब्भु । ६ MB णिच्छुड्ढिवि; P णिच्छुट्टिवि । ७. MBP णिवण्णु । ८ MBP कोसुंभपीरु । ९ MBP °विवाहे ।

१६ १. MBP पत्तो । २ MBP तं । ३. M सुरयरदिसाइ । ४ B सुरतुब्भव° । ५ P असिय° । ६. MPT °संदोहु । ७ BP जय° । ८. MB पोढु ।

१५

यद्यपि वह विघ्नोंको नष्ट करनेवाले और जगकी रक्षा करनेवाले थे, फिर भी उन्होंने सीमित (मर्यादित) आचरण किया। देवों और असुरों द्वारा जिनके गीत गाये जा रहे हैं, जिनपर चंचल चमर ढोरे जा रहे हैं ऐसे वे रमणियोंके साथ तबतक बैठे कि जबतक सूर्य अस्ताचल पहुँच गया। लाल-लाल वह ऐसा दिखाई देता है, मानो रतिका घर हो, मानो पश्चिम-दिशारूपी वधूका केशरका तिलक हो, मानो स्वर्गको लक्ष्मीका माणिक्य गिर गया हो, मानो आकाशके सरोवरसे लाल कमल गिर गया हो, मानो जिनवरसे क्षुब्ध कामदेवने अपने-आप रागसमूह छोड़ दिया हो, समुद्रके जलमें प्रविष्ट सूर्यका आधा बिम्ब ऐसा मालूम हुआ है मानो दिग्गजका कुम्भस्थल हो, मानो अपने सौन्दर्यसे समुद्रके जलको रंजित करनेवाला, दिनलक्ष्मीका गर्भ च्युत हो गया हो, मानो विश्वमें घूमकर भी आधार नहीं पानेके कारण रत्न (सूर्यरूपी रत्न) समुद्रमें चला गया, मानो याद करती हुई लक्ष्मीका स्वर्ण वर्णका कलश छूटकर जलमें निमग्न हो गया हो, मानो समुद्रकी लहरोंकी लक्ष्मीके द्वारा लुप्त विश्वभवनरूपी दीप शान्त हो गया हो।

घत्ता—फिर सन्ध्यादेवताके समान धरती रागसे रंजित होकर इस प्रकार चमक उठी, मानो अपनी लाल साड़ी पहनकर वह स्वामीके विवाहमें आयी हो ॥१५॥

१६

तब काजलकी तरह श्याम, नक्षत्ररूपी दाँतोंसे उज्ज्वल भयंकर तमरूपी निशाचर प्राप्त हुआ। जिसने चौथे प्रहरको छोड़ दिया है, ऐसे विगलित होते हुए सन्ध्यारागरूपी रुधिरको उसी प्रकार पी लिया जिस प्रकार अलिकुलके समान काले आते हुए मेघके द्वारा धरतीरूपी कमलका पराग पी लिया जाता है। फिर अन्धकारसे आच्छन्न विश्व इस प्रकार शोभित है, जैसे सूर्यके विरहसे वह काला हो गया हो, और मानो वह अपना पीला वस्त्र छोड़कर तथा काला वस्त्र (नीलाम्बर) पहनकर स्थित हो। इतनेमें चन्द्रमाका उदय हुआ, मानो पूर्व दिशाने निशाके लिए लक्ष्मी कलशका प्रवेश कराया हो, कि जो (निशा) ताराओंरूपी दाँतोंसे हँसती हुई स्वयं (विश्वरूपी) भवनमें प्रवेश कर रही हो। वह चन्द्र ऐसा मालूम होता है मानो लक्ष्मीके करतलसे छूटा कमल हो, मानो त्रिभुवनकी सौन्दर्य लक्ष्मीका घर हो, मानो सुरत क्रीड़ासे उत्पन्न विषम श्रमको दूर करनेवाला युवतीजनोंके स्तनतलपर हिलता हुआ स्वेदरूपी हार हो, मानो अमृत-बिन्दुओंका सुन्दर समूह हो, मानो यशरूपी लताका अंकुर हो। मानो मणि तारारूपी कमलका स्पर्श हो, मानो आकाशरूपी नदीमें सोया हुआ राजहंस हो, मानो आकाशके रंगमंचपर अपने स्वभावसे युक्त कामदेवका अभिषेकपीठ हो। मानो इन्द्रके लिए रखा गया धवलछत्र हो, मानो उसकी देवी (इन्द्राणी) के द्वारा धारण किया गया दर्पण हो।

घत्ता—वरतारातंदुल घिविवि सिरि ससि परिवट्टुलु रइणिलउ।
दिसिरमणिइ[९] णिसिहि वयंसियहि णावइ दहिएं कउ तिलउ ॥१६॥

१७

जंभेट्टिया—ससहरकंतिइ दिसि पसरंतिइ।
सोहइ लोयउ दुद्धं[१] व धोयउ ॥१॥
ता णिसि पेक्खणउ विलासवंतु पारद्धु झसद्धयरिद्धि देंतु।
आउज्झहुं जेण मुहेण वासु सा पुव्विल्लीदिस[२]मंडवासु।
५ ताहाहिणि उत्तर[३]मुहणिविट्ठु गावणु बतुंरु देवेहिं दिट्ठु।
तहु संमुहियउ मउगाइयाउ उवइट्ठउ सरसइआइयाउ।
तहु दाहिणेण संठियउ सुसिरु तव्वामएसि वेणइयणियरु।
इय एहउ अव[४]णिणिवेसु गणिउ पच्चाहारु वि सो चेव भणिउ।
वज्जइं मज्जिवि साहारणाइ कम्मारवी य संमज्जणाइ।
१० सहसा सुइसोक्खुल्लोलएण उक्खिणु कि[५]उ हिंदोलएण।
थिरवण्णछडयधाराविसेसु कउ णच्चणीहिं पुणु तहिं पवेसु।
उव्वसिरंभाणामालियाहिं आहल्लामेणइवालियाहिं।
घत्ता—आमेल्लियणवकुसुमंजलिहिं देविहिं रंगि[६] पइट्ठियहिं॥
मोहिउ जणु मग्गणमोयणिहिं णं वम्महधणुलट्ठियहिं ॥१७॥

१८

जंभेट्टिया—अहिण[१]यकोच्छरो भुव[२]णिहियच्छरो।
णच्चइ सुरवई डोल्लइ वसुमई ॥१॥
विरइय णडेहिं णाणावियार चारी बत्तीस वि अंगहार।
अण्णण्णदेहपरिठवणभिण्णु करणहं अट्ठोत्तरु सउ वि दिण्णु।
५ चोद्दह[३] वि सीससंचालणाइं भूतंडवाइं रंजियमणाइं।
णव गीव[४]उ णयणसुहावियाउ छत्तीस वि दिट्ठिउ[५] दावियाउ।
अंतिमरसविरहिय जणियहा[६]व अट्ठ वि रस सच्चेयणसहाव।
एक्कें ऊणा पण्णास भाव अवर वि अउव्व[७] भावाणुभाव।
फुरणइं व[८]लणइं अणिवारियाइं णच्चंतहि तहि अवय[९]रियाइं।
१० पुणु पत्तइं वंदियपयरयाइं [१०]छंडणयपओएं णिग्गयाइं।
मुद्धइं पेम्मंधइं रूसवंतु णिण्णेहइं मिहुणइं [११]तूसवंतु।
तारातारावइरुइ हरंतु [१२]विहडियचक्कउलइं मेलवंतु।

---

९ MP दिसरमणिइ।

१७ १. M दुद्ध; BP दुद्धि। २. °दिसि°। ३ MBP उत्तरमुहु। ४ MBP कहव। ५ MBP किउ।
६ B रंग°।

१८ १. MBPT अहिणव°। २ KT भुय°। ३ MB चउदह। ४ BP गीयउ। ५ MBP दिट्ठउ।
६. MBPT °भाव। ७ P अपुव्व। ८ M करणइं। ९ MKT अवधारियाइं। १० MB छड्डुण-यपओएं, PT छड्डणयपओएं। ११ MBP रूसवंतु। १२ BP विहडियचक्कउ।

घत्ता—रतिका घर गोल-गोल चन्द्रमा ऐसा लगता है, मानो दिशारूपी नारीने श्रेष्ठ तारारूपी चावल छिटककर अपनी निशारूपी सहेलीके सिरपर दहीका टीका लगाया हो ॥१६॥

१७

दिशामें प्रवेश करते हुए, चन्द्रमाकी कान्तिसे लोक ऐसा शोभित होता है, जैसे दूधसे धुला हुआ हो। तब रात्रिमे विलाससे युक्त, कामदेवकी ऋद्धिको देनेवाला नाट्य प्रारम्भ हुआ। वाद्य जिस ओर रखे गये थे, वह पूर्व दिशाका मण्डप था। उसके दाये उत्तरमें बैठे हुए तुम्बरु गायक देवोके द्वारा देखे गये। उनके सामने कोमल शरीरवाली सरस्वती आदि बैठी हुई थी। उनके दायें सुषिर आदि वाद्योंके वादक बैठे हुए थे, उनके बायीं ओर वीणावादकोंका समूह था। यह इस प्रकार धरतीपर स्थानक्रम बताया गया, इसीको अन्यत्र प्रत्याहार कहा जाता है। वाद्योंकी मार्जन, सन्धारण और संमार्जन आदि कर्मारवी क्रिया कर सहसा कानोंको सुख देनेवाले हिन्दोलरागसे गान शुरू किया गया। फिर आनन्दित होती हुई उर्वशी, रम्भा, अहिल्या और मेनका आदि नर्तकियोंने स्थिरवर्ण छटक और धारासे (त्रयताल) युक्त प्रवेश किया।

घत्ता—जिन्होंने नवकुसुमोंकी अंजली छोड़ी है ऐसी, रंगशालामें प्रवेश करती हुई देवियोंने कामबाणोंको छोड़ती हुई कामदेवकी धनुषलताओंके साथ लोगोंको मोहित कर लिया ॥१७॥

१८

अभिनयमे निपुण, भुजाओंमें अप्सराओंको धारण कर इन्द्र नृत्य करता है, धरती हिल जाती है। नटोंने नाना प्रकारके चारी और बत्तीस अंगहारोंकी रचना की। एक दूसरेकी देह (शरीरावयव) की स्थापनासे विभक्त, एक सौ आठ करणों (शरीरकी विभिन्न भंगिमाओं) का प्रदर्शन किया। भौहोंके संचालनसे मनको रंजित करनेवाला चौदह प्रकारका संचालन किया, तथा मनोंको रंजित करनेवाले भौहोके ताण्डव भी किये। नेत्रोको सुहावनी लगनेवाली नौ ग्रीवाएँ; तथा छत्तीस दृष्टियाँ भी प्रदर्शित की गयी। अन्तिम रस (शान्त रस) से रहित, हाव उत्पन्न करनेवाले सचेतन स्वरूपवाले आठों रसोंका (प्रदर्शन) किया गया। एक कम पचास अर्थात् उनचास (संचारी) भाव; तथा दूसरे और अपूर्व भाव (स्थायी भाव) और अनुभावोंका भी प्रदर्शन किया। नृत्य करती हुई उन्होंने अनिवारित स्फुरण, वलन आदिकी अवतारणा की। फिर वन्दित पदरजको प्राप्त होती हुई छड्डुनक (ताल विशेष) के साथ चली गयी। मुग्ध प्रेमान्धोको क्रुद्ध करता हुआ, स्नेहहीन जोड़ोको सन्तुष्ट करता हुआ, ताराओं और चन्द्रमाकी कान्तिका अपहरण करता हुआ वियुक्त चक्रवाक समूहका मेल कराता हुआ,

घत्ता—उट्ठिउ रविबिंबु दियहसिरिए अरुणकिरणमालाफुरिउ ॥
[13]उययइरि महारायहु उवरि [14]णवरत्तउं छत्तु व धरिउ ॥१८॥

१९

जंभेट्टिया—ससिपायाहया दुक्खं पिव गया ।
अलिरवरसणिया रुयइ[1] व भिसिणिया ॥१॥
दंसइ पविमलं[2] ओसंसुयजलं
तं[3] पसरियकरो पुसइ व तमिहरो ॥२॥
५ णं[4] सोहइ दीविये[5] जंबुदीउ णहमहि[6]सरावपुडि दिण्णु दीउ ।
अद्धुग्गमंतु णं लोयणयणु णं एंतहु सेसहु सीसरयणु ।
णं वाडवग्गि णहसायरासु णं दिस[7]णिसियरिमुहमासगासु[8] ।
णं ताहि जि केरउ अहरबिंबु णं णिसिवेहुवहि[9] पयमग्गु तंबु ।
णं वासरविडवंकुरु विणित्तु णं जग[10]करंडि पवलउ णिहित्तु ।
१० ता तहिं सोहणि संसारसारु कासु वि कडिसुत्तउ दोरु[11] हारु ।
कासु वि हयगयचेलिउ रवण्णु कासु वि धणु[12] धण्णु सुवण्णु अण्णु ।
जो जं मग्गइ तं [13]तासु दिण्णु काणीणदीणदालिद्दु छिण्णु ।
संमाणियाइं सुहिपरियणाइं चोत्थइ दिणि मुक्कइं कंकणाइं ।
वित्तइ विवाहि विहवेण साहु थिउ रज्जु करंतु णएण णाहु ।
१५ घत्ता—जसवइसुणंदरायाणियहिं पणएं हियवइ भावियउ ॥
[14]सियपुप्फयंतु सो रिसहपहु[15] भरहखेत्तणिवसेवियउ ॥१९॥

इय महापुराणे तिसट्ठिमहापुरिसगुणालंकारे महाकइपुप्फयंतविरइए महाभव्वभरहाणु-
मण्णिए महाकव्वे कुमारविवाहकल्लाणं णाम चउत्थओ परिच्छेओ सम्मत्तो ॥ ४ ॥

॥ संधि ॥ ४ ॥

घत्ता—अरुण किरणमालासे स्फुरित सूर्यबिम्ब अपनी दिवसश्रीके साथ ऐसा उदित हुआ, जैसे उदयाचलरूपी महाराजपर नवरक्त छत्र रख दिया गया हो ॥१८॥

१९

जो (कमलिनी) चन्द्रकी किरणों (पादों = पैरों किरणों) से आहत होकर दुःखको प्राप्त हुई थी, भ्रमरोंके शब्दोंसे गुंजित ऐसी कमलिनी जैसे रो उठती है, और अपने प्रचुर ओसरूपी आँसुओंको दिखाती है, अन्धकारका हरण करनेवाला सूर्य मानो उसके आँसुओंको पोंछता है। जम्बूद्वीपमें आलोकित वह (सूर्य) ऐसा शोभित होता है मानो आकाश और धरतीरूपी शराव-पुटमें दीप रख दिया गया हो। मानो अधखुला लोकनेत्र हो, मानो आते हुए शेषनागके सिरका रत्न हो, मानो आकाशरूपी सागरकी वडवाग्नि हो, मानो दिशारूपी राक्षसीके मुँहका कौर हो, या मानो उस (दिशारूपी राक्षसी) का अधरबिम्ब हो। मानो निशारूपी वधूका आरक्त पद-मार्ग हो, मानो दिवसरूपी वृक्षका अंकुर निकल आया हो, मानो विश्वरूपी पिटारेमें प्रवाल रख दिया गया हो। ऐसे उस महोत्सवमें किसीको विश्वश्रेष्ठ कटिसूत्र, दोर (डोर) हार, किसीको हृदयगत सुन्दर वस्त्र, किसीको धनधान्य, सुवर्ण और अन्न जिसने जो माँगा, उसे वह दिया गया। कानीनों और दीनोंका दारिद्र्य दूर कर दिया गया। सुधीपरिजनोंका सम्मान किया गया। चौथे दिन कंगन छोड़ दिया गया। वैभवके साथ अच्छी तरह विवाह हो जानेपर स्वामी न्यायके साथ राज्य करने लगे।

घत्ता—यशोवती और सुनन्दा रानियोंके द्वारा प्रणय और हृदयसे चाहे गये श्वेतपुष्प (जुही) के समान वह ऋषभ, भरतक्षेत्रके राजाओंके द्वारा सेवित हुए ॥१९॥

इस प्रकार त्रेसठ महापुरुषोंके गुणालंकारोंसे युक्त इस महापुराणमें महाकवि पुष्पदन्त द्वारा विरचित तथा महाभव्य भरत द्वारा अनुमत महाकाव्यका कुमारीविवाह-कल्याण नामका चौथा परिच्छेद समाप्त हुआ ॥४॥

संधि ५

पियमेलइ गयकालइ एक्कहिं दिणि सुहकारिणि ॥
णिरुवमसइ संघुरंगइ[1] णाहितणयमणहारिणि[2] ॥ ध्रुवकं ॥

१

रचिता—छण्णसिसिरयरकिरणणिहदिहियरघरसयणयलि[3][4] सुत्तिया ।
पविमलसरलकमलदलवलयसुकोमललडियगत्तिया ॥१॥

जंसवइ[5] जसेणाहियं सोहमाणा	णवणलिणहंसी व णिद्दायमाणा ।
सुरवहुपयालत्तयालित्ततीरं	णिवडियदरीरंधगंभीरणीरं[6] ।
५ हरिसरहओरालिपूरियसुसाणुं	ससिकंतपब्भारणिज्जित्तभाणुं[7][8] ।
करिंदसणणिब्भिण्णसोवण्णरायं	सिविणयगयं पेच्छए सेलरायं ।
ससहरमलंकारभूयं णिसाए	रविमवि मुहे णीहरंतं दिसाए ।
सयदलदलालंबिरुंटंतभिंगं[9]	सरवरमसारिच्छतिंगिच्छ[10] पिंगं ।
दसदिसि बहुप्पिच्छरंगंतभंगं	जलखलणपक्खालियइंदसिंगं ।
१० अमरिसझसप्फालणुट्ठंतसद्दं	करिमयरमालारउद्दं समुद्दं ।
सयलमवि [11]आलोयए संविसंतं	णियवयणपोमम्मि छोणीयलं तं ।

घत्ता—इय पेच्छिवि [12]परिहच्छिवि सुप्पहाइ सीमंतिणि ॥
[13]कयराइहो गय णाहहो घरु[14] पुरंधिचूडामणि ॥१॥

GK have at the commencement of this Samdhi the following stanza :—

भ्रूलीला त्यज मुग्ध संगतकुचद्वन्द्वादिक वक्षसा
मा त्वं दर्शय चारुमध्यलतिकां तन्वङ्गि कामाहता ।
मुग्धे श्रीमदनिन्द्यखण्डसुकवेर्बन्धुर्गुणैरुन्नतः
स्वप्नेऽप्येष पराङ्गनां न भरतः शौचोदधिर्वाञ्छति ॥

MBP have the same stanza, but M reads °द्वन्द्वादिगर्वाक्षमा and BP read °द्वन्द्वादिगर्वक्रिया for द्वन्द्वादिकं वक्षसा and MBP read शौचाम्बुधि for शौचोदधि. ।

१ १. MBP सिंधुर° । २. M °मयहारिणि । ३ M छणससिरयणकिरण°; B °ससिरयर° । ४. MB °सयणयल° । ५. MBP have before this line रमणीयलता नाम छंदो, GK have रमणीयलता । ६. M णिवडय°, P णिविडिय° । ७ MB ससीकंत° । ८ MB °णिब्भिण्णभाणुं । ९ BP° रुट्टंत° । १० M °तिग्गंछ°, BP °तिग्गिछि° । ११. B समालोवए, P मालोयए । १२ MBP परियच्छिवि । १३ M कयरायहो । १४. M घर° ।

सन्धि ५

१

प्रियसे मिलाप करानेवाले समयके बीतनेपर एक दिन, अनुपम सती शुभकारिणी, ऋषभनाथकी अत्यन्त प्रिय, गजगामिनी, स्वच्छ कमल-समूहके समान कोमल शरीरवाली, पूर्णिमाके चन्द्रमाके समान शीतल शयनतलमे, अपने यशसे अत्यधिक शोभित यशोवती इस प्रकार सो रही थी, मानो नवकमलोंपर हंसिनी सो रही हो। स्वप्नमे उसने एक शैलराज देखा, जिसके तट देव-बालाओंके पैरोंके आलक्तकसे आरक्त थे, जिसकी घाटियोंके रन्ध्रोंसे गम्भीररूपसे जल गिर रहा था, जिसके शिखर सिंहों और श्वापदोंकी गर्जनाओंसे निनादित थे, अपने चन्द्रकान्त मणियोंकी आभासे जिसने सूर्यबिम्बको जीत लिया था। जिसने हाथीदाँतोसे स्वर्णरागको निस्तेज कर दिया था। (फिर उसने देखा) निशाके अलंकारभूत चन्द्रमाको, पूर्वदिशासे निकलते हुए सूर्यको, भ्रमरोंसे गूँजते हुए कमलोंसे युक्त और अद्वितीय परागसे पीले सरोवर को, जो अत्यन्त वेगशील लहरोंसे दशों दिशाओंमें चंचल है, जो जलोंके स्खलनसे गिरिशिखरोंका प्रक्षालन करनेवाला है, जिसमे अमर्षसे भरे हुए मत्स्योंका उत्फाल शब्द उठ रहा है, ऐसे मत्स्यों और मगरोंसे भयंकर समुद्रको उसने देखा। समस्त धरतीतलको अपने मुखरूपी कमलमे प्रवेश करते हुए देखा।

घत्ता—यह देखकर इन्द्राणियोमें श्रेष्ठ वह सीमन्तिनी प्रेम करनेवाले अपने स्वामीके भवनमे सवेरे-सवेरे यह पूछनेके लिए गयी ॥१॥

२

रचिता—पभणइ सुणंसु[1] पुरिसहरि सुरगिरि ससि रवि सरवरोयंही[2] ।
मइं णिसि सिविणयम्मि दिट्ठा पियम गिलिया इमी मही ॥१॥

तं णिसुणेवि णराहिउ घोसइ चक्कवट्टि तुह तणुरुहु होसइ ।
मंदरेण दिट्ठेण पियारउ महिरायाहिराय गरुयारउ ।
५ ससहरेण सूहउ सोमाणणु कंतिवंतु कंतासुहमाणणु ।
सूरें सूरु पयावें दूसहु सरवरेण पयडियसिरिसंगहु ।
रयणायरेण सवंसपहायरु चंडि चारु चोद्दहरयणायरु ।
महिआहारें रिउ भंजेसइ छक्खंड वि मेइणि भुंजेसइ ।
कइहिं मि दियहहिं होइ णिरुत्तउ देवि[3] ण चुक्कइ जं मइं वुत्तउ ।
१० तो सव्वत्थसिद्धिअहिहाणहु[4] सइं अहमिंदु चलिउ सविमाणहु ।
पुव्वपुण्णसंपयसंपुण्णउ जसवइदेविहि गब्भि णिसण्णउ ।

घत्ता—भुवणुब्भवि[5] सिसुसंभवि जेहिं कयउ कालउ मुहुं ॥
ते दुज्जण अवरु वि थण णिवडिहिंति हेट्ठामुहु ॥२॥

३

रचिता—सुयभरपसरमाणछेउयरे[1] वियलियं वलित्तयं ।
तिहुयणवइजयंकरेहारहियं व कयं जयत्तयं ॥१॥

राएं गब्भि थिएण[2] ण णायउ पंडुरु तोंडु[3] काइं संजायउ ।
दियहि पसत्थि मुहुत्ति सुणिम्मलि णियठाणुण्णइं गइ गहमंडलि ।
५ जसवइयहि वियसियपंकयमुहु णवमासहिं उप्पण्णउ तणुरुहु ।
ता तहिं णहि सुरदुंदुहि वज्जइ णं संतोसें सायरु गज्जइ ।
दाणु देंति वारण वणि संठिय कीस ण माणुस हरिसुक्कंठिय ।
मेह सवंति सुगंधइं सलिलइं दिम्मुहाइं णिरु जायइं विमलइं ।
आयासु वि दीसइ मलवज्जिउ णीलउ भायणु णं संमज्जिउ ।
१० मंदरदंडएण वित्थरियउ[4] एक्कछत्तु णं कुयरहु[5] धरियउ ।
तारामोत्तियदामहिं भूसिउ एहु जि राणउ सव्वहुं पासिउ ।
महि सइं खल खलंति चउपासिहिं णं वज्जरइ महाणइघोसिहिं ।

घत्ता—सरणलिणहिं णं णयणहिं पइ णियंति महु रुच्चइ ॥
मरुचलियहिं परिघुलियहिं वेल्लीभुयहिं पणच्चइ ॥३॥

---

२ १ MBP णिसुणि । २ MBP °वरोवही । ३ M देव । ४ MBP °अहिणाणहु । ५. T records a p सुयणुब्भवि and adds : सुयणुब्भवि इति पाठे सुजनानामुत्कर्षस्य भवः ।

३. १. M छवओयर°; BP छउउयर°, but gloss in P क्षामोदरे । २. MB गब्भित्थिएण, P गब्भित्थइं । ३. MBP तुंडु । ४. MBPK विच्छुरियउ । ५ MBP कुमरहु ।

२

वह बोली—हे पुरुषश्रेष्ठ, सुनिए। मैंने रात्रिमें स्वप्नमें सुमेर पर्वत, चन्द्रमा, सूर्य, सरोवर, समुद्र और निगली जाती हुई धरती को, हे स्वामी, देखा है। यह सुनकर राजा घोषणा करते हैं, "तुम्हारा चक्रवर्ती पुत्र होगा, मन्दराचलको देखनेसे प्रियकारक महान् महाराजाधिराज होगा। चन्द्रमाको देखनेसे सुभग और सौम्य मुखवाला, कान्ताका सुख माननेवाला और कान्तिसे युक्त होगा। सूर्यको देखनेसे शूरवीर और अपने प्रतापसे असह्य होगा। सरोवरको देखनेसे उसका स्पष्ट लक्ष्मीसंग्रह होगा। समुद्र देखनेसे वह अपने वंशका सूर्य होगा, प्रचण्ड सुन्दर और चौदह रत्नोंका आश्रय। पृथ्वीका अहार देखनेसे वह शत्रुका नाश करेगा और छह खण्ड धरतीका भोग करेगा। कुछ ही दिनोंमे हे देवी तुम्हारा पुत्र होगा, जो कुछ मैने कहा है वह चूक नहीं सकता।" तब सर्वार्थसिद्धि नामक अपने विमानसे चलकर पूर्वपुण्यकी सम्पत्तिसे भरपूर अहमिन्द्र स्वयं यशोवती देवीके गर्भमें आकर स्थित हो गया।

घत्ता—भुवनका उत्कर्ष है जिसमें ऐसे पुत्रका जन्म होनेपर जिन्होंने अपना मुंह काला कर लिया, ऐसे दुर्जन और स्तन अपना मुख नीचा करके गिर गये ॥२॥

३

पुत्रके भारके प्रसारसे क्षीण उदरकी त्रिबलि समाप्त हो गयी। मानो तीनों लोकोंको त्रिभुवनपतिकी विजयकी चिह्नरेखासे रहित कर दिया गया हो। यह नही जाना जा सका कि गर्भमें स्थित रागसे उसका मुख सफ़ेद क्यों हो गया? प्रशस्त दिन, निर्मल मुहूर्त और ग्रहोंके अपने-अपने स्थानपर स्थित होनेपर नौ माहमे यशोवतीके विकसित मुखवाला सुन्दर पुत्र उत्पन्न हुआ। तब आकाशमे देवोंकी दुन्दुभि बज उठती है मानो सन्तोषसे सागर गरजने लगता है, मानो (लोगोंके) दान देनेपर हाथी वनमे चले जाते हैं, मनुष्य हर्षसे क्यों उत्कण्ठित नही होते। मेघ सुगन्धित जल बरसाते है, दिशाओंके मुख अत्यन्त निर्मल हो जाते हैं, आकाश भी मलसे रहित दिखाई देता है मानो नीले वर्तनको माजकर खूब साफ कर दिया गया हो, या मानो मन्दराचलके दण्डपर आधारित एकछत्र कुमारके ऊपर रख दिया गया है। "ताराओंके समान मोतियोंसे विभूषित यह राजा सबसे श्रेष्ठ है," मानो धरती चारों ओर महानदियोंके घोषोंसे कलकल करती हुई और दुष्टोंको हटाती हुई यही कहती है।

घत्ता—सरोवरके कमलोंरूपी नेत्रोंसे तुम्हे देखती हुई (धरती) मुझे (कविको) अच्छी लगती है, हवाओंसे चंचल और आन्दोलित लतारूपी बाहुओंसे मानो वह नृत्य करती है ॥३॥

४

रचिता—णियगुणरयणणियरकरमंजरिधवलियणिवइवंसओ ।
विसरिससुकयसाहिसाहासिउ वड्ढइ रायहंसओ ॥१॥

णामकरणचूलाकरणाइउ सव्वु वि कयउ विसेसविराइउ ।
जणणीजोव्वणफलगोंछो इव विहलियलोय कप्पवच्छो इव ।
५ सुहिवयणामयबिंदुपवेसु व मित्तचित्तसंगहणणिवेसु व ।
गुणसंसापयासमग्गो इव रोयसोयवज्जिउ सग्गो इव ।
पिउसहावसंचउ रूढो इव बंधुणेहबंधणवेढो इव ।
किंकरयणमणचिंतामणि विव अरिमहिहरसिरसोदामणि विव ।
णिहिलणायसब्भावणिही विव हरणकरणउद्धरणविही विव ।
१० भारसोढु गरुययरु मही विव भूरिभोयभारिल्लु अही विव ।
दुणिहालउ मज्झण्णरवी विव वज्जदेहु जंभारिपवी विव ।
लायण्णंबुपवाहसरो इव विलयावंदहुं कुसुमसरो इव ।
घत्ता—सिरि उरयलि महि असिदलि भुइ[१०] जयसिरि जयकारिणि ॥
जसु णिवसइ मुहि सरसइ कित्ति तिलोयविहारिणि ॥४॥

५

रचिता—गिरिसरिकलसकुलिसकमलंकुसविसझसलक्खणाहिओ ।
सुरणरखयररमणिवीणारवगाइयजसपसाहिओ ॥१॥

णं सोहग्गपुंजु णिव्वडियउ णाइं पयावें विहिणा घडियउ ।
जलिवि जलिवि उल्हाइ ण जीवइ जासु भएण णाइं सिहि णीवइ ।
५ अइपमत्तु पुणरवि णासंघइ जडसंगु वि मज्जाय ण लंघइ ।
पालियवेलउ जसु मयरालउ जासु भएण जि थिउ जंतं कालउ ।
णायराउ खुल्लउ कीडुल्लउ चंदु वि जायउ चंदगहिल्लउ ।
पक्खि पक्खि सो दीसइ भग्गउ पवणु वि गमणब्भासहु लग्गउ ।
इंदु वि इंदधणुहु गुणि णाणइ अज्ज वि तं तेहउ जणु जाणइ ।
१० णियकरि पहरणु कहिं मि ण दावइ विणएण जि णवंतु घरु आवइ ।
घत्ता—अलिउलचल चुयमयजल महिहरभिंत्तिवियारण ॥
अविहियसर कुंचियकर जसु तसंति दिसिवारण ॥५॥

---

४ १. M सुकय° । २ MBP णामकरणु । ३ P चूडा° । ४ MBP °गुंछो । ५ P विहसिय° । ६. MB वुहवयणामय°; P वुहणयणामय° । ७. MBP घण° । ८ P °सिरि । ९ MBP गरुययरु । १०. MBP भुयजुइ ।

५ १ B पमुत्तु । २ MBP व । ३. MP जमु । ४. M इंदधणुहि गुण, BP गुणु । ५. MBP दिसवारण ।

४

अपने गुणरत्नसमूहकी किरणमंजरीसे राजवंशको धवलित करनेवाला और असामान्य पुण्य वृक्षकी शाखासे आश्रित वह राजहंस बड़ा होने लगा। नामकरण और चूड़ाकरण आदि उसका सब कुछ विशेष शोभाके साथ किया गया। जो माँके यौवनरूपी फलके गुच्छेके समान, विह्वल लोगोंके लिए कल्पवृक्षके समान, सुधि-वचनामृतके लिए बिन्दुप्रवेशके समान, मित्रोंके चित्तोंके संग्रहके लिए आश्रयस्थानके समान, गुणोंकी प्रशंसाके लिए प्रकाशन मार्गके समान, रोग और शोकसे रहित स्वर्गके समान, पिताके स्वभाव सचयके समान, बन्धुस्नेहके बन्धनसे घिरे हुएके समान, अनुचर जनोंके लिए चिन्तामणिके समान, शत्रुरूपी पर्वतोंके सिरोंके लिए गाजके समान, निखिल न्याय और सद्भावकी निधिके समान, नाश, निर्माण और उद्धारमें विधाताके समान, भार सहन करनेवाली धरतीके समान, भूरिभोग (प्रचुर फन / प्रचुर भोग) वाले नागके समान, दुर्दर्शनीय मध्याह्न रविके समान, इन्द्रके वज्रके समान वज्र शरीर, सौन्दर्य समुद्रके प्रवाहके समान, वनितासमूहके लिए कामदेवके समान था।

घत्ता—जिसके वक्षःस्थलपर लक्ष्मी, असिदलपर धरती, बाहुओंमें जय करनेवाली जयश्री और मुखमें सरस्वती निवास करती है और जिसकी कीर्ति तीनों लोकोंमें विहार करनेवाली है ॥४॥

५

जो गिरि, नदी, कलश, वज्र, कमल, अंकुश, वृषभ और मत्स्यके लक्षणोंसे अंकित है तथा जो सुरों, नरों एवं विद्याधरोंकी वनिताओंकी वीणाध्वनिमें गाया जाता है। जो यशसे प्रसाधित है। जो मानो (कसौटीपर) कसा गया सौभाग्यपुंज है, मानो जिसे प्रयाससे विधाताने गढ़ा है, जिसके भयसे आग जल-जलकर अंगार होती है, जीवित नहीं रहती, और अन्तमें शान्त हो जाती है। समुद्र यद्यपि प्रमादी है, फिर भी (जिसके डरसे) स्थिर नहीं रहता, जड़का (जल, जड़) संग करनेपर भी मर्यादाका उल्लंघन नहीं करता, जिस भरतकी मर्यादाका समुद्र पालन करता है, जिसके भयसे यम स्थिर हो गया है, जिसके लिए नागराज एक क्षुद्र कीड़ा है। चन्द्रमा भी जिसके लिए मयूरचन्द्रके समान है। वह (चन्द्रमा) पक्ष-पक्षमें क्षीण होता दिखाई देता है; और पवन भी जिसके भयसे चलनेका अभ्यास करने लगा है। इन्द्र भी अपने धनुषपर डोरी नहीं चढ़ाता, और आज भी लोग उसी रूपमें जानते हैं। वह अपने हाथमें शस्त्र कभी नहीं दिखाता। वह विनयसे विनम्र होकर घर आता है।

घत्ता—जो अलिकुलसे चंचल है, जिनसे मदजल चू रहा है, जो पहाड़ोंकी दीवारोंका विदारण करनेवाले हैं, जो गर्जना नहीं कर रहे हैं, जिनकी सूँड़ें टेढ़ी हैं, ऐसे दिग्गज जिससे त्रस्त रहते हैं ॥५॥

६

रचिता—करिसिरदलियरत्तलित्तुग्गयमोत्तियखइयकेसरो ।
सिसुससिकुडिलचडुलविज्जुज्जलदाढाजुयलभासुरो ॥१॥

एहओ वि हरि विप्फुरियाणणु जासु भएण व सेवइ काणणु ।
णवजोव्वणि चडंतु परमेसरु सुरवरकरिकरथिरदीहरकरु ।
५ सो सिक्खविउ सपिउणा सव्वइं कालक्खरइं गणियगंधव्वइं ।
णाडयाइं बहुभावरसत्थइं णरणारिहिं लक्खणइं पसत्थइं ।
तव्भूसायरणाइं विचित्तइं वम्महचरियइं हियवहचित्तइं ।
गंधपइत्तिउ रयणपरिक्खउ मंत तंत वरहयगयसिक्खउ ।
कोंतगयासिघायसंताणइं चक्कचावपहरणविण्णाणइं ।
१० देसदेसिभासालिविठाणइं कइवायालंकारविहाणइं ।
जोइसछंदतक्कवायरणइं मल्लगाढजुज्झइं कयकरणइं ।
वेज्जणिघंटोसहिवित्थारु वि बुज्झिउ सव्वलोयवावारु वि ।
चित्तलेप्पसिलवरतरुकम्मइं एवमाइ अवराइं मि रम्मइं ।

घत्ता—पयणयसुरु तिहुयणगुरु जासु सइं जि वक्खाणइ ।
१५ अइविमलउ सो सयलउ कलउ किं ण परियाणइ ॥६॥

७

रचिता—पुणरवि णियसुयस्स सो णिवरिसि णेहवसेण भासए ।
गिरिथिणिधरणितरुणिपरिपालणविहिविसयं पयासए ॥१॥

पभणइ पहु भो पढमणरेसर अत्थसत्थु णिसुणहि भरहेसर ।
ववसाएं सुसहाएं संपय होइ णिरुत्तउ पयपाडियपय ।
५ अलसत्तें खलसंगें णासइ सा मइ एहउ तुह सुय सीसइ ।
असहायहु जगि किं पि ण सिज्झइ हत्थि वि सुत्तसमूहें वज्झइ ।
जाइ णाव मारुइण विलग्गें जलइ जलणु वासु वि संसग्गें ।
मंति सूरु दुहसहु सुहि सहयरु तासु करेज्जसु कज्जि सहायरु ।
जगि कज्जु जि मिचारिहि कारणु तेण ण किज्जइ तहिं अवहेरणु ।
१० तं पि बुद्धिदारेण समुब्भइ बुद्धि वि वुड्ढहं सेवइ लब्भइ ।

घत्ता—सिरपलियहिं मुहवलियहिं मुइं जराइ णिब्भच्छिय ॥
जे सत्थइ कम्मत्थइ कुसला ते मइं इच्छिय ॥७॥

---

६. १. MBP णरणारी । २. P हयवरगयं° । ३. B वेज्ज । ४. MBP सयल ।
७. १. MBP णिनुणिहि । २. MBP हत्थि वि । ३. MB सुहदुहसहुः P दुहमुहसहु । ४. MBP बुद्धिचारेण । ५. B वुड्ढसेवइ । ६. MP सिरि पलियहिं; B सरे पलियहिं । ७. MBP मुय ।

६

हाथियोंके सिरोंसे दलित तथा रक्तसे लिप्त निकले हुए मोतियोंसे जिसकी अयाल विजड़ित है, जो बालचन्द्रके समान कुटिल और चंचल बिजलीके समान उज्ज्वल अपनी दोनों दाढ़ोंसे भास्वर है, ऐसा तमतमाते मुखवाला सिंह भी, जिसके भयसे जंगलका सेवन करता है। ऐरावतकी सूँड़के समान जिसके बाहु दीर्घ और स्थिर हैं ऐसा परमेश्वर भरत नवयौवनको प्राप्त होने लगा। उसके पिताने उसे सब सिखाया। काले (स्याहीसे लिखित अक्षर) अक्षर गवित गन्धर्व विद्या, विविध भाव और रससे परिपूर्ण नाटक, नर-नारियोके प्रशस्त लक्षण, उनकी भूषाओंके निर्माण, स्त्रियोंके हृदयको चुरानेवाले कामशास्त्रके चरित, गन्धकी प्रयुक्तियाँ, रत्नपरीक्षा, मन्त्र-तन्त्र, श्रेष्ठ अश्व और गजकी शिक्षाएँ, कोंत, गदा और तलवारोंके आघातोंकी परम्परा, चक्र-धनुष-प्रहरणोके विज्ञान, देश-देशीभाषा-लिपि-स्थान, कवि वागलंकार-विधान, ज्योतिष-छन्द-तर्क और व्याकरण, आवर्तन-निवर्तन आदि करणों (पेचों) से युक्त मल्लग्राह युद्ध, वैद्यक-निघंटु, औषधियोंका विस्तार, और सर्वलोक-व्यवहार भी उसने समझ लिये। चित्रलेप, मूर्ति और काष्ठकला आदि दूसरे-दूसरे सुन्दर कर्म सीख लिये।

घत्ता—जिसके चरणोंमे देव नत हैं ऐसे त्रिभुवनगुरु (ऋषभ जिन) जिसे स्वयं शिक्षा देते हैं अत्यन्त विमल उन समस्त कलाओंको वह भरत क्यों नही जानेगा ॥६॥

७

फिर वह राजर्षि ऋषभ स्नेहके वशीभूत होकर अपने पुत्रसे कहते हैं और उसे, गिरि है स्तन जिसके, ऐसी धरतीरूपी तरुणीके पालन करनेको विधि और विषय बताते है। प्रभु कहते है, "हे प्रथम नरेश्वर भरतेश्वर, तुम अर्थशास्त्र सुनो। व्यवसाय और सहायक होनेसे सम्पत्ति होती है। प्रजा चरणोंमें नत रहती है। आलस्य और दुष्टकी संगतिसे वह नष्ट हो जाती है। हे पुत्र, तुम्हे मै यह उपदेश देता हूँ। असहाय लोगोका विश्वमे कुछ भी सिद्ध नही होता। धागोके समूहसे हाथी भी बाँध लिया जाता है। हवासे लगकर नाव चली जाती है, और उसी हवाके संसर्गसे आग जल उठती है, मन्त्री यदि शूर, असह्य सहन करनेवाला पण्डित और मित्र है, तो कार्यमे उसका महान् आदर करना चाहिए, उसमे उसके साथ उपेक्षाका बर्ताव नही करना चाहिए, क्योकि दुनियामे शत्रु और मित्र होनेका कारण कार्य ही है। कार्य भी वृद्धिके द्वारा सम्भव और उत्पन्न होता है, बुद्धि भी वृद्धोंकी सेवा करनेसे मिलती है—

घत्ता—जिनके सिर सफेद हो चुके हैं, जिनके मुख टेढ़े हैं, जो जरासे निन्दित हैं उन्हे छोड़ो। जो स्वस्थ है, कर्म करनेमे कुशल हैं उन्हे मै चाहता हूँ ॥७॥

८

रचिता—णियमइणयणविहवपविलोइयपरणरछिद्दचारिणो।
पहुविरइयविसालदोसेसु पिहाणय राहयारिणो ॥१॥

बुद्धितुलातोलियसहिसंडल मंतचारणिम्महियाहंडल।
बुद्धा जेहिं ण सेविय भत्तिइ णउ मुचंति कयाइ वि यत्तिइ।
५ ते सुंदर जाणसु दुवियड्ढा कुलबलसिरिमयजलणें दड्ढा।
होंति अबुह बुहसंगें बुद्धा चंपयवासें तिलें वि सुयंधा।
बुहसेवाए बुद्धि उप्पज्जइ सा सत्तविह कुमार कहिज्जइ।
सुस्सूसा सवणु वि संधारणु मोयणु गहणु णाणु णिच्छयमणु।
तिविह होइ मंतहु संबंधिणि सा वि कहवि तिजगचिंतामणि।
१० णिसुणिक्खाउवंससंडणधय गुरुयणगय सुयगय णियमणगय।
ताइ मंतु अवसें णिप्फज्जइ सो पंचविहु कहंति महामइ।

घत्ता—आढत्तइ कम्मत्तइ पढमुवाउ चिंतेवउ ॥
णरसत्ति वि धणजुत्ति वि देसु कालु जाणेवउ ॥८॥

९

रचिता—अवि य सहरिस पुरिस दढपोरिस सुकयावायरक्खणं।
अविरलमिलियविउलफलसिद्धि वि जाणसु मंतलक्खणं ॥१॥

सुयणुद्धरणु दुट्ठणिग्गहणु वि णाएं छट्ठभायसंगहणु वि।
जणवयदोससमणु जा सुच्चइ दंडणीइ सा पुत्त पवुच्चइ।
५ किसि पसुपालणु सहुं वाणिज्जें वत्त भणिज्जइ महिवइपुज्जें।
चउवण्णासमु धम्मु तइत्तिय अज्ज वि सुंदर होंति ण सोत्तिय।
ते अप्पणु पइं पुरउ करेवा हीण दीण दाणेण भरेवा।
ताहं कम्मु जगसंतिपयासउ जणियभूयगेहयणसंतोसउ।
अय तिवरिस जव तेहिं हुणेवउ जणहु जीवदयवयणु भणेवउ।
१० जं जि पढेवउ तं जि करेवउ असि ण धरेवउ दाणु लएवउ।
दंसणणाणचरित्तु कहेवउ तिउणउं सुत्तु सरीरि ठवेवउ।
बंभचेरु अहवा कुलवत्ती अण्णणारि मइं ताहं ण रत्ती।
णिच्चण्हाणु जिणपडिमापूयणु णिच्चहोमु णिच्चातिहिभोयणु।
इय मज्जाय विलंघवि लंपड ते खाहिंति जीउ मारिवि जड।

१५ घत्ता—सुयसंगहु करुणावहु दाणु धरणिजणधारणु ॥
इय इट्ठउ मइं सिट्ठउ खत्तियकम्मवियारणु ॥९॥

---

८. १. MBP वहु॰। २ MBP तिल व। ३. MBP कहंति। ४. MBP णिप्पज्जइ।

९. १. MBP दढपउरिस। २. MBP गहगण॰। ३. K तं जि पढेवउ जं जि करेवउ। ४. MBP दंसणु णाणु चरित्तु। ५. MBP धरेवउं।

८

अपनी बुद्धिरूपी नेत्रोंके वैभवसे, शत्रुपक्षके छिद्रोंको देखनेवाले, स्वामीकी शोभा बढ़ानेवाले चरपुरुष उसके द्वारा किये गये विशाल दोषोंको ढकनेवाले होते हैं। अपनी बुद्धिरूपी तुलापर समस्त ब्रह्माण्डको तौलनेवाले तथा मन्त्रप्रयोगसे इन्द्रको पराजित करनेवाले वृद्धोंकी जिसने सेवा नहीं की है, ऐसे उन कुलमूर्खोंको कुल, बल, श्री और मदकी ज्वालामें दग्ध समझो। पण्डितोंकी संगतिसे मूर्ख भी पण्डित हो जाते हैं, उसी प्रकार जिस प्रकार 'चम्पा' की गन्धसे तिल सुगन्धित हो जाते हैं। पण्डितोंकी सेवासे बुद्धि उत्पन्न होती है, यह सेवा सात प्रकारकी कही जाती है— शुश्रूषा, श्रवण, सन्धारण, मोदन, ग्रहण, ज्ञान और निश्चय मन (तर्क-वितर्ककी शक्ति)। मन्त्रसे सम्बन्धित बुद्धि तीन प्रकारकी होती है, और जो तीनों लोकोंमें चिन्तामणि कही जाती है। हे इक्ष्वाकु कुलके मण्डन-ध्वज, सुनो—एक बुद्धि गुरुजनसे प्राप्त होती है, दूसरी बुद्धि शास्त्रसे और तीसरी अपने मनसे उत्पन्न होती है। इससे मन्त्र अवश्य सिद्ध होता है। महामति मन्त्रको पाँच प्रकारका बताते हैं।

घत्ता—सुनो, कार्यको प्रारम्भ करनेपर पहले कार्यकी चिन्ता करनी चाहिए। मनुष्यशक्ति, धन, युक्ति तथा देश-कालको जानना चाहिए ॥८॥

९

और भी, हे दृढ़पौरुष पुरुष, जिसमें अपायका रक्षण किया गया है तथा अविरल रूपसे विपुल फलकी प्राप्ति हो, तुम ऐसे मन्त्र लक्षणको जानो। सुजनका उद्धार, दुष्टोंका निग्रह, न्यायसे करके रूपमें छठे भागको ग्रहण करना, जनपदके दोषोंका शमन करना, इनका जो विचार करती है, हे पुत्र वह दण्डनीति कही जाती है। वाणिज्यके साथ कृषि और पशुपालनको राजाओंके द्वारा पूज्यने वार्ता कहा है। चतुर्वर्ण आश्रम और धर्म त्रयीविद्या है। श्रोत्रिय (ब्राह्मण) आज भी सुन्दर नहीं होते। उन्हें तुम अपनेसे आगे रखना, दीन-हीनोंको दानसे सन्तुष्ट करना। उनका काम जगमें शान्तिका प्रकाशन करना और भूतग्रहोंको शान्ति करना है। अज तीन वर्षके जौको कहते हैं उनसे यज्ञ करना चाहिए, लोगोंमें जीवदयाका प्रचार करना चाहिए। जो पढ़ा जाये उसीको किया जाना चाहिए। उन्हें दर्शन, ज्ञान और चरित्र कहना चाहिए। तीन डोरोंका जनेऊ शरीरपर धारण करना चाहिए। ब्रह्मचर्यसे रहना चाहिए, अथवा किसी कुल-पुत्रीसे विवाह करना चाहिए, उनके लिए मैंने दूसरी स्त्री नहीं बतायी। नित्य स्नान, जिनप्रतिमाका पूजन, नित्य होम करना, नित्यप्रति अतिथिको भोजन देना। लेकिन वे लम्पट और जड़ इस मर्यादाका उल्लंघन कर जीव मारकर खायेंगे।

घत्ता—श्रुतसंग्रह, करुणपथ, दान और धरतीके लोगोंका पालन करना, इस प्रकार मैंने क्षत्रिय कर्मकी विचारणा की ॥९॥

१०

रचिता—वियलियमलमईहिं संतीहिं कुमग्गगयं परिक्खियं।
पसुसममिणमसेसमहिवलयमहो णरणाह रक्खियं॥१॥

पढणइ्वणदाणइं वाणिज्जइं इय वणियहु कम्मइं णिरवज्जइं।
सुद्दहु भणु वत्ताणुट्ठाणु वि वण्णत्तयपेसणसंमाणु वि।
५ अवरु कुसीलकारुजीवित्तणु एम कम्मि संजोएवउ जणु।
कम्मरहिउ जगि भद्दु ण भुंजइ धम्मविवज्जिउ तं पि ण किज्जइ।
मंतिठाणि कुलबुद्धिइ चत्ता तिक्ख पक्खपालणइ अभत्ता।
अंतेउरि पमत्त कामाउर लुद्ध धणाहियारि पसरियकर।
ण थविज्जंति काइं वित्थारें णासइ पहु दुट्ठें परिवारें।
१० पडिवयणेण तासु मइपसरणु कलहे ण वि परियणपोरिसगुणु।
सहवासेण सीलु जाणेवउ ववहारेण सउच्चु मुणेवउ।
जाणेवा राएं पेसिवि चर कुद्ध लुद्ध माणिय भीरुय पर।
सामभेयधणदंडसमागउ झत्ति रइज्जइ जं जसु जोग्गउ।
घत्ता—णियकज्जु वि परकज्जु वि कम्मद्धक्खसुइत्तणु॥
१५ जाणेवउ माणेवउ एत्तिउ पुत्त पहुत्तणु॥१०॥

११

रचिता—कुणसु सकलुसवइरिणिवपेसियपणिहीपडिविहाणयं।
परियणसयणमित्तसंतोसयरं संमाणदाणयं॥१॥

दुविहु वि जणउवसग्गु हरेज्जसु तिविहसत्तिसब्भाउ करेज्जसु।
भक्खिउं उप्पेक्खिउं वि मुणिज्जसु णिग्गहु अवरु अणुग्गहु देज्जसु।
५ सत्तु मित्तु मज्झत्थु त्रि भावहिं सव्वणिओयसुद्धि संदावहि।
अवलंबेज्जसु गुरुहिययत्तणु मुयसु दिट्ठकामुयकामित्तणु।
चवलत्तणु अयालगामित्तणु खलसंगु वि दुव्वसणपवत्तणु।
णारि जूउ मइरा मयमारणु कामुप्पण्णउ चउविहु दारुणु।
अण्णाएं ण दविणु णासेवउ तिक्खदंडु सुफरुसु भासेवउ।
१० रोसुप्पण्णउं वसणु विहेयउं मइं महिवइसासणि विण्णायउं।
इय सत्तविहु भरेण ण किज्जइ रिउछव्वग्गहु हियउ ण दिज्जइ।

---

१० १ T reads कमग्गगयं and explains it as पादाग्रे स्थितम्; it however records a *p* कुमग्गगयं and explains it as कुत्सितमार्गे प्रवृत्तम्। २ M पसुसिमं। ३. MBP पढणइं धणदाणइं। ४. P पुणु। ५ MBP °पेसणु संमाणु। ६ M मतिट्ठाणेसु सुवुद्धिए चत्ता; BP मतिट्ठाणि कुबुद्धिइ चत्ता। ७ MBP एत्तिउं।

११ १. MBP विहावहि। २ MBP विट्ठ° but gloss in PT दृष्टे स्त्रीजने। ३. MBP अयालि। ४. MBP सुफरसु भासेव्वउ। ५. MBP रोमुप्पण्णु वसणु णिहणेव्वउ। ६. P adds after this line: णिच्छउ मइं हियवइ संभाविउ। ७. MP चित्तु।

१०

विगलित पापबुद्धिवाले मन्त्रियोंके द्वारा कुमार्गमें जानेवालोंकी रक्षा की जाये। हे नरनाथ, जिस प्रकार गाय, पशु आदि जानवरोंका पालन किया जाता है उसी प्रकार इस समस्त धरती-मण्डलका परिपालन करना चाहिए। पढ़ना, हवन करना, दान देना और वाणिज्य यह वैश्योंका अनवद्य कर्म है। शूद्रोंका काम है, वार्ताका अनुष्ठान और वर्णत्रयकी आज्ञा मानना और उनका सम्मान करना। नटविद्या, शिल्पआजीविका आदिके कामोंमें लोगोको लगाना चाहिए। दुनियामे भला आदमी बिना कर्मके भोग नही करता। लेकिन धर्मसे रहित कर्म भी नही करना चाहिए, मन्त्रीके स्थानमें कुल एवं बुद्धिसे हीन लोगोंको नहीं रखना चाहिए, हिंसक और दुष्ट लोगोंको ग्रामादिके पालनमें नही रखना चाहिए। अन्तःपुरमें प्रमादी और कामातुरों, लोभी और हाथ पसारनेवालोंको भाण्डागारकी रक्षामे नही रखना चाहिए। विस्तारसे क्या, दुष्ट परिवारसे राजा नाशको प्राप्त होता है, प्रतिवचनोंसे उसकी बुद्धिका प्रसार करना चाहिए, कलहमें परिजनोंका पुरुषार्थ गुण नही है। सहवाससे ही शीलको जानना चाहिए, व्यवहारसे ही पवित्रता जानी जाती है। राजाको चाहिए कि वह चर भेजकर यह जाने कि शत्रु कितना क्रुद्ध, लोभी, घमण्डी और भीरु है। साम, भेद, धन और दण्डके आनेपर, जो जिस योग्य हो वह उसके साथ शीघ्र करना चाहिए।

घत्ता—अपना कार्य, पराया कार्य और कार्याध्यक्षोकी पवित्रताको जानना और मानना चाहिए। हे पुत्र, यही प्रभुत्व है ॥१०॥

११

पापबुद्धि रखनेवाले शत्रु राजाओंके प्रति प्रेषित चरपुरुषोंका प्रतिविधान किया जाये। स्वजनों, परिजनों और मित्रोके लिए सन्तोषकर सम्मान दान देना चाहिए। जनताके दो प्रकारके उपसर्गोंको दूर करना चाहिए, तीन प्रकारका शक्ति सद्भाव (मन्त्र, उत्साह और प्रभु शक्ति) करना चाहिए। क्षयग्रस्त और उपेक्षितका भी विचार किया जाये, निग्रह और अनुग्रह दोनों किये जायें। शत्रु-मित्र और मध्यस्थका भी (राजा) विचार करे। सब नियोगोमें शुद्धि दिखायी जाये (अर्थात् जिसे जो काम करना है, उसे वह काम दिखाया जाये), हृदयको गाम्भीर्य-का सहारा लेना चाहिए। स्त्रियोंको देखकर उनमें कामुकता छोड़ दी जाये। चपलता और असमय गमन छोड़ दिया जाये, दुष्टकी संगति और दुर्व्यसनोमे प्रवर्तन भी। नारी, जुआ, मदिरा और पशुबध ये चारों दारुण और काम उत्पन्न करनेवाले हैं। अन्यायसे धनका नाश नही करना चाहिए। तीखा दण्ड, कठोर भाषण और क्रोधका उत्पन्न होना—ये तीन व्यसन हैं जिन्हें मैं राजाओंके शासनमे जानता हूँ। इन सात बातोंको अधिकसे न किया जाये, छह प्रकारके अन्तरंग शत्रुओंको भी हृदयमे स्थान न दिया जाये।

घत्ता—मुइ कोहु वि मउ लोहु वि माणु हरिसु सहु कामें।
गुरु घोसइ सिरि होसइ एयहु खयपरिणामें ॥११॥

१२

रचिता—एक्कंतरिउ मित्तु णिरंतरु सत्तु भणंति सूरिणो।
तासु महंति मंतु पहुपेसिय गूढा लिंगधारिणो ॥१॥

गूढ वि पडिगूढहिं जाणेवा जे विरुद्ध ते तहिं णिहणेवा।
कीरइ कालि गमणु ववगयमलि आसणु बहुकणतणजलमहियलि।
५ विग्गहु हीणें अहव समाणें बलवंतेण संधि कयदाणें।
दुग्गासिएण समाणु वि किज्जइ मित्तु वि पडिवक्खत्तु ण णिज्जइ।
एम अलद्धउ लब्भइ मंडलु परिरक्खिज्जइ कय चिंतियफलु।
उप्पाइज्जइ दव्वु पसत्थहं तं दिज्जइ अट्ठारहतित्थहं।
तित्थहिं धरिउ रज्जु थिरु अच्छइ रायाइल्लउ खयहु ण गच्छइ।
१० सामि अमच्चु रट्ठु धणु सुहि बलु भणु सत्तमउं दुग्गु हयपडिबलु।
इउ सत्तंगु जेम्व णउ खिज्जइ तेम तणय वसुमइ पालिज्जइ।

घत्ता—इय भाविउ सिक्खाविउ चक्कवट्टिलच्छीहरु ॥
णियजणणें णं तवणें वियसाविउ कमलायरु ॥१२॥

१३

रचिता—गुणमणिकिरणपसरभरपसमियदुण्णयतिमिरमेलओ।
हुउ वइसवणपवणजमससिरविहुयवहवरुणलीलओ ॥१॥

धम्मत्थेसु कुसलु तेयंसिउ हियमियमहुरभासि णिवसंसिउ।
अपिसुणु वद्धुच्छाहु अरूसणु सुइ सुधीरु बलवंतु महासणु।
५ मइदिहिहरु समत्थु जिंतिंदिउ सहसुप्पण्णबुद्धि जगवंदिउ।
दूरालोउ अदीहरसुत्तउ पुरिसण्णउ पसण्णु गुरुभत्तउ।
थिरु संभरणसीलु णिम्मलवउ सच्छु अजिंभचित्तु अइसूहउ।
थूललक्खु मेहावि सयाणउ किं वण्णिज्जइ भारहराणउ।
पुणु सव्वत्थविमाणहु आयउ वसहसेणु णामें संजायउ।
१० जसवइदेविहि वीयउ णंदणु पुणु वि अणंतविजउ रिउमद्दणु।
अवरु अणंतवीरु पुणु अच्चुउ वीरु सुवीरु मत्तकरिकरभुउ।

घत्ता—गयभंगहं चरिमंगहं पुण्णपहावपउण्णउं ॥
गुणजुत्तहं सउ पुत्तहं एवमाइ उप्पण्णउं ॥१३॥

---

१२ १ MBP णेरंतरु। २ MBPK दीणें। ३ M कयमाणें। ४ MBP दुग्गासिए संमाणु जि किज्जइ।

१३. १. GK have दुवई for रचिता from this Kadavaka onwards to the end of the Samdhi. २ P पयसमिय। ३. B मइविहिहरु। ४ B संतरणसीलु। ५. MBP सक्कु। ६. B अजिंभवित्तु। ७. BP अच्चउ but gloss in P अच्युत.। ८. MBP सुधीरु। ९. MBPT गयरंगहं।

घत्ता—क्रोध, मद, लोभ, मान और कामके साथ हर्षको छोड़ो, गुरु घोषित करते हैं कि इनके नाशके फलस्वरूप श्री होगी।

१२

आचार्य कहते हैं कि राजाका मित्र निरन्तर रूपमें एक देशान्तरमें रहते हुए शत्रु हो जाता है। राजाके द्वारा प्रेषित विविध रूप धारण करनेवाले गूढ़पुरुष उसके रहस्यका भेदन कर देते हैं। गूढ़पुरुषोंको भी प्रतिगूढ़ पुरुषोंके द्वारा जानना चाहिए, और उनमें जो विरुद्ध हों उनको नष्ट कर देना चाहिए। निर्दोषकालमे (राजाको) गमन करना चाहिए। प्रचुर अन्नकण, तृण और जलसे भरपूर महीतलमे ठहरना चाहिए। हीन अथवा समान व्यक्तिके साथ युद्ध करना चाहिए, शक्तिशालीसे दान देकर सन्धि करनी चहिए, दुर्गाश्रितके साथ भी सन्धि करनी चाहिए, मित्र होते हुए भी शत्रुत्वको न जानने दिया जाये। इस प्रकार अलभ्य देशमण्डल प्राप्त कर लिया जाता है। उसके परिरक्षित होनेपर अभिलषित फल किया जाये। प्रशस्त लोगोंको धन दिया जाये। उन्हें अठारह तीर्थ भी दिये जायें। तीर्थोंसे राज्य स्थिर रूपसे रखा जाता है, और राज्यालय नष्ट नही होता। स्वामी, अमात्य, राष्ट्र, धन, सुधि, बल और कहो सातवाँ शत्रुबलका नाश करनेवाला दुर्ग। हे पुत्र, जिस प्रकार यह सप्तांग राज्यक्षयको प्राप्त न हो इस प्रकार वसुमतीका पालन करना चाहिए।

घत्ता—इस प्रकार चक्रवर्तीकी लक्ष्मीको धारण करनेवाले भरतको उसके अपने पिताने यह बात सिखायी, मानो सूर्यने कमलाकरको विकसित किया हो ॥१२॥

१३

गुणरूपी मणियोंकी किरणोके प्रसारभारसे शान्त हो गया है दुर्नयोंका अन्धकारसमूह जिसका, ऐसा भरत, कुबेर, पवन, यम, शशि, सूर्य, अग्नि और वरुणकी लीलाओंके समान लीला वाला हो गया। धर्म और अर्थमे कुशल तेजस्वी, हित-मित और मधुर बोलनेवाला, राजाओं द्वारा प्रशंसनीय, सज्जन, उत्साहसे परिपूर्ण क्रोध रहित पवित्र धीर, बलवान्, गम्भीर, बुद्धि और धैर्यका घर, समर्थ, जितेन्द्रिय, प्रत्युत्पन्नमति, विश्ववन्द्य, दूरदर्शी, अदीर्घसूत्री, पुरुषविशेषज्ञ, प्रसन्न, गुरुभक्त, स्थिर, स्मरणशील, पवित्र, व्रती, स्वच्छ, अकलुषितचित्त, अत्यन्त सुभग, वदान्य, मेधावी और सयाने, भारतके उस राजाका क्या वर्णन किया जाये? उसके बाद सर्वार्थसिद्धि विमानसे आया वृषभसेन नामसे यशोवती देवीका दूसरा पुत्र हुआ, फिर और भी शत्रुका मर्दन करनेवाला—अनन्तविजय पुत्र हुआ। और भी अनन्तवीर्य, फिर अच्युत वीर-सुवीर मतवाले गजके समान भुजाओंवाला।

घत्ता—इस प्रकार उसके चरमशरीरी, अपराजित, पुण्यके प्रभावसे परिपूर्ण और गुणयुक्त सौ पुत्र उत्पन्न हुए ॥१३॥

१४

रचिता—घणथणयणवयणकरकमयलसयलावयवसोहिया ।
समियसविसयविरसेविसवेइणि सीलसिरीपसाहिया ॥१॥

धीय सलक्खण कोमलगत्ती णक्खकंतिणिज्जियणक्खत्ती ।
जसवइसइसरीरि संभूई बंभी णामें अवर वि हुई ।
५ वियलियसोयहि भुंजियभोयहि पुणु वि सुणंदहि णंदियलोयहि ।
चुउ सव्वत्थसिद्धि परमेसरु हुउ मणहरु णं मरगयमहिहरु ।
सिसु अविपिक्कवंससुच्छायउ बालउ बाहुबलि वि तहि जायउ ।
तुच्छबुद्धि अप्पउ अवगण्णमि पहिलउ कामएउ किं वण्णमि ।
गज्जमाणजलहरजलणिहिसरु फलिहपईहथोरकरपंजरु ।
१० पुण्णमियंकवयणु जसहलहरु सिरिकीलागिरिंदसमभुयसिरु ।
पुरकवाडपविउलवच्छत्थलु विससद्दूलखंधु अवियलबलु ।
दलियासामयग्गलगलसंखलु णीलणिद्धमउपरिमियकुंतलु ।
तणुमज्झप्पएसि रइरंगउ अंगें सहु जि अउव्वु अणंगउ ।
वियडणियंबु तंबाबवाहरु उच्छुचावजीयासंधियसरु ।

१५ घत्ता—णवजोव्वणि जायइ घणि पंचहिं तेहिं पयंडहिं ॥
पुरथीयणु कंपियमणु विद्धउ कोसुमकंडहिं ॥१४॥

१५

रचिता—पसरियमयणजलणहुयरसवससुसियंगेहिं कालिया ।
विलवइ चलइ घुलइ सुहयस्स कए तहिं का वि बालिया ॥१॥

का वि पलोयइ पयणियतुट्ठिहिं मउलियललियहिं वेलियहिं दिट्ठिहिं ।
का वि पएसु पडंती दीसइ का वि सविणय किं पि संभासइ ।
५ का वि भणइ दिज्जउ आलिंगणु जइ मेल्लेसइ मेरउ प्रंगणु ।
ता होसइ तुह तायहु केरी आण सुरिंदभयाइं जणेरी ।
चंचलि चेलंचलइ विलग्गइ क वि सोहग्गभिक्ख तहिं मग्गइ ।
कंठाहरणउं रयणणिउत्तउ का वि देइ कंकणु कडिसुत्तउ ।
तग्गयणयण णियइ अवचित्ती क वि जाभायहु साइउं देंती ।
१० क वि तेल्लेणें पाय पक्खालइ धूवइ दुद्धु तक्कु ण णिहालइ ।
दोरि विलंबिउ कँ वि भीभूयइ घडु मण्णंति घिवइ सिसु कूवइ ।
काइ वि जोयंतिइ मयरद्धउ वच्छु भणिवि घरि मंडलु बद्धउ ।
काहि वि णीवीबंधणु ढलियउ पेम्मसलिलु ऊरुयलि गलियउ ।

---

१४ १. MB °कणयवयण° । २. MB °विरसवेइणि । ३ P सालसिरी° । ४. MB °पहासिया । ५. M °गिरिवरु । ६. MBP °सच्छायउ । ७ MBP कामदेउ । ८. M °गलगयसंखलु । ९ P °कोतलु ।
१५ १. MBP चवइ । २. MPK चलियहिं । ३ MBP मेल्लेसहि । ४. MBP पंगणु । ५ M तिल्लोण । ६. MEP दोर° । ७. B कविलीभूयइ । ८. P उरुयायलि ।

१४

जो सघन स्तन, नयन, मुख, कर और चरणतल आदि समस्त अंगोंसे शोभित है, जिसने अपने विषयरूपी विषकी विरस वेदनाको शान्त कर दिया है, और जो शीलरूपी लक्ष्मीसे शोभित है.ऐसी अपनी नखकान्तिसे नक्षत्रोंको जीतनेवाली, सुलक्षणा, कोमल शरीरवाली, ब्राह्मी नामकी एक और कन्या यशोवती सतीके शरीरसे जन्मी। शोकसे रहित भोगोंको भोगनेवाली, लोकको आनन्दित करनेवाली सुनन्दासे, सर्वार्थसिद्धिसे च्युत सुन्दर परमेश्वर (बाहुबलि) हुए, मानो पन्नोंका महीधर हो। नही पके हुए बांसके समान कान्तिवाला शिशु बालक बाहुबलि वहाँ उत्पन्न हुआ। मैं अपने-आपको तुच्छ बुद्धि मानता हूँ। पहले कामदेवका क्या वर्णन करूँ। गरजते हुए मेघ और समुद्रके समान जिनका स्वर है, जिनके हाथ अर्गलाके समान दीर्घ और लम्बे हैं, जिनका मुख पूर्णचन्द्रके समान है, जो यशके कल्पवृक्ष है, जिनके हाथ और सिर लक्ष्मीके क्रीड़ागजके समान हैं, जिनका वक्षस्थल नगरके किवाड़ोंकी तरह विशाल है, जिनके कन्धे वृषभ और सिंहके समान है, जिनका बल अस्खलित है, जिन्होंने आज्ञारूपी मदगजोंके गलेकी शृंखला चकनाचूर कर दी है, जिनके केश नीले स्निग्ध कोमल और परिमित है, जिनके शरीरके क्षीण मध्य प्रदेशमे रतिकी रंगभूमि है, जो अंग (शरीर) के होते हुए भी अपूर्व अनंग (कामदेव) हैं। जिनके नितम्ब विकट हैं, बिम्बारूपी अधर आरक्त हैं, जो इक्षुदण्डके धनुष और डोरीपर सर सन्धान करनेवाले हैं।

घत्ता—(ऐसे बाहुबलिके) सघन नवयौवनमे आनेपर, (कामदेवके) उन पांच प्रसिद्ध प्रचण्ड बाणोसे, कम्पित मनवाली नगर स्त्रियाँ बिद्ध हो उठी ॥१४॥

१५

जो फैलती हुई कामरूपी आगके रस (प्रेम) से शोषित अंगोसे काली हो चुकी है, ऐसी कोई बाला अपने प्रियके लिए विलाप करती है, चलती है, गिरती है। कोई सन्तोष उत्पन्न करनेवाली कोमल सुन्दर मुड़ती हुई नजरोंसे देखती है। कोई पैरोंपर गिरती हुई दिखाई देती है, कोई विनयपूर्वक कुछ भी कहती है। कोई कहती है कि मुझे आलिंगन दो, यदि तुम मेरा आँगन छोड़ोगे तो तुम्हे पिताकी देवेन्द्रोके लिए भयोंको उत्पन्न करनेवाली कसमे हैं। कोई चंचला वस्त्रांचलसे लग जाती है और वहाँ सौभाग्यकी भीख माँगती है। कोई रत्नोसे बना कण्ठाभरण, कंकण और कटिसूत्र देती है, कोई उद्भ्रान्त मन होकर उनमे नेत्र लीन करके देखती है, कोई जामाताको आलिंगन देती है; कोई तेलसे पैरोका प्रक्षालन करती है, कोई (कढ़ीके लिए) दूधको बघार देती है वह छांछ नही देख पाती, कोई रस्सीसे लटके हुए बालकको घड़ा समझते हुए भयानक कुएँमें डाल देती है; कामदेवको देखते हुए किसीके द्वारा बछड़ा समझकर कुत्तेको घरमे बाँध लिया गया। किसीका नीवी बन्धन खिसक गया, और प्रेमजल हृदयतलपर फैल गया।

घत्ता—पइ भल्लउं कडवल्लउं का वि देइ करि णेउरु ॥
१५ उद्दामें इय कामें संताविउ सयलु वि पुरु ॥१५॥

१६

रचिता—कुलधणसयणमोहमाणुण्णइवीलाहरणववसियं ।
इसिवयमिव वहंति रमणीयउ जस्स सिणेहविलसियं ॥१॥

जिह जिह सुंदरु खेल्लइ रच्छइ तिह तिह हियवउ हरइ वरच्छहिं ।
सोम्मु सुदंसणु पढमु कुमारउ पेच्छंतिइ वाहुवलि कुमारउ ।
५ काइ वि कउ कवोलि करु कोमलु तणुतावेण कढइ सरकोमलु ।
काहि वि विरहसिहिं पउलिउ पलु धवलु वि कमलु हुवउ णीलुप्पलु ।
सहइ कामु महुसमयागमणें णिहय का वि पियसमयागमणे ।
मउलिय फुल्लिय मल्लिय काणणि मंडणु देइ पुरंधि ण काणणि ।
णिग्गय पल्लव णवसाहारहु मुयइ तत्ति विरहिणि साहारहु ।
१० पइ मेल्लेप्पिणु लवइ व कोइल सुहयत्ते किर भूसइ को इल ।
मुहसरुपरिमलमिलियसिलिम्मुह जे ते णं कंदप्पसिलिम्मुह ।
का वि चवइ पिय हउं तुह रत्ती अज्जु गइय महु दुक्खें रत्ती ।
का वि भणइ पिय करि केसग्गहु वियलउ मालइकुसुमपरिग्गहु ।
का वि कहइ लइ चुंवहि वयणउं अवरु म देहि किं पि पडिवयणउं ।
१५ घत्ता—णउ मेल्लइ कवि बोल्लइ म करहि काइं वि विप्पिउ ॥
घरु वित्तु वि णियचित्तु वि सयलु वि तुज्झु समप्पिउ ॥१६॥

१७

रचिता—क वि रुणुरुणइ किं पि सुइसुहयरु मणरुहविसिहसल्लिया ।
पियपसवयणकमलरसलंपडि तरुणीमहुयरुल्लिया ॥१॥

जो सूहउ महिलहिं माणिज्जइ कंदप्पु जि पुणु कहु उवमिज्जइ ।
गब्भि सुणंदहि रूवरवण्णी तासु बहिणि अवर वि उप्पण्णी ।
५ णवजोव्वणि चडंति सा छज्जइ चंदु कलंकें वयणहु लज्जइ ।
रत्तुप्पलु पयसोहइ जित्तउ तेण वि अप्पउ सलिलि णिहित्तउ ।
भूवंकत्तणु थणथड्ढत्तणु अहरहु केरउ अइराइत्तणु ।
पडिआयहं दंतहं धवलत्तणु जणमारण णयणहुं मि चलत्तणु ।
तुच्छोयरवासिहि गंभीरिम णाहिहि अवरु णियंबहु वड्डिम ।
१० कंचीदामएण दढवंधहु रहियंगहु परलोयविरुद्धहु ।
सीसारूढकेसकुडिलत्तणु पुरिसोवरि माणसकढिणत्तणु ।

---

१६ १. B हुति । २ MBP सोमु । ३. P विरहसिहिहिं । ४. B मंडलु । ५. K सिलीमुह । ६. MBP म किं पि देहि ।

१७. १. M अइरत्तत्तणु; BP अइरायत्तणुं । २ M कंचीदामणएण ।

घत्ता—कोई पैरमें सुन्दर कड़ा और हाथोंमें नूपुर देती है। इस प्रकार सारा नगर मानो कामके द्वारा सताया गया ॥१५॥

१६

जिसमे कुलधन, स्वजन, मोह, मान, उन्नति और व्रीड़ा (लज्जा) के अपहरणकी चेष्टा है, ऐसे उसके स्नेह विलासको स्त्रियाँ मुनिव्रतकी तरह धारण करती हैं। वह सुन्दर कुमार गलीमें ज्यों-ज्यों खेलता है, वैसे-वैसे हृदयका अपहरण करता है, सौम्य सुदर्शन उस प्रथम कुमार बाहुबलिको देखती हुई किसीके द्वारा गालपर किया गया कोमल कर शरीरके सन्तापसे सरोवर जल निकालता है। विरहकी ज्वालासे किसीका मांस दग्ध हो गया। और धवल कमल भी नीलकमल हो गया। वसन्त माहके आ जानेपर भी कोई स्त्री कामको सहन करती है, कोई प्रियके आगमनपर भी (मानके कारण) आहत है। कानन (जंगल) मे मुकुलित जुही खिल गयी है, कोई स्त्री मुखपर मण्डन नही करती। नव-सहकार वृक्षके पल्लव निकल आये है, विरहिणीने सहकारमे अपनी शान्तिका त्याग कर दिया है। पतिको छोड़कर कोयल आलाप करती है, सुन्दरतामे (सुभगत्व) कौन धरतीको विभूषित करता है ? मुख पवनकी सुगन्ध (परिमल) से मिले हुए जो भ्रमर है, वे मानो कामदेवके बाण हैं। कोई कहती है—"हे प्रिय, मैं तुममे अनुरक्त हूँ, आज मेरी दुःखमे रात बीती है।" कोई कहती है, "हे प्रिय, तुम मेरे बालोंको बाँध दो, बँधा हुआ मालतीका फूल गिर गिया है।" कोई कहती है, "लो शीघ्र मुख चूम लो और किसीको तुम प्रतिवचन नही देना।"

घत्ता—कोई उसे नहीं छोड़ती और कहती है, "कोई भी बुरी बात मत करना। घर, धन और अपना चित्त भी सब कुछ तुम्हें समर्पित करती हूँ" ॥१६॥

१७

प्रियतमके मुखरूपी कमलके रसकी लालची कोई तरुणीरूपी भ्रमरी कानोंको सुख देने-वाला कुछ भी गुनगुनाती है, जो सुन्दर कामदेव महिलाओंके द्वारा माना जाता है उसकी उपमा किससे दी जाय ? सुनन्दाके गर्भसे, रूपमे रमणीय उसकी एक बहन और उत्पन्न हुई; नवयौवनमे चढ़ती हुई वह अत्यन्त शोभित है; कलंकके कारण चन्द्रमा उससे लज्जित होता है। उसने चरणों-की शोभासे रक्तकमलको जीत लिया है, इसी कारण उसने अपनेको पानीमें छिपा लिया। भौंहोंका टेढ़ापन, स्तनोंकी कठिनता, अधरोंकी अतिलालिमा, एक बार गिरनेके बाद आये हुए दाँतोंकी धवलिमा और नेत्रोंकी चंचलता लोगोंको मारनेवाली है। उसके तुच्छ उदरके बीचमे रहनेवाली नाभिकी गम्भीरता, तथा सोनेकी जंजीर (करधनी) से दृढ़ताके साथ बँधे हुए परलोकविरोधी (परलोकको साधना करनेवालोके लिए बाधक) और आच्छादित नितम्बोंकी बढ़ती; सिरपर उगे हुए केशोंकी कुटिलता, पुरुषोंके ऊपर मानसकी कठिनता, देख लिया है दोष जिसने ऐसा (व्यक्ति) अवश्य अमध्यस्थ (पक्षपात करनेवाला) होता है, उसका मध्य (भाग) इसीलिए अमध्यस्थकी

दिट्ठदोसु अवसें असमेहलु मज्झु अमज्झत्थु व हुउ दुब्बलु।
तुंगपयोहरविलुलियघणघण चलहारावलिमोत्तिय जलकण।
सिंचिय तेहिं णाइं मइ सीसइ रोमराइ णववेल्लि व दीसइ।
१५ इय रूवें जगणारिहि सुंदरि जाणिवि ताएं[३] कोक्किय सुंदरि।
घत्ता—एक्कुत्तरु रणदुद्धरु सउ तणयहं दुइ धूयउ[४]॥
कयसेट्ठिहिं परमेट्ठिहिं जायउ अणुवमरूवउ॥१७॥

१८

रचिता—जयवइजणणचरणमूलम्मि महारिउवंद[१]मद्दणा।
बहुसुयणियरधरणपरिणयमइ जाया सयलणंदणा॥१॥
भावें णमसिद्धं पभणेप्पिणु दाहिणवासकरेहिं लिहेप्पिणु।
दोहिं मि णिम्मलकंचणवण्णहं अक्खरगणियइं कहियइं कण्णहं।
५ अत्थें सद्देण वि सोहिल्लउ गद्दु अगद्दु दुविहु कव्वुल्लउ।
सक्कउ पायउ पुणु अवहंसउ वित्तउ उप्पाइउ सपसंसउ।
सत्थकलासिउ संग[२]णिबद्धउ णाडउ अक्खाइय कहरिद्धउ[३]।
अणिबद्धउ गाहाइउ अक्खिउ गेयवज्जलक्खणु[४] वि णिरिक्खिउ।
बंभें सइं वक्खाणिउं जं जिह कुंअरी[५]जुयले बुज्झिउ तं तिह।
१० सुयहं महंतु कहंतु अणेयइं विण्णाणइं णाणइं बहुभेयइं।
एम भडारउ अच्छइ जइयहुं भग्गी पय दुक्कालें तइयहुं।
घत्ता—अविवेइय घरु आइय चवइ चिणेण णिरिक्खिय॥
पहु दहविह सुरमहिरुह अवसप्पिणियइ भक्खिय॥१८॥

१९

रचिता—सयमहवियडमउडतडमणिगणवियलियविमलवारिणा।
धुयकमकमलजुयल परमेसर पई मि महारिवारिणा[१]॥१॥
कप्पंघिवविणासि संहारहु[२] णउ परिरक्खिय भुक्खामारहु।
जिण्णइं अंबराइं मलमलिणइं कालें विहडियाइं आहरणइं।
५ तणु लायण्णु वण्णु परिल्हसियउ जढरहुयासें रुहिरु वि सुसियउ।
लग्गणखंमु अण्णु[३] को अम्हहं एवहिं सरणु पइट्ठा तुम्हहं।
असणवसणभूसणसंपत्तिहि भवणजाणसयणासणजुत्तिहि।
णिहिलकलाविसेससंपत्तिहि[४] करि णिच्चिंतें[५] असेसहि वित्तिहि।
तं णिसुणेवि जायकारुण्णे देवें पउरणाणसंपण्णे।

---

३ B ताइएं। ४ MBP धीयउ।

१८. १. MBP °विंद°। २ MBP सग्गि णिवंद्धउ। ३ MBP कहरुद्धउ। ४. MBP गेयवज्जु लक्खणु। ५ MBP कुमरी°।

१९. १. MBP °दारिणा। २ MB संघारहु but PGKT सहारहु। ३. MBP को वि ण उ अम्हहं। ४ K णिप्फत्तिहि। ५. P णिच्चंत।

तरह दुर्बल हो गया। उसके पयोधर (स्तन) सघन मेघोंको लुण्ठित कर देनेवाले है, उसकी मोतियोंकी चंचल हारावली जलकणोंके समान है। उनके (मोतीरूपी जलकणो) द्वारा सींची गयी रोमराजि, नयी लताके समान दिखाई देती है, ऐसा मेरे द्वारा कहा जाता है। इस रूपसे विश्व-नारियोंमें सुन्दर मानकर पिताने उसका नाम सुन्दरी रख दिया।

घत्ता—इस प्रकार युद्धमे दुर्धर अनुपम रूपवाले एक सौ एक पुत्र और दो कन्याएँ सृष्टिके विधाता परमेष्ठी ऋषभनाथके उत्पन्न हुए ॥१७॥

१८

महाशत्रुओंके समूहका मर्दन करनेवाले सभी पुत्र विश्वपति पिताके चरणोंके मूलमे, अनेक शास्त्रसमूहके धारण (अभ्यास) से परिणत बुद्धिवाले हो गये। भावपूर्वक सिद्धोको नमस्कार कर दायें और बायें हाथसे लिखकर अक्षरोकी गणना उन्होंने निर्मल स्वर्ण वर्णकी कन्याओंको बता दी। अर्थसे और शब्दसे भी शोभित गद्य और अगद्य, दो प्रकारका काव्य, संस्कृत, प्राकृत और फिर अपभ्रंश, प्रशंसनीय उत्पाद्य वृत्त, शास्त्र और कलाओंसे आश्रित सर्गबद्ध काव्य (प्रबन्ध काव्य), नाटक और कथासे समृद्ध आख्यायिका, अनिबद्ध गाथादि, मुक्तक काव्य कहा। गेय और वाद्योके भी लक्षणोंको देखा। आदिनाथने स्वयं जिस रूपमे व्याख्या की, दोनो कुमारियोने उसे उस रूपमे ग्रहण कर लिया। अनेक शास्त्रों, बहुभेदवाले ज्ञान-विज्ञानोंकी व्याख्या करते हुए महान् और आदरणीय आदिनाथ जब इस प्रकार रह रहे थे कि तभी प्रजा दुष्कालसे भग्न हो गयी।

घत्ता—नही जानते हुए वह (उनके) घर आकर कहती है कि 'हे प्रभु, अवसर्पिणीने दस प्रकारके कल्पवृक्ष खा लिये हैं।' जिनेन्द्रने इसे देखा ॥१८॥

१९

इन्द्रके विकट मुकुटतटके मणिगणोसे झरते हुए पवित्र जलसे धोये गये हैं चरणकमल-युगल जिनके, ऐसे हे परमेश्वर, महान् शत्रुओंका निवारण करनेवाले आपने भी, कल्पवृक्षोंके नष्ट होनेपर, प्रलय और भूखरूपी मारीसे हमारी रक्षा नही की। वस्त्र मलसे मैले और जीर्ण हो चुके हैं, समयके साथ आभरण नष्ट हो चुके हैं, शरीरका लावण्य और वर्ण चला गया है, पेटकी आगसे खून भी सूख गया है। इस समय हमारा आधारस्तम्भ कौन है? हम आपकी शरणमे आये हैं। अशन, वसन, भूषण और सम्पत्तियोवाली समस्त वृत्तियोसे हमे निश्चिन्त करिए। यह

१० करिसणकरणु धरणु मयणिवहहं हरिकरिमेसमहिसविसकरहहं ।
पडु घडु भोयणु भायणु रंजणु घरु पयणविहि पीढु मणरंजणु ।
सेज्ज सरीरताणु जलधारणु हारु दोरु केऊरु सकंकणु ।
असि मसि सिप्पु वि जं जिह जेहउ अक्खिउ लोयहु तं तिह तेहउ ।
घत्ता—परमेसरु [10]सुधरियघरु आइपुरिसु कमलासणु ॥
१५ जगु पेसिवि संतोसिवि पालइ खत्तियसासणु ॥१९॥

२०

रचिता—अवर वि भणिय वणियवर हलहर सुयरियकहियकुलवहा ।
जड परिवंडियधम्म चंडाल ति पयडियविविहपसुवहा ॥१॥
लेहउ लोहयारु कुंभारु वि तिलपीलउ मालिउ चम्मारु वि ।
जेहिं जं जि णियकम्मु पयासिउ ताह तं जि कुलदेवें भासिउ ।
५ पल्लव संधव कोंकण कोसल टक्का हीर कीर खस केरल ।
अंग कलिंग गंग[3] जालंधर वच्छ जवण कुरु गुज्जर वज्जर ।
दविड गउड कण्णाड धराड वि पारस पारियाय पुण्णाड वि ।
सूर सुरट्ठ विदेहा लाड वि कोंग वंग मालव पंचाल वि ।
मागह जट्ट[5] भोट्ट णेवाल वि उड्ड पुंड हरि कुरु संगाल वि
१० देवमाउसासुब्भव ससलिल साहारण अणूव पर जंगल ।
गिरितरुसरिदुग्गेहिं दुसंचर अडइदेस वसिकयधर ससवर ।
घत्ता—वइधरियहिं वणहरियहिं महि सोहइ चउपासिहिं ॥
कयंगामहिं आरामहिं छेत्तहिं एक्कदुकोसहिं ॥२०॥

२१

दुवई—चउविहगोउराइं चउदारइं णयरइं भूमिभूसणो ।
कारावइ पुराइं पुरुएवजिणो सुरदिण्णपेसणो ॥१॥
खेडइं थियदुवासगिरिसरियइं कव्वडाइं महिहरपरियरियइं ।
पंचगावसयसहियमडंवइं रयणजोणिपट्टणइं अडव्वइं ।
५ दोणामुहइं जलहितीरत्थइं संवाहणइं अहिसिहरत्थइं ।
सुणिरूवियसविणयसेवायर वइरायरपहूइ जे आयर ।
पयणियरायसुरिंदाणंदें ते रक्खाविय कुलयरवंदे ।

---

६. K °संपुण्णें । ७. M °वस° । ८. MBP परियणु वि । ९. MBT जलवारणु, but T records a p जलवारणु and remarks 'जलवारणु छत्रम्, अथवा जलधारणु वापीकूपतडागादिकम्' । १०. MBP सुचरियघरु ।

२०. १. K पडिवडिय° । २ P °पसुविहा; MB °वसुवहा । ३. MBP वंग । ४. MBP वव्वर । ५. MBP भट्ट । ६. MBP वसिकयवर । ७. MB कयगामिहिं । ८. MBP खेत्तहिं ।

२१. १. MBP call this couplet रचिता; GK call it दुवई which it is. २ MB पुरएव° । ३ B सुरवरदिण्णपेसणो । ४. MBP °गाम° । ५ K कुवलयचंदें ।

सुनकर उत्पन्न हुई है करुणा जिन्हें ऐसे प्रचुर ज्ञानसे सम्पूर्ण देवने खेती करना, घोड़ा-हाथी-मेष-महिष-वृषभ और अरण्य आदि पशुओंकी रक्षा करना, पट, घट, भोजन, भाजन, रंजन और घर बनानेकी विधि, सुन्दर पीठशय्या, कवच, हार, दोर, कंचन सहित केयूर, असि-मषि आदि कर्म जो जिस प्रकार थे, उसकी वैसी व्याख्या की।

घत्ता—धरतीको अच्छी तरह धारण करनेवाले आदिपुरुष ब्रह्म वह परमेश्वर विश्वको (जनोंको) सन्तुष्ट कर और भेजकर क्षत्रिय शासनका पालन करने लगते हैं।

२०

और भी अच्छे चरितवाले तथा कुलपथका कथन करनेवाले वणिक् और किसान कहे जाते हैं। धर्मसे पतित तथा तरह-तरहके पशुवधको प्रकट करनेवाले जड़ चाण्डाल भी। लेखक, लुहार, कुम्हार, तेली और चमार भी। जिन लोगोंने अपना जो कर्म प्रकाशित किया है, कुलदेव ऋषभने उन्हे वही घोषित कर दिया। पल्लव, सैन्धव (सिन्धु), कोंकण, टक्क, हीर, कीर, खस, केरल, अंग, कलिंग, जालन्धर, वत्स, यवन, कुरु, गुर्जर, वज्जर, द्रविड़, गौड, कर्णाटक, वराट, पारस, पारियात्र, पुन्नाट, सूर, सौराष्ट्र, विदेह, लाड, कोंग, वंग, मालव, पंचाल, मागध, जाट, भोट, नेपाल, औण्ड्र, पुण्ड्र, हरि, कुरु, मंगाल, देवमातृक धान्य उत्पन्न करनेवाले, जलसहित धान्य उत्पन्न करनेवाले, साधारण (दोनों प्रकारके) अनूप और जंगली देश। पहाड़, वृक्षों और दुर्गोंसे दुर्गम, धराको अधीन करनेवाले शबरो सहित अटवी देश।

घत्ता—वृत्तियों और वनोंको धारण करनेवाले चारों ओरके पार्श्वभागोंसे रचित ग्रामों, उद्यानों, एक-दो कोसवाले क्षेत्रोंसे धरती शोभित है ॥२०॥

२१

भूमिके भूषण तथा इन्द्रको दी है आज्ञा जिन्होंने ऐसे पुरदेव जिनने चार प्रकारके गोपुर और द्वारवाले नगर और पुरोंकी रचना करवायी। नदियों और पर्वतोंसे दो ओरसे घिरे हुए खेड़े, पहाड़ोंसे घिरे हुए कव्वड़ ग्राम, गांवों सहित मण्डप, रत्नोंकी खदानवाले अपूर्व पट्टन, समुद्रोंके तीर्थोंपर स्थित द्रोणमुख, पर्वतोंके शिखरोंपर स्थित संवाहन तथा अच्छी तरह निरूपित और सविनय सेवामें तत्पर वैराट प्रभृति जो खदाने हैं उनकी, राजाओं और इन्द्रोंको आनन्द

वण्णचउक्कमग्गु उवएसिउ दंडें दोसु असेसु पणासिउ।
तिहुयणरायहु महिरायत्तणु कवणु गहणु तहु मणुयपहुत्तणु।
कम्मभूमिसंपय दरिसंतहु कणयरयणधारहिं वरिसंतहु।
१० पुव्वहुं वीस लक्ख गय जइयहुं बद्धु पट्टु जगणाहहु तइयहुं।
णाहिणरिंदामरसंघायहिं कच्छमहाकच्छाहिवरायहिं।
घत्ता—सिंहासणि णिवसासणि आसीणउ परमेसरु॥
जयसिरिसहि पालइ महि बहुहलहरउवणीयकरु॥२१॥

२२

रचिता—हयमलचरणकमलजुयणिवडियविसहरखयरभूयरो।
अकलुसतियसतरुणिकरपल्लवचालियचारुचामरो॥१॥
भोयविरामि छुहवेविरतणु उड्डियकरयलु णीसेसु वि जणु।
घरि उच्छुरसु पियहुं जेणायउ पहु इक्खाउवंसु तें जायउ।
५ सोमप्पहु कोक्किउ कुरुराणउ सो जायउ कुरुवंसपहाणउ।
हरि हरिकंतु कहि वि हरिवंसहु कउ [1]पुरिमिल्लु पुरिसु सपसंसहु।
कासवु मघवु भणेप्पिणु घोसिउ उग्गवंस[2]मूलिल्लु पयासिउ।
अवरु अकंपणु सिरिहरु भाणिउ णाहवंसि सो पहिलउ जाणिउ।
चो[3]द्दहमयकुलयरपियणंदणु मरुएवीमणणयणाणंदणु।
१० फणिवरसिरमणिहयपयणेउरु सकलत्तउ सपुत्तु संतेउरु।
कहियणरे[4]सरकुलहिं विराइउ अच्छइ रज्जु करंतु लहाइउ।
घत्ता—पय पालइ दक्खालइ णायमग्गु भाभासुरु॥
सिरिअरुहें सहुं भरहें पुप्फयंतु रिसहेसरु॥२२॥

इय महापुराणे तिसट्ठिमहापुरिसगुणालंकारे महाकइपुप्फयंतविरइए महाभव्वभरहाणुमण्णिए महाकव्वे आइदेवमहारायपट्टबंधो णाम पंचमो परिच्छेओ सम्मत्तो॥ ५॥

॥ संधि ॥ ५॥

२२ १. MBP पुरमिल्लु। २. MBP उग्गवसु। ३ MBP चउदह°; ४. M °णरेसरकुलेहिं, K णरेमकुलेहिं।

देनेवाले कुलकर चन्द्र ऋषभने रक्षा करवायी। वर्णोंके चार मार्गका उपदेश किया। दण्डविधान-से अशेष दोषको नष्ट कर दिया। उन त्रिभुवन राजाको धरतीका राजत्व प्राप्त था, मनुष्योंकी प्रभुता प्राप्त करनेमें कौन-सी बात थी। इस प्रकार कर्मभूमिकी सम्पदाको दिखाते हुए, स्वर्ण और धनकी धाराओंको बरसाते हुए जब बीस लाख पूर्व वर्ष बीत गये तब जगनाथको नाभिराजा अमरसमूह कच्छ-महाकच्छ राजाओंके द्वारा राजपट्ट बाँधा गया।

घत्ता—सिंहासन और नृप-शासनमें आसीन परमेश्वर, जिन्हे बहुत-से हलधर कर देते है, जो जय और लक्ष्मीकी सखी धरतीका पालन करते हैं ॥२१॥

२२

जिनके निर्मल चरणोमे विषधर, विद्याधर और मनुष्य प्रणत होते हैं, और जिनपर पवित्र देवस्त्रियाँ अपने करपल्लवोंसे चमर ढोरती हैं, ऐसे वह ऋषभ धरतीका पालन करते हैं। भोगभूमिके समाप्त होनेपर भूखसे कम्पित शरीर समस्त जन अपने करतल उठाकर, जिस कारणसे घरपर इक्षुरस पीनेके लिए आये थे, उससे प्रभुका वंश इक्ष्वाकुवंश हो गया। सोमप्रभुको कुरुका राणा कहा गया इसलिए वह कुरुवशका प्रधान हो गया। हरिको हरिकान्त कहकर उन्हे प्रशंसनीय हरिवंशका प्रथम पुरुष बना दिया गया। कश्यपको मघवा कहकर पुकारा गया और इस प्रकार उग्रवंशके मूलको प्रकाशित किया गया। और अकम्पनको श्रीधर कहा गया, नाथवंशमे उसे पहला जानो। चौदहवे कुलकरके प्रियपुत्र, और मरुदेवीके मन और नेत्रोको आनन्द देनेवाले, नागराजके शिरोमणिसे आहत है पदनूपुर जिनके, ऐसे आदरणीय वे कलत्र, पुत्र और अन्तःपुरके साथ तथा पूर्वकथित नरेश्वरकुलोंसे शोभित राज्य करने लगे।

घत्ता—आभासे भास्वर ऋषभेश्वर लक्ष्मीसे योग्य भरतके साथ प्रजाका पालन करते हैं उसे न्यायका मार्ग दिखाते है ॥२२॥

इस प्रकार त्रेसठ पुरुषोंके गुणों और अलंकारवाले इस महापुराणमें महाकवि पुष्पदन्त द्वारा रचित एवं महाभव्य भरत द्वारा अनुमत महाकाव्यका आदिदेव महाराज-पट्टबन्ध नामका पाँचवाँ परिच्छेद समाप्त हुआ ॥५॥

संधि ६

अण्णहिं दिणि सभवणि सुरवरहिं संथुउ संपयगारउ।
फणिदणुयहिं मणुयहिं सेवियउ थिउ अत्थाणि भडारउ ॥१॥ ध्रुवकं॥

१

मलयविलसिया—कंचणघडियइ मणिगणजडियइ।
हरिवरधरियइ पहविप्फुरियइ ॥१॥
५ आसणि आसीणउ परमपहु अम्हहिं किं वण्णिज्जइ रिसहु।
दिण्णइं चाउरिपट्टासणइं सुविचित्तदित्तवेत्तासणइं।
रयणंचियाइं लोहासणइं दंडुण्णयाइं दंडासणइं।
एक्केक्क पहाणा[3] खणि मिलिय तहिं संणिसण्ण बहु मंडलिय।
कु वि णरवइ घुसिणें समलहिउ णं सिरिकामिणिराएं गहिउ।
१० कु वि दीसइ चंदणधूसरिउ पंडुरु णं णियजसेण भरिउ।
मयणाहिविलित्तउ को वि णरु ससिरविभीयउ धरइ व तिमिरु।
णिवि कहिं मि घुलइ हारावलिय कसणइ णं जलहरि विज्जुलिय।
कासु वि पडंति चमरइं चलइं णं कित्तिसुभिसिणिहि सयदलइं।
कप्पूरधूलिबहलुच्छलइं रुणुरुंटइ तहिं महुयरु घुलइ।
१५ सो केण वि एंतु णिवारियउ तंवोलउ पाणि पसारियउ।
घत्ता—खगसामिहिं कामिहिं सयलहि वि वंदारयवंदियणहिं ॥
पणवंतहिं संतहिं रइणिवहिं जहिं विरोहु मणिकिरणहिं ॥१॥

२

मलयविलसिया—जत्थ णिसण्णो पणयपसण्णो।
सिंगारहरो रामाणियरो ॥१॥
णियमंति जणं जहिं भत्तियर कड्ढियहर परंपडिहारणर।
पहुअग्गइ सेवादूसणउं णिट्ठीवणु जिंभणु पहसणउं।

MBP give, at the commencement of this Samdhi, the following stanza:

श्रीर्वाग्देव्यै कुप्यति वाग्देवी द्वेष्टि संततं लक्ष्म्यै।
भरतमनुगम्य सांप्रतमनयोरात्यन्तिकं प्रेम ॥

GK do not

१. १. MBP चाउरिवित्तासणइं। २. MBP सुविदित्तपट्टासणइं। ३. G खणमिलिय। ४. MBPT कु वि णिवरु। ५ MBP कामिहिं कामिणिहिं। ६. P रइणिवहिं।

२. १. MBP वर°।

सन्धि ६

दूसरे दिन अपने भवनमे, सुरवरोसे संस्तुत, सम्पत्तिका विधाता, नागों और दानवों तथा मनुष्योंके द्वारा सेवित आदरणीय ऋषभ दरबारमें स्थित थे।

१

स्वर्णनिर्मित मणिसमूहसे विजड़ित, प्रभासे भास्वर सिंहासनके आसनपर आसीन परम-प्रभु ऋषभका हमारे द्वारा क्या वर्णन किया जाये ? गादीके आसन, विचित्र चमकते हुए वेत्रासन, रत्नोसे जड़ित लोहासन और दण्डोंसे उन्नत दण्डासन दे दिये गये। एकसे एक प्रमुख राजा क्षण भरमे इकट्ठे हो गये, और बहुत-से माण्डलीक राजा वहाँ आकर बैठ गये। कोई राजा केशरसे चर्चित है मानो लक्ष्मीरूपी कामिनीके अनुरागसे अधिगृहीत है। कोई राजा चन्दनसे धूसरित सफेद दिखाई देता है मानो अपने ही यशसे भरा हुआ हो। कस्तूरीसे विलिप्त कोई राजा ऐसा जान पड़ता है कि जैसे सूर्य और चन्द्रमाके डरसे अन्धकारको धारण कर रहा है। किसी राजापर हारावली इस प्रकार व्याप्त है, मानो काले बादलमे बिजली हो। किसीपर चंचल चमर पड़ रहे हैं, जो ऐसे लगते हैं मानो कीर्तिरूपी कमलिनीके दल हों। उस दरबारमें कपूरकी प्रचुर धूल उड़ रही है, जिसमें मधुकर गुनगुनाता हुआ मँडरा रहा है। किसीने आते हुए उसे हटा दिया और पानके लिए अपना हाथ फैलाया।

घत्ता—जहाँ विद्याधर स्वामियों, कामना रखनेवाले समस्त देवरूपी बन्दियों, तथा प्रणाम करते हुए रतिसमूहों (?) और मणि-किरणोमें विरोध है (??) ॥१॥

२

जहाँ प्रणयसे प्रसन्न शृंगार धारण करनेवाला स्त्रीसमूह बैठा हुआ है। जहाँ यष्टि धारण करनेवाले भक्तिनिष्ठ श्रेष्ठ प्रतिहारी मनुष्य लोगोंका नियन्त्रण करते हैं। राजाके सामने थूकना, जँभाई लेना और हँसना सेवाका दूषण माना जाता है। पैर हिलाना, तिरछा देखना, हकारना,

५ कमकंपणु अद्दु णिहालणउं हिंकारउ भंउंहाचालणउं।
खासणु धम्मिल्लामेल्लणउं करमोडि परासणपेल्लणउं।
अवठंभणु दप्पणदंसणउं अइजंपणु सगुणपसंसणउं।
सवियारउ कायणियच्छणउं इट्ठागमदेवदुगुंछणउं।
संकेयवयणअवयारणउं परणिदणु पायपसारणउं।
१० अवरु वि जं विणएं विरहियउं तं म करह गुरुयणगरहियउं।
मण्णहु माणुसु सामिहि तणउं ढंकहु दीणत्तणु अप्पणउं।

घत्ता—इय लक्खिउ अक्खिउ सेवयहो अहिमाणिहिं वणु चंगउ।
दउवारियपेरियदंडएण मा छिप्पउ तहु अंगउं॥२॥

३

मलयविलसिया—सुरवरसारउ एम भडारउ।
अच्छइ जावहिं सुरवइ तावहिं॥१॥

संचिंतइ अवहीणाणधरु बारहरविसंणिहकुलिसयरु।
पुव्वहं परमेसरेण रमिय कुमरत्ते वीस लक्ख गमिय।
५ भुंजंतहु महि तेसट्ठि गय अज्जु वि अवलोयइ चवल हय।
अज्जु वि मणि मण्णइ मत्त गय इच्छइ अज्जु वि संदण सधय।
अज्जु वि घरि रइ किंकरिणिवहि अज्जु वि ण विरप्पइ कामसुहि।
को हुयवहु इंधणेण धवइ सरिसलिले सरिणियराहिवइ।
को भोएं जीवहु करइ दिहि बलवंतउ सव्वहुं कम्मविहि।
१० जाणंतु वि मुज्झइ देउ जहिं अण्णाणु अवरु किं भणमि तहिं।

घत्ता—रइराविउ भाविउ [10] एउं जगु किं पि ण [11] याणइ जुत्तउ॥
सकलत्तहिं पुत्तहिं मोहियउ णिवडइ [12] हेट्ठाहुत्तउ॥३॥

४

मलयविलसिया—दुट्ठे धिट्ठे डज्झसु विट्ठे।
ण तुह धणेणं तित्ति इमेणं॥१॥

अज्जु वि णउ फिट्टइ भोयरइ अज्जु वि णउ चिंतइ परम गइ।
अज्जु वि पहुहियउ णउ उवसमइ माणवरमणीरमणउ रमइ।
५ सरणिहिसमाइं भइ पयडियउ अट्ठारहकोडाकोडियउ।
णट्ठाइं धम्मकम्मंतरइं दंसणणाणइं चरियइं वरइं।

---

२. M भउहा°। ३. M करहि, BP करहु। ४ MBP माणसु। ५. MB अहिमाणहि।
३. १. MBP जइयहुं। २. MBP तइयहु। ३ MBP रइ घरि। ४. B °णिवहो। ५. B कामसुहो।
६ M सरणियरा°। ७. MBP सव्वहं बलवतउ। ८ MBP जाणंतउ। ९. K एहु।
१० MBPK एम। ११. MP ण जाइ; B ण जाणइ। १२. MBP हेट्ठाहुंतउ।
४ १. MBP ण उवसमइ। २ T सरिणिहि°। ३. B Omits this foot.

भौहोंका संचालन करना, खांसना, चोटी खोलना, हाथ मोड़ना, दूसरेके आसनको खिसकाना, सहारा लेना, दर्पण देखना, अत्यधिक बोलना, अपने गुणोंकी प्रशंसा करना, अत्यन्त विकारग्रस्त होना, शरीरको देखना, इष्ट, आगम और देवकी निन्दा करना, पैर फैलाना (इसके सिवा) और जो विनयसे रहित तथा गुरुजनोंके द्वारा गर्हित बातें है, उन्हें नही करना चाहिए। राजाके आदमीको मानना चाहिए और अपनी दीनताको छिपाना चाहिए।

घत्ता—मैने ये सेवकके लक्षण कहे। परन्तु जो स्वाभिमानी है उसके लिए वन ही अच्छा। द्वारपालके द्वारा प्रेरित दण्ड उसका (स्वाभिमानीका) अंग न छुए ॥२॥

३

सुरवर श्रेष्ठ आदरणीय ऋषभ जब इस प्रकार विराजमान थे, तबतक अवधिज्ञानको धारण करनेवाला, तथा बारह सूर्योंके समान वज्रको धारण करनेवाला इन्द्र सोचता है कि परमेश्वरके द्वारा रमण किये गये बीस लाख पूर्व वर्ष कुमारकालमे बीत गये। और धरतीका भोग करते हुए त्रेसठ लाख पूर्व वर्ष चले गये। लेकिन वह आज भी चंचल घोड़ोंको देखते है। आज भी अपने मनमें मतवाले हाथियोको मानते हैं, आज भी ध्वज सहित रथोको चाहते है, आज भी उनकी घर और अनुचरसमूहमे रति है। आज भी वह कामसुखसे विरक्त नही होते। आगको ईंधनसे कौन शान्त बना सकता है, नदियोंके जलोंसे समुद्रको कौन शान्त कर सकता है, भोगके द्वारा कौन जीवमें धैर्य उत्पन्न कर सकता है? कर्मका विधान सबसे बलवान् होता है। जब देव जानते हुए भी मोहग्रस्त होते हैं तब किसी अज्ञानीको मै क्या कहूँ?

घत्ता—रतिसे रंजित यह जग उन लोगोके लिए अच्छा लगता है, कि जो और दूसरी युक्ति नही जानते। अपनी स्त्रियों और पुत्रोसे मोहित यह जग नीचेसे नीचे गिरता है ॥३॥

४

दुष्ट और धृष्ट तृष्णामे तुम जलते हो, आज भी इस धनसे तुम्हारी तृप्ति नही हो सकती। आज भी भोगरति नष्ट नहीं होती, आज भी वह परम गतिकी चिन्ता नही करते। आज भी स्वामीका हृदय शान्त नही होता, वह मानव रमणियोसे रमण करनेमें रमता है। अट्ठारह कोड़ा-कोड़ी सागर समय बीत गया है। धर्म और कर्मका अन्तर नष्ट हो गया है, दर्शन, ज्ञान और श्रेष्ठ

आयारइं पंचमहव्वयइं[4] अणुवयगुणवयसिक्खावयइं।
ण पयासइ णवपयत्थसहिउ सिद्धंतु अणाइ अरुहें[5] कहिउ।
इय चिंतिवि इंदें जाणियउं अवहिए भवियव्वु पमाणियउं।
१० णाहहु अज्जु जि चरियावरणु धुउ णिम्मइ णेण्हइ वयवरणु[6]।
पुण्णाउस[7] णीलंजस णडइ गयजीविय जइ अग्गइ पडइ।
तो[8] होइ विरायहु कारणउं इह[9] दुविहु संजमुद्धारणउं।
जिणधम्मपवत्तणु होइ जणे इय संभरेवि पुणु पुणु वि मणे।

घत्ता—णीलंजस रइवस [10]मृगणयण इंदें भणिय अणिंदहो ॥
१५ तुहुं गच्छहि पेच्छहि कमजुयलु णच्चहि पुरउ जिणिंदहो ॥४॥

५

मलयविलसिया—ता तुंगथणी सयमहरमणी।
रयणमयघरं साकेयपुरं ॥१॥
आया णहेण छत्तओयरिय विज्जुलिय णाइं चलविप्फुरिय।
पोडहिय[1]गाणसुरपरियरिय णाहेयणिहेलणि अवयरिय।
५ पणवेप्पिणु पहु ओलग्गियउ पेक्खणयहु[2] अवसरु मग्गियउ।
णाडयपारंभि पढमु भणिउं वीसंगु वि पुव्वरंगु जणिउ।
वाइयउ तिपुक्खरु सुंदरउ सुपसिद्धउ सोलहअक्खरउ।
चउमग्गु दुलेवणु छक्करणु तियतिल्लउ तिलयउ मणहरणु।
तिगयउ[3] तिपंचारु[4] तिजोयेयरु[5] तिकरिल्लउ पंचपाणिपहरु।
१० तिपसारउ अवरु तिमज्जणउं वीसालंकारसलक्खणउं।
अट्ठारहजाइहिं मंडियउ एयहिं गुणेहिं अवरुंडियउ।
चच्चउडु भणिउं पुणु चाचउडु छंप्पियपुत्तु[6] वि मणहारि फुडु।
इय तालहिं[7] तीहिं अलंकरिउ वहुयहिं तब्भेयहिं परियरिउ।
वासुद्धालिंगियसंणियउं ओणद्धउं वज्जउं वण्णियउं।
१५ घत्ता—जहिं लोयण तिहुअणु जलहिसम सुइसंखाइ सुललियहिं।
चलवद्धहिं[8] अद्धहिं मुक्कियहिं वत्तावत्तंगुलियहिं ॥५॥

---

४ MBP °महावयइं। ५ MB अरुहकहिउ। ६ MBP तवयरणु। ७. P पुव्वाउस। ८. P तो।
९ MBPK इय but G इह with gloss संसारे। १० MBP मयणयण।

५. १. MBP पाडहिं गायण°। २ MB पेक्खणहो। ३ MB तिगइयउ। ४. MB तिचारु; P तिमचारु, T तियचारु। ५. MBP तिजोयवरु। ६. MB छप्पिउ वुत्तु; P छप्पिउडु वुत्तु। ७. MB ताडहिं।
८. MBP चवलद्धहिं; T चवलद्धहिं but explains it as स्थितमुक्ताभिः।

चारित्र्य भी नष्ट हो गये है, आचार, पाँच महाव्रत, अणुव्रत, गुणव्रत और शिक्षाव्रत भी नष्ट हो चुके हैं। अर्हन्त भगवान्के द्वारा कहा गया नौ पदार्थोंसे युक्त अनादि सिद्धान्त आज प्रकाश नहीं पा रहा है—यह सोचकर इन्द्रने यह जान लिया और अवधिज्ञानसे प्रमाणित कर लिया कि स्वामीको आज भी चारित्रावरणी कर्मका उदय है, उसके शान्त होनेपर ये निश्चित रूपसे तप ग्रहण करेंगे। यदि पूर्ण आयुवाली नीलंजसा (नीलांजना) नाट्य करती है और उनके सामने निर्जीव होकर गिर पड़ती है तो यह उनके वैराग्यका कारण होगा, और इससे दो प्रकार संयमका उद्धार होगा। लोगोंमें जिनधर्मका प्रवर्तन होगा—इस प्रकार अपने मनमें बार-बार विचारकर।

घत्ता—रतिकी अधीन मृगनयनी नीलंजसाको इन्द्रने कहा—"तुम जाओ और अनिन्द्य जिनेन्द्रके चरणकमलोंके दर्शन कर उनके सामने नृत्य करो" ॥४॥

५

तब ऊँचे स्तनोंवाली इन्द्रकी रमणी (नीलांजना) रत्ननिर्मित घरोंवाली अयोध्या नगरी पहुँची। कृशोदरी वह आकाश-मार्गसे इस प्रकार आयी जैसे चंचल चमकती हुई बिजली हो। गान प्रारम्भ करनेवाले देवोंसे घिरी हुई वह नाभेय (ऋषभनाथ) के घर अवतरित हुई। प्रणाम कर उसने प्रभुकी सेवा की और नाट्याभिनयका अवसर माँगा। सबसे पहले उसके नाट्यके प्रारम्भमें अभिनीत होनेवाले बीसों अंगोंसे परिपूर्ण पूर्व रंगका अभिनय किया। तीन प्रकारके सुन्दर पुष्कर[1] वाद्य, तीन प्रकारके भाँड़ वाद्य (उत्तम, मध्यम और जघन्य), सुप्रसिद्ध सोलह अक्षरों-वाला, चार मार्ग, दुलेपन, छह करण, तीन यतियों सहित, तीन लयोंवाला, सुन्दर तीन गतिवाला, तीन चारवाला, तीन योगको करनेवाला, तीन प्रकारके करोंसे युक्त, पाँच पाणिप्रहार, त्रिप्रकार और त्रिप्रसार, और त्रिमज्जन (त्रिमार्जनक) इस प्रकार बीस अलंकारोंके लक्षणोंसे युक्त, अट्ठारह जातियोंसे मण्डित और इन गुणोंसे आलिंगित नृत्यका प्रदर्शन किया। और भी चच्चपुट, चाचपुट और सुन्दर छप्पयपुट; इन तीन तालोंसे अलंकृत और उनके अनेक भेदोंसे सहित, वाम, ऊर्ध्व और आलिंगत संज्ञाओंवाला अनवद्य वाद्यका मैंने वर्णन किया।

घत्ता—जहाँ द्विश्रुतिक त्रिश्रुतिक, और चतुःश्रुतिक श्रुति संख्याओंसे सुललित चलबद्ध अर्धमुक्त और व्यक्त और अव्यक्त अंगुलियोंके द्वारा करनेवाले आदरणीय देवोंने गीत प्रारम्भ किया ॥५॥

१. पुष्कर वाद्य (चर्मावनद्ध वाद्य, उत्तम, मध्यम और जघन्य); सोलह अक्षर (क ख ग घ, ट ठ ड ढ, त थ द ध, स र ल ह); चार मार्ग (आलिप्त, अर्दित, गोमुख और वितस्ति); दुलेपन (वामलेपन, ऊर्ध्वलेपन), छह करण (रूप, कृत, परिति, भेद, रूपशेषी और उद्य); तीन यतियाँ (सम, श्रोतोगति, गोपुच्छ); त्रिलय (द्रुत, मध्य, विलम्बित), त्रिगति (वाम, गुत और ऊर्ध्व); त्रिचार (सम, विषम, सम-विषम); त्रियोग (गुरुसयोग, लघुसंयोग, गुरुलघुसंयोग); त्रिकर (गृहीत, अर्धगृहीत और गृहीत-मुक्त), मार्जनक (मायूरी, अर्धमायूरी और कर्मारवी)।

६

मलयविलसिया—विरईपुसिरे[1] वंज्जे[2] सुसिरे।
णूकयपसंसे[3] जायउ[4] वंसे ॥१॥
सरु जेत्थु[5] झुणंति सुअत्थसुइ[6] थिय मुक्कंगुलि व सुअट्ठसुइ।
कंपंतियाइं[7] उग्गमु[8] तिसुइ मुक्कंगुलियइ हूयउ दुसुइ।
५ वत्तंगुलि मोक्खवसेण कय सेहुं[9] सज्जें मज्झिमपंचमय।
सरिसहुं धेवउ[10] कंपंतियए [11]सामण्णसरंतरसंणियए।
गंधारणिसायविचलियया[12]इ अद्धइ मुक्कइ अंगुलियया[13]इ।
पयणियवेणू णाणायरेहिं तुंबरुणारयसंणिहसुरेहिं।
पयडियउ जि देवागमि भणिउं णिक्कलु तेप्पु[14] वि तंतीरणिउं।
१० घणु कंसतालजुयलाइयउ समहत्थु[15] देवि जहिं [16]चालियउ।
अमरहिं [17]जिणमणसंमाइयहिं पारद्धउ गेउ महाइयहिं।
उप्पण्णउ उरठाणंतरए [18]बावीस सुईउ णहंतरए।
कमरइयपमाणहिं संछिवइ वड्ढंतु णाउ वुड्ढि हि घिवइ।
सुइसु वि स रि ग म प ध[19] णी यणाम सर सत्त तेसु दोण्णि वि जि गाम।
१५ घत्ता—सुरपुज्जइ सज्जइ किंणरहिं जाइउ [20]सत्त पउत्तउ ॥
एयारह सुयरह मज्झिमइ पीणियजणवयसोत्तउ ॥६॥

७

मलयविलसिया—सत्तेयारह इय अट्ठारह।
जाइणिबद्धहं लक्खविसुद्धहं ॥१॥
अंसहं सउ चालीसाहियउ एक्कुत्तरु तं पि पसाहियउ।
तहिं होंतउ सवणरवण्णियउ गीईउ[2] पंच उप्पण्णियउ।
५ सुद्धा भिण्णा पुणु वेसरिय भउडी साहारणिया सरिय[3]।
तहिं गामराय अवर वि भणिया भयवयमयगुत्तितच्चगणिया।
इय तीस कमेण जि संगहिय उडुमाण जि माणवसवणहिय।
पहिलारउ टक्कराउ[4] कहिउ अणुवेक्खासमभासहिं सहिउ।
अट्ठहिं पंचसु वि पयासियउ [5]बिहिं वि विहासहिं भूसियउ।

---

६. १. MBP विरइयपुसिरे। २ MBPT वज्जियसुसिरे। ३ MBP णिकयपससे। ४. MBP जाओ। ५. MBP जेसु। ६. P सुअत्थवई। ७ BP कंपंतियाउ। ८. MBP उग्गउ। ९ P सहुं मज्झें। १०. MBP वेयउ T वइवउ। ११. M सामण्णें सरंतरसंतियए; B सरंतरसंनियए; सरंतरसंणियए। १२ M विचलियाइ, B विवलियाइ; P णिचलियाइ। १३ MB अगुलियाइ; P अंगुल्लियाइ। १४ P तिपुव्वि। १५ MB समहत्य। १६. K संचालियउ। १७ P जिणसमण°। १८. MBP बावीस वि सुइउ। १९. MP °पवणीसणाम; B °पधणिणाम। २०. BP सुत्तपउत्तउ।

७ १. MBP लक्खु वि सुद्धहं। २. MBP गीयउ पंचउ। ३. MBP भणिय। ४. MBPT ढक्कराउ। ५. MP विहिं चेय विहासहिं; B तिहिं चेय हिहासहिं।

६

विरतिके नाशक, मनुष्योंके द्वारा प्रशंसित बाँसके सुषिर वाद्यसे स्वर उत्पन्न हुआ। जिसके ध्वनित होनेपर शाश्वत श्रुतियाँ (बाईस श्रुतियाँ षड्ज और मध्यम ग्रामोंमें-से प्रत्येककी बाईस) मुक्त अंगुलीसे आठ श्रुतियाँ, काँपती अँगुलीसे तीन श्रुतियाँ उत्पन्न हुईं और मुक्त अँगुलीसे दो श्रुतियाँ। व्यक्त अँगुलीके छोड़नेके कारण षड्जके साथ मध्यम और पंचम स्वर तथा सामान्य स्वरोंकी संज्ञाके समान काँपती हुई अँगुलीसे धैवत, गान्धार और विषाद स्वरोसे संचालित, अर्ध-मुक्त ध्वनियाँ अँगुलियोके द्वारा नाना आदरवाले, तुम्बरु और नारदके समान देवोंने ठीक की गयी वीणाको उस प्रकार प्रकट किया जिस प्रकार आगममें बताया गया है। दो प्रकारके वीणा-वाद्यों (विष्कल और त्रिपंच) घन वाद्यो (कांस्यतालादि) के द्वारा अनेक तालोंका एक साथ वादन हुआ। जिन भगवान्‌का मनमे सम्मान करनेवाले महादरणीय देवोने गीत प्रारम्भ किया। नाभिस्थानमें उत्पन्न हुई वायु उर:स्थानमें क्रमशः नाद बनकर, कर्णस्थानमे बाईस श्रुतियां बनाती है, और क्रमसे रचित प्रमाणोंके द्वारा (अर्थात् क्रमसे सात स्वरोका उच्चारण करनेपर) बढ़ता हुआ नाद वृद्धिको प्राप्त होता है। इन बाईस श्रुतियोमे सा रे ग म प ध नि नामक सात स्वर और दोनों ग्राम कहे (इनमे षड्ज ग्राम और मध्यम ग्राम हैं)।

घत्ता—देवोंके द्वारा पूजित षड्जमें किन्नरोंके द्वारा सात जातियाँ कही गयी हैं। और मध्यम ग्राममे लोगोके कानोको सुख देनेवाली ग्यारह जातियाँ कही गयी हैं। (इस प्रकार कुल अठारह जातियाँ होती हैं।)

७

सात और ग्यारह, इस प्रकार अट्ठारह जातियोमे निबद्ध और लक्ष्य विशुद्ध अंगोंके एक सौ चालीस भेद होते हैं, उनका भी प्रदर्शन किया गया। उनमे कानोको सुन्दर लगनेवाली पाँच प्रकारकी गीतियाँ होती हैं, जो शुद्धा, भिन्ना, वेसरा, गौड़ी और साधारणाके रूपमे जानी जाती है, इनमें और भी ग्राम राग कहे गये हैं। सात, पाँच, आठ, तीन और सातकी संख्यामें गिने जाते है इस प्रकार क्रमशः तीस भेदोंका संग्रह किया। ये छह राग मानवोंके कानोंको सुख देनेवाले है, इनमे पहला राग टक्क राग कहा गया है, जो बारह भाषारागोंसे सहित है। आठ भाषारागों

१० आवाहियमोहियजगविलउ हिंदोलउ चउभासाणिलउ।
मालविकेसिउ छहि लुक्कियउ अवराहिं मि दोहिं मि अंकियउ।
सुद्धउ सज्जु वि सत्तहिं कलिउ ककुहु मि तिहिं भासहिं संवलिउ।
घत्ता—सुविहासहिं सरसहिं विहिं सहिउ सो गाइउ सुइलीणउ ॥
मणहरियउ किरियउ दाविया जहिं परिगयपरिमाणउ ॥७॥

८

मलयविलसिया—दह चउगुणिया संखा भणिया।
भासाणं सा छह वि विहासा ॥१॥
भणियउ रंजियबुहयणमणउ एयारह दहवर मुच्छणउ।
एक्कुणवण्णास वि ताण जहिं किं वण्णमि गेयारंभु तहिं।
५ संजोय ताण बहुदिण्णरस णीलंजस णच्चइ विमलजस।
भणु कासु ण सा दिट्ठिहि भरइ णच्चंती जणहियवउ हरइ।
तेरहविहु सीसु पणच्चियउ छत्तीस दिट्ठि परियंचियउ।
णवतारउ परिपालियरइउ अट्ठ वि रइयउ दंसणगइउ।
तेत्तियविहु पुणरवि भावियउ णंदप्पयारु फुडु दावियउ।
१० भू सत्तभेय परहियहर छव्विह णासा कवोल अहर।
सत्तविहु चिबुउ[१] चउ मुहहु राय णव गल चउसट्ठि वि करण भाय।
सोलहविहु तिविहु चउव्विहु वि किउ करणमग्गु भुउ दहविहु वि।
उरु सरविहु पासजुयलु तिविहु पोट्टु वि पायडियउ तं तिविहु।
कडियलु जंघा कमकमलाइं तव्विहइं जि णिहियइं विमलाइं।
१५ सउ करणहं वसुसंखाहियउ चलवत्तीसंगहारमियउ।
चउ रेयय णडगुरुकित्तिधय सत्तारह पिंडीबंध कय।
चारिउ सोलस दुअसंखियउ णच्चियउ जियक्खहिं अक्खियउ।
वीस वि मंडलइं पयासियइं[२] ठाणाइं तिण्णि संदरिसियइं।
घत्ता—संचरियहिं धरियहिं थाइयहिं[३] भावहिं णडइ अणेयहिं ॥
२० भासाइहिं[४] जाइहिं णवरसहिं दावियणाणाभेयहिं ॥८॥

९

मलयविलसिया—वियलियहरिसं स हि णवमरसं।
झत्ति धरंती दिट्ठ मरंती ॥१॥
जिणणाहे सा णीलंजसिय णं केण वि चित्ति लिहिवि पुंसिय[१]।
कंदप्पकंति णं पंसुंसिय[२] लायण्णतरंगिणि णं सुसिय[३]।
५ णं खणि विद्धंसिय रइहि पुरि णं हय जणणयणणिवाससिरि।

---

८. १. MT विउउ, B चिवउ, GK चिउवु। २ M पसासियइं; P पसाहियइं। ३. MBP आइयहिं।
४. K हासाइहिं।

९. १. MB फुसिय। २ MBP पयपुसिय। ३. MB सुसुय।

और दो विभाषारागों सहित पंचम रागका प्रदर्शन किया गया। समस्त विश्वकी स्त्रियोंको बाधित और मोहित करनेवाला हिन्दोलराग चार भाषारागोंका घर है। मालव—कौशिक राग छह जातियोंमें कहा जाता है और वह दो भाषारागोंमें अंकित है। शुद्ध षड्ज सात जातियोंमें रचा जाता है।

घत्ता—इस प्रकार सरस सुविभास रागोंके द्वारा विधिपूर्वक कानोंको लीन करनेवाला वह (गान) गाया गया कि जिसमें सीमित परिमाणवाली सुन्दर क्रियाएँ दिखायी गयीं ॥७॥

८

दसमें चारका गुणा करनेपर चालीस भाषारागोंकी संख्या जाननी चाहिए। विभाषाराग छह कहे गये हैं। विद्वानोंके मनका रंजन करनेवाली, ग्यारह और दस, इस प्रकार कुल इक्कीस मूर्च्छनाएँ कही गयी हैं। जहाँ उनचास तानें कही जाती है, वहाँ मैं गीतारम्भका क्या वर्णन करूँ। उनके संयोगोंसे विभिन्न रसोंकी उत्पत्ति होती है। इस प्रकार विमल यशवाली नीलांजना नृत्य प्रारम्भ करती है। बताओ वह किसकी दृष्टिको आकर्षित नहीं करती ? नाचती हुई वह लोगोंके हृदयका अपहरण कर लेती है। उसने तेरह प्रकारसे सिरको नचाया। छत्तीस प्रकारसे दृष्टिका संचालन किया, रागको पोषित करनेवाले नौ तारको और आठों दर्शनगतियोंकी रचना की। फिर उसने तैंतीस भावोंका प्रदर्शन किया। और फिर नौ नन्दोका प्रदर्शन किया। हृदयका हरण करनेवाला सात प्रकारका भ्रूसंचालन, छह प्रकारका नाक-कपोल और अधरोंका संचालन, सात प्रकारका चिबुक और चार प्रकारका मुखराग, नौ प्रकारका कण्ठ और चौसठ प्रकारके हस्तके भेदोंका प्रदर्शन किया। सोलह, तीन और चार प्रकारके करण मार्ग और दस प्रकारके भुज-मार्ग बताये। उरके पाँच प्रकारों, पार्श्वयुगलके तीन प्रकारों और उदरके तीन प्रकारोंको प्रकट किया। कटितल, जाँघों और चरण-कमलोंका प्रदर्शन भी उनके अपने भेदोंके साथ किया। इस प्रकार चंचल बत्तीस अंगहारोंके साथ एक सौ आठ कारणोंका प्रदर्शन उसने किया। चार प्रकारका रेचक, सत्तरह प्रकारके पिण्डीबन्धोंका, कि जो नटराजके कीर्तिध्वज है, प्रदर्शन किया। इन्द्रियों-को जीतनेवाले गणधरोंके द्वारा बतायी गयी बत्तीस प्रकारकी चारियोंका नृत्य किया। उसने बीस प्रकारके मण्डल और तीन संस्थानोंका सुन्दर प्रदर्शन किया।

घत्ता—धृति आदि संचारी भावों, स्थायी भावों, अनेक भाषाओं और जातियों, नाना भेदोंके प्रदर्शक नवरसोंसे नीलांजना नृत्य करती है ॥८॥

९

शीघ्र ही हर्षको विगलित करनेवाले नवम रस (शान्त रस) को वह धारण करती है, और ऋषभजिन उसे मरती हुई देखते है। जिननाथने उस नीलांजनाको देखा, उन्हें लगा मानो सौन्दर्यकी नदी सूख गयी हो, मानो क्षण-भरमें रतिकी नगरी नष्ट हो गयी हो, मानो जननेत्रोंमें

णं रंगसरोवरि पउमिणिय कम्मेण कालरूवें लुणिय ।
णं चंदरेह णहि अत्थमिय णं सुरधणुसिरि मरुणा समिय ।
रसवाहिणि दिण्णरवण्णसुह णं णासिय पिसुणें सुकइकह ।
णउ थण णउ णयणगुण णउ वयणु णउ विउलु रमणु संचियमयणु ।
१० णउ केसभारु णउ हारलय णउ जाणहुं सुंदरि कहिं मि गय ।
सुण्णउं पंगणु हरिणीलयलु णं विज्जुविवज्जिउ मेहउलु ।
अमराहिवणारिरयणु मुयउ तं पेच्छिवि कोऊहलु हुयउ ।
हा हा भणंतु सोएं लइउ अत्थाणु असेसु वि विम्हइउ ।

घत्ता—तहि मरणे करुणें कंपियउ भरहजणणु सवियक्कउ ॥
१५ तुण्हिक्कउ थक्कउ तिजगगुरु कुसुमयंतु रइमुक्कउ ॥९॥

इय महापुराणे तिसट्ठिमहापुरिसगुणालंकारे महाकइपुप्फयंतविरइए महाभव्वभरहाणुमण्णिए महाकव्वे णीलंजसाविणासो णाम छट्ठमो परिच्छेओ सम्मत्तो ॥ ६ ॥

॥ संधि ॥ ६ ॥

---

४ MBP सरोवर° । ५. MBP णउ करकम । ६ M विंभइउ, B विंभयउ; P विंभियउ । ७. MBP करणें । ८ MBP कुसुमयंत° and gloss in P कुसुमवदन्ता या नीलंजसा तस्या रतेर्मुक्तः ।

निवास करनेवाली श्री आहत हो गयी हो, मानो नाट्यरूपी सरोवरकी कमलिनीको कालरूपी सर्पने काट लिये, मानो चन्द्रलेखा आकाशमे अस्त हो गयी; मानो इन्द्रधनुषकी शोभाको हवाने शान्त कर दिया हो। न तो स्तन, न नृत्यगुण, न मुख और न संचित काम विपुल रमण, न केश-भार, और न हारलता। मैं नही जानता सुन्दरी कहाँ गयी। नीलमणियोसे विजड़ित आँगन सूना है, मानो बिजलीसे रहित मेघपटल हो। इन्द्रकी रमणी मर गयी। यह देखकर उन्हें कुतूहल हुआ। हा-हा कहते हुए वह शोकग्रस्त हो गये। समूचा दरबार विस्मयमे पड़ गया।

घत्ता—उस मृत्यु और करुणासे काँपते हुए भरतके पिता विस्मयसे भर उठे। कुसुमके समान दाँतोंवाले और रतिसे मुक्त त्रिजगगुरु चुप हो गये ॥९॥

इस प्रकार त्रेसठ महापुरुषोंके गुणालंकारोंसे युक्त इस महापुराणमें महाकवि पुष्पदन्त द्वारा विरचित और महाभव्य भरत द्वारा अनुमत महाकाव्यका निलंजसा-विनाश नामक छठा परिच्छेद समाप्त हुआ ॥६॥

संधि ७

कयतिहुयणसेवें चिंतिउ देवें जगि धुउ किं पि ण दीसइ।
जिह दावियणवरस गय णीलंजस तिह अवरु वि जाएसइ ॥१॥

१

खंडयं[1]—इह संसारदारुणे वहुसरीरसंघारणे।
वसिऊणं दो वासरा के के ण गया णरवरा ॥१॥
पुणु परमेसरु सुसमु[2] पयासइ धणु सुरधणु व खणद्धे[3] णासइ।
५ हय गय रह भड धवलइं छत्तइं सासयाइं णउ पुत्तकलत्तइं।
जंपाणइं जाणइं धयचमरइं रविउग्गमणे जंति णं तिमिरइं।
लच्छि विमल कमलालयवासिणि णवजलहरचल वुहउवहासिणि।
तणु लायण्णु वण्णु खणि खिज्जइ कालालिं मयरंदु व पिज्जइ।
वियलइ जोव्वणु णं करयलजलु णिवडइ माणुसु णं पिक्कउ फलु।
१० तृयहि[4] लवणु जसु उत्तारिज्जइ सो पुणरवि तणि उत्तारिज्जइ।
जो महिवइ महिवइहि णविज्जइ सो मुउ घरदारेण ण णिज्जइ।
घत्ता—किर जित्तउ परवलु भुत्तउ महियलु पच्छइ तो वि मरिज्जइ॥
इयं[5] जाणिवि अद्धुउ[6] अवलंविवि[7] तउ णिज्जणि वणि णिवसिज्जइ ॥१॥

२

खंडयं—वइरिरायदप्पहरणं किं जोयइ भुयपहरणं।
मण्णइ अप्पाणं घणं सरणविरहियं जयमिणं ॥१॥
जइ वि धरंति वीर णर किंणर अरुण वरुण सपवण वइसाणर।
गरुड जक्ख रक्खस विज्जाहर भूय पिसाय णाय ससि दिणयर।

MBP have, at the commencement of this samdi, the following stanza ;—

हंहो भद्र प्रचण्डावनिपतिभवने त्यागसंख्यानकर्ता
कोऽयं श्यामः प्रधानः प्रवरकरिकराकारवाहुः प्रसन्नः।
धन्यः प्रालेयपिण्डोपमधवलयशोधौतधात्रीतलान्तः
ख्यातो वन्धु कवीनां भरत इति कथं पान्थ जानासि नो त्वम् ॥

MB read हंहे for हंहो; प्रचण्डाधनि° for प्रचण्डावनि°; and °संख्यात° for °संख्यान°। GK do not give it

१. १. M reads खंडियं throughout। २ T ससमु but adds सुसमु वा शोभनोपशमयुक्तः। ३. P खणद्धं। ४. MBP तिर्यहि। ५. B इउ। ६ B अधुवु; P अद्धउ। ७. MBP अवलंबियभुउ but gloss in P तपो गृहीत्वा।

सन्धि ७

१

त्रिभुवनकी सेवा करनेवाले ऋषभदेवने विचार किया कि संसारमें शाश्वत कुछ भी नही दिखाई देता जिस प्रकार नीलांजना नवरसोंका प्रदर्शन कर चली गयी, उसी प्रकार दूसरा भी संसारसे जायेगा ॥१॥

खंडय—अनेक शरीरोंका नाश करनेवाले इस दारुण संसारमें दो दिन रहकर कौन-कौन नरश्रेष्ठ नहीं गये। फिर परमेश्वर शमभावको प्रकाशित करते हैं—धन इन्द्रधनुषकी तरह आधे पलमें नष्ट हो जाता है। घोड़े-हाथी, रथ-भट, धवल छत्र, पुत्र और कलत्र कुछ भी शाश्वत नही है। जंपाण, यान, ध्वज, चमर उसी प्रकार नाशको प्राप्त होते हैं जिस प्रकार सूर्यका उदय होनेपर अन्धकार चला जाता है। कमलके घरमे निवास करनेवाली विमल लक्ष्मी नवजलधरके समान चंचल और विद्वानोंका उपहास करनेवाली होती है। शरीर लावण्य और रंग एक पलमे क्षीण हो जाते हैं, कालरूपी भ्रमर उन्हें मकरन्दकी तरह पी जाता है। यौवन इस प्रकार विगलित हो जाता है मानो अंजुलीका जल हो। मनुष्य इस प्रकार गिर जाता है मानो पका हुआ फल हो। स्त्रियोके द्वारा जिसका नमक उतारा जाता है वही फिर तिनकोपर उतार दिया जाता है। जिस राजाको दूसरे राजा नमस्कार करते हैं, वही मरनेपर घरकी स्त्रीके द्वारा नही पहचाना जाता है।

घत्ता—चाहे शत्रुबल जीता जाये या महीतल भोगा जाये, बादमे तब भी मरना होगा। इस प्रकार अध्रुवत्व (अनित्यता) को जानकर, और तप ग्रहण कर एकान्त वनमे निवास करना चाहिए ॥१॥

२

शत्रुराजके दर्पको चूर-चूर करनेवाले हाथ और हथियारको क्या देखता है। अपनेको समर्थ समझता है, यह जन शरणहीन है। यद्यपि इसे वीर नर, किन्नर, अरुण, वरुण, पवन सहित अग्नि,

५ पडिबलकुलकाणणकालाणल इंद पडिंदइमिंद महाबल।
पण्णारहखेत्तुब्भव जिणवर कुलयर चक्कवट्टि हरि हलहर।
जइ वि धरंति देहभा भासुर पवराउहपवीण देवासुर।
जइ परसइ भयरहरब्भंतरि किंकरहरिकरिरहवूहंतरि।
सरसरिगिरिदरिकक्करकंदरि दुप्पवेसकुलिसायसि पंजरि।
१० बहलतमंधयारमहिमूलइ जइ पइसरइ गंपि पायालइ।
तो वि जीउ कड्ढिज्जइ काले हरिणा हरिणु व भिउडिकरालें।

घत्ता—इय बुज्झिवि असरणु रुंभिवि तियरणु जेण चरित्तु ण चिण्णउं॥
तं माणुसवेसें वायविसेसें भमइ कलेवरु सुण्णउं॥२॥

३

खंडयं—मित्तसयणसंजोयओ होउं होइ विओयओ।
एक्को च्चिय जगि जीयओ भमइ सकम्मविणीयओ॥१॥
एक्कु जि जड्डु जच्चंधु णउंसउ दुग्गउ दुट्ठु दुबुद्धि दुरासउ।
हुयउ कुमाणुसत्ति दुणिहालउ एक्कु जि जीउ चंडु चंडालउ।
५ एक्कु जि धणुहरु सवरु वणंतरि एक्कु जि सुरवरु मणिमयसुरहरि।
अप्पउ पुण्णहीणु पडिवज्जइ सयमहविहवपलोयणि झिज्जइ।
एक्कु जि णहि णहयरु थलि थलयरु एक्कु जि बिलि विसहरु जलि जलयरु।
एक्कु जि मुंगजोणिहि उप्पज्जइ पैरिहि तलिवि पउलिवि खणि खज्जइ।
एक्कु जि दूहउ दूसहु दुम्मइ णरयविवरि णारइयहिं हम्मइ।
१० एक्कु जि तरइ मरइ वइतरणिहि चरइ जलणपज्जलियहि धरणिहि।

घत्ता—एक्कु जि भवकद्दमि णिवडइ दुद्दमि रइसुहपंकयछप्पउ॥
एक्कु जि तवताविउ णाणे भाविउ होइ जीउ परमप्पउ॥३॥

४

खंडयं—इय णिसुणिवि एयत्तणं गाढं णियमइ णियसणं।
एक्कु जि जीउ वरायओ सयलु वि अण्णु जि लोयओ॥१॥
अण्णहिं परमाणुयहिं णिबज्झइ अण्णु जि पिंडु गब्भि संबज्झइ।
अण्णु जीउ अण्णु जि दुक्कियमलु अण्णु जि सुकियउ अण्णु जि तहु फलु।
५ अण्णहि कुलि कलत्तु परिणिज्जइ अण्णु जि को वि पुत्तु णिप्फज्जइ।
अण्णु जि मित्तु सयंज्जि कयायरु अण्णु जि होइ सणेहउ भायरु।
अण्णु जि भिच्चु होइ धणलोहें जीउ तइ वि मोहिज्जउ मोहें।

---

२ १. MBP पण्णारस°। २ MBP देव भाभासुर। ३. MBP कुलिसायस°। ४ MBP °तमघयारि।
५. M कट्टिज्जइ।

३. १. P संजोयरु। २ P विओयरु। ३ MBP मिगजोणिहि। ४. M परिहि तलिज्जइ पउलिवि
खज्जइ। ५. B खिज्जइ।

४. १ MBP सुकिकउ। २ MBP पुत्तु को वि उप्पज्जइ। ३ MBP सकज्जि। ४ M सणेहें।

गरुड़, यक्ष, राक्षस, विद्याधर, भूत-पिशाच, नाग, चन्द्र, दिनकर, शत्रुओंके कुलरूपी काननके लिए कालानलके समान इन्द्र, प्रतीन्द्र और अहमिन्द्र, पन्द्रह क्षेत्रोमे उत्पन्न जिनवर, कुलकर, चक्रवर्ती, हलधर और नारायण इसे धारण करते है। शरीरकी कान्तिसे भास्वर तथा प्रवर आयुधोंमें प्रवीण देवासुर भी इस जीवको धारण करते हैं। यदि यह जीव समुद्रके भीतर, अनुचर (सैनिक), घोड़ों, हाथी और रथोंके व्यूहमें सरोवर-नदी, पहाड़-घाटी-कर्कश गुफामे, दुष्प्रवेश्य वज्र और लोहेके पंजरमे प्रवेश करता है या चाहे अत्यधिक तमवाली धरतीके मूल या पातालमें जाकर छिप जाता है तब भी वह कालके द्वारा उसी प्रकार निकाल लिया जाता है, जिस प्रकारं भृकुटियोंसे कराल सिंहके द्वारा हरिण।

घत्ता—यह अशरणभावना समझकर, मन-वचन और कायको रोककर जिसने चारित्र्य स्वीकार नही किया वह मनुष्यरूपमें वायुसे प्रेरित होकर व्यर्थ भ्रमण करता है ॥२॥

३

मित्र और स्वजनका संयोग होकर वियोग होता है, जगमें यह जीव अकेला ही परिभ्रमण करता है, अपने कर्मसे विनीत होकर। एक जीव जड़ जन्मान्ध नपुंसक दुर्गत दुष्ट दुर्बुद्धि और दुराशय, कुमनुष्यत्वमे होकर दुर्दर्शनीय होता है, एक जीव चण्ड और चाण्डाल होता है। एक वनके भीतर धनुर्धर भील होता है, एक मणिमय विमानमे देव होता है, अपनेको पुण्यहीन मानता है और इन्द्रके वैभवको देखकर क्षीण होता है। एक जीव आकाशमे नभचर और दूसरा स्थलमे स्थलचर। एक बिलमें सांप और जलमें जलचर। एक पशुयोनिमें जन्म लेता है, और दूसरोंके द्वारा खण्डित होकर तथा तलकर एक क्षणमे खा लिया जाता है। एक दुर्भग, दुःसह और दुर्गति, नरकविवरमें नारकियोंके द्वारा मारा जाता है। अकेला ही तरता है, अकेला ही वैतरणी पार करता है, और ज्वलित-प्रज्वलित धरतीपर विचरण करता है?

घत्ता—जीव अकेला ही रतिसुखका भ्रमर बनकर दुर्दम, विश्वकीचडमे पड़ता है। जो अकेला ही तपसे संतप्त और ज्ञानसे भाषित होकर परमात्मा बनता है ॥३॥

४

इस प्रकार एकत्व भावलाको सुनकर अपने मनको प्रगाढ़ रूपसे नियमित करना चाहिए। बेचारा जीव अकेला है और समस्त लोकसे भिन्न है। भिन्न परमाणुओके द्वारा बांधा जाता है और गर्भमे जो पिण्ड बँधता है, वह भिन्न है। जीव भिन्न है, और पापकर्ममल भिन्न है, पुण्य अलग है, और उसका फल अलग है। अन्यके द्वारा कुलमें स्त्री ले जायी जाती है। कोई दूसरा पुत्ररूपमें उत्पन्न होता है। अपने कार्यमे कृतादर मित्र दूसरा होता है, और स्नेही भाई दूसरा

अण्णु जि भणइ महारउ मत्तउ णउ जाणइ जिह सयलहिं चत्तउ।
अण्णहिं जंति खणद्धे रहवर हयवरगयवरचिंध सचामर।
१० परमत्थे ण को वि जगि कासु वि एक्कल्लउ[5] जि जाइ पुहईसु वि।
घत्ता—राएण णिवद्धउ इंदियलुद्धउ सुहु अण्णु जि मंहुं[6] भावइ॥
ससहाउ ण पेक्खइ अण्णु जि कंखइ जीउ महावइ पावइ॥४॥

५

खंडयं—चउकसायरसरसियओ मिच्छासंजमवसियओ[1]।
णाणाजंम्मु[2] वियारए आहिंडइ संसारए॥१॥
णरयगइहिं उप्पण्णउ जइयहुं णारयणियरिहिं रुंभिवि तइयहुं।
तिलु तिलु छिंदिवि दिसिहिं[3] विहाइउ कवलिउ धुणिउ वणिउ विणिवाइउ।
५ वारवार पचारिउ जूरिउ विज्जुतरलतरवारिवियारिउ।
एक्कु जि बहुयहिं तहिं पारंभिउ खलिउ दलिउ पयमलिउ णिसुंभिउ।
ओहामिउ भामिउ ओणामिउ सूलि कयंतदंति संकामिउ।
अच्छोडिउ मोडिउ महिं पाडिउ विरसमाणु करवत्तहिं फाडिउ।
लूरियंतु कोंतेहिं विहिण्णउ रुंदोदूहलि मुसलहिं[4] छुण्णउ।
१० सत्तिहि हूलिउ जंतिहिं पीलिउ जलियजलणजालोलिहिं जालिउ।
वम्मविहट्टणेहिं[5] दुव्वोलिउ सेल्लभल्लिवावल्लहिं सल्लिउ।
पूयकुंडि उप्पेल्लिवि घल्लिउ रुहिरोहल्लियदेहु ओणल्लिउ।
घत्ता—मणि रोसु धरंतहं रणि पहरंतहं लग्गइ गत्तु विहत्तु वि॥
सुहु णत्थि तमंधहं णारयसंढहं णयणणिमीलणमेत्तु वि॥५॥

६

खंडयं—सिंगीसु य पक्खीसु य दाढीसु य णक्खीसु य।
भुंजंतो भवसंगमं ण लहइ जीवो णिग्गमं॥१॥
कायकंककोइलकारंडहिं सारसचासभासभेरुंडहिं।
सीहसरहसूयरसालूरहिं घारमोरमंडलमज्जारहिं।
५ कीरकुररकुंजरसारंगहिं लावयपारावयहिं[1] तुरंगहिं।
कुक्कुड[2]मकडमहिसमरालहिं मेसवसहखरकरहसियालहिं।
सेढा[3]सरढतरच्छहिं रिंछेहिं[4] मयरमहोरयकच्छवमच्छहिं।
तिक्खतिरिक्खदुक्खसंदाणहि सभवंतु णाणाविहजोणिहिं।
बलणिम्मंथणु णियलणिबंधणु भारारोहणु णाणाबंधणु[5]।

---

५. MBP एक्किल्लउ। ६. MB जणि; P मणि।

५ १. MBP संजमि वसियउ। २ MBP °जम्म°। ३. MB दिसहिं। ४ MBP मुसलें। ५. M °विहट्टणेण।

६. १. M लायय°। २ B कुंकुड°। ३. MBP सेहा°। ४. MP °रिच्छहिं। ५ MBP णासाविंधणु।

होता है। धन लोभसे अन्य भृत्य होता है, (यह) जीव मोहके द्वारा मुग्ध होता है। मतवाला वह, अन्यको कहता है कि यह हमारा है। नही जानता कि किस प्रकार वह सबके द्वारा छोड़ दिया जाता है। आधे पलमें रथवर, हयवर, गजवर और चामर सहित पताकाएँ दूसरी हो जाती हैं। परमार्थमें जगमे कोई भी किसीका नही है। पृथ्वीका ईश (राजा) भी अकेला होता है।

घत्ता—रागके द्वारा बांधा गया इन्द्रियोंसे लुब्ध सुख भी मुझे अन्य प्रतीत होता है। अपने स्वभावको नही देखता, दूसरेकी आकांक्षा करता है इस प्रकार जीव महा आपत्ति पाता है ॥४॥

५

चार कषायरूपी रसमे आसक्त और मिथ्या संयमके वशीभूत होकर (यह जीव) नाना जन्मोंवाले संसारमें घूमता है। जब यह नरकगतिमे उत्पन्न होता है, तब नारकीय समूहके द्वारा अवरुद्ध होकर तिल-तिल टुकड़े कर दिशाओमें विभक्त कर दिया जाता है। बार-बार पुकारा जाता और भर्त्सित किया जाता। विद्युत्की तरह चंचल तलवारोसे विदारित किया जाता। अकेला ही बहुतोंके द्वारा आक्रान्त, स्खलित, दलित, पदमर्दित और फेंका जाता है। नीचे किया जाता, घुमाया जाता, झुकाया जाता, शूलीमे और यमके दांतोंमे। पछाड़ा और मोड़ा गया, धरतीपर गिर पड़ता है। चिल्लाता हुआ करपत्रों (आरो) से फाड़ा जाता। भालोंसे विदारित टुकड़े-टुकड़े हो जाता। बड़े-बड़े ऊखलोमें मूसलोसे कूटा जाता। शक्तियोसे पिरोया गया और यन्त्रोसे पीड़ित किया जाता। जलती हुई आगकी ज्वालाओंसे जलाया जाता, मर्मभेदी अपशब्दोंसे बोला जाता, सेल, भालो और लौह-अंकुशोसे छेदा जाता, पीप-कुण्डमे ढकेल दिया जाता, रक्तसे शरीर नहा जाता।

घत्ता—इस प्रकार मनमे क्रोध धारण करते हुए और युद्धमे प्रहार करते हुए उसका खण्डित शरीर होकर भी जा लगता है। इस प्रकार तमसे अन्धे नारकीय समूहमे पलमात्रका भी सुख नही है ॥५॥

६

शृंगधारी पशुओं-पक्षियों, दाढवाले और नखवाले पशुओमे संसारके संगमको भोगता हुआ यह जीव निकल नहीं पाता। कौआ, बगुला, कोयल, चक्रवाक, सारस, चारभास, भैरुण्ड, सिंह, शरभ, सुअर, सालूर, घार, मोर, मण्डल, मार्जार (बिलाव), कीर, कुरर, कुंजर, सारंग, लावा, पारावत, तुरंग, मुर्गा, वानर, महिष, मराल, मेष, वृषभ, खर, करभ, शृगाल, सेढ, सरढ, तरच्छ, रीछ, मगर, महोरग, कच्छप और मत्स्यों आदिकी तीखी तिर्यंक् गतिके दुःखोको देनेवाली नाना योनियोंमे उत्पन्न होता हुआ बलका नाश होना, बेड़ियोसे जकड़ा जाना, भारका उठाना, नाना

१० छिंदणु भिंदणु ताडणु तासणु उक्कत्तणु सरीरविद्धंसणु ।
सरपाहाणसंघसंघट्टणु लोट्टणु आवट्टणु परिवट्टणु ।
दलणु मलणु मुसुमूरणु जूरणु पीलणु पउलणु दारणु मारणु ।
छुहतिण्हाकिलेससंतावणु भारारूढदेसपुरगामणु ।
एव दुक्खलक्खाइं सहेप्पिणु जीव तिरियगइ कह व मुएप्पिणु ।
१५ घत्ता—णियकम्मवसायउ होइ चिलायउ पारसु बब्बरु सिंहलु ॥
हुणचीणणिवासउ असणुयभासउ णउ पावइ अज्जवकुलु ॥६॥

७

खडयं—मेच्छो ण कुणइ णियहियं करइ दुलंघं दुक्कियं ।
विहुरावत्तरउद्दए णिवडइ णरयसमुद्दए ॥१॥
जइ वि लहइ अवियलु पविमलु कुलु हियइच्छिउ किं पि संपयफलु ।
खमदमसमसंजमसंजुत्तहं तो वि ण लहइ संगु गुणवंतहं ।
५ कुगुरुकुदेवकुमग्गें मुज्झइ जिणवरवयणु कया वि ण बुज्झइ ।
जडविडकहियहु मयवहधम्महु लग्गइ काइं मि कुच्छियकम्महु ।
लुद्ध मुद्ध चंडिइ मंडिवि मिसु पियइ मज्जु कवलइ सरसामिसु ।
पसुबलि देंतहं ण खमइ वइवसु मारउ मरिवि होइ पुणरवि पसु ।
विरसंतहं सिरकमलु लुणिज्जइ सो वि तहिं जि अण्णे मारिज्जइ ।
१० पुव्वणिबद्धउ अग्गइ धावइ जो जं करइ सो ज्जि तं पावइ ।
घत्ता—पसु फाडिवि खज्जइ वारुणि पिज्जइ सग्गु मोक्खु पाविज्जइ ॥
जइ एण जि कम्में ता किं धम्में पारद्धिउ सेविज्जइ ॥७॥

८

खंडयं—हुयवहहुणिया सग्गयं जंति परावरमग्गयं ।
जाया देवा जइ अया एरिसया दियवरणया ॥१॥
वेयकहियमंतहिं आयामइ तो अप्पाणउ कीस ण होमइ ।
सोत्तिउ सग्गसोक्खु किं णेच्छइ किं कुसरीरें बद्धउ अच्छइ ।
५ णियडिंभइ मुइ धाहहि कंदइ छायलु छावउ छम्मिउ छिंदइ ।
ताडिज्जइ संरुज्झइ बज्झइ वच्छु णिरोहिवि अण्णे दुज्झइ ।
खाइ पुरीसु विबुद्धि वराई दुरियहलेण सुरहि संभूई ।
लोयहु देवि भणिवि वक्खाणइ धुत्तु अधुत्तइं वंचहुं जाणइ ।

---

६ MBP छुहतण्हा° । ७ M °गावणु । ८ MBP सिंघलु । ९. MBP असुणियभासउ, but gloss in P नरभापारहित. ।

७ १ MBP मुणइ । २ B णरइ समुद्दए । ३ P °कुसम्में । ४ MBP °कम्महु । ५. MBP °धम्महु । ६ MBT विलुज्जइ ।

८. १ P हुयवहु । २ M सग्गभोग्गु, B सग्गजोग्गु; P सग्गभोग्गु । ३. MBP छायलछावउ । ४ MB दुब्भइ । ५ MBP अयुत्तहं वचइ ।

प्रकारके बन्धन, छेदन-भेदन-ताड़न, त्रासन-उत्कर्तन, शरीरका विध्वस्त होना, तीर और पत्थरोंसे संघर्षण, लोटना, घूमना-फिरना, दलन, मला जाना, मसला जाना, सताया जाना, पीड़ित होना, काटा जाना, फाड़ा जाना, मारा जाना, क्षुधा-तृष्णाके दुःखोंका सन्ताप और भारसे आरूढ़ होकर देश-पुर-गाँवमे जाना, इस प्रकार लाखों दुःखोंको सहनकर जीव किसी प्रकार तिर्यंक् गति छोड़कर—

घत्ता—अपने कर्मके वशीभूत भील, पारसीक (पारसी(?)), बर्बर, सिंहल, हूण और चीनका निवासी होता है, मनुष्यकी भाषा नहीं जाननेवाला वह आर्यकुल नहीं पाता ॥६॥

७

म्लेच्छ भी अपना हित नही करता और वह अलंघ्य दुष्कृत करता है, तथा दुःखोंके आवर्तसे भयंकर नरकरूपी समुद्रमें पड़ता है। उसके बाद यद्यपि वह अविकल अत्यन्त पवित्र कुल पाता है और मनके द्वारा चाहे गये कुछ सम्पत्तिके फलको पाता है, तब भी गुणवानोंकी संगति प्राप्त नही करता। कुगुरु, कुदेव और कुमार्गमे मुग्ध होता है, जिनवरके वचनोंको कदापि नही समझता। मूर्खो और धूर्तोंके द्वारा कहे गये पशुवधधर्म और किसी भी कुत्सित कर्ममे लग जाता है, लोभी और मुग्ध वह चण्डिकाका बहाना बनाकर मद्य पीता है और सरस मांस खाता है। यम, पशुबलि देनेवालोंको क्षमा नही करता, मारनेवाला मारकर फिर पशु होता है। जो चिल्लाते हुए पशुओंका सिरकमल काटता है, वह भी दूसरोके द्वारा वहाँ मारा जाता है। पहलेका संचित कर्म आगे दौड़ता है जो जैसा करता है वह वैसा ही पाता है।

घत्ता—पशु मारकर खाया जाता है, सुराका पान किया जाता है और यदि इस कर्मसे भी स्वर्ग-मोक्ष पाया जाता है, तो फिर धर्मसे क्या ? शिकारीकी ही सेवा करनी चाहिए ॥७॥

८

आगमे होमे गये बकरे (अज) स्वर्ग और मोक्ष गये है और देव हुए हैं, यदि ब्राह्मणोंका सिद्धान्त यह है, तो वेदोमे कथित मन्त्रोके द्वारा वह प्राणायाम आदि क्यों करता है ? अपनेको क्यों नहीं होम देता ? श्रोत्रिय स्वर्ग और मोक्ष क्यों नही चाहता, खोटे शरीरसे बँधा हुआ क्यों रहता है ? अपना पुत्र मरनेपर धाड़ मारकर रोता है, वंचक वह अज और उसके बच्चेका वध करता है, बेचारी गाय ताड़ित की जाती है, रोकी जाती है, बाँधी जाती है, बछड़ेको रोककर अन्यके द्वारा दुही जाती है, मल खाती है। बुद्धिहीन और बेचारी पापके फलसे गाय हुई है, परन्तु देवी कहकर लोगोसे उसकी व्याख्या करता है; धूर्तजन सीधे-सादे लोगोको ठगना जानता है।

गाइ चउप्पय तणयरि जेही सूयरि हरिणि वि रोहिणि तेही।
१० हा हा बंभणेण माराविय रायहु रायवित्ति दरिसाविय।
पियरपक्खु पच्चक्खु णिरिक्खइ मंसखंडु दियपंडिय भक्खइ।
धोयंतउ दुद्धे पक्खालउ होइ कहिं मि इंगालु ण धवलउ।
एहु देहु किं सलिलें धुप्पइ हिंसारंभें डंभें लिप्पइ।
अण्णण्णें रंगे रंगिज्जइ परमागमरसेण णउ भिज्जइ।
१५ मूढु जिणिंदसेव कहिं पावइ सवणु गहणु धरणु वि ण विहावइ।

घत्ता—मायारउ मण्णइ मुणि अवगण्णइ जीवहिंस पडिवज्जइ॥
माणुसु वि हवेप्पिणु पाउ करेप्पिणु पुणु संसारि णिमज्जइ॥८॥

९

खंडयं—ईसि णिउंचिय जोव्वणं कामकोहतवभावणं।
काउं सेवइ जो वणं सो पावइ तं भावणं॥१॥
अवरु वि जायउ उववणठाणइ जोइसकप्पणिवासविमाणइ।
वाहणु वेयालिउ छत्तियधरु वाइत्तयवायउ सब्भेयरु।
५ णच्चणु गायणु सुईसुहदावउ अण्णु वि होइ असम्मयभावउ।
णवर मरंतु संतु उव्विज्जइ वेवइ चलइ घुलइ परिखिज्जइ।
हा कप्पद्दुम हा माणससर हा णीहारहारसंणिहघर।
हा अच्छरउलमणसंमोहण हा परियणपक्खिवक्खणिरोहण।
हयवलिपलियरोयसयसंचय हा हा दिव्वदेह हा णववय।
१० हालंकारसार सहसंभव हा गंधार महुर वीणारव।
हा देवंगवत्थ णिच्चुज्जल हा मंदारदाम चल सभसल।

घत्ता—सम्मत्तविमुक्कहु जिणपयचुक्कहु अवसें हियउ ण सुज्झइ॥
सग्गग्गु मुयंतहु पलयहु जंतहु कासु सरीरु ण डज्झइ॥९॥

१०

खंडयं—सुललियमइलियचेलयं अइओहुल्लियमालयं।
भोयविरायणिबंधयं जायं मह खयचिंधयं॥१॥
सयलजिणाहिसेयधुयमंदर धूवधूमधूवियगिरिकंदर।
हा हे कुलिसपाणि जगसुंदर पइं मि ण रक्खिउ देव पुरंदर।

६. MBP हरिणी रोहिणि। ७. MBP दिउ पडिउ। ८ MBP हिंसारंभि डंभि तो लिप्पइ।
९ M विभावइ।
९ १ MT इसी and gloss मुनिर्भूत्वा, P इसि। २ MP सुद्दसहदावउ। ३ MBP वलइ।
४ MBP हा वलि°। ५ MBP °संचुय but gloss in P देह। ६ सोलंकार°। ७ MB कासु ण
हियवउ, P कासु वि हियउ ण।
१० १. MBP °विराय°।

गाय जिस प्रकार चौपाया है और घास चरनेवाली है, उसी प्रकार सुभरनी, हरिनी और रोहिणी (मछली) भी। हा-हा, ब्राह्मणोंके द्वारा वे मरवायी जाती है और राजाके लिए राजवृत्ति दरसायी जाती है, पितरपक्षमें स्पष्ट देखा जाता है कि द्विज विद्वान् मांसखण्ड खाते हैं, अंगार (कोयला) दूधमें धोनेपर भी कभी भी सफेद नही हो सकता। यह देह जो हिंसाके आरम्भ और दम्भसे लिप्त होती है, क्या पानीसे धोयी जा सकती है ? अन्य-अन्य रंगोमें यह रंगी जाती है परन्तु परमागमके रंगमें यह नही भीगती। मूर्ख जिनेन्द्रकी सेवा कैसे पा सकता है, उसे तो उसका सुनना, ग्रहण करना, धारण करना भी अच्छा नही लगता।

घत्ता—मायारत (मायावी) को मानता है, मुनिकी अवहेलना करता है, जीव हिंसा स्वीकार करता है, मनुष्य होकर भी पाप कर फिर संसारमे डूबता है ॥८॥

९

जो यौवन तथा काम-क्रोधसे सन्तप्त भावनाको थोड़ा नियन्त्रित कर वनमें तप करता है वह उस भवनवासी स्वर्गमे जन्म लेता है। और दूसरा उपवन स्थान, तथा ज्योतिष कल्पवास विमानोंमे उत्पन्न हुआ वाहन वैतालिक छत्रधारी वाद्य बजानेवाला भाँड़ आदि होता है। कानोंको सुख देनेवाला नृत्य और गायन करनेवाला असम्यक्‌वाला होता है। वह भी मरते हुएकी चिन्ता करता है, काँपता है, चलता है और खेदको प्राप्त होता है। हाय, कल्पवृक्ष, हाय मानस सरोवर, हाय नीहारके समान घर। हाय अप्सराकुलका मन सम्मोहन करनेवाले, हाय परिजन और प्रतिपक्षका निरोध करनेवाले। इस त्रिवलि बुढापा और सैकड़ों रोगोंके संचयका नाश करनेवाले, हाय दिव्य देह और नव वय। हाय, सहोत्पन्न अलंकारश्रेष्ठ। हाय, मधुर वीणा रव-वाले गन्धार। हाय, नित्य उज्ज्वल देवांग। हाय, चंचल भ्रमर सहित मन्दारमाला।

घत्ता—सम्यक्त्वसे विमुक्त और जिनपदसे चूके हुए व्यक्तिका हृदय शुद्ध नही होता, स्वर्ग छोड़ते हुए या प्रलयको प्राप्त हुए किस व्यक्तिका शरीर नही जलता ? ॥९॥

१०

सुन्दर मैले-कुचैले वस्त्रों और अत्यन्त झुकी हुई मालावाले मेरे मृत्युचिह्न ही शरीरसे विरक्त होनेका कारण बन गये है, जिनेन्द्रके जन्माभिषेकमे सुमेर पर्वतको धोनेवाले, और धूप-

५ हा मइं माणुसेण होएवउ किमिमलभरियइ[2] गब्भि वसेवउ।
सोणिविणिग्गमि दुक्खु णिएवउ णारिउरोरुहं[3]छीरु पिएवउ।
हा हा देवलोय कहिं[4] पेच्छमि कुहियकलेवरि वासु ण इच्छमि।
जाउ मसाणहु तं मणुयत्तणु वरि[5] वणि होसमि चंदणु वंदणु।
अट्टरउद्दभावसंचोइय[6] मिच्छादिट्ठि सुदिट्ठिविओइय[7]।
१० हा हा हा भणंतु उब्भियकर[8] एम मरंत होंति सुर तरुवर[9]।

घत्ता—जिणधम्मपरंमुहु दुण्णयसंमुहु खयकाले अच्छोडिउ ॥
बहुविहमयमत्तें[10] इय मिच्छत्तें को भवगहणि ण पाडिउ ॥१०॥

११

खंडयं—तिप्पयारसंठाणयं चोद्दह[1]रज्जुपमाणयं।
जीवाजीवसुसंकुलं विस्सं णिच्चं णिच्चलं ॥१॥
थिउ आयासि अणंताणंतइ केवलणाणविलोयणखेत्तइ।
गाढु गाढु छहिं दव्वहिं भरियउ केण वि कियउ ण केण वि धरियउ[2]।
५ पुग्गलजीवभावकयभेयहिं कालवसेण जाइ पज्जायहिं।
पहिलउ दाणवणरयणिवासउ पल्हत्थियसरावसंकासउ।
बीयउ मणुयतिरिक्खणिहेलणु वज्जोवमु पयत्थपरिघोलणु।
कप्पाकप्पदेवणेवच्छउ तइयउ जगु मुइंगसारिच्छउ।
मोक्खु वि आयवत्तसंणिहयरु जो तं पत्तउ सो अजरामरु।
१० परमाणुयपरमाणु ण पेक्खमि संसारियहु सोक्खु किं अक्खमि।

घत्ता—चउगइहिं मरंतें[3] पुणु पुणु होंतें विहसिवि देवें वुत्तउ ॥
सुहदुक्खणिरंतरि तिजगब्भंतरि जीवें काइं ण भुत्तउ ॥११॥

१२

खंडयं—सारमेयवुड्ढिगयं[1] सारमेयसिवजोग्गयं।
एसो कम्मकले वरं भण्णइ तहं[2] वि कलेवरं ॥१॥
अट्ठिलट्ठिकुड्डयलणिउत्तउ दीहरणाउणिबंधणवंतउ[3]।
पासुलियातुलाहिं[4] घणघडियउ संधिहि संधिहि खीलयजडियउ[5]।
५ पट्ठिवंसखंभुण्णयमाणउ जंघाजुयलु समोड्डियथूणउ[6]।
मेज्ज[7]मंसचिक्खिल्लविलित्तउ णवदुवारु[8] लोहियसंसित्तउ।

---

२ B °भरियगब्भि। ३ MK °खीरु। ४. MBP किं। ५. MBP वरि। ६ MBP °संचोइउ। ७. MBP °विओइउ। ८. MBP °करु। ९. M एम मरेवि होइ सुरु तरुवरु, BP एम मरेवि होइ सुरतरुवरु, १० MBP इह।

११ १. MP चउदह°। २. P adds after this line: अच्छइ सयलु वि जीवहं भरियउ घियघडउल्लउ जिम तिम धरियउ। ३ M भवंतें, BP भमंतें।

१२ १. MBP सारमेयवुड्ढीगयं। २ P तह व। ३ MBP णिबंधणवत्तउं। ४. MB पसिलिया°, P पसुलिया°। ५ MBP खीलिहिं। ६. BP समोड्डिय°। ७. P मज्ज°। ८. MBP °दुवार°।

धूम्रसे गिरि-गुफाओंको सुवासित करनेवाले हे इन्द्रदेव, तुमने भी मेरी रक्षा नही की। हाय, मुझे मनुष्य होना होगा तथा कृमियों और मलसे भरे गर्भमें रहना होगा। गर्भसे निकलनेपर दुःख देखना होगा ? नारीके स्तनसे निकलनेवाला दूध पीना होगा ? हाय-हाय देवलोक, मै तुम्हे कहाँ देखूँगा ? नष्ट होनेवाले शरीरमें मै वास नही चाहता। वह मनुष्यत्व मरघटमे जाये, अच्छा है मै वनमे चन्दन या वन्दन वृक्ष होऊँ। आठ प्रकारके रौद्रभावोंसे प्रेरित तथा सम्यक् दृष्टिसे विरहित मिथ्यादृष्टि, हाय-हाय करता हुआ दोनो हाथ उठाये हुए, इस प्रकार मरते हैं और देव वृक्ष बनते हैं।

घत्ता—जिनधर्मसे विमुख, दुर्नयोंके प्रति उन्मुख क्षयकालमें नष्ट हुआ कौन मनुष्य विविध मदोंसे मत्त मिथ्यात्वके द्वारा गहन संसारमे नही डाला जाता ॥१०॥

११

शराव आदिकी आकृतिवाला और चौदह राजू प्रमाण, तथा जीव और अजीव (द्रव्यों) से अच्छी तरह व्याप्त यह विश्व नित्य और निश्चल है। अनादि-अनन्त तथा केवलज्ञानके अवलोकनका विषय आकाशमें स्थित है। जो सघन रूपसे छह द्रव्योंसे भरा हुआ है। उसे किसीने बनाया नही है, और न किसीने उसे उठा रखा है। पुद्गल जीव और भावसे निर्मित पर्यायोंसे कालके वशसे परिणमित होता रहता है। पहला (अधोलोक) दानव और नरकोका निवास है जो उलटे सकोरेके आकारका है। दूसरा (मध्यलोक) वज्रके समान मनुष्योका घर है। जिसमें पदार्थों (जीवादिकों) की प्रवृत्तियाँ होती रहती है। तीसरा लोक (ऊर्ध्वलोक) मृदंगके आकारका है, और जिसमे कल्प-अकल्प देवोंका निवास है। मोक्ष भी छत्रके आकारका है जो वहाँ पहुँच जाता है, वह अजर-अमर है। संसारीके सुखका क्या वर्णन करूँ, मै उसे परमाणुमात्र भी सुख नही देखता।

घत्ता—देवने (गौतम गणधरने) हँसकर कहा—चार गतियोमे मरते हुए और बार-बार उत्पन्न होते हुए इस जीवने सुख-दु.खसे निरन्तर भरपूर इस त्रिलोकके भीतर क्या नही भोगा ? ॥११॥

१२

प्रचुर मेदाके बढ़नेपर यह जीव कुत्ता और शृंगालके योग्य शरीरवाला बनता है। तब भी यह जीव संसारमे उस शरीरको श्रेष्ठ मानता है। हड्डियोंरूपी लकड़ियोंके ढाँचेपर निर्मित, लम्बी-लम्बी स्नायुओंसे बँधा हुआ, पसलियोंरूपी तुलाओंसे अच्छी तरह कसा हुआ, जोड़ों-जोड़ोंपर कीलोंसे जड़ा हुआ, पीठरूपी बाँसके खम्भेपर उन्नत मानवाला, मुड़ी हुई थूनियोंकी तरह जांघोंवाला,

सेयसुक्कमंथिक्कदुगंधउ [9] [10]छिरतुंदाहिजालसंरुद्धउ ।
वोक्कयंतकिमिउलमलपोट्टलु वियलियरसवसवीसढु [11] विट्टलु ।
अब्भंतरि किर केण पलोइउ वाहिरि चम्मपडलपच्छाइउ ।
१० णिच्चमुत्तलालाजलथिप्पिरु रोइ पूइ अट्ठधुउ संताविरु ।
सेंभपित्तमारुयदोसायरु भूयगामदेहिंहि देहु जि घरु ।
[12]रमणीरमणरायरहसुच्छवु असुइ जि भक्खइ असुइसमुब्भवु ।
घत्ता—करिसयरहिं माणिइ गंगावाणिइ ण्हाणिउ ण्हाणिउ सुज्झइ ॥
मयकामें कोहें मायामोहें मइलिउ देहु ण सुज्झइ ॥१२॥

१३

खंडयं—दुविहतवम्मि सुलीणयं जइ करेह अप्पाणयं ।
असुइमिणं मणुयत्तयं ता हो होइ पवित्तयं ॥१॥
पंचिंदियसुहि मणु चोयंतहु तहु आसवइ कम्मु अतवंतहु ।
णाणावरणिउ [1] पंचपयारउ दंसियपडपंगुरणवियारउ [2] ।
५ णवविहदंसणु गुणविणिवारउ तं णिज्झियणिसिद्धिपडिहारउ ।
दुविहु जि वेयणीउ गयसयणु व अमहु समहु असिधारालिहणु व ।
मोहणीउ मइरा इव मोहइ अट्ठावीसभेउ [3] जिणु ईहइ ।
चउविहु चउगइगामिहिं ढुकइ आउसु हडि व णिरुंभिवि थक्कइ ।
दोचालीसणामु णामंकउ चित्तवण्णपरिणामासंकउ ।
१० दोविहु मइलसमुज्जललीलउ गोत्तु कुलालभाणभावालउ ।
अंतराउ चउएक्कविहायउ लग्गइ कारिहिं वारियदायउ ।
पयडिट्ठिदिअणुभागपएसहिं [4] वज्झइ चप्पिवि वंधविसेसहिं [5] ।
घत्ता—गुणवंतु अणाइउ सुहुमु विवेइउ तिगइ दुअंगणिवद्धउ ॥
जिउ कत्तउ भोत्तउ भवतणुमेत्तउ उड्ढगामि [6] संसिद्धउ ॥१३॥

१४

खंडयं—एंतहु [1] पावहु णिब्भरं जे विरयंति ण संवरं ॥
ताणं दुक्खदवक्कडी [2] पडिही सीसे णं तडी ॥१॥
रुज्झइ चित्तु झाणवित्थारे फासविलास [3] धरणिसंथारें ।
रसु [4] पसुपिंडग्गहणायारे दिट्ठि ण वेप्पइ कहिं मि वियारें ।

---

९ B °मंथिक्क° । १०. P थिर°; K छिर° but corrects it to थिर° । ११. MBP °वीढजि and gloss in P वीभत्सं अपवित्रम् । १२. M रमणीरमणु रायरहसुब्भउ, B °रहसुच्छउ; P °रहसुब्भउ but gloss उत्सवः ।

१३ १. MBP णाणावरणउ । २. T दंसिय° । ३ MBP °भेय । ४. M° अणुभाय° । ५. M बंधवसेसहिं । ६ MBP उड्ढगामि ।

१४. १ P ए तहु and gloss ए आगमे प्रसिद्धः, तहु पावहु तस्य पापस्य । २. P °दुवक्कडी । ३. MBP °विलासु । ४. MB रसवसु; P रस पसु° ।

मज्जा और मांसकी कीचड़से लिपटा हुआ, रक्तसे रंगे हुए नौ द्वारवाला, प्रस्वेद शुक्र और अस्थियोंसे दुर्गन्धित, शिराओंके कृमिजालसे संरुद्ध, विपरीत ढंगसे क्षरणशील कृमिकुलके मलका पोटला, विगलित रस और चर्बीसे युक्त अपवित्र यह शरीर है। भीतर इसे किसने देखा ? बाहर यह चर्मपटलसे आच्छादित है। नित्य ही मूत्र-लाररूपी जलसे चिपचिपा, रोगी, दुर्गन्धित और अत्यन्त सन्तापदायक। वात-कफ और पित्तके दोषोंका आकर, पृथ्वी आदि चार महाभूतोंके समूह-का घर ही शरीर है। रमणीके रमणरागके हर्षसे आनन्दित यह जीव अपवित्रतासे उत्पन्न चीजोंको खाता है।

घत्ता—हाथियों और मगरोंके द्वारा मान्य गंगाके पानीमे नहा-नहाकर मोहको प्राप्त होता है। मद, काम, क्रोध, माया, मोहसे अपवित्र यह शरीर शुद्ध नही होता ॥१२॥

१३

यदि वह दो प्रकारके तपमे अपनेको लीन करता है, तो यह अपवित्र मनुष्यत्व पवित्र होता है। पाँच इन्द्रियोंके सुखोंमें मनको प्रेरित करते हुए, और तप नही करते हुए जीवके कर्मका आस्रव होता है। ज्ञानावरणी पाँच प्रकारका है, जो वस्त्रके समान आवरण (आच्छादन) दिखानेवाला है; गुणोंका निवारण करनेवाला दर्शनावरणी नौ प्रकारका है; जो निर्जित और निषेध करनेवाले प्रतिहारीके समान है। रोगयुक्त शयनके समान वेदनीय दो प्रकारका है, जो मधुर सहित और मधुर रहित तलवारकी धारको चाटनेके समान सुखद और दुःखद है। मोहनीय कर्म मदिराके समान मुग्ध करता है, जिन भगवान् उसके अट्ठाईस भेद बताते हैं। चार प्रकारका आयुकर्म चार गतियोमे जानेवालोके द्वारा पहुँचता है और खोटकके समान वही अवरुद्ध होकर रह जाता है। नामकर्म बयालीस प्रकृतियोंका होता है और वह चित्रके रंगोंकी परिणतिके समान परिणामोंसे युक्त होता है। कुम्हारके बर्तनोके समान छोटे-बड़े आकारवाला गोत्रकर्म दो प्रकारका होता है—मलिन और समुज्ज्वल, (उच्चगोत्र और नीच गोत्र)। अन्तराय कर्म चार और एक—पाँच प्रकारका है जो करनेवालेको दानका निवारण करनेवाला होता है। तथा प्रकृति स्थिति अनुभाग प्रदेशवाले बन्ध विशेषोंसे बलपूर्वक जकड़ लेता है।

घत्ता—गुणवान्, अनादि सूक्ष्म विवेकी, दो शरीरोंसे निबद्ध (तैजस और कार्मण) त्रिगतिवाला यह जीव कर्ता और भोक्ता उत्पन्न शरीर मात्र ऊर्ध्वगामी और स्वयं सिद्ध है ॥१३॥

१४

आते हुए पापका जो पूर्ण संवर नही करते, उनके ऊपर सिरपर बिजलीकी तरह असह्य वज्रपात होगा। ध्यानके विस्तार और धरतीपर सोनेसे स्पर्शविलासी चित्त रुक जाता है, पशुके पिण्डके समान आहार ग्रहण करनेसे रसना इन्द्रिय रुक जाती है, और वह दृष्टि विकारभावसे कुछ

५ सवणु सुसरि दुसरेसु वि सरिसउ कीरइ पयलियरइआमरिसउ।
णासारंधु गंधअविहत्तिइ मणवयकायदुरीहु तिगुत्तिइ।
दुरियहु सुयरिउ रक्खणु दिज्जइ रोसु खमाइ होंतु णियमिज्जइ।
अविणयगारउ माणु मउत्तें मायाभाउ समुज्जुयचित्तें।
लोहु सुपत्तदाणपविहाएं अहवा सव्वसंगपरिचाएं।
१० मयविब्भमु परगुणसंभरणें जिप्पइ हरिसु होंतु सुथिरमणें।
दप्पु वि घोरवीरतवचरणें राउ रसियरामापरिहरणें।
घत्ता—पिहियासवदारहु जुत्तायारहु अहिणउं कम्मु ण पइसइ॥
जं चिरु जीवासिउ तं पि अपोसिउ कायकिलेसें णासइ॥१४॥

१५

खंडयं—मणमेत्ते वावारए एसो कीस ण कीरए।
सासयसुहओ संवरो होइं होमि दियंबरो॥१॥
पुणु परमेसरु सच्चउ सुच्चइ कालें अहव उवाएं पिच्चइ।
जिह धरणीरुहहलु तिह दुक्किउ कामाकामियणिज्जरतक्किउ।
५ तणयराहं सुसहावें सोम्महं बंधणदारणमारणगम्महं।
दूसहदुक्खभावभयभरियहं होइ अकामें णिज्जर तिरियहं।
विरइज्जइ वेरम्मपहाणहिं कामें णिज्जर रिसिसंताणहिं।
सिसिरायासणिवासायरणहिं रुक्खमूलअत्तावणकरणहिं।
थियपलियंकचित्तमहिदंडहिं गोदुहआसणेहिं गयसोंडहिं।
१० पक्खमासवरिसंतुववासहिं देज्जवित्तिसंखाविण्णासहिं।
घत्ता—ढोइयणीसासहि सुणितणुमूसहि खरतवजलणें तत्तउ॥
जीविउ हेमुजलु थक्कइ केवलु बहुकम्ममलें चत्तउ॥१५॥

१६

खंडयं—कुवहे जंतं रुंभए णाणंकुसिण णिसुंभए।
वयपायवणिल्लूरणं साहू णियमणवारणं॥१॥
एक्कगासदोगासाहारहिं विविहावग्गहरसपरिहारहिं।
दीहमंसुलोमहिं मलधरणहिं आयंबिलचंदायणचरणहिं।
५ वोसट्टंगमुक्करइरंगहिं वज्जियघरपुरदेसपसंगहिं।
सुण्णावासमसाणागारहिं हयणेहहिं अणियत्तिविहारहिं।
दंसमसयछुहतण्हासोसहिं खलकयकण्णकडुयआकोसहिं।

५ MBP गंधु अ°। ६. MBP एंतु। ७ M समुज्जल°। ८. P मइविब्भमु। ९ B omits this foot. १०. MBP रसिउ रामा°।

१५ १ मणमेत्तए। २ P पच्चइ। ३. MBP ससहावें। ४. BP सोमहं। ५ MBP °पहाणह। ६. M सिरिसंताणहं; BP रिसिसंताणह। ७ MBP °वरिसद्धुव°। ८. MB वेज्ज°। ९. कम्ममलें परि°।

१६ १. MBP कुपहे। २. P एक्कग्गासदुगासा°। ३. M अणियट्ट°।

भी ग्रहण नही करती। कान सुन्दर और असुन्दर स्वरोंमे समान हो जाते है, वे नष्ट राग-द्वेषवाले कर दिये जाते है। और गन्धके अविभाजन (सुगन्ध-दुर्गन्ध आदि) से नाक भी (वशमे कर ली जाती है); तीन गुप्तियों (मन, वचन और काय) के द्वारा मन, वचन और कायकी दुश्चेष्टाओंको (वशमे करना चाहिए); सुचरितको पापसे संरक्षण दिया जाये, क्रोध होनेपर क्षमासे उसे नियमित किया जाये, मृदुतासे अविनय करनेवाले मानको, और सरलचित्तसे मायाभावको, सुपात्रको दान देकर लोभ अथवा सब प्रकारका परिग्रह छोड़कर। दूसरेके गुणोंकी याद कर मदके विलासको और स्थिर मनसे होते हुए हर्षको जीतना चाहिए। घोर और वीर तपके आचरणसे दर्पको और रसवन्ती स्त्रीके परित्यागसे रागको।

घत्ता—इस प्रकार जिसके आश्रवद्वार बन्द हैं ऐसे मुक्त आहार-विहारवाले जीवको कर्मका बन्ध नही होता, और जो पुराना संचित कर्म है अपोषित, वह काय-क्लेशके द्वारा नष्ट हो जाता है ॥१४॥

१५

मनोमात्रके द्वारा आचरणमें ऐसा क्यों नही किया जाता कि शाश्वत सुखवाला संवर हो। "मैं दिगम्बर होता हूँ।" फिर परमेश्वर सच सोचते हैं कि समय अथवा उपायसे जिस प्रकार वृक्षोंके फल पकते है, उसी प्रकार सकाम और अकाम निर्जरासे कल्पित पाप नष्ट होता है। स्वभावसे सौम्य शरीरधारियों, बन्धन, विदीरण और ताड़न आदि बातोंको प्राप्त होते हुए, असह्य दुःख भावसे भरे हुए तिर्यंचोंकी अनाम निर्जरा होती है। शिशिरमे आकाशके नीचे निवास करनेवाले, वृक्षोके मूलमे आतापन तपनेवाले, पर्यंकासनोंमे स्थित और महीदण्डपर अपनेको निक्षिप्त करनेवाले गोदुह और गजशौड आसनोवाले, पक्ष-माह और वर्षके अन्त तक उपवास करनेवाले, देय और आहारकी वृत्ति और संख्याकी रचना करनेवाले, वैराग्य प्रधान ऋषि सन्तानोंके द्वारा—

घत्ता—श्वाससे चलते हुए मुनिके शरीररूपी धातुविशेष (मूषा) मे तीव्र तपज्वालासे तपकर जीवन स्वर्णकी तरह उज्ज्वल और कर्ममलसे मुक्त होकर केवली होकर रह जाता है ॥१५॥

१६

व्रतरूपी वृक्षको विदारित करनेवाले अपने मनरूपी हाथीको साधु कुमार्गमे जानेसे रोकता है और ज्ञानरूपी अंकुशसे उसे वशमे रखता है। एक या दो कौर आहार करनेवाला विविध अवग्रहों और रसोंका परिहार करनेवाले लम्बी दाढ़ी और बालवाले मलधारी, आताम्र और चान्द्रायण-तपका आचरण करनेवाले, कायोत्सर्गसे रतिरंगको छोड़नेवाले, घर, पुर और देशके प्रसंगोसे दूर रहनेवाले, शून्य आवास और मरघटोंको आवास बनानेवाले, स्नेहसे रहित और अनियमित विहार करनेवाले, दंश-मशक, भूख और प्यासको सहन करनेवाले, दुष्टोके द्वारा

वायवद्दलुक्कंपियकायहिँ सीउण्हहिँ परपहरणिहायहिँ ।
केसालुंचणणिच्चेलत्तहिँ कंचणतणसुहिरिउसमचित्तहिँ
१० विसमपरीसहसहणब्भासहिँ रोयातंकहिँ कासहिँ सासहिँ ।
जम्मणमरणणिबंधुद्धाइउ एम खविज्जइ कम्मु पुराइउ ।
घत्ता—जिह हर्यणिज्झरणे वद्धे वरणे रविकरेहिँ सरु सोसइ ॥
तिह णियमियकरणे रिसितवचरणे भवकिउ कम्मु पणासइ ॥१६॥

१७

खंडयं—इय काऊण णिज्जरं जे हणंति भवपंजरं ।
णीरोयं अजरामरं ते लहंति सोक्खं वरं[१] ॥१॥
जेण मोक्खफलु तं पाविज्जइ सो धम्मंघिउ एहउ गिज्जइ ।
खमखमायलंतुग्गयदेहउ[२] सद्दवपल्लउ अज्जवसाहउ ।
५ सच्चसउच्चमूलु संजमदलु दुविहमहातवणवकुसुमाउलु ।
चउविहचायपसारियपरिसलु पीणियभव्वलोयछप्पयउलु ।
दियसंदोहसद्दकयकलयलु सुरवरणरखेयरसुहसयफलु[३] ।
दीणाणाहदीहसमणिग्गहु सुद्धु सोम्मु[४] तणुमेत्तपरिग्गहु ।
वंभचेरछायाइ सुहासिउ रायहंसणियरेहिँ समासिउ ।
१० एहउ धम्मरुक्खु लक्खिज्जइ जीवदयावईइ रक्खिज्जइ ।
झाणु ठाणु[५] भल्लारउ किज्जइ मिच्छामयहुं पवेसु ण दिज्जइ ।
सीलसलिलधारइ सिंचिज्जइ एम पयत्तें[६] वड्ढारिज्जइ[७] ।
घत्ता—कोवाणलचुक्कउ होइ गुरुक्कउ जाइं रिसिंदहिँ सिट्ठइं ॥
लग्गि ताइं सुहंकरु धम्ममहातरु देइ फलाइं सुमिट्ठइं ॥१७॥

१८

खंडयं—जहिँ होहिम्मि[१] भवे भवे तहिँ देहम्मि णवे णवे ।
दुक्खलक्खणिण्णासणे होउ[२] भत्ति जिणसासणे ॥१॥
अवरु णिरंतरु उज्झियगव्वें इय[३] मग्गेवउ मणुएं भव्वें ।
चित्तु धुत्तसिद्धंतपरंमुहुं भवि भवि होउ जिणागमि संमुहुं ।
५ पंचिंदियपडिभडवलु भज्जउ भवि भवि विमलवुद्धि उप्पज्जउ ।
विसयकसायरायपरिचत्तउ भवि भवि होउ तिगुत्तिपॅउत्तउ[४] ।
आसापासणिवंधणु तुट्टउ भवि भवि मोहजालु ओहट्टउ ।

४. MBP °तिण° । ५. MB णिवंधे आइउ; P °णिवंधइ आइउ । ६. K हर° and gloss हृत ।
१७. १. BPK परं । २. M खमखमायलतग्गयदेहउ; B खमखमायलु तुंगयदेहउ; P खमखमायलुत्तुंगयदेहउ ।
३. MBP सुरणरवर° । ४. MBP सोमु । ५. MP झाणठाणु; B झाणट्ठाणु । ६. B पवत्ते । ७. M पट्टारिज्जइ; वड्ढाविज्जइ ।
१८ १. MBP होहम्मि । २. B होइ । ३ P इउ । ४. MBP °पयत्तउ ।

किये गये कर्णकटुक आक्रोशवाले, वायु और बादलोंसे उत्कम्पित शरीरसे युक्त मुनियोंके द्वारा शीतोष्ण पर-प्रहारके समूहों, केशलोंच और अचेलकत्वों (दिगम्बरत्व), स्वर्ण और तृण, मित्र और शत्रुमें समचित्तों, विषम परीषहोंके सहन करनेके अभ्यासों, रोगोंसे आक्रान्त खाँसी और श्वासोंके द्वारा, जन्म और मृत्युके प्रबन्धमे प्रवृत्त पुराने कर्मोका इस प्रकार क्षय किया जाता है।

घत्ता—जिस प्रकार झरना सूखने और पाल बँध जानेपर रविकी किरणोंसे सरोवर सूख जाता है, उसी प्रकार इन्द्रियोंको नियमित करने और ऋषिके तपका आचरण करनेसे संसारमें किया गया कर्म नष्ट हो जाता है ॥१६॥

१७

इस प्रकार निर्जरा कर भव रूपी कारागृहको नष्ट कर देते हैं वे नीरोग अजर-अमर श्रेष्ठ सुख प्राप्त करते है। जिससे मोक्षरूपी फल प्राप्त किया जाता है वह धर्मरूपी वृक्ष इस प्रकार वर्णित किया जाता है। उसका शरीर क्षमारूपी पृथ्वीतलसे उत्पन्न है। मार्दव उसके पत्ते हैं, आर्जव उसकी शाखाएँ हैं, सत्य और शौच्य उसकी जड़ है, संयम उसका दल है, वह दो प्रकारके महातप रूपी नवकुसुमोंसे व्याप्त है, जिसका चार प्रकारके त्यागका परिमल प्रसारित हो रहा है और जो भव्य लोकरूपी भ्रमरकुलको प्रसन्न करता है, जिसमे मुनिसमूहके शब्दोंकी कलकल ध्वनि हो रही है, जो सुरवर, विद्याधर और मनुष्योको शतशुभ फल देनेवाला है, दीन और अनाथोके दीर्घ श्रमका निग्रह करनेवाला है, जो शुद्ध, सौम्य और शरीर मात्रका परिग्रह रखनेवाला है, जो ब्रह्मचर्यकी छाया (कान्ति) से शोभित है, राजहंसोंके समूहसे समादृत है। इस धर्मरूपी वृक्षको देखना चाहिए और जीवदयारूपी वृति (बागड़) के द्वारा रक्षा करनी चाहिए। उसे ध्यानरूपी स्थाणुका सहारा देना चाहिए, मिथ्यात्वरूपी पशुओंको उसके पास प्रवेश नही देना चाहिए, शीलरूपी जलकी धारासे उसका सिंचन करना चाहिए। इस प्रकार प्रयत्नपूर्वक उसे बढ़ाना चाहिए।

घत्ता—क्रोधरूपी ज्वालासे बचनेपर यह धर्मरूपी वृक्ष शीघ्र बड़ा हो जाता है, जिनकी रचना ऋषीन्द्रोने की है, जगमे उन अत्यन्त मीठे फलोंको यह शुभंकर धर्मरूपी महावृक्ष देता है ॥१७॥

१८

मै जन्म-जन्ममें जहाँ होऊँ, वहाँ नये-नये शरीरमें लाखों दुःखोंका नाश करनेवाले जिनशासनकी भक्ति हो। धूर्तोके सिद्धान्तोसे पराङ्मुख चित्त जन्म-जन्ममे जिनागमके सम्मुख हो। पंचेन्द्रिय प्रतिशत्रुओंका बल नष्ट हो, जन्म-जन्ममे विमल बुद्धि उत्पन्न हो, विषयकषाय और राग भावसे परित्यक्त तीन गुप्तियाँ जन्म-जन्ममे हों। जन्म-जन्ममें आशापाशका बन्धन टूटे और मोहजाल

संजयसाहुसंगसोहियमलि भवि भवि होउ जम्मु सावयकुलि।
रयमूढहं संबोहणगारा भवि भवि रिसि गुरु होंतु भडारा।
१० दीणि करुण उप्पेक्ख दयंतइ भवि भवि रइ वड्ढउ गुणवंतइ।
वयजोग्गउ सरीरु संपज्जउ भवि भवि तवसिहितावें झिज्जउ।
धणु परियणु पुरु घरु मा ढुक्कउ भवि भवि उरि उवसमसिरि थक्कउ।
ण रमउ णारिरूवि हियउल्लउ भवि भवि हुवउ णिरहु णीसल्लउ।
ओसारियदहपंचपमाएं भवि भवि दियहु जंतु सज्झाएं।
१५ दंसणणाणचरित्तपयासें भवि भवि मरणु होउ संणासें।

घत्ता—लद्धाइ समाहिइ भवि भवि वोहिइ जीवउ जीउ विरत्तउ॥
संसारुत्तरणइं जिणवरचरणइं भवि भवि मणि सुमरंतउ॥१८॥

१९

खंडयं—इय जो चिंतइ णियमणे अणुवेक्खाओ थिउ वणे।
मोत्तूणं भवसंपयं सो पावइ परमं पयं॥१॥
महु पुणु सरणउं सिद्ध भडारा दढकिम्मीरकम्मविणिवारा।
अक्खसोक्खपक्खे णिरु णिप्पिहं भवसिप्पीरभारहुयवहसिह।
५ इय चिंतंति वहंति समत्तणु पउणंती रइभूमिणियत्तणु।
सक्कें जिणमइ जाणिय जावहिं लोयंतिय संपाइय तावहिं।
बंभसग्गलोयंतकयालय देहकंतिदीवियदिप्पालय।
पुव्वजम्मकयधम्मपहावण अणुदिणु संभाविय सुहभावण।
घल्लियकुसुमंजलिकेसररय- रयमहुयरउलसवलियपहुपय।
१० ते भणंति भावें मउलियकर जय देवाहिदेव परमेसर।
पइं ण मुणिउं जं तं किर केहउ किं गिरि किं परमाणुउ जेहउ।
सुसिरु अणंतु तिलोयणिवासउ किं आयासु अलक्खपएसउ।
जीउ कम्मु पोग्गल वित्थिण्णउ भणु तुह णाणें काइं ण भिण्णउ।
तुहुं सइंभु ससमाहिविसुद्धउ चारु चारु जं सइं पडिबुद्धउ।
१५ इंदियपाणासंजमु छंडिवि अप्पउ सीलगुणोहें मंडिवि।

घत्ता—उप्पाइवि केवलु अवियलु गयमलु तच्चु सुसच्चउ अक्खहि॥
पायालि पडंतउ पलयहु जंतउ भुवणु भडारा रक्खहि॥१९॥

---

५. B °साहुसंगि। ६. MBP जम्मु होउ। ७. MBP रइमूढहु, T रयमूढहो। ८. MBP उप्पज्जउ। ९. M थक्किउ। १० MBP होउ। ११ MK मरण।

१९ १ B परमप्पयं। २ P दिढ°। ३ MBP °पक्खइ। ४. M णिप्पिह। ५ MBPT चित्तंति, gloss in MT हृदयमध्ये, but in P चिन्तयति सति। ६. B सपावियभाविहिं, P संपाइय ताविहिं। ७. MBP °दिव्वालय and gloss in MP दीप्तविमानाः, but T दिप्पालय दशदिक्पालाः। ८. P °केसरिरय°। ९. MBP परिमाणुउ। १० BP पोग्गलु। ११ MBP सयंभु। १२. MBP सुसमाहि°।

कम हो। संयमी साधुओंके संगसे शोधित श्रावककुलमे मेरा जन्म, जन्म-जन्ममे हो। अनुरक्त मूर्खोको सम्बोधित करनेवाले आदरणीय ऋषि जन्म-जन्ममें मेरे गुरु हों। दीनमें करुणा, दयाशून्य-मे उपेक्षा और गुणवान्में मेरी रति भव-भवमे बढ़े। जन्म-जन्ममे तपकी आगसे क्षीण मेरा शरीर व्रतके योग्य हो। जन्म-जन्ममे धन-परिजन, पुर और घर उपस्थित न हो, उपशमश्री मेरे मनमें स्थित हो। मेरा हृदय नारीके रूपमें न रमे, भव-भवमें वह निष्पाप और इच्छाओंसे शून्य हो। पाँच प्रकारके प्रमादोंको दूर हटानेवाले सत् ध्यानमें जन्म-जन्म मेरे दिन जायें, दर्शन, ज्ञान और चरितको प्रकाशित करनेवाले संन्याससे मेरा मरण जन्म-जन्ममें हो।

घत्ता—भव-भवमें रत्नत्रयकी एकता और प्राप्तिमें विरक्त जीव जीवित रहे। संसारसे उतारनेवाले जिनवरके चरणोंको जन्म-जन्ममे मनमें स्मरण करता रहूँ ॥१८॥

१९

इस प्रकार जो वनमें स्थित होकर अपने मनमे अनुप्रेक्षाओंका चिन्तन करता है वह भव-सम्पदाको छोड़कर परमपदको प्राप्त करता है। मेरे लिए दृढ़ और विचित्र कर्मोका निवारण करनेवाले, इन्द्रियोके सुख वर्गमे अत्यन्त निस्पृह, संसाररूपी तृणभारके लिए अग्निज्वालाके समान, आदरणीय सिद्ध मेरे लिए शरण हों। यह सोचते हुए और सम्यक्त्व धारण करते हुए एवं रति-भूमिका निवर्तन करते हुए, जिनकी बुद्धिको जैसे ही इन्द्रने जाना वैसे ही लौकान्तिक देव वहाँ आ पहुँचे। जिनका घर ब्रह्मस्वर्गका लोकान्त था, जो शरीरकी कान्तिसे दिव्यालयको आलोकित करनेवाले थे, पूर्वजन्ममे धर्मकी प्रभावना करनेवाले, प्रतिदिन शुभभावनाओंकी सम्भावना करने-वाले, और जो फेंकी गयी कुसुमांजलिकी केशर रजमे लीन मधुकरकुलसे जिनचरणोंको शवलित करनेवाले थे। भावपूर्वक हाथ जोड़कर वे कहते हैं—"हे देवाधिदेव परमेश्वर, आपकी जय हो। जिसको आप नही जानते, वह कैसा है, क्या गिरिके समान है, या परमाणु जैसा। अलोकाकाश और त्रिलोकका निवासभूत लोकाकाश क्या अलक्ष्य प्रदेश है? जीवकर्म पुद्गलका विस्तार, बताओ तुम्हारे ज्ञानको क्या ज्ञात नही है? अपनी समाधिसे विशुद्ध तुम स्वयम्भू हो, यह सुन्दर हुआ जो आप स्वयं प्रबुद्ध हो गये, इन्द्रिय और प्राणोंके संयमको छोड़कर, अपने आपको शीलगुणोंसे अलंकृत कर—

घत्ता—अविकल केवलज्ञानको प्राप्त कर गतमल सच्चा तत्त्व कहिए। पाताललोकमें गिरते हुए और प्रलयको प्राप्त इस विश्वको, हे आदरणीय, बचाइए ॥१९॥

२०

खंडयं—तुह वयणंसुपसाहिए जगकमले संबोहिए।
कुसमयखलखज्जोयया होंति देव हयतेयया ॥१॥
मोहजलणजालावलि णिरसहि धम्मामयअंबुहरु पवरिसहि।
पाववज्जलेवंतणिहित्तइं जरकूसरा इव कहवि खुत्तइं।
५ उत्तारहि परमप्पय भूयइं रंगणडा इव णाणारूवइं।
एम भणेप्पिणु गय लोयंतिय देवें परहियबुद्धि विचिंतिय।
तहिं अवसरि बुहयणिहिं समत्थिउ भरहु महीसरेण अब्भत्थिउ।
पुत्त पुत्त लइ पालहि वसुमइ मइं पुणु साहेवी पंचम गइ।
तं णिसुणेवि कुमारें वुत्तउं देव देव किं भणहि अजुत्तउं।
१० जं तुहुं भुत्तुज्झियआहारें तं ण सोक्खु भोयणवित्थारें।
जं तुह णियडासणइ णिविट्ठहु तं ण सोक्खु हरिवीढि वइट्ठहु।
जं महु तुह अग्गइ धावंतहु तं ण सोक्खु गयखंधहिं जंतहु।
जं पायडियउ तुह पयछाहिइ तं ण सोक्खु महु छत्तहु छाहिइ।
मंतिमहासेणावइपुज्जें पइं रहिएण ताय किं रज्जें।
१५ घत्ता—जंपियउ जिणेसें णाउ विसेसें जइ पहुपयहि ण जुंज्जइ॥
तो लोउ रउद्दे जुज्झवि मद्दें मच्छें मच्छु व खज्जइ॥२०॥

२१

खंडयं—कुरु कुरु धरणीपालणं णायाणायणिहालणं।
धरि धरि महिवइसासणं एयं चिय मह पेसणं॥१॥
तं णिसुणेवि णिरुत्तरु जायउ थिउ तणुरुहु संभूयविसायउ।
सोणंदेयहु दिण्णु सुहंकरु पोयणपुरु पविहिण्णवसुंधरु।
५ अण्णेक्कहु अण्णण्णइं दिण्णइं मंडलाइं ढोइयधणधण्णइं।
एत्थंतरि संपेसिय राणा देवें जे एक्केक्क पहाणा।
छक्खंडावणिपसरियतेयहु लग्गा रायमहाअहिसेयहु।
णरकरकोणाहयहिं गहीरहिं वज्जंतहिं चामीयरतूरहिं।
धवलिहिं मंगलेहिं गिज्जंतिहिं खुज्जयवामणेहिं णच्चंतिहिं।
१० कामिणिमित्तगत्तरोमंचहिं होमदाणपारंभपवंचहिं।
ससहरमणिमएहिं णिक्कलुसिहिं सयलतित्थजलभरियहिं कलसहिं।
जय रायाहिराय पभणंतहिं अहिसिंचियउ भरहु सामंतिहिं।
हाससंकासकासंकासइं परिहाविउ सुइसुब्भइं वासइं।
कण्णहि कुंडलाइं आइद्धइं चंदाइच्चइं तेयसमिद्धइं।
१५ करि कंकणु गलि हारु विलंबिउ सिरि सेहरु महुयरमुहचुंबिउ।

२०. १ MBP धम्ममहामयजलहर वरिसहि। २. MBP °वज्जलेवत्त°। ३ MBP कइमि। ४. MBP भणिउं। ५ B तुहं भुत्तु उज्झिय°। ६ P पयछाएं। ७. P छाएं। ८ K जुंजइ।
२१. १. MBP °वावणेहि। २. BMK कामिणिसित्त°। ३. MBP पहिराविउ।

२०

आपकी वचनरूपी किरणोसे प्रसाधित विश्वकमलके प्रबुद्ध होनेपर, हे देव मिथ्यामत और दुष्टरूपी खद्योत हततेज हो जायेंगे। मोहरूपी ज्वालावलीको हटाइए, और धर्मामृतरूपी मेघोंकी वर्षा कीजिए। पापरूपी वज्रलेपसे लिप्त बूढे गरियाल बैलके समान, (भव)-कीचड़मे फँसे हुए तथा रंगनटकी तरह नानारूप धारण करनेवाले प्राणियोंका उद्धार कीजिए।" यह कहकर लौकान्तिक देव चले गये। दूसरेके कल्याणकी बुद्धिवाले देवने विचार किया। उस अवसरपर बुधजनोंके द्वारा समर्थित भरत महीश्वरसे अभ्यर्थना की, "पुत्र, पुत्र, लो, अब तुम पृथ्वीका पालन करो, मै पांचवीं गति (मोक्षगति) का साधन करूँगा।" यह सुनकर कुमार बोला, "हे देवदेव, यह क्या अयुक्त कहते हैं, तुम्हारे खानेसे छोड़े गये आहारमें जो सुख है, वह सुख भोजनके विस्तारमें नही है; तुम्हारे आसनके निकट बैठनेमे जो सुख है वह सुख सिंहासनपर बैठनेमें नही है। तुम्हारे सामने दौड़ते हुए मुझे जो सुख है वह सुख हाथीके कन्धोंपर जाते हुए नही है। तुम्हारे पैरोंकी छायाने मुझमे जो सुख प्रकट किया है, छत्रकी छायासे वह सुख मुझे प्राप्त नही है। मन्त्री और महासेनापतिके द्वारा पूज्य तुम्हारे नही रहनेपर, हे तात राज्यसे क्या ?"

घत्ता—यह जानकर जिनेश्वरने विशेष रूपसे कहा, "यदि तुम्हें राजाका पद अच्छा नही लगता तो जबरदस्ती भयंकर युद्ध कर मछलीके द्वारा मछलीको तरह एक दूसरेको खा जायेंगे ॥२०॥

२१

इसलिए तुम धरतीका पालन करो, न्याय-अन्यायको देखो। राजाके शासनको स्वीकार करो—मेरा तुम्हें यह आदेश है।" यह सुनकर भरत निरुत्तर हो गया। वह विषादसे खिन्न रह गया। सुनन्दाके पुत्र बाहुबलिको धरती विभक्त शुभ पोदन दिया गया। दूसरे-दूसरे पुत्रोंको धन-धान्यसे परिपूर्ण दूसरे-दूसरे मण्डल दिये गये। इस बीच राजाओंको प्रेषित किया गया, जो एकसे एक प्रधान थे, छह खण्ड धरतीमे प्रसारित है तेज जिसका, ऐसे राज्याभिषेकमे लग गये। मनुष्योंके हाथों द्वारा डण्डे (वादन-काष्ठ) से आहत, बजते हुए स्वर्ण तूर्यों, गाये जाते हुए धवल मंगल गीतों, नृत्य करते हुए कुब्जों और बौनों, स्त्रियों और मित्रोंके शरीर रोमांचों, होम और दानके प्रारम्भके विस्तारों तथा स्फटिक मणियोसे निर्मित, निष्कलुष समस्त तीर्थोंके जलोंसे भरे हुए कलशोंके साथ 'जय राजाधिराज' कहते हुए सामन्तोने भरतका अभिषेक किया। और हास्य चन्द्रमा और काशके समान (धवल) पवित्रतासे बनाये गये वस्त्र उन्हें पहना दिये गये, सूर्य और चन्द्रमाके तेजसे समृद्ध कुण्डल कानोमें बांध दिये गये; हाथोमे कंगन और गलेमें हार पहना दिया गया और सिरपर मधुकरोंके मुखोंसे चुम्बित शेखर। रत्नकिरणोंसे चमकता हुआ कटिसूत्र कमरमे छुरीके

कडियलि रयणकिरणविप्फुरियइ बद्धउ कडिसुत्तउ सहुं छुरियइ।
बंभसुत्तु उरि चारु चडाविउ तिलएं तइयउ णयणु व दाविउ।
हरिकरिससिरविरुवणिबद्धइं उब्भियाइं विमलइं कुलचिंधइं।
परिमुक्कमलइं धवलइं छत्तइं णं जिणकित्तिभिसिणिसयवत्तइं।
२० मय मायंग तुरंग सलक्खण पुज्जिय गह काणीण वियक्खण।
घत्ता—उच्चाइउ आयहिं पइँअणुरायहिं आसीवायणिघोसहिं॥
सिरिभरहकुमारहु महिभत्तारहु बद्धउ पट्टु णरेसहिं॥२१॥

२२

खंडयं—सीहासणसिहरासिओ सोहइ भुअणपसंसिओ।
गिरिकडए धुयकेसरो केसरि व्व भरहेसरो॥१॥
दसदिसिवहसंप्राइयसुरवरु तहिं अवसरि दीसइ विउलंबरु।
बहुविमाणभारें णं णवियउ धयवडेहिं णावइ पल्लवियउ।
५ आयवत्तुं फुल्लहिं णं फुल्लिउ तरुणीथणवलेहिं ओणल्लिउ।
थियहंसहंसचासवाहणगणु णावइ जिणवरपुण्णमहावणु।
णं तुरयहिं धावंतहिं धावइ संदणेहिं रविभरियउ णावइ।
कुंजरेहिं णं मेहहिं छइयउ असिवरेहिं णं विज्जुवलइयउ।
हरियारुणरुइल्लु णं सुरधणु णं अवलंबइ णवपाउसगुणु।
१० विहुणिक्खवणपयासणयालइ एम परायउ सुरयणु लीलइ।
गउ तहिं जहिं अच्छइ रंजियसहु रिसहणाहु णिण्णाहु महापहु।
घत्ता—कमलासणु केसवु ससहरु वासवु सिद्धु बुद्धु हरु दिणयरु॥
चामीयरघडियइ रयणहि जडियइ पट्टि णिसण्णउ जिणवरु॥२२॥

२३

खंडयं—केण वि गहिरं वाइयं केण वि महुरं गाइयं।
केण वि सरसं णच्चियं पहुपयजुयलं अंचियं॥१॥
अमरविलासिणिकरसंगहियहिं ण्हविउ देहु घियदुद्धहिं दहियहिं।
इंदजलणजमणेरियवरुणहिं पवणकुबेरतिसूलुद्धरणहिं।
५ णलिणबंधुणाइंदहिं चंदहिं रुंदाणंदभरेहिं णरिंदहिं।
वयणुग्गीरियथोत्तवमालहिं णिग्गयखीरवारिधारालहिं।

---

४. MBP °विच्छुरियइ। ५. B पहु°।

२२ १. B °दिसिवह°। २. MBP संपाइय। ३. M धयवडेण। ४. MBP आयवत्त। ५. M तरुणीथण- हरेंहि ओहुल्लिउ, B थणहारेंहि ओहुल्लिउ; P थणहलेहिं सुफलिल्लिउ, but T ओणल्लिउ। ६. B भावइ। ७. P °पावस घणु। ८. M रजियसुहु। ९ MBP केसउ।

२३. १. MBP देउ; K देहु but corrects it to देउ। २ M घय°। ३ T तिसूलवरणु। ४. M °भरेहिं।

साथ बाँध दिया गया। उरतलपर सुन्दर ब्रह्मसूत्र (यज्ञोपवीत) चढ़ा दिया गया। तिलक तीसरे नेत्र-के समान दिखाई दिया। सिंह, हाथी, चन्द्रमा और सूर्यके रूपोंसे निबद्ध विमल चिह्न (कुलचिह्न) उठा लिये गये। मलसे रहित धवल छत्र ऐसे प्रतीत होते थे, मानो जिनेन्द्रकी कीर्तिरूपी कमलिनीके कमल हों। मदगज, लक्षणोंवाले घोड़े, ग्रह और विचक्षण कानीन (कन्यापुत्र) पूजे गये।

घत्ता—स्वामीके इन अनुराग चिह्नों और आशीर्वाद वचनोंके निर्घोषोंके साथ राजाओंने पट्ट ऊँचा किया और पृथ्वीके राजा श्री भरतकुमारको बाँध दिया ॥२१॥

२२

विश्वके द्वारा प्रशंसित तथा सिंहासनके शिखरपर आसीन वह ऐसा शोभित होता है जैसे पर्वत शिखरपर अयाल हिलाता हुआ सिंह हो। जिसमें दसों दिशाओंके देव आये हुए हैं ऐसा विशाल आकाश उस अवसरपर ऐसा लगता था, मानो अनेक विमानोंके भारसे झुक गया हो। ध्वजपटोंसे मानो पल्लवित हो उठा हो, फूलोंसे खिला हुआ आतपत्र हो, मानो तरुणीजनके स्तनो-रूपी फलोंसे अवनत हो। जिसमें मत्स्य, हंस और चातकगण स्थित हैं ऐसा आकाश, जिनवरके पुण्यरूपी महासमुद्रके समान दिखाई देता है। वह मानो दौड़ते हुए अश्वोंसे दौड़ता है, स्यन्दनों (रथों) द्वारा सूर्योंसे भरा हुआ जान पड़ता है, हाथियोंके द्वारा मेघोंसे आच्छादित और तलवारों-के द्वारा बिजलियोंसे चमकता हुआ, हरी और लाल कान्तियोंके द्वारा, इन्द्रधनुषके समान जान पड़ता है, जो मानो नवपावसके गुणको धारण करना चाहता है। इस प्रकार देव विविध लीलाओं-के साथ वहाँ पहुँचे जहाँ, सभाको रंजित करनेवाले सबके नाथ महाप्रभु ऋषभनाथ बैठे हुए थे।

घत्ता—ऋषभ जिनवर (जो विष्णु, केशव, सिद्धबुद्ध, शिव और सूर्य हैं) स्वर्ण रचित एवं रत्नजड़ित पट्टपर आसीन थे ॥२२॥

२३

किसीने गम्भीर वाद्य बजाया, किसीने मधुर गान गाया। किसीने सरस नृत्य किया, और प्रभुके चरणकमलोंकी पूजा की। देवस्त्रियोंके हाथोंमें धारण किये गये घी, दूध और दहीसे शरीरका स्नान कराया गया। इन्द्र, अग्नि, नैऋत्य और यम, वरुण, कुबेर, त्रिशूल धारण करनेवाले शिव, सूर्य, नागेन्द्र, चन्द्र तथा महाआनन्दसे भरे हुए राजाओंके द्वारा, मुखोंसे निकलते हुए स्तोत्रोंके

कंचणकुंभसहासहिं सित्तउ   देससयट्ठलक्खणसंजुत्तउ ।
सण्हउं तिहुयणसामिहि जोग्गउ   किं वण्णिज्जइ अंगि वे लग्गउ ।
ढोइउ णिवसणु मुणु पंगुरणउं   तणुतावइ णं णाणावरणउं ।
१० भूसणाइं दिण्णाइं ण मण्णइ   मोहणिबंधणाइं अवगण्णइ ।
संतहु किहँ रुच्चंति रसोल्लइं   वम्महपहरणाइं फुडु फुल्लइं ।
होउ पहुच्चइ संभावइ जिणु   मलविलेवसारिच्छु विलेवणु ।

घत्ता—पज्जलियपईवहुं ससिरविभावहुं धूयंगारयधूमउ ॥
णिग्गंतउ दीसइ सुकइ समासइ णं मलपडलविलेविउ ॥२३॥

२४

खंडयं—दहिदूवंकुरचंदणं   सियसिद्धत्थयचंदणं ।
वंदिवि मयणवियारओ   सिवियारूढु भडारओ ॥१॥

सत्त पयाइं जाम जयवंदहिं   पढमुच्चाइय सिविय णरिंदहिं ।
तेत्तियइं जि भावेण णवंतहिं   वरविज्जाहरेहिं विहसंतहिं ।
५ उट्टियदेवमहाकुलकलयलि   पुणु वंदारएहिं णिय णहयलि ।
चल्लिउ अणुमग्गें सियसेविइ   णाहिणराहिउ सहुं मरुएविइ ।
आरणालणवदललियंगउ   जसवइणंदउ पच्छइ लग्गउ ।
दोण्णि वि णावइ मोहणवेल्लिउ   णं कामेण विमुक्कउ भल्लिउ ।
पियविच्छोयसोयखिज्जंतउ   णयणंजणमलइलिज्जंतउ ।
१० वरकंचीकलावगुप्पंतउ   तणुपासेयबिंदुथिप्पंतउ ।
तुरिउ चलंतु खलंतु विसंठुलु   णीससंतु चलमोक्कलकोंतलु ।
घणथणजुयलणिवेसियकरयलु   णिवडमाणअणिहालियमेहलु ।
पयचालणझंकारियणेउरु   धाइउ णिरवसेसु अंतेउरु ।
एक्कवार णिउ णिब्भरभावहिं   मंदरि ण्हाणिवि आणिउ देवहिं ।
१५ पुणु तेण जि कमेण आवेसइ   णरवइ एत्थु जि पुरि णिवसेसइ ।

घत्ता—पउरयणें वुत्तउ मुणिउ णिरुत्तउ एवहिं दुक्करु आवइ ॥
जडमइलकुचेली धरणिमहेली णाहें विणु किह जीवइ ॥२४॥

२५

खंडयं—भरहबाहुबलिसंणिहं   गलियंसुयधारामुहं ।
चलियं चोइयहयगयं   एक्कूणं णंदणसयं ॥१॥

पराइओ जिणेसरो घणंबणालयं   सुपोमसंपयाजसोघणं वणालयं ।
विसालवेल्लिजालरुद्धभाणुभावहं   महामुणिंदजोग्गयं सपावभावहं ।

---

५. MBP दह° । ६ P विलग्गउ । ७. MBP किं । ८ M °विलेविउ ।

२४ १ M दूवंकुरु वंदणं; BPK दूवकुरवंदण । २. M वसंतु व संवुलु; B खलतु व संठुलु । ३. M णिवड-माणु; P णिविडमाणु । ४ MP णरवइ इत्थ णयरि, B णरवइत्थ णयरे । ५. MP जड°, B जर° ।

२५ १. P °पसोहणं । २. P विलासवेल्लि° ।

कोलाहलों तथा दूध और जलकी गिरती हुई हजारों धाराओंसे युक्त हजारों स्वर्णकलशोंसे एक हजार आठ लक्षणोसे युक्त जिनका अभिषेक किया गया। फिर शरीरमें लगे हुए के समान जिनवर स्वामीके योग्य सूक्ष्म वस्त्रका क्या वर्णन किया जाये ? लाया गया और पहना गया वह, शरीरको इस प्रकार सन्तप्त करता है, मानो ज्ञानावरण कर्म हो। दिये गये आभूषणोंको वह स्वीकार नहीं करते, उनको मोहके बन्धनोंकी तरह उपेक्षा करते हैं, रससे आर्द्र, कामके प्रहरण (शस्त्र) पुष्प सन्तको किस प्रकार अच्छे लग सकते हैं। यह काफी है। जिन विलेपनकी सम्भावनाएँ, मलविलेपकी सदृशताके रूपमें करते हैं।

घत्ता—चन्द्रमा और सूर्यके समान कान्तिवाले प्रज्वलित प्रदीपोंसे निकलता हुआ धूपके अंगारोंका धुआँ ऐसा दिखाई देता है, मानो सुकवि मलपटल विशेषको बाँट रहा है ॥२३॥

२४

दही, दूर्वांकुर और चन्दन, श्वेत सिद्धार्थ (पीला सरसों) और रक्त चन्दनकी वन्दना कर कामदेवका नाश करनेवाले आदरणीय ऋषभ पालकीमें बैठ गये। अब विश्ववन्द्य नरेन्द्रोंने सात कदमों तक शिविकाको उठाया। उतने ही कदम भावपूर्वक नमस्कार करते हुए और हँसते हुए विद्याधरोंने उठायी। हो रहा है देवोंका महान् आकुल कुल-कुल शब्द जिसमे ऐसे आकाशमें फिर देवगण उसे ले गये। उसके पीछे-पीछे श्रीसे सेवित मरुदेवीके साथ नाभि राजा चले। कमलके नवदलोंके समान सुन्दर अंगवाली यशोवती और सुनन्दा भी पीछे लग गयीं। मोहसे नवेली दोनो ऐसी लगती थी मानो कामने दो बरछियाँ (भल्लियाँ) छोड़ी हों। प्रियके विछोहके शोकसे खेदको प्राप्त होता हुआ, नेत्रोंके अंजनमलसे मैला होता हुआ, श्रेष्ठ कटिसूत्रोंके समूहसे गिरता हुआ, शरीरके प्रस्वेद बिन्दुओंसे आर्द्र होता हुआ, शीघ्र चलता हुआ, स्खलित होता हुआ, शिथिल निःश्वास लेता हुआ, चंचल और बिखरे हुए बालोंवाला, सघन स्तन युगलपर करतल रखता हुआ, गिरनेसे धरतीको कँपाता हुआ, पैरोके संचालनसे नूपुरोंको झंकृत करता हुआ समस्त अन्तःपुर दौड़ा। एक बार परिपूर्ण भावोंवाले देवोके द्वारा ले जाये गये थे और अभिषेकके बाद प्रासादमें ले आये गये थे। फिर इसी क्रमसे वह आयेंगे और राजा ऋषभ इसी नगरमे रहेंगे।

घत्ता—पौरजनोंने यह कहा और अपने मनमें सोचा कि अब उनका आना कठिन है। जड़, मैले और खराब वस्त्र धारण करनेवाली धरतीरूपी महिला स्वामीके बिना कैसे जीवित रह सकती है ॥२४॥

२५

जो भरत और बाहुबलिके समान है, जिनके मुखसे अश्रुधारा बह रही है, और जिन्होंने हाथी और घोड़ोंको प्रेरित किया है, ऐसे एक कम सौ, अर्थात् निन्यानवे पुत्र चले। जिनेश्वर ऋषभ उस वनमें पहुँचे, "जो आम्र और नालक वृक्षोंसे सघन था, जो अच्छे पत्तोंवाले लक्ष्मी वृक्षोंसे शोभित था, जिसमें विशाल लताजालसे सूर्यकी आभाका पथ रोक दिया गया था। जो

५ फलोवडंतवुक्करंतबालवाणरं पियाविवज्जियाण कामुयाण बाणरं।
लयाहरत्थकिंणरीसुरत्तमाणवं असोयचंपयाइरम्मरुक्खमाणवं।
परूढबालकंदकंदलेहिं कोमलं पसूणरेणुपिंगपज्झरंतकोमलं।
दिसुच्छलंतदंतिदाणवारिवासयं रमंतणायरायदाणवारिवासयं।
महूहिं थिप्पिरं पसामियावणीरयं समाणियामरिंदचंदभाविणीरयं।
१० महीरुहग्गसंणिसण्णमोरसारसं पएहिं इच्छिएहिं लोयदिण्णसारसं।
वहंतमंदगंधवाहकंपमाणयं जलम्मि पोमिणीण जत्थ कं पमाणयं।
अलीहिं चंचलेहिं छण्णकंजकेसरे तरंति णो सुरासुरा वि जत्थ के सरे।
पलोइऊण तं सरीतुसारसीयलं णहंगणावइण्णओ रिसी वसी यलं।

घत्ता—तहिं हियइ पसण्णउ सिलहि णिसण्णउ णिव्विण्णउ णरजोणिहे॥
१५ ससिबिंबसमाणहि मलपरिहीणहि सिद्धु व सिवपयखोणिहे॥२५॥

२६

खंडयं—विविहक्खणविहिकारिणा विप्फुरंतपविधारिणा।
अइरावयकरिगामिणा पुणु पुज्जिउ सुरसामिणा॥१॥
परमसिद्ध णियचित्ति धरेप्पिणु मुट्ठिउ पंच झडत्ति भरेविणु।
जाइं ताइं ससहावें कुडिलइं धुत्तविलासिणिकुलइं व कुडिलइं।
५ आलुंचेविणु घित्तइं केसइं एम मुणंति धम्मु जगि के सइं।
चिहुर लुक्के जे हयतमपडलें लेवि पुरंदरेण मणिपडलें।
जणवयसंदरिसियक्खसमुद्दइ घित्त तुरंतें खीरसमुद्दइ।
परिसेसियउ मउडु रइरंगउ णं वम्महसिहरेहि सिहरग्गउ।
मुक्कइं कुंडलाइं मणिजडियइं रविससिबिंबइं णं णिव्वडियइं।
१० कंकणु मुक्कउ मोत्तियहारें सहुं णिज्जिय मियंकु णीहारें।
मुक्कउ कडिसुत्तउ सहुं छुरियइ विज्जुलेया इव णहविप्फुरियइ।
अंबराइं मुक्काइं अमोल्लइं जाइं सरीरहु सुट्ठु सुहिल्लइं।
संसारासारत्तु मुणेप्पिणु पंचमहव्वय चित्ति धरेप्पिणु।
किमलंकारें देहहु भारें अप्पउ भूसिउ वयपब्भारें।
१५ मोहजालु जिह मेल्लिवि अंबरु झत्ति महामुणि हुवउ दियंबरु।
उत्तरसाढरिक्खि णवमिइ दिणि महुमासहं पक्खम्मि सियचंदिणि।
दुविहु वि मणि पडिवण्णउ संजमु गउ णियवासहु हरि हुयवहु जमु।
परियंचिवि सामिउ णियमत्थउ अवरु वि जणु णामियणियमत्थउ।
रायहं णेहालोइयवइयइं खणि चालीससयइं पावइयइं।
२० अजयमल्लु महुणयरु पराइउ णियपुरवरु बाहुबलि पराइउ।

३ MB पसूय°। ४ MB °पब्भरंत°। ५ P पसम्मिया°।

२६ १ MBP मुक्क। २. MB सिहरंगउ। ३ BP णिब्विडियइं। ४. MB मियंक। ५ BP विज्जुलदा। ६. MB अइविप्फुरियइ। ७. M सुद्ध। ८ MBP णवमइ। ९. MBP अचदिणि and gloss in P कृष्णे। १०. MBP पव्वइयइं।

महामुनियोंके योग्य था, जो पापभावका नाश करनेवाला था, जिसमें फलोंके ऊपर गिरते हुए बाल वानरोंकी आवाजें हो रही थीं, जो अपनी प्रियतमाओंसे रहित कामुकोंके लिए बाणभेदन करने-वाले थे, जिसमें लतागृहोंमें रहनेवाली किन्नरियोंसे मनुष्य अनुरक्त है, अशोक और चम्पा वृक्षोंकी अत्यन्त रमणीय शोभासे नया दिखाई देता था, जो उगे हुए बालकन्दोंके अंकुरोंसे कोमल है, जहाँ कुसुमोंके परागसे मिश्रित जल बह रहा है, जो दिशाओंमे उछलते हुए हाथियोंके मदजलोंसे सुवासित है। क्रीड़ा करते हुए नागराजों, दानवों और शत्रुओंका जिसमे निवास है, जो मधुओंसे लथपथ है, जिसमें धरतीकी धूल शान्त है, जिसमें इच्छुक प्रजाओको अपना धन दिया गया है, जो बहती हुई हवासे प्रकम्पमान है, जिसके जलाशयोंमे कमलिनियोंकी कोई सीमा नही है, जहाँ भ्रमरोंसे आच्छन्न तथा परागसे युक्त सरोवरोंमे कौन सुर और असुर नही तैरता, जो गंगाके तुषारकी तरह शीतल था, ऐसे उस वनको देखकर जितेन्द्रिय ऋषि ऋषभनाथ आकाशके आँगनसे उतरकर—

घत्ता—वहाँ शिलापर बैठे हुए हृदयमें प्रसन्न वह मनुष्य योनिसे उदासीन हो गये और सिद्धके समान शशिबिम्बके सदृश मलसे रहित शिवपदभूमिके लिए उत्सुक हो उठे ॥२५॥

२६

विविध पूजा विधियोंको करनेवाले और चमकते हुए वज्रके धारक ऐरावतगामी इन्द्रने फिर उनकी पूजा की। परमसिद्धोंको अपने मनमे धारण कर और शीघ्र ही पाँच मुट्ठियोंमे भरकर, जितने भी धूर्त विलासिनियोंके समान कुटिल बाल थे, उन्हे उन्होंने उखाड़ दिया। संसारमे इस प्रकार कौन लोग धर्मका स्वयं विचार करते है। जो केश उखाड़े गये थे, उन्हें तमसमूहको नष्ट करनेवाले मणिपटलमे रखकर जनपदोको मत्स्यमुद्रा नही दिखानेवाले क्षीरसमुद्रमे इन्द्रने फेक दिया। रतिसे क्रीड़ा करनेवाला मुकुट छोड़ दिया मानो कामदेवके शिखरका अग्रभाग फेक दिया गया हो। मणिजड़ित कुण्डल छोड़ दिये गये मानो रवि और शशिके बिम्ब गिर गये हो। मोतियोंके हारने कंकण छोड़ दिया जैसे नीहारके साथ चन्द्रमा जीत लिया गया हो। क्षुरिकाके साथ कटिसूत्र छोड़ दिया गया मानो आकाशमे चमकती बिजली हो। अमूल्य वस्त्र छोड़ दिये गये जो शरीरके लिए अत्यन्त सुहावने लगते थे। संसारकी असारताका विचारकर पांच महाव्रतोको चित्तमे धारण कर देहके भारस्वरूप अलंकारसे क्या ? व्रतके प्रभारसे उन्होने अपनेको विभूपित किया। मोहजालकी तरह वस्त्रोको छोड़कर वह शीघ्र ही दिगम्बर महामुनि हो गये। वसन्त माह-के कृष्णपक्षकी नौवीके दिन उत्तराषाढ़ नक्षत्रमे उन्होने दो प्रकारका संयम अपने मनमे स्वीकार कर लिया। इन्द्र, अग्नि और यम अपने घर चले गये। नियमोमे स्थित स्वामीकी प्रदक्षिणा कर और भी दूसरे लोग अपना माथा झुकाते हुए (चले गये)। पत्नियाँ जिनकी ओर स्नेहभावसे देख रही है ऐसे चालीस सौ राजा तत्काल दीक्षित हो गये। अजयमल्ल वह मधुपुर पहुँचे। बाहुबलि भी

गय णियगेहहु णयणाणंदण अवर वसहसेणाइय णंदण।
पियविरहाणलेण [11] अइतत्तउ णारीयणु असेसु परियत्तउ।
जो वण्णहुं सक्किउ णाहीसें समउं तेण ताएं णाहीसें।
घत्ता—रणवडहहु केरउ जगभयगारउ देंतु दिसहिं भरहेसरु ॥
२५ थिउ णंपि अउज्झहिं [12] वइरिदुसज्झहिं पुप्फयंतु भरहेसरु ॥२६॥

इय महापुराणे तिसट्ठिमहापुरिसगुणालंकारे महाकइपुप्फयंतविरइए महाभव्वभरहाणुमण्णिए महाकव्वे जिणणिक्खवणकल्लाणं णाम सत्तमो परिच्छेओ सम्मत्तो ॥ ७ ॥

॥ संधि ॥ ७ ॥

11 MBK अइमत्तउ। १२. M वइरिदुगेज्झहिं।

अपने नगरमें चला आया। नेत्रोंको आनन्द देनेवाले वृषभसेन आदि दूसरे पुत्र भी तथा प्रियकी विरहाग्निसे अत्यन्त सन्तप्त अशेष नारीजन भी लौट आया। यदि नागराज उसका वर्णन कर सका तो वह उन नाभिराजके साथ ही।

घत्ता—विश्वके लिए भयजनक युद्धके नगाड़ोंका स्वर भरत क्षेत्रकी दिशाओंमें गुँजाता हुआ पुष्पदन्त भरतेश्वर जाकर शत्रुओंके लिए अग्राह्य अयोध्या नगरीमें स्थित हो गया ॥२६॥

इस प्रकार त्रेसठ शलाकापुरुषोंके गुणों और अलंकारोंसे युक्त महापुराणके
महाकवि पुष्पदन्त द्वारा विरचित और महाभव्य भरत द्वारा अनुमत
महाकाव्यमें जिन दीक्षा ग्रहण कल्याण नामका सातवाँ
परिच्छेद समाप्त हुआ ॥७॥

संधि ८

सीहासणु[1] णरवइसासणु महियलु तणु[2] अवियप्पिवि ॥
गुणवंतहे[3] तवसिरिकंतहे[4] थिउ अप्पाणु समप्पिवि ॥१॥ ध्रुवकं ॥

१

आवली—धरिऊणं इसी णिग्गंथवेसयं
दूरविमुक्कसंगयं जणियतोसयं ।
५ तिस्सा[5] रइकएण परिसेसियंगओ
एयंत्तं[6] भरेण झाणालयं गओ ॥१॥

चिरु चरियइं चरियइं संभरेवि जगसामिणि गोमिणि परिहरेवि ।
मणसारहु मारहु करिवि छेउ अइसयहु तवहु मुणिवि भेउ ।
तणुभरणइं करणइं णिज्जिणेवि मयसिसिरइं तिमिरइं णिद्धुणेवि ।
१० घरवासहु पासहु णीसरेवि विहडंतउ जंतउ मणु धरेवि ।
सइं लोहें मोहें वहिवि खेरि णियजणणि व वहिणि व गणिवि णारि ।
संकुज्झिवि वुज्झिवि सइं जि सिक्ख सुइवइणी जइणी[7] लेवि दिक्ख ।
छम्मासमेरु मुणि मेरुधीरु अणसणु अवसणु गेण्हिवि गहीरु ।
कमजुयलि पविमलि विहत्थिमेत्तु णेरंतरु अंतरु करिवि जुत्तु ।

GK give, at the commencement of this Samdhi, the following stanza :—

एको दिव्यकथाविचारचतुरः श्रोता बुधोऽन्यः प्रियः
एकः काव्यपदार्थसंगतमतिश्चान्यः परार्थोद्यतः ।
एकः सत्कविरन्य एव महतामाधारभूतो विदां
द्वावेतौ सखि पुष्पदन्तभरतौ भद्रे भुवो भूषणम् ॥

MBP, however, give this stanza at the beginning of IX with variants जनाः for विदाम् and भूषणौ for भूषणम् । At the commencement of this Samdhi they read the following :—

मातर्वसुंधरि कुतूहलिनो मनैत-
दापृच्छतः कथय सत्यमपास्य साम्यम् (शाठ्यम् ?) ।
त्यागी गुणी प्रियतमः सुभगोऽभिमानी
किं वास्ति नास्ति सदृशो भरतार्यतुल्यः ॥

१. १. MBP सिंहासणु । २. MBP तणु व वियप्पिवि and gloss तृणमिव गणयित्वा । ३. P गुण-वंतहो । ४. P कंतहो । ५. M तस्सा । ६. MBP एयंतं and gloss in P एकान्तम् । ७. MB जयणी ।

सन्धि ८

१

सिंहासन, नरपतिशासन, महीतल और शरीरका विचार नहीं करते हुए, गुणवती तपो-लक्ष्मीरूपी कान्ताके लिए उन्होंने अपने आपको सौंप दिया। दूरसे छोड़ दिया गया है परिग्रह जिसमे, तथा जो सन्तोष देनेवाला है, ऐसे परम दिगम्बर स्वरूपको धारण कर, शरीरकी ममता छोड़नेवाले महामुनि ऋषभ, तपस्यारूपी कान्ताके लिए, एकनिष्ठ होकर ध्यानालयमें चले गये। पुराने आचरित चरितोंकी याद कर, लक्ष्मी तथा धरतीका परित्याग कर, मन मारनेवाले कामका अन्त कर, अत्यन्त सत्य तत्त्वका रहस्य समझकर, शरीरका पोषण करनेवाली इन्द्रियोंको जीतकर, मदकी सेना और अन्धकारको नष्ट कर, गृहवासके बन्धनसे निकलकर, विघटित होते हुए मनको धारण कर, लोभ और मोहके साथ वैरका अन्त कर, नारीको अपनी माँ और बहनके समान समझकर, शंका छोड़कर स्वयं शिक्षाओंको समझते हुए, श्रुत वचनोंवाली जैन दीक्षा लेकर, छह माहकी मर्यादावाला कठोर अनशन लेकर, मेरुके समान धीर और गम्भीर, पवित्र दोनों पैरोंके मध्य एक

१५ [८]ओट्ठउडणिव्वडसंपुं[९]डियवयणु आसासियणासियणिसियणयणु ।
भूभंगावंगपसंगरहिउ खयरिंदफणिंदणरिंदमहिउ ।
णिद्दंदु [१०]णियंदु विमुक्कतंदु लंबियभुउ सुरथुउ जिणवरिंदु ।
घत्ता—वरतणुसिरि णं कंचणगिरि जगगुरु दुक्कियमंथउ ॥
थिउ सग्गहु अवि यपवग्गहु णं आरोहणपंथउ ॥१॥

२

आवली—विसयवसा तिसाछुहातावसोसिया
भीसणवग्घसिंघसरहेहिं तासिया ।
जे समयं वयम्मि लग्गा महारहा
ते भग्गा दिणेहि[१]मसहियपरीसहा ॥१॥

५ [२]अणब्भत्थसत्था महामंदमेहा पयंपंति एवं स[३]मोरुद्धदेहा ।
ण ण्हाणं ण फुल्लं ण भूसा ण वासं पहू पाणियं लेइ णाहारगासं ।
ण सीउण्हवाएण जित्तो महंतो ण णिद्दाइ भुक्खाइ तण्हाइ संतो ।
ण जंपेइ णालोयए [४]कं पि भिच्चं णिउब्भो थिरं संठिओ एस णिच्चं ।
ण याणेमि किं चिंतए चित्तमज्झे मई कम्मि संजोयए [५]संदुसज्झे ।
१० ण दुक्खंति पाया फुडं वज्जकाओ ण ओमि[६]ज्जए केम रायाहिराओ ।
अहो हो किमेयस्स एएण होही वणंते कहं वा णिसाहाइं णेही[७] ।
पुणो पट्टणं किं व जाही ण जाही मणोहारि रज्जं पि काही ण काही ।
ण कंताकुडुंबेण मोहं विणीओ ण सद्दूलपंचाणणाणं पि भीओ ।
जडाजालधारी सपारोहसोहो घुलंतंगसप्पो वडो णं कुरोहो ।
१५ मणूसण्णणिजो णियारी णिसुंभो इमो देवदेवो परो आइबंभो ।
इमस्सेरिसो धीर[८]धीरावहारो परं दुव्वहो चारुचारित्तभारो ।
घत्ता—जं[९] धवलें अइअतुलवलें दुग्गु [१०]खुरेहिं णिभिण्णउं ॥
[११]तहिं कसरहिं विहुणियस[१२]सिरहिं एक्कु वि पउ [१३]णउ दिण्णउं ॥२॥

---

८. MBP ओट्ठउडणिविड° । ९ MB °संपुरिय° । १०. MBP णियद्दु ।

२ १ MBP दिणेहिं अगहिय° । २ GK have before this line भुजगप्पयावो णाम छंदो; MB have भुजंगप्पयावो णाम छंदो, P भुयंगप्पयाणाम छंदो । ३. MBPT समं रुद्धदेहा । ४. MBP कं [illegible] । ५ T संदुसंज्झे । ६. MB उब्भिज्जए, P उब्भिज्जई । ७ B णीही । ८ MBT धीर- [illegible], but gloss in T [illegible] धैर्यापहारा ; P वीरधीरावराहो, but gloss धीराणामपि [illegible] । ९ MB [illegible] । १०. MB [illegible] णिभिण्णउं । ११ P जक्कसरहिं । १२. M °मुणिरहिं । १३ MBP [illegible] ।

बीता अन्तर रखकर, छिद्र रहित ओठपुटसे मुखको बन्द कर, मुखपर आश्रित नाकपर नेत्रोको धारण कर, भ्रूभंग और कटाक्षोंके प्रसंगोंसे रहित, नागेन्द्रों, विद्याधरेन्द्रों और नरेन्द्रों द्वारा पूजित, निर्द्वन्द, आलस्यसे रहित लम्बे हाथ किये हुए मनुष्य-श्रेष्ठ वह जिनवरेन्द्र देवोके द्वारा संस्तुत थे।

घत्ता—श्रेष्ठ शरीरकी शोभामे जो मानो कंचन गिरिके समान थे पापोंका नाश करनेवाले वह जगद्गुरु इस प्रकार स्थित थे मानो वह स्वर्ग और मोक्षके लिए चढ़नेका मार्ग हो ॥१॥

२

जिन महारथियोंने उनके साथ व्रत ग्रहण किये थे, विषयोंके वशीभूत वे प्यास-भूखके सन्तापसे शोषित तथा भीषण बाघो, सिंहों और शरभोके द्वारा सन्त्रस्त होकर कुछ ही दिनोमे परीषह नही सहनेके कारण शीघ्र भ्रष्ट हो गये। शास्त्रोंका अभ्यास नही करनेवाले महामन्द बुद्धि तथा श्रमसे अवरुद्ध शरीरवाले वे इस प्रकार कहने लगे, "न स्नान, न फूल, न भूषा और न वास, प्रभु न पानी लेते है और न आहारका कौर। वह महान् शीत और उष्ण हवाके द्वारा भी नही जीते जाते और न नीद, भूख और प्याससे श्रान्त होते हैं। किसी अनुचरसे न बोलते हैं और न किसी भृत्यको देखते है, अपने हाथ ऊपर किये हुए वह इस प्रकार नित्य स्थित रहते हैं। मैं नही जानता कि वह अपने चित्तमे क्या सोचते हैं? मुझे अत्यन्त दुःसाध्य काममें लगा दिया है। स्पष्ट ही वह वज्र शरीर हैं, उनके पैर नही दुखते। राजाधिराज वह कुछ भी उन्मार्जन नही करते। अरे, इससे इसका क्या होगा? वनमे हम किस प्रकार दिन-रात वितायें? फिर ये नगर जायेंगे या नही जायेंगे? सुन्दर राज्य करेंगे या नही करेंगे? न तो कान्ता और कुटुम्बके द्वारा उनमे मोह उत्पन्न होता है, और न वह सिंह तथा पंचाननसे डरते हैं? वह ऐसे वटवृक्षकी तरह दिखाई देते हैं जो जटारूपी जाल धारण करता है, अपने प्रारोहोसे शोभित है, और जिसके शरीरपर मर्म व्याप्त है। मनुओके द्वारा पूज्य, मनुष्योके निर्माता मनुष्यश्रेष्ठ यह देवदेव आदि ब्रह्मा हैं। धीर-धीरोंके भी धैर्यका अपहरण करनेवाला इनका ऐसा अत्यन्त दुर्वह सुन्दर चारित्रभार है।

घत्ता—जहाँ अत्यन्त अतुल बलवाले धवल (बैल) ने अपने गुणोंसे दुर्गको गोद डाला, वहाँ गरियाल बैल एक भी पैर नही रख सके ॥२॥

३

आवली—उब्भियधवलचिंधमहिमावसारओ
करिवरजूहणाहपल्लाणभारओ ।
परजम्मंतरे वि परिरूढतेयओ
पियसहि रासहाण कहँ होइ णेयओ ॥१॥

५ गयगंडकंडुकंडुयणवाह को वि सहइ किडिदाढावलेह ।
को वि सहइ फणिमुहचुंबियाइं ताणं चिय कंठोलंबियाइं ।
को वि सहइ दूसह दंस मसय पोसियकसाय दुव्वार विसय ।
को वि सहइ णग्गत्तणु णिरासु णिच्चं णिरसणु गिरिदुग्गवासु ।
पाउसजलधाराविप्पियाइं को वि सहइ विज्जुझडप्पियाइं ।
१० को वि सहइ सिसिरि पडंतु सिसिरु उण्हालइ दिणयरकिरणपसरु ।
परलोयकहाणी केण दिट्ठ को वि सहइ एयहु तणिय णिट्ठ ।
अण्णेण उत्तु किं एत्थु मरमि घरु जाइवि तं णियरज्जु करमि ।
अण्णेण उत्तु संभरमि पुत्तु घरु जाइवि आलिंगमि कलत्तु ।
अण्णेण उत्तु अलिचुंबियाइं सलिलइं मयरंदकरंबियाइं ।
१५ सरवरि पइसेप्पिणु पियमि ताम तण्हाइ ण वंचइ जीउ जाम ।

घत्ता—अण्णेक्कें माणगुरुक्कें विहसिवि एहउ वुच्चइ ॥
परमेसरु ओलंबियकरु एक्कल्लउ वणि किह मुच्चइ ॥३॥

४

आवली—झिज्जंते ससिम्मि झिज्जइ ससो सयं
वड्ढंतम्मि जाइ वुड्ढीपयं पियं ।
अच्छामो वणम्मि सहिऊण दंडणं
णरवइचरियमेव भिच्चाण मंडणं ॥१॥

५ विसमे वियणे तरुगिरिगहणे ।
परलोयरइं मोत्तूण पइं ।
गंतूण पुरं तं विविहघरं ।
भरहस्स मुहं पेच्छामु कहं ।
सव्वेहि घणं पडिवण्णमिणं ।
१० सुरणवियपयं दहपंचमयं ।
उत्तुंगतणुं पणवंति मणुं ।

---

३. १. P विह । २. MBP °चंड° । ३. B कंठालंबियाइं । ४. MB ससिरि but gloss in M शीतपाले । ५. B वंचइ । ६. MB वियसिवि । ७ MBP एक्कु जि ।

४. १. MB झिज्जेंते, K झिज्जते, but corrects it to झिज्जंते । २. MBP have before this line [illegible] णाम छंदो, GK have लल्लिया णाम छंदो । ३. MBPT °गई । ४. MBP पेच्छामि । ५ MBP °णमिय° । ६ M adds this foot in the margin and MB read after it [illegible], after दहपंचमयं P reads परिगलियमयं पणुगयमयं ।

३

जिसने ऊँचे उठे हुए धवल ध्वजोंकी महिमाको हटा दिया है, दूसरे जन्ममे जिसका प्रभाव विख्यात है, ऐसा श्रेष्ठ हाथियोंके समूहके स्वामीका पर्याणभार, हे प्रियसखी क्या रासभोंके द्वारा ले जाया जा सकता है? कोई हाथियोके द्वारा कान और गण्डस्थल खुजाये जानेकी बाधा सहन करता है। कोई सूअरोंके दाढ़ोसे विदीर्ण होनेकी बाधा सहन करता है, कोई नागमुखोंसे चूमा जाने और उनके गलेमे लपटनेको सहन करता है, कोई असह्य डांस और मच्छरको सहन करता है, कोई कषायोंका पोषण करनेवाली दुर्वार विषयोंको सहन करता है। कोई विवश होकर नग्नत्वको सहन करता है, कोई नित्य निराहार रहना और गिरिदुर्गमे रहना सहन करता है। कोई पावस जलधाराओंकी अप्रिय बिजलियोंकी झपटोंको सहन करता है। कोई शीतलकालमे होनेवाली ठण्ड सहन करता है। उष्णकालमे सूर्यके किरण प्रसारको सहन करता है। परलोककी कहानी किसने देखी? कौन इनकी तपस्याको सहन कर सकता है। किसी एकने कहा—मै यहाँ क्यों मरूँ? घर जाकर अपना राज करूँ! किसी एकने कहा—मै अपने पुत्रको याद करता हूँ, घर जाकर अपनी स्त्रीका आलिंगन करता हूँ। किसी एकने कहा—भ्रमरोसे चुम्बित और मकरन्दसे प्रतिबिम्बित जलको सरोवरमे प्रवेश कर तबतक पीता हूँ कि जबतक प्यास नही जाती।

घत्ता—मानमें श्रेष्ठ एक व्यक्तिने कहा—अपने हाथ ऊपर किये हुए भगवान्‌को वनमे अकेला किस प्रकार छोड़ दिया जाये? ॥३॥

४

चन्द्रमाके क्षीण होनेपर उसका शश (चिह्न) भी क्षीण हो जाता है और चन्द्रमाके बढ़नेपर वह भी बढतोके अपने प्रिय पदपर पहुँच जाता है। हम दण्ड सहन करते हैं, वनमे ही रहे। राजाओंका चरित ही भृत्योंके लिए अलंकारस्वरूप है। तरुओंसे गहन विषम और विजनमें परलोकसे रति करनेवाले तुम्हें छोड़कर तथा विविध घरोंवाले अपने उस नगरमें जाकर, भरतका मुख हम किस प्रकार देखेंगे? सबने उसके इस कथनको पूरी तरह स्वीकार कर लिया। सुरोंने प्रणम्य है, चरण जिनके ऐसे तथा कामको जलानेवाले उत्तुंग शरीर मनु (आदिनाथ) को वे

रुजियअलिहिं	कुसुमंजलिहिं ।
गयजम्मरिणं	पुज्जंति जिणं ।
जंपंति इमं	धीरो सि तुमं ।
१५ ण मुएसि कमं	गहियं णियमं ।
अम्हे चवला	पविलीणवला ।
तुह मग्गचुया	हा किं ण मुया ।
मणँधरियगई	इय भणिवि जई ।
अज्झवसवणा	णिम्मियभवणा ।
२० थियईंरिणगणे	णिवसंति वणे ।
कंदं पवरं	मूलं महुरं ।
मालूरदलं	भक्खंति फलं ।
सीयं विमलं	पपियंति जलं ।
सिरघुलियजडा	वियरंति जडा ।
२५ किर ते वि मुणी	ता दिव्वझुणी ।
ससिरविसयणे	उग्गय गयणे ।
मा लुणह तरुं	मा धुणह मरुं ।
मा खणह महिं	मा कुणह सिहिं ।
मा विसह सरं	मा हणह परं ।
३० एसा ण विही	जइ णत्थि दिही ।
ता णिवसणयं	तणुभूसणयं ।
गेण्हह तुरियं	दुट्ठं दुरियं ।
असुविद्दवणे	भवसंकमणे ।
जं आसि कयं	तं जाइ खयं ।

३५ घत्ता—जिणलिंगें उज्झियसंगें जं किउ पाउ दुरासें ॥
तं तुट्टइ [10]कह वि ण फिट्टइ जीवहु जम्मसहासें ॥४॥

५

आवली—ता लग्गा णराहिवा भासियक्खरे
दुमदलमोरपिच्छ[1]वक्कलधरा परे ।
थियजिणवरणिरोहणिट्ठा[2]हयट्ठिया
णाणाविहवियारवेसेहिं संठिया ॥१॥

५ तो[3] कच्छमहाकच्छहं तणूय	पडिकूलपिसुणसिरसूलभूय ।
कामियकामिणियणकामकील	मयमत्तचंडसोंडालढील ।
परवलवल[4]गलहत्थणसमत्थ	दोण्णि वि भायर करवालहत्थ ।

७ P मणि । ८. MBP [०]हरिणयणे । ९. MP विरयंति । १०. MBP कह व ।
५ १. MBP [०]पिंछ[०] । २. M [०]णिट्ठपहट्ठिया; B णिट्ठाहपठिया । ३. MBP ता । ४. M [०]गलघल्लण, B [०]गलत्थण[०] ।

प्रणाम करते हैं और भ्रमरोंसे गूँजती हुई कुसुमांजलियोंके द्वारा जन्म-ऋणसे मुक्त जिनकी पूजा करते है। वे इस प्रकार कहते हैं, "तुम धीर हो, तुम क्रम और गृहीत नियमको नही छोड़ते। हम चपल और नष्ट बल हैं। तुम्हारे मार्गसे च्युत होकर हाय हम मर क्यों नही गये।" इस प्रकार मनमें गतिको धारण करनेवाले सरल श्रमण मकान बनाकर हरिणसमूहसे युक्त वनमें रहने लगे। वे प्रवर कन्द, मधुर जड़ें, बेलका गूदा और फल खाते हैं, शीतल मधुर जल पीते हैं, सिरमें व्याप्त जटाओंवाले वे मूर्ख विचरण करते है, जबतक वे मुनि बनते हैं, तब तक सूर्य और चन्द्रमाके शयन और उद्गमके स्थल आसमानमे दिव्यध्वनि होती है कि वृक्षोंको मत काटो, हवा-को मत चलाओ, धरती मत खोदो, आग मत जलाओ, सरोवरमे प्रवेश मत करो, दूसरोको मत मारो, यह विधि नही है। यदि धैर्य नही है, तो राजाके वसन और शरीरके आभूषण शीघ्र धारण कर लो। प्राणोंका दलन करनेवाले संसारके परिभ्रमणमें जो तुमने दुष्ट आचरण किया है, वह नष्ट हो जायेगा।

घत्ता—परिग्रहसे शून्य जिनका वेश धारण कर, खोटी आशावाले तुमने जो पाप किया है, जीवका वह पाप, हजारों वर्षों तक न छूटता है और न नष्ट होता है ॥४॥

५

इन अक्षरो (दिव्यध्वनि) के होनेपर बहुत-से राजा पेड़ोंके पत्ते और मयूरपिच्छ तथा वल्कल धारण कर दूसरे-दूसरे मुनि बन गये। जिनवरके विरुद्ध विरोधनिष्ठासे अधिष्ठित उन लोगोने अपने नाना विचार और वेष बना लिये। तब कच्छप और महाकच्छके दोनों पुत्र (नमि और विनमि), जो दुष्टोंके लिए प्रतिकूल और सिरदर्द थे, नागिनीजनके साथ कामक्रीड़ा चाहनेवाले और मदोन्मत्त प्रचण्ड हाथियोंकी लीलावाले थे, शत्रु सेनारूपी नलिनीको नष्ट करनेमें समर्थ

आया तहिं जहिं णिम्मुक्कडंभु थिउ पडिमाजोएं सइं सयंभु।
पासहिं परिभमिवि महारिजूर णं जंबूदीवहु चंदसूर।
१० णासें णमि विणमि णिबद्धणेह णं सिहरिहिं णियडणिसण्ण मेह।
जयकारिवि तेहिं पवुत्तु एव णियसुयहं विहंजिवि पुहइ देव।
दिण्णी अम्हहुं दिण्णउ ण किं वि महिमंडलु गोप्पयमेत्तु जं पि।
पइं पालियखत्तियसासणेण पेसणयरपेसियपेसणेण।
एवहिं पच्चुत्तरु किं ण देसि भणु कवणु दोसु गुणरयणरासि।
१५ परमेट्ठि पियामह तिजगताय अम्हारउ दुट्ठु ण होइ राय।
घत्ता—तुह चलणहं णं णवणलिणहं मणमहुयरु रुणुरुंटइ ॥
उम्मेल्लहि काइं ण बोल्लहि जाम ण हियवउ फुट्टइ ॥५॥

६

आवली—पुणु पुणु पहुपसायदाणुग्गमे रया
पाएसुं पडंति गाढं कुमारया।
सोहइ गुरुयणम्मि कयसाणवज्जणं
गिरिवरदारणम्मि करिदसणभंजणं ॥१॥
५ रयणमयमइंदासणसमेउ पोमावइपरमाणंदहेउ।
जिणपुण्णपवणपरिछित्तकाउ तहिं अवसरि कंपिउ णायराउ।
णियणाणु पउंजिवि तेण मुणिउं जं सालएहिं जिणु पुरउ भणिउं।
मग्गंति बाल किं भुअणभाणु जइ देइ देई ता तिजगदाणु।
पर तेण विमुक्कु घरत्थकम्मु पारद्धउ विमलु मुणिंदधम्मु।
१० सामंतमंतिसेविउ णरेसु महिवइ संतोसिउ देइ देसु।
देसवइ गामु गामवइ छेत्तु छेत्तवइ किं पि कुडएण भत्तु।
घरवइ पुणु ढोवइ कूरमुट्ठि तिहुयणवइ पाडइ पयहिं सिट्ठि।
जइ पत्थिज्जइ ता को वि गरुउ लहुपत्थणाइ पर होइ चरुउ।
लइ कयउ कुमारहिं जुत्तु साहु सो पत्थिउ जो तेलोक्कणाहु।
१५ सो पत्थिउ जसु जसु जगपयासु सो पत्थिउ जसु सुरवइ वि दासु।
घत्ता—णिच्चलमणु समतणकंचणु जेण वित्तु पडिवण्णउं ॥
मोक्खत्थिउ सो जं पत्थिउ तं हउं करमि असुण्णउं ॥६॥

७

आवली—णरलोयम्मि ते हमिह खोहकारणं
जायं किं भणामि सुकयावयारणं।
अचवंता वि देंति तरुणो महाहलं
सुपुरिसदंसणं पि ण हु होइ णिप्फलं ॥१॥

५ P °णिमुक्क°। ६ MBP णियडणिविट्ठ। ७. MBP पणवेप्पिणु। ८. M तिजगभाय।

६. १. MBP सुदरेहिं जिणपुरउ। २. MBP देउ। ३. P खेत्तु। ४. P खेत्तवइ। ५ MB कुलएण, P कुडएण in second hand। ६ MB तइलोक्क°। ७ MBP ण सुण्णउं।

७. १. MBP भणेमि।

थे, हाथमें तलवार लिये हुए उस स्थानपर आये, जहाँ दम्भसे रहित स्वयं आदिजिन प्रतिमायोगमें स्थित थे। महान् शत्रुओंको पीड़ित करनेवाले उन्होंने उनकी उसी प्रकार परिक्रमा दी, जिस प्रकार चन्द्र-सूर्य जम्बूद्वीपकी परिक्रमा देते हैं। आपसमे बद्ध स्नेह और नामसे नमि-विनमि वे उनके पास उसी प्रकार बैठ गये जिस प्रकार पर्वतके निकट मेघ स्थित होते है। जयकार करके उन्होंने इस प्रकार कहा, "हे देव, आपने अपने पुत्रोंको भूमि विभक्त करके दे दी, हम लोगोके लिए कुछ भी नही दिया। जिन्होंने छात्रधर्मका परिपालन किया है और जो अनुचरोंके लिए आज्ञाका प्रेषण करनेवाले है, ऐसे आपने गोपदके बराबर भी भूमि नही दी। इस समय आप उत्तर तक नही देते। हे गुणरत्नराशि, बताइए इसमें हमारा क्या दोष है ? हे परमेष्ठी पितामह त्रिजग पिता, हमारा राजा दुष्ट नही हो सकता।

घत्ता—नव कमलोंके समान आपके चरणोंमे हमारा मनरूपी मधुकर गुनगुना रहा है जबतक हमारा हृदय नहीं फटता तबतक आप क्यों नही देखते और बोलते ?" ॥५॥

६

प्रभुमें प्रसाद और दान उत्पन्न करनेमें लीन वे कुमार बार-बार उनके पैरोंपर पड़ रहे थे। गुरुजनके प्रति किया गया उनका मानका परित्याग वैसा ही शोभित हुआ है जैसे गिरिवरके विदारणमें हाथीके दाँतोंका भंजन सोहता है। उस अवसरपर जिसका शरीर जिनवरके पुण्यरूपी पवनसे स्पृष्ट है, और जो पद्मावतीके आनन्दका कारण है ऐसा नागराज धरणेन्द्र अपने रत्नमय सिंहासनके साथ काँप उठा। अपने अवधिज्ञानका प्रयोग कर उसने जान लिया कि जो कुछ सालों (नमि और विनमि) ने जिनवरके सामने कहा था। भुवनसूर्य (ऋषभ जिन) से ये मूर्ख क्या माँगते है, वे जब देते है तो त्रिभुवनका दान कर देते हैं। परन्तु उन्होने तो गृहस्थधर्मका त्याग कर दिया है और पवित्र मुनिधर्म प्रारम्भ कर दिया है। सामन्त और मन्त्रियोसे सेवित नरेश अथवा राजा सन्तुष्ट होनेपर देश देता है। देशपति ग्राम देता है, ग्रामपति क्षेत्र देता है, और क्षेत्रपति (खेतका मालिक) कुछ तो भी प्रस्थभर (एक माप) चावल देता है, और गृहपति (गृहस्थ) एक मुट्ठी चावल देता है। त्रिभुवनपति तो प्रजाओंके लिए सृष्टि प्रकट करता है। यदि प्रार्थना ही करनी हो तो किसी बड़ेसे की जाये, क्योंकि किसी छोटेसे की गयी प्रार्थनासे वह सुन्दर होती है। लो, इन कुमारोंने अच्छा किया कि उन्होने उनसे प्रार्थना की कि जो त्रिलोकनाथ हैं। उनसे प्रार्थना की जिनका यश विश्वप्रसिद्ध है। उनसे प्रार्थना की जिनका दास इन्द्र है।

घत्ता—जो निश्चलमन हैं, तृण और कंचनमे समभाव धारण करते है, जिन्होंने धनका परित्याग कर दिया है। चूँकि उन्होने उन मोक्षार्थीसे अभ्यर्थना की है, इसलिए मै उन्हे अशून्य करता हूँ ॥६॥

७

वे (नमि-विनमि) मनुष्यलोकमे है। मै यहाँ हूँ। फिर भी वे क्षोभके कारण हुए। इनसे पुण्यकी क्या अवतारणा कहूँ ? बिना कहे हुए ही वृक्ष महाफल देते हैं, सुपुरुषका दर्शन भी निष्फल

५ दुवई—ता[2] णिग्गमणमेव धरणेण कयं संभरियजिणवरं।
फारफणा[3]कडप्पफुक्कारु[4]ल्लालियसमहिमहिहरं ॥१॥
महिहररुंदकंदरायंपणणिग्गयकूरहरिवरं।
हरिओरालिरोलवित्तासियणासियमत्तकुंजरं ॥२॥
कुंजरचडुलचरणप[5]डिपेल्लणपाडियपयडभूरुहं।
१० भूरुहखंधबंधखरणिहसणरुहपज्जलियहुयवहं ॥३॥
हुयवहविप्फुलिंगजालावलिजलियस[6]मत्तकाणणं।
काणणसंणिसण्णमुणित[7]ावासंकियसयलसुरयणं ॥४॥
सुरयणभरियजलयजलधाराऊरियसु[8]विउलंबरं।
अंबरयलफुरंततडिदंडाइंडलचावकब्बुरं ॥५॥
१५ कब्बुरदिव्ववत्थवित्थिण्णुल्लोवयछइयसंदणं।
संदणयलविलं[9]गविसहरमुहलालियविंझचंदणं ॥६॥
चंदणकुसुमघुसिणफलदलजलतंदुलउवणियच्चणं।
[10]अच्चणकामसामफणिरामारंभियसरसणच्चणं ॥७॥
णच्चणमिलियललियलीलामरललणालुलियमेहलं।
२० मेहलियाविलंबिचलकिंकिणिकलकलयलसुपेसलं ॥८॥
इय वरविवरकुहरतरुणहयलजलथलकंपकारिणा।
वियडफणाहिरूढचूडामणिकुवलयभारधारिणा ॥९॥
एहुकमकमलणमियणमिविणमिणराहिवचोज्जदाइणा।
झत्ति समागएण दिट्ठो रिसहो गरलहरराइणा ॥१०॥
२५ घत्ता—आवेप्पिणु कर मउलेप्पिणु थुउ मुणिंदु थुइलक्खहिं॥
[11]मुहघुलियहिं अक्खरललियहिं[12] जीहहिं [13]दससयसंखहिं ॥७॥

८

आवली—कंतामुहपलोइरं भोयलालसं
भुवणवणं डहेइ मोहो मलीमसं।
जइ तुह वयणवारिणा णेय सित्तयं
ता कह जियइ मयणसिहिणा पलित्तयं ॥१॥

५ दूसियघरासमो भूसियणियागमो।
सोसियमईमलो पोसियमहीयलो।
मयगयणियत्तओ कयवयपयत्तओ।

२. P तो। ३. MBP °फडा°। ४. P °उल्लासिय°। ५. MBP °परिपेल्लण°। ६. MBP °समंत°। ७. M °तावससंकिय°; B °तावसरसंकिय°; P °तावसंकिय° and gloss तापशङ्कित, K °तावासंकिय°, but in second hand °तावसंसंकिय°। ८. MBP °सविउल°। ९ MBP °वलग्ग°। १० MBP अच्चण°। ११. P मुहि। १२. MBP °वलियहिं। १३. P दुसहससंखहिं।

८ १ GK have before this line:—अमरपुरी छंदो; MBP have अमरपुरी नाम छंदो।

भावियजयत्तओ तावियसंयत्तओ[2] ।
खंचियविसायओ संचियविरायओ ।
१० लुंचियसिरोरुहो वंचियदुरग्गहो ।
कुंचियगईवहो अंचियजसावहो ।
मावईखोहओ आवईरोहओ ।
छंडियकुसंगओ खंडियअणंगओ ।
दंडियसइंदिओ पंडियपवंदिओ ।
१५ तवयरणपरियरो जसकरणभयहरो ।
समसरणजोयओ भवतरणपोयओ ।
सज्जणाणग्गणी सिद्धचिंतामणी ।
संपयासंगमो धम्मकप्पद्दुमो[3] ।
भवविणासी भवो सिवपयासी सिवो ।
२० चित्ततमहो इणो दोसविजई जिणो ।
पावहारी हरो तं पराणं परो ।
देवदेवो तुमं ताहि दीणं ममं ।
णिग्गुणो णिद्धणो[4] दुम्मई णिग्घिणो ।
परहरावासओ गहियपरगासओ[5] ।
२५ माणओ मेच्छओ रोहिओ रिंछओ ।
जायओ हं भवे णारओ रउरवे ।
तुम्ह पडिकूलिमा जा कया सा कमा ।
एम मुत्ता मए आसि काले गए ।

घत्ता—जिणु वंदिवि अप्पउ णिंदिवि णाएं तसु पक्खालिउ ॥
३० णमिरायहु विणमिसहायहु मुहससिबिंबु णिहालिउ ॥८॥

९

आवली—तेहिं पयंपियं सया सुहावणं
महिमहि दारिऊण पत्तो सि किं वणं ।
कस्स तुमं सुसील अम्हाण संमुहं
अणिमिसलोयणेहिं किं पेच्छसे मुहं ॥१॥

५ णीसेसंतासियामियणरिंदु[1] तं णिसुणिवि[2] पडिजंपइ फणिंदु ।
हउं सुवणि पसिद्धउ णायराउ जंभारिणमंसिउ तिजगताउ ।
लोयत्तसु कुसुमसरंतयालु इहु देउ महारउ सामिसालु ।
जइयहुं णिव्वेइउ मुक्करज्जु[3] तइयहुं जि एण महु कहिउ कज्जु ।
तं पेसिंय[4] केण वि कारणेण विहलियजडजीवउद्धारणेण ।

---

२ M °सगत्तओ । ३ B omits this foot. ४ MB णिद्दुणो । ५ MP add after this जीवआसासओ करणवलपोसओ, B adds only जीवआसासओ ।

९. १ MBP णीसास° । २ B णिमुणवि । ३. MB मुक्कु रज्जु । ४ MBP संपेसिय ।

१० एहिति वे वि मणिविणमिणाम मइं मग्गिहिंति सिरिसोक्खकाम।
तुहुं देज्जसु ताहं णयासणाउ खगसेढिउ उत्तरदाहिणाउ।
आसणथरहरणें ढलिउ संचु मइं जाणिउ तुम्हारउ पवंचु।
पायालु मुइवि अवयरिउ एत्थु हउं अरुहदेवपेसणसमत्थु।
जो खंडइ लिंपइ सुरहिएण देवें णिज्झाइयणियहिएण।
१५ एवहिं सो दीसइ ध्रुवु समाणु परिचत्तउ पुव्विल्लउ विहाणु।

घत्ता—लहु आवहं काइं चिरावहं जोइ मुएवि सखयरइं।
मइं सिट्ठइं पहुववइट्ठइं भुंजह णाणाणयरइं ॥९॥

१०

आवली—इय वयणं कुमारवीरेहिं इच्छियं
णवर णहयले विमाणं णियच्छियं।
मारुयधावमाणधुयधयवडंचियं
गुणिणा झत्ति णायणाहेण णिम्मियं ॥१॥

५ णविऊण सदोसारंभहरं सुरवरभवणेण सरंभहरं।
जुंज्झियहिंडियविसहरिणउलं दूवंकुरपीणियहरिणउलं।
गयणंगणलग्गसिरं गरुयं ओसहिहयसत्तसिरंगरुयं।
उक्खयपुलिंदकंदारुणयं हरिणहयकरिकंदारुणयं।
सीहाणुलग्गभीयरसरहं सुररमणीवाहियहंसरहं।
१० तीरासियखयरीवाहणयं दुमघट्टणहुयहुयवाहणयं।
णेउररवभरियलयाहरयं वरखेयरपीयपियाहरयं।
संदरिसियवहुरत्तामरसं रवियरवियसावियतामरसं।
वीसरियहारसारियमहियं जिणपडिमाकयसहिमामहियं।
चारणमुणिदेसियधम्मसुइं झरझरियणिज्झरावाहसुइं।
१५ फणिवयणविमुक्कविसग्गिवहं दरिदावियविविहविसग्गिवहं।
णरजुयलमलद्धपियालवणं णीयं सेलं सपियालवणं।
पुव्वावरजलहिविलग्गसिरो कंदरमुहेहिं वणयरगसिरो।

घत्ता—भडभीसहिं णमिविणमीसहिं गिरि वेयड्ढु पलोइउ॥
रयणालए सायरवेलए तुलदंडु व संजोइउ ॥१०॥

---

५. MBP अरुहदासपेसण° । ६. MBP धुउ ।

१०. १. All Mss. have before this line : मात्रासमकं । २. MBP जुज्झिरहिंडिर । ३. MBP दुव्वंकुर° । ४. M °ल्याहरहं । ५ M °पियाहरयं । ६. P संदरसिय° । ७. MBP दरिसाविय° ।

जीवका उद्धार करनेके किसी कामसे भेजे गये कोई नमि-विनमि नामके दो जन आयेंगे, श्री और सुखकी कामना रखनेवाले जो मुझसे कुछ माँगेगे। तुम उन लोगोके लिए विजयार्ध पर्वतपर आश्रित उत्तर-दक्षिण विद्याधर श्रेणियाँ प्रदान कर देना। आसनके काँपनेसे मेरा शरीरबन्ध हिल गया, (उससे) मैने तुम्हारा प्रपंच जान लिया। पाताल छोड़कर मै यहाँ अवतरित हुआ हूँ, मै अरहन्त देवकी आज्ञा पूरी करनेमे समर्थ हूँ। अपने हृदयसे ध्यान किया है जिन्होंने, ऐसे देवके द्वारा (ऋषभ) जो उन्हें खण्डित करता है या सुरभिसे लेप करता है, वह इस समय निश्चित रूपसे समान भावसे देखा जाता है, उन्होने पहलेका विधान (प्रशासन) छोड़ दिया है।

घत्ता—जल्दी आओ, देर क्यो करते हो, योगीको छोड़कर, प्रभुके द्वारा आदिष्ट और मेरे द्वारा निर्मित विद्याधरो सहित नगरियाँ हैं, इनका भोग करो" ॥९॥

१०

इन वचनोको कुमार वीरोंने चाहा। केवल उन्होंने आकाशमे विमान देखा। हवासे दौड़ते हुए और प्रकम्पित ध्वजपटोसे अंचित जिसे, गुणी नागराजने शीघ्र निर्मित किया था। अपने दोषोके प्रारम्भका नाश करनेवाले (ऋषभ जिन) को नमन कर ऋषभनाथका प्रिय आलपन न पानेवाले वे दोनो देव विमानके द्वारा विजयार्ध शैलपर ले जाये गये, जो सरोवरका जल धारण करनेवाला था, जिसमें युद्ध करते हुए वृषभ, सिंह और नकुल घूम रहे थे। हरिणोका समूह दूर्वांकुरोंसे प्रसन्न था, जिसके शिखर आकाशको छूते थे, महान्, जिसने अपनी औषधियोंसे प्राणियोके शिर और शरीरसे रोग दूर कर दिया था, जो शबरों द्वारा उखाड़े गये मूलोंसे अरुण थे, जो सिंहोके नखोसे आहत हाथियोके मस्तकसे भयंकर थे, जहाँ भयंकर अष्टापद सिंहोका पीछा कर रहे थे, जिसमें सुररमणियाँ हंसरथोको हाँक रही थी, जिसके तीरपर विद्याधरियोंके वाहन स्थित थे। जिसमे वृक्षोके संघर्षसे उत्पन्न आग प्रज्वलित थी। जिसके लताघर नूपुरोंकी झंकारसे झंकृत थे, और श्रेष्ठ विद्याधर अपनी प्रियाओंके अधरोंका पान कर रहे थे, जो अपनी वधुओंमे अनुरक्त देवोके सुखका प्रदर्शन कर रहा था, जिसमे रविकिरणोसे कमल खिल रहे थे, जिसमे खोये हुए हारोसे धरती पटी पड़ी थी, जो जिन भगवान्‌की प्रतिमाओकी महिमासे पूज्य था, जो चारण-मुनियोके द्वारा उपदिष्ट धर्मसे पवित्र था जिसमे झरझर निर्झरोंका अबाध प्रवाह था, जिसमे नागोके मुखोसे निकली हुई विषाग्नि शान्त थी, जिसकी घाटियोंकी पक्षियों द्वारा स्वर्गपथ दिखाया जा रहा था, जो प्रियाल वृक्षोके वनोसे युक्त था। पूर्वी और पश्चिमी समुद्रो, डूबे हुए छोरोंवाला और गुफाओके मुखोसे वनचरोंकी लीलता हुआ—

घत्ता—भटोंसे भयंकर विजयार्द्ध पर्वतको नमि और विनमिने इस प्रकार देखा, जैसे रत्नोके घर सागर-तटपर तुलादण्ड रख दिया गया हो ॥१०॥

११

आवली—वियसियविडविकुसुमकिंजक्कपिंजरो
मणिमयकडयमंडिओ णं महीकरो।
रयणायरपसारिओ सहइ सोहणो
रयणायरवि लुद्धओ हवइ थीयणो ॥१॥

५ णं जगसिरिणट्टाधारवंसु अहवा गोणाइसरीरवंसु।
गंगासिंधूहिं विहिण्णदेहु पडिगयसंकिरगयणिहयमेहु।
रुक्खहुं णावइ रुक्खाउवेउ देवहुं वल्लहु णं सग्गलोउ।
उवलोसहिरससिहिजोयवण्णु रसवाइ व सइं णिवडियसुवण्णु।
णिसि चंदयंतसलिलेहिं गलइ वासरि रविमणिजलणेण जलइ।
१० माणिक्कपहादिण्णावलोउ जहिं चक्कवाय ण मुणंति सोउ।
रययमउ सव्वु रयणियरभासु पण्णास मूलि वित्थारु जासु।
गयणंगणलग्गविचित्तसिंगु[1][2] जो पंचवीसजोयणइं तुंगु।
दोवासहिं तासु थियाउ ताम दीहत्ते लवणसमुद्दु जाम।
उत्तरदाहिणियउ मणहराहं सेढीउ[3] दोण्णि विज्जाहराहं

१५ घत्ता—महि मोइवि दह वरि जाइवि दहजोयणवित्थिण्णी॥
एक्केक्की विहवगुरुक्की णाणा[4]रयणरवण्णी ॥११॥

१२

आवली—तत्थ चउत्थकालठिदि[1]संविहाणयं
पंचधणूसयाइं मुणिरयणि[2]माणयं।
णीणं कम्म[3]भूमिपरिणामजोयओ
परविज्जाहलेण अहिओ विहोयओ ॥१॥

५ कुलजाइकमेण समागयाउ दूसहतवतावववसंगयाउ।
पुव्वाउ ताउ णिच्चं हियाउ अवराउ पयत्ते साहियाउ।
सहिउवसग्गें धीरें[4] समेण सुइदेहें होमें संजमेण।
पारंभियसुद्दामंडलेण चरुगंधधूवफुल्लच्चणेण[5]।
विज्जाहराहं णियमें वएण[6] विज्जाउ होंति ससहावएण।
१० सिद्धउ पण्णत्तिपहूइयाउ आणत्तु[7] करिंति पराइयाउ।
जहिं धम्मा इव संदिण्णकाम णीरंतर[8]सीमाराम गाम।
जहिं[9] दक्खामंडवयलि सुयंति पेहि पंथिय दक्खारसु पियंति।

---

११. १. MBP गयणग्गलग्गसुविचित्त°। २. B °संगु। ३. MB सेढिउ दोण्णि वि, P सेढिउ वेण्णि वि।
४. MBP णाणाणयर°।

१२. १. P °कालट्टिदिं°। २. T मयराणिमाणयं, but notes a p. मुणिरयणीति पाठोऽप्ययमेवार्थः।
३ MBP कम्मभूमिणाम°। ४. MBP सहिओवसग्गवीरें। ५. MB °पुप्फच्चणेण; B पुप्फंचणेण।
६ MBP कमेण। ७. MBP सुदूइयाउ। ८. MBP णेरंतर°। ९ M जहि।

११

विकसित वृक्षोंके पुष्पपरागसे पीला और मणिमय कटकसे शोभित वह विजयार्ध पर्वत मानो जैसे धरतीका हाथ हो। रत्नाकर तक फैला हुआ शोभन जो ऐसा लगता है मानो (रत-नागर) विदग्ध पुरुषमे स्त्रीजन हो। जो मानो विश्वश्रीके नाट्यका आधारभूत बाँस हो, अथवा पृथ्वीरूपी गायके शरीरका आधार हो; गंगा और सिन्धु नदियोंके द्वारा जो खण्डित शरीर है, जिसमें प्रतिगजोंकी आशंकामें गज मेघोंको आहत करते हैं, वृक्षोंके लिए जो पर्वत वृक्षायुर्वेद शास्त्र हो, देवोंके लिए प्रिय जो मानो स्वर्गलोक हो। धातु पाषाणोंके औषधि रसकी आगसे चमकते हुए रंगवाला जो, रसवादीकी तरह स्वयं स्वर्णमय हो गया है। जो चन्द्रकान्त मणियोंके जलसे रात्रिमें गल जाता है, और दिनमे सूर्यमणियोंकी ज्वालामे जल उठता है। माणिक्योंकी प्रभासे प्रकाश (अवलोकन) मिल जानेके कारण जहाँ चकवे शोकको नहीं जानते। जो समस्त रजतमय है, और चन्द्रमाकी आभाके समान है, जिसका विस्तार पचास योजन है, जिसके विचित्र शिखर आकाशको छूते है, जो पचीस योजन ऊँचा है। लम्बाईमें वह अपने दोनों किनारोसे वहाँ तक स्थित है कि जहाँ तक लवण समुद्र है। जिसकी उत्तर-दक्षिण श्रेणियाँ सुन्दर विद्याधरोकी है।

घत्ता—जो धरतीको छोड़कर, दस योजन ऊपर जाकर दस योजन विस्तृत है, और नाना रत्नोसे सुन्दर एक-एक वैभवमे महान् है ॥११॥

१२

वहाँ हमेशा चतुर्थकालकी स्थितिका संविधान है। मनुष्योंकी ऊँचाई पाँच सौ धनुष प्रमाण है। जहाँ कर्मभूमिके समान कृषि आदि कर्मसे उत्पन्न तथा श्रेष्ठ विद्याओंके फलसे अधिक भोग है। कुलजातिके क्रमसे आयी हुई, असह्य तपस्याके तापसे वशमे आयी हुई पूर्वकी विद्याएँ उन्हे नित्य रूपसे प्राप्त हो गयी और भी विद्याएँ उन्होंने (नमि-विनमिने) प्रयत्नसे सिद्ध कर ली। उपसर्गोको सहन करनेका धैर्य शम, पवित्र देह, होम, संयम, मुद्रामण्डलके प्रारम्भ करनेसे नैवेद्य, गन्ध, धूप और फूलो द्वारा अर्चा करनेसे नियम और व्रत करनेसे विद्याधरोंको स्वभावसे विद्याएँ सिद्ध होती है। प्रज्ञप्ति आदि विद्याएँ उन्हे सिद्ध हो गयी, और आकर उनकी आज्ञाओंका पालन करने लगी। जहाँ सीमा उद्यानोसे निरन्तर बसे हुए ग्राम धर्मोकी तरह कामनाओको पूरा करनेवाले हैं।

धवलूढजंतपीलिज्जमाणु पुंडुच्छुखंडरसु[10] पवहमाणु ।
कइकव्वरसु व जणु पियइ ताम तित्तीइ होइ सिरकंपु जाम ।
१५ जहिं पिक्ककलमकणिसइं[11] चरंति सुय दूयत्तणु हलिणिहि करंति ।
घत्ता—सिरिसयणहिं णं वहुवयणहिं[12] विलसंती दिणि रायइ ॥
जहिं पोमिणि कलमहुयरझुणि णं भाणुहि गुण गायइ ॥१२॥

१३

आवली—कंकणहारदोरकडिसुत्तभूसिया
णिच्चं गंधधूवमल्लोह[1]वासिया ।
लच्छि भुंजिउं णरा देवयाणियं
सोक्खं जं लहंति तं केण भाणियं ॥१॥
५ कुसुमियणंदणवणसंकडाइं कीलागिरिंदसिहरुब्भडाइं ।
परिहातिएहिं परियंचियाइं पवणुद्धुयधयमालंचियाइं ।
वहुदारगोउरट्टालयाइं[2] सोवण्णरयणरइयालयाइं ।
मुहसालातोरणसोहियाइं दाहिणसेढिहि जसाहियाइं ।
सोहासमूहमोहियसुराइं एयइं पण्णास जि पुरवराइं ।
१० पहिलउ किंणर णरगीउ वीउ बहुकेउ पुणु वि पुरु पुंडरीउ ।
हरिकेउ सेयकेउ[3] वि रवण्णु सप्पारिकेउ गीहारवण्णु ।
सिरिवहु सिरिहरु लोहग्गलोलु[4] अण्णेक्कु अरिंजउ सग्गलीलु ।
वज्जग्गलु वज्जविमोउ अवरु महिसारु पुरं जयपुरु[5] वि पवरु ।
सोलहमी पुरि सयडमुहि[6] होइ चउमुहि वहुमुहि जाणंति जोइ ।
१५ रयविरयपउरखगजम्मखोणि आहंडलणयरि विलासजोणि ।
अपरजिउ कंचीदामु दोण्णि सविणय णहु खेमंयरीउ[7] तिण्णि ।
झसइंध कुसुमपुरि संजयंति सुक्कंतरु[8] जयंती वइजयंति ।
विजया खेमंकरु चंदभासु रविभासु सत्तभूयलणिवासु ।
सुविचित्त महाघण चित्तकूडु अण्णु वि तिकूडु वइसवणकूडु[9] ।
२० ससिरविपुरि विमुही वाहिणी वि सुमुहीपुरि णिच्चुज्जोइणी वि ।
मज्झइ रहणेउर[10] चक्कवालु तहिं सयलखयरकुलसामिसालु ।
जायउ[11] जयमंगलजयरवेण णमि फणिणा णिहिउ कउच्छवेण ।
घत्ता—एक्केक्की[12] पुरहिं विरिक्की गामकोडिपडिवद्धी ॥
णमिरायहु थुयणाहेयहु धम्में संपय सिद्धी ॥१३॥

---

१०. MBP रसपवहमाणु । ११. M कलमकणसइं, BP कलवकणिसइं । १२ MBPK विसयती ।

१३. १. MBP °मल्लेहिं वासिया; T °मल्लोह° and gloss पुष्पसमूहः । २. P °गोउरट्टालयाइं । ३. MBP सेयकेउ । ४. MB लोयग्गलीलु, P लोहग्गलालु and gloss लोहार्गलापुरवम् । ५. B जउरु । ६. B सयडंमुहि । ७. M खेमपुरीउ; BP खेमपुरीउ । ८ MBP सुयक्कवरि । ९ P °कूडम्मि । १०. P रहेउर णयरवालु । ११. MBP जायउ । १२ M विरइयगुणक्की, BP पुरहिं गुणक्की ।

जहाँ पथिक राखोके मण्डपोंके नीचे सोते हैं और द्राक्षारस पीते हैं। जहाँ बैलोंके द्वारा संवाहित यन्त्रोंके द्वारा पेरा गया पौंड़ों और ईखोंका रस बह रहा है। जिसे कविके काव्य रसकी तरह जन तबतक पीते हैं कि जबतक तृप्तिसे उनका सिर नही हिल जाता। जहाँ तोते पके हुए धान्यों-के कणोंको चुगते है और कृषक-स्त्रियोंका दौत्य कार्य करते है।

घत्ता—जहाँ कमलिनी बहुत-से कमलोंसे दिनमें इस प्रकार शोभित है मानो सुन्दर मधुर ध्वनिमें सूर्यका गुणगान कर रही हो ॥१२॥

१३

कंगन-हार-दोर और कटिसूत्रसे भूषित, नित्य गन्ध-धूप और पुष्पसमूहसे सुवासित वहाँके लोग जो विद्याओंसे सम्पादित लक्ष्मीका उपभोग करते हैं और जो सुख प्राप्त करते हैं वह किसे मिला ? उसकी दक्षिण श्रेणीमे कुसुमित नन्दन वनोसे व्याप्त, क्रीड़ा-गिरीन्द्रोंके शिखरोंसे उन्नत तीन-तीन खाइयोंसे घिरे हुए, हवासे उड़ती हुई ध्वजमालाओंसे शोभित बहुद्वार और गोपुरवाली अट्टालिकाओंसे युक्त, स्वर्ण और रत्नोसे निर्मित प्रासादोंवाले, मुख्य शालाओं और तोरणोसे अंचित और यशमे प्रसिद्ध, अपने सौन्दर्य-समूहसे सुरवरोंको मोहित करनेवाले ये पचास पुरवर हैं। पहला किन्नर, दूसरा नरग्रीव, फिर बहुकेतु, फिर पुण्डरीक नगर, फिर सुन्दर हरिकेतु, श्वेत-केतु, फिर सर्परिकेतु और नीहारवर्ण। श्रीबहु, श्रीधर, लोहाग्रलोल तथा एक और स्वर्गकी तरह आचरण करनेवाला अरिंजय। वज्रार्गल, वज्रविमोद और धरतीमे श्रेष्ठ विशाल जयपुर। सोलहवी भूमि शकटमुखी है, और भी चतुर्मुखी बहुमुखी नगरियाँ हैं, जिन्हे योगी जानते हैं। समविरागसे प्रचुर विद्याधरोंकी जन्मभूमि और विलासयोनि आखण्डल नगरी है, दो और है अपराजित और कांचीदाम; संविनय, नभ और क्षेमंकरी ये तीन नगरियाँ और हैं; झसइंध, कुसुम-पुरी, संजयन्त, शुक्रपुर, जयन्ती, वैजयन्ती, विजया, क्षेमंकर, चन्द्रभारा (सप्ततल भूमिनिवास), रविभास, सुविचित्र महाघन, चित्रकूट, और भी त्रिकूट, वैश्रवणकूट, शशिरविपुरी, विमुखी, वाहिनी, सुमुखीपुरी और नित्योद्योतिनी भी। और उसके बीचमें रथनूपुर चक्रवालपुर है। उसमें समस्त विद्याधरोंके स्वामीश्रेष्ठ नमिको नागराजने उत्सव कर जय-जय मंगलके साथ प्रतिष्ठित कर दिया।

घत्ता—नगरोंसे विभक्त एक-एक नगरी करोड़ों ग्रामोंसे प्रतिबद्ध थी। इस प्रकार नाभेय ऋषभनाथकी स्तुति करनेवाले नमि राजाको धर्मसे सम्पत्ति फिर हुई ॥१३॥

१४

आवली—पुरिसा भूयलम्मि विरला सुधीरया
परउवयारवावडा होंति धीरया।
एक्को अहव दोण्णि पायालराइणा
सरिसा णत्थि भद्द धरणिंदभोइणा ॥१॥

५ वारुणासामुहाओ फुडं जाणिमो वामसेढीपुराणावलिं भाणिमो।
अज्जुणी वारुणी वइरिसंघारिणी अवि य केलासपुव्विल्लया वारुणी।
विज्जुदित्तं पुरं गिलिगिलं पट्टणं चारुचूडामणी चंदभाभूसणं।
वंसवत्तं पुरं कुसुमचूलं पुरं हंसगब्भं पुरं मेहणासं पुरं।
संकरं लच्छिहम्मं पुरं चामरं विमलमसुक्कयं सिवसमं मंदिरं।
१० वसुमईणासयं सव्वसिद्धत्थयं सूरसत्तुंजयं केउमालं कयं।
इंदकंतं णहाणंदणासोयं वीयसोयं विसोयं सुहालोययं।
अलयतिलयं च णहतिलययं मंदिरं कुमुदकुंदं च णहवल्लहं सुंदरं।
जुइतिलयमवणितिलयं सगंधव्वयं मुक्कहारं पुरं अणिमिसं दिव्वयं।
अग्गिजालापुरं गरुयजालापुरं सिरिणिकेयं च जयसिरिणिवासं पुरं।
१५ रयणकुलिसं वरिट्ठं विसिट्ठासयं दविणजयमवि सभद्दं च भद्दासयं।
फेणसिहरं पि गोखीरवरसिहरयं वेरिअक्खोहसिहरं च गिरिसिहरयं।
धरणि धारणि सुदंसणपुरं रुंदयं दुग्गयं दुद्धरं हारिमाहिंदयं।
विजयणामं पुरं पुणु सुगंधिणिपुरं सुरयणायरपुरं रयणपुरमवि पुरं।
सट्ठिगामाण कोडीहिं सहुं हारिणा सट्ठि तुट्ठेण सुविसिट्ठसुहयारिणा।
२० घत्ता—इय णयरइं णिवसियखयरइं धणकणजणपरिपुण्णइं ॥२०॥
अणुराएं रिसहपसाएं णाएं विणमिहि दिण्णइं ॥१४॥

१५

आवली—जाओ सो णहयराणं पहू पिओ
णेहणिबद्धओ ससुहिणा समं थिओ।
सुयणुद्धारभारधरणुज्जुयंगओ
ते आउच्छिऊण धरणो घरं गओ ॥१॥

५ सुवणहु मंडणु अरहंतु देउ माणिणिमुहमंडणु मयरकेउ।
वेसहि मंडणु वइसिउ णिरुत्तु ववहारहु मंडणु चायवित्तु।
कुलमंडणु सीलु सुयस्स बुद्धि तवचरणहु मंडणु मणविसुद्धि।

१४. १. M सरसा। २. MBP भद्द णत्थि। ३. MBP पुराणावली। ४ P विज्जदंतं। ५ MBP किलिकिलं। ६. MP वंसवंतं; वंसवंसं। ७. MBP सूरसंतुज्जयं। ८. MBP महा°। ९. MBP कुसुमकुंद व्व। १०. M जुवइतिलयं सवणियं; P जुवइतिलयं सविणियं। ११. MBP गरुयमालापुरं। १२. P रुद्दय। १३. M सुरयणायर°। १४. MBP सुट्ठु। १५ P सुविसुद्ध° but gloss सुविशिष्ट।

१५ १. B सुसुहिणा। २ P धरणुज्जयंगओ, but gloss ऋजुशरीरः। ३. BP वायवित्तु, and gloss in P वचनप्रतिपालनम्।

१४

भूतलपर ऐसे लोग विरल है जो सुधीजनोंमें रत, दूसरोंके उपकारमें चेष्टा करनेवाले और धीर होते हैं, एक या दो। पातालके राजा नागराज धरणेन्द्रके समान भला आदमी नहीं है। पश्चिम दिशाके मुखसे प्रारम्भ होनेवाली दक्षिणश्रेणीकी पुराणावलीको मैं अच्छी तरह जानता हूँ, और उनकी नामावलीको कहता हूँ। अर्जुनी-वारुणी वैरि-सन्धारिणी, और भी कैलासके पूर्वको वारुणी, विद्युद्दीप्त नगर, गिलगिल (गिलगित) नगर, चारुचूड़ामणि, चन्द्रमाभूषण, वंशवक्त्र, कुसुमचूलपुर, हंसगर्भ, मेघनामपुर, संकर, लक्ष्मी, हर्म्य, चामर, विमल, मसुक्कय, शिवसम मन्दिर, वसुमती सर्वसिद्धार्थ, सूर शत्रुंजय, केतुमाल-इन्द्रकान्त नभानन्दन, अशोक, बीतशोक, विशोक, शुभालोक, अलकतिलक, नभतिलक, सगन्धर्व, मुक्तहार, अनिमिष दिव्य, अग्निज्वालापुर, गरुज्वालापुर, श्रीनिकेत, जयश्री निवासपुर, रत्नकुलिश, वरिष्ठ, विशिष्टाशय, द्रविण जय सभद्र और भद्राशय, फेनशिखर, गोक्षीरवर शिखर, वैरि-अक्षोभ शिखर, गिरिशिखर, धरणीधारिणी, विशाल सुदर्शनपुर, दुर्गंय, दुर्धर, हारिमाहेन्द्र, विजयनाम और फिर सुगन्धिनीपुर और भी रत्नपुर ये साठ नगर, साठ करोड़ गाँवोंके साथ, सन्तुष्ट मनोज्ञ तथा सुविशिष्ट और शुभ करनेवाले (नागराज धरणेन्द्रने)।

घत्ता—नृपश्री और खेचरोंसे युक्त धन-कण और जनसे परिपूरित ये नगर ऋषभके प्रसादसे विनमिको प्रदान किये गये ॥१४॥

१५

वह विद्याधरोंका प्रिय स्वामी हो गया, वह अपने हितैषियोंके साथ स्नेहबद्ध रहने लगा। सुजनोंके उद्धारभारको धारण करनेके लिए उद्यत वह धरणेन्द्र उन दोनोंसे पूछकर अपने घर चला गया ॥१॥

भुवनके मण्डन अरहन्तदेव हैं, मानवियोंका मुखमण्डन कामदेव हैं। वेश्याका मण्डन निश्चय ही वेश्यावृत्ति है; व्यवहारीका मण्डन त्यागवृत्ति है; कुलका मण्डन शील है, शास्त्रका

कुलवहुमंडणु भत्तारभत्ति असि रायहु मंडणु मंतसत्ति।
माणहु मंडणु अदीणवयणु भवणहु मंडणु वरणारिरयणु।
१० कइमंडणु णिव्वाहियणिबंधु गयणहु मंडणु ससि कमलबंधु।
पियपेम्महु मंडणु पणयकोउ आरंभहु मंडणु खलविओउ।
किंकरमंडणु पहुकज्जकरणु णरवइमंडणु पाइक्कभरणु।
सिरिमंडणु पंडिययणु णिरुत्तु पंडियमंडणु णिम्मच्छरत्तु।
पुरिसहु मंडणउ परोवयारु धरणिंदें पालिउ णिव्वियारु।
१५ उद्धरिय वे वि णमि विणमि भाय को पावइ एयहु तणिय छाय।
अहवा किं होसँइ किर परेण परिणवइ दइउ सव्वायरेण।
घत्ता—किं किज्जइ अण्णें दिज्जइं सव्वहु पुण्णु जि सामिउ॥
तें कित्तणु भरँहपहुत्तणु पुप्फयंतगँयगामिउ॥१५॥

इय महापुराणे तिसट्ठिमहापुरिसगुणालंकारे महाकइपुप्फयंतविरइए महाभव्वभरहाणुमण्णिए महाकव्वे णमिविणमिरज्जलंभो णाम अट्ठमो परिच्छेओ सम्मत्तो॥८॥

॥ संधि ॥ ८ ॥

४. M सोहइ। ५ MBP होइ। ६. MBP °गइ°।

मण्डन बुद्धि है, तपश्चरणका मण्डन चित्तकी विशुद्धि है, कुलवधूका मण्डन अपने पतिकी भक्ति है, राजाका मण्डन मन्त्रशक्ति है, मानका मण्डन अदैन्य वचन है, भवनका मण्डन श्रेष्ठ नारीरत्न है, कविका मण्डन अपने प्रबन्धका निर्वाह है। आकाशका मण्डन सूर्य और चन्द्र हैं, प्रियप्रेमका मण्डन प्रकोप है, प्रारम्भका मण्डन खलवियोग है। किंकरका मण्डन अपने स्वामीका काम करना है। राजाका मण्डन प्रजाका भरण करना है। निश्चयसे लक्ष्मीका मण्डन पण्डितजन हैं, और पण्डितजनका मण्डन मत्सरतासे रहित होना है। पुरुषका मण्डन परोपकार है। जिसका पालन धरणेन्द्रने निर्विकार भावसे किया है, ऐसे नमि और विनमि दोनों भाइयोका उद्धार कर दिया, उसकी शोभाको कौन पा सकता है। अथवा दूसरेसे क्या हो सकता है? दैव ही सब रूपमे परिणत हो सकता है।

घत्ता—दूसरा क्या देता है और क्या लेता है। पुण्य ही सबका स्वामी है। उसी पुण्यसे भरतकी कीर्ति प्रमुख और आकाशगामी है ॥१५॥

इस प्रकार त्रेसठ महापुरुषोंके गुणालंकारोंसे युक्त इस महापुराणमें महाकवि पुष्पदन्त द्वारा और महामन्त्री भरत द्वारा अनुमत महाकाव्यका नमि-विनमि राज्यप्राप्ति नामका आठवाँ परिच्छेद समाप्त हुआ ॥८॥

संधि ९

ता झाइउ णिण्णेहु णियमणपसरु परज्जिउ ॥
पुण्णइ छट्ठइ मासि णाहें जोउ विसज्जिउ ॥१॥

१

हेला—परिचिंतइ जिणेसरो दुक्कियं खवंतो ।
महिमापारमासिओ सुद्धही महंतो ॥१॥

५	जिह तेल्लेण दीवु तरु णीरें	तिह माणुससरीरु आहारें ।
	आहारु वि जो परह णिमित्तें	सिद्धउ लद्धउ कालु भवंतें ।
	उज्झिउ आहाकम्मुद्देसहिं	पुव्वं पच्छा संथुइभासहिं ।
	अज्झोवज्झहिं पूईकम्महिं	देवयचरुयहिं वियलियधम्महिं ।
	लिंगिणीसणरसँत्तुगारहिं	चोर्इहमलवित्थारवियारहिं ।
१०	जीववहाइअसंजमसीसहिं	परंभयवसउबाइयगासहिं ।
	गणहरगणियहिं छायालीसहिं	वज्जिउ अवरेहिं मि वहुदोसहिं ।
	णीरसु सरसु ण किं पि भणेवउ	रसणु रसे [10]रसंतु णिहणेवउ ।
	रूवतेयबलचिंताचत्तउ	संजमजत्तामेत्तु[11] समत्तउ ।
	सुक्खु ल्हुक्खु [12]सउवीरब्भुक्खिउ	णवकोडीविसुद्धु सुपरिक्खिउ[13] ।
	पाणिपत्ति सइं मइं भुंजेवउ	चरियाचरणु जगहु दरिसेवउ ।

१५ घत्ता—जइ हउं अच्छमि अज्जु केम वि ण करमि भोयणु ॥
तो जिह ए णर भग्गा[14] तिह भज्जिहइ तवोवणु ॥१॥

२

हेला—आहारें वओ तिणा तवो तिणा जियक्खो ।
अक्खाणं जए समो होइ तेण मोक्खो ॥१॥

इय हियइ घेत्तूण जोयं पमोत्तूण ।

MBP give, at the biginaing of this Samdhi, the stanza एको दिव्यकथाविचारचतुरः etc, for which see notes on pege 121.

१. १. BP °पसरपरज्जिउ । २. GK eall this couplet हेलादुवई only at this place; throughout the rest of the Samdhi they call it हेला । ३. MBP सुद्धघी । ४. BPK कालि । ५. P भमतें । ६. B थुइसंभासहिं । ७. K °सत्तुग्गारहिं । B सत्तुउग्गारहिं, P सत्तुगारहिं । ८. MP चउदह° । ९. K पयभर° । १०. MBP रसे रसंतु । ११. MBPT °मेत्तसमत्तउ । १२. MBP सउवीरें भुक्खिउ; K सउवीरब्भक्खिउ । १३. M परिक्खिउ । १४. MBP भग्ग ।

२. १. MBP तवे ।

सन्धि ९

१

तब स्वामीने अपने स्नेहहीन मन प्रसारका ध्यान किया, और उसे जीत लिया। छठा माह पूरा होनेपर स्वामीने अपना कायोत्सर्ग समाप्त कर लिया। महिमाकी अन्तिम सीमापर पहुँचे हुए शुद्ध बुद्धि, पापोंका नाश करनेवाले महान् जिन सोचते है—जिस प्रकार तेलसे दीपक और नीरसे वृक्ष जीवित रहता है, उसी प्रकार आहारसे मनुष्य शरीर जीवित रहता है। आहार भी वही जो दूसरेके निमित्त बना हो, सिद्ध हो और समयपर मिल जाये, जो आहार कर्मके उद्देश्योंसे रहित हो, पहले और बाद, स्तुतिकी भाषासे शून्य हो, अधिक जल और चावलोंके मिश्रणसे रहित हो, विगलित धर्म देवचरुओं, लिंगी, दरिद्री मनुष्योंके दरिद्रतापूर्ण उद्‌गारों, चौदह प्रकारके मलोंके विस्तार-विकारों, जीवोंके वधादिके असंयमोंके मिश्रणों, दूसरेके भयसे उठाये हुए ग्रासों, इस प्रकार गणधरोंके द्वारा कहे गये छयालीस और दूसरे बहुदोषोंसे रहित हो, और जिसे सरस-नीरस कुछ भी न कहा जाये, रसमे स्वाद देनेवाली जीभको रोका जाये, रूप-तेज-बलकी चिन्तासे मुक्त, भोजन-संयमकी यात्राके लिए ही किया जाये। रूखा-सूखा कांजीका बघारा हुआ, मन-वचन और काय, तथा कृत-कारित और अनुमोदन (नवकोटि विशुद्ध) से शुद्ध, अच्छी तरह परीक्षित, भोजन मै पाणिरूपी पात्रसे खाऊँ एवं चर्याका आचरण संसारको बताऊँ।

घत्ता—यदि मैं किसी प्रकार इसी तरह रहता हूँ और भोजन नही करता हूँ तो जिस प्रकार ये लोग नष्ट हो गये, उसी प्रकार दूसरा मुनिसमूह भी नष्ट हो जायेगा ॥१॥

२

आहारसे व्रत होता है, व्रतसे तप होता है और तपके द्वारा इन्द्रियाँ जीती जाती हैं। इन्द्रियोंकी विजयसे सम होता है और समसे मोक्ष। अपने मनमें यह स्वीकार कर और

सिद्धत्थणामाउ तम्हा वणंताउ ।
५ विहरेइ परमेट्ठि जुयमेत्ति[2] गयदिट्ठि ।
जीवे[3] ण दुम्मेइ पेच्छंतु पउ देइ ।
रमणीयथामेसु णयरेसु गामेसु ।
तं विणयणयभरिय पणमंति णायरिय ।
अब्भुवरसालीण जोयंति[4] गामीण ।
१० भइयाइ कंपंति अण्णे पयंपंति ।
एसो महीराउ एसो महादेउ ।
धणकणयधण्णाइं एएण दिण्णाइं ।
मंडलिय[5] महियलइं काऊण बहुहलइं ।
एयस्स पडिवत्ति ववयरह सहस त्ति ।
१५ इय भणिवि सहलइं विविहाइं फलदलइं ।
भमराहिरामाइं णवकुसुमदामाइं ।
कुंकुमइं चंदणइं भायणइं भोयणइं ।
सुरहियइं सीलयइं भिंगारवरजलइं ।
सीसेण गहिऊण पंथम्मि णिहिऊण ।
२० णाहस्स ते देंति वाला ण याणंति ।
अण्णे पसत्थाइं देवंगवत्थाइं ।
कडिसुत्तकेऊरु[6] मणिहारु[7] मंजीरु ।
कंकणइं कुंडलइं णं सूरमंडलइं ।
गलियावलेवस्स ढवणेंति देवस्स ।
२५ अण्णे कुलीणाउ मज्झम्मि खीणाउ ।
लायण्णपुण्णाउ ढोयंति कण्णाउ ।
णरवह[8]तुरंगाइं मायंगडुंगाइं[9] ।
णिसियाइं[10] पहरणइं[11] ववणइं पट्टणइं[12] ।
वाइत्तजुत्ताइं चमरायवत्ताइं ।
३० [13]ससिसंखपंडुरइं चिंधाइं मंदिरइं ।
अण्णे समप्पंति अण्णे [14]पभासंति ।
भो मयणमयवाह भो णाणजलवाह ।
भो तरुणमिहिराह[15] भो तवसिरीणाह ।

---

२ MBP जुयमेत्तु । ३. MB जीवं ण दूसेइ; PT जीवं ण दूमेइ । ४. MBP जोयंत । ५. MBP मंडलइ । ६ MB करिसुत्तकेऊर; P कडिसुत्तकेऊर । ७. MBP मणिहार मंजीर । ८ Mp वररह° । ९ MBPT मायंगतुगाइं and gloss in T समूहा. । १०. B omits णिसियाइं पहरणइं; P adds it in the margin in second hand । ११ M adds after this : जोयंति किंकरइं, P adds it in the margin iu second hand । १२ MBP add after this : पणयाइं परियणइं । १३. MBP ससिखंड° । १४. MBP पहासंति । १५. MBPT °मिहराह ।

योगको छोड़कर सिद्धार्थ नामक उस वनसे परमेष्ठी ऋषभनाथ विहार करते हैं। चार हाथ धरतीपर गजदृष्टिसे देखते हुए पैर रखते हैं, जीवोंको नहीं कुचलते। रमणीय नगरों और ग्रामोंमे उन्हे विनय और नयसे भरे हुए नागरिक प्रणाम करते है। ग्रामीण अद्भुत रसमें लीन होकर उन्हें देखते है, भयसे कॉप उठते हैं। दूसरे कहते हैं—"यह महाराज हैं, यह महादेव हैं। इन्होंने धन, स्वर्ण और धान्य दिया है, मण्डलों और महीतलोको बहुफलोंसे युक्त किया है। इनकी प्रवृत्ति सहसा उद्धार करती है।" यह सोचकर आर्द्र (ताजे) विविध फलदलों, भ्रमरोंसे अत्यधिक अभिराम नवकुसुम-मालाओं, कुंकुम, चन्दन, भाजन-भोजन, सुरभित चावल, भिंगारकोमें उत्तम जलोको अपने सिरोंपर लेकर, रास्तेमें खड़े होकर स्वामीको उक्त चीजे देते है, वे अज्ञानी नहीं जानते। दूसरे प्रशस्त देवांग वस्त्र, कटिसूत्र, केयूर, मणिहार, मंजीर, कंगन, कुण्डल, (मानो सूर्यमण्डल हों) पापसे रहित देवके लिए लाते है, दूसरे लोग कुलीन कृशोदरी (मध्यमे क्षीण), लावण्यसे परिपूर्ण कन्याओको भेटमे देते हैं, नर-रथ-तुरंग और गजोंके समूह, पैने प्रहरण, उपवन, नगर, वाद्योसे युक्त चमर और आतपत्र (छत्र), चन्द्रमा और शंखोके समान सफेद ध्वज और प्रासाद दूसरे देते हैं, और दूसरे देते हैं, "कामदेवरूपी मृगके आखेटक, ज्ञानरूपी जलके प्रवाह,

भो देवदेवेस भो परम परमेस ।
३५ णिण्णग्गवेसेण [16]णियदेहसोसेण ।
णालवसि किं [17]भवसि णउ हससि णउ रमसि ।
इय भणिवि अज्जेहिं चडुयम्म[18] सज्जेहिं ।
बोल्लाविओ जइ वि पहु चवइ णउ तइ वि ।
परणिहियणियचित्तु महिवीढु विहरंतु ।

४० घत्ता—हिंडइ जाम जिणिंदु चरियामग्गि पइट्ठउ ॥
ता सेयंसणिवेण गयउरि सिविणउं[19] दिट्ठउ ॥२॥

३

हेला—पल्लंकासिएण मउलंतणेत्तएणं ।
रयणिविरामजामए संपसुत्तएणं ॥१॥

ससिप्पहाणुजम्मिणा भवाणुबद्धधम्मिणा ।
णिसायरो दिवायरो कुरीसरो सरोवरो ।
५ महण्णवो सुरंधिओ वलुद्धरो[1] मयाहिओ ।
सबाहुजित्तसंगरो रिऊण छेयणंकरो ।
भरेक्खमेक्ककंधरो[2] महाभडो धणुद्धरो ।
घुलंतपुच्छ[3]पच्छलो विसो विसाणउज्जलो[4] ।
णियच्छिओ सकंदरो घरे विसंतु मंदरो ।
१० इमो सुदंसणोहओ पणट्ठदिट्ठिसोहओ ।
णिसंतए पलोइओ समाणसे विवेइओ ।
पहायए महाउणो समासिओ सभाउणो ।

घत्ता—तं णिसुणिवि कुरुणाहु सिविणयहेलु आहासइ ॥
को वि जगुत्तमु देउ तुह मंदिरु आवेसइ ॥३॥

४

हेला—ससिरविसुहडसीहसरसरहि[1]गोगुणालो ।
जंगममंदरु व्व गइहसियपीलु[2]लीलो ॥१॥

णीलजडाकलावओमालिउ सिहरि व जलहरमालइ कालिउ ।
एरा[3]वयकर[4]संणिहवाहउ णग्गोहु व ललंतपारोहउ ।
५ तावण्णहिं दिणि णयरि पइट्ठउ णारीणरहिं णिरंजणु दिट्ठउ ।
धावमाणजणपयसंमद्दें उट्ठिउ कलयलु जयजयसद्दें ।
को वि भणइ अवलोयहि एत्तहि हउं पंजलियरु अच्छमि जेत्तहि ।

---

१६. B णिव° । १७. MBP भमसि । १८ M चडुयम्मसद्देहिं । १९. BP सुइणउं ।
३. १. M वल्दवुरो । २. MBP भरेक्कमेक्ककंवरो । ३. MPK °पुछ । ४. MBP °फलु ।
४. १ M °मरभूरुहगुणालओ; B सरसरेणे गुणालओ; P सरसरहिणा गुणालओ; T सरहि समुद्रः ।
२. MBP °पीलुलीलओ । ३. MBP अइरावय° । ४. M °करि° ।

तरुण सूर्यके समान आभावाले, हे तपश्रीके स्वामी, हे देवदेवेश, हे परम-परमेश, दिगम्बर वेष अपने शरीरके शोषणसे क्या होगा, क्यों नहीं बताते। न हँसते हो न रमण करते हो।" यह कह-कर चाटुकर्मसे सज्जित आर्योंने उन्हें बुलवाना चाहा परन्तु स्वामी तब भी नहीं बोलते। घरसे अपने चित्तको हटानेवाले वह धरतीतलपर विहार करते हैं।

घत्ता—चर्यामार्गमें प्रवृत्त जब वह (आहारके लिए) घूमते है तभी राजा श्रेयांसने हस्तिनापुरमें स्वप्न देखा ॥२॥

३

पलंगपर सोते हुए, अपने नेत्र मलते हुए, रात्रिके अन्तिम प्रहरमें सोमप्रभके अनुज श्रयासन स्वप्न देखा—चन्द्र-सूर्य-महागज-सरोवर-समुद्र-कल्पवृक्ष, बलसे उत्कट सिंह, अपने बाहुओसे युद्धको जीतनेवाला, शत्रुका छेदन करनेवाला, भार उठानेमे समर्थ कन्धोंवाला, धनुर्धारी महासुभट। पूँछका पिछला भाग हिलाता हुआ सीगोसे उज्ज्वल वृषभ, और घरमे प्रवेश करते हुए गुफासहित मन्दराचलको देखा। इस प्रकार दृष्टिके आकर्षणको समाप्त करनेवाले स्वप्नसमूहको उसने रात्रिके अन्तमे देखा, उसने अपने मनमे विचार किया। प्रभातके समय उसने महाआयुवाले अपने भाई (सोमप्रभ) से संक्षेपमे कहा।

घत्ता—यह सुनकर कुरुनाथ स्वप्नफलका कथन करता है—कोई विश्वमे उत्तम देव तुम्हारे घर आयेगा—॥३॥

४

चन्द्र, रवि, सुभट, सिंह, सरोवर, समुद्र और वृषभके गुणोसे युक्त सचल मन्दराचलकी तरह अपनी गतिसे महागजका उपहास करता हुआ, नीली जटाओके समूहसे व्याप्त, मेघमालाओंसे श्याम पर्वतकी तरह, ऐरावतकी सूँड़के समान बाहुवाला, लटकते हुए प्रारोहोसे युक्त वटवृक्षके समान वह, तब दूसरे दिन नगरमे प्रविष्ट हुए। नर-नारियोंने निरंजन उन्हें देखा। दौड़ते हुए जनपदके सम्मर्दन और जय-जय शब्दसे कलकल होने लगा। कोई कहता है—यहाँ देखिए जहाँ मैं

को वि भणइ सामिय दय किज्जउ एक्कवार पच्चुत्तरु दिज्जउ।
को वि भणइ मेरउ घरु आवहि भिच्चभत्ति पहु किं ण विहावहि।
१० चंदु व रिक्खि रिक्खि वियरंतउ जइवइ गेहि गेहि पइसंतउ।
घरिणिहि घरंगणु संपाइउ ताउ व माउ व देउ पलोइउ।
णिग्गयाउ मणि तोसु वहंतिउ एम चवंति ताउ पणवंतिउ।
मज्जणु मज्जणहरि संजोइउ पोत्ति तेल्लु आसणु वि पढोइउ।
ण्हाहि णाह लइ तणुउवयरणइं चंगउ चेलिउ हेमाहरणइं।
१५ बइसहि पट्टि सुसरससमग्गउ भुंजहि भोयणु तुज्झु जि जोग्गउ।
बोल्लावियउ ण किं पि वि भासहि सुवणुबंधु किं अप्पउ सोसहि।
घत्ता—पुरि कलयलु णिसुणेवि ससिभासें अहियारिउ ॥
कंचणदंडविहत्थु पुच्छिउ णियदुवारिउ ॥४॥

५

हेला—ता पडिहारएण भणियं भवावहारो।
जो लच्छीकडक्खविक्खेवे वि णिव्वियारो ॥१॥
सिरेण णवेवि सुरायलि ठवियउ जो तियसेसरेण सइं ण्हवियउ
जेण पयासियाइं मइगम्मइं बहुभेयइं जणजीवणकम्मइं।
५ भरहहु तुम्हहुं मेइणि दिण्णी जेण णवल्लविति पडिवण्णी।
सो आयउ तेलोक्कपियामहु तं णिसुणिवि उट्ठिउ सोमप्पहु।
सहुं सेयंसकुमारें णिग्गउ ताम पलंबपाणि णं दिग्गउ।
संमुहुं एंतु णिहालिउ जिणवरु णं वसुहंगणाए पसरिउ करु।
णहसरि रवि सररुहहु कयग्गहु णं जगभवणखंभु भयमयमहु।
१० सामि सणेहभरेण भरेप्पिणु कर मउलेवि पणामु करेप्पिणु।
सोमप्पहेण पलद्धपसंसे देवि पयाहिण तहु सेयंसे।
मुहुं जोइयउ णेत्तसयवत्तहिं हरिसंसुयओसाकणसित्तहिं।
घत्ता—अइपसण्णमुहु होइ संभासणु पडिवज्जइ ॥
पुव्वभवंतरणेहु जणदिट्ठिए जाणिज्जइ ॥५॥

६

हेला—जिणमवलोइऊण कुंयरेण लोयसारो।
सिरिमइवज्जजंघजम्मंतरावयारो ॥१॥
पवुद्धो असेसो सवासो दुदेसो।
मुणीणं पहाणं वराहारदाणं।

५. M घरपंगणु संपाइउ; B घरिणिघरपंगणु संपाइउ; P घरु पंगणु संपाइउ। ६ MBP हरिसु।
७ M सरसु सुसमुग्गउ; B सुरसु समुग्गउ। ८. M सुयणवंधु।
५. १. MBP भणियं। २. MBP विक्खेवणिव्वियारो। ३. MBP पसरियकरु। ४. MBP भयमयवहु।
५ MB सणेहु भरेण। ६. BP अइपसण्णु। ७ P जणदिट्ठें।
६. १. MBP कुमरेण। २ M has before this line सोमराई छंद; BPGK have सोमराई, MBPK पवुद्धो। ३. MBP सदेसो।

अंजलि बांधे हुए खड़ा हूँ। कोई कहता है—स्वामी, दया कीजिए, एक बार प्रत्युत्तर दे दीजिए। कोई कहता है—मेरे घर आइए, हे स्वामी ! क्या भृत्यकी भक्ति अच्छी नहीं लगती। जिस प्रकार चन्द्रमा नक्षत्र-नक्षत्रमें विचरण करता है, विश्वपति भी घर-घरमें प्रवेश करते हुए गृहिणीके गृह-प्रांगणमें आते है, तब उसने तात या भाईके समान देवको देखा, मनमें सन्तोष धारण करते हुए वह बाहर आया। तातको प्रणाम करते हुए इस प्रकार कहता है—"स्नानघरमें स्नान करिए, धोती-तेल और आसन रख दिया गया है, हे स्वामी ! स्नान कीजिए और शरीरके उपकरण लीजिए सुन्दर वस्त्र स्वर्णके आभरण। आसनपट्टपर बैठिए, और सरस सामग्रीसे युक्त भोजन कीजिए, यह तुम्हारे योग्य है, बुलवाये जानेपर भी, कुछ नहीं बोलते ? हे भुवनबन्धु, अपनेको क्यों सुखाते हैं ?

घत्ता—नगरमें कलकल सुनकर राजा सोमप्रभने स्वर्णदण्ड है हाथमें जिसके, ऐसे अपने द्वारपालसे पूछा ॥४॥

५

तब प्रतिहारने कहा, "भवका नाश करनेवाले जो लक्ष्मीके द्वारा कटाक्ष करनेपर भी निर्विकार रहते है, इन्द्रने सिरसे प्रणाम कर जिन्हें मेरुपर स्थापित किया और स्वयं अभिषेक किया है, जिन्होंने नाना प्रकारके बुद्धिगम्य लोकजीवन कर्म प्रकाशित किये, जिन्होने तुम्हें और भरतको धरती दी, और स्वयं नयी वृत्ति (मुनिवृत्ति) स्वीकार की, ऐसे वह त्रिलोक पितामह आये है।" यह सुनकर सोमप्रभ उठा, और श्रेयांसकुमारके साथ निकला। तबतक हाथ आये हुए, मानो दिग्गज हो, सामने आते हुए जिनवरको देखा, मानो वसुधारूपी अंगनाने हाथ फैला दिया हो, मानो आकाशरूपी सरितामें कमलोंके लिए कृताग्रह सूर्य हो, मानो भव-भवका नाश करनेवाला विश्वरूपी भवनका खम्भा हो। स्वामीके स्नेहके भारसे भरकर हाथ जोड़कर उन्हें प्रणाम किया। लब्धप्रशंस सोमप्रभ और श्रेयांसने उनकी प्रदक्षिणा कर, हर्षाश्रुरूपी ओसकणोसे सिक्त नेत्ररूपी कमलोसे उन्हें देखा।

घत्ता—अत्यन्त प्रसन्न मुख होकर वह बात करना छोड़ देता है। उनको देखकर वह पूर्वभवके स्नेहको जान लेता है ॥५॥

६

जिन भगवान्‌को देखकर कुमार श्रेयांसने लोकश्रेष्ठ अशेष, स्ववासी दशेश श्रीमती और वज्रजंघके जन्मान्तरके अवतारको ज्ञात कर लिया। मुनियोंके लिए जो मुख्य अनन्त पुण्यको

५ भवे जं विइण्णं कयाणंतपुण्णं।
समाहूयसक्कं भणे तं पि थक्कं।
पुणो तेण वुत्तं अहो हो णिरुत्तं।
हुयं मज्झ णाणं पणायं पुराणं।
असूई अराई अमाई अणाई।
१० अमाणो अमोहो अकोहो अलोहो।
अछेओ अभेओ अणेओ वि णेओ।
विमुक्कंधयारो अणंगावहारो।
पवित्तो महंतो अणंतो रहंतो।
असंगो अभंगो जहाजायलिंगो।
१५ बुहाणं विहाओ सुहाणं उवाओ।
अहाणं विणासो महाणं णिवासो।
अभावो असावो इमो देवदेवो।
कयत्थो विवत्थो समत्थो पसत्थो।
सया वंदणिज्जो इमो पुज्जणिज्जो।
२० परो मोक्खगामी इमो मज्झ सामी।
सुराहिंदपूओ इमो पत्तभूओ।

घत्ता—जगगुरु गुरुयणपुज्जु मोणव्वइ दिव्वासउ॥
एहु आहारणिमित्तु भमइ समग्गपयासउ॥६॥

७

हेला—अंबरमणिपसंडिदाणाइं देंति लोया।
ताइं इमे ण लेंति परिमुक्ककामभोया॥१॥

कण्ण लेइ जो कामें गत्थउ भूमि लेइ जो लोहें घत्थउ।
संचयसेज्जायलइं सभवणइं गेण्हइ जो माणइ रइरमणइं।
५ गाइ देहि देहि त्ति पघोसइ जो घएण अप्पाणउं पोसइ।
वित्तु लेइ जो इंदिय पुज्जइ मंसु खाइ जो पुट्ठि समज्जइ।
बंभइ तावस संवसणभग्गा पावयम्म संसारहु लग्गा।
दुद्धरजीहोवत्थहिं दंडिय अप्पउ पेरु वि हणिवि पासंडिय।
दुक्कियभरपरियंड्डणरीणा सूईमुहि णिवडंति अयाणा।
१० जे लेंता ते विड विड देंता णउ जाणहु कें गुणहिं महंता।
पत्थरणाव ण पत्थरु तारइ अवस कुपत्तु भवण्णवि मारइ।

४ M अजाई अमाई and adds . अणाई, B reads अजाई अमाई। ५. P वि एओ and gloss एक। ६. M अताओ अभाओ and adds : अराओ असोओ; P अताओ अभाओ अराओ असाओ। ७ M सया। ८ MBP पडु। ९ B भणइ।

७. १ MBP घत्थउ। २ MB गुत्थउ, P गत्थउ। ३. P पेय खाइ। ४ MBP अवसण°। ५ MBP परु हणेवि। ६. °परियट्टण°; P °परिवड्ढण° but gloss परिकर्पण°। ७ B णं जाणहु। ८. MBP किं।

करनेवाला उत्तम आहारदान दिया था और जिसमें इन्द्र आया था, उसके मनमें यह बात स्थित हो गयी। उसने फिर कहा, "अहो, निश्चय ही मुझे ज्ञान हो गया है और मैंने प्राचीन वृत्तान्त जान लिया है। अजन्मा, अरागी, अप्रमेय, अमादी, अमानी, अमोही, अक्रोधी, अलोभी, अच्छेद्य, अभेद्य, अनेक होकर भी एक, अन्धकारसे विमुक्त, कामदेवके विध्वंसक, पवित्र, महान्, अनन्त, अरहन्त, असंग, अभंग, दिगम्बर, बुधोंके विधाता, सुखोंके साधन, पापोंके नाशक, तेजोंके निवास, क्रोधादि भावोंसे शून्य, पीड़ाहीन, यह देवदेव हैं। कृतार्थ, विवस्त्र, समर्थ और प्रशस्त सदा वन्दनीय यह पूज्यनीय है। श्रेष्ठ मोक्षगामी यह मेरे स्वामी हैं। देवेन्द्र और अहीन्द्रके द्वारा पूज्य यह पात्रभूत (योग्य पात्र) हैं।

घत्ता—विश्वगुरु, गुरुजनोंके पूज्य, मौनव्रती, दिशारूपी वस्त्र धारण करनेवाले, यतिमार्गको प्रकाशित करनेवाले यह आहारके निमित्त घूम रहे हैं ॥६॥

७

लोग उन्हें वस्त्र, मणि और स्वर्णका दान देते हैं, परन्तु कामभोगोसे मुक्त ये उन्हें नही लेते ॥१॥ जो कामसे ग्रस्त है वह कन्या लेता है, भूमि वह लेता है कि जो लोभसे ग्रस्त है, भवन सहित खाट और शय्यातल वह ग्रहण करता है जो रतिक्रीड़ाको मानता है। गाय दो-दो, ऐसा वह कहता है, जो घीसे अपनेको पोषित करता है। धन वह लेता है, जो इन्द्रियोंकी पूजा करता है। मांस वह खाता है जो अपनी चर्बी बढ़ाना चाहता है। ब्राह्मण और तपस्वी अपने व्यसनोंसे ही नष्ट हो गये और पापकर्मा वे संसारमे फँस गये। दुर्धर जीभ और उपस्थसे पाखण्डी स्वयंको और दूसरोंको नष्ट कर दण्डित हुए। पापोके भारकी वृद्धिसे क्षीण अज्ञानी जन्ममुख (संसार) मे पड़ते हैं। जो लेते है वे विट और जो देते हैं वे विट। हम नही जानते, वे किन गुणोसे महान् हैं। पत्थरकी नाव पत्थरको नही तार सकती, अवश्य ही कुपात्र संसारसमुद्रमे मारेगा।

जासु अवंभारंभपरिग्गहु सरइ कया वि ण इंदियणिग्गहु।
धम्माभासु पाउ जो भावइ अण्णु वि अण्णाणिय कारावइ।
कत्थइ मिच्छामग्गि पइट्ठउ कुच्छियपत्त रिसीसहिं सिट्ठउ[10]।
१५ सीलें समत्तेण वि उज्झिउ हवइ अवत्तु सइं जि मइं बुज्झिउ।
सद्दहाणु णव पंचहुं सत्तहुं करइ पयाहुं जिणेसपवुत्तहुं।
ईसीसि वि वउ जेण ण पालिउ तं[11] जघण्णु मइं पत्तु णिहालिउ।
मज्झिमु देसचरित्तालंकिउ सम्मदंसणि कहिं मि ण संकिउ।
[12]दूरुद्धुयसदप्पकंदप्पहिं णाणचरियसम्मत्तवियप्पहिं।
२० भूसिउ संचियसासयसोक्खहिं सीलगुणहिं चउरासीलक्खहिं।
उत्तमु पत्तु एउ पणविज्जइ एयहु [13]पासुयभोयणु दिज्जइ।
घत्ता—[14]कुच्छियवत्ति कुभोउ दिण्णु अवत्तइ णासइ॥
[15]तहिं पत्तहिं फलु तिविहु इय सुंदरु आहासइ॥७॥

८

हेला—मज्झिमु मज्झिमेण अहमो अहमेण णेओ[1]।
उत्तमु उत्तमेण दाणेण होइ भोओ॥१॥

णिल्लोहत्ते चाएं भत्तिइ खंमविण्णाणें[2] सुद्धइ भत्तिइं[3]।
एहिं गुणेहिं जुत्तु दायारउ मज्झण्णइ अवलोयइ[4] दारउ।
मउलियकरयलु अइअवमत्तउ[5] अच्छइ तिविहपत्तगयचित्तउ।
५ गुणवंतउ परलोयासत्तउ सो पडिगाहइ पंगेणपत्तउ[6]।
ठाहुं[7] भणिवि पणवियसिरु भासइ उच्चठाणि गउरविइ णिवेसइ।
करइ चाहु संतहुं धण्णउं जणु चरणधुवणु अच्चणु पुणु पणमणु।
मणवयतणुसुद्धिइ सुद्धासणु देइ भरंतु जिणिंदहु सासणु।
भेसहु सत्थु अभयदाणें सहुं देइ सजीविउ चलु भणिवि लहु।
१० बहिरंधलयहं मूयहं लक्षहं काणकुंटमंटहं वाहिल्लहं।
सव्वभूयहियकारणें[8] गण्णें असणु वसणु दीणहं कारुण्णें।
परमारा पावितु मुएप्पिणु णियदव्वाणुसारु सुयरेप्पिणु[9]।
देइ ण जो घरत्थु सो केहउ घरयारउ चिडउल्लउ जेहउ।
[10]णियडिंभउं णियपोट्टु जि पोसइ मुवउ ण जाणहुं कहिं जाएसइ।
१५ घत्ता—माणसु जं णिद्धम्मउ[11] तहिं उप्पेक्ख रइज्जइ॥
[12]दुथियम्मि अणुकंप गुणवंतउ पणविज्जइ॥८॥

---

९. MB °रंभु परिग्गहु। १०. MP दिट्ठउ। ११. MBP जहण्णु। १२ MBP दूरुज्झिय।
१३ MB फासुय। १४ MB कुच्छियपत्ति। १५. MBP तिहिं।
८. १. M णओ, BP णाओ। २. MBP खमविण्णाणइ सद्धइ भत्तिइ। ३. MBP add after this p. सील्वतु जिणपंनगयारउ सारासारसत्थवियारउ। ४. MBP अवलोयइ दारउ। ५ T अपमत्तउ। ६. MP पंगणु पत्तउ, B पंगणे पत्तउ। ७. MBP ठाहु। ८ MBP °कारणगण्णे। ९. MB सुंभरेप्पिणु। १०. MBP णियडिंमइं। ११. MBP णिद्धम्मु। १२ MBPK दुत्थियम्मि।

जिसके अब्रह्मचर्य, आरम्भ और परिग्रह है और जिससे कभी इन्द्रिय निग्रह नही सटता, धर्मका आभास देनेवाला पाप जिसे अच्छा लगता है, और भी दूसरे अज्ञानियोसे कराता है, किसी मिथ्या-मार्गमें प्रविष्ट हुए उसे ऋषीश्वरोंने कुत्सित पात्र कहा है। शील और सम्यक्त्वसे रहित अपात्र होता है, यह बात मैंने स्वयं देख ली है। नौ, पाँच और सात तत्त्वोंका श्रद्धान करता हुआ, जिनेश्वरके द्वारा उक्त पदार्थोंमें विश्वास करता है, परन्तु जिसने थोड़ेसे भी थोड़े व्रतका पालन नही किया मैंने उसे जघन्य पात्रके रूपमे देखा है। मध्यम पात्र एकदेश चारित्रसे शोभित होता है, और सम्यक् दर्शनमें कही भी शंका नही करता, जो दर्प सहित कामदेवको उखाड़नेवाले ज्ञान-दर्शन और चारित्र्यके विकल्पों, शाश्वत सुखका संचय करनेवाले चौरासी लाख शीलगुणोंसे भूषित है ऐसे इन उत्तम पात्रको प्रणाम करना चाहिए, इसके लिए प्राशुक भोजन देना चाहिए।

घत्ता—कुपात्र को दिया गया दान कुभोग देता है। और अपात्रमे दिया गया दान नष्ट हो जाता है, परन्तु पात्रको दान देनेसे तीन प्रकारका फल होता है, यह सुन्दर कहा जाता है ॥७॥

८

मध्यमसे मध्यम, अधमसे अधम फल जानना चाहिए। उत्तम दानसे उत्तम भोग होता है। निर्लोभता, त्याग और भक्ति, क्षमा, विज्ञान और शुद्ध भक्ति इन गुणोसे युक्त दाता (श्रेयांस) मध्याह्न (दुपहर) मे द्वार देखता है। हाथ जोड़े हुए, अत्यन्त अप्रमादो, तीन प्रकारके पात्रोंको चित्त-मे सोचते हुए, गुणवान्, परलोकासक्त वह वहाँ स्थित है, और आँगनमे आये हुए उन्हे पड़गाहता है, 'ठहरिए' यह कहकर प्रणत शिर वह बोलता है, और गौरवपूर्ण उच्च स्थानमे उन्हें ठहराता है, वह स्तुति करता है, "सन्तोसे लोक धन्य है।" चरण धोना, अर्चा और फिर प्रणमन करता है। मन-वचन और कायकी शुद्धिसे शुद्धासन देता है। जिनेन्द्रके शासनकी याद करता हुआ अभयदानके साथ औषधि और शास्त्र देता है, अपने जीवनको चल और लघु मानकर। बहिरो, अन्धों, गूँगों, अस्पष्ट बोलनेवालों, काने, बेकार, उद्यमहीनों और व्याधिग्रस्त दीनोंके लिए, गणनीय उसने सर्वप्राणियोंके हितके कारणभूत कारुण्यसे भोजन और वस्त्र दिये। परहिंसक और पापिष्ठों-को छोड़कर जो गृहस्थ अपने धनके अनुसार सोच-विचारकर दान नही करता, वह घर बनाने-वाली उस गौरैयाके समान है जो अपने बच्चे और अपना पेट पालती है और यह नहीं जानती कि मरकर कहाँ जायेगी।

घत्ता—जो मनुष्य धर्महीन है वहाँ उपेक्षा करनी चाहिए, जो दुःस्थित हैं, उनमें अनुकम्पा करनी चाहिए और गुणवानोको प्रणाम करना चाहिए ॥८॥

९

हेला—इय कहिऊण तेण जुवराइणा समग्गं।
दाययदेज्जपत्तववहारसारमग्गं ॥१॥

सुइधोयदेवंगणिवसणणियत्थेण जलभरियदलपिहियभिंगारहत्थेण।
परिदिण्णधाराजलुद्धूअतावेण सद्धम्मसब्भावसुप्पण्णभावेण।
५ भवंभरणसंभरियमुणिदाणयम्मेण वरचरमदेहेण विच्छिण्णजम्मेण।
पियजंपणालोयणुब्भूयणेहेण धरणीसतोसेण गुणरयणगेहेण।
इसिकहियसुयसूइसंभिण्णसोत्तेण चंदक्कचारित्तचेंचइयगत्तेण।
कुरुजंगलावणिवइलहुयभाएण मत्तमहुरणाएण सेयंसराएण।
आओ गुरू सो ज्जि णंतेण सीसेण ठाभणिउ जिणु णमिउ पणवंतसीसेण।
१० ता सरइ हिययम्मि रइकुमुइणीजूरु तूसविय जगणलिणु हयमलिणु रिसिसूरु।
असणेण तणु ताइ णिव्वहइ तवयरणु तवयरणतावेण खंलीइ मलहरणु।
मलहरणि संभवइ केवलु महाणाणु लयविरमु सुहुँ परमु जइ जाइ णिव्वाणु।

घत्ता—इय चिंतिवि सो थक्कु पत्तु तवेण विसुद्धउ॥
चिरु सेयंसवसेण सेयंसें परं लद्धउ॥९॥

१०

हेला—एवं कस्स ठाइ भवणम्मि भुअणणाहो।
केण भवंतरम्मि चिण्णो तवो असोहो॥१॥

णवकलहोयकुंभगब्भाणिउं कुरुणाहें पल्हत्थिउ पाणिउं।
जससससियरधवलियकुरुवंसें पंय पक्खालिय सिरिसेयंसें।
५ वंदिउ पायतोउ सुहगारउ जम्मजरामरणावइहारउ।
इंदचंदणाइंदपियारउ उच्चासणि संणिहिउ भडारउ।
कुसधारहि उच्छलियतुसारहिं[२] चंपयसिंदूरहिं मंदारहि।
फुल्लहिं [३]फुलुद्धुयझंकारहिं अक्खयाहिं बहुगंधपयारहिं।
दीवयचरुयहिं धूवंगारहिं करमरमाहुलिंगमालूरहिं।
१० अंबयहलहिं जंबुजंबीरहिं पण्णहिं पूयप्फलकप्पूरहिं।
णेउरणिहसुयवम्महणियलउ पुजिउ परमेट्ठिहि पयजुयलउ।
पुणु पणिवाउ करेप्पिणु भावें जो छंड्डिउ णं वम्महचावें।

---

९. १ BP °गब्भावमुपसण्ण°। २ MBP भवदिण्ण°। ३. P °दाणवम्मेण। ४. MBP °सुइसूइ°। ५. MB °गोत्तेण but gloss in M भूषितं गात्रम्। ६ MBP °वणिवणिव°। ७. M सुहरमु।

१०. १. P पाय। २ M reads after this line: चंदणकुंकुमेहिं घणसारहिं, पयमंमलियउं तेहिं कुमारहिं, B also reads चंदणकुंकुमेहिं घणसारहिं, पयममलियइं तेहिं कुमारहिं; P reads चंदण-कुंकुमेहिं घणसारहिं, चंपयसिंदूरहिं मदारहिं, फुल्लहिं फुल्लुयझंकारहिं, पा गमल्लियइं तेहिं कुमारहिं। ३ MBT फुल्लुद्धुय°, P फुल्लुद्धुय°। ४ MBP अक्खयहिं। ५ P चरुयहिं दीवय°। ६. MB छड्डिउ णं वम्मह°, B छड्डिउ णं वम्महु।

९

इस प्रकार उस युवराजने दानकर्ता, दातव्य पात्र और व्यवहारका सारमार्ग नमगरूनमें कहकर पवित्र धोये हुए दिव्य वस्त्र पहनकर जलसे भरा, पत्तोंसे ढका, भृंगार हाथमें लेकर, दी गयी जलधारासे तापको दूर कर, जिसे सद्धर्म और श्रद्धाके वशसे भाव उत्पन्न हो रहे हैं, पूर्वजन्मके स्मरणसे जिसे पूर्वजन्मका मुनिदानकर्म याद आ गया है, जो श्रेष्ठ चरम शरीरी है, जिसने जन्म-का उच्छेद कर दिया है, प्रिय कहने और देखनेसे जिसे स्नेह उत्पन्न हो गया है, जो धरनोंको सन्तोष देनेवाला गुणरूपी रत्नोंका घर है, जिसके कान, ऋषिके द्वारा कथित शास्त्रोंकी सूक्तोंसे छेदे गये हैं, जो चन्द्रार्क चारित्र्यसे शोभित शरीर हैं, ऐसे कुरुजांगल राजाके अनुज मधुर और कोमल न्यायवाले, श्रेयांस राजाने आये हुए उन गुरुको मस्तक झुकाकर 'ठा' (ठहरिए) कहा। रतिरूपी कुमुदिनीको सन्तापदायक विश्वकमलको खिलानेवाले हतमलिन वह ऋषिरूपी सूर्य अपने मनमें सोचते हैं कि आहारसे शरीर है, उससे तपश्चरणका निर्वाह होता है, तपश्चरणसे ताप और क्षमासे पापका नाश होता है। पाप नष्ट होनेपर महाज्ञान केवलज्ञान उत्पन्न होता है, और उससे अविनश्वर परम सुख होता है और मुनि निर्वाण—लाभ प्राप्त करता है।

घत्ता—इस प्रकार विचारकर तपसे विशुद्ध पात्र वे वहाँ ठहर जाते हैं। और पुण्य विशेष-के वशसे श्रेयांस उन्हें पा लेता है ॥९॥

जइवरतवसंदरिसियभंगें जो पुणु धणुहि ण णिहिउ अणंगें।
सो उच्छुरसु णिवारियदोसहु णं सम्महुं णिउ सुतवहुयासहु।
१५ जुवराएं घडेण करि ढोइउ वारवार जिणणाहें जोइउ।

घत्ता—देहालइ मणकुंडे रसु पिज्जंतउ भणियउ॥
मयणसरासणसारु झाणजलणि णं हुणियउ॥१०॥

११

हेला—ता दुंदुहिरवेण भरियं दिसावसाणं।
भणियं सुरवरेहिं भो साहु साहु दाणं॥१॥

पंचवण्णमाणिक्कविसिट्ठी घरपंगणि वसुहार वरिट्ठी।
णं दीसइ ससिरविबिंबच्छिहि कंठमट्ठ कंठिय णहलच्छिहि।
५ मोहबद्धणवपेम्महिरी विव सग्गसरोयहु णालसिरी विव।
रयणसमुज्जलवरगयपंति व दाणमहातरुहलसंपत्ति व।
सेयंसहु धणएण णिउंजिय एक्कहिं उडुमाला इव पुंजिय।
पूरियसंवच्छरउववासें अक्खयदाणु भणिउं परमेसें।
तहु दिवसहु अत्थेण समायउ अक्खयतइय णाउं संजायउ।
१० घरु जायवि भरहें अहिणंदिउ पढमु दाणतित्थंकरु वंदिउ।
पइं मुएवि को गुरु संमाणइ पत्तविसेसदाणविहि जाणइ।
पइं मुएवि को चिंतहुं सक्कइ परमप्पउ कहु मंदिरि थक्कइ।
पइं मुएवि दिसिपसरियजसंयरु अण्णु कवणु कुरुकुलणहदिणयरु।
जय सेयंसदेव पभणंतहिं संथुउ सुरणरवरसामंतहिं।

१५ घत्ता—महियलि धम्मरहासु एयइं तोसियसक्कइं॥
जिणसेयंसकयाइं वयदाणइं वरचक्कइं॥११॥

१२

हेला—धम्ममहारहो विलंबियदयावडाओ।
एयहिं विहिं मि वहइ णिहयंगयारिराओ॥१॥

एम भणेप्पिणु गउ भरहेसरु एत्तहि महि विहरंतु जिणेसरु।
तिहिं णाणिहि सुद्धें परिणामें अचलचित्तु मणपज्जवणामें।
५ अड्ढाइज्जहिं दीवहिं जं जं माणसु चिंतइ जाणइ तं तं।

---

७. MB संमुहुं; P संमुहु। ८. P झाणजले but gloss ध्यानाग्नौ।

११. १. M भणियं। २. MBP घरपगणि। ३ MBPT मोहणिद्ध°। ४. M adds after this line :—अहियं पक्ख तिण्ण सविसेसें। किंचूणे दिण कहिय जिणेसें। भोयणवित्ती लहोय तमणासें। दाणतित्थु घोसिउ देवीसें। ५. MBP पढम°। ६. MBP पत्तविसेसु। ७. MB °जयसरु।
८. MBP तवदाणइं।

१२ १ M माणस; BP माणुसु।

यतिवरोंके नयनमें अंगका प्रदर्शन करनेवाले कामदेवके धनुषके द्वारा जो पुनः छोड़ा गया, और जो फिरसे कामदेवके द्वारा धनुषपर नहीं धारण किया गया ऐसा वह इक्षुरस, मानो दोषोंका निवारण करनेवाली तपकी आगमें उपशम भावको प्राप्त हुआ। युवराजके द्वारा हाथपर ढोया गया और जिननाथके द्वारा बार-बार देखा गया।

घत्ता—देहरूपी घरके मनरूपी कुण्डमें पिये गये रसके बारेमें यह कहा गया कि कामदेवके धनुषका सार ध्यानकी आगमें होम दिया गया ॥१०॥

११

तब नगाड़ोंके शब्दोंसे दिशाओंके अन्त भर उठे। देवश्रेष्ठोंने कहा, "भो! बहुत अच्छा दान"। पांच प्रकारके रत्नोंसे विशिष्ट धनकी धारा उसके घरके आंगनमें बरसी, जो मानो शशि और सूर्यके बिम्बोंकी आंखोंवाली नभरूपी लक्ष्मीके कण्ठसे गिरी हुई कण्ठी हो, मोहसे आबद्ध नव-प्रेमकी लज्जाके समान, स्वर्गरूपी कमलकी मालश्रीके समान, रत्नोंसे समुज्ज्वल उत्तम गजपंक्तिके समान, दानरूपी महावृक्षकी फल सम्पत्तिके समान, श्रेयांसके लिए कुबेरके द्वारा दी गयी (पिरोयी गयी) जो नक्षत्रमालाके समान एक जगह पुंजीभूत हो गयी हो। एक सालका उपवास पूरा करनेवाले परमेश्वरने उसे अक्षयदान कहा। उस दिनसे अक्षय तृतीया नाम सार्थक हो गया। घर जाकर भरतने श्रेयांसका अभिनन्दन किया, और उस प्रथमदान तीर्थंकरकी वन्दना की और कहा, "तुम्हें छोड़कर और कौन गुरुका सम्मान कर सकता है; तथा पात्र विशेषकी दानविधि जान सकता है। तुम्हें छोड़कर कौन सोच सकता है; किसके घरमें परमात्मा ठहर सकते हैं। दिशाओंमें अपने यशका प्रसार करनेवाले तुम्हें छोड़कर और दूसरा कौन कुरुकुलरूपी आकाश-का सूर्य हो सकता है? हे श्रेयांसदेव, जय यह कहते हुए सुरवर और नरवर सामन्तोंने उनकी संस्तुति की।

घत्ता—धरतीतलपर धर्मरूपी रथके ऋषभ जिन और श्रेयांसके द्वारा बनाये गये व्रत और दानरूपी ये सुन्दर चक्र, देवेन्द्रको भी सन्तोष देनेवाले हैं ॥११॥

१२

"लगी हुई हैं दयारूपी पताकाएँ जिसमें, ऐसा कामदेवरूपी राजाका नाश करनेवाला धर्मरूपी महारथ इन दोनोंके द्वारा (व्रत और दान) से चलता है।" यह कहकर भरतेश्वर चला गया। यहाँ जिनेश्वर धरतीपर विहार करने लगे। तीन ज्ञानों, शुद्ध परिणाम और मनःपर्यय ज्ञानसे अचल चित्त वह इस ढाई द्वीपमें मनुष्य जो-जो सोचता है, उसे जानते है।

उज्जुयवंकहियमुणियत्थउ देउ पराइउ णाणु चउत्थउ।
पंचवीसवयमायउ भावइ तिहिं गुत्तिहिं अप्पाणउं गोवइ।
इरियादाणु किं पि णिक्खेवणु करइ कहिं सि कयसुकयालोयणु।
रोसु लोहु भउ हासु पणासइ संगं विवज्जइ सुत्तु जि भासइ।
१० मिउ जोग्गउ अणुणायउ गेण्हइ भत्ति पाणि संतोसु जि मण्णइ।
णारीकहदंसणसंसग्गहु करइ णिवित्ति पुव्वरइरंगहु।
भुंजइ कहिं मि सुणिव्वियडिल्लउ बंभचेरु थिरु धरइ गुणिल्लउ।
घत्ता—इंदियखलहं मिलंतु परमजोइ मेलावइ[3] ॥
खुब्भंतउ मणडिंभु रिसि णाणें खेलावइ[4] ॥१२॥

१३

हेला—हो हे चित्तडिंभ मा रमसु णारिरूवे।
रमिऊणं[1] दढ त्ति पडिहीसि मोहकूवे ॥१॥
जीवाजीयवत्थुभेयालइ[2] करणपोसणत्थि विरसालइ।
संजमवायवुड्ढजमसिहिसिहु[3] णिद्धंधसु[4] णित्तामसु णिप्पिहु।
५ दिहिखमझाणजोयकयसंगहु वीसदुसंखपरीसहभरसहु।
दंसण णाण चरिय तव वीरिय आयार वि जे पंच समीरिय।
तेहिं भडारउ अणुदिणु वड्ढइ हिययहु[5] तिण्णि वि सल्लइं कड्ढइ।
अणसण[6] वुत्तिसंख[7] ओमोयरु रसपरिचाउ कालजोयायरु।
इय बाहिरतवु[8] चरइ सुदारुणु अंतरंगसुद्धिहि सो कारणु।
१० वेज्जावच्चि विणइ सज्झायइ तणुविसग्गि पच्छित्तणिओयइ।
अब्भंतरतवि अप्पउ जोयइ[9] धम्मझाणु चउविहु णिज्झायइ।
आणाविचउ णामणिग्गंथउ पुणु अवायविचयं[10] पि महत्थउ।
अवरु विवायविचउ वित्थारइ थिरु संठाणविचउ अवहारइ।
घत्ता—इय विहरंतु धरग्गि सिद्धिवरंगणरत्तउ ॥
१५ वरिससहासे णाहु पुरिमतालु संपत्तउ ॥१५॥

१४

हेला—तो दिट्ठं लवंगलवलीलयाहरालं।
अलियालं पियालमालूरसायसालं ॥१॥
वणु विडंगणेवत्थहिं[2] छइयउ पियमाणुसु[3] व सरसु[4] कंटइयउ।
णिग्गोसोयउ कंचणवंतउ बंधुपुत्तजीवेहिं महंतउ।

---

२ MBP नग्गु। ३. B मेल्लावइ। ४. BP खेल्लावइ।

१३. १ MBB भमिऊणं। २ MBP जीवाजीव°। ३. MBP °जमसिहि महुं। ४ P णिद्धंधसु, T णिद्धसु and gloss निष्परिग्रहः। ५. P हिययहिं। ६. P अणमणु। ७. MBP वित्तिसंख ओमोदर।
८ MP दर। ९. MBP जोवइ। १०. B अवायविरय।

१४. १ B तो। २ M विडंगणे वत्थहिं; B विडंगणेवच्छहिं। ३. MBP °माणुसु। ४. P सरसु। ५. MB [illegible]।

ऋजु और वक्र हृदयके द्वारा विचारित अर्थको जाननेवाला चौथा ज्ञान स्वामीको प्राप्त हो गया। वे पचीस व्रतोंकी भावना करते हैं, तीन गुप्तियोसे अपनी रक्षा करते हैं, वे ईर्यादान करते है और कुछ निक्षेपण करते हैं और कृत-सुकृतकी आलोचना करते है। रोष, लोभ, भय और हासका नाश करते हैं, संगका त्याग करते है, सूत्रोंकी व्याख्या करते है, मित योग्य और अनुज्ञात भोजन हाथमें ग्रहण करते हैं, और सन्तोष मानते हैं। नारियोंकी कथा दर्शन और संसर्ग तथा पूर्वरतिके रंगसे निवृत्ति करते हैं, कहीं भी अत्यन्त निर्विकार आहार ग्रहण करते हैं, और गुणोंसे युक्त ब्रह्मचर्य धारण करते हैं।

घत्ता—इन्द्रियरूपी खलोंको मिलनेपर परमयोगी उन्हें ध्यानमे मिलाते है, और क्षुब्ध होते हुए मनरूपी बालकको ज्ञानसे खिलाते है ॥१२॥

१३

हे चित्तरूपी बालक, तू नारीरूपमे रमण मत कर। रमण करके तू शीघ्र ही मोहकूपमें पड़ेगा कि जो (मोहरूप या नारीरूप) जड़ और चेतन वस्तुओंके भेदके आश्रयरूप, इन्द्रियोंका पोषण करनेवाला तथा विरसताका घर है। जिनके व्रतोंकी अग्नि, संयमकी वायुसे वृद्धिको प्राप्त हुई है, जो परिपहोसे रहित है, तामस भावसे दूर है, और स्पृहासे शून्य है, जिन्होंने दर्शन, ज्ञान, चरित्र और तपको पुष्ट किया है और जो पांच प्रकारके आचार है, उन्हें प्रेरित किया है। इन आचारोंसे आदरणीय जिन प्रतिदिन बढ़ते है और हृदयसे तीन प्रकारकी शल्योंको दूर करते है; अनशन, वृत्तिसंख्या, अवमौदर्य, रसपरित्याग, त्रिकालयोगका आदर इस प्रकार वह बारह प्रकारके कठोर तपका आचरण करते है, जो अन्तरंग चित्तशुद्धिका कारण है। वैयावृत्य, विनय, सद्ध्यान, कायोत्सर्ग और प्रायश्चित-नियोजन इस प्रकार आभ्यन्तर तपमे आत्माको युक्त करते है। चार प्रकार धर्मध्यान करते हैं,। शब्दोच्चरणसे रहित, आज्ञाविचय (द्वादशांग आगमोका हृदयमे चिन्तन) और फिर महार्थक अपायविचय (मिथ्यादर्शन, ज्ञान, चारित्रादिसे जीवकी रक्षाका उपाय हो, इस प्रकारका चिन्तन); और भी वह विपाकविचयका विस्तार करते हैं। (कर्म-विपाकका चिन्तन करना) और वह लोक संस्थान (लोककी संस्थितिका चिन्तन) की अवधारणा करते हैं।

घत्ता—इस प्रकार सिद्धिरूपी वरांगनामे अनुरक्त प्रभु धरतीके अग्रभागपर विहार करते हुए एक हजार वर्षमें पुरिमतालपुर पहुँचे ॥१३॥

१४

उन्होने लवंग-लवली लतागृहों और भ्रमरोसे युक्त प्रियाल, मालूर, साय और सालवृक्षोसे युक्त वन देखा, जो प्रिय मानुषकी तरह, विडंगने पथ्यों (विड़ग वृक्षोंरूपी आभरणोसे; विटों (कामुको) के अंगोके आभरणो) से आच्छादित था, जो नित्य अशोक और कांचन वृक्षोसे (प्रिय मानुष पक्षमें, शोक रहित और कंचनसे युक्त) था, जो बन्धु-पुत्रोके जीवनसे (वन पक्षमे वृक्ष विशेष)

५ रेहइ कुलु व समुण्णइपत्तउ रक्खसपुरु व पलासणिवत्तउ।
सुरभवणु व रंभाइ पसाहिउ उज्झाउ व सुयसत्थहिं सोहिउ।
सुइवयणु व चंगउ णिच्चफ्फलु संगामु व वणवियसियउप्पलु।
णयणु व अंजणेण सोहिल्लउ थणजुयलु व चंदणिण पियल्लउ।
रमणिणिडालु व तिलयालंकिउ बहुबाहु व करवंदहिं संकिउ।
१० तालें तूरु व सज्जें गेउ व मंदें सोहइ णिवइणिकेउ व।
णायवेल्लिरुद्धउ पायालु व रत्तयंददाविरउ वियालु व।
अवसद्दु व कइवंदें लुक्कउ असि व मुणीरें णेय विमुक्कउ।
महिमाणिणिमुहुं[11] व महुलित्तउ सरयणभमियमुयंगहिं भुत्तउ।
घत्ता—कुसुमामोयमिसेण जं संमुहउं[12] पवच्चइ[13]॥
१५ णाणापक्खिसरेहिं पहुहिं थोत्तु णं मुच्चइ॥१४॥

१५

हेला—तहिं णंदणवणम्मि णग्गोहरुक्खमूले।
आसीणो सिलायले णिम्मले विसाले॥१॥
णवकणियारकुसुमरयवण्णउ सुयरइ[1] पहु पलियंकणिसण्णउ।
णत्थि सोक्खु संसारि विसिट्ठउ सोक्खायारु दुक्खु मइं दिट्ठउ।
५ णट्टु[2] अजिण्णणासु णउ चंगउ आहरणें भारिज्जइ अंगउ।
कामु देहघट्टणु[3] रीणत्तणु गेयमिसेण रुयइ[4] मूढउ जणु।
तं सिवसारु किं पि भाविज्जइ जेण ण जीउ गब्भि उप्पज्जइ।
सोवंगाहु[5] वीरिउ सुहुमत्तणु सहुं समत्तें णाणु सदंसणु।
अगरुयलहुयउ[6] अव्वाबाहउ झायइ वसुविहु सिद्धगुणोहउ।
१० एम सामि संभावियमग्गउ अप्पमत्ति गुणठाणि व लग्गउ।
तहिं दहपयडिहिं मुक्कउ जावहिं खणि अउव्वु आरूढउ तावहिं।
लग्गउ सुक्कझाणि पहिलारइ भेयवंति ससुए सवियारइ।
इसिणा संठिएण सविहत्तउ अणियट्टिहिं[7] छत्तीस[8] जि जित्तउ।
सुहुमसंपरायउ पावेप्पिणु तेण जि झाणे लोहु हणेप्पिणु।
१५ पुणु जायउ उवसंतकसायउ कयय हलेण जलु व मुणिरायउ।
खीणकसायचरिउ[9] पडिवण्णउं वीयउ सुक्कझाणु अवइण्णउं।
तं सवियक्कु एक्कु[10] सवियारउ सोलहपयइरयक्खयगारउ।
घत्ता—इय तेसट्ठिपईहिं पहयहिं णाणसरूवउ॥
परमप्पयहु सहाउ असणु अणिंदिउ हूवउ॥१५॥

---

६. P समुण्णय° । ७. MBP सुयसत्थें । ८ MP रमणिणिलाडु । ९. P मंदें । १०. MBP कइवरहिं । ११ MBP °मुह इव । १२ M समुहउ । १३. B परच्चइ ।

१५ १. MP सुमरइ । २. M णट्टु व जिण्ण° । B णट्ठु अजिण्ण° । ३ MBP °घट्टण° । ४. MBP रुवइ । ५ P सोवग्गहु । ६ MBP अगुरुग° । ७. MP अणियट्टिहि । ८. P छडिवि । ९ MBP °चरिउ । १०. MBP अवियारउ ।

महान् था। जो कुलके समान समुन्नतिको प्राप्त होकर शोभित था। वह निशाचर-नगरकी तरह पलाससे युक्त (पलाश वृक्षोसे युक्त, मांसभोजनसे युक्त) था। जो सुर भवनके समान रम्भादि (अप्सराओं, वृक्षों) से प्रसाधित था। अयोध्याके समान सुयसत्थों (शुकसमूहों, छात्रसमूहों) से सहित था। जो श्रुतिवचनके समान (नित्य फलवाला और सुन्दर) था, संग्रामकी तरह वन वियसिय-उप्पलु (जलमें विकसित कमलवाला; व्रणोंसे ऊपर उछलते हुए मांसवाला) था, नयनके समान जो अंजन (आंजन वृक्ष विशेष) से शोभित था, जो स्तनयुगलके समान चन्दन (वृक्ष विशेष और चन्दन) से प्रिय था, रमणीके ललाटकी तरह तिलक (वृक्ष विशेष और तिलक) से अंकित था, जो सहस्रबाहुकी तरह करवृन्दो (करों तथा करौंदी वृक्षों) से व्याप्त था; जो तूर्यके समान ताल (वृक्ष और ताल) से, और सज्ज (सर्ज वृक्ष विशेष एवं षड्ज स्वर) से गीतके समान, और मद्द (वृक्ष और जबर्दस्तीका युद्ध) से नृपतिके भवनके समान शोभित था, जो नागबेल्लि (नागोकी पंक्तियो और लता विशेषों) से पातालकी तरह; तथा सन्ध्याकी तरह रत्तयन्द दाविरउ (लाल चन्द्रमा दिखानेवाला, रक्तचन्दन दिखानेवाला) था। जिसे अपशब्दके समान कविवृन्दों (कवि समूह, वानर समूह) ने छिपा रखा था। जी तलवारके समान (सुनीरसे मुक्त) नहीं था। महीरूपी भामिनीके मुखके समान जो मधुसे लिप्त था, और रत्नोंसे सहित भुजंगों (साँपों एवं गुण्डों) से भुक्त था।

घत्ता—जो कुमुदोंके आमोदके बहाने वह उद्यान जो कुछ कहता है, वह मानो नाना पक्षियोंके स्वरोंके द्वारा प्रभुको स्तोत्र कहता है ॥१४॥

१५

उस नन्दनवनमें वटवृक्षके नीचे विशाल चट्टानपर बैठे हुए, नये कनेरकी कुसुमरजके समान रंगवाले तथा पद्मासनमे स्थित प्रभु सोचते हैं—"संसारमें विशिष्ट सुख नहीं है, सुखके आकारमें मैंने दुःख ही देखा है। अक्षयका नाश करनेवाला यह नाट्य अच्छा नहीं है। गहनोंसे शरीरका भार बढ़ाता है, काम देहका संघर्षण और क्षय। गीतके बहाने मूर्ख जीव रोता है। इसलिए उसे शिवश्रेष्ठकी भावना करनी चाहिए कि जिससे यह जीव दुबारा जन्म न ले। वह अवगाह, वीर्य, सूक्ष्मत्व, समत्व, ज्ञान, दर्शन, अगुरुलघुत्व और अव्याबाधत्व सिद्धोंके इन आठ गुणोके समूहका ध्यान करते हैं। इस प्रकार स्वामी मोक्षमार्गकी सम्भावना कर अप्रमत्त गुणस्थानमे लगते हैं (आरोहण करते हैं), वहाँ जैसे ही दस प्रकृतियोसे[1] मुक्त होते हैं, वैसे ही वे एक क्षणमे आठवें अपूर्व करण गुणस्थानमे आरूढ़ हो गये। वह पहले शुक्लध्यानमे लीन हो गये, वितर्कविचार लक्षण और श्रुतज्ञानसे सहित उसमें लीन मुनि ऋषभने सविभक्त अनिष्ट छत्तीस प्रकृतियां जीत ली। फिर सूक्ष्म साम्पराय (१०वाँ गुणस्थानको प्राप्त कर और उसके ध्यानसे लोभको समाप्त कर, वह 'उपशान्त कषाय' हो गये। कतकफल जैसे जलमे होता है, उसी प्रकार वह हो गये। फिर वह क्षीण कषाय गुणस्थानमें स्थित हो गये और दूसरे शुक्लध्यानमें अवतीर्ण हुए। सोलह प्रकारकी प्रकृतियोके रजका नाश करनेवाले शुक्लध्यानका एकत्व वितर्क भेद।

घत्ता—त्रेसठ प्रकृतियोके नाश होनेपर मन रहित परमात्माके स्वभाववाले अनिन्द्य और ज्ञानस्वरूप हो गये ॥१५॥

---

१. अनन्तानुबन्धी आदि १० प्रकृतियां।

१६

हेला—ता दिट्ठं जिणेण तिजगं[1] पि एक्कखंधं ।
तिमिरुज्जोयवज्जियं गयणममियरंधं[2] ॥१॥

कमसाहणपडिखलणविहीणें एक्कें भावाभावपमाणें ।
सुहुमइं दूरंतरियइं दव्वइं पेक्खइ[3] जाणइ सहसा सव्वइं ।
५ भाणु व भूरिकिरणसंताणें सोहइ केवलि केवलणाणें ।
तहिं अवसरि जिणणाहभएण[4] व वीस तिण्णि अवरइं भणियइं णव ।
असहंताइं व गव्वु[5] अणिंदहं आसणाइं कंपियइं सुरिंदहं ।
सुरतरु साहाकर णच्चंति व कुसुमइं संतोसेण मुयंति व ।
संजायहिं[6] दसदिसिवहपूरहिं कप्पि कप्पि घंटाटंकारहिं ।
१० कण्णवडिउ णउ काइं वि सुम्मइ जोइसवासहिं विणिहयदुम्मइ[7] ।
णिग्गय सीहणाय गयदिग्गय वंतरेहिं[8] पडुपडह समाहय ।
संखझुणीहिं णाय संखोहिय अण्णें[9] अण्ण देव संबोहिय ।

घत्ता—उग्गइ णाणससंकि[10] अमियगुणेहिं पवंजिउ ॥
बहुविहतूररवेण जगसमुद्दु णं गज्जिउ ॥१६॥

१७

हेला—ता सक्केण चिंतिओ पीणियालिविंदो ।
संपत्तो जवेण एरावओ गइंदो ॥१॥

हारणीहारसुरसरितुसारप्पहो अद्धयंदाह[1]विद्दुमविहाणिहणहो ।
गलियकरडयलमयकसणगंडत्थलो[2] अमरगिरिसिहरसंकासकुंभत्थलो ।
५ कामचिंतागई कामरूवी चलो पबलपडिवक्खबलदलणदुम्महबलो ।
कंठकंदलपएसम्मि परिवट्टुलो दसणजुयलेहिं णयणेहिं महुपिंगलो ।
तंबतालूमुहो चारुतुच्छोयरो दीहरकरंगुलि[3] सरो व्व वरपुक्खरो[4] ।
दीहयरमेहणो[5] दीहउट्ठासओ दीहयरवालही दीहणीसासओ ।
सवणपल्लवपवणपडियमहुलिहउलो[6] चलणपडिवलणखलखलियपयसंखलो[7] ।
१० चावर्वसो महारावदुंदुहिसरो घुलियघंटाझुणी तसियदिसकुंजरो[8] ।
मुक्कसिक्कारकणसित्तसुरमेलओ लक्खणसुवंजणणिरंजणगुणालओ[9] ।

---

१६. १. MBP तिजयं । २ MBP add after this : फग्गुणमासि किण्हएयारसि, उत्तराढरिक्खि (P उत्तरसाढि रिक्खि) जइ जाणसि । तहिं उप्पण्णु णाणु परमेट्ठिहि, लोयालोयपयासणसेट्ठिहि । ३. MBP जाणइ पेच्छइ । ४ MB जिणु णाह° । ५ MB गव्व । ६. MB सइं जायहिं । P सहजायहिं । ७ P विणिहिय° but gloss विनिहत° । ८ MBP वितरेहिं । ९ MBP अण्णहिं । १० MBP अमय° ।

१७ १. P यद्धइंदाह° । २ P °करडयलकसण° । ३. MB दीहरगुलि° । ४ MBP सरो व्व वरपुक्खरो । ५ MBPT °मेहुणो । ६ M सवणपवणाहयपडियमहुलिहउलो, B सवणपडिवयणहयपडिय°; P नवणपवणाहयपाडियमहु° । ७ B °पडिचलणखलिय° । ८. M °दिसिकुजरो । ९. MP सुविंजण; B °सुयंजण° ।

१६

तब ऋषभ जिनने तीन लोकोंके एक स्कन्धके रूपमें देखा। अन्धकार और प्रकाशसे रहित अलोकाकाशको (देखा)। क्रमसे अर्थोंकी प्रतीति करानेवाली इन्द्रियोंकी बाधासे रहित तथा भावाभाव प्रमाणवाले एक केवलज्ञानसे वह सूक्ष्म दूर और पासकी द्रव्योंको देख लेते हैं और सबको जान लेते हैं। प्रचुर किरण परम्परासे जिस प्रकार सूर्य शोभित होता है, उसी प्रकार केवलज्ञानसे केवली ऋषभ जिन शोभित हैं। उस अवसरपर बीस, तीन और जो दूसरे नौ कहे जाते हैं, गर्व नहीं सहन कर सकनेवाले ऐसे अनिन्द्य देवेन्द्रोंके आसन काँप उठे। शाखाओंके हाथों-वाले कल्पवृक्ष नाच उठे। स्वर्ग-स्वर्गमें उत्पन्न हो रहे, दसों दिशापथोंको आपूरित करनेवाले घण्टोंके टंकार-शब्दोंके साथ, शाखाओंके हाथोंवाले कल्पवृक्ष जैसे नृत्य करते हैं और पुष्पोंका विसर्जन करते हैं। ज्योतिषवासी देवोंके द्वारा आहत नगाड़ोंकी ध्वनियोंसे कानोंको कुछ भी सुनाई नहीं देता। व्यन्तर देवोंने पट-पटह बजाये, सिंहनाद और गजनाद होने लगा। शंखोंकी ध्वनिसे नाग क्षुब्ध हो गये। इसी प्रकार एकसे दूसरे देव सम्बोधित हुए।

घत्ता—अनन्त गुणोंसे युक्त ज्ञानरूपी चन्द्रके उदित होनेपर बहुविध तूर्योंके आहत होनेपर विश्वरूपी समुद्र गरज उठा ॥१६॥

१७

तब इन्द्रने अपने मनमें विचार किया और भ्रमर समूहको प्रसन्न करनेवाला ऐरावत गजेन्द्र वेगसे वहाँ पहुँचा। जिसकी कान्ति हार, नीहार, गंगा और तुषारके समान उज्ज्वल है; जिसके नख अर्धेन्दु और विद्रुमके समान लाल हैं; जिसका गंडस्थल, कर्णतलसे झिरते हुए मदजल-से काला है, जिसका कुम्भस्थल सुमेरु पर्वतकी शिखरके समान है, जो कामकी चिन्ताके समान गतिवाला, कामरूप और चंचल है। जिसमें प्रबल प्रतिपक्षको सेनाके दलनका दुर्दम बल है, जो कण्ठ और कपाल प्रदेशमें गोल आकृतिवाला है; जो दशनों और दोनों नेत्रोंसे मधुपिंगल है, जो लाल तालु और मुखवाला है; सुन्दर और तुच्छ उदरवाला है, तथा दीर्घ कर और अंगुलियों-वाला। सरोवरके समान जिसकी श्रेष्ठ सूँड़ है। जिसकी दीर्घ शिश्न और दीर्घ चिबुक है। जिसकी दीर्घ पूँछ और दीर्घ निःश्वास हैं। जिसके कानोंके पल्लवोंसे आहत पवनसे मधुकरकुल गिर पड़ता है, जिसके चलने और मुड़नेसे पैरोंकी शृंखलाएँ झनझना उठती हैं, धनुषवंशीय, जो दुन्दुभियोंके समान महान् स्वरवाला है। जिसपर घण्टोंकी ध्वनियाँ हो रही हैं, जिससे दिग्गज भयभीत हैं, जिसने शीत्कारके जलकणोंसे देवसमूहको आर्द्र कर दिया है, जो लक्षणों, व्यंजनों और

धित्तसिंदूरधूलीरयालोहिओ कक्खणक्खत्तगेज्जावलीसोहिओ।
लक्खजोयणमहावड्डिभावड्डिओ दंसियारेहिं वीरेहिं परियड्डिओ।
झत्ति कल्लाणपयई समुद्धाइओ जत्थ संकंदणो तत्थ [10]संपाइओ।
१५ घत्ता—मयणिज्झरण झरंतु चमरहंसकुलसुंदरु॥
णं मायंगमिसेण आयउ वीयउ मंदरु॥१७॥

१८

हेला—बत्तीसवरवयणसोहिल्लओ रसंतो।
वयणविवरविणिग्गयट्ठट्ठदंतवंतो॥१॥

दंति दंति सरु सरि सरि पोमिणि पोमिणि जा तूसावियगोमिणि।
पोमिणियहि पोमिणियहि पोमइं तीस दोण्णि छडंयणरवरम्मइं।
५ णलिणि णलिणि तेत्तियइं जि पत्तइं णावइ जिणवरलच्छिहि णेत्तइं।
पत्ति पत्ति एक्केक्की अच्छर णच्चइ हावभावरसकोच्छर।
तं पेच्छिवि सुच्छायउ सेधुरु सच्छरु सासरु चडिउ पुरंदरु।
इंदसमिंदसमाण जि साहिय तायतिंस किर मंति पुरोहिय।
परिसदेव देवेसकुमारा आदरक्ख पुणु असिवरधारा।
१० चलिय अणीयतियससेणा इव लोयवाल दुग्गंतणिवा इव।
खिब्भिससुर पाडहिय पियारा अभिओय वि चल्लिय कम्मारा।
अवर पइण्णय पउर पयाणिह रिक्ख मियंक सूर तारा गह।
जक्ख रक्ख गंधव्व महोरय किंणर किंपुरिसा वि पिसायय।
भूयगरुडदीवुवहिकुमार वि अग्गिवाउतडिथणियकुमार वि।
१५ दिक्कुमार तवणीयकुमार वि णायकुमार वि असुरकुमार वि।
आइय अवंतहं सविमाणहुं पेल्लावेल्लि जाय णहि जाणहुं।
घत्ता—संदाणियउ गएहिं हरिणकलंकु अजुत्तउ॥
ससि करडयलणिहट्टु [10]मयचिक्खिल्लें लित्तउ॥१८॥

१९

हेला—अज्जि वि सो सुहाइ तेणे य कालियंगो।
जिणजत्ताहलेण मलिणो वि को ण तुंगो॥१॥

को वि भणइ भृंगु किं पहि ढोयहि वग्घु महारउ एंतु ण जोयहि।
को वि भणइ मो हत्थि म चोयहि जाउ सीहु किं मुहुं अवलोयहि।
५ को वि भणइ लइ अच्छमि लग्गउ हंसहु पक्खु वलहें भग्गउ।

---

१०. MBP सपाइओ।

१८. १. MBP °ट्ठट्ठदंतो। २. MB छडयणरविं रम्मइं। ३. MB °कुच्छर। ४. MBP सिंधुरु। ५ MB इंदसमहिंदसमाण। ६. MBP °सेणावइ। ७. MB णिवावइ; P णिवासइं। ८. MBP मयंक। ९. MB आवंतें, P आवेतहुं and gloss आगच्छताम्। १०. K °चिक्खल्लें।

१९. १. MBP अज्ज। २ MB तेणेय। ३ MBP मिगु। ४. MB जासु। ५. M महुं।

निरंजन गुणोंका घर है, जो फेंकी गयी धूलिसे लाल है, जो नक्षत्रमालाकी (घण्टावलियों) गीतावलिसे शोभित है, जो एक लाख योजनकी महावृद्धिसे विशाल है, जो महाव्रती और वीरोंके द्वारा परिवर्धित है, ऐसा वह कल्याणवाला महागज दौड़ा, और वहाँ पहुँचा जहाँ इन्द्र विद्यमान था।

घत्ता—मदका निर्झर बहाता हुआ, चमरोंरूपी हंसकुलोंसे सुन्दर वह ऐसा प्रतीत होता है मानो गजके बहाने दूसरा मन्दराचल आया हो ॥१७॥

१८

बत्तीस वरमुखोंसे शोभित गरजता हुआ प्रत्येक मुख-विवरसे निकले आठ-आठ दाँतोंवाला। प्रत्येक दाँतपर सरोवर। सरोवरमे कमलिनी, कमलिनी वह, जो महालक्ष्मीको सन्तोष देनेवाली थी, कमलिनी-कमलिनीमे कमल थे। तीस और दो, बत्तीस कमल थे जो भ्रमरोसे सुन्दर थे। कमलिनी-कमलिनी में उतने ही पत्ते थे, जैसे जिनवर लक्ष्मीके नेत्र हों। पत्ते-पत्तेपर एक-एक अप्सरा है। हाव-भाव और रसमें दक्ष वह नृत्य करती है। उस सुन्दर कान्तिवाले गजको देखकर, अप्सराओं और देवोंके साथ इन्द्र उसपर आरूढ़ हो गया। जो इन्द्रके सामानिक देव कहे जाते है, ऐसे तैंतीस प्रकारके मन्त्री, पुरोहित, स्पर्शदेव, देवेशकुमार और असिवर धारण करनेवाले आत्मरक्षक और अनीकदेव दुर्गान्तपालोकी तरह लोकपाल, किल्विष, पाटहिक (ढोलवादक), प्रियकारक, अभियोग और कर्मकार देव चले। और भी प्रचुर प्रकीर्षक प्रजाके समान (?) ऋक्ष, चन्द्र, तारा, ग्रह, यक्ष, राक्षस, गन्धर्व, महोरग, किन्नर, किंपुरुष, पिशाच, भूत, गरुड़, दीपकुमार, उदधिकुमार, अग्निवायु, तडित् और स्तनित कुमार, दिक्कुमार, स्वर्णकुमार, नागकुमार और असुरकुमार भी आये। अपने-अपने विमानोसे आते हुए आकाशमे विमानोकी रेलपेल मच गयी।

घत्ता—गजों द्वारा संघट्टित और सूँड़से रगड़ा गया चन्द्रमा मदकी कीचड़से लिप्त हो गया, उसे मृगलांछन कहना गलत है ॥१८॥

१९

आज भी इसीलिए वह काले अंगसे शोभित है। जिनवरकी यात्राके फलसे कौन मलिन व्यक्ति ऊँचा नही होता ? कोई कहता है "मृगको पथमे क्यों लाते हो। क्या मेरे आते हुए बाघको नही देखते ?" कोई कहता है—"तुम हाथीको प्रेरित मत करो। यह सिंह है, मुँह क्या देखते हो"।

को वि भणइ किं मूसउ चालहि महु मज्जारु[6] एंतु ण णिहालहि।
को वि भणइ मा वाहहि विसहरु पेक्खहि किं ण णउलु कररुहकरु।
को वि भणइ भो सणियउ चल्लहि चलउं[7] रिंछु गवएण म पेल्लहि।
को वि भणइ संकडि किं पइसहि सरहें महुं सारंगु म तासहि।
१० को वि भणइ आवेहि समिच्छउ[8] पूसउ पूसएण सहुं गच्छउ।
मोरें मोरु सवक्खीहूएं जाउ उलूवउ समउ उलूएं।
को वि भणइ वेसाणरदूरें वहउ वरुणु किं एत्थ वियारें।
को वि भणइ मारुय तुहुं ओसरु मा भंजहि मेरउ जलहरवरु।
को वि भणइ वोलउ आहंडलु पविरलतियसु होउ णहमंडलु।
१५ पच्छइ पुणु[9] अम्हइं जाएसहुं जिणचरणारविंदु पणवेसहुं।

घत्ता—काइ वि देविइ लइयउ करि णीलुप्पलु दीसइ॥
मउडुग्गयहिं सिएहिं ससिमणिकिरणहिं विहसइ॥१९॥

२०

हेला—अवरा सुरविलासिणी[1] गहियकुसुममाला।
णं बालासरूविणी मयणसत्थसाला॥१॥

अवरेक्का वि सचंदण दीसइ णं मलयइरिणियंबवणासइ[2][3]।
सोहइ अवर वि कुंकुमपिंडे पुव्वदिसा इव सिसुमत्तंडें।
५ अवर सदप्पण णं मुणिवरमइ अवर मयरचिंधें सरि णं रइ।
अक्खयधारिणि णं मोक्खहु सहि थणदुहडी णं सुहधणणिहि महि।
अवर सुसेयदेह णं सुरसरि अवर सहंसमोर णं गिरिदरि।
मलविरहिय अवर वि विज्जा इव अवर सुरहि पप्फुल्लियजाइ व।
णच्चइ अवर सरसु भावालउ गायइ अवर कूडतालालउ[4]।
१० वायइ अवर तंतिवज्जंतरु वण्णइ अवर परमतित्थंकरु।
एम पसण्णपसाहियवयणहिं अच्छरकोडिहिं चलमिगणयणहिं[5]।
सोहम्माहिउ सत्तावीसहि ईसाणु वि परिमिउ चउवीसहि।
एम देव संचल्लिय जावहिं धणएं समवसरणु किउ तावहिं।
इंदाणइ तं णिम्मिउं जेहउ मइं जडेण किं सीसइ तेहउ।

१५ घत्ता—वारहजोयणरुंदु हरिणीलें तलु बद्धउ॥
परिवट्टलउ विसुद्धु धूलीसालउ णद्धउ[6]॥२०॥

---

६ MBP मज्जारउ। ७ MBP चरउ। ८ MB समुच्छउ; P सइमुच्छउ, but gloss सम्यगिच्छामि। ९. MBP अम्हइं पुणु।

२० १. MBP सुरूविणी। २ MB मलयगिरि°। ३ MBPT add after this line : का वि गहियकत्थूरय (P कत्थूरिय) वररइ, सामलंगि णावइ घणघणतइ (B घणवणतइ); T also notes a p· घणघणतइ ति पाठे निविडमेघपंक्ति। ४. MP °तालालउ। ५ MBP °मिग°। ६ B णट्ठउ।

कोई कहता है—"लो मै यह हूँ। हंसका पक्ष बैलसे नष्ट कर दिया है"। कोई कहता है—"चूहेको क्यों चलाते हो, क्या मेरे आते हुए बिलावको नहीं देखते"। कोई कहता है—"विषधरको मत चलाओ, रक्तरंजित हाथवाले नकुलको नहीं देखते"। कोई कहता है—"तुम धीरे-धीरे चलो, रीछ। गवयसे मत भिड़ो"। कोई कहता है—"भीड़मे प्रवेश मत करो। अपने शरमसे मेरे सारंगको पीड़ित मत करो।" कोई कहता है—"आओ हम अच्छी तरह चलें। तोते तोतेके साथ चले। स्वपक्षीभूत मोरके साथ मोर, और उलूकके साथ उलूक"। कोई कहता है—"वैश्वानर (आग) से दूर रहनेवाले वरुणको आगे बढाओ, यहाँ विचार करनेसे क्या ?"। कोई कहता है—"हे पवन, इस समय तुम्हारा अवसर है, तुम मेरे मेघतरुको भग्न मत करो।" कोई कहता है—"हे इन्द्र ! बोलो, आकाश देवोंसे भरा हुआ है, इसलिए हम बादमें आयेंगे, और जिनवरके चरण-कमलोंकी वन्दना करेंगे।"

घत्ता—किसी देवीके द्वारा हाथमें लिया गया नीलकमल दिखाई देता है, मानो वह भुकुटोके अग्रभागमे लगे चन्द्रमणि किरणोंके द्वारा हँसा जा रहा हो ॥१९॥

२०

एक दूसरी देवविलासिनी हाथमे कुसुममाला लिये हुए ऐसी ज्ञात होती है, मानो कामदेवकी सुन्दर छोटी-सी शस्त्रशाला हो। एक और स्त्री चन्दन सहित दिखाई देती है, मानो मलयगिरिके तटबन्धपर लगी हुई वनस्पति हो। एक दूसरी केशरपिण्डसे इस प्रकार मालूम होती है, मानो बालसूर्यसे युक्त पूर्व दिशा हो। एक और दूसरी दर्पण सहित ऐसी मालूम होती है, मानो मुनिवरकी मति हो। एक और दूसरी कामदेवके चिह्नसे रतिको समान जान पड़ती थी। अक्षत (चावल, जिसका कभी क्षय न हो) धारण करनेवाली कोई ऐसी मालूम हो रही थी मानो मोक्षकी सखी हो। ऊँचे स्तनोंवाली कोई ऐसी मालूम होती थी, मानो शुभघन (कलश) वाली भूमि हो। एक और प्रस्वेदयुक्त शरीरवाली ऐसी लगती थी, मानो गंगानदी हो। एक और हंस तथा मयूरसे सहित ऐसी लगती थी मानो गिरिघाटी हो। एक और मलसे रहित, विद्याके समान थी। एक और खिली हुई जुही पुष्पकी तरह सुरभित थी। एक और सरस और भावपूर्ण नृत्य करती है, एक और कूटतानमे भरकर गाती है। एक और वीणा वाद्यान्तर बजाती है, एक और परम-तीर्थंकरका वर्णन करती है। इस प्रकार प्रसन्न और प्रसाधित मुखो और चंचल मृग नेत्रोवाली सत्ताईस करोड अप्सराओंसे घिरा हुआ सौधर्म्य इन्द्र, तथा चौबीस करोड़ अप्सराओसे घिरा हुआ ईशान इन्द्र चला। इस प्रकार जबतक देव चले, तबतक कुबेरने समवसरणकी रचना कर दी। इन्द्रकी आज्ञासे उसने जिस प्रकार उसे बनाया, मुझ जड़ कवि द्वारा उसका किस प्रकार वर्णन किया जा सकता है ?

घत्ता—बारह योजन विशाल जिसका तलभाग इन्द्रनील मणियोंसे निबद्ध था—गोल विशुद्ध वेष्टित परकोटेवाला ॥२०॥

२१

हेला—मोत्तियदसणहसियसुरणाहचावलीलो ।
रयणपंसु[1]विणिम्मिओ सहइ धूलिसालो ॥१॥

सुयपिच्छें[2]च्छवि कहिं मि विरेहइ   कत्थइ अंजणपुंजु व सोहइ ।
कत्थइ लोहिउ[3] संझाराउ व   कत्थइ पंडुरु कुंदणिहाउ व ।
५ अब्भंतरि जगईउ पहाणउ   ताउ होंति सोलह सोवाणउ ।
चउगोउरभूसियउ तिसालउ   पसरियणाणामणियरजालउ ।
माणखंभ ताहुप्परि संगय   सघय[4] सचामर[5] सघंटा णं गय ।
चउहुं मि दिसहिं चयारि समुण्णय   दंसणमेत्तेण जि हयजयमय ।
अरुहणाहपडिमापरिवारिय   फणिदाणवमाणवजयकारिय ।
१० पुणु वावीउ[6] सकमल ससलिलउ   खगमाणियउ णाइं खगमहिलउ ।
तीररयणकरमंजरिदित्तउ   चउपइयापरियम्मविचित्तउ ।
कुवलयधारिउ णं णिवसत्तिउ   भमियरहंगउ णं रइजुंत्तिउ[7] ।
दिसधाइयपाणियकल्लोलउ   पुणु खाइयउ रमियझसमालउ ।

घत्ता—पहसियसररुहएहिं वाउग्गयतिगिंछिहिं[8] ॥
१५ परिहउ णाइं णियंति देवागमणु चलच्छिहिं ॥२१॥

२२

हेला—जोहि[1] महिउ रईए हंसीहिं[2] मत्तहंसो ।
सुरवहुकरिणियाहिं[3] सुरहत्थिहत्थफंसो ॥१॥

पुणरवि अंतरि णवदुमवेल्लिउ   कुसुमालउ णं वम्महभल्लिउ ।
पंत्तिहिं[4] रत्तउ णं वरवेसउ   फलणमियउ णं सुहिपरिहासउ ।
५ कंटइयउ णं पियसमिलियउ   णच्चंति व मारुयसंचलियउ ।
णं वरकइवायउ कोमलियउ   लाडालावहु पासिउ ललियउ ।
वित्थरियउ अहिणवरससारउ   णं कामुयमईउ सवियारउ ।

---

२१. १. P पंसुणिम्मिओ । २. MB °पिंछ; P पुंछ । ३. MBP सोहइ । ४. B सवय । ५. MBK सचमर ।
६. MBP वावियउ । ७. M णिवजुत्तिउ; B °जोत्तिउ । ८. M तिगिच्छिहिं. B तिगिंछहिं; P तिगिंछहिं ।

२२. १. P जाहिं and gloss यानु खातिकासु । २ M हंसहिं । ३. MBP करणियाहिं । ४. MBP पत्तहिं ।

२१

अपने मोतियोंके दाँतोंसे इन्द्रधनुषकी लीलाका उपहास करनेवाला रत्नधूलसे रचित धूलि-साल शोभित था। कहींपर तोतोंके पंखोंकी छविसे शोभित होता है, कहींपर अंजनके समूहके समान शोभित है, कहींपर सन्ध्यारागके समान शोभित है। कहींपर कुन्दपुष्पोंके समूहके समान सफेद है। उसके भीतर एकके ऊपर एक तीन पीठ हैं, उनमें सोलह सोपान हैं। चार गोपुरोंसे भूषित तीन परकोटे है, जिनमे तरह-तरहके मणियोंके जाल फैले हुए हैं। उसके ऊपर मानस्तम्भ है। ध्वजों, चामरों और घण्टोंसे युक्त जो मानो गज हों। चारों दिशाओंमें चार समुन्नत मान-स्तम्भ स्थित हैं, जो दर्शनमात्रसे जयके मदका अपहरण करनेवाले हैं। जो अरहन्तनाथकी प्रति-माओंसे घिरे हुए हैं और जिनका नाग, दानव और मनुष्य जयजयकार कर रहे है। फिर जल और कमलों सहित सुन्दर वापियाँ है। पक्षियोंके द्वारा मान्य, जो ऐसी लगती है मानो खग महिला हों। जो तीरोमें विजड़ित रत्नोंकी किरणरूपी मंजरियोंसे आलोकित और चतुष्पथोंके रचना कमँसे विचित्र हैं। जो मानो कुवलयधारक (कमल, पृथ्वीरूपी मण्डल) नृपशक्ति है, जो मानो भ्रमितरथ (चक्रवाक , रथका पहिया) रथकी युक्ति है। दिशाओंको छूनेवाली, पानीकी लहरों-वाली, और क्रीडा करती मछलियोंसे युक्त खाई है। रत्नोंकी धूलिसे विनिर्मित तथा अपने मुक्ता-रूपी दाँतोंसे इन्द्रके धनुषकी लीलाका उपहास करनेवाला जिसका परकोटा सोह रहा था। कहीपर शुकपंखोकी छविवाला शोभित होता है, और कही अंजन समूहके समान शोभित होता है। कही सन्ध्यारागकी तरह लोहित (आरक्त) है, कहींपर कुन्दपुष्पोके समूहके समान सफेद है। उसके भीतर एकके ऊपर एक तीन पीठ हैं और उनकी सोलह-सोलह सीढ़ियाँ हैं, चार गोपुरों-से भूषित त्रिशालाएँ हैं जो नाना प्रकारके मणियोंके किरणजालसे प्रसरणशील हैं, उनके ऊपर मान-स्तम्भ है जो मानो ध्वजों, चामरो और घण्टोंसे सहित गज हैं। वे चारों दिशाओमे चार खड़े हुए है जो देखने मात्रसे जयके अहंकारको चूर-चूर करनेवाले हैं। अरहन्तनाथकी प्रतिमाओसे घिरे हुए तथा नागो, दानवो और मनुष्योंके द्वारा जयजयकार किये जाते हुए। फिर वहाँ कमलों और वापिकाओंसे सहित वापिकाएँ हैं, जो मानो पक्षियोंके द्वारा मान्य खगस्त्रियाँ हो। जो तीरोके रत्नकिरणोकी मंजरियोंसे दीप्त, चारो ओरकी सीढ़ियोंकी परिक्रमासे विचित्र हैं। जो मानो नृप-शक्तिकी तरह कुवलय (नीलकमल भूमिमण्डल) को धारण करनेवाली, तथा रथकी युक्तिकी तरह घूमते हुए रथांगों (चक्रवाकों और चक्रों) वाली थी। जो दिशाओंमें दौड़ते हुए जलोंकी लहरोसे रमण करती हुई मत्स्यमालाओंसे युक्त थी।

घत्ता—हँसते हुए कमलों तथा हवाके लिए बाहर आते हुए मत्स्योके बहाने जो अपनी चंचल आँखोसे मानो देवागमन देख रही हैं ॥२१॥

२२

जहाँ रतिके द्वारा (काम), हंसिनियोंके द्वारा मत्त हंस और सुरवधुओंकी हथिनियोंके द्वारा ऐरावतकी सूँड़का स्पर्श चाहा जा रहा है। भीतर फूलोंकी घर नवद्रुम लताएँ मानो कामकी भल्लिकाओंके समान है। जो पत्रों (पत्तो और पत्ररचना) से मुक्त मानो वरवेश्या हैं। जो सुधीजनोके परिहासके समान फलोंसे नमित है। जो प्रियतमसे मिले हुएके समान कंटकित (रोमांचित) है, हवासे संचालित होनेके कारण जो जैसे नृत्य कर रही हैं। जो मानो श्रेष्ठ कविकी वाणीके समान कोमल हैं, जो लाटालंकारके आलापोसे भी अधिक सुन्दर हैं। जो अभिनव रससारकी तरह विस्तृत हैं, जो मानो कामुकोंकी मतियोंकी तरह विकारोसे युक्त हैं। वहाँपर

का वि वेल्लि तहिँ वेढइ कंचणु सयल वि णारि समीहइ कंचणु।
लग्गी का वि ललंति असोयइ जिह तूय तिह किर रमइ असोयइ।
१० लग्गी का वि गंपि पुण्णायहु होइ णियंबिणि फुडु पुण्णायहु।
क वि मायंदहुं संगु ण खंचइ णिवरोहिणिहि लील णं संचइ।

घत्ता—किसलयदलफलगोंछु चलचंचुइ णिल्लूरइ॥
अमरु कीरवेसेण तेत्थु को वि रइ पूरइ॥२२॥

२३

हेला—चिंतियवेसधारिणो जणियकामभावा।
वेल्लीवणलयाहरे जहिँ रमंति देवा॥१॥

पुणु हिरण्णरइयउ रुइरिद्धउ णं जिणेण वयपरियरु बद्धउ।
अप्पवेसु णं कामकडक्खहु गुरुपायारु पारु णं दुक्खहु।
५ जहिँ चउगोउराइं संविहियइं जहिँ बहुमंगलदव्वइं णिहियइं।
अट्ठोत्तरसयसंखासहइं णव वि णिहाणइं ह्यदालिद्दइं।
तहिँ वितर पडिहारसमत्था भीयरकुलिसगयासणिहत्था।
पुणु पणिहिउ उहयम्मि विसालउ चउदिसु दो दो णाडयसालउ।
ताउ तिभूमिउ णवरसजुत्तउ णाइं पउत्तिउ सुकइपउत्तउ।
१० बहुवज्जउ वइरायरभूमिउ आयउ णं ओलग्गहुं सामिउ।

घत्ता—उहयदिसहिँ कुहिणीहि पुणु वि कथा वि ण णिट्ठिय॥
दो दो दिण्णसुधूव तहिँ धूवहड परिट्ठिय॥२३॥

२४

हेला—दीसइ गयणमंडले णीलधूमरेहा।
णं जिणकम्मकालिया भमइ मुक्कदेहा॥१॥

पुणु खयरामररामारमियइं चउणंदणवणाइं परिभमियइं।
वणि वणि विमलइं सरिसरपुलिणइं कीलागिरिवरकेलीभवणइं।
५ चउगोउरतिसालपरियरियउ पीढु तिमेहलु मणिविप्फुरियउ।
तित्थु असोउ असोयवणंतरि तहु पडिमाउ चयारि दियंतरि।
कोहमोहमयमाणे चत्तउ सीहासणछत्तत्तयजुत्तउ।
अत्थि अणेयदेवकयपुज्जउ णिहयणिरंगउ णिरु णिरवज्जउ।

---

५. MB जिह तिह किर; P जिह तिय तिह and gloss यथा स्त्री; K तूय but corrects it to तिय। ६. MBP अवसें णारि होइ पुण्णायहु। ७. BP खंचइ। ८. M अंचइ। ९. B गोच्छु। १०. MBP अमरु वि कीरमिसेण।

२३. १ B वल्लीवण°। २. MT पणिही; BP पणहीउ। ३. MBP सुकइणिउत्तउ। ४. MB सुधूय; P सुधूवा। ५ M धूवहडण।

२४ १ MBPT add after this : ककेल्लीचंपयसत्तयलहिं, संछण्णहिं साहारहिं सरलहिं।

कोई लता चम्पक वृक्षको घेर लेती है, (ठीक भी है) सभी नारियाँ स्वर्णकी आकांक्षा रखती है, चाहती हुई कोई लता अशोक वृक्षसे लग जाती है, और जिस प्रकार स्त्री अशोक (शोकरहित) मनुष्यसे रमण करती है, उसी प्रकार रमण करती है। कोई लता जाकर पुन्नाग वृक्षसे लग गयी, और स्फुट रूपसे पुन्नाग (श्रेष्ठ पुरुष) की गृहिणी बन गयी। कोई मायंद (आम्रवृक्ष) के साथ नहीं लगती मानो वह चन्द्रमा और रोहिणीकी लीलाको धारण करती है।

घत्ता—कोई देवता शुकके रूपमें पत्तों, दलों और फलके गुच्छोंको अपनी चंचल चोंचसे नोचता है, और इस प्रकार अपनी कामनाको पूरी करता है ॥२२॥

२३

अपनी इच्छाके अनुसार वेश धारण करनेवाले, तथा जिन्हें कामभाव उत्पन्न हो रहा है, ऐसे देवता जहाँ लतावनोंके लताघरोंमें रमण करते हैं। फिर विशाल प्राकार, स्वर्णसे रचित और कान्तिसे युक्त जो ऐसा लगता था, मानो जिन भगवान्‌ने अपने व्रतोंका परिकर कस लिया हो। जो कामके कटाक्षोंके लिए अप्रवेश्य था, और जो मानो दुखोंका अन्त था। जहाँ चार गोपुर-द्वार बनाये गये थे, जहाँ अनेक मंगल द्रव्य रखे हुए थे। एक सौ आठ संख्या शब्दोंवाले तथा दारिद्रय-का अपहरण करनेवाली नौ निधियाँ। जहाँ भयंकर वज्र और गदाएँ हाथमें लिये हुए व्यन्तर देव प्रातिहार्यका काम करनेमे समर्थ थे। फिर मार्गोंके दोनों ओर चारों दिशाओंमें दो-दो विशाल नाटकशालाएँ थीं। जो नवरसोंसे युक्त तीन भूमियोंवाली थी, सुकवियोंके द्वारा कही गयी उक्तियोंके समान। अनेक वाद्योंसे युक्त वैराग्यभूमियाँ थी जो मानो स्वामीकी सेवाके लिए आयी थीं।

घत्ता—मार्गकी दोनों दिशाओंमे अपनी-अपनी धूप देनेवाले दो-दो धूपघट स्थित थे जो कभी भी समाप्त नहीं होते थे ॥२३॥

२४

आकाशमण्डलमे नीली धूमरेखा ऐसी दिखाई देती है मानो जिनके कर्मसे काली वह मुक्त देह घूम रही हो। फिर विद्याधरों और देवोंकी स्त्रियाँ जिनमे रमण करती है ऐसे चार नन्दन वन रच दिये गये। प्रत्येक वनमे नदी और सरोवरके किनारे हैं, क्रीड़ा पर्वत श्रेष्ठोंपर केलीभवन हैं। चार गोपुर और तीन परकोटोंसे घिरा हुआ तीन मेखलाओंवाला तथा मणियोंसे चमकता हुआ पीठ है। वहाँ अशोकवनके भीतर अशोक हैं, चारों दिशाओंमें वहाँ प्रतिमाएँ हैं। क्रोध, मोह, मद एवं मानसे रहित जो सिंहासन और तीन छत्रोंसे युक्त है। जिनकी अनेक देवोंसे पूजा की गयी है,

संझा इव सुवण्णरुइराइय[2] पुणरवि चउदुवारवणवेइय[3]।
१० पुणु दिसि दिसि दह धय सुरसंथुय थिय गयणयललग्ग पवणुद्धुय।
मालावत्थमोरकमलंकहिं हंसगरुडहरिविसकरिचक्कहिं।
भूसियपडिधयपहपइरिक्कहु अट्ठोत्तरु सउ सउ एक्केक्कहु।

घत्ता—अण्णहु कासु तिलोए सोहइ णहि घोलंतउ ॥
कुसुमसालधउ तासु कुसुमाउहु जे जित्तउ ॥२४॥

२५

हेला—कहइ व किंकिणीण घोसेण घोलमाणो।
अहमिह सकुसुमो वि ण हु होमि कुसुमबाणो ॥१॥

देव देव मा महु रूसेज्जसु कुसुमकरालहु करुण करेज्जसु।
जो अंबरु तवचरणि ण भावइ अंबरचिंधु तासु ध्रुवु[1] आवइ।
५ जो सिहिवेसु कया वि ण इच्छइ सिहिजयंति सो अवसें पेच्छइ।
जो णिवकमलहि होइ परंमुहु तहु कमलद्धउ णिच्छउ संमुहु।
परमहंसु जो सच्चउ बुज्झइ हंसु तासु धइ केम विरुज्झइ।
अमयबंभपउ जो जइ दावइ विणयासुयवडाय सो पावइ।
सीहेणेव जेण वणु सेविउ सीहचिंधु तहु केण ण भाविउ।
१० जेण ण पसु धाइउ णियमग्गइ तासु जि वसहु थाइ चिंधग्गइ।
पसुवइ सो ज्जि भडारउ वुच्चइ दुट्ठ अवरु किं अप्पउ मुच्चइ।
जो पंचिंदिय दुद्दम पीलइ पीलु तासु धयवडु अणुसीलइ।
मोहचक्कु जें चप्पिवि चूरिउ [2]चक्कु चिंधु तहु होइ अवारिउ।

घत्ता—पुणु पायारु विचित्तु चउदुवार सुपसत्थ ॥
१५ जहिं थिय णायकुमार मरगयदंडविहत्थ ॥२५॥

२६

हेला—पुणु वि धूवदोहडी[1] पवरणट्टसाला।
अहिणवभावसोहिया ताउ णवरसाला ॥१॥

उव्वसिरंभतिलोत्तिमणामउ जहिं णडंति तियसाहिवरामउ।
पुणु दीहर दहविह कप्पदुदुम दरिसियभोयसार णिरु णिरुवम।
५ पुणु वेइय कलहोयहु[2] केरी पियकंता इव सुहइं जणेरी।
पुणु वि दुवारइं पुण्णपवित्तइं दरिसावियबहुमंगलवत्तइं।
णिच्चु जि कीलियसुरसंघायहं भंभाभेरिपडहणिणायहं[3]।
पुणु पओलि लंघिवि पासायहं पंति हारतारासुच्छायहं।
पुणु थूहइं मणितोरणमालउ[4] पुणु फलिहमउ सालु सुविसालउ।

२. MBP राइउ। ३. MBP वेइउ।
२५. १. MBP धुउ। २. MBP चक्कचिंधु।
२६. १. MBP पुणरवि धूयदोउडी। २. B कलहोइय। ३. MBP णिण्णायहं। ४. MBP पुणु तोरण।

जिन्होंने कामको नष्ट कर दिया है, और जो पापरहित हैं। सन्ध्याके समान स्वर्णकान्तिसे निर्मित, फिर भी चार द्वारवाली वनदेवियां हैं। फिर दिशा-दिशामे देवताओंसे संस्तुत, आकाशको छूती हुईं, हवासे उड़ती हुईं दस ध्वजाएँ स्थित है। माला, वस्त्र, मोर, कमलों, हंस, गरुड, हरि, वृषभ, गज और चक्रोसे भूषित पटध्वजोंकी प्रभासे प्रचुर एक-एकपर एक सौ आठ ध्वज हैं।

घत्ता—आकाशमे उड़ती हुई कुसुममाला ध्वजा त्रिलोकमें क्या किसी दूसरेके लिए सोह सकती है, केवल उसके लिए सोह सकती है कि जिसने कामदेवको जीत लिया है ॥२४॥

२५

मानो वह ध्वज किंकिणियोंके आन्दोलित घोषसे कहता है कि मै वहाँ कुसुम सहित होकर भी कुसुमबाण (कामदेव) नही हूँ। हे देवदेव, मुझपर क्रोध मत कीजिए। कुसुमोसे कराल मुझपर करुणा करें, जो अम्बर (वस्त्र) तपश्चरणमे अच्छा नही लगता, उसके लिए निश्चित रूपसे वस्त्रध्वज आता है; जो स्त्रीवेषको कभी भी नही चाहते वह मयूरपताका अवश्य देखता है; जो राजारूपी कमलसे पराङ्मुख है उसके सम्मुख निश्चय ही कमलध्वज हैं। जो सच्चे परमहंस समझे जाते हैं ध्वजमे उनका हंससे कैसे विरोध हो सकता है। जो अमृत ब्रह्मपद दिखाता है, वह गरुडध्वज पाता है, सिंहके ही समान जिसने वनकी सेवा की है सिंहध्वज उन्हे क्यों अच्छा नही लगता। जिन्होने अपने मार्गमे पशुका आघात नही किया उनके लिए ध्वजके अग्रभागमे बैल स्थित है। वही आदरणीय पशुपति कहे जाते हैं, क्या और कोई दूसरा दुष्ट अपनेको क्यों शिव समझता है ? जो दुर्दम पांच इन्द्रियोंको पीड़ित करता है, गज उनके ध्वजपटका अनुशीलन करता है। जिसने मोहचक्रको चांपकर चूर-चूर कर दिया, बिना किसी प्रतिवादके चक्र उसका चिह्न होगा।

घत्ता—फिर चार द्वारोंवाला प्रशस्त और विचित्र परकोटा था। जहाँ पन्नोके दण्ड हाथमे लिये हुए नागकुमार देव खड़े हुए थे ॥२५॥

२६

फिर जिसमे धूपके दो घट हैं, ऐसी विशाल नाट्यशाला है। नवरसाला (नौ रसोवाली) वह, अभिनव भावोसे अत्यन्त शोभित है। जहाँ इन्द्रकी उर्वशी, रम्भा, तिलोत्तमा नामक नर्तकियाँ नृत्य करती है। फिर लम्बे दस कल्पवृक्ष हैं, श्रेष्ठ भोगोंको प्रदान करनेवाले अत्यन्त अनुपम। फिर स्वर्णकी वेदिका है जो प्रिय कान्ताके समान सुख देनेवाली है। फिर बहुमंगल द्रव्योको बतानेवाले द्वार है। जिनमें नित्य देवसमूह क्रीड़ा करता है और झंभा, भेरि और नगाड़ोंका निनाद हो रहा है ऐसे हारो और तारोके समान स्वच्छ प्रासादोंकी पंक्ति और प्रतोली लांघकर मणियोंके

१० मणुउत्तरगिरि व्व गरुयारउ कप्पदेवपरिरक्खियदारउ ।
सुद्धायासफलिहसंपत्तिउ तहु आलग्गिवि सोलह भित्तिउ ।

घत्ता—तहिं मंडवमज्झत्थु वेरुलिएहिं समारिउ ॥
सोलहपयठवणेहिं पीढु सुहाइ णिरारिउ ॥२६॥

२७

हेला—चउदिसु तासु उवरि कल्लाणदविणसारा ।
जक्खसुराहिवा वि सिरिधम्मचक्कधारा ॥१॥

अवरु हिरण्णवीढु तहु उप्परि अट्ठकेउपरिमिउ पयडियसिरि ।
रयणरहंगदुरयगोधारिहिं आरणालसुसिचयहरिणारिहिं ।
५ उरयवइरिदामयतणुअंकहिं सोहइ धयहिं गलियमलपंकहिं ।
पुणु वि तितीरु रइउ पीढुल्लउ तासुप्परि सीहासणु भल्लउ ।
जंवुण्णयचामीयरघडियउ विमलु समंतभद्दमणिजडियउ ।
मरगयणिम्मियदीहरदिव्वहिं सहइ लट्ठि कक्केयणपव्वहिं ।
छत्तइं तिण्णि ताइं उद्धरियइं णिम्मलाइं णं णाहहु चरियइं ।
१० दिसिगयपंडुरकरणिउरंवइं तिण्णि वि णावइ ससहरबिंबइं ।
भामंडलु मंडलु णं भाणुहि अइ आसंकेप्पिणु सव्भाणुहि ।
णिण्णासियदुद्दंसणदिट्ठिहि सरणु पइट्ठउ णं परमेट्ठिहि ।
रत्तपुप्फथवएहिं पसाहिउ जिणमणणिग्गउ राउ व राइउ ।
कंकेल्लि वि पल्लवसोहिल्लउ मत्तसकुंतमिहुणु रमियल्लउ ।
१५ जिह जिह देवहुं दुंदुहि वज्जइ तिह तिह धम्मजलहि णं गज्जइ ।

घत्ता—णं आघोसइ एम दुंदुहिसरेण गहीरें ॥
[10]पणवहो तिहुयणणाहु जें मुच्चहु संसारें ॥२७॥

२८

हेला—अविरलकुंदकुडयमंदारपंकयाइं ।
सभमरमिंदुवारकणियारचंपयाइं ॥१॥

जिह जिह कुसुमइं पडियइं गयणहु तिह तिह फरसरणिवडियमयणहु ।
[illegible] पीयेपासपडियाइं व हंसइं ।
५ [illegible] गुणठाणारुहणाइं व विमलइं ।

तोरणमालाओंसे युक्त स्तूप है। फिर स्फटिकमय विशाल साल (परकोटा), मानुषोत्तर पर्वतके समान विशाल, जिसका द्वार कल्पवासी देवोंके द्वारा रक्षित है। वहाँसे लेकर शुद्धाकाशके समान स्फटिक मणियोंसे बनी हुई सोलह दीवालें हैं।

घत्ता—उनके ऊपर वैदूर्यमणियोंसे निर्मित मण्डपका मध्यभाग है, सोलह पद स्थापनाओंके द्वारा जिसका पीठ अत्यन्त शोभित है ॥२६॥

२७

उसके ऊपर चारों दिशाओंमे कल्याण और धनमे श्रेष्ठ तथा श्री और धर्मचक्रको धारण करनेवाले यक्ष और इन्द्र थे। उसके ऊपर एक और हिरण्यपीठ था, अपनी शोभाको प्रकट करता हुआ वह आठ ध्वजोंसे घिरा हुआ। चक्रवाक, हाथी, बैल, कमल, शोभा वस्त्र और सिंह, मयूर और पुष्पमालाओंसे चिह्नित ध्वजोंसे जो शोभित है। फिर भी तीन किनारोंसे (एकके ऊपर एक) पीठ निर्मित हैं। उसके ऊपर सुन्दर सिंहासन है। स्वर्ण और चाँदीसे निर्मित और समन्तभद्रमणिसे जड़ा हुआ। जिसकी यष्टि (हाथ टेकनेकी लकड़ी) मरकत मणियोंसे निर्मित स्फटिक मणियोंकी गाँठोंसे शोभित है। उसके ऊपर तीन छत्र उठे हुए थे जो नाभेयके चरितके समान सुन्दर थे। दिग्गजोंके समान सफेद किरण-समूहोंवाले वे चन्द्रबिम्बकी तरह शोभित हैं। भामण्डल मानो सूर्यका मण्डल है। जो मानो राहुसे अत्यन्त भयभीत होकर दुर्दर्शनीयोंकी दृष्टिका नाश करनेवाले परमेष्ठीकी शरणमे आ गया। अथवा जो लाल फूलोंके गुच्छोंसे प्रसाधित, तथा जिनके मनसे निकले हुए रागके समान शोभित है। जिसमें प्रसन्न पक्षियुग्म है, ऐसे पल्लवोंसे शोभित क्रीड़ा करते हुए अशोक वृक्षके समान। जैसे-जैसे देवके लिए दुन्दुभि बजती है, वैसे-वैसे मानो धर्मरूपी समुद्र गरजता है।

घत्ता—मानो वह गम्भीर दुन्दुभिके स्वरसे इस प्रकार घोषित करता है कि यदि संसारसे मुक्त होना चाहते हो तो त्रिभुवननाथको प्रणाम करो ॥२७॥

२८

अविरल कुन्द, कुटक, मन्दार, कमल, भ्रमरसहित सिन्दुवार, कणिकार (कनेर) और चंपकपुष्प जैसे-जैसे आकाशसे गिरते हैं वैसे-वैसे कामदेवके हाथसे तीर गिरने लगे। नव स्वर्णमय दण्डोंवाले, यक्षोंके करतलोंके आन्दोलनसे चपल सफेद सुविशिष्ट और प्रशंसित चमर स्वर्णबन्धनमे

खीरतरंगा इव परिघुलियइं किित्तिहि अंगा इव संचलियइं ।
पंडुराइं चमरइं सुविसिट्ठइं दयवेल्लिहि फुल्लाइं व दिट्ठइं ।
जं जं सुंदरु लच्छिहि अंगउ जं जं काइं मि तिहुयणि चंगउ ।
तं तं सयलु वि तहिं जि समप्पिउ को वण्णइ जंभारिवियप्पिउ ।
१० णियपहणित्तेइयचंदक्कउ समवसरणु गयणंगणि थक्कउ ।
पंचसहसधणु[3]उच्छयमाणइं[4] सेणिय[5] कहियउ जिणवरणाणइं ।

घत्ता—जो उच्छेहु जिणिंदें धणुपंचसएहिं[6] घल्लिउ ।
तरुघरगिरिखंभाहं सो बारहगुणु[7] बोल्लिउ ॥२८॥

२९

हेला—अट्ठ[1]गुणेण रुंदभावेण संपउत्तो ।
गाढं थूहवेइयाणं पि सो पउत्तो ॥१॥

इय धणएं वेउव्विउ जायहिं इंदें णविउ भडारउ तावहिं ।
जय जिण कण्ह रुद्द चउराणण जय तवरामारइसुहमाणण ।
५ जय क[2]लिकलिलसलिलसोसणरवि जय वासरईसरदेहच्छवि ।
जय भणतिमिरभारहरणखम तियसकिरीडमउडमंडियकम ।
जय तिसल्ल[3]वेल्लीवणछिंदण जय कंदप्पदप्पभडमद्दण ।
कोहकलंकपंकओसारण जय माणइरिसिहरसुसुमूरण ।
मायापावभाव[4]विद्दावण जय लोहंधयया[5]रउड्डावण ।
१० तिहारयणीयरिसंघारण जय सत्तभयकुरंगवियारण ।
जय मयमयगलकुलकंठीरव जय जगबंधव महियतिगारव ।
पढमपुरिस परमप्पय संकर जय जय रिसहणाह तित्थंकर ।

घत्ता—वंदिउ एम जिणिंदु तहिं बत्तीसहिं सक्कहिं ॥
उज्जोइयभरहेहिं पुप्फयंतणामक्कहिं ॥२९॥

इय महापुराणे तिसट्ठिमहापुरिसगुणालंकारे महाकइपुप्फयंतविरइए महाभव्वभरहाणुमण्णिए महाकव्वे रिसहकेवलणाणुप्पत्ती णाम णवमो परिच्छेओ सम्मत्तो ॥ ९ ॥

॥ संधि ॥ ९ ॥

२ MBP तिहुयणि काइं मि । ३. MBP उण्णयमाणें । ४. MP add after this तिसहसोवाणविहाणें, चउदिसविरइयहत्यपमाणें, B adds these after सेणिय कहियउ जिणवरणाणइं । ५ MBP सेणिय कहिउ जिणें वरणाणें । ६. MBP पघल्लिउ, T पझुल्लिउ । ७. P पल्लुल्लिउ and gloss कथितम् ।

२९ १. MBPK अट्ठउणेण । २. M कयकलिल° । ३. M तिमल्लवल्ली° । ४. MBP °भावउड्डावण । ५ MBP °वयारविद्दावण, P लोहभयारि विद्दावण ।

[illegible], श्रीसागरकी आन्दोलित लहरों, कीर्तिके चंचल अंगों, और दयारूपी लताके फूलके समान दिखाई दिये। स्त्रियोंका जो-जो सुन्दर अंग है और विश्वमें जो-जो भला है, वह सब वही समर्पित कर दिया। उसकी रचनाका वर्णन कौन कर सकता है? अपनी प्रभासे सूर्य और चन्द्रमाको तिरस्कृत करनेवाला—समवसरण पाँच हजार धनुष ऊँचाईके मानसे आकाशमें स्थित था। हे श्रेणिक, यह मैंने जिनवरके आगमसे कहा।

घत्ता—जो ऊँचाई जिनेन्द्रके द्वारा पाँच सौ धनुष कही गयी है वनवृक्ष गिरि (पर्वत) खम्भे (ध्वजाओंके), उससे (ऋषभ जिनकी ऊँचाईसे) बारह गुना अधिक ऊँचे हैं ॥२८॥

२९

और स्तूपोंकी ऊँचाई (ऊँचाईसे) आठ गुनी जाननी चाहिए। खम्भों और वेदिकाके विषयमें भी यह समझना चाहिए। इस प्रकार कुबेरने जब रचना की, तभी इन्द्रने आदरणीय जिनको नमस्कार किया—"हे जिन, कृष्ण, रुद्र, चतुरानन! आपकी जय हो, तपश्रीरूपी रामासे रतिसुख माननेवाले आपकी जय हो। कलिके पापोंरूपी जलोंको सोखनेके लिए सूर्य, आपकी जय हो, सूर्यके समान शरीर कान्तिवाले आपकी जय हो, मनके अन्धकारभारका हरण करनेवाले आपकी जय हो, देवोंके किरीट और मुकुटोंसे अलंकृत चरण आपकी जय हो। त्रिशल्यरूपी लतावनका उच्छेदन करनेवाले आपकी जय हो, कन्दर्पके दर्परूपी भटका मर्दन करनेवाले आपकी जय हो, क्रोधरूपी कलंककी कीचड़ दूर करनेवाले आपकी जय हो, मानरूपी पर्वतके शिखर चूर-चूर करनेवाले आपकी जय हो, मायाके पापभावको नष्ट करनेवाले आपकी जय हो। लोभरूपी अन्धकारको उड़ानेवाले आपकी जय हो। तृष्णारूपी राक्षसीको मारनेवाले आपकी जय हो। सात भयरूपी कुरंगोंका विदारण करनेवाले आपकी जय हो। मदरूपी मैगलके लिए सिंहके समान आपकी जय हो। विश्वबन्धु और तीन गर्वोंको नष्ट करनेवाले आपकी जय हो। प्रथम पुरुष, परमात्मा, शंकर, ऋषभनाथ और तीर्थंकर आपकी जय हो।

घत्ता—भरतको आलोकित करनेवाले तथा सूर्य-चन्द्रके समान शोभित पचासों इन्द्रोंने इस प्रकार जिनेश्वरकी वन्दना की ॥२९॥

इस प्रकार श्रेष्ठ पुरुषोंके गुणों और अलंकारोंसे युक्त इस महापुराणमें महाकवि पुष्पदन्त द्वारा विरचित एवं महाभव्य भरत द्वारा अनुमत महाकाव्यका ऋषभ केवलज्ञान उत्पत्ति नामका नौवाँ परिच्छेद समाप्त हुआ ॥९॥

संधि १०

परमेसरु थुणिउ पुरंदरेण परिसेसियभवभयमरणरिण ॥
परमप्पय मह्दु पसीय सुसम समवसरणपरियरिय जिण ॥ १ ॥ ध्रुवकं ॥

१

दुवई—तुह पहु वंदणाइ संतोसु ण णिंदइ वहसि मच्छरं ।
तह वि हु कुणसि अणयपणयाण दुहोहसुहोहवित्थर ॥१॥

५ तुहु वीयराउ णिद्धूयकम्मु तुहुं हिंसावज्जिउ परमधम्मु ।
जो पइं सेवइ तहु होइ सोक्खु तुह पडिकूलहु संभवइ दुक्खु ।
तुहुं पुणु दोहिं मि मज्झत्थभाउ ईह एहउ फुडु वत्थुहि सहाउ ।
णिंदिज्जइ रवि पित्ताहिएहिं चंदु वि वाएण णिवाइएहिं ।
ते दोण्णि वि एयहं किं करंति ससहावें णहयलि संचरंति ।
१० ससिसूरोसहिसंघाउ जेम भुवणोवयारि जिण तुहुं मि तेम ।
सरु दूसिवि जो ण वि पियइ वारि तहु तण्हइ णिवडइ तिव्वमारि ।
जो रसइ तासु तिसणासु सज्जु सरवरहु ण एण ण तेण कज्जु ।
जिह गरुलमंतु गरलंतयारि तिह तुहुं वि सहावें दुरियहारि ।
अणवरउ भडारा भूयसामि जहिं तुम्हइं तहिं हउं समउ जामि ।
१५ जहिं तुहुं तहिं ससुरु समग्गु सग्गु जइं हउं तहिं मणिमउ भूमिमग्गु ।

घत्ता—तहिं समवसरणि जंभारिकए परंहियबुद्धिइ संचरइ ॥
[10]सुरणरतिरियहं सुहयरणु धम्मु भडारउ वज्जरइ ॥१॥

All Mss. have, at the commencement of this Samdhi, the following stanza:—

जगं रम्मं हम्मं दीवओ चंदबिंब
धरत्ती पल्लंको दो वि हत्था सुवत्था ।
पिया णिद्दा णिच्चं कव्वकीला विणोओ
अदीणत्तं वित्तं ईसरो पुप्फयंतो ॥

MBP however read धरित्ती for धरत्ती; सुवत्थं for सुवत्था, and पुप्फदंतो for पुप्फयंतो in the above stanza.

१. १ MB °भवभवणरिण, P °भवभमणरिण । २ MBP सिद्ध महामइ पढम जिण । ३ MBP पडिकूलहं । ४. M इय । ५ K ण तेण । ६. B तुम्हइं तहिं हउं सउं; P तुम्हइं हउं समउ । ७. MBP जहिं तुहुं तहिं; K जइं हउं but corrects it to जहिं; ८. MBP add after this the following line : पइ दिण्णाणइ वइसरमि जामि, तुह वयणामइ तित्ति ण जामि । ९ MBPT परिचिंतियसुवियारसहु and gloss in T भव्यैश्चिन्तितार्थानां शोभनो विचार. सभायां यस्य, शोभनं विचारं वा सहते क्षमते य. स तथोक्त., but P records in the margin a *p* परहियबुद्धिइ संचरइ । १० MBP चउदेवणिकायहिं (M °णिकायह) परियरिउ दिट्ठु पहु, but P records in the margin a *p* सुरणरतिरियहं सुहयरणु धम्मु भडारउ वज्जरइ ।

सन्धि १०

१

जन्म, भय और मरणके ऋणको समाप्त करनेवाले जिन परमेश्वरकी इन्द्रने स्तुति की—"हे समवसरणसे घिरे हुए शान्त परमात्मा जिन मुझपर प्रसन्न हो। हे प्रभु, न तो तुम्हे वन्दनासे सन्तोष होता है, और न तुम निन्दासे मत्सर धारण करते हो; तब भी जो नत नही होते, या नत होते है, तुम उनके दुःखसमूह और सुख समूहका विस्तार करते हो। तुम कामको नष्ट करनेवाले वीतराग हो, तुम हिंसासे रहित परमधर्म हो। जो तुम्हारी सेवा करता है उसे सुख मिलता है, जो तुमसे प्रतिकूल है उसे दुःख होता है; परन्तु तुम दोनोमे मध्यस्थभाव धारण करते हो, यह ऐसा स्पष्ट रूपसे वस्तुका स्वभाव है। अधिक पित्तवालोके द्वारा सूर्यकी निन्दा की जाती है, वायुसे पीड़ितोंके द्वारा चन्द्रमाकी निन्दा की जाती है। परन्तु वे दोनो (सूर्य-चन्द्र) इन लोगोंका क्या करते है, वे तो अपने स्वभावसे आकाशतलमे विचरण करते है। जिस प्रकार चन्द्रमा-सूर्य और औषधि-का संघात संसारका उपकारी है, उसी प्रकार हे जिन तुम भी उपकारी हो। जो सरोवरको दोष लगाकर पानी नही पीता उसपर प्यासके मारे 'तीव्रमारि' आ पड़ती है। जो पानी पी लेता है, उसकी प्यासका शीघ्र नाश हो जाता है। सरोवरका न इससे प्रयोजन और न उससे प्रयोजन। जिस प्रकार गरुड़का मन्त्र विषका अन्त करनेवाला होता है, उसी प्रकार तुम भी स्वभावसे पापका हरण करनेवाले हो। हे अनवरत भूत स्वामी, जहाँ तुम वहाँ मै भी साथ जाता हूँ (जाऊँगा)। जहाँ तुम हो वहाँ देवो सहित समग्र स्वर्ग और मणिमय भूमिमार्ग हैं, वही मैं भी हूँ।"

घत्ता—इन्द्र द्वारा निर्मित उस समवसरणमे जिन भगवान् दूसरोंकी कल्याण कामनासे संचरण करते है और वे सुर-नर तथा तिर्यंचोंका शुभ करनेका धर्म कहते है ॥१॥

२

दुवई—आरूढो वरम्मि उवयदिसिरम्मि व हरिणलंछणो।
सोहइ सिंधुरारि[1]वीढम्मि विहट्टियकम्मबंधणो ॥१॥

अइसय दह जाया सह भवेण   चउवीस अवर णाणु[2]ब्भवेण।
जगि अरहंतहु पर संभवंति   जे ते एहा गणहर कहंति।
५ गव्वूइ[3]सयाइं चयारि जाम   वित्थरइ सुहिक्खु[4] सुखेउ ताम।
ण वि कासु वि प्राणिहि[5] प्राणणासु   गयणयलि गमणु परमेसरासु।
णउ[6] भुत्ति पवत्तइ णोवसग्गु   सरलक्खिपक्खपक्खेउ[7] भग्गु।
छाहियइ विवज्जिउ होइ गत्तु   अवरु वि असेसु[8] विज्जेसरत्तु।
परिमिय थिय कररुह णील केस   भूएसु मेत्ति पिसुण वि ण वेस।
१० भास वि णीसेससरीरिगम्म   णाणाभासहि परिणवइ रम्म।
महु तित्त कडुय परिणइवसेहिं   जलधारा इव बहुदुमरसेहिं[9]।
छक्कालसमयसंपयकरेण   महिरुह णमंति गुरुफलभरेण।
आदंसणसंणिह महि विहाइ   परमाणंदें जणु जगि ण माइ।
मंथरु सीयलु तरुसुरहिसारु   जोयणपमाणु वियरइ समीरु।
१५ [10]अणुगच्छंतउ णाहहु सुहाइ   पच्छइ लग्गउ णेहेण णाइ।

घत्ता—जल[11] दुद्धु वहंति तरंगिणिउ सामिउ विहरइ जहिं जि जहिं॥
तण[12] कंटय कीडय पत्थर वि धूलि पणासइ तहिं जि तहिं ॥२॥

३

दुवई—सुरवइपेसणेण परिमलमिलियालिकुलेहिं माणियं।
थणियकुमार मेह वरिसंति[1] महा[2]वरगंधवाणियं ॥१॥

पहुअग्गइ पच्छइ परिघुलंति   णलिणाइं सत्त सत्त जि चलंति।
जहि देइ पाउ तहिं कणयकमलु   सुरसंजोइउ संचरइ[3] विमलु।
५ एवड्डु[4] पहुत्तणु भुवणि कासु[5]   हरि कुलिसधारि घरि जासु दासु।
अट्ठारह वरधण्णइं धरंति   रोमंचिय णावइ णं धरित्ति।
णहु सदिसु वि रेहइ मलविहीणु   धोयंबणीलमाणिक्कभाणु।
दिव्वझुणि पवियंभइ पवित्ति   वसुसमसहासधणुमाणछेत्ति।
जक्खिंदसिरारूढउ विचित्तु   रयणाररत्तु[6] रविबिंबु दित्तु।
१० लीलासंबोहियभव्वचक्कु[7]   तहु अग्गागइ[8] गच्छइ धम्मचक्कु।
जो पेच्छइ दूरहु माणु खंसु[9]   तहु विहडइ माणकसायडंसु।
णिज्जियबहुसमयणयंतराइं   परवाइ वि देंति ण उत्तराइं।

---

२ १ MBP सिंधुरारिं°। २ B णाणुब्भरेण। ३ L °चयारि सयाइं। ४. MBP सुभिक्खु। ५. MBP पाणिहि पाण°। ६ M ण व। ७ MBP °विक्खेउ। ८ MBPT असेस°। ९ P °दुमसरेहिं। १० MBP अणुगच्छंतहु। ११ MB जलु दुद्धु। १२ B तिण।

३ १ P वरिसंत। २. MBP महारव°। ३ P संचलइ। ४ B एवहु°। ५ MBP कासु। ६ MBP रयणारादंतुरदिव्वदित्तु। ७. MB °चक्खु। ८. MBP अग्गइ। ९ MB माणखंभु।

२

श्रेष्ठ सिंहासनकी पीठपर विराजमान, कर्मबन्धनका नाश करनेवाले जिन ऐसे शोभित है जैसे उत्तम उदयाचलके शिखरके ऊपर चन्द्रमा हो। जन्मके साथ उनके दस अतिशय हुए थे ज्ञानके उत्पन्न होनेसे चौबीस और अतिशय उत्पन्न हो गये। जगमे जो केवल अरहन्तोके होते है, उन्हे (अतिशयोंको) गणधर इस प्रकार कहते है—'जहाँ तक चार सौ कोश होते हैं, वहाँ तक सुभिक्ष और सुक्षेत्र रहता है। किसी भी प्राणीका प्राणनाश नही होता। परमेश्वरका आकाशमे गमन होता है, न उनमे भुक्तिकी प्रवृत्ति होती है, और न उनपर उपसर्ग होता है; उनकी सरल आँखोंके पलक नही झपते। उनका शरीर छायासे रहित है, उनके पास समस्त विद्याओका ऐश्वर्य होता है, उनकी अँगुलियाँ सीमित रहती है। बाल नीले, प्राणियोंके प्रति मैत्रीभाव, दुष्टोके प्रति द्वेषभाव नही। समस्त शरीरसे निकलती हुई सुन्दर भाषा, जो नाना भाषाओमे परिणत हो जाती है, उसी प्रकार, जिस प्रकार जलकी धारा परिणमनके वशसे नाना वृक्षोके द्वारा मीठी, कड़वी और तीखी हो जाती है। छहो ऋतुओंमे समृद्ध करनेवाले वृक्ष फलोके भारसे धरतीपर झुक जाते हैं। धरती दर्पणके समान दिखाई देती है। परम आनन्दसे लोग जगमे नही समाते। मन्थर शीतल वृक्षोंकी सुगन्धका जिसमे सार है ऐसी हवा एक योजन तक बहती है, स्वामीके पीछे जाती हुई ऐसी शोभित होती है, मानो स्नेहसे उनके पीछे लग गयी हो।

घत्ता—नदियाँ जलरूपी दूध प्रवाहित करती हैं। जहाँ-जहाँ स्वामी विहार करते हैं, वहाँ-वहाँ की तृण, काँटे, कीड़े और पत्थर तथा धूल नष्ट हो जाती है ॥२॥

३

इन्द्रके आदेशसे स्तनितकुमार मेघ, परिमलसे मिले हुए भ्रमरकुलोंसे सम्मानित उत्तम गन्धवाला जल बरसाते हैं ॥१॥ प्रभुके आगे-पीछे शोभित होते हुए सात-सात कमल चलते हैं। वह जहाँ पैर रखते है वहाँ देवोके द्वारा संयोजित विमल स्वर्णकमल चलता है। भुवनमे इतनी बड़ी प्रभुता किसकी कि जिसके घरमें वज्र धारण करनेवाला इन्द्र दास है। धरती अट्ठारह श्रेष्ठ धान्योंको धारण करती है, मानो रोमांचित होकर नाच रही हो। मल विहीन आकाश भी दिशाओं सहित इस प्रकार शोभित है जैसे पानीसे धोया गया नीलम और माणिक्योंका पात्र हो। पवित्र दिव्यध्वनि प्रवर्तित होती है, जो आठ हजार धनुष बराबर मानवाले क्षेत्रमे प्रसारित होती है। यक्षेन्द्रके सिरपर स्थित विचित्र रत्नोंकी आराओसे लाल, सूर्यके बिम्बके समान, तथा लीलासे भव्य जन-समूहको सम्बोधित करनेवाला धर्मचक्र उनके आगे-आगे चलता है। जो दूरसे भी मानस्तम्भको देख लेता है उसके मानकषायका दम्भ नष्ट हो जाता है। जिसमे अनेक मतोंके

[10]पडिहाइय [11]भइयइ थरहरंति अविहंडिउ मोणव्वउ वहंति ।
[12]अवियारु पहादूसियछणिंदु दीसइ चउदिसहिं मुहारविंदु ।
१५ बारहकोट्ठेसु वि जे वसंति ते ते [13] मुहुं महु संमुहु भणंति ।
घत्ता—मउलियकराउ [14] पणवियसिरउ सच्छउ [15] गव्वविमुक्कियउ ॥
परिवाडिइ [16] कोट्ठि णिविट्ठियउ [17] तहि पयाउ हयदुक्कियउ ॥३॥

४

दुवई—गणहर कप्पवासिसुरमणिउ अज्जियसंघे [1] गइरई ।
देविउ वणणिवासदेवाण वि भावणतरुणिसंतई ॥१॥
पुणु दह कुमार वेंतरसुरिंद पुणु जोइस कप्पामर णरिंद ।
पुणु तिरिय वियंडदाढाकराल [2] केसरि कुंजर सद्दूल कोल ।
५ बइसंति [3] गणेसाइ व [4] कमेण जिणभत्तिवंत भूसिय समेण ।
णव णव पंचविहहिं रूढएहिं सव्वहिं सविमाणारूढएहिं ।
सीहासणु मेल्लिवि खइयभाउ अहमिंदहिं [5] थुउ विद्धत्थराउ ।
जसरवितोसियजगपंकएहिं उग्घोसियकुलणामंकएहिं [6] ।
मउडावलिचुंबियमहियलेहिं घोलंतकुसुममालाचलेहिं ।
१० उवगीईगाहाखंधएहि उच्चारियललियथुईसएहिं
संथुउ सोहम्मीसाणएहिं अवरेहिं मि तियसपहाणएहिं ।
घत्ता—जय दुम्महवम्महणिम्महण दोसरोसपसुपाससिहि ।
जय सयलविमलकेवलणिलय हरणकरणउद्धरणविहि ॥४॥

५

दुवई—जय कंकालसूलणरकंदलविसहरविलय [1] विरहिया ।
जय भगवंत संत सिव सक्किव णिवंचियचरण परहिया ॥१॥
जय सुकइ [2] कहियणीसेसणाम भीमंथण णियरिउवग्गभीम ।
वामाविमुक्क संसारवाम जय तिउरहारि हर हीरधाम [3] ।
५ जय पयडियधुयससयंभुभाव [4] जय जय सयंभु परिगणियभाव [5] ।
जय संकर संकर विहियसंति जय ससहर कुवलयदिण्णकंति ।
जय रुद्द रउद्दतवग्गगामि जय जय भवसामि भवोवसामि ।
महएव महागुणगणजसाल [6] महकाल पलयकालुग्गकाल ।

---

१०. MBP पडिमा°, T परिहा° and gloss प्रतिमा । ११ B भइए । १२ MB अवियारपहा°; B अविहारपिया° । १३ MBP महु महु संमुहु । १४ MBP °करउ । १५. BP सव्वउ । १६ MP परिवारिए । १७ MB णिविट्ठउ ।

४ १. MBPK °सघु । २ MBP फुरिय° । ३. M वइसंत । ४. MBP गणेसाइय । ५ M सथुउ । ६ P °णामंकिएहिं ।

५ १ MBP वलय° । २. P सुकय° । ३. MBT हीरवाय and gloss in T धीरप्रसन्न, अथवा हीरो रत्नविशेषस्तद्वन्मनोज्ञ । ४. MBP °ससइभु° । ५ B परिगलिय° । ६ P °गणविसाल ।

तर्कोंको जीत लिया गया है ऐसे उत्तर परवादी भी नहीं देते। प्रतिभासे आहत वे भयसे काँप उठते हैं और अखण्ड मौन धारण करते हैं। अविकारी, अपनी प्रभासे पूर्ण चन्द्रको फीका करनेवाला उनका मुखकमल चारों दिशाओंमे दिखाई देता है। बारह कोठोंमें जो बैठते हैं वे कहते हैं कि मुख मेरे सामने है।

घत्ता—हाथ जोड़े हुए प्रणत सिर गर्वसे रहित स्वच्छ, नष्ट हो गये हैं पाप जिसके, ऐसी प्रजा परम्पराके अनुसार कोठेमें बैठ गयी ॥३॥

४

गणधर कल्पवासी देवोंकी स्त्रियाँ। आर्यिका संघ, ज्योतिष्क देवोंकी स्त्रियाँ; व्यन्तरदेवोकी स्त्रियाँ, और भवनवासी देवोकी देवियोंकी पंक्ति। फिर दस कुमार, फिर व्यन्तरेन्द्र। फिर ज्योतिषदेव, कल्पवासी देव और नरेन्द्र। फिर तिर्यंच। विकट दाढ़ोसे विकराल सिंह, गज, शार्दूल, कोल और गणधर आदि क्रमसे बैठते है, जिनभक्तिसे भरित और श्रमसे भूषित। नव-नव पाँच प्रकारसे प्रसिद्ध अपने-अपने विमानोंमे बैठे हुए अहमिन्द्रोंने रागको ध्वस्त करनेवाले सिंहासन छोड़कर जिनेन्द्र भगवान्‌की स्तुति की। अपने यशरूपी सूर्यसे विश्वरूपी कमलको खिलाते हुए, अपने कुलका नाम और चिह्न बताते हुए, मुकुटोंकी कतारोंसे महीतलको चूमते हुए, पुष्पोंकी चंचल मालाएँ हिलाते हुए, गाथा और स्कन्धक गाते हुए, सैकड़ों सुन्दर स्तुतियोका उच्चारण करते हुए सौधर्म और ईशान इन्द्रों तथा दूसरे देवप्रमुखोके द्वारा उनकी स्तुति की गयी।

घत्ता—दुर्मद कामदेवको जीतनेवाले दोष और क्रोधरूपी पशुपाशके लिए अग्निके समान समस्त विमल केवलज्ञानके घर और मिथ्यादर्शनादिका अपहरण और सम्यक् दर्शनादिका उद्धार करनेवाले हे विधाता आपकी जय हो ॥४॥

५

कंकाल, त्रिशूल, मनुष्यकपाल, साँप और स्त्रीसे रहित, आपकी जय हो। हे भगवान्, सन्त, शिव, कृपावान्, मनुष्योके द्वारा वन्दित चरण और दूसरोंका भला करनेवाले आपकी जय हो। सुकवियोके द्वारा कथित अशेष नामवाले, भयको दूर करनेवाले, अपने अन्तरंग शत्रुओंके लिए भयंकर आपकी जय हो। स्त्रीसे विमुक्त संसारके लिए प्रतिकूल त्रिपुर (जन्म, जरा और मरण) का अपहरण करनेवाले, धैर्यके धाम हे हर आपकी जय हो। शाश्वत स्वयम्भूभावको प्रकट करनेवाले और पदार्थोंके ज्ञाता आपकी जय हो; शान्तिके विधाता और सुखकर आपकी जय हो, कुवलय (पृथ्वीमण्डल, कुमुदमण्डल) को कान्ति प्रदान करनेवाले आपकी जय हो। उग्रतपके लिए अग्रगामी आपकी जय हो, हे भवस्वामी और जन्मको शान्त करनेवाले आपकी जय हो। महान् गुणसमूहके आश्रय हे महादेव, आपकी जय हो। प्रलयकालके लिए उग्रकाल महाकाल आपकी

जय जय गणेस गणवइजणेर | जय बंभ पसाहियबंभचेर ।
१० वेयंगवाइ जय कमलजोणि | आईवराह उद्धरियखोणि ।
सहिरण्णविट्ठिपडिवण्णगब्भ | जय दुण्णयणिहणण हिरण्णगब्भ ।
जय परमाणंतचउक्कसोह | भावंधयारहर[7] दिवसणाह ।
जय जण्णपुरिस पसुजण्णणासि | रिसिसंसहिंसाधम्मभासि[8] ।
जय माहव तिहुवणमाहवेस | महुसूयण दूसियमहुविसेस ।
१५ जय लोयणिओइय परमहंस | गोवद्धण केसव परमहंस ।
जगि सो केसउ जो रायवंतु | तुह णीरायहु कहिं केसवत्तु ।
के सव ते सव जे पइं हसंति | जड पावपिंड रउरवि वसंति ।
जय कासव का सवविहि तुमम्मि | णेरंतरु चित्ति[9] णिरोहु जम्मि ।
घत्ता—जय गयण हुयासण चंद रवि जीवय[10] महि मारुय सलिल ।
२० अट्ठंगमहेसर जय सयल पक्खालियकलिमलकलिल ॥५॥

६

दुवई—जय जय सिद्ध बुद्ध सुद्धोयणि सुगय कुमग्गणासणा ।
जय वइकुंठ विट्ठु दामोयर हयपरवाइवासणा ॥१॥
णामाइं पसिद्धइं जाइं जाइं | तुह देव अवंझइं ताइं ताइं ।
इंदें चंदें उरयाहिवेण | तुह णामहु लक्खिउ छेउ केण ।
५ मइविहवविहीणहिं[1] आरिसेहिं | किं थुव्वसि तुहुं अम्हारिसेहिं ।
तावेत्तहिं[2] पउरजसालएहिं[3] | कंचुइधम्माउहवालएहिं[4] ।
एक्कहिं खणि भरहहु कहिय वत्त | भुंजहि महि महिवइ एक्कछत्त[5] ।
सयरायरवत्थुवियप्पजाणु | परमेट्ठिहि अचलु अणंतु णाणु ।
राणियहि पुत्तु पप्फुल्लवयणु | आउहसालहि[6] वरचक्करयणु ।
१० उप्पण्णु भडारा पुण्णवंतु | तुहुं जासु जणणु अरहंतु संतु ।
ता राएं अवरेहिं मि णरेहिं | पणविउ जिणवरु सिरकयकरेहिं ।
पुणु चिंतिउ किं जोयमि रहंगु | किं तणयतोंडु[7] दरियारिभंगु ।
मज्झत्थु सच्छु णिम्मुक्कसंगु | किं वंदमि मुणि सुद्धंतरंगु ।
धम्मेण सुरत्तु कलत्तु पुत्तु | पहरणु वि होइ णिद्दलियसत्तु ।
१५ धम्में संपज्जइ पुहविरज्जु | करणिज्जु पहिल्लउं धम्मकज्जु ।
गंभीरणायणिम्महियवेरि | देवाविय लहु आणंदभेरि ।
घत्ता—मायंगतुरंगहिं णरवरहिं रहधयचमरहिं परियरिउ ॥
वेयालियकयकलयलमुहलु भरहणराहिवु[8] णीसरिउ ॥६॥

---

७ M पावयपारहर, BP पावधयारहर । ८ M रिसलस अहिंसा°; BP रिसिसंस अहिंसा° ।
९ MBP चित्तणिरोहु । १० MBP जीव मही ।

६ १ MBP मइं विभव° । २ MBP ता एत्तहि । ३ P पवर° । ४ MB °वालएहिं, P °पालएहिं ।
५ MBP एगछत्त । ६ MBP °सालइ । ७ MBP °तुडु । ८ MP भरहु णराहिउ; B भरहण-
राहिउ ।

जय हो। गणपतियों (गणधरों) को जन्म देनेवाले आपकी जय हो, ब्रह्मचर्यकी साधना करनेवाले ब्रह्म आपकी जय हो। सिद्धान्तवादी ब्रह्मा, धरतीका उद्धार करनेवाले आदिवराह, जिनके गर्भके समय स्वर्णवृष्टि हुई है, ऐसे तथा दुर्नयका हनन करनेवाले हे हिरण्यगर्भ, आपकी जय हो। चार परम अनन्त चतुष्टयोंकी शोभावाले अज्ञानका अपहरण करनेवाले हे सूर्य, आपकी जय हो। पशुयज्ञोंका नाश करनेवाले, ऋषियोंके द्वारा प्रशंसनीय, अहिंसाधर्मका कथन करनेवाले यज्ञपुरुष! आपकी जय हो। त्रिभुवनके माधवेश, माधव और मधुविशेषको दूषित करनेवाले मधुसूदन! आपकी जय हो। लोकका नियोजन करनेवाले परमहंस, गोवर्द्धन, केशव और परमहंस आपकी जय हो। विश्वमें वह केशव है जो रागवाला है, तुम विरागीके केशवत्व कैसे हो सकता है? विश्वमें शव कौन है, शव वे हैं जो तुम्हारा उपहास करते हैं। जो जड़ और पापशरीर हैं वे रौरव नरकमे रहते हैं। हे कासव! तुम्हारी जय हो, तुममें मृतकका आचार (शवविधि) कैसा? जिसके चित्तमे निरन्तर निरोध है।

घत्ता—हे गगन, अग्नि, चन्द्र, रवि, मेघ, मही, मारुत, सलिल आपकी जय हो। सबके कलियुगके मल और पापको प्रक्षालित करनेवाले अष्टांग महेश्वर, आपकी जय हो ॥५॥

६

शुद्ध, बुद्ध, शुद्धोदन, सुगत और कुमार्गका नाश करनेवाले आपकी जय हो। वैकुण्ठ, विष्णु, दामोदर, परवादियोंके संस्कारोंको नष्ट करनेवाले आपकी जय हो। हे देव, आपके जो-जो नाम हैं वे सब सफल नाम हैं। इन्द्र, चन्द्र और शेषनाग किसने तुम्हारे नामोंका अन्त पाया? मति वैभवसे रहित और अव्युत्पन्न हम-जैसे लोगोंके द्वारा तुम्हारी स्तुति कैसे हो सकती है? तब कंचुकीधर्म और आयुधोंके रक्षकोंने एक ही क्षणमे भरतसे यह बात कही, "हे राजन्, आप एकछत्र धरतीका उपभोग करें। परमेष्ठी ऋषभको सचराचर पदार्थोंको जाननेवाला अनन्त केवलज्ञान उत्पन्न हुआ है। रानीको खिले हुए मुखवाला पुत्र हुआ है, और आयुधशालामे श्रेष्ठ चक्ररत्न उत्पन्न हुआ है। हे आदरणीय, आप पुण्यवान् हैं जिसके पिता अरहन्त सन्त हैं।" तब राजा भरत और दूसरे मनुष्योंने अपने सिरोंसे हाथ लगाते हुए जिनवरको प्रणाम किया। फिर उसने सोचा, कि पहले मैं क्या देखूँ—दुष्ट शत्रुओंका नाश करनेवाला चक्र देखूँ या पुत्रका मुख। या मध्यस्थ स्वच्छ परिग्रह-शून्य शुद्ध-अन्तरंग मुनिकी वन्दना करूँ। धर्मसे ही देवत्व, कलत्र, पुत्र और शत्रुओंका नाश करनेवाला अस्त्र उत्पन्न होता है। धर्मसे ही पृथ्वीका राज्य होता है। इसलिए पहले धर्मकार्य करना चाहिए। तब उसने गम्भीर नादसे शत्रुओंका संहार करनेवाली आनन्दभेरी बजवा दी।

घत्ता—गज, तुरंगों, नरवरों, रथध्वज और चमरोंसे घिरा हुआ, और वैतालिकोंके द्वारा किये गये कलकलसे मुखर राजा भरत चला ॥६॥

७

दुवई—पत्तो समवसरणमसुहहरणं खयकालवारणं।
मयराणणविणित्तमुत्ताहलमालालुलियतोरणं ॥१॥

हरिणाहिवासणासीणगत्तु तिउणियससिसमसेयायवत्तु।
पउलोमीपियसेविज्जमाणु चउसट्ठिचमरविज्जिज्जमाणु।
५ जिणणाहु दिट्ठु भरहेसरेण णं णेसरु णवपंकयसरेण।
णं मत्तमऊरें वारिवाहु णं वाइएण रससिद्धिलाहु।
णं सिद्धें संभावियउ मोक्खु णं हंसें माणसु जणियसोक्खु।
कंपावियदिक्चक्काहिवेण पारद्धु थुणहुं चक्काहिवेण।
जय भुवणभवणतिमिरहरदीव जय सुइसंबोहियभव्वजीव।
१० जय भासियपयाणेयभेय जय णग्ग णिरंजण णिरुवमेय।
सकयत्थइं कमकमलाइं ताइं तुह तित्थु पसत्थु गयाइं जाइं।
णयणाइं ताइं दिट्ठो सि जेहिं सो कंठु जेण गायउ सरेहिं।
ते घण्ण कण्ण जे पइं सुणंति ते कर जे तुहुं पेसणु करंति।
ते णाणवंत जे पइं मुणंति ते सुकइ सुयण जे पइं थुणंति।
१५ तं कव्वु देव जं तुज्झु रइउ सा जीह जाइ तुह णाउं लइउ।
तं मणु जं तुह पयपोमलीणु तं धणु जं तुह पूयाइ खीणु।
तं सीसु जेण तुहुं पणविओ सि ते जोइ जेहिं तुहुं झाइओ सि।
तं सुहुं जं तुह संमुहउं थाइ विवरंमुहुं कुच्छियगुरुहुं जाइ।
तेल्लोक्कताय तुहुं मज्झु ताउ घण्णेहिं कहिं मि कह कह व णाउ।
२० णिट्ठवियदुट्ठकम्मट्ठ सिट्ठ दुट्ठोवसग्गणिहणेक्कणिट्ठ।

घत्ता—पंचाणणकुंजरजलजलणविसविसहररुयपयजुयणियला ॥
पइं संभरिएण जि परमजिण उवसमंति कयकलह खला ॥७॥

८

दुवई—जय वइसमणचमरवेरोयणअसुरामरपसंसिया।
सुरगुरुसुक्कसवुहअंगारयगहणहयरणमंसिया ॥१॥

चरणइं तेरहगइभाविराइं णयणाइं पंच पहदाविराइं।
एयारह सिंगइं उण्णयाइं उज्झियइं तिण्णि किर णिण्णयाइं।
५ सीसाइं पंच अह भणमि एक्कु चउहुं मि परियरियउ तं जि थक्कु।
वारह चोद्दह ढेक्कारियाइं अंगाइं दह विउसवियारियाइं।
रोमहं चउरासीलक्ख जासु दुग्गोवइकुल संजणिय तासु।

---

७ १. MBP °मरणं असुहहरणं; KT °मरणमसुहरसरण। २. B °विलित्त°। ३. BK °ललिय°। ४ M सुय। ५ MBP णामु। ६. MBP तइल्लोक्क°। ७. BPKT °कट्ठकम्मट्ठ। ८. MB °विसह°रयसु°; T रुग रोगाः। ९ MBPK °णियल। १० MBPK खल।

८ १. MBP वइसवण°। २. MBP °रइरोयण°; K वेरोयण। ३ MB परिगग्गिउ। ४ MPK चउदह। ५ MBP अंगाइं।

७

वह क्षयकालका निवारण करनेवाले और अशुभका हरण करनेवाले तथा जिसमें मगरके मुखकी आकृतिसे निकले हुए मोतियोंकी मालासे चंचल तोरण है, ऐसे समवसरणमे पहुँचा। सिंहासनपर आसीन शरीर, चन्द्रमाकी तिगुनी सफेदीके समान आतपत्र (छत्र) वाले, इन्द्रके द्वारा सेवित, जिनके ऊपर चौसठ चमर ढोरे जा रहे है, ऐसे जिननाथको भरतेश्वरने इस प्रकार देखा मानो नवकमलवाले सरोवरने सूर्यको देखा हो। मानो मतवाले मयूरने मेघको, मानो रसायन निर्माताने रसके सिद्धिलाभको, मानो सिद्धने सम्भावित मोक्षको, मानो हंसने सुख देनेवाले मानस-सरोवरको। दिशाओके लोकपालोंको कँपानेवाले चक्राधिप भरतने स्तुति प्रारम्भ की, "विश्वरूपी भवनके अन्धकारके दीप, आपकी जय हो, आगमसे भव्य जीवोको सम्बोधित करनेवाले आपकी जय हो। एकानेक भेदोंको बतानेवाले आपकी जय हो। हे दिगम्बर, निरंजन और अनुपमेय आपकी जय हो। वे चरणकमल कृतार्थ हो गये जो तुम्हारे प्रशस्त तीर्थके लिए गये। वे नेत्र कृतार्थ हैं, जिन्होंने तुम्हें देखा, वह कण्ठ सफल हो गया, जिसने स्वरोसे तुम्हारा गान किया। वे कान धन्य हैं जो तुम्हे सुनते हैं, वे हाथ कृतार्थ हैं जो तुम्हारी सेवा करते हैं। वे ज्ञानी हैं जो आपका चिन्तन करते हैं, वे सज्जन और सुकवि हैं जो तुम्हारो स्तुति करते हैं। हे देव, वह काव्य है, जो तुममे अनुरक्त है। जीभ वह है जिसने तुम्हारा नाम लिया है। वह मन है जो तुम्हारे चरण-कमलोंमे लीन है। वह धन है जो तुम्हारी पूजामे समाप्त होता है, वह सिर है जिसने तुम्हे प्रणाम किया है। योगी वे है जिनके द्वारा तुम्हारा ध्यान किया गया। वह मुख है जो तुम्हारे सम्मुख स्थित है। जो विपरीत मुख हैं वे कुगुरुओके पास जाते है। हे त्रैलोक्य पिता, तुम मेरे पिता हो। धन्योंके द्वारा तुम किसी प्रकार ज्ञात हो ! दुष्ट आठ कर्मोंका नाश करनेवाले तथा दुष्ट उपसर्गोंको नाश करनेमे एकनिष्ठ हे श्रेष्ठ परम जिन—

घत्ता—सिंह, गज, जल, अग्नि, विष, विषधर, रोग, बेड़ियाँ और कलह करनेवाले दुष्ट तुम्हारी याद करनेसे शान्त हो जाते है ॥७॥

८

कुबेर, असुरेन्द्र, असुर और अमरोसे प्रशंसित, बृहस्पति, शुक्र, बुध, मंगल आदि ग्रहों और नभचरों द्वारा प्रणम्य आपकी जय हो। तेरहगति भावनाएँ (पाँच महाव्रत, पाँच समितियाँ और तीन गुप्तियाँ) जिसके चरण है, प्रभासे दीप्त पाँच ज्ञान जिसके नेत्र है, सम्यक्त्वादि ग्यारह गुण-स्थान जिसके सींग है, तीन शल्य, जिसके (मिथ्या दर्शन ज्ञान और चारित्र) स्कन्ध कुटी और मस्तक हैं, पाँच महाव्रत अथवा एक अहिंसाव्रत जिसका सिर है, चारों ओरसे घिरा हुआ जो वही स्थित है, बारह अंग और चौदह पूर्व, जिसका ढेक्कार शब्द है, विद्वानोंके द्वारा विचारित, उत्तम

जो कामधेणु सेविउ सुधामु जें तोडिवि घल्लिउ मोहदामु ।
दुद्धरवयभारधुरग्गु धरिवि अपवत्तियतित्थवहेण चरिवि ।
१० णित्थरिवि पराइउ णाणतीरु वीसमिउ असोयहु मूलि धीरु
जें लंघिउ भवदुप्पहु दुलंघु जो धवलु धवलचंदहु महग्घु
तहु वसहहु कयपणिवाउ भाउ णियणिलइ णिसण्णउ भरहराउ ।
घत्ता—कयपंजलियरु पणमंतसिरु भत्तिहरिसवियसियवयणु ।
संसारदुक्खणिव्वेइयउ जोयवि मिलियउ भव्वयणु ॥८॥

९

दुवई—ता णिग्गंतधीरदिव्वज्झुणितोसियफणिणरामरो ।
जीवाजीवणामकयभेयइं तच्चइं कहइ जिणवरो ॥१॥
सभवाभव जीव दुभेय होंति ते सभव सकम्मे परिणमंति ।
चउरासीजोणिहिं परिभमंति अण्णण्णदेहराएं रमंति ।
५ वियलिंदिय सयलिंदिय अणेय एक्किंदिय भासिय पंचभेय ।
आहारसरीरिंदियसणाहं आणाभासापरमाणुयाहं ।
जं कारणु णिव्वत्तणसमत्थु तं पज्जत्ति त्ति भणंति एत्थु ।
तं छव्विहु परमेसें पवुत्तु अहमेण ठाइ अंतोमुहुत्तु ।
जिह णारएसु तिह सुरवरेसु दसवरिससहासइं वसइ तेसु ।
१० परमें तितीस सायरसमाइं मणुएसु तिण्णि पलिओवमाइं ।
एइंदिएसु चत्तारि होंति वियलिंदिएसु पंच जि कहंति ।
ता जाम असण्णिउ पंचकरणु सण्णिउ पज्जत्तीछक्कधरणु ।
एयहिं जे पज्जप्पंति णेय ते जंति अपज्जत्ता अणेय ।
पज्जप्पंतहु लग्गइ खणालु जगि सव्वहु भिण्णमुहुत्तु कालु ।
१५ घत्ता—ओरालिउ तिरियहुं माणवहुं सुरणारयहुं विउव्वियउ ।
आहारअंगु कासु वि मुणिहि कम्मु तेउ सयलहं वि थियउ ॥९॥

१०

दुवई—तिरिय हवंति दुविह तस थावर थावर पंचभेयया ।
पुहवी आउ तेय वाऊ वि य बहुविह हरियकायया ॥१॥
मसुरिय कुसजल सूईकलाव परिधाविरधयसंठाण भाव ।
तोरणतरुवेइयगिरियलेसु सुरहरवसुसंखामहियलेसु ।

---

६ MB °दुप्पउ । ७. M धवलचंदहु; B धवलवंदहु; P धवलविंदहु and gloss समूहस्य ।
८. MBPK कयपणिवायभाउ । ९. MB जाएवि ।

९ १. B °वासियं° । २. M भव वाभव । ३. MBP परिणवंति । ४. MBP चउरासिलक्खजोणिहिं भमंति । ५. BP दहवरिसं° । ६. MBP पज्जत्तहु लग्गइ इय खणालु । ७. MBP विउव्विउ । ८. MBP थिउ ।

१० १ K पुहई ।

क्षमादि जिसके अंग हैं। चौरासी लाख योनियाँ जिसके रोम हैं ऐसे उसके लिए दुष्ट गोपति समूह उत्पन्न हो गया। जो कामधेनु है, जिसने सुधामकी सेवा की है, जिसने मोहरूपी रस्सी तोड़कर फेंक दी है। और जो दुर्धर व्रतभारके धुराग्रको धारण कर, जो प्रवर्तित नहीं हुआ ऐसे तीर्थं पथपर चलकर और पार कर ज्ञानके तीरपर पहुँचा है, और जो धीर अशोक वृक्षके नीचे विश्राम कर रहा है, जिसने संसारके अलंघ्य पथको पार कर लिया है, जो धवल, धवलसमूहमें महाआदरणीय है उसके प्रति प्रणतभाव प्रदर्शित करते हुए भरतराज अपने कोठेमे बैठ गया।

घत्ता—हाथोंकी अंजली जोड़ते हुए, सिरसे प्रणाम करते हुए तथा भक्ति और हर्षसे प्रफुल्लमुख भरत संसार दुःखसे विरक्त भव्य जनोको देखकर उनमे जा मिला ॥८॥

९

तब निकलती हुई घोर दिव्य ध्वनिसे नाग, नर, अमरको सन्तुष्ट करनेवाले जिनवर जीव अजीव नामसे भेदवाले तत्त्वोंका कथन करते है—सभव और अभव (जन्मा और अजन्मा) जीव दो प्रकारके होते हैं। इनमे सभी जीव अपने कर्मके अनुसार परिणमन करते हैं। चौरासी लाख योनियोमे परिभ्रमण करते हैं। एक दूसरेके शरीरसे अनुराग करते हैं। विकलेन्द्रिय और सकलेन्द्रिय अनेक होते हैं। एकेन्द्रियके पाँच भेद होते हैं, जो कारण रचना करनेमें समर्थ होता है उसे पर्याप्ति कहते हैं। परमेश्वर जिनने उसे छह प्रकारका कहा है। पर्याप्तिके पूर्व होनेका काल एक अन्तर्मुहूर्त है। जिस प्रकार नारकियोमे उसी प्रकार देवोमें (जघन्य आयुके रूपमे) जीव दस हजार वर्ष जीवित रहता है। उत्कृष्ट आयु तैंतीस सागर प्रमाण है और मनुष्योंमे तीन पल्य बराबर आयु होती है। एकेन्द्रिय जीवोंके चार पर्याप्तियाँ है और विकलेन्द्रिय जीवोंके पाँच इन्द्रियाँ कही जाती है। असंज्ञी पंचेन्द्रिय जीवोके पाँच पर्याप्तियाँ होती है और संज्ञी पंचेन्द्रिय जीवोंके छह। और इनके द्वारा जिनका कथन नही होता, वे अपर्याप्तक जीवके रूपमे जाने जाते है। पर्याप्तक जीवके लिए एक क्षणका समय लगता है। विश्वमे सभी पर्याप्तियोमें एक अन्तर्मुहूर्त काल लगता है।

घत्ता—तिर्यंच और मनुष्योंका औदारिक शरीर होता है, देव और नारकीयोंका वैक्रियक शरीर। आहारक शरीर, तैजस और कार्मण शरीर सभीके होते है ॥९॥

१०

तिर्यंच दो प्रकारके होते है—त्रस और स्थावर। स्थावर पाँच प्रकारके होते हैं—पृथ्वीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक, वायुकायिक और वनस्पतिकायिक। जो क्रमशः मसूर, जलकी बूँद, सूइयोंका समूह और उड़ती हुई ध्वजके आकारके होते है। तोरण, वृक्षवेदिका,

णाणाविहसायरि[2] सरिसरेसु पण्णारह जिणभवभूयलेसु[3] ।
५ अवरेसु वि बहुछेत्तंतरेसु बंभंतपरिट्ठियणहयलेसु ।
अइसरसरसातोयासएसु एयाण कमेण जि होइ वासु ।
खरजलिण ण भिज्जइ वालुयाइ सण्ही सिंचियँ[4] खणि वंधु लेइ ।
दुविह वि मट्टिय किर पंचवण्ण जइ होइ होउ संकिण्ण अण्ण ।

१० घत्ता – कसिणारुण[5] हरिय सुपीयलिय पंडुर अवर वि धूसरिय ।
एंही महिकायहुं मउय महि[6] पंचवण्ण मइं वज्जरिय ॥१०॥

११

दुवई—कंचण तउंय[1] तंब मणि रुप्पय खरपुहई पयासिया ।
वारुणिखीरखारघयमहुसम जलजाई[2] वि भासिया ॥१॥
दूरहु दरिसावियधूममलिणु असणी तडि रवि मणि जोइ[3] जलणु ।
उक्कलि मंडलि गुंजाणिणाउ दिसविदिसाभेएं भिण्णु[4] वाउ ।
५ गुच्छेसु गुम्मवल्लीतणेसु पव्वेसु रुक्खसाहाघणेसु ।
[5]सुपसिद्धु वणासइकाउ एसु उप्पज्जइ जइ[6] घोसइ जईसु ।
पज्जत्तेयर सुहुमेयरा वि दुससाहारण पत्तेय के वि ।
साहारणाहं साहारणाइं आणापाणइं आहारणाइं ।
पत्तेयहुं पत्तेयइं गँयाइं[7] छिंदणभिंदणणिहणं[8] गयाइं ।
१० बारहसहाससंवच्छराहुं सुहुमाहुं दह जि दह दो खराहुं ।
आउहि परमाउसु सत्त झुणइ अहरत्तइं चिचिहि तिण्णि भणइ ।
तइयहसहासइं गंधवाहु दहसहसाइं जि वणसइसमूहु ।
परमेण जि अइअवरेण उत्तु सव्वहं जीविउ अंतोमुहुत्तु ।
तुंदाहि कुक्खि किमि खुल्ल संख[9] वीइंदिय[10] मइं भासिय असंख ।
१५ तीइंदिय[11] गोभिपिपीलियाइं चउरिंदिय मच्छियमहुयराइं ।
घत्ता—परिवाडिए किं पि णाणभवणु एयहं जुत्तिइ सावडइ ।
रसु गंधु णयणु फासहु उवरि एक्केकउं इंदिउ चडइ ॥११॥

१२

दुवई—पज्जत्तीउ पंच कमसंठिय छह सत्तट्ठ प्राणया ।
तेसिं होंति एम पभणंति महामुणि विमलणाणया ॥१॥

---

२. MBP सायर° । ३ MBP जिणवरमहियलेसु । ४. MB सित्तिय; P सेंचिय । ५ MBP कसणारुण ।
६ P महिकायहुं जीवहु मउय मही ।

११ १ MBP तउय । २ MB °मणिजाइ । ३ MBP दिसि° । ४ M दिण्णु, P भिण्णवाउ ।
५. M सुवसिद्ध°; BP सुपसिद्ध° । ६ M जिइ; P जिउ । ७. MBPT पत्तेयंगयाइं । ८ MBP णिहणइ । ९. M रुदाहि सुक्खि, रुंदाहि कुक्खि, T तुदाहि गण्डूपद । १०. MBP वेइंदिय ।
११ MBP तेइंदिय ।

गिरितल देव, विमान आठ प्रकारकी भूमियोंमें नाना प्रकारके समुद्रों, नदियों, सरोवरों, जिनवर-भूमियोंमें और भी दूसरे-दूसरे क्षेत्रोंमे लोकान्त तक स्थित आकाशतलमे, अति सरस रस और जलके आशयोंमे इनका एक क्रमसे निवास होता है। बालुका (रेत) खरजलसे भी नही भिदती, और जो कोमल मिट्टी सींचनेपर जल्दी बँध जाती है। इस प्रकार दो प्रकारकी मिट्टी पाँच रंगकी होती है, और दूसरेसे मिलनेपर दूसरे रंगकी हो जाती है।

घत्ता—काली, लाल, हरी, पीली, सफेद और भी घूसरित (मटमैली)। इस प्रकार पाँच पृथ्वीकायकी मृदु धरतीके पाँच रंगोंका मैने कथन किया ॥१०॥

११

स्वर्ण, ताम्र, मणि और चाँदी आदि खर पृथ्वियाँ कही जाती हैं। वारुणी, क्षीर, क्षार, घृत, मधु आदि जल जातियाँ कही जाती है। वज्र, बिजली, सूर्य और मणिको दूरसे धूम्रका प्रदर्शन करनेवाली आग समझो। उत्कलि (तिरछी बहनेवाली वायु), मण्डली (गोलाकार बहनेवाली वायु), गुंजा (गूँजनेवाली वायु), इस प्रकार दिशा-विदिशाके भेदसे वायु कई प्रकारकी होती है। गुच्छों, गुल्मों, लताशरीरों, पर्वोंमे, वृक्ष शाखाओं आदिमे शुद्ध वनस्पतिकाय जीव उत्पन्न होते हैं, दुनियामे ऐसा यतिवर कहते हैं। ये पर्याप्तकसे भिन्न और सूक्ष्मसे भिन्न होते हैं। कोई वनस्पति-कायिक जीव साधारण और प्रत्येक भी होते हैं। साधारण प्रकारके वनस्पतिकायिक जीवोंके श्वासोछ्वास और आहारण होते है (प्राण)। प्रत्येकसे उत्पन्न प्रत्येक उत्पन्न होते हैं जो छेदन-भेदन और निधनको प्राप्त होते हैं। सूक्ष्म पृथ्वीकायिक जीवोंकी दस हजार; खर पृथ्वीकायिक जीवोकी बीस हजार वर्ष आयु है। जलकायिक जीवोंकी आयु सात हजार वर्ष, अग्निकायिक जीवोंकी तीन दिन, वायुकायिक जीवोंकी तीन हजार वर्ष, वनस्पतिकायिक जीवोंकी दस हजार वर्ष आयु होती है। यह परम आयु कही गयी। अत्यन्त निकृष्ट या जघन्य आयु सब जीवोकी अन्तर्मुहूर्त मात्र कही गयी है। गण्डूपद, कुक्षी, कृमि, शम्बूक, शंख आदि दो इन्द्रिय जीवोंको मैंने असंख्य कहा है। तीन इन्द्रिय वीरबहूटी, पिपीलिका आदि, चार इन्द्रिय जीव मच्छर और भ्रमर इत्यादि।

घत्ता—परम्परासे इनमे युक्तिसे कुछ भी ज्ञानचेतना उत्पन्न होती है। रस, गन्ध, स्पर्श और दृष्टि इनमे-से एक-एक इन्द्रियपर चढ़ती है ॥११॥

१२

दो इन्द्रिय जीवके पर्याप्तक अवस्थामे छह प्राण होते हैं, तीन इन्द्रिय जीवके पर्याप्तक अवस्थामे सात प्राण होते हैं और अपर्याप्तक अवस्थामे पाँच प्राण होते है, चार इन्द्रिय जीवके पर्याप्तक अवस्थामे आठ प्राण होते हैं, और अपर्याप्तक अवस्थामें छह प्राण होते हैं। उनके लिए

पंचिंदिय सण्णि असण्णि दोण्णि मणवज्जिय जे ते घुवु असण्णि ।
सिक्खालावाइं ण लेंति पाव अण्णाणगूढ[1]दढमूढभाव ।
५ असु णव जि समत्तिउ पंच ताहं वज्जरइ जिणिंदु असण्णियाहं ।
छहिं पज्जत्तिहिं पज्जत्तएहिं संफासणलोयणसोत्तएहिं ।
मणवयणकायरसघाणएहिं आणा[3]प्राणाउ अ[4]प्राणएहिं ।
दहहिं मि जियंति सण्णिय तिरिक्ख अक्खमि णाणाविह दुण्णिरिक्ख ।
जलयर झसाइ पंचप्पयार कच्छव मयरोहर सुंसुयार ।
१० [5]णहयर समुग्ग [6]फुंडवियडपक्ख अण्णेक्क चम्मघणलोमपक्ख ।
थलयर चउपय चउविह अमेय एक्कखुर [7]दुखुर करिसुणहपाय ।
उरसप्प [8]महोरय अजगराइ [9]किं ताहं गइंदु वि कवलु होइ ।
[10]भुयसप्प वि वक्खाणिय सभेय सरडुंदुरगोधाणामधेय ।

घत्ता—जलयर जलेसु खग तरुगिरिसु थलयर गामपुरेसु वणे ॥
दीवोयहिमंडलमज्झि तहिं [11]पढमु दीवु भासंति [12]जणे ॥१२॥
१५

१३

दुवई—जोयणलक्खु लक्ख [1]बहुपविउल पुणु गयगणियमेरया ।
अत्थि असंखदीववरसायरवलयायारधारया ॥१॥
जंबूदीवो धा[2]दइसंडो पुक्खरवरदीवो [3]मगचंडो ।
मइरो खीरो घयमहु[4]णामो णंदीसो अरुणोरुण[5]धामो ।
५ कुंडलसण्णो संखो रुजगो भुजगवरो अवरो वि हु कुसगो ।
कोंचो एवं दीवसमुद्दा दूणपि[6]हू दावियणियमुद्दा ।
एएसु तिरियाणं ठाणं जलयरथलयरणहयरयाणं ।
वियलिंदियपंचिंदिययाणं एण्हिं वोच्छं कायपमाणं ।
साहियजोयणसहसुच्छेहं पउमं दीसइ वड्ढियदेहं ।
१० अवि य दुकरणो को वि वरिट्ठो बारहजोयणदीहो दिट्ठो ।
होइ तिकोसो तिकरणवंतो चउकरणिल्लो जोयणमेत्तो ।

घत्ता—लवणण्णवि कालण्णवि विउले होंति सयंभूरमणि झस ।
सेसेसु णत्थि जिणभासियउ सेणिय णउ चुक्कइ अवस ॥१३॥

१२ १. M मणि । २ MB मूढ घणगूढभाव; K मूढ घणगूढभाव but corrects it to गूढ घणमूढभाव । ३ MBP °पाणाउ । ४. MBP अपाणएहिं । ५ M अहयर । ६. M पड°; BP फड । ७. MBP दुक्खुर । ८. M महोयर । ९ MBP किर । १०. MBP सरिसप्प । ११. MBP पढमदीउ । १२. M जिणे' K जिणे but corrects it to जणे ।

१३. १ MBB तह । २. P धाइयसंडो । ३. MBP मिगचडो । ४. MBP णामें । ५ MBP धामें । ६. MBP दूणं पि हु । ७. MB add after this : लवणोवहि कालोवहि णामें, सेस समुद्द (B सो समुद्द वि) वि दीवहु णामें ।

प्राण होते है, इस प्रकार विमल ज्ञानवाले महामुनि कहते हैं। पांच इन्द्रिय जीव संज्ञी-असंज्ञी दोनों होता है, जो मनसे रहित है, वे निश्चितरूपसे असंज्ञी होते है, वे पापी शिक्षा और बातचीत ग्रहण नही कर पाते, अज्ञानके आच्छादनके कारण उनका मूढभाव दृढ़ होता है। असंज्ञी पांच इन्द्रिय पर्याप्तक जीवके नौ प्राण होते हैं। सम्पूर्ण छह पर्याप्तियों स्पर्श, लोचन और श्रोत्रों, मन-वचन-काय-रसना-घ्राण-श्वासोच्छ्वासों और आयु इन दस प्राणोसे संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच जीवित रहते हैं। दुर्दर्शनीय नाना प्रकारसे उनका मै वर्णन करता हूँ। जलचर पांच प्रकारके होते है—मछली, मगर, उहर, कच्छप और सुंसुमार। नभचर भी सम्पुट, स्फुट और विकट पक्षवाले होते हैं। दूसरे घने चमड़े और विलोम पक्षवाले होते हैं। थलचर चौपाये चार प्रकार के होते हैं—एक खुर, दो खुर, तथा हाथी और कुत्तोंके पैर वाले। उरसर्प, महोरग और अजगर इनका क्या, हाथी इनके कौरमें समा जाता है। भुजसर्पोका भी भेदोंके साथ वर्णन किया जाता है। ये सर ढुंढर और गोधा नामवाले होते है।

घत्ता—जलचर जलोंमें, नभचर वृक्षों-पहाड़ोंमें और थलचर ग्राम-नगरोंमें निवास करते हैं। द्वीप और समुद्रमण्डलके मध्य जिनोंके द्वारा प्रथम द्वीप कहा जाता है ॥१२॥

१३

पिछले गणितकी मर्यादाके विचारसे एक लाख योजन विस्तारवाला अत्यन्त विशाल जो असंख्य द्वीप और श्रेष्ठ सागरोंके वलय आकारको धारण करनेवाला। जम्बद्वीप, धातकी खण्ड, श्रेष्ठ पुष्कर द्वीप, मृगचण्ड-मदिर-खीर और घृत-मधु नामवाले। नदीश-अरुण-अरुणधाम, कुण्डल-संज्ञ, संख रुजग, भुजगवर और भी कुसग, तथा क्रौंच, इस प्रकार द्वीप समुद्र हैं, जो दुगुने विशाल और अपना आकार प्रकट करनेवाले हैं। इन द्वीपोमे तिर्यंचोका निवास है। अब मै जलचर, थलचर, नभचर और विकलेन्द्रियोंके पंचेन्द्रियोंके शरीरका प्रमाण कहता हूँ। पद्म मत्स्य, जिसकी एक हजार योजन ऊँचाई कही जाती है ऐसे विशाल शरीरवाला दिखाई देता है। और भी कोई वरिष्ठ दुकरण नामका है, जो बारह योजन लम्बा देखा गया है। त्रिकर्णवाला तीन कोशका होता है। चार कानोंवाला एक योजनका होता है।

घत्ता—लवणसमुद्र, कालसमुद्र और विशाल स्वयम्भूरमण समुद्रमे मत्स्य होते हैं, शेष समुद्रोमे नही होते। हे श्रेणिक, जिनवरके द्वारा कहा गया कभी गलत नही हो सकता ॥१३॥

१४

दुवई—जाणसु जोयणाइं अट्ठारह लवणसमुद्दमच्छया।
णव वरसरीमुहेसु छत्तीस जि कालोए दिसच्छया ॥१॥

अवसाणमहण्णवि जे वहंति ते जोयण पंचसयाइं होंति।
गयणंगणचरहं थलंभचरहं संमुच्छिसगब्भसरीरधरहं।
५ कइवयचावइं काहं मि गणंति तणुमाणु एम मुणिवर भणंति।
कासु वि संमुच्छिमजलयरासु पज्जत्तिल्लहु जोयणसहासु।
जलगब्भजम्मि भवियाइं ताइं पंचे जि जोयणइं सयाइयाइं।
एयहं तीहिं मि संमुच्छिमाहं परिवज्जियपज्जत्तीकमाहं।
अक्खिउ जिणेण दीसइ विअत्थि परमेणोगाहण णरविहत्थि।
१० थलगब्भयदेहि तिगाउयाइं परमेण माणभावहु गयाइं।
सुहुमहु वायरहुं मि ध्रुवुं पवण्णु अंगुलअसंखभायउ जहण्णु।

घत्ता—जगि सुहुमणिगोयसमुब्भवहं अवि यसमत्तहुं ण वि रहिउ।
णिक्किट्ठु कुसुमयंतें पहुणा उत्तिमु जलयराहं कहिउ ॥१४॥

इय महापुराणे तिसट्ठिमहापुरिसगुणालंकारे महाकइपुप्फयंतविरइए महाभव्वभरहाणुमण्णिए महाकव्वे तिरिक्खोगाहणो णाम दसमो परिच्छेओ सम्मत्तो ॥ १० ॥

॥ संधि ॥ १० ॥

---

१४. १ M णवर मरी°; BP णव जि सरी°। २ BP वहंति ३. P काहिं। ४. MBP पंच वि। ५ M विहत्थि, BP वियत्थि। ६. MPT विअत्थि। ७ MB धुउ; P धुव°; K धुवु। ८. M णिक्किट्ठु कुसुमयत्तें। ९ M उत्तम°; P उत्तमु। १०. MBP तिरिक्खोगाहणा।

१४

लवणसमुद्रके मत्स्य अट्ठारह योजनके होते हैं। गंगा आदि नदियोंके प्रवेश स्थानोंपर छत्तीस योजनके होते हैं; तथा कालोदसमुद्रमें दिशाओंको आच्छादित करनेवाले। अवसान (अन्तिम स्वयम्भूरमण) समुद्रमें जो मत्स्य बहते हैं, वे पाँच सौ योजनके होते हैं। आकाशके आँगनमें विचरनेवालों, थल और आकाशमे चलनेवालों, संमूर्छन और गर्भज जन्म धारण करने-वालोंका शरीरमान कई धनुषोंका गिना जाता है, इस प्रकार मुनिवर कहते हैं। किन्हीं पर्याप्तक जलचरोंका शरीरमान एक हजार योजनका मापा जाता है, इस प्रकार पर्याप्ति क्रमसे शून्य इस संमूर्छन जीवोंकी अवगाहना, जिनेन्द्र भगवान्के द्वारा कही गयी दो हाथकी दिखाई देती है, इनकी परम अवगाहना नर विअत्थि होती है; गर्भधारी थलचरोंकी अवगाहन तीन गव्यूति (६ कोश) परम मानसे होती है। सूक्ष्म बादर जीवोकी जघन्य अवगाहना अँगुलीके असंख्य भागके बराबर होती है।

घत्ता—विश्वमें सूक्ष्म निगोदमें जन्म लेनेवाले अपर्याप्त जीवोको भी उन्होंने गुप्त नही रखा। कामदेवका नाश करनेवाले उन्होंने जलचरोंकी उत्कृष्ट और जघन्य अवगाहनाका कथन किया है।

इस प्रकार त्रेसठ महापुरुषोंके गुणालंकारोंसे युक्त इस महापुराणमें महाकवि पुष्पदन्त द्वारा विरचित और महाभव्य भरत द्वारा अनुमत महाकाव्यका तिर्यंच अवगाहन नामक दसवाँ परिच्छेद समाप्त हुआ ॥१०॥

संधि ११

पुणु इंदियभेउ वम्महपसरणिवारएण ॥
भासियउ असेसु लोयहु रिसहभडारएण ॥ ध्रुवकं ॥

१

जाणइ सण्णिउ जो पज्जत्तउ पुट्ठउ सुणइ सद्दु गेयसोत्तिउ[1] ।
णिल्लोयणतिउ[2] पुट्ठपविट्ठउ[3] रूवु[4] णियच्छइ अप्परिमट्ठउ ।
५ फासु गंधु रसु णवहिं जि भावइ बारहजोयणेहिं सुइ पावइ ।
सत्तेतालसहस्सइं[5] दिट्ठिहिं अवरु वि दोण्णि[6] सयइं तेसट्ठइं ।
चक्खिदियहु विसउ वक्खाणिउ जेहउ केवलणाणें जाणिउ ।
गंधगहणु अइंवत्तसमाणउं[7] सवणु वि जवणालीसंठाणउं ।
दिट्ठिइं[8] पडिम णिएज्ज मसूरी अक्खिय जीह[9] खुरुप्पायारी ।
१० [10]सहरियतसदेहेसु[11] पयासउ फासु अणेयरूवविण्णायउ ।
[12]समचउरंसु ठाणु सुरसत्थहु हुंडु वि णारयगणहु अहत्थहु ।
मणुयतिरिक्खहु छप्पि[13] पवुत्तइं भोयभूमिवियलहु पढमंतइं ।
[14]खुज्जउ वावणंगु णग्गोहउ सब्भासिउ तिरिक्खणररोहउ ।
एइंदिय [15]णारइय सुसंपुड- जोणिहिं होंति सकम्मसमुब्भड ।
१५ वियलिंदिय वि वियडजोणीहव संपुड वियड होंति गब्भुब्भव ।
[16]पासुयजोणि देवणारइयहं मीसा गब्भणिवासें लइयहं ।
सीयलुण्ह उण्हेव हुयासहं ताहं विहिं मि तिविहा पुणु सेसहं ।
मंथरगमणहं ससहरवयणहं संखावत्तजोणि थीरयणहं ।
घत्ता—तहिं जीव अणेय णउ लहंति संपुण्ण तणु ॥
२० णियकम्मवसेण होंति मरेप्पिणु जंति पुणु ॥१॥

MEP give, at the commencement of this Samdhi, the following stanza:—

सूर्यात्तेज गभीरिमा जलनिधे. स्थैर्यं सुराद्रेर्विधो.
सौम्यत्व कुसुमायुधाच्च सुभगं त्याग बले. संभ्रमात् ।
एकीकृत्य विनिर्मितोऽतिचतुरो धात्रा सखे साम्प्रतं
भरतार्यो गुणवान् सुलब्धयशस. खण्डकवेर्वल्लभः ॥

M reads विधी for विधो ; MB read कुसुमायुधात्सुभगता for कुसुमायुधाच्च सुभगं, and खण्डःकवेर्वल्लभ for खण्डकवेर्वल्लभः ।

GK do not give it.

१ १. MP गयसुत्तउ, B गयसोत्तउ । २. MB णिल्लोयणु । ३. B तिउपुट्ठु । ४ MBP रूउ । ५. MBP सत्तेचालीससहसइं । ६ MBP विण्णि । ७. MBP अइमुत्त° । ८. MBP दिट्ठिहि । ९. M जीय । १०. BT सुहरिय° । ११. MB तसदेवेसु । १२. MB °चउरंस° । १३. MBP छण्णि य उत्तइं । १४. K reads this line before line 12 । १५ MBP णारयसुसंपुड । १६. MBP फासुय° ।

सन्धि ११

फिर कामके प्रसारका निवारण करनेवाले आदरणीय ऋषभ जिनने अशेष लोकके इन्द्रिय भेदका कथन किया।

१

जो संज्ञी पर्याप्तक जीव है वह स्पष्ट श्रोत्रगत शब्दको सुनता है। नेत्रोंको छोड़कर तीन इन्द्रियाँ (स्पर्श, रसना और घ्राण) पुष्ट और प्रविष्टको दूरसे जान लेती है। आँख अस्पष्ट रूपको देखती है। स्पर्श, गन्ध और रसको वे नौ योजन दूरसे जान लेती हैं। कान बारह योजन दूरसे जान लेते हैं। दृष्टि (आंख) का इष्ट-विषय सैंतालीस हजार दो सौ त्रेसठ योजन है। यह चक्षु इन्द्रियके विषयका व्याख्यान किया, जैसा कि केवलज्ञानसे जाना गया। गन्धग्रहण (नाकका अन्तरंग) अतिमुक्तक पुष्पके समान है। और कान (अन्तरंग) जौ की नलीके समान है। आंखमे मसूरकी आकृति जानना चाहिए; और जीभको अर्धचन्द्रमाके समान कहा जाता है। हरी वनस्पति और त्रसोंके शरीरोंमे प्रकाशित स्पर्शको अनेक रूपोंसे जाना जाता है। देवसमूहका शरीर सम चतुरस्र संस्थान होता है। अधोलोकमे स्थित नारकीयोंका हुंड शरीर होता है। मनुष्य और तिर्यंचोंके छहों शरीर ही कहे जाते हैं। भोगभूमियोंका प्रथम अर्थात् समचतुरस्र संस्थान और विकलेन्द्रियोंका अन्तिम अर्थात् हुंड संस्थान होता है। कुब्जक, बावनांग और न्यग्रोधको तिर्यंचों और मनुष्योंका रोधक कहा जाता है। एकेन्द्रिय और नारकीय सुसंवृत योनिमें उत्पन्न होते हैं और अपने कर्ममें उद्‌भट होते हैं। विकलेन्द्रिय भी विवृत योनिमें होते हैं, गर्भसे उत्पन्न होनेवाले संवृत और विवृत योनियोंमें उत्पन्न होते हैं। देव नारकीय अचित्त योनिमे होते हैं। गर्भमें निवास करनेवाले मिश्रित योनि भी ग्रहण करते हैं, किसीकी उष्ण योनि होती है और किसीकी शीतल। तैजसकायिक जीवोंकी उष्ण योनि होती है, देवों और नारकीयोकी तीनों योनियाँ (उष्ण, शीत और मिश्र) होती है। शेषकी तीन योनियां होती हैं। मन्थरगमन करनेवाले, चन्द्रमुखवाले और स्त्रीरत्नोकी शंखावर्त योनि होती है।

घत्ता—संसारमे अनेक जीव सम्पूर्ण शरीर ग्रहण नही कर पाते, अपने कर्मके वशसे जो उत्पन्न होते हैं और मरकर चले जाते हैं ॥१॥

२

होंति अरुह कुम्मुण्णयजोणिहिं केसव राम चक्कि सुहखोणिहिं।
अवरहिं जोणिहिं रुहिरावत्तहिं पायडजणवंयवंसावत्तहिं।
इंदियजुयल जियंति सहरिसइं मइं विण्णायउ वारहवरिसइं।
तीइंदियहु मि राइविमीसइं एंकुणवण्णास जि किर दिवसइं।
५ चउरिंदियहु आउ छम्मासिउ णिसुणहि पंचिंदियहु वि भासिउ।
मच्छहु पुव्वकोडि उक्किट्ठी कम्मभूमिभूयरहं मि दिट्ठी।
वासहं वायालीससहासइं उरय जियंति जायजीयासइं।
पक्खिहिं ताइं दुसत्तरि भणियइं पलिओवमइं तिण्णि परिगणियइं।
खेत्तावेक्खइ कहिं मि तिरिक्खहं एहउ उत्तमाउ पंचक्खहं।
१० मायाविय कुपत्तदाणेण वि एए होंति अट्टझाणेण वि।

घत्ता—इय कहिय तिरिक्ख एवहिं माणव वज्जरमि।
पण्णारह तीस णवइ छ भेय वि संभरमि ॥२॥

३

तिरियलोयमज्झत्थु सुहासिउ मणुउत्तरगिरिवलयविहूसिउ।
जोयणाहं णरखेत्तु रवण्णउं पणयालीसलक्खवित्थिण्णउ।
जंबूदीउ सव्वदीवेसरु एक्कु लक्खु जोयणपरिवित्थरु।
छावीसाइं पंच अहिययरइं जोयणसयइं विहियणरणयरइं।
५ दाहिणभरहु तेत्थु वित्थारें एरावउ भणु तेणायारें।
उत्तरदाहिणाहं वेयड्ढहं पण्णास जि पिहुलत्तु गुणड्ढहं।
पंचवीस उच्छेहु समासिउ एक्कु सहसु हिमवंतहु भासिउ।
सहुं वावण्णहुं वित्थरु साहिउ सउ तुंगत्ते सिहरि वि सोहिउ।
पंचुत्तरसएण सहुं लक्खिय दोण्णि सहस हिमवइयहु अक्खिय।
१० अवरहिरण्णवंतु तम्माणउ साहिउ दोहिं मि एक्कु पमाणउ।
होइ महाहिमवहु रुंदत्तणु चउसहासअहियउ उद्धत्तणु।
दोण्णि दहोत्तराइं धुवु[10] सिट्ठउ [11]रुम्मियगिरिंदि वि तेत्तिउ दिट्ठउ।

घत्ता—खेत्तहुं[12] गुरु खेत्तु गिरि गरुयारउ गिरिवरहो।
मा भंति करेज्ज वयणु ण चुक्कइ जिणवरहो ॥३॥

---

२ १. P °जणवइ। २. MBP एकुण°। ३. P °जीवासइं। ४. M °ओवम्मइं।

३. १. MBP तिरियलोउ। २ MBP एक्कलक्खु जोयणहं पवित्थरु। ३. MBP छव्वीसाइं। ४. MBP अइरावउ। ५. MB तेणुपयारें P तेण पयारें। ६ MB पयासिउ; T पसाहिउ। ७. MB हइमवयहु। ८. MBP अवरु। ९ MBP एक्क°। १०. MBP धुउ। ११. MBP रुम्मिहि दुविहु वि। १२. P खेत्तहु चउगुणु खेत्तु गिरि वि चउगुणु गिरिवरहो, T seems to have the same reading: खेत्तेत्यादि–क्षेत्राद्गुरु. गुण (?) क्षेत्रं गिरेर्गिरिश्चतुर्गुणं.।

२

शुभ भूमि कूर्मोन्नत योनियोंमें अर्हन्त, केशव, राम और चक्रवर्ती आदि उत्पन्न होते है। और गर्भयोनिके वंशपत्र आकारमे शेष प्राकृत मनुष्य उत्पन्न होते है। मैने जान लिया है कि दो इन्द्रिय जीव प्रसन्नतापूर्वक बारह वर्ष तक जीवित रहता है। तीन इन्द्रिय जीव भी रात्रियों सहित उनचास दिन ही जीवित रहता है। चार इन्द्रियोंवाले जीवोंकी आयु छह माहकी होती है। सुनो, पंचेन्द्रियोंकी भी आयु बतायी गयी है। मत्स्यकी एक पूर्व कोटी वर्ष आयु बतायी गयी है। कर्मभूमिज तिर्यंचोंकी भी एक करोड़ पूर्व वर्ष आयु होती है। साँप जीवनकी आशावाले बयालीस हजार वर्ष जीते है। पक्षी बहत्तर हजार वर्ष जीवित रहते हैं। मनुष्यों और तिर्यंचोंकी जघन्य, मध्यम और उत्कृष्ट आयु एक पल्य, दो पल्य और तीन पल्य गिनी गयी है। क्षेत्रकी अपेक्षा कही पंचेन्द्रिय तिर्यंचोंकी यह उत्तम आयु है। मायावी ये कुपात्रदान और आर्तध्यानसे भी होते हैं।

घत्ता—इस प्रकार तिर्यंचोकी आयु कही। अब मनुष्योंकी आयु कहता हूँ। उनके पन्द्रह, तीस, नब्बे और छह भेदोंको याद करता हूँ ॥२॥

३

लोकके मध्यमें तिर्यक् (तिरछा) रूपमे फैला हुआ और मानुषोत्तर गिरिवलयसे विभूषित पैंतालीस लाख योजन विस्तारवाला मनुष्यक्षेत्र है। एक लाख योजन विस्तारका जम्बूद्वीप सबसे श्रेष्ठ है। कुछ अधिक पांच सौ छब्बीस योजन (५२६ $\frac{६}{१९}$ योजन) वाले जिसमें मनुष्योंके नगर और नगरियाँ निर्मित हैं। उसके दक्षिणमे भरत क्षेत्र है और उत्तरमे इतने ही विस्तार और आकारका ऐरावत क्षेत्र है। भरत क्षेत्रमें उत्तरसे लेकर दक्षिण तक, गुणोसे भरपूर पचास योजन चौड़ाईवाला विजयार्ध पर्वत है। उसकी ऊँचाई पच्चीस योजन कही गयी है। हिमवन्त कुलाचल एक हजार बावन (और $\frac{१२}{१९}$) योजन विस्तारवाला है, ऊँचाईमें सौ योजन है, शिखरी पर्वत भी इतना है। दूसरा हैमवत क्षेत्र दो हजार एक सौ पांच, पांच बटा उन्नीस (२१०५ $\frac{५}{१९}$) योजनवाला कहा जाता है और दूसरा हैरण्य (हिरण्यवत्) क्षेत्र इसी मानवाला है, दोनोंको एक प्रमाणवाला कहा गया है। महाहिमवत् कुलाचलका विस्तार चार हजार दो सौ दस, दस बटा उन्नीस ४२१० $\frac{१०}{१९}$) योजन। (उसकी ऊँचाई दो सौ योजन) कहा गया है। रुक्मि कुलाचलका भी मान इसी प्रकार देखा गया है।

घत्ता—क्षेत्रसे बड़ा क्षेत्र, और पर्वतसे बड़ा पर्वत है; इसमें भ्रान्ति मत करो। जिनवरका वचन कभी चूक नहीं सकता (गलत नहीं हो सकता।) ॥३॥

४

चउसयाइं दिहंतिसहासइं एक्कवीस जोयणइं पयासइं ।
अहियइं किं[1] पि होंति हरिवरिसहु तं जि माणु रम्मयहु[2] सहरिसहु ।
अट्ठसयइं सोलहसहसालइं ताइं जि जाणहि वाएत्तालइं[3] ।
साहियाइं णिसिहहु[4] पिहुलत्तणु सायरसयइं भणिउं तुंगत्तणु ।
५ णीलिहिं[5] तं जि ण कोइ णिवारइ विहिं मि विदेहहं रुंदिम ईरइ ।
परमेसरु तेत्तीस[6]सहासइं उडुसयाइं चउरासीमीसइं ।
अट्ठसयाइं सबायालीसइं अण्णु वि भणु एयारहसहसइं ।
उत्तरकुरुसुरकुरुहुं पउत्तउ एउ माणु णउ ल्हसइ णिरुत्तउ ।
घत्ता—छह खेत्तइं एम भोयभुत्तिसंतोसियइं ।
१० इह जंबूदीवि तिण्णि जि कम्मविहूसियइं ॥४॥

५

पोमु[1] णाम हिमवंत[2]सरोवरु पंचसयाइं तासु परिवित्थरु ।
एक्कु सहसु दीहत्तणु वुच्चइ दहजोयणइं गहीरिम वुच्चइ ।
एयहु अक्खिउ आगमि जेत्तिउ सिहरिमहापुंडरियहु तेत्तिउ ।
अवरु महाहिमवंतु वरिल्लउ[3] ओइल्लहु विउणारउ भल्लउ ।
५ तिविहेण वि गुणेण उवलक्खिउ[4] णामु महापोमु जि मइं अक्खिउ ।
तिगिंछिसरु[5] वि णिसहासीणउं होइ महापोमक्खहु[6] विउणउं ।
णिद्धणीलणयरायणिविट्ठउ तेवड्डु जि केसरिसरु दिट्ठउ ।
सोहइ रम्मरुम्मिकयठाणें पुंडरीउ[7] तहु अद्धपमाणें ।
घत्ता—सिरिहिरिदिहिकित्तिकित्तिलच्छिणामालियउ[8] ॥
१० देवीउ वसंति सरवरि सुकयकीलियउ[9] ॥५॥

६

पोममहापोमहं तिगिंछहं[1] केसरिदोपुंडरियहं सच्छहं ।
जलपूरियगिरिकंदरदरियउ सुणसु महाणईउ णीसरियउ ।
गंगा सिंधु रोहि भंगाली रोहियास मंथरगइ लीली ।
हरि[2] हरिकंत सीय सीओयय णारी णरकंता वि महोयय ।
५ कणयकूल[3][4] रुप्पयकूलाली रत्ता रत्तोया वि झसाली ।

४. १. MBP होंति किं पि । २. MB रुम्मयहु । ३ MBP वाइत्तालइं । ४ MBP णिसहहु । ५. MBP णीलहु । ६ BP तेतीस° ।

५. १. MBP पोमणामु । २. MBP हिमवंति । ३. MBP उवरिल्लहु । ४. MBP ओलक्खिउ । ५. MB तिग्गिच्छि वि सरु; P तिगिंछि वि सरु । ६ MBP महापउमक्खहु । ७. P महापुंडरीउ तहं अद्ध° । ८. MK °दिहिकित्तिबुद्धिलच्छि° । ९. M सुहकयकीलउ; BP सुहकयकीलियउ ।

६. १. MBP तिग्गिछहं । २. B omits this line. ३. B omits this line. ४ P कसयकूल ।

४

हरिक्षेत्र कुछ अधिक आठ हजार चार सौ इक्कीस, एक बटे उन्नीस योजन प्रकट किया गया है; रम्यक क्षेत्रका विस्तार भी इतना ही है। निषध पर्वतका विस्तार सोलह हजार आठ सौ बयालीस, दो बटे उन्नीस योजन है। उसकी ऊँचाई चार सौ योजन कही गयी है। नील कुलाचलका भी विस्तार और ऊँचाई इतनी ही है, उसका कोई निवारण नहीं कर सकता। दोनों (अर्थात् निषध और नील कुलाचल) मिलकर विदेह क्षेत्रके विस्तारकी रचना करते है, जो तैंतीस हजार छह सौ चौरासी, चार बटा उन्नीस योजन है। और भी उत्तरकुरु तथा दक्षिणकुरुका विस्तार ग्यारह हजार आठ सौ बयालीस योजन कहा गया है, निश्चय ही यह मान कम नहीं होता।

घत्ता—भोगभूमिसे सन्तुष्ट रहनेवाले ये छह क्षेत्र हैं। इस जम्बूद्वीपमें कर्मभूमिसे विभूषित तीन क्षेत्र है ॥४॥

५

हिमवत् पर्वतपर पद्म नामका सरोवर है, उसका परिविस्तार पाँच सौ योजन है, एक हजार योजन उसकी लम्बाई कही जाती है। और दस योजन गहराई। इस पद्म सरोवरका आगममे जितना विस्तार कहा गया है, शिखरी कुलाचलपर स्थित महापुण्डरीक सरोवरका भी यही विस्तार हैं। और श्रेष्ठ महाहिमवान् पर्वत है; उससे दुगुना। उसके ऊपर पद्म सरोवरसे तीन गुना महापद्म नामका सरोवर है, यह मैने कहा। निषध पर्वतपर स्थित तिगिंच्छ सरोवर महापद्म नामके सरोवरसे दुगुना होता है। स्निग्ध नील नगराजपर स्थित केशरी सरोवर भी उतना ही बड़ा है। रमणीय रुक्मी पर्वतपर स्थित पुण्डरीक सरोवर उससे आधा है।

घत्ता—श्री, ह्री, धृति, कीर्ति, बुद्धि और लक्ष्मी नामकी पुण्य क्रीड़ा करनेवाली देवियाँ सरोवरोंमें रहती हैं ॥५॥

६

सुनो—पद्म, महापद्म, तिगिंच्छ, केशरी, पुण्डरीक और महापुण्डरीक स्वच्छ सरोवर है। उनसे अपने जलसे पहाड़ी गुफाओं और घाटियोंको आपूरित करनेवाली महानदियाँ निकली है—गंगा, सिन्धु, लहरोवाली रोहित, मन्थरगामिनी रोहितास्या, हरि, हरिकान्ता, सीता, सीतोदा, महाजलवाली और नरकान्ता। स्वर्णकूला और रूप्यकूला तथा मत्स्योसे भरपूर रक्ता और

एयउ भणियउ चोद्दह सरियउ वयगुणियउ सत्तरि वित्थरियउ।
अड्ढाइज्जहं पंच जि मंदर बहुवेयड्ढखयरकुलसुंदर।
घत्ता—वक्खारगिरिंद कुंडलरुजगिरि सुकारगिरि॥
खेत्तंतर्हि अत्थि बहुविहसिहरुद्धरियसिरि॥६॥

७

जंबूदीवहु बाहिरि थक्कइं ठाणइं जाइं सहावामुक्कइं।
पढम सुसंकिण्णइं पुणु रुंदइं ताइं होंति मल्लयपडिछंदइं।
कयतिहेयगुणणे संजुत्तइं कम्मभोयभावेण विहत्तइं।
लवणसमुद्दि अट्ठचालीसइं कालोयइ तेत्तियइं जि देसइं।
५ बहुजोयणसयमाणविसेसइं संति कुभोयभूमिआवासइं।
थीपुरिसइं दो दो रइरत्तइं भद्दसहावइं मणहरगत्तइं।
विगयाहरणइं णिच्चेलक्कइं कण्हइं धवलइं हरियइं सक्कइं।
रम्मइं सोमइं णिच्चपहिट्ठइं जिणणाहेहिं जिणागमि सिट्ठइं।
घत्ता—एक्कोरुयधारि पुंछधारि तहिं सिंगधर॥
१० पुव्वादिसु होंति उत्तरदिसि णिब्भास णर॥७॥

८

सक्कुलिकण्ण कण्णपावरण वि लंबकण्ण ससकण्ण कुमणुय वि।
हरिमुह करिमुह झससामलमुह आदंसणमुह जलहर कइमुह।
सद्दूलाणण मेसविसाणण सत्तारहतरुहलरसमाणण।
सयल वि उज्जय पंकयलोयण एक्कोरुय गिरिमट्टियभोयण।
५ अट्ठारहजाईहिं रवण्णा छण्णवइहिं खेत्तेहिं विहिण्णा।
एक्कु जि पलिओवमु जीवेप्पिणु होंति भवणवणवासि परेप्पिणु।
हरिहिमलोहियपीयलवण्णा तीससुभोयभूमिवित्थिण्णा।
हारदोरकंकणकुंडलधर दिव्ववत्थ सिरवलइयसेहर।
मइरंगहिं वीणापडहंगहिं विविहविहूसणंगजुइअंगहिं।
१० भायणभोयणंगभवणंगहिं अंबरदीवकुसुममालंगहिं।
एयहिं कप्परुक्खहिं महिं छज्जइ भोउ णिरंतरु मणुयहिं भुज्जइ।
अहममज्झि मुत्तिमसुहसंगइं ललियसहावइं णिरु ललियंगइं।
एक्कु दु तिण्णि पल्ल जीवेप्पिणु होंति कप्पवासेसु चएप्पिणु।

---

५. MP चउदह।

७. १ M सल्लइयडि°। २ B कयतिहेण गुणणे P कयतिभेयगुणण्णे। ३ MBP किण्हइं। ४ MBP जिणणाहेण। ५. MBP दिट्ठइं। ६ MBP पुच्छधारि।

८. १ P जलहरमुह कइ°। २ MPK पलियओवमु। ३. MBP °उप्पण्णा। ४. P °डोर°। ५ MBP भोयणभायणंग°। ६. MBP एहिं। ७. MBP रज्जइ। ८ B भाउ। ९. P भुंजइ। १०. BBP °मुत्तम°। ११. MBP मरेप्पिणु।

रक्तोदा। ये चौदह नदियाँ कही गयी है। इनमे पांचका गुणा करनेपर सत्तर हो जाती हैं। ढाई द्वीप (जम्बूद्वीप, धातकीखण्ड और आधा पुष्करद्वीप) में पाँच मन्दराचल है जो विजयार्ध पर्वत और विद्याधरकुलोंसे सुन्दर हैं।

घत्ता—क्षेत्रोंके अन्तर्गत वक्षार गिरीन्द्र, कुण्डल, रुचकगिरि और सुकारगिरि हैं जो अपने विविध शिखरोपर श्रीको धारण करते है ॥६॥

७

जम्बूद्वीपके बाहर, अपने स्वभावको नही छोड़नेवाले बहुत-से अन्तर्द्वीप है। पहला सुसंकीर्ण, दूसरा रुन्द। वे शराव (सकोरे) के आकारके है, और उत्तम, मध्यम तथा जघन्य इन तीन भेदोंसे युक्त कर्मभूमिके भावसे (अपनी चेष्टासे फलादिका आहार ग्रहण करनेवाले) विभक्त हैं। लवण समुद्रमे अड़तालीस और कालोद समुद्रमे भी उतने ही देश है। सैकड़ों योजनोंके मानसे विशिष्ट, कुभोगभूमियोके आवास वहाँ हैं। रतिमें अनुरक्त वहाँ दो-दो स्त्री-पुरुष है, भद्रस्वभाव और सुन्दर शरीरवाले, आभरण और वस्त्रोसे रहित, काले-सफेद-हरे और लाल। रम्य-सौम्य और नित्यप्रसन्न, जिनका जिननाथने शास्त्रोंमे कथन किया है।

घत्ता—वहाँ कोई एक रोमधारी है तो कोई पूँछ और सींग धारण करनेवाला है। ये पूर्व दिशामे शोभित होते हैं। उत्तर दिशामे निर्भाष (बिना भाषाके) मनुष्य होते है ॥७॥

८

शष्कुलिके समान कानवाले, कानोंके आच्छादनवाले, लम्बे कानवाले और खरगोशके कानवाले खोटे मनुष्य भी रहते हैं। अश्वमुख, गजमुख और मत्स्यके समान श्याम मुख, दर्पणमुख, मेघमुख, वानरमुख, सिंहमुख, मेषमुख और वृषमुखवाले, जो सत्रह प्रकारके फलोंका आहार ग्रहण करते है। सभी अत्यन्त सीधे और कमलके समान आँखोंवाले, एक पैरवाले पहाड़ी मिट्टीका भोजन करते हैं। अठारह जातियोवाले ये छियानबे क्षेत्रोंमे विभक्त हैं। ये एक ही पल्य जीवित रहते है और मरकर भवनवनवासी होते हैं। हरित, सफेद, लाल और पीले रंगोके रत्नोंसे विजड़ित तीस भोगभूमियाँ फैली हुई हैं जिनमे हार, डोर, कंकण और कुण्डलोंको धारण करनेवाले दिव्य वस्त्रधारी सिरपर शेखर बाँधे हुए देव रहते है। मद्यांग, वीणा-पटहांग (तूर्यांग), विविध भूषणांग, ज्योतिरंग, भाजनांग, भोजनांग, भवनांग, अम्बरदीपांग (प्रदीपांग) और कुसुममाल्यांग, कल्पवृक्षोसे, जिसकी धरती शोभित है। और जहाँ मनुष्य निरन्तर भोग करते रहते है। अधम, मध्यम और उत्तम सुखोसे युक्त सुन्दर स्वभाववाले और सुन्दर अंगोंवाले होते है। एक-दो या तीन पल्य जीवित रहकर और च्युत होकर कल्पवासमे उत्पन्न होते हैं।

घत्ता—तीसविह[12] पउत्त भोयभूमि धुअ मणुय जिह।
१५ सइं कालवसेण [13]अद्धुव दहविह होंति तिह ॥८॥

९

दहपंचविह कम्मभूमाणुस अज्ज मेच्छ इच्छामाणियरस।
मेच्छ चीण हुण पारस वव्वर[1] भासारहिय णिरुह णिरंवर।
इड्डिअणिड्डिवंत अज्जणवर इड्डिवंत जिणवर चक्केसर।
वासुएव बलएव महाबल चारण विज्जाहर उज्जलकुल।
५ होंति अणिड्डिवंत णाणाविह लिविदेसीभासावत्तण बुह।
जिणु अहमेण जियइ बाहत्तरि अहिउ[2] सहसु वरिसइं[3] जीवइ हरि।
तहु अहियथरउ सीरि पउत्तउ सत्तसयाइं चक्कि णिक्खुत्तउ।
पुव्वहं चउरासीलक्खेयहं परमाउसु जिणहरिवलरायहं[4]।
पुव्वकोडिसासण्णु वि थिरकरु जीवइ कम्मभूमिजायउ णरु।
१० पक्खु मासु अयणइं संवच्छर के वि जियंति कईवय वासर।
णर णिसट्ट[5]दवियंगकउग्गम ते सज्जो मरंति संमुच्छिम।
गब्भेसु वि गलंति तणु लेप्पिणु अवर वि कइवय दियह जिएप्पिणु।
उत्तमेण धणुलयहं[6] णिसीहा पंच सवायइं सयइं[7] पईहा।
सत्तहत्थ चउहत्थ तिहत्थ वि णिकिट्ठेण पउत्त दुहत्थ वि।
१५ तम्हाओ हि होंति लहुययरा अइरहस्स वामण खुज्जयरा।

घत्ता—मणुएसु ण होंति सत्तमसहिणारय[8] विसम ॥
जिह ए तिह ते उ वाउकायकयभावतम ॥९॥

१०

होंति के वि दूसहणिड्डावस जोइसवणभवणंतहिं तावस।
चेरय[1]परिवायय बंभासर आजीव वि सहसारालय सुर।
जंति[2] तिरिक्ख वि तं जि जि वयहर[3] णर सम्मत्ताराहणतप्पर।
सावयवयहलेण सोलहमउ सग्गु लहइ माणुसु दुहविरमउ।
५ रिसिवरहिं विणु पुणु तहु उप्परि को वि ण भुंजइ अहमिंदहं सिरि।
सत्तुमित्तुतणमणिसमचित्तें संजमेण सुद्धे चारित्तें।
जिणलिंगेण होंति वयभरधर अभविय उवरिमगेवज्जामर।
आ सव्वत्थसिद्धि[4] णिग्गंथहं होइ सूइ सम्मत्तपसत्थहं।

---

१२. P तीस वि इह उत्त। १३. MBP अदुधुय।

९. १. P वच्छर, but it records a p वव्वर। २. M अहिउ। ३ M वरिसइं। ४. MBP °बलएवहं। ५ B णिसट्ठ°; P विसट्ठ। ६. M धणुण्णयहं। ७. MB सवाइ सयाइं; P सयाइं सवाइं। ८. MB णाराय।

१०. १. MBPT चारय। २. MP जंत तिरिक्ख तं जि जि। ३. MBP वयधर। ४. MBP सव्वट्ठ।

घत्ता—जिस प्रकार मनुष्योंकी तीस भोगभूमियाँ निश्चित रूपसे बतायी गयी है, उसी प्रकार उससे आधी अर्थात् पन्द्रह कर्मभूमियाँ होती है ॥८॥

९

पन्द्रह कर्मभूमियोके मनुष्य, आर्य और म्लेच्छ होते है, जो अपनी इच्छाके अनुसार रसका भोग करते है। म्लेच्छ चीन, हूण, पारस, बर्बर, भाषा रहित, निर्वस्त्र और विवेकहीन। आर्य लोग ऋद्धि सहित और ऋद्धि रहित होते है। इनमें ऋद्धिसे परिपूर्ण जिनेश्वर और चक्रवर्ती होते हैं। वासुदेव, बलदेव, महाबल, चारण और विद्याधर आर्यकुलमे होते है। ऋद्धियोसे रहित मनुष्य नाना प्रकारके होते हैं, जो लिपि और देशी भाषा बोलनेवाले और पण्डित होते है। जिन (अर्थात् अन्तिम तीर्थंकर महावीर) बहत्तर वर्ष जीवित रहते है, हजारसे अधिक वर्ष नारायण जीते हैं, उससे अधिकतर वर्ष बलभद्रका जीना कहा गया है। उससे सात सौ वर्ष अधिक चक्रवर्ती निश्चित रूपसे जीते है। जिन, नारायण और बलभद्रकी परम आयु चौरासी लाख वर्ष पूर्व होती है। कर्मभूमिमे उत्पन्न हुआ स्थिरकर मनुष्य एक पूर्वकोटि सामान्य जीवन जीता है। कोई मनुष्य पक्ष, मास, छह माह और एक वर्ष तथा कुछ दिन जीते हैं। शरीरके पसीने आदिसे उत्पन्न होनेवाले जो सम्मूर्च्छन जीव होते हैं, वे जल्दी मर जाते है। कुछ शरीर लेकर गर्भमे गल जाते है, दूसरे कुछ दिन जीवित रहकर मर जाते हैं। दूसरे नृसिंह (नरश्रेष्ठ) सवा पाँच सौ धनुष ऊँचे होते हैं, निकृष्ट रूपसे सात हाथ, चार हाथ, तीन हाथ और दो हाथ भी होती है। इससे भी छोटे कदके मनुष्य होते हैं, अत्यन्त लघु, बौने और कुबड़े।

घत्ता—सातवें नरकके विषम जीव सीधे मनुष्ययोनिमें उत्पन्न नही होते। जिस प्रकार ये, उसी प्रकार वायुकायिक और अग्निकायिक जीव भी सीधे मनुष्ययोनिमे जन्म नही लेते ॥९॥

१०

कोई तापस असह्य निष्ठाके कारण ज्योतिष और व्यन्तर भवनोमें उत्पन्न होते हैं। आह्निक, परिव्राजक, ब्रह्म स्वर्गमे देव होते हैं और आजीवक सहस्रार स्वर्गमें उत्पन्न होते है। व्रत धारण करनेवाले तिर्यंच भी वही जाते हैं। सम्यक्त्वकी आराधना करनेमे तत्पर मनुष्य श्रावक व्रतोके फलसे सोलहवाँ स्वर्ग प्राप्त करता है और दुःखसे विश्राम पाता है, लेकिन उसके ऊपर मुनिव्रतोके बिना कोई भी अहमिन्द्रकी श्रीका भोग नही कर सकता। अपने चित्तमे शत्रु और मित्रके प्रति समता भाव धारण करनेवाले संयम और शुद्ध चारित्र्य और जिनलिंगसे, व्रतोका भार धारण करनेवाले अजन्मा, ग्रैवेयक स्वर्गमे देव होते हैं, सम्यक्त्वसे प्रशस्त निर्ग्रन्थोंकी उत्पत्ति

णारउ मरिवि ण णारउ जायइ सुरु वि ण सुरु मुणिणाहु विवेयइ।
१० अमरु ण णरयहु णारउ सग्गहु वच्चइ सविहिविहंसियसग्गहु।
होइ तिरिक्खु वि चउगइगामिउ जिह तिह माणउ दुक्खायामिउ।
पसियाछहुं तिरिवहुं तिरियत्तणु अविरुद्धउ मणुयहुं मणुयत्तणु।
घत्ता—तिहिं गइहिं ण होंति मणुय तिरिक्ख सोक्खचुयहिं ॥
पलिओवमजीवि सग्गु लहंति सइंभुवहिं ॥१०॥

११

संखाउस जे जीवाहारिय अण्णोण्णेण वियारिय मारिय।
सरिसव जंति पढम वीयावणि पक्खि तइय वालुप्पह दुहखणि।
पुहइ चउत्थी जंति महोरय पंचमियहि केसरि मयमारय।
महिलउ छट्ठिहि वि हुरक्कमियहि होंति मणुय मेच्छ वि सत्तमियहि।
५ आयउ मघविहि लहइ णरत्तणु को वि अरिट्ठहि देसवयत्तणु।
णिग्गउ अंजणाहि किर णिव्वुइ को वि कहिं मि पावइ पंचमगइ।
सेलहि वंसहि घम्महि आइउ होइ को वि तित्थयरु महाइउ।
णर तिरिया सलायपुरिसत्तणु णउ लहंति णिम्मलु जसकित्तणु।
सव्वत्थ वि माणुसु उप्पज्जइ एम पवत्तइ सुत्तु पउंजइ।
१० राम उड्ढगइ सोक्खहु सामिय केसव सव्व अहोगइगामिय।
घत्ता—पडिसत्तु कयंत णउ णारायण पीणकर ॥
णरयहु णिग्गिवि होंति ण हलहर चक्कहर ॥११॥

१२

तिहिं कायहि णरत्तु ण विरुद्धउ तिरियत्तु वि जिणवुद्धें बुद्धउ।
वायरपुहइ तोय पत्तेयहं देवं चवेवि होंति किर एयहं।
णउ लहंति सुरणियर सतामस पुण्णसिलोयत्तणु आजोइस।
अक्खमि णरयवासु भीसावणु णाणादुक्खलक्खदरिसावणु।
५ पढमासीयहिं सिट्ठु सहासहिं पुणु वत्तीसहिं अट्ठावीसहिं।
चउवीसहिं वीसहिं विहिं अट्ठहिं अट्ठहिं णाणसहाउवइट्ठहिं।
एम सहससंखाहिउ घणु भणु खरपंकयलक्खु जि संदत्तणु।
आयामु वि असंखु संखेवें पुहइहि पुहइहि अक्खिउ देवें।

५. T दुक्खायासिउ। ६. MT सयभुवहिं।
११. १ P विमणस सरउ पढम°। २. K वालुयपह। ३. P महोयर। ४. MP मिगमारय; B सियनारय।
५ MBP छट्ठिहि। ६. MP हुरक्किमयहि। ७. K देसवइत्तणु। ८. P महावउ। ९. K माणउ सु।
१२ १ B पत्तेय वि। २ M देवत्तणु वि होइ किर एयहुं; B होंति समागय देवत्तहु कि वि; P देवत्तणु° ण होइ किर एयहं। ३. MBPT पुण्गसलायत्तणु। ४. B सिट्ठु समासहिं। ५. MB केवलणाण°; M records a p अट्ठहिं for केवल°। ६. B omits this foot; P reads it after 8 b।
७. MBP add after this. सोलह चोरासी सहस जि गुणु, एक्केक्कउ जि लक्कु रुंदत्तणु।

सर्वार्थ-सिद्धि तक होती है। नारकीय मरकर नरकमें नहीं जाता। और देव मरकर देव नहीं बनता, यह विवेचन मुनिनाथ करते हैं। जीव नरकसे सीधे स्वर्ग नहीं जाता और स्वर्गसे नरक नहीं जाता। क्योंकि वे अपनी विधिसे मार्ग (पुण्य और पापका मार्ग) नष्ट करनेवाले होते हैं। तिर्यंच चारो गतियोंमे जानेवाला होता है, जिस प्रकार तिर्यंच, उसी प्रकार दुःखसे पीड़ित मनुष्य चारों गतियोंमे जा सकता है। सीमित आयुवाले तिर्यंचोका तिर्यंचत्व और मनुष्योका मनुष्यत्व अविरुद्ध है, अर्थात् एक दूसरेकी योनिमें जा सकते हैं।

घत्ता—सुखसे च्युत मनुष्य और तिर्यंच, अपने द्वारा उपार्जित पुण्यसे तीन गतियों (नरक, तिर्यंच और मनुष्य मे उत्पन्न नहीं होते, एक पल्यके बराबर जीकर स्वर्ग प्राप्त करते हैं ॥१०॥

११

जो संख्यात आयुका जीवन धारण करनेवाले हैं और एक दूसरेको विदारित करते और मारते है ऐसे सरीसर्प पहले और दूसरे नरकमे जाते हैं। पक्षी दुःखकी खान तीसरे बालुकाप्रभ नरकमें जाते हैं। महोरग चौथे नरकमें जाते है। पशुओको मारनेवाले सिंह पांचवे नरकमे जाते हैं। महिलाएँ दुःखसे व्याप्त छठे नरक तक जाती हैं। म्लेच्छ और मनुष्य सातवें नरक तक जाते हैं। कोई छठे नरकसे आकर मनुष्यत्व प्राप्त करता है। कोई पांचवें नरकसे आकर देशव्रत धारण करता है। कोई चौथे नरकसे आकर निर्वेदको धारण करता है। कोई मोक्ष गति प्राप्त करता है। तीसरे-दूसरे और पहले नरकसे आया हुआ कोई जीव, महान् तीर्थंकर होता है। मनुष्य और स्त्रियाँ निर्मल यश और कीर्ति तथा शलाकापुरुषत्वको प्राप्त नहीं कर सकते। मनुष्य सब कहीं उत्पन्न हो सकता है। सूत्र रूपमे यह बात कही जाती है। जितने राम (बलभद्र) है वे ऊर्ध्व गतिवाले और सुखके स्वामी हैं, जितने केशव (नारायण) हैं, वे नरकगामी है।

घत्ता—जो यमकी तरह प्रतिशत्रु है, (प्रति नारायण) और स्थूलकर नारायण नहीं हैं, वे नरकसे निकलकर हलधर और चक्रधर नहीं होते ॥११॥

१२

तीन कायिक (अर्थात् पृथ्वी, जल और वनस्पति कायिक) जीवोके लिए मनुष्यत्व विरुद्ध नहीं है, और तिर्यंचत्व भी नहीं, ऐसा जिनबुद्धने ज्ञात किया है। पृथ्वी, जल और प्रत्येक वनस्पतिमे देव च्युत होकर जन्म ले सकते है। ज्योतिष-पर्यन्त तामसिक देवसमूह शलाका-पुरुषत्वको प्राप्त नहीं कर सकता। अब मै भीषण नरकावासका कथन करता हूँ जो भीषण और नाना प्रकारके लाखों दुःखोंको दिखानेवाला है। इनमें प्रथम नरकका विस्तार एक लाख अस्सी हजार योजन है। फिर क्रमशः बत्तीस हजार, अट्ठाईस हजार, चौबीस हजार, बीस हजार, सोलह हजार और आठ हजार योजन विस्तार है जो केवल ज्ञानियों द्वारा उपदिष्ट है। इस प्रकार

रयणसक्करप्पह वालुयपह पंकप्पह धूमप्पह तमपह ।
१० अवर वि अंतिमिल्ल तमतमपह णिव्वपउंजियबहुणारयवह ।
एयउ घणतमजालणिरुद्धउ सत्त णरयधरणीउ पसिद्धउ ।

घत्ता—पुहईसु बिलाइं होंति सहावभयंकरइं ॥
घणतिमिरहराइं अगणियजोयणवित्थरइं ॥१२॥

१३

तीस पुणु वि पणवीस जि लक्खइं पुणु पण्णारह दावियदुक्खइं ।
दह पुणु तिण्णि एक्कु पंचूणउं लक्खु बिलाइं पंच अहिठाणउं ।
णेरइयहं तहिं भत्थायरइं दंसियहरिकरिरूववियारइं ।
महिमयाइं परिमंडलियवत्तइं हेट्ठामुहओलंबियगत्तइं ।
५ लोहकीलकंटालिकरालइं दुग्गंधइं दुग्गमतिमिरालइं ।
एसु सुकिण्हणीललेसावस उप्पज्जंति तिरिय अह माणुस ।
लेंति देहु सहसत्ति मुहुत्तें वेउव्विउ णिउत्त हुंडत्तें ।
हवइ विहंगणाणु तहिं मेच्छहं अवहिसहावें जिणमयदुच्छहं ।
कालिंगालपुंजसंणिहयर पयडियदंतपंति दट्ठाहर ।
१० विरइयभीमभिउडि रोसुब्भड कविलकेस परमारणकक्खड ।
जिह जिह ते मुणंति अप्पाणउं तिह तिह तं तं संभवठाणउं ।
दाढाभीसणु मुहुं णिव्वायइ अहवा पाउ किं ण किर घायइ ।

घत्ता—हेट्ठामुह झत्ति ते पडंति असिपत्तवणे ॥
सइं अण्णु हणंति अण्णहिं पडिहम्मंति रणे ॥१३॥

१४

णउ मज्झत्थु मित्तु उवयारिउ जो जो दीसइ सो सो वइरिउ ।
खेत्तसहाउ तेत्थु किं भण्णइ जं सुयकेवलिसमु वि ण वण्णइ ।
सूइणिह तणु दुच्चरु भूयलु उण्हु सीउ दुद्धरु चंडानिलु ।
जं करेण लेंतहुं जि मरिज्जइ वइतरणीविसु विसु किं पिज्जइ ।
५ खंडियकरचरणाणणगत्तइं रुक्खहं खग्गसमाइं पत्तइं ।
फलइं वज्जमुट्ठि व्व कढोरइं वैरि पडंति णिद्दलियसरीरइं ।
महिहरकुहरहिं विप्फुरियाणण खंति विउव्वणाइ पंचाणण ।
कुहिणिउ जलणजालपज्जलियउ जहिं वच्चइ तहिं खलयणु मिलियउ ।

---

८ MBP रयणप्पह सक्कर वालुप्पह । ९ B °भयंकरइं । १०. MB °वित्थरइं ।

१३. १ P बिलाणइं । २ MPT अहठाणउ, B अहिठाणउ । ३ M णारइयह, BP णेरइयहिं । ४ B omits this foot. ५ omits this line ६ P °पडाल° । ७ P मुणइ ठाणउ । ८. P ण ण । ९ MB [illegible] ।

१४. १ P [illegible] । २ MBP [illegible] । ३ MBP कढोरइं । ४ M पर, P ऊवरि । ५ MBP महिगुहहिं ।

खर और पंकभाग (रत्नप्रभा नरक) का हजार अधिक एक लाख योजन पिण्डत्व (विस्तार) है। प्रत्येक भूमिका असंख्य आयाम है, जिसे देवने संक्षेपमे कहा है। रत्नप्रभा, शर्कराप्रभा, बालुका-प्रभा, पंकप्रभा, धूमप्रभा, तमःप्रभा और भी अन्तिम तमतमःप्रभा है जिसमें नित्य नारकीयोंका वध किया जाता है। इस प्रकार ये अत्यन्त सघन तमजालसे निबद्ध सात नरकभूमियाँ प्रसिद्ध हैं।

घत्ता—इन भूमियोंके बिल स्वभावसे भयंकर होते है, सघन अन्धकारोंके घर अगणित योजनोके विस्तारवाले होते है ॥१२॥

१३

इनके क्रमशः, तीस और फिर पच्चीस लाख और फिर दुःख देनेवाले पन्द्रह लाख, फिर दस लाख, तीन लाख, फिर पांच कम एक लाख अर्थात् निन्यानबे हजार नौ सौ पंचानबे, और अन्तिम नरकके पांच बिल होते है। इनमे नारकीय जीव भस्त्राकारके होते हैं, सिंहो और हाथियोंके रूपों-का विदारण दिखाते हुए। जहाँ राजाओके मुख सब ओरसे बन्द है, अधोमुख लटके हुए शरीर-वाले। लोहेकी कीलो और काँटोसे भयंकर। दुर्गन्धित और दुर्गम अन्धकारसे भरे हुए। इनमें अत्यन्त कृष्ण लेश्याके कारण मनुष्य या तिर्यंच उत्पन्न होते है। सहसा एक मुहूर्तमे शरीर धारण करते हैं, जो हुंडक आकार वैक्रियक शरीर होता है। वहाँ अवधिज्ञानके स्वभावसे जिनमतका उच्छेद करनेवाले म्लेच्छोंका विभंगज्ञान होता है। काले अंगारोंके समूहके समान काले, दाँतोको प्रगट करनेवाले और ओठोंको चबानेवाले, अपनी भौहें भयंकर करनेवाले और क्रोधसे उद्धत, कपिल बालोवाले और दूसरोंको मारनेमे कठोर। जिस प्रकार वे अपने बारेमे सोचते हैं, उस प्रकार वह स्थान उनके लिए उत्पन्न हो जाता है। दाढ़ोसे भयंकर अपना मुँह फाड़ते हैं, अथवा पाप किसका क्या घात नही करता।

घत्ता—अधोमुख होकर वे शीघ्र असिपत्रपर गिर पड़ते है। स्वयंको मारते है, दूसरेको मारते है और युद्धमे दूसरेके द्वारा मारे जाते है ॥१३॥

१४

उनका कोई मध्यस्थ या उपकार करनेवाला मित्र नहीं होता। जो-जो दिखाई देता है वह दुश्मन होता है। वहांके क्षेत्रस्वभावको क्या कहा जाय? जो श्रुतकेवलीके समान है, उसके द्वारा भी वर्णन नही किया जा सकता। सुईके समान तृण हैं और चलनेमे कठिन धरती। उष्ण शीत और प्रचण्ड पवन। जिसे हाथमे लेने मात्रसे जीव मर जाता है, वैतरणी नदीका ऐसा वह जल, विष है, उसे क्या पिया जा सकता है। जहाँ वृक्षोके पत्ते हाथ पैर मुख और शरीरको खण्डित कर देनेवाले तलवारके समान है। जिनके फल वज्रकी मूठकी तरह कठोर है। शरीरको चूर-चूर कर देनेवाले वे ऊपर गिरते है। पहाड़ोंकी गुफाओंमे से तमतमाते हुए मुखवाले विक्रियासे निर्मित सिंह खा जाते है। जहांके मार्ग अग्निज्वालाओसे प्रज्वलित हैं, वह जहाँ जाता है, उसे दुष्ट

ण्हाइ जहिं जि तहिं दूमियपिंडइं[६] पूयरुहिरकिमिभरियइं कोंडइं[७] ।
१० बिहिं तिहिं पंचहिं पीडिवि धरियहु ण्हायहु पूयदहहु णीसरियहु ।
घत्ता—उक्कत्तिवि तासु दिज्जइ कत्ति[८] णियासणउं ।
आयसवलयाइं सिहिताविय[९]इं विहूसणउं ॥१४॥

१५

पेच्छइ जेहिं[१] जि तहिं जि जमसासणु बइसइ जहिं जि तहिं जि सूलासणु ।
भुंजइ जहिं जि तहिं जि दुग्गंधइं णीरसाइं फरुसाइं विरुद्धइं ।
आहरियइं पुग्गलइं अकामहु असुहत्तेण जंति परिणामहु ।
णिसुणइ जहिं जि तहिं जि दुव्वयणइं फंसइ जहिं जि तहिं जि खरसयणइं ।
५ जं चक्खइ तं तं विरसिल्लउ जं चिंतइ तं तं मणसल्लउ ।
जं अग्घायइ तं कुणिमंगउ[२] णारय[३]खेत्ति णउ काइं मि चंगउ ।
उद्धंसासु[४] अइखासु जलायरु अच्छिकुच्छिसिरवियण महाजरु ।
संभवंति दुक्कियहलगेहइ सव्वउ वाहिउ णारयदेहइ ।
घत्ता—अणुमीलणु[५] कालु सोक्खु ण लब्भइ किं पि जहिं ।
१० सारीरउं[६] दुक्खु काइं कहिज्जइ राय तहिं ॥१५॥

१६

हउं णारायणु पडिणारायणु हउं महिवइ होंतउ सुहभायणु ।
एम भणंतु कयंतु व कुप्पइ माणसिएं दुक्खें संतप्पइ ।
दाणवणिवहहिं पडिचोइज्जइ जुज्झमाणु सो एम भणिज्जइ ।
तुहुं अणेण चिरभवि सरदारिउ वरमहिमहिलाकारणि मारिउ ।
५ विंझमहागिरिगेरुयपिंजरु सीहें एण हयउ तुहुं कुंजरु ।
पक्खि एण गिलिउ तुहुं विसहरु महिसें णेण दलिय तुहुं अयवरु ।
अविरलखरणहरेहिं णिरुद्धउ वग्घेणेण हरिणु तुहुं खद्धउ ।
हणु हणु एहु एम पच्चारिउ णं वाएण जलणु संचारिउ ।
जुज्झइ णारउ णारय गोंदलि णिवडमाणु कोंतासणि[१] सव्वलि ।
१० घत्ता—कंपण[२]कणएहिं लंगलमुसलहिं रिउ दलइ ।
णियदेहु जि ताहं पहरणरूवहिं परिणमइ[३] ॥१६॥

---

६. MBPT दुम्मिय° । ७. MBP कुंडइं । ८. MBP कित्ति । ९. MBP °तावियउं ।

१५ १ P जहिं तहिं जि । २. MBP कुणियंगउ । ३ MB णरयखेत्ति । ४. MBP उद्धखासु ।
५. BP अणुमीलणकालु । ६ MBP सारीरिउ ।

१६ १ MBP कुंतासणि । २. MBPK कप्पण°, but GT कंपण° । ३ MP परिणवइ ।

मिलता है। जहाँ वह स्नान करता है वहीं पीप रुधिर और कीड़ोंसे भरे हुए कुण्ड और पीड़ित शरीर मिलते हैं। दो तीन पाँच व्यक्तियों द्वारा पीड़ित कर वह पकड़ लिया जाता है और पीपके सरोवरसे नहाकर (उसे)—

घत्ता—काटकर चमड़ेका परिधान दिया जाता है। तपाये हुए लोहेके कड़े, उसके आभूषण होते है ॥१४॥

१५

वह जहाँ देखता है, वही यम शासन है। जहाँ बैठता है वहीपर शूलासन है। जहाँ भोजन करता है, वही दुर्गन्ध है। नीरस कठोर और विरुद्ध। जो चखता है वह विरस लगता है, जो सोचता है वही मनकी चिन्ता बन जाता है। जो सूँघता है वह बुरी गन्धवाला होता है, नारकीय क्षेत्रमे कुछ अच्छा नही होता। ऊर्ध्व श्वास, अति खांसना, जलोदर, आँखो, पेट और सिरका दर्द तथा महाज्वर ये सब होते है। पापोके फलोके घर नारकीयकी देहमे सब कुछ व्याधि है।

घत्ता—पलक मारनेके समय तकका भी सुख जहाँ नही मिलता, हे राजन्, वहाँ शरीरके दुःखका क्या वर्णन किया जाय ? ॥१५॥

१६

"मै नारायण हूँ, मै प्रतिनारायण हूँ, मै सुखभाजन राजा हूँ" ऐसा कहते हुए उसपर यम क्रुद्ध हो जाता है; और वह मानसिक दुःखसे सन्तप्त हो उठता है। दानव समूहके द्वारा वह प्रेरित किया जाता है और युद्ध करते हुए; उससे उस प्रकार कहा जाता है, 'तुम्हारा इसके द्वारा सिर फाड़ा गया था; श्रेष्ठ महिला और धरतीके लिए मारे गये थे। इस सिंहके द्वारा विन्ध्य महा-गिरिके गैरिक (गेरु) से पिंजर तुम गज मारे गये थे। तुम विषधर इस गरुड़के द्वारा निगले गये थे। तुम अश्ववर इस भैंसेके द्वारा विदीर्ण हुए थे। बाघके द्वारा उसके अविरल नखोंसे तुम हरिण खाये गये थे। इस प्रकार तुम इसको मारो मारो, वह इस प्रकार बोला, मानो वायुने ज्वालाको प्रज्वलित कर दिया हो। नारकीयोंको लड़ाईमें नारकीय लड़ते है और भालोके आसन तथा सब्बलों पर गिरते हैं।

घत्ता—कप्पण कमक (?) हलो और मूसलोसे वह शत्रुको नष्ट करता है। उसका शरीर उन अस्त्रोंके रूपोमें परिणमित हो जाता है ॥१६॥

१७

अण्णें अण्णु सुसेल्लें सल्लिउ अण्णें अण्णु मुसुंढिइ पेल्लिउ ।
अण्णें अण्णु तिसूलें भिण्णउ अण्णें अण्णु रहंगें छिण्णउ ।
अण्णें अण्णु हुआसणि घित्तउ अण्णें अण्णु पसु व्व विहित्तउ ।
अण्णे अण्णु खुरुप्पें खंडिउ अण्णें अण्णु वियारिवि छंडिउ ।
५ अण्णहु अण्णे खग्गु विहाइउ तहु केरउ जि मासु तहु ढोइउ ।
लेइ लइ एवहिं काइं णिरिक्खहि मृग वराय मारिवि किं भक्खहि ।
तउ अउ तंवउ सीसउ ताविउ अण्णहु मज्जु भणेप्पिणु दाविउ ।
पिवसु पिवसु अरहंतु ण याणइ चंगउ कउलु तुज्झु वक्खाणइ ।
घत्ता—उम्मग्गे जंति ण णिवारिय णिद्धम्ममइ ॥
१० परघरिणि रमंति जिह पइं रमिय णिवद्धरइ ॥१७॥

१८

अग्गिवण्ण तत्तिय अइरत्ती लोहविणिम्मिय णं तुह रत्ती ।
तिह एवहिं आलिंगहि माणिणि एह करिंदकुंभपीणत्थणि ।
मण्णिवि णवजोव्वण परवाली अवरुंडहि सामरि कंटाली ।
खेत्तुब्भउ [2]माणसु तणुजायउ असुरोईरिउ अण्णोण्णायउ ।
५ एउ एम पावोहें लइयहं पंचपयारु दुक्खु णारइयहं ।
तेत्थु ण णारि ण पुरिसु सुयंसउ णग्गउ णिंदु असेसु णउंसउ ।
पढमहि [3]पुढविहि णारयगत्तइं भयघणुतिरयणिछंगुलमेत्तइं ।
वीयहि पण्णारस दोवारहं धणुरयणिउ अंगुलइं वियारहं ।
घत्ता—भवहरदेहाउ पहरंतहु रणि रणरणइ ॥
१० गरुयारउ होइ णारयदेहु वियव्वणइ ॥१८॥

१९

तइयहि एक्कतीसधणुतुंगइं एक्करयणि भणु कयदुरियंगइं ।
चोत्थियाहि रयणीदुयजुत्तइं धुउ चावइं वासट्ठि पउत्तइं ।
पंचमियहि धणुसउ पणवीसउ वड्ढिउ वउ आवइ आभीसउ ।
छट्ठियाहि चावइं जिणभणियइं दोण्णि सयइं पण्णास जि गणियइं ।
५ [illegible]हु दुग्गेलदुगमियहि पंचसयाइं होंति सत्तमियहि ।
[illegible] [illegible] [illegible] जलहिपमाणउं तिण्णि दुइज्जउ ।

१७

एकके द्वारा दूसरा सेलसे पीड़ित किया गया, एकके द्वारा दूसरा भुशुण्डिसे ठेला गया। एकके द्वारा दूसरा त्रिशूलसे छेद दिया गया। एकके द्वारा दूसरा चक्रसे काट दिया गया। एकके द्वारा दूसरा आगमे फेंक दिया गया, एकके द्वारा दूसरा पशुके समान काट दिया गया। एकके द्वारा दूसरा खुरपेसे खण्डित कर दिया गया, एकके द्वारा दूसरा विदीर्ण करके छोड़ दिया गया है। एकके द्वारा दूसरा तलवारसे विभक्त कर दिया गया और उसीका मांस उसे खानेको दिया गया कि लो-लो, इस समय क्या देखते हो, तुमने बेचारे पशुओंको मारकर क्यों खाया था? तप्त लोहा, तांबा, और सीसा तपाया गया, और एक दूसरेके लिए मद्यके रूपमें दिखाया कि पियो पियो, तूँ अरहन्तको नही जानता, तुम्हारा कौल सुन्दर व्याख्यान देता है।

घत्ता—धर्महीन मति खोटे मार्गपर जाते हुए तुमने अपना निवारण नही किया। और जिससे तुमने रति बांधकर दूसरीकी स्त्रीका रमण किया है ॥१८॥

१८

अग्निवर्णा, संतप्त अत्यन्त लाल लोहेसे बनी हुई। मानो यह तुममे अनुरक्त हो। गजराजके कुम्भके समान पीन स्तनोंवाली मानिनीका आलिंगन करो, नवयौवना परबाला मानकर इस कटीली शाल्मलीका आलिंगन करो। क्षेत्रसे उत्पन्न मानसिक शरीरसे उत्पन्न असुरोंसे प्रेरित और अन्यके द्वारा उन्नमित पाँच प्रकारका दुख पापोके समूहसे गृहीत नारकीयोको होता है। वहाँ न नारी है, न पुरुष है, और न सुन्दर शरीरावयव है, नंगा, निन्दनीय और अशेष नपुंसक। प्रथम भूमिमें नारकीयका शरीर सात धनुष तीन हाथ और छह् अंगुलका होता है। दूसरी भूमिमे पन्द्रह् धनुष छह् हाथ और बारह् अंगुल होता है।

घत्ता—अरतिजनक युद्धमें जन्मको धारण करनेवाली देहसे प्रहार करते हुए विक्रियाके द्वारा नारकीयका शरीर भारी हो जाता है॥१८॥

१९

तीसरी भूमिमे इकतीस धनुष एक हाथ और दो अंगुल ऊँचा शरीर होता है। चौथी भूमिमें बासठ धनुष और दो हाथ ऊँचा। पाँचवी भूमिमें पच्चीस धनुष ऊँचा शरीर.........छठी भूमिमे जिनेन्द्र भगवान्‌के द्वारा कथित दो सौ पचास धनुष ऊँचाई होती है। दु:खके समूहसे दुर्गम सातवीं भूमिमे शरीरकी ऊँचाई पाँच सौ धनुष होती है। दुष्कृतोसे अजेय पहले नरकमे एक सागर प्रमाण

तिज्जइ णरइ सत्त चोत्थइ दह सायराइं पंचमि सत्तारह ।
छट्ठइ पुणु वावीस ण रहियइं सत्तमि तीस तिअहियइं कहियइं ।
घत्ता—कंदंत कणंत महिहि घुलंत सुहंतरिय ॥
१० जीवंति इयाल णारय तिलु तिलु कप्परिय ॥१९॥

२०

ते जियंति अहमेण अरम्महि फुडु दहवरिससहासइं घम्महि ।
जं घम्महि उत्तिमु तं वंसहि आउ जहण्णउं दलियसुहंसहि ।
जं वंसहि उत्तिमु तं सेलहि आउ जहण्णउं रउरवरोलहि ।
जं सेलहि उत्तिमु णिहिट्ठउ अंजणाहि तं किर णिक्किट्ठउ ।
५ जं अंजणाहि परमु पवियप्पिउ तं जि अरिट्ठहि अहमु वियप्पिउ ।
जं जि अरिट्ठहि किर परमाउसु तं मघविहि देसिउ अचिराउसु ।
जं पूरउ मघविहि दुहवियहि तं आसण्णु मरणु माघवियहि ।
विक्किरियासरीरविण्णासइं होंति अहोहो दीहाउसइं ।
होंति अहोहो रुंदइं विवरइं होंति अहोहो मंदइं तिमिरइं ।
१० होंति अहोहो रणइं दुवेक्खइं होंति अहोहो तिव्वइं दुक्खइं ।
घत्ता—जुज्झंतहं ताहं पहरणकोडिहिं णिद्दलिय ॥
तणुलव लग्गंति सूयलवा इव संमिलिय ॥२०॥

२१

अक्खमि सुर दहवसुपंचविह वि सोलह दु णव पंचविह पुणरवि ।
एयहि रयणप्पहहि धरित्तिहि विवरंतरि वहुरइरसथत्तिहि ।
असुरवरहं चउसट्ठि समक्खइं णायघरइं चउरासीलक्खइं ।
वाहत्तरि लक्खाइं सुवण्णहं भवणइं भूरिभाससमुण्णहं ।
५ दीवसमुद्दयणियवडिणामहं आसाणलकुमारवरधामहं ।
एक्केक्कु लक्खाइं छहत्तरि अक्खइ एम मयणमयकेसरि ।
लक्खइं णवइ लेसाहिय धीरहं आवासाइं समीरकुमारहं ।
कोडिउ सत्त दुहत्तरि लक्खइं पिंडीकयइं होंति पचक्खइं ।
भावणभवणइं एम पउत्तइं चउदह सोलह सहस णिरुत्तइं ।
१० भूयरक्खसावासविसेसइं वीणावेणुपणवणिग्घोसइं ।
अयराइं मि पविमलसिरिहारइ वणगयणयलजलहिसरतीरइ ।
वंतरणयरइं अयरमणीयइं होंति गणंतहं संखाईयइं ।

आयु होती है, दूसरेमें तीन सागर, तीसरे नरकमें सात सागर, चौथे नरकमे दस सागर, पाँचवें नरकमे सत्तरह सागर, छठे नरकमें बाईस सागर प्रमाण रहते हैं और सातवें नरकमें तैंतीस सागर प्रमाण आयु होती है।

घत्ता—आक्रन्दन करते, चिल्लाते हुए सुखसे रहित नारकीय जीव हताश होकर जीते हैं, और तिल-तिल एक दूसरेको काट देते हैं ॥१९॥

२०

वे नारकीय उस असुन्दर घर्मा धरतीमें जघन्य आयुसे दस हजार वर्ष जीवित रहते है। जो घर्माभूमिकी उत्तम आयु है वह सुखोंके आशयोंको नष्ट करनेवाली वंशाभूमिकी जघन्य आयु है। जो वंशाभूमिकी उत्तम आयु है वह रौरव ध्वनियोंसे युक्त मेघाकी जघन्य आयु है। जो मेघाकी उत्तम आयु बतायी गयी है वह अंजनाकी निकृष्ट आयु है। जो अंजनाकी उत्तम आयु कही गयी है वह अरिष्टाकी उत्तम आयु कही गयी है। जो आयु अरिष्टाकी उत्तम है वही मघवीकी अचिरायु (जघन्य) कही गयी है। दुःखसे सन्तप्त मघवीकी जो पूरी (उत्कृष्ट) आयु है, वह माघवी नरकभूमिमे आसन्नमरण (जघन्य आयु) है। इस प्रकार (ऊपरसे) नीचे-नीचे विक्रिया शरीरकी रचना और दीर्घ आयुवाले बिल होते जाते हैं। नीचे-नीचे बड़े-बड़े बिल होते है, नीचे-नीचे सघन अन्धकार हो जाता है। नीचे-नीचे दुर्दर्शनीय युद्ध होता है। नीचे-नीचे तीव्र दुःख होता है।

घत्ता—युद्ध करते हुए उनके करोड़ों शस्त्रोंसे दलित शरीरकण, मिले हुए पारद कणोंकी तरह प्रतीत होते हैं ॥२०॥

२१

मै दस, आठ, पाँच, सोलह, दो, नौ और फिर पाँच प्रकारके देवोका वर्णन करता हूँ। प्रचुर रतिरसकी स्थितिवाली इस रत्नप्रभा भूमिके विवरके भीतर (खर और पंक भागमें) अवधिज्ञानियो या सर्वज्ञोंके लिए प्रत्यक्ष असुरवरोके चौसठ लाख एवं नागकुमारोके चौरासी लाख भवन हैं। सुपर्णकुमारोके प्रचुर आभासे व्याप्त बहत्तर लाख, द्वीपकुमारो, उदधिकुमारो, स्तनितकुमारों, विद्युत्कुमारों, दिक्कुमारों और अग्निकुमारोंके नौ लाख साठ हजार भवन है। इस प्रकार भवनवासियोके कुल मिलाकर सात करोड़ बहत्तर लाख प्रत्यक्ष भवन हैं। भवनवासी देवोका इस प्रकार कथन किया गया है। भूतों और राक्षसो, वीणा, वेणु और प्रणवके निर्घोषोसे युक्त सोलह और चौदह हजार आवास विशेष होते हैं। दूसरे विशिष्ट तथा विमल लक्ष्मीको धारण करनेवाले देव वन, आकाशतल, समुद्र और सरोवरोंके किनारोपर निवास करते हैं। व्यन्तरोके सुन्दर निवास गिनती करनेपर संख्यातीत है।

घत्ता—जोयण सय सत्त अण्णु वि णवइ मुएवि धर।
णहि जोइसवास ते णरलोयहु उवरिचर ॥२१॥

२२

अद्धकविट्ठसरिससंठाणइं संखारहियइं होंति विमाणइं।
पंचवण्णरयणावलिखइयइं बाहल्लत्तें पुणरवि रइयइं।
जोयणसई खेत्तम्मि दहोत्तरि अयलइ माणुसलोयहु बाहिरि।
अवरइं लंबियघंटायारें थियइं असंखदीववित्थारें।
५ बत्तीस जि लक्खइं सोहम्मइ अट्ठावीसीसाणि सुरम्मइ।
दुदहें सणक्कुमारि माहिंदइ अट्ठलक्ख परिभमियसुरिंदइ।
अत्थि विमाणहं उवणियसोक्खइं बंभि सबंभुत्तरि चउलक्खइं।
पण्णास जि लंतवि काविट्ठइ सहसइं होंति जिणाहिवसिट्ठइ।
सुक्कमहासुक्कइ चालीस जि छह सयारसहसारहिं सहस जि।
१० आणय पाणय आरण अच्चुय चउकप्पहिं सत्तसय संथुय।
हेट्ठिमगेवज्जइ एयारह अवरु वि सउ सुरपवरागारहं।
सत्तुत्तरु मज्झिमहि भणिज्जइ णवइ एक्कु उवरिमहि गणिज्जइ।
णय जि णवुत्तरि पंचाणुत्तरि पंच विमाणइं सोक्खणिरंतरि।
चउरासीलक्खाइं णिकेयहं सत्ताणउदीसहासइं एयहं।
१५ एक्कीकयइं ण लेक्खिवें विरुद्धइं [10]अण्णु वि तेवीसइं[11] लइ लद्धइं।

घत्ता—गेहहं तुंगत्तु विहिं कप्पहिं कवडेण विणु।
जोयणहं सयाइं छडुमाणइं वज्जरइ[12] जिणु ॥२२॥

२३

पंचसयाइं विहिं मि उवरिल्लहिं चउ अड्ढें जि विहि ताहं पहिल्लहिं।
उप्परि विहिं चत्तारि सउद्धइं घरइं वरइं णाणामणिणिद्धइं।
पण्णासयइं तिण्णि विहिं अक्खमि सयइं तिण्णि पुणु विहिं जि णिरिक्खमि।
पुणु चउकप्पहं हम्मुच्छेहउ अड्ढाइज्जसयाइं सरेहउ।
५ पुणु दुइ दुई दियड्ढ पुणरवि सउ पुणु पण्णास समीरिउ उच्छउ।
पुणु उद्धत्ते उवरि विमाणइं पंचवीसजोयणइं पहाणइं।
सव्वट्ठहु चूलिय लंघेप्पिणु बारहजोयणाइं जाएप्पिणु।
तम्मि तिलोयहु सिहरि णिसण्णी पणयालीसलक्खवित्थिण्णी।

---

२२ १. MBPT वाहालत्तें पर ण वि and gloss in T परेण न विरचितानि केनापि। २. MBP जोयणसयं°। ३ K अवरें। ४ MBP दोदह सणकुमारि। ५ MBP सुवभोत्तरि। ६. P काविट्ठइ। ७. MBP सत्तसयइ। ८. MP सत्ताणवदि°। ९ MBP लेक्खविरुद्धइं। १० P अण्णु वि पुणु तेवीसइं लद्धइं। ११. K तेवीस जि लइ। १२ K वज्जरिइ।

२३. १. MBP चउ। २ MBP पढमिल्लहिं। ३. MBP सुरेहउ, K सुरेहउ but corrects it to सरेहउ। ४ MBP पुणु। ५ MBP दियड्ढु।

घत्ता—आकाशमे सात सौ नब्बे योजनकी ऊँचाईपर ज्योतिषदेवोंका वास है। ये मनुष्य-लोकके ऊपर विचरण करते हैं ॥२१॥

२२

इनके आधे कत्रीट (कपित्थ) के समान आकारवाले संख्याहीन विमान होते हैं जो पाँच प्रकारकी रंगावलियोसे विजड़ित और प्रचुरतासे निर्मित एक सौ दस योजनके पटलक्षेत्रमे, मनुष्यलोकके बाहर अतल लोकमे स्थित है। दूसरे विमान (वैमानिक देवोंके विमान) लम्बे घण्टोंके आकारवाले तथा असंख्य द्वीपोंमे विस्तारवाले जिनचैत्य है। सौधर्म स्वर्गमें बत्तीस लाख, सुन्दर ईशान स्वर्गमें अट्ठाईस लाख, सनत्कुमार और माहेन्द्र स्वर्गमे (जिनमें इन्द्र परिभ्रमण करते हैं) क्रमशः बारह लाख और आठ लाख, ब्रह्म और ब्रह्मोत्तर स्वर्गमे सुखपूर्ण चार लाख, लान्तव और कापिष्ठ स्वर्गमें पचास हजार जिन-चैत्यघर हैं। शुक्र और महाशुक्रमें चालीस हजार, शतार और सहस्रारमे छह हजार होते है; आनत और प्राणत स्वर्गों तथा आरण-अच्युतमे सात सौ कहे जाते है।[1] अधोग्रैवेयकमे एक सौ ग्यारह, मध्य ग्रैवेयकमें एक सौ सात, ऊर्ध्व ग्रैवेयकमें इक्यानवे, नौ अनुदिशोंमे नौ और सुखसे निरन्तर भरपूर पाँच अनुत्तरोमें पाँच (चैत्यगृह है)। इस प्रकार चौरासी लाख सन्तानबे हजार तेईस निकेतन हैं। इनको एकीकृत करनेमे विरोध नहीं है।

घत्ता—बिना किसी प्रकारके कपटके जिन भगवान् कहते है कि दोनों स्वर्गोंकी ऊँचाई सात सौ योजन है ॥२२॥

२३

ऊपरके दो स्वर्गोकी पाँच सौ योजन, उनसे पहलेके स्वर्गोंकी साढ़े चार सौ योजन, उसके ऊपरके विमानोकी चार सौ योजन ऊँचाई है, जिनमें नाना मणियोंसे स्निग्ध श्रेष्ठ विमान हैं। उनके ऊपरके तीन स्वर्ग साढ़े तीन सौ योजन ऊँचे हैं। उसके ऊपरके विमान तीन सौ योजन ऊँचे देखता हूँ। फिर चार कल्पस्वर्गके विमान शोभासहित अढाई सौ योजन ऊँचे है, फिर दो-दो सौ योजन, फिर दोका आधा, सौ योजन, फिर उनकी ऊँचाई पचास योजन है। फिर उसके ऊपर प्रधान विमान पचास योजन ऊपर है। सर्वार्थसिद्धिकी चूलिकाको लाँघकर बारह योजन जाने-

१ ब्रह्म-ब्रह्मोत्तर ४ लाख (क्रमश १९००० + १०४०००), लौकान्तिक और कापिष्ठ (क्रमश २५०४२ + २४५८ = ५०००) शुक्र-महाशुक्र (२००२० + १९९८०) शतार और सहस्रार (३०१९ + २९८१) आणत-प्राणत आरण और अच्युत (पहले दो ४४० + अन्तिम दो २६० = ७००)।

ससहरहिमणिहछत्तायारी सिद्धत्थत्ति भव्वयणपियारी ।
१० जोयणाइं जोइय णीसल्लें अट्ठमपुहइ अट्ठ बाहल्लें ।

घत्ता—सविमाणहु मज्झि सयणि महारुहि समयमणु ॥
उववादसहावे भिण्णमुहुत्तें लेंति तणु ॥२३॥

२४

मउडेहिं हारेहिं केऊरदोरेहिं ।
कंचीकलावेहिं मंजीररावेहिं ।
भूसापहासेहिं अइसुरहिसासेहिं ।
वेउव्वियंगेहिं लक्खणपसंगेहिं ।
५ चउरंसठाणेहिं माणवणिवाणेहिं ।
अणमिसहिं णयणेहिं ससिसोम्मवयणेहिं ।
विच्छिण्णतावेण पुण्णप्पहावेण ।
कणयं व गयलेव जायंति खणि देव ।
णक्खाइं चम्माइं ण सिराउ रोमाइं ।
१० रत्ताइं पित्ताइं ण पुरीसमुत्ताइं ।
मीसियउ मासाइं ण वलासकेसाइं ।
मत्थिक्कसुक्काइं णउ अत्थि वोक्काइं ।
सोहग्गगेहम्मि देवाण देहम्मि ।
उवहरकवाडाइं सइं होंति वियडाइं ।
१५ हरिसेण वग्गंति सहस त्ति णिग्गंति ।
सुरजोणिसंपुडहु मणिकिरणपायडहु ।
जय देव देविंद जय णाह चिरु णंद ।
एवं पघोसंति परियणइं तूसंति ।
सव्वहिं मि तणुमाणु उद्दिट्ठु जिणणाणु ।

२० घत्ता—असुरहं पणवीस दह सेसाहं सवेंतरहं ॥
देहहु दीहत्तु सत्त जि धणु जोइससुरहं ॥२४॥

२५

विहिं रयणीउ सत्त त्रिहिं छह भणु पुणु विहिं पंच समुण्णउ सुरयणु ।
पुणु चउहुं मि चत्तारि जि गीयउ पुणरवि आहुट्ठ जि विहिं णीयउ ।
तिण्णेव य रयणिउ सवियप्पहिं दहपंचमसोलहमयकप्पहिं ।
दो पुण अड्ढ पढमगेवज्जहि मज्झत्थियहि दोण्णि जेंगपुज्जहि ।

६ MBP बाहुल्लें । ७ MPT सयणु ।
२४. १. P दोरेहिं । २ P °पसाहेहिं । ३ MBP अणिमिसहिं । ४. MBP सोम° । ५. MBP °तावेहिं ।
६ MBP °पहावेहिं । ७ MK जायत । ८ M णिरु ।
२५ १ MBP पुणु मणु; T पुणु विहिं । २ MBP जगि पुज्जहि ।

पर वहां त्रिलोकके ऊपर शिखरपर स्थित पैंतालीस लाख योजन विस्तीर्ण चन्द्रमा और हिमके समान छत्राकार भव्यजनोंके लिए प्यारी सिद्धोंकी भूमि अर्थोसे प्रचुर आठवीं पृथ्वी है।

घत्ता—अपने विमानके भीतर अत्यन्त मूल्यवान् शयनमें एक समयसे लेकर उपपाद स्वभावसे जो भिन्न मुहूर्तमे शरीर ग्रहण कर लेता है ॥२३॥

२४

उसमें मुकुटों, हारों, केयूरों, दोरों, कांचीकलापों, मंजीर शब्दों, वेशभूषाके प्रसाधनों, अतिसुरभित सांसों, वैक्रेयक शरीरों, लक्षण प्रसंगों, समचतुरस्र संस्थानों, मानवी आकारों, अपलक नेत्रो, चन्द्रमाके समान सौम्य मुखों और सन्तापशून्य पुण्य प्रभावोंसे स्वर्णके समान विकारसे रहित देव एक क्षणमे उत्पन्न होते है। सौधर्म स्वर्गके देवोके शरीरमे नखचर्म और सिरमे रोम नही होते। न रक्त न पित्त, और न पुरीष और न मूत। न मसे न मांस और न दाढ़ी केश होते है। न उनके मस्तिष्कमे शुष्कता होती है और न कलेजा (यकृत) होता है। उनके वासगृहोके किवाड़ स्वयं खुल जाते है। (इस प्रकार) मणिकिरणोंसे आलोकित देवयोनि-विमानोसे देव अचानक निकल पड़ते है और हर्षसे उछलने लगते हैं, 'हे देव-देवेन्द्र, आपकी जय, हे स्वामी, आपकी जय। आप प्रसन्न हो" यह घोषणा करते हैं और परिजनोको सन्तुष्ट करते है। इन सबके शरीरोंका मान जिनज्ञानके द्वारा निर्दिष्ट है।

घत्ता—भवनवासियोंमे असुरकुमारोकी ऊँचाई पच्चीस धनुष और व्यन्तरों सहित शेष देवोके शरीरकी ऊँचाई दस धनुष तथा ज्योतिष देवोके शरीरकी सात धनुष है ॥२४॥

२५

(वैमानिक देवोंमे) सौधर्म और ईशान इन दोनो स्वर्गोमे शरीरकी ऊँचाई सात हाथ, सनत्कुमार और माहेन्द्र स्वर्गमे छह हाथ, फिर ब्रह्म और ब्रह्मोत्तर, लान्तव और कापिष्ठ स्वर्गोमे पांच हाथ ऊँचे देवजन होते हैं। शुक्र, महाशुक्र, शतार और सहस्रार स्वर्गमें चार हाथ, और फिर आनत और प्राणत स्वर्गमे साढे तीन हाथ होते हैं; आरण और अच्युत इन दो स्वर्गोमे तीन हाथ। प्रथम ग्रैवेयक (अधोग्रैवेयक) के विमानोंमें (३) ढाई हाथ, विश्वपूज्य मध्यम ग्रैवेयकके विमानोंमें

५ होइ दियड्ढ रयणि उवरिल्लहि अमरबोंदिपरिमाणु सुहिल्लहि ।
णव पंचाणुत्तरहं मि सारउ एक्कु जि रयणि पउत्तु सरीरउ ।
अणिमामहिमालघिमापत्तिहिं ईसत्तणवसित्तगइसत्तिहिं ।
जुत्तकामरूवे कामाउर कीलालोललील सयरामर ।
णउ खुज्जय वामण वड हुंडय णारी पुरिस जि णउ ते पंडय ।
१० आईसाणकप्पसंभवणउं जावच्चुउ ता देविहि गमणउं ।
भावणाइं णाणातणुधारा आईसाण कप्पपडिचारा ।
घत्ता—फासें पडिचारु सणकुमारमाहिंदरुह ।
रूवेण करंति उवरिम चउकप्पय विबुह ॥२५॥

२६

पुणु चउकप्पसमुब्भव सुरवर होंति सद्दपडिचार सुहंकर ।
वरि चउकप्पहिं मणपडियारा एत्तो उवरिम णिप्पडियारा ।
सप्पडियार णिएवि अणिंदहु अतुलसोक्खु णिहिलहु अहमिंदहु ।
अहमिंदहु पासाउ जिणिंदहु गयरायहुं तिरायवइवंदहु ।
५ कहमि आउ तियसहं सुहसंगमु असुर जियंति एक्कु सायरसमु ।
णायहुं पल्लइं तिण्णि वियाणसु वणदेवहुं पल्लु जि परमाउसु ।
अड्ढाइज्ज पल्ल सोवण्णहं दीवहं दोण्णि पुण्णपरिपुण्णहं ।
सेसहं होइ दिवड्ढु णिरुत्तउ चंदु जियइ लक्खे संजुत्तउ ।
एक्कु पल्लु सहुं सहसें वरिसहुं जीवइ दिणयरु वड्ढियहरिसहुं ।
१० एक्कु जि सुक्कु सएण समेयउ तारारिक्खहुं ऊणउ णेयउ ।
पंच सत्त पुणु णव एयारह तेरह पण्णारह सत्तारह ।
एक्कुण एक्कवीस तेवीस वि पंचवीस भणु सत्तावीस वि ।
चउँत्तीसेक्कताल अडदाल वि पंचावण्ण जि पल्लइं जगरवि ।
सोहम्माइहिं भणइ सविलयहं आउ अच्चुयंतहं सुरविलयहं ।
१५ घत्ता—वे सत्त दसेव चोद्दहठारह वि ॥
वीस जि वावीस उड्ढ एक्कु वड्ढिमु कह वि ॥२६॥

२७

ताम जाम तेत्तीससमुद्दइं सव्वट्ठम्मि आउ कयभद्दइं ।
कप्पहं कप्पाईयहं एहउ अक्खमि णाणविसेसु वि जेहउ ।
मघीमाणहं अवहि पधावइ जाम पढममहिमंतु विहावइ ।

३. MBP पन्नाणु । ४ MBP एाक । ५ MB °मडमत्तहि । ६. MBP सयलामर । ७. MBP थारा । ८ M मध्य । ९ MBP पायपडि° ।

२६ १. MBPK असुरु । २. MB णिराय° । ३. MBP पल्ल परिपुण्णहं । ४. MBP चउतीसे° । ५. MBP इत्थाण । ६ P मणुयणहं । ७. MBP चउदह एदह अट्ठारह । ८ MBP उड्ढु एगु । ९. K कहि ।

२७ १. MBP सेवितं° । २. MBPT सव्वट्ठम्मि । ३. MBP °महिमांतु ।

दो हाथ। ऊपरके अर्थात् अन्तिम ग्रैवेयकके तीन सुखद विमानों और (अनुदिशों) के देवसमूहका परिमाण डेढ़ हाथ, विजयादिक पाँच अनुत्तर विमानोंका श्रेष्ठ शरीर एक हाथ प्रमाण कहा गया है। अणिमा, महिमा, लघिमादि शक्तियाँ ईशित्व, वशित्व और गतिशक्तिके द्वारा, युक्त कामरूपसे आतुर समस्त देव क्रीड़ासे चंचल लीलावाले होते हैं। वे कुबड़े, वामन, न्यग्रोध संस्थानवाले और हुंड (विकलावयववाले) नारी-पुरुष और नपुंसक नही होते। च्युति (च्यवन) पर्यन्त देवांगनाओं-के साथ गमन आदि ऐशान स्वर्ग तक सम्भव है। नाना शरीर धारण करनेवाले भवनवासी देवोंसे लेकर ईशान स्वर्ग तक शरीरसे कामसेवन किया जाता है।

घत्ता—सनत्कुमार और माहेन्द्र स्वर्गमें स्पर्शसे कामसेवन होता है; उससे ऊपरके चार स्वर्गों (पाँचवेसे आठवे स्वर्ग तक) में देव रूप देखकर कामकी शान्ति करते है ॥२५॥

२६

फिर चार स्वर्गों (नौवेसे लेकर बारहवे तक) में शुभ शब्द-कामसेवन होता है। उसके बाद चार स्वर्गो (१६वे स्वर्ग तक मनके विचारोंसे कामसेवन होता है। यहांसे ऊपरके देव कामसे रहित होते हैं। कामको नियन्त्रित कर अनिन्द्य निखिल अहमिन्द्रोंको अतुल सुख होता है। अहमिन्द्रोंकी तुलनामें गतराग और त्रिभुवनपतियों द्वारा वन्दनीय जिनेन्द्रका सुख होता है। देवोंको सुखका संगम करानेवाली आयुका कथन करता हूँ। असुर एक सागरके बराबर जीते हैं। नागकुमारोंकी तीन पल्य आयु जानो। व्यन्तर देवोंकी उत्कृष्ट आयु एक पल्य ही है। सुपर्ण-कुमारोंकी आयु ढाई पल्य होती है। पुण्यसे परिपूर्ण द्वीपकुमारोंकी दो पल्य होती है। और शेषकी डेढ़ पल्य होती है। चन्द्रमा एक लाख वर्ष अधिक एक पल्य जीवित रहता है। सूर्य हर्षको बढाने-वाले एक हजार वर्ष अधिक एक पल्य जीवित रहता है। सौ वर्ष अधिक एक पल्य शुक्र जीता है, ताराओं और नक्षत्रोंकी कुछ कम एक पल्य (अर्थात् नक्षत्रोकी आधा पल्य, तारोंकी चौथाई पल्य) जानो। फिर सौधर्मादि स्वर्गोके प्रत्येक युगलमे क्रमशः सौधर्म-ऐशानमे कुछ पांच सागर (अधिक दो-सागर) सानत्कुमार-माहेन्द्र स्वर्गमे सात सागर, ब्रह्म-ब्रह्मोत्तरमे नौ (दस), लान्तव और कापिष्ठमें ग्यारह (चौदह), शुक्र-महाशुक्रमे तेरह (१६ सागर), शतार और सहस्रारमें पन्द्रह (अठारह), आनत-प्राणतमे सत्रह (बोस), आरण और अच्युतमे उन्नीस (वाईस), चौतीस, इकतालीस, अड़तालीस सागर और पचपन पल्य आयु होती है। इस प्रकार विश्वसूर्य जिन भगवान् सौधर्म आदि स्वर्गोकी वनिताओं और अच्युतादि स्वर्गोकी देवांगनाओंकी आयुका कथन करते हैं।

घत्ता—दो, सात, दस, चौदह, अठारह, बीस, बाईस, उससे एक ऊपर कुछ अधिक ॥२६॥

२७

वहाँ तक कि जहाँ तक, सर्वार्थसिद्धिमें कल्याण करनेवाले देवोकी तेंतीस सागर आयु है।— कल्प और कल्पादिक स्वर्गके देवों जैसा ज्ञान विशेष है, वैसा कथन करता हूँ। सौधर्म और ईशान स्वर्गके देवोके अवधिज्ञानकी गति वहाँ तक है कि जहाँ तक पहली भूमि घर्माका अन्त है। फिर

पुणु दोसग्ग देव वीयहि तलु पेच्छंति वि जाणंति वि णिम्मलु।
५ भणु चउकप्प तियस तइयावणि चउसंभूय चउत्थी मेइणि।
आणयपाणय सुर पंचमियहि आरणच्चुयासर छट्ठमियहि[4]।
णव गेवज्ज मुणंति महंतउ ताम जाम सत्तमणरयंतउ।
सुद्धइ ओहिइ अणुदिस सुंदर तिजगणाडि पेक्खंति[5] अणुत्तर।
उप्परि णियविमाणचूडामणि जा ता देव मुणंति महागुणि।
१० पंचवीस जोयणइं वणेसहं संखाजुत्तइं जोइसवासहं।
अवरु[6] वि हवइ[7] ओहि कयसमरहं गणियउ जोयणकोडिउ असुरहं।
जिह असुरहं तिह रिक्खहं[8] तारहं चंदहं सूरहं गुरुअंगारहं।
सुक्कहु पुणु मइं[9] अक्खिउ भल्लउ [10]संखाहिउ ओहिविसउल्लउ।

घत्ता—णारय वि मुणंति जोयणेक्कु[11] रयणप्पहहि॥
गाउय अद्धद्धु होइ हाणि सेसहि[12] महिहि॥२७॥

२८

कम्माहारु असेसहं जीवहं णोकम्माहारु वि भवभावहं।
लेवाहारु[1] वि दीसइ रुक्खहं कवलाहारु णरोहतिरिक्खहं।
ओज्जाहारु[2] पक्खिसंघायहं मणभोयणु चउदेवणिकायहं।
अहमिंद वि करंति तेत्तीसहिं[3] वोलीणहिं वरवरिससहासहिं।
५ बत्तीसेक्कत्तीस[4] पुणु तीसहिं एक्कुणतीसहिं अट्ठावीसहिं।
एक्केक्कउ जि एम पडिहम्मइ[5] सोलहमे[6] बावीसहिं जिम्मइ।
आउणिबंध[7] महोवहिसंखहिं णीससंति तेत्तियहिं जि पक्खहिं।
पल्लजीवि पुणु भिण्णमुहुत्तें णीससंति अह[8] ताहं पुहुत्तें।
ऊससंति केइं वि पक्खेण जि[9] असुर असंति अहिय सहसेण[10] जि।
१० सरसइं सुरहियाइं अइमिट्ठइं सुहुमइं सुद्धइं णिद्धइं इट्ठइं।
आहरंति दवियाइं सइत्तें परिणमंति सहस त्ति तणुत्तें।

घत्ता—संसारिय जीव चउविह चउगइभिण्ण जिह॥
इंदियभेएण पंचपयार पउत्त तिह॥२८॥

---

४ K छमियहि। ५ P ते जिगणाटी। ६. MBP अवर। ७. P वहइ। ८. MB तिक्खह। ९. MBP मइं। १० MP संखाई ओहीविसयल्लउ; B संखाईउ ओहिविसयल्लउ। ११ MBP जोयणेक्कु। १२ M सीसेनहि।

२८ १ B लेवाहार। २ MBPK ओजाहारु। ३. MBP तेतीसहिं। ४. MBP °सेक्कतीस। ५ MBP पडिम्मइ। ६ MBPK सोलहमइ। ७ MBP आउ णिवद्धु। ८ MBP पुणु। ९ MBP केइ जि पक्खेण वि। १० MBP सहसेण वि।

२८

कर्मका आहार सब जीवोंके लिए होता है, शरीरयुक्त जीवोंका नोकर्मका आहार (छह पर्याप्तियों और तीन शरीरोंके योग्य पुद्गलोंका ग्रहण) होता है। लेपाहार वृक्षोंमे भी दिखाई देता है। मनुष्यों और तिर्यंचोंका कवलाहार होता है। ओद्य आहार पक्षीसमूहका होता है। चारों देव-निकायोंका मानसिक आहार होता है। अहमिन्द्र भी क्रमशः तेतीस हजार उत्तम वर्ष बीत जानेपर मानसिक आहार ग्रहण करते हैं। फिर बतीस, इकतीस, तीस, उनतीस, अट्ठाईस, बाईस और सोलह हजार वर्षोंमे देव (भूखसे) आहत होते हैं और आहार (मानसिक) ग्रहण करते हैं। जितने सागरोंकी संख्यामे उनकी आयु होती है, उतने ही पक्षोंमे वे निश्वास लेते हैं। पल्यजीवी देव एक भिन्न मुहूर्तमे अथवा भिन्न मुहूर्तोंमे तीन मुहूर्तोंसे ऊपर और नौ मुहूर्तोंके नीचे, कभी, निश्वास लेता है। कोई एक पक्षमे श्वास लेते हैं। असुर एक हजार वर्षमे भोजन करते हैं। गरम-सुरभित अत्यन्त मीठा सूक्ष्म शुद्ध स्निग्ध इष्ट जो द्रव्य चित्त खाये जाते है वे शीघ्र ही शरीररूपमे परिणत हो जाते हैं।

घत्ता—संसारी जीव जिस प्रकार चार गतियोंसे भिन्न होनेके कारण चार प्रकारके होते हैं, उसी प्रकार इन्द्रियभेदसे पांच प्रकारके होते हैं ॥२८॥

२९

काएं[1] छव्विह चवलथिरेण वि तिविह तिविहजोएं वेएण वि ।
जलणिहिविहि[2] वि कसाएं[3] जाया अट्ठभेय णाणें विण्णाया ।
संजमदंसणेण तिचउव्विह लेसापरिणामेण वि छव्विह ।
भव्वत्तेण विविह सम्मत्तें सण्णि असण्णी[4] दो सण्णित्तें ।
५ आहारें आहारिय जे जे चउसु वि गइसु परिट्ठिय ते ते ।
केवलिसमुहय विग्गहगइगय अरुह अजोइ सिद्ध परमप्पय ।
ते ण लेंति आहारु वियारिय सेस जीव जाणहि आहारिय ।
मग्गणठाणइं चोद्दह[5]भेयइं णिसुणहि गुणठाणाइं मि एयइं ।
मिच्छादिट्ठि[6] पहिल्लउं गीयउं सासणु बीयउं मीसु वि तीयउं ।
१० अविरयसम्माइट्ठि चउत्थउं पंचमु विरयाविरउ पसत्थउ ।
छट्ठउ पुणु पमत्तसंजमधरु[7] सत्तमु अप्पमत्तु गुणसुंदरु ।
अट्ठमु होइ अउव्वु अउव्वउं अणियट्टिल्लउ[8] णवमु अगव्वउं ।
दहमउं सुहुमराउ जाणिज्जइ एयारहमुवसंतु भणिज्जइ ।
बारहमउ[9] परिखीणकसायउ तेरहमउ सजोइजिणु जायउ ।
१५ उज्झियतिविहसरीरभरंतरु उवरिल्लउं अजोइ परु अक्खरु ।

घत्ता—णारय चत्तारि चत्तारि जि पुणु सुरपवर ॥
तिरियंच वि पंच णीसेसम्मि[10] चउंति णर ॥२९॥

३०

कम्मविहम्ममाण ससरीरा सासयकरणुज्झय विवरेरा ।
दंसणणाणसहावपहट्ठा होंति जीव उक्किट्ठणिकिट्ठा ।
ताहं चेट्ठ जा होइ समासम सा तहलियगहणभावक्खम ।
जेम तेल्लु सिहिसिहपरिणामहु तेम कम्मपोग्गलु[1] वि णिसामहु ।
५ जीवें लइयउ जाइ[2] जियत्तहु तिव्वकसायरसेहिं पमत्तहु ।
जिह सिहिभावहु वचइ इंधणु तिह कम्मेण जि कम्महु बंधणु ।
असुहें असुहु सुहें सुहु संधइ सिद्धुभडारउ[3] किं पि ण बंधइ ।
अभव जीव जिणणाहें इच्छिय एक्कु ण ते वि अणंत णियच्छिय ।
मइसुइओहि[4]मणपज्जव केवल णाणावरणविमुक्क सुणिक्कल[5] ।
१० णिद्दाणिद्दा पयलापयला थीणगिद्धि णिद्दा पुणु पयला ।

---

२९ १. MBP छव्विह थिरेण तसेण वि; T चवलछिरेण चपलस्वभावानां स्थिरपृथिव्यादीनाम् । २ MBP °विह व । ३. MB कसायं । ४. MBP असण्णि दोण्णि । ५ MBPK चउदह° । ६ MBPK मिच्छाइट्ठि । ७. MBP °संजमहरु । ८ MBP अणियट्टिल्लउं णवउं । ९. MBP परिहीण° । १०. MBP णीसेसहं मि ।

३०. १ MBP कम्मु पोग्गलु । २. MB जाय जियत्तहु; P जियंतहु । ३. MBP सिद्धु भडारउ; K सिद्धभडारउ but corrects it to सिद्धु । ४. MBP °सुइओहि° । ५. MBP सुणिम्मल ।

२९

जीव चपल और स्थिर स्वभाववाले योगसे छह प्रकारका, तीन प्रकारके योगों और वेदों (पुल्लिग आदि) से तीन प्रकारका और कषायोसे चार प्रकारका होता है। ज्ञानसे उसके आठ भेद हैं। संयम और दर्शनसे तीन और चार भेद हैं, लेश्याओंके परिणामसे भी छह प्रकार हैं। भव्यत्व और सम्यक्त्वके विचारसे दो-दो भेद है (भव्य-अभव्य, सम्यक्दृष्टि-असम्यग्दृष्टि), संज्ञासे संज्ञी और असंज्ञी दो भेद हैं। जो-जो शरीरसे आहार ग्रहण करनेवाले है, वे चारो गतियोमें प्रतिष्ठित है। समुद्घात[1] करनेवाले और विग्रहगतिमें जानेवाले अर्हन्त, अयोगी सिद्ध, परमात्मा होते हैं, वे आहार ग्रहण नहीं करते। शेष जीवोंको आहारिक समझना चाहिए। मार्गणा और गुणस्थानोंसे भी जीवके चौदह भेद होते है। अब इन गुणस्थानोको सुनिए—इनमे मिथ्यादृष्टि पहला गाया जाता है। सासन—सासादन दूसरा, मिश्र तीसरा, अविरत (असंयत) सम्यक् दृष्टि चौथा, देश-संयत पाँचवाँ। प्रमत्त संयम धारण करनेवाला छठा। गुणोंसे सुन्दर अप्रमत्त सातवाँ, अपूर्व-अपूर्वकरण आठवाँ, गर्वरहित अनिवृत्तिकरण नौवाँ, सूक्ष्म-साम्परायको दसवाँ समझना चाहिए, उपशान्त कषाय ग्यारहवाँ कहा जाता है। परिक्षीणकषाय बारहवाँ कहा जाता है, तेरहवाँ संयोग-केवली कहा जाता है, तीन प्रकारके शरीरभारसे रहित (औदारिक, तैजस और कार्मण) सबसे ऊपर अयोगकेवली परम सिद्ध होता है।

घत्ता—चार प्रकारके नारकीय होते है, और देव भी चार प्रकारके। तिर्यंच पाँचवें गुणस्थानों तक चढ़ सकते है। मनुष्य समस्त गुणस्थानोमे चढ़ सकता है ॥२९॥

३०

कर्मोंसे आहत होकर संसारी जीव, शाश्वत परिणामोंमें उद्यत होते हुए भी विपरीत आचरणवाला हो जाता है। इस प्रकार दर्शन, ज्ञान और स्वभावसे प्रमृष्ट जीव उत्कृष्ट और निकृष्ट दो प्रकारके होते है। और इससे जो उनकी सम-विषम चेष्टाएँ होती हैं जीव उस प्रकारके भावोको ग्रहण करनेमें सक्षम होता है। (तरह-तरहके कर्मपरिणामोंको ग्रहण करता है)। जिस प्रकार तेल, आग और उसकी ज्वालाओंके अनुसार परिणमन करता है, उसी प्रकार कर्म पुद्गल भी भावोके अनुरूप परिणमन करते है। इस प्रकार तीव्र कषायोके रसोसे प्रमत्त जीवनको यह जीव धारण करता है, जिस प्रकार ईंधन अग्निभावको प्राप्त होता है, उसी प्रकार कर्मसे कर्मका बन्धन होता है। अशुभकर्मसे अशुभकर्मका और शुभकर्मसे शुभकर्मकी सन्धि होती है परन्तु सिद्ध भट्टारक कुछ भी बन्धन नही करते। जिननाथके द्वारा अभव्यजीव भी चाहे (सम्बोधित किये) जाते हैं, वे एक नही, अनेक देखे जाते है। मति श्रुति अवधि मन.पर्यय तथा केवलज्ञाना-वरण। केवलज्ञान जो अत्यन्त निष्कल और नाना आवरणोसे मुक्त है। निद्रा, अनिद्रा, प्रचला

---

१. दण्ड-कपाट-प्रतर-पूरणके द्वारा जब केवली त्रैलोक्यका भरण करते हैं उस समय वह अनाहारक होते हैं।

चक्खुअचक्खुदंसणावरणउ अवही केवलदं[6]सणवरणउ ।
तेहिं विणासिउ णवसंखायउ वेयणीयदुगु सायासायउं ।
दंसणमोहणीउ सम्मत्तु वि मिच्छत्तु वि सम्मामिच्छत्तु वि ।
दुविहु चरित्तमोहु विक्खायउ णोकसाउ णामेण कसायउ ।
१५ तं कसायजायउ सोलहविहु इयरु भणेसमि पच्छइ णवविहु ।
पढमकसायचउक्कु सुभीसणु सत्तमणरयगामि दिहिदूसणु ।

घत्ता—अइकोहु समाणु माया लोहु वि दुत्थ[7]यरु ॥
उवसमहुं ण जाइ जइ वि पबोहइ तित्थयरु ॥३०॥

३१

अवरु अपच्चक्खाणु गुरुक्कउ पच्चक्खाणु [1]चउक्कु विमुक्कउ ।
संजलणु वि जलंतु उल्हा[2]विउ थीपुंसंढराउ [3]उड्डाविउ ।
[4]भयरइयरइदुगुंछउ जित्तउ हासु वि स[5]हुं सोएण णिहित्तउ[6] ।
सुर णर [7]णरय तिरिय चउआउ वि बायालीसविहेयउं णाउं वि ।
५ गइणामउ वि [8]जाईणामु वि भणु तणुणामउं पुणु तणुहि णिबंधणु ।
तणुसंघाउ तणुहि संठाणउं [9]तणुअंगोअंगु वि णामाणउं ।
तणुसंघडणु[10] [11]वण्णगंधिल्लउं रसणामउं अवरु वि फासिल्लउं ।
[12]आणुपुव्वि अगुरुलहु लक्खिउ उवघाउ वि परघाउ वि अक्खिउ ।
ऊसासु वि [13]आदावुज्जोयउ अण्णु विहायगइ वि तसकायउ ।
१० थावरु थूलुसुहुमु पज्जत्तउ अण्णु वि भणिउं [14]अप्पज्जत्तउ ।
पत्तेयंगणाउं साहारणु थिरु अथिरु वि सुहणाउं सकारणु ।
असुहु सुभगु दुब्भगु सुसरिल्लउ दुस्सरु आदेज्जउ जगि भल्लउ ।
णाउं अणादेज्जउ जसकित्ति वि तित्थयरत्तु णिमिणु मलकित्ति वि ।

घत्ता—चउगइजम्मेण गइणामउं अट्ठद्धविहु ॥
१५ इंदियइं गणेवि जाइणामु भणु पंचविहु ॥३१॥

३२

हणिवि पंच णामइं पंचविहइं एक्कु तिभेयउ दो[1] दो दुविहइं ।
दो छह पुणु दो चउ अट्ठविहइं उच्चारयइं जाइं एक्कविहइं ।
समलामलइं दोण्णि जगि गोत्तइं ताइं सि जेहिं दूरि परिचत्तइं ।
दाणभोयउवभोयणिवारउ वीरियलो[2]हु हेउसंघारउ ।

---

६. MBP °दंसणहरणउं । ७. K दुक्खयरु but corrects it to दुत्थयरु ।

३१ १. MBP चउक्क । २. P उण्हाविउ । ३. MBPT उद्दाविउ । ४ MBP भइरइअरइ° । ५ MBP सह । ६ P विहित्तउ । ७ P णिरय । ८ MBP जाइणाउं । ९ MBP तणुअंगोवंगु वि णिम्माणउ । १०. K मघदणु । ११. P वण्णु गंधिल्लउ । १२. MBP अणुपुव्विय अगरुलहु । १३. MBP आदा-उज्जोयउ । १४ MB अप्पज्जत्तउ ।

३२. १. M दो पुण दुविहइं । २. MBP °लाहु°; K लाहु but corrects it to लाहु ।

अप्रचला, स्त्यानगृद्धि, निद्राप्रचला, चक्षुदर्शनावरण, अचक्षुदर्शनावरण, अवधिदर्शनावरण और केवलदर्शनावरण उन्होने नष्ट कर दिया। सातावेदनीय और असातावेदनीयके दुर्गुंको, दर्शनमोहनीय (सम्यक्त्व प्रकृति, मिथ्यात्व प्रकृति, सम्यग्मिथ्यात्वप्रकृति), चारित्र मोहनीय दो प्रकारका विख्यात है (कषाय वेदनीय और नोकषाय वेदनीय) उसमे कषाय वेदनीय सोलह प्रकारका है, और दूसरेका, जो नौ प्रकारका है, मै बादमें वर्णन करूँगा। पहला जो कषाय चक्र (अनन्तानुबन्धी क्रोध, मान, माया, लोभ) है, वह भाग्यके लिए दूषण और सातवे नरकका कारण है।

घत्ता—अत्यन्त क्रोध, मान, माया और लोभ भी अत्यन्त दुस्तर होता है। वह उपशमको प्राप्त नही होता, भले ही तीर्थंकर उसको सम्बोधित करे ॥३०॥

३१

दूसरा अप्रत्याख्यान क्रोध, मान, माया, लोभकषाय भी भारी होती है। प्रत्याख्यान क्रोध, मान, माया और लोभ भी चार हैं। उन्होने जलते हुए-से ज्वलन क्रोध, मान, माया और लोभको भी शान्त कर दिया। स्त्रीत्व और पुरुषत्वके भावको उड़ा दिया। भय, रति, अरति, जुगुप्साको उन्होने जीत लिया। शोकके साथ हास्यको भी समाप्त कर दिया। सुर, नर, नरक और तिर्यंच इन चार आयु कर्मोको भी और बयालीस भेदवाले नाम कर्मको भी, गतिनाम और जातिनाम, शरीरनाम और शरीरसंरचना, शरीर संस्थान, शरीर अंगोपांग और निर्माण, शरीरका बन्धन, वर्ण-गन्ध, रस-स्पर्श, आनुपूर्वी, अगुरुलघु भी लक्षित किया। उपघात और परघात भी कहा गया। उच्छ्वास, आतप, उद्योत, विहायोगति, त्रसकाय, स्थावर, स्थूल, सूक्ष्म, पर्याप्त और भी अपर्याप्त माना जाता है। प्रत्येकशरीर, साधारण शरीर, स्थिर-अस्थिर, सकारण शुभ-अशुभ, सुभग, दुर्भग, सुस्वर और दुस्वर। आदेय भी जगमे भला होता है, अनादेय यशःकीर्ति, अयशःकीर्ति और तीर्थंकरत्व।

घत्ता—चार गतियोंमे जन्मके नामसे गति नामकर्म आठका आधा चार होता है। इन्द्रियोंके लेनेसे जाति नामकर्म पाँच प्रकारका है ॥३१॥

३२

इस प्रकार पाँच प्रकारके पांच नामों [अर्थात् (१) औदारिक आदि पाँच शरीरोका संघात, (२) कृष्ण-नील-पीतादि पाँच वर्ण, (३) कटु-तिक्त आदि पाँच रस, (४) औदारिकादि शरीर-निबन्ध, (५) औदारिकादि पाँच शरीर, औदारिक वैक्रियक और आहारक शरीरके अंगोपांग (एकके त्रिभेद) दो प्रकार दो (सुभग, दुर्भग, प्रशस्त, अप्रशस्त), दो छह, (समचतुरस्र, वल्मीक न्यग्रोध कुब्ज वामन हुंड संस्थान और वज्रर्षभनाराच, वज्रनाराच, नाराच असंप्राप्त अस्पृष्ट आदि संघट्टन), दो-चार (नरकादि गतियाँ और गत्याद्यनुपूर्वियाँ), आठ प्रकार (कर्कश-मृदु-गुरु-लघु, शीतोष्ण-स्निग्ध-सूक्ष्म और स्पर्श नाम), की प्रकृतियाँ जो नाम उच्चारण करनेपर एक-एक प्रकारकी हैं। संसारमे गोत्र भी ऊँच-नीच दो प्रकारका है, जिनको उन्होने दूरसे त्याग दिया है। दान भोग उपभोगका निवारण करनेवाला, वीर्य और लाभके कारणोका संहार करने-

५ अंतराउ पंचविहु धुणेप्पिणु अडयालीसउं सउ विहुणेप्पिणु ।
पयडिहिं माणवंगु मेल्लेप्पिणु सुद्धसहाउ सइंभु लहेप्पिणु ।
जे गय जीव परमणिव्वाणहु दुहविरहिहु सासयठाणहु ।
चरमसरीरमाण किंचूणा ववगयरोयसोय अविलीणा ।
णिम्मल णिरुवम णिरहंकारा जीवदव्वघण णाणसरीरा ।
१० उड्ढगमणसहावें गंपिणु उड्ढलोउ सयलु वि लंघेप्पिणु ।
अट्ठमपुहईवट्ठि णिविट्ठा अभव जीव जिणदेवें दिट्ठा ।

घत्ता—ते साइ अणाइ दुविह अणंत जि विविहदुहे ॥
ते पुणु ण सरंति णउ पडंति संसारमुहे ॥३२॥

३३

णउ बाल णउ वुड्ढ णउ मुक्ख सुवियड्ढ ।
णीसाव णित्ताव णिग्गाव णिप्पाव ।
णाणंग णिम्मेह णिण्णेह णिद्देह ।
णिक्कोह णिल्लोह णिम्माण णिम्मोह ।
५ णिव्वेय णिज्जोय णीराय णिब्भोय ।
णिद्धम्म णिक्कम्म णिच्छम्म णिज्जम्म ।
णीराम णिक्काम णिव्वाह णिद्धाम ।
णिव्वेस णिल्लेस णिग्गंध णिप्फास ।
णीरस महाभाव णीसद्द णीरूव ।
१० अव्वत्त चिम्मेत्त णिच्चिंत णिव्वित्त ।
ण छुहाइ घेप्पंति ण तिसाइ छिप्पंति ।
ण रुयाइ झिज्जंति ण रईइ सिज्जंति ।
णाहारु भुंजंति ओसहु ण जुंजंति ।
ण मलेण लिप्पंति ण जलेण धुप्पंति ।
१५ णिद्दं ण गच्छंति अणयणा वि पेच्छंति ।
अमणा वि जाणंति सयरायरं झत्ति ।
सिद्धाण जं सोक्खु तं कहइ चम्मक्खु ।
किं माणवो को वि सुरु खयरु देवो वि ।

घत्ता—पंचिंदियमुक्कु परमप्पइ हूयउ विमले ।
२० ज सिद्धहं सोक्खु तं ण वि कासु वि भुवणयले ॥३३॥

३. MBP विहुणेप्पिणु । ४. B सिद्धसहाउ । ५. MBP सयंभु । ६. MB गय परम जीव ।
७ MBP दुहरयविमुक्कहु । ८ K उड्ढें गमणु । ९. K अट्ठमि ।

३३. १. P णीमाम । २. MBP णीताव । ३ MBP रुयाइ । ४. B भुजंति, P हुजंति and gloss योजयन्ति । ५. MBP अणयण वि । ६. MBP सुरु । ७. MBP हूयइ । ८. MBP णउ ।

वाले पाँच प्रकारके अन्तरायको नष्ट कर, इस प्रकार एक सौ अड़तालीस प्रकृतियोंको ध्वस्त कर, प्रकृतियोंसे मानवशरीरको मुक्त कर, स्वयम्भू शुद्ध स्वभाव प्राप्त कर, जो जीव दुःखसे विरहित शाश्वत स्थानमें गये हैं, वे चरमशरीरी किंचित् न्यून, रोग-शोकसे रहित सिद्ध स्वरूप नहीं छोड़ते हुए निर्मल अनुपम निरहंकार जीव द्रव्यसे सघन और ज्ञानशरीरी, ऊर्ध्वगमन स्वभावसे जाकर समस्त ऊर्ध्वलोकको लाँघकर आठवीं धरतीकी पीठ (मोक्षपीठ) पर आसीन हो गये, ऐसे अजन्मा जीवोंको जिन भगवान्‌ने देख लिया।

घत्ता—अनन्त वे आदि और अनादिके भेदसे दो प्रकारके विविध दुःखवाले संसारके मुखमें फिरसे नहीं पड़ते, उनकी मृत्यु नहीं होती ॥३२॥

३३

वहाँ न बालक है, न वृद्ध, न मूर्ख हैं और न पण्डित हैं, जो शाप और तप रहित। गर्व और पापसे रहित, काम और इन्द्रियबोधसे शून्य, देहचेतना और स्नेहसे रहित, क्रोध और लोभसे रहित, मान और मोहसे रहित, वेद और योगसे रहित, नीराग और निर्भोग, निर्धर्म-निष्कर्म, क्षमा और जन्मसे रहित, स्त्री और कामसे रहित, बाधा और घरसे रहित, द्वेष और लेश्यासे दूर, गन्ध-स्पर्शसे शून्य, नीरस महाभाववाले, शब्द और रूपसे हीन, अव्यक्त चिन्मात्र, निश्चिन्त निर्वृत्त, जो भूखसे ग्रहण नहीं किये जाते, जो प्याससे नहीं छुए जाते, जो रोगोंके द्वारा क्षीण नहीं होते और न रतिसे दुःखको प्राप्त होते है। आहार नहीं लेते, औषधिका प्रयोग नहीं करते। मलसे लिप्त नहीं होते और न जलसे धुलते हैं, नींदको प्राप्त नहीं होते, जो बिना आँखोंके भी देखते है, बिना मनके जान लेते हैं, शीघ्र ही सचराचर विश्वको। सिद्धोंको जो सुख है क्या उसे कोई चर्म चक्षुओंवाला मनुष्य, देव या विद्याधर कह सकता है।

घत्ता—पाँच इन्द्रियोंसे मुक्त विमल परम पदोंमें सिद्धोंको जो सुख होता है वह सुख विश्व-तलमें किसीको भी नहीं होता ॥३३॥

३४

एहा दुविह जीव मइं अक्खिय कहमि अजीव वि जेम णिरिक्खिय ।
धम्मु अधम्मु दो वि रूवुज्झिय आयासें कालें सहुं बुज्झिय ।
गइठाणोग्गहवत्तणलक्खण के वि मुणंति सुणाण वियक्खण ।
संतु अणाइ समउ वट्टंतउ तीउ कालु अगामि अणंतउ ।
५ तासु ठाणु भण्णइ णरलोयउ धम्माधम्महं सव्वतिलोयउ ।
बिहिं मि लोयणइमाण वियप्पउ आयासु वि अणंतु सुसिरप्पउ ।
तं जि अलोउ जोइपण्णत्तउ पोग्गलु होइ पंचगुणवंतउ ।
सद्दें गंधें रूवें फासें जुत्तउ भिण्णवण्णविण्णासें ।
खंधु देसु अद्धद्धपएसु वि परमाणुउ अविहाइ असेसु वि ।
१० घत्ता—तं सुहुमु वि थूलु थूलुसुहुमु पुणु थूलु भणु ।
थूलाण वि थूलु चउपयारु महुं मुणइ मणु ॥३४॥

३५

गंधु वण्णु रसु फासु ससद्दउ सुहुमु थूलु वज्जरइ ससद्दउ ।
थूलुसुहुमु जोण्हाछायाइउ थूलु सलिलु वीरेण णिवेइउ ।
थूलुथूलु पुणु धरणीमंडलु सग्गविमाणपडलु मणिणिम्मलु ।
सुहुमइं कम्माइयइं सणामइं मणभासावग्गणपरिणामइं ।
५ वण्णाइयहिं रसेहिं अणेयहिं परिणमंति संजोयविओयहिं ।
पूरणगलणसहावणिउत्तइं पोग्गलाइं विविहाइं पउत्तइं ।
भासिज्जंतउ परमजिणिंदें णिसुणिवि धम्मु सुधम्माणंदें ।
वसहसेणु सुहभावें लइयउ पुरिमतालपुरवइ पावइयउ ।
सोमप्पहु सेयंसणरेसरु थिउ पव्वज्ज लेवि हयमयजरु ।
१० इय रिसहहु परिमुक्कविसाया णिव चउरासी गणहर जाया ।
बंम्ही सुंदरि अज्जियसंबहु कंतियाउ जायाउ महग्घहु ।
दंसणमोहणीयपडिरुद्धउ एक्कु मरीइ णेय पडिबुद्धउ ।
तावस कंदाहारु मुएप्पिणु थिय कच्छाइय रिसिव्वउ लेप्पिणु ।
मोक्खमग्गगामिहिं परमेसरु हुयउ अणंतवीरु अग्गेसरु ।

---

३४. १. MBP रूउज्झिय । २ P वड्ढंतउ । ३. MB तीयउ, P तइयउ । ४. MBP धम्माहम्मह सयलु । ५ MBPK माणु वि अप्पउ; T लोयणमाणु । ६ MBP अद्धद्धु । ७ M सुहुमुसुहुमु तह सुहुमु वि पुणु; B चउपयारु सुहु मुणइ मणु; P सुहुमु सुहुमु तह सुहुमु पुणु ।

३५ १. M सुसद्दउ । २. MBP add after this : सुहुमसुहुमु परिमाणुविसेसइं; लग्गहिं णिवडवि अप्पएगइं । ३. P पव्वइयउ । ४ MBP सेयंसु णरेसरु । ५ MBP बंभी । ६. K °परिरुद्धउ ।

३४

इस प्रकार दो प्रकारके जीवोंका मैंने कथन किया। अब मैं अजीवका कथन करता हूँ कि जिस प्रकार मैंने देखा है। धर्म और अधर्म दोनों रूपसे रहित हैं, आकाश और कालके साथ, यह समझना चाहिए। गति, स्थिति, अवगाहन और वर्तना लक्षणवाले इनको कोई विलक्षण सुज्ञानी ही जानते है। काल सान्त और अनादि है। वर्तमान आगामी और भूत—ये कालके तीन भेद है। उसका (व्यवहार काल) समस्त नरलोक स्थान है। धर्म और अधर्म समस्त त्रिलोक है। उन दोनोंसे लोकाकाश व्याप्त है। आकाश भी अनन्त है और शुषिरके स्वरूपवाला है। अलोकाकाश वह है जो योगियोंके द्वारा ज्ञात है। पुद्गल पांच गुणवाला होता है। शब्द गन्ध रूप स्पर्श और भिन्न-भिन्न रंग-रचनाओंसे युक्त स्कन्ध देश-प्रदेशके भेदसे तीन प्रकारका है। स्वयं अशेष अविभाज्य है।

घत्ता—उसे सूक्ष्मस्थूल, स्थूलसूक्ष्म और फिर स्थूल कहो। और स्थूलोंका भी स्थूल, वह चार प्रकारका है ऐसा मेरा मन सोचता है ॥३४॥

३५

गन्ध-वर्ण-रस-स्पर्श-शब्द सूक्ष्म स्थूल मार्दववाला कहा जाता है। स्थूल सूक्ष्म ज्योत्स्ना छाया और आतप, स्थूल जैसे पानी ऐसा वीर (महावीर) ने कहा है स्थूलस्थूल धरतीमण्डल मणि निर्मल स्वर्ग विमान पटल है। सूक्ष्म नाम सहित सभी कर्म मन भाषा वर्गणा और परिणामों, अनेक रसो-रंगों, संयोग-वियोगोंसे परिणमन करते हैं। पूरण-गलन आदि स्वभावसे युक्त पुद्गल अनेक प्रकारके कहे गये हैं—इस प्रकार परमजिनेन्द्र द्वारा कथित धर्मको धर्मके आनन्दसे सुनकर, वृषभसेनने शुभ भावसे ग्रहण किया। उसने पुरिमतालपुरमे प्रव्रज्या ग्रहण की। सोमप्रभ श्रेयांस नरेश मदज्वरको नष्ट करनेवाली प्रव्रज्या लेकर स्थित हो गये। इस प्रकार विषादसे रहित चौरासी गणधर ऋषभ जिनवरके हुए; ब्राह्मी-सुन्दरी जैसी कान्ताएँ महाआदरणीय संघकी आर्यिकाएँ बनी। लेकिन दर्शन मोहनीय कर्मसे अवरुद्ध एक मरीचि नामका भरतका पुत्र प्रतिबुद्ध नही हो सका। वह उन्हे छोड़कर कन्दका आहार करनेवाला कच्छादिका मुनिपद ग्रहण कर तपस्वी बन गया। लेकिन मोक्षमार्गपर चलनेवालोमे अनन्तवीर्य सबसे अग्रणी हुआ।

१५ घत्ता—सावउ सुयकित्ति सावइ देवि पियंवइय ॥
भरहेण वि पुज्ज पुप्फयंत एँहु जिणि रइय ॥३५॥

इय महापुराणे तिसट्ठिमहापुरिसगुणालंकारे महाकइपुप्फयंतविरइए महाभव्वभरहाणुमण्णिए महाकव्वे महावत्थुणिद्देसो णाम एयारहमो परिच्छेओ सम्मत्तो ॥ ११ ॥

॥ संधि ॥ ११ ॥

७. MBP पहु; K पहु but corrects it to एहु and gloss एतस्मिन् जिने ।

घत्ता—श्रावक श्रुतकीर्ति और श्राविका देवी प्रियंवदा। जिसमें रत नक्षत्र-पत्य ये लोग भरतके द्वारा भी पूज्य हैं ॥३५॥

इस प्रकार त्रेसठ महापुरुषोंके गुणालंकारोंसे युक्त इस महापुराणमें महाकवि पुष्पदन्त द्वारा विरचित और महाकव्व भरत द्वारा अनुमत ग्यारहवाँ परिच्छेद समाप्त हुआ ॥११॥

संधि १२

अरिवरणिद्दारणि खत्तुद्धारणि तिजगलच्छिविजयाणउं ॥
विहलियसाहारणि मेइणिकारणि भरहें दिण्णं पयाणउ ॥१॥

१

छुड्ड छुड्ड सरयागमि अप्पमाणु णहु णाइं धोयहरिणीलभाणु ।
णं दीसइ ओसंत्थिउ अएण सरयब्भदहियखंडहुं कएण ।
५ णं जगहरि णीलुल्लोउ बद्धु तारामोत्तियझुंबुक्कणिद्धु ।
अइ दस वि दिसा सइं गयरयाइं णं चारित्तइं सज्जणकयाइं ।
ससिकुंभगलियजोण्हाजलेण पक्खालियाइं णं णिम्मलेण ।
णिड्डहइ कमलु सरए ससंकु तहु तेण जि लग्गउ पिंडपंकु ।
सो अज्ज वि दीसइ मलविरुद्धु णियडिंभपराहवि को ण कुद्धु ।
१० तेण जि रोसें रवि तिव्वु तवइ सररुहसुहि किं चिक्खिल्लु खवइ ।
पंकक्खइ सुक्कइ णलिणणालु अइउग्गत्तणु बंधवहं कालु ।
कुवलयदिहिगारउ णाइं राउ कयबंधुजीवसुच्छायभाउ ।
तरु कुसुमामोएं महमहंति रयकविलइं सलिलइं वणि वहंति ।
अलि रुणुरुणंति पावाहपिंड महुमत्ता णं गायंति सोड ।
१५ घत्ता—सारयमयलंछणु रुइरंजियजणु जइ मयमलिणु ण होंतउ ॥
तो हउं कयसंतिहि जिणजसपंतिहि एहु जि उप्पउं देंतउ ॥१॥

२

पणवेप्पिणु लेप्पिणु सिद्ध सेस अवठंभिवि रुंभिवि सयल देस ।
आवेप्पिणु पइसेप्पिणु अउज्झ परचक्कमुक्कपहरणदुगेज्झ ।
मणु टोयवि जोयवि तणयवयणु परियंचिवि अंचिवि चक्करयणु ।
दालिद्दु रउद्दु पवासियाहं काणीणहं दीणहं देसियाहं ।
५ णिट्ठविवि वरेण चामीयरेण णाणाविलासनोमायरेण ।
मंतिवि अट्ठंगु पंचंगु मंतु को सत्तु मित्तु को तब्विरत्तु ।
परिगागिवि माणिवि वुड्ढ चारु ओहाविवि धारिवि रज्जभारु ।
अइयग्गिर मग्गिउ को ण गप्पु भणु केण ण केण वि मुक्कु दप्पु ।

सन्धि १२

शत्रुवरोंके निर्दलन, क्षात्रधर्मके उद्धार, विकलित जनोंके सहारा देने, ढाढस और धरतीके लिए भरतने त्रिलोक लक्ष्मी और विजयका प्राप्त करानेवाला प्रस्थान किया ॥१॥

१

शीघ्र ही शरद् ऋतुके आगमनपर धुल गये हैं सूर्य-चन्द्र जिसमे ऐसा आकाश अप्रमाण (सोमाहीन) हो उठा, जो ऐसा दिखाई देता है मानो शरद्के मेघरूपी दही खण्डके लिए ब्रह्माके द्वारा झुका दिया गया हो। मानो विश्वरूपी घरमे तारारूपी मोतियोके गुच्छोंसे स्निग्ध नील चन्दोवा बांध दिया गया हो, दशों दिशाएँ रजसे इस प्रकार अत्यन्त शून्य हो गयी, (निर्मल हो गयी); मानो सज्जनोके निर्मल चरित्र हों। मानो वे चन्द्ररूपी घड़ेसे प्रगलित ज्योत्स्नारूपी निर्मल जलसे प्रक्षालित कर दी गयी हों। शरद्मे शशांक—चन्द्रमा कमलको जलाता है, इसीलिए उसका (कमलका) शरीर-पंक उसीको (चन्द्रमाको) लग गया। वह (सूर्य) आज भी मल विरुद्ध दिखायी देता है, अपने बच्चेके पराभवसे कौन क्रुद्ध नही होता? क्या इसी क्रोधसे सूर्य तीव्र तपता है, और कमलबन्धु (सूर्य) कीचड़को सुखाता है, कीचड़के सूखनेसे कमलोके नाल (मृणाल). सूख जाते हैं, अत्यन्त उग्रता बन्धुओके लिए भी काल सिद्ध होती है? जिसने अपने बन्धुओंके प्राणोके लिए सुन्दर छायाका भाव किया है, ऐसा चन्द्रमा राजाकी तरह कुवलय (कुमुदों और पृथ्वीरूपी मण्डल) के लिए भाग्यकारक होता है। कुसुमोके आमोदसे वृक्ष महक रहे हैं। परागसे पीले जल वनमे बह रहे है। पापके समान रंगवाले अर्थात् काले रंगके भ्रमर गुनगुना रहे हैं, मानो मधुसे मत्त मद्यप गा रहे हो।

घत्ता—अपनी कान्तिसे जनोंको रंजित करनेवाला शरद्का चन्द्रमा, यदि मृगके लांछनसे मैला नही होता, तो मैं (कवि पुष्पदन्त) उसकी शान्तिका विधान करनेवाले जिन भगवान्के यशरूपी चन्द्रमासे उपमा देता ॥१॥

२

सिद्धोंको प्रणाम कर और शेष तिल (निर्माल्य) लेकर समस्त देशोंपर बलपूर्वक आक्रमण कर, उन्हें स्थापित कर और शत्रुमण्डलके द्वारा छोड़े गये अस्त्रोके लिए दुर्ग्राह्य अयोध्यामे प्रवेश कर, मनको लगाकर, पुत्रका मुख देखकर और चक्ररत्नकी परिक्रमा और अर्चना कर प्रवासियों परदेशियों और कन्यापुत्रोंका भयंकर दारिद्र्य, स्वर्णदानके द्वारा समाप्त कर, अभंग पंचांग मन्त्रकी मन्त्रणा कर कौन शत्रु है, कौन मित्र है, और कौन विरक्त (मध्यस्थ) है? यह जानकर वृद्ध मन्त्रियोके आचारको मानकर और विचारकर राज्य-भार देकर (वह चला) बताओ, उसने

भुयदंडचंडविक्कमसएण छक्खंडमंडलावणिकएण ।
१० गंभीरतूरलक्खइं हयाइं दुप्पेक्खइं रक्खइं हयमयाइं ।
कयसमरहं अमरहं थरहरंति गत्तइं सोत्तइं बहिरत्तु जंति ।
असुरिंदहं णाइंदहं पियाइं पायालइं विउलइं कंपियाइं ।
तुट्टइं फुट्टइं गिरिसिहियलाइं झलझलियइं वैलियइं सरिजलाइं ।
थिरभावहं देवहं जाय संक रवपेल्लिय डोल्लिय रवि ससंक ।
१५ घत्ता—तहु तिजगविमद्दहु तूरणिणद्दहु मिलिउ दुग्गणिव्वाहणु ।
परमंडलेसाहणु गहियपसाहणु खणि चउरंगु वि साहणु ॥२॥

३

णिरयं णिववलं धरियहलसव्वलं
कणयकुंतुज्जलं चंदणसुपरिमलं ।
सरसघुसिणारुणं खयंतरणिदारुणं ।
तुरुतुरियकाहलं सुहडकोलाहलं ।
५ मुक्कहुंकारयं फुसियअसिधारयं ।
बद्धतोणीरयं अहियखोणीरयं ।
गहियसंणाहयं णवियणियणाहयं ।
वलइयसरासणं परिहियविहूसणं ।
वूढजंपाणयं चोइयविमाणयं ।
१० जंतजक्खामरं चलियचलचामरं ।
खुहियणाणाणिवं जणियगमणुच्छवं ।
कामिणीसुललियं किंकिणीमुहलियं ।
रहियवाहियरहं छत्तछाइयणहं ।
वंदिवण्णियगुणं दिण्णमणिकंकणं ।
१५ पवणधुयधयवडं गिरिगरुयगयघडं ।
गहियसयगारवं रणियघंटारवं ।
परिभमियमहुयरं मुक्कढक्कासरं ।
मलियफणिसेहरं काललीलाहरं ।
णडियसुरणरणडं चडुलहयवरथडं ।
२० बहलधूलीरयं घुलियमणिहारयं ।
घत्ता—कयरिउवहुविरहें जगजसभरहें चलियएण पधाइउ ।
वररहसायंगहिं भडहिं तुरंगहिं सेण्णु ण कत्थइ माइउ ॥३॥

---

२. १. MBP भयगयाइं । २ MB झलिझलियइं । ३ MBP चलियइं । ४. MBP रहं । ५. MP जेल्लिय । ६. M परमंडलु ।

३. १. MB °कंतुज्जलं । २. MBP खयतरणि° । ३ MP फुरिय° । ४. M रूढ° । ५ MBP °कचणं । ६ MBP °सुरवरणडं । ७. MBP °जयभरहें चल्लंतेण; T जगजसभरहें but records a p. जगजयेति पाठे जगति जयेनोपलक्षितो भरतस्तेन । ८. P पधाइयउ । ९. MBP वररहवरसायंगहिं । १०. P माइयउ ।

अतिगर्वित किससे कर नहीं माँगा, किस-किसने गर्व नहीं छोड़ा ? भुजदण्डोंके प्रचण्ड विक्रम और मदवाले उसके द्वारा छह खण्ड धरतीमण्डलके लिए लाखों गम्भीर तूर्य बजवा दिये गये, दुर्दर्शनीय रक्षक आहतमद हो उठे। युद्ध करनेवाले देवोंके शरीर थरथर काँप उठे। उनके कान बहरे हो गये। असुरेन्द्रों और नागेन्द्रोंकी प्रियाएँ और विपुल पाताललोक काँप उठे। पहाड़ और धरतीतल टूट-फूट गये। नदियोंके चमकते हुए जल मुड़ गये। स्थिर भाववाले देवोंको शंका उत्पन्न हो गयी। शब्दोंसे आहत सूर्य और चन्द्रमा डोल उठे।

घत्ता—त्रिजगका विमर्दन करनेवाले उस तूर्य शब्दके साथ दुर्गोंको ध्वस्त करनेवाला, शत्रुमण्डलको सिद्ध करनेवाला, साधनोंसे युक्त चतुरंग सैन्य भी जा मिला ॥२॥

३

जिसने हल-सब्बल ग्रहण किया है, जो स्वर्णकुन्तलोंसे उज्ज्वल है, जो चन्दनसे सुरभित है, सरस केशरसे आरक्त है, प्रलयकालके सूर्यके समान भयंकर है, जिसमें तुरु-तुरिय और काहल वाद्य बज रहे हैं, सुभटोंका कोलाहल हो रहा है, हुंकार शब्द छोड़ा जा रहा है, तलवारकी धारें चमक रही हैं, जो तूणीर (तरकस) बाँधे हुए हैं, जो शत्रुमें अत्यन्त आसक्त है, जिसने कवच धारण कर रखे हैं, जिसने अपने स्वामीके लिए प्रणाम किया है, जिसने धनुषको मोड़ रखा है, जिसने आभूषण पहन रखे हैं, जो जंपाण धारण किये हुए हैं, जो विमानोंको प्रेरित कर रही है, जिसमें यक्ष और देव चल रहे हैं, जिसमें चंचल चमर चल रहे हैं, जिसने अनेक राजाओंको क्षुब्ध किया है, जिसने प्रस्थानका उत्सव किया है, जो स्त्रियोंसे सुन्दर है, किंकिणियोंसे मुखर है, जिसमें सारथियोंके द्वारा रथ हाँके जा रहे हैं, जिसमें छत्रोंसे आकाश आच्छादित है, जिसमें चारणोंके द्वारा गुणोंका गान किया जा रहा है, जिसमें मणिकंकणोंका दान किया जा रहा है, पवनसे ध्वजपट उड़ रहे हैं, जिसमें गजघटा गिरिवरके समान भारी है, जिसने मदके गौरवको ग्रहण किया है, जिसमें घण्टोंका शब्द हो रहा है, जिसमें भ्रमर घूम रहे हैं, जिसमें ढक्काकी ध्वनि हो रही है, जिसमें नागोंके फणामणि चूर-चूर हो गये हैं, जो कालकी लीलाको धारण करता है, जिसमें देवरूपी नट नचाये जाते हैं, जिसमें श्रेष्ठ अश्वोंकी घटा चंचल है, जिसमें अत्यधिक धूलिरज है, जिसमें मणिमय हार व्याप्त हैं, ऐसा राजसैन्य चल पड़ा।

घत्ता—जिसने शत्रुवधुओंको विरह उत्पन्न किया है और जो विश्वयशसे भरित है, ऐसे राजाके चलते ही सैन्य दौड़ा और श्रेष्ठ रथों, गजों, भटों और अश्वोंके द्वारा वह कहीं भी नहीं समा सका ॥३॥

४

मणी कागणी कामिणी दंडरयणं णिसीसंकमाणिक्कभाभारभिण्णं ।
रहंगं णरिंदंगतुंगं पहारं अजेयं सुतेयं करालं किवाणं ।
पियं छत्तचम्मं सुरम्मं महंतं महावीरखंधारवित्थारवंतं ।
हरीकीरपिंछोहकंतिल्लकाओ[1] करी णिज्जियाणिंददेविंदणाओ ।
५ पुरोहो णिरोहो व्व भीसावयाणं णिवासो पयासो पयासंपयाणं ।
समे वेसमं वेसमे सामकारी चमूपुंगवो दुग्गमग्गावहारी ।
गिही[2] को वि देवो महिड्ढीसमिद्धो[3] महंतेण पुण्णेण रायस्स सिद्धो ।
सुरागारकिम्मीरकम्मावयारो परो को वि अण्णो णिकेऊइकारो ।
घत्ता—इय साहियसुवणहिं चोद्दहरयणहिं[4] सहुं णरणाहहु इच्छइ ॥
१० हयगयरहवाहणु चल्लिउ साहणु सयलु रहंगहु पच्छइ ॥४॥

५

मणिरहवरे चडिउ णं इंदु णहि वडिउ ।
दढकढिणभुयजुयलु अइवियडवच्छयलु ।
किं भणमि पुरिसहरि बलतुलियकुलसिहरि ।
सद्दूलवरखंधु बहिरंधजणबंधु ।
५ अलिणीलधम्मेल्लु[2] तेलोक्कपडिमल्लु ।
दूवंकुरालेण दहिचंदणालेण ।
उक्खित्तसेसेण मंगलणिघोसेण ।
संचलिउ भरहेसु णं मयणु णरवेसु ।
धउ धइण पडिखलिउ णरु हरिहिं दरमलिउ[3] ।
१० भेसिउ अहद्देण करहस्स सद्देण ।
करि धुणइ णियकंठु महि णिवडिओ मेंठु[4] ।
भरओ रउद्देण घित्तो वलद्देण ।
भग्गाइं भायणइं चुण्णाइं गोहणइं ।
णवणलिणणेत्ताइ वेसरि णिहित्ताइ ।
१५ परिगलियचेलाइ हा भणिउ बालाइ ।
खरचडणपडियाइ महुसीहुघडियाइ ।
रसवणिय जूरंति कह कह व वियरंति ।
अच्चंतपोढेण तेल्लोक्कलुढेण ।
थिरथोरबाहेण सेणाहिणाहेण[5] ।
२० पप्फुल्लवयणेण दढदंडरयणेण[6] ।

४. १. B °पिच्छोह° । २ M गिरी । ३ MBP महद्धी । ४. MP चउदह° ।
५ १. MB गयचडिउ । २ MBP °धम्मिल्लु । ३. P दरमलिउ । ४. MBP मेट्ठु । ५. MBPK देना° । ६ MBPT गयचडुल° । ७. MBP add after this : णवणलिणणयणेण । ८. MP add after this : वज्जेण घडिएण ।

४

काकणी मणि, कामिनी, दण्डरत्न, सूर्यकान्त और चन्द्रकान्त मणियोंकी कान्तियोंसे मिश्रित चक्रवर्तीके शरीरकी ऊँचाईवाली भारी अजेय तेजस्वी भयंकर कृपाण, पीत छत्र, महावीर-के स्कन्धावारके समान विस्तारवाला महान् सुन्दर चर्म, हरे कीरोंके पंखोंके समूहके समान कान्तिवाला, और देवेन्द्रके अनिन्द्य नागराजको जीतनेवाला गज, भयंकर आपत्तियोंका निरोध करनेवाला और प्रजाओंकी सम्पदाओंका निवास और प्रकाशित करनेवाला पुरोहित, समतामें विषमता और विषमतामें समता स्थापित करनेवाला तथा दुर्गमार्गोंका अपहरण करनेवाला सेनापति, महाऋद्धियोंसे समृद्ध कोई देव गृहपति, महापुण्यसे राजाको सिद्ध हुआ। देवगृहोंके लिए विचित्र कर्मोंका अवतरण करनेवाला श्रेष्ठ कोई सूत्रधार अर्थात् स्थपति उसे सिद्ध हुआ।

घत्ता—जिसने चौदह भुवनोंको सिद्ध किया है, ऐसे चौदह रत्नोंके साथ, राजाके चक्रके पीछे हय-गज और रथ वाहन हैं जिसमें ऐसी समस्त सेना इच्छापूर्वक चली ॥४॥

५

मणियोंके रथवरपर आरूढ़ राजा ऐसा जान पड़ता था मानो नभमें इन्द्र हो। जिसका बाहुयुगल दृढ और कठोर है, वक्षस्थल अत्यन्त विकट है, जिसने अपने बलसे कुलपर्वतको तोल लिया है, उस पुरुषसिंहके विषयमें क्या कहूँ। उसके कन्धे सिंहके समान हैं जो बहरे और अन्धोंका बन्धु है, जिसके केश भ्रमरके समान नीले हैं जो त्रिलोकका प्रतिमल्ल है, ऐसा वह भरतेश, दूर्वांकुर, दही, चन्दन और शेषाक्षत (तिल) तथा मंगलघोषके साथ इस प्रकार चला मानो मनुष्यके रूपमें कामदेव हो। ध्वजसे ध्वज प्रतिस्खलित हो गया। मनुष्य अश्वोंसे कुचल गया। गज अपना कण्ठ धुनने लगा। महावत धरतीपर गिर पड़ा। भयसे भरा हुआ, बैलके द्वारा फेंका गया। पात्र टूट-फूट गये। गोधन चूर्ण-चूर्ण हो गये। जिसके नेत्र नवनलिनके समान हैं, जिसकी साड़ी खिसक गयी है, ऐसी खच्चरपर बैठी हुई बालाने 'हा' कहा। गधेके पतनसे गिरी हुई तथा मधुसुरासे चेष्टा करनेवाली उस बालाके द्वारा लोग कामसे घायल होते हैं और बड़ी कठिनाईसे चल पाते हैं। अत्यन्त प्रौढ़, त्रिलोकमें प्रसिद्ध स्थिर स्थूल बाहुवाले प्रफुल्लमुख सेना-

गिरिणो दलिज्जंति मग्गा रइज्जंति ।
दूरं समग्गेण चक्काणुमग्गेण ।
संतोसपुण्णाइं गच्छंति सेण्णाइं ।
णयणाहिरामाइं गामाइं सीमाइं ।
२५ विसमाइं मंठाइं[9] विंझोवकंठाइं ।
हलहरणिवासाइं लंघंतु देसाइं ।
पविसंतु रोहंतु[10] अहिणो विरोहंतु ।
णिक्खवियणियसत्तु सुरवरसरिं पत्तु ।
घत्ता—पंडुर गंगाणइ महियलि घोलइ किंणरसरसुहभंतहो[11] ॥
३० अवलोइय राएं छुडु छुडु आयं साडी णं हिमवंतहो ॥५॥

६

णं सिहरिघरारोहणणिसेणि णं रिसहणाहजसरयणखाणि ।
णिम्मल णावइ जिणणाहवाय मयरंकिय णं वम्मेहवडाय[1] ।
णं विसमविडप्पभउत्तसंति[2] धरणीयलि लीणी चंदकंति ।
णं णिद्धंघोयकलहोयकुहिणि[3] णं कित्तिहि केरी लहुय वहिणि ।
५ गिरिरायसिहरपीवरथणाहि णं हारावलि वसुहंगणाहि ।
विर्येलियकंदरदरिवडिय सच्छ[4] धरणिहरकरिंदहु णाइं कच्छ ।
सिय कुडिल वहु जि णं भूइरेह णं चक्कवट्टिजयविजयलीह ।
आयासहु पडिय धरित्तियाइ सुपडिच्छिय णं पियसहि पियाइ ।
पक्खलइ वलइ परिभमइ ठाइ णियठाणभंसचिंताइ णाइं ।
१० णिग्गय णयवम्मीयहु सवेय विसपउर णाइं णाइणि सुसेय ।
हंसावलिवलयविइण्णसोह [5]उत्तरदिसिणारिहि णाइं बाह ।
घत्ता—बहुरयणणिहाणहु सुद्ध सुलोणहु[6] धवलविमलमंथरगइ ।
सायरभत्तारहु सइं गंभीरहु मिलिय णंपि गंगाणइ ॥६॥

७

जहिं मच्छेपुच्छपरियत्तियाइं[1] सिप्पिउडुच्छेलियइं[2] मोत्तियाइं ।
घेप्पंति तिसाहयणीयएहिं जलबिंदु भणिवि बैप्पीहएहिं[3] ।
जलरिद्धिहिं पिज्जइ जलु सुसेउ तमपुंजहिं णावइं चंदतेउ ।
सोहइ रत्तुप्पलदलरुईइ पुणु सो ज्जि णाइं संझारुईइ ।
५ जहिं कीरउलइं कीलारयाइं दहिकुट्टिमि णावइ मरगयाइं ।
जहिं कंकहारणीहारछाय कल्लोल हंसपक्ख वि ण णाय ।

९. MBP संठाइं । १०. MB गेहंतु । ११. P °भत्तहो ।

६ १. MBP वम्महपडाय । २. P विडप्पइ भउ तसंति । ३. G सिद्ध° but gloss स्निग्ध । ४ MBP निवरिय° । ५. MBP उत्तरदिस° । ६. MBP सलोणहु ।

७. १ MBPK °पुछ° । २ B °उडच्छलियइं । ३ MBP बव्वीहएहिं ।

पतिने दण्डरत्नसे पहाड़ोंको विदीर्ण किया तथा मार्गोंका निर्माण किया। चक्रका अनुगमन करते हुए सन्तोषसे परिपूर्ण सैन्य अपने मार्गसे दूर तक जाता है, नेत्रोंके लिए सुन्दर ग्राम—सीमाओं, विषम निम्नोन्नत भूमियों, विन्ध्याके उपकण्ठों, कृषकोंके निवासभूत देशोंको लाँघता हुआ, घरोंमें प्रवेश करता हुआ, नागोंको विरुद्ध करता हुआ, तथा जिसने अपने शत्रुका नाश कर दिया है ऐसा सैन्य गंगा नदीपर पहुँचा।

घत्ता—सफेद गंगानदीको आगत राजाने इस प्रकार देखा मानो वह किन्नरोंके स्वरसुखसे भ्रान्त धरतीपर फैली हुई हिमवन्त की साड़ी (धोती) हो ॥५॥

६

मानो वह पहाड़के घरपर चढ़नेकी नसैनी हो, मानो ऋषभनाथके यशरूपी रत्नोंकी खदान हो, मानो जिननाथकी पवित्र वाणी हो; मानो मकरोंसे अंकित कामदेवकी पताका हो; मानो राहुके विषम भयसे पीड़ित चन्द्रमाकी कान्ति धरतीतलपर व्याप्त हो, मानो स्निग्ध निर्मल चाँदी-की गली (पगडण्डी) हो; मानो कीर्तिकी छोटी बहन हो, हिमालयके शिखर जिसके स्तन हैं, ऐसी वसुधारूपी अंगनाकी मानो वह हारावली हो; प्रगलित विवरों और घाटियोंमें गिरती हुई स्वच्छ वह (गंगा) ऐसी मालूम होती है, मानो पहाड़रूपी करीन्द्रकी कच्छा हो। सफेद और कुटिल वह मानो उसकी भूतिरेखा हो, मानो चक्रवर्तीकी विजयलेखा हो, मानो आकाशसे आयी हुई प्रिय धरतीकी चिर प्रतीक्षित सखी हो। वह स्खलित होती है, मुड़ती है, परिभ्रमण करती है, स्थित होती है, जैसे मानो अपने स्थानसे भ्रष्ट होनेकी चिन्ता उसे हो। वह मानो सफेद नागिनके समान, पर्वतकी वाल्मीकि (बिल) से वेगपूर्वक निकली है, और विष (जल/जहर) से प्रचुर है। जिसे हंसावलियोके वलय शोभा प्रदान कर रहे है, ऐसी वह मानो उत्तर दिशारूपी नारीकी बाँह हो।

घत्ता—जो अनेक रत्नोंका विधान है और अत्यन्त सुन्दर है, ऐसे गम्भीर समुद्ररूपी पतिसे, धवल, पवित्र और मन्थर चालवाली गंगानदी स्वयं जाकर मिल गयी ॥६॥

७

जहाँ मत्स्योंकी पूँछोंसे आहत, सीपियोंके सम्पुटोसे उछले हुए मोती, प्याससे सूखे कण्ठवाले चातकोके द्वारा जलबिन्दु समझकर ग्रहण कर लिये जाते है, जलकाको द्वारा सफेद जल दिया जाता है मानो अन्धकारोके समूहोंके द्वारा चन्द्रमाका प्रकाश पिया जा रहा हो। फिर वही (जल) लाल कमलोंके दलोंकी कान्तिसे ऐसा शोभित होता है, मानो सन्ध्यारागकी कान्तिसे शोभित हो। जहाँ क्रीड़ारत कीरकुल ऐसे जान पड़ते हैं, मानो स्फटिक मणियोंकी भूमिपर मरकत मणि हो। जिसकी लहरे कंकहार और नीहारकी कान्तिवाली है, उनमे हंस पक्षी भी ज्ञात नही होते।

जहिं पाणिइ पंडुरु अच्छराइ उप्परियणु दिट्टु ण जंतु जाइ।
परिहाणु सहत्थें धरिउ ताइ जंपिउ हो ण्हाणं एत्थु माइ।
मायंगहुं दाणें वहइ णेहु जा तहु घिवंति तवसि वि सुदेहु।
१० जडसंगें विउसु वि जडु जि होइ कमलावासेसु सुयंति भोइ।
सिररयण धणासइ धरइ ते वि धणवंत वहुप्पिय सव्विम जेवि।
दिव्वंगणघणथणजुयलखलिय जिणण्हवणारंभदिणम्मि गलिय।
उच्छलियवहलसीयलतुसार णं खीरमहोवहिणीरधार।

घत्ता—एयँहिं महिणारिहिं भुवणजणेरिहिं ससिमणिरइयपहुल्लल।
१५ सायरगिरिरायहिं धरित्ति सरायहिं णाइं णिवद्धी मेहल ॥७॥

८

सरि पेच्छिवि महिपरमेसरेण पुच्छिउ सारहि भरहेसरेण।
झसणयणी विब्भमणाहिगहिर णवकुसुमविमीसियभमरचिहुर।
मज्जंतकुंभिकुंभत्थणाल सेवालणीलणेत्तंचलाल।
तडविडविगलियमहुघुसिणपिंग चलजलभंगावलिवलितरंग।
५ सियघोलमाणडिंडीरचीर पवणुद्धयतारतुसारहार।
वित्थिण्णमणोहरपुलिणरमण णइ णाइं विलासिणि मंदगमण।
कवणेह भणसु सियकोमलंगि रइ जणइ विहंगहं णं विहंगि।
तं णिसुणिवि रहिएं वुत्तु एम कमणीयसुकासिणिकामएव।
धरणीसमउड्डणिकिरणराइ रुइरजियचरणणरेसराइ।
१० दालिद्दपंकसोसणदिणेस भुयबलकंपावियतिहुवणेस।
पणईयणपयणियपरमपणय णिसुणसु णरिंद णाहेयतणय।
सुंधराधरिंदभेयणसमत्थ णं मंतिहि केरी मइ महत्थ।
गंभीर पसण्ण सुलक्खणाल णं सुकइहि केरी कव्वलील।
रहवरसिरि व्व दरिसियरहंग किं ण वियाणहि णामेण गंग।
१५ हिमवंतपोमसरणिग्गयंगि णं महिवहुयहि परियाणभंगि।

घत्ता—गिरिणहधरणियलहिं जलणिहिविवँरहिं वहइ छाय ससिदित्तिहि ॥
भुवणत्तयगामिणि जणमणरामिणि एह सरिस तुह कित्तिहि ॥८॥

९

वणे जक्खिणी जक्खकीलावियारे तओ तम्मि गंगाणईचारुतीरे।
पघावंतमायंगदाणंबुगंधं घुलंतुद्धपालिद्धयं चारुचिंधं।
विसंकं जसंकं कयारिंदसंकं वलं रायसेणाहिवाणाइ थक्कं।

४. MBP जंतु ण दिट्ठु। ५. MBPK सदेहु। ६. MBPT वहूपिय। ७. MBP एत्तहि।
८. १. M परमेसरेण। २. MBP पवणुद्धुय°। ३. MBP कमणीयकासिणी°। ४. MB सघरा°। ५. MBP कव्वमाल। ६. MBPK परिहाण° and gloss in PK परिधानं। ७. MBPT °विवलहिं।
९. १. MBP झसंकं।

जहाँ, जो अप्सरा पानीसे सफेद अपने बहते हुए दुपट्टेको नही देख पाती, उसके द्वारा परिधान अपने हाथसे पकड़ लिया जाता है और कहती है—"हे माँ, यहाँ स्नान हो चुका।" जिसमें मातंगों (गजों और चाण्डालों) को दानका स्नेह (चिकनापन और राग) बहता है, और जिसमे तपस्वी भी अपने शरीरको डालते हैं। जड़ (मूर्ख और जल) के साथ विद्वान् भी मूर्ख हो जाता है, जहाँ लक्ष्मीके आवासमें साँप शयन करते है। जो साँप और धनवान् सविष तथा बहुप्रिय (वधुओंके प्रिय या अनेकके प्रिय) हैं, उन्हे भी वह धनकी आशासे धारण करती है। जिन भगवान्‌के जन्माभिषेकके समय दिव्यांगनाके घन स्तनयुगलसे निकली हुई जो जिनेन्द्र भगवान्‌के स्नानाभिषेकके प्रारम्भिक दिनसे बह रही है, जिसमें प्रचुर शीतल हिमकण उछल रहे है, ऐसी वह मानो क्षीर-समुद्रकी क्षीरधाराके समान जान पड़ती है।

घत्ता—सरागी समुद्र और हिमालय दोनोने मानो मिलकर चन्द्रकान्त मणियोंकी प्रभासे उज्ज्वल इसे (गंगाको) पकड़कर विश्वको जन्म देनेवाली इस धरतीरूपी नारीसे मेखलाके रूपमें बाँध दिया है ॥७॥

८

नदीको देखकर धरतीके परमेश्वर भरतेश्वरने सारथिसे पूछा, "मत्स्योके नेत्रवाली, जलावर्तोकी नाभिसे गम्भीर, नवकुसुमोंसे मिले हुए भ्रमरोके केशोंवाली, डूबते हुए गजोके कुम्भोके स्तनोंवाली, शैवालके नीले नेत्रांचलोंसे अंचित, किनारोंके वृक्षोंसे विगलित मधुकेशरसे पीली, चंचल जलोकी भृंगावलीसे मुड़ी हुई तरंगोंवाली, सफेद और फैले हुए फेनके वस्त्रोंवाली, हवासे हिलते हुए स्वच्छ हिमकणोंके हारवाली, विस्तृत सुन्दर पुलिनोंसे सुन्दर, यह नदी मन्द चलनेवाली विलासिनीके समान जान पड़ती है, यह श्वेत कोमलांगी कौन है ? बताओ। यह विहंगी (पक्षिणी) की तरह विहंगोंसे प्रेम करती है।" यह सुनकर सारथि बोला—"हे सुन्दर कामिनियोके लिए कामदेवके समान, राजाओंके मुकुटमणियोकी किरणोंसे शोभित, कान्तिसे रंजित प्रथम चक्रवर्ती राजन्, दारिद्र्यरूपी कीचड़के शोषणके लिए दिनेश्वर, अपने भुजबलसे त्रिभुवन ईशको कँपानेवाले, प्रणयिनी स्त्रियोसे परम प्रणय करनेवाले हे नाभेयतनय राजन्, सुनिए—क्या आप नही जानते कि यह गंगा नामकी नदी है, मन्त्रीकी महार्थवाली मतिकी तरह जो पृथ्वीके धरणीन्द्रों (राजाओं-पर्वतो) का भेदन करनेमे समर्थ है; गम्भीर, प्रसन्न और सुलक्षणोवाली जो मानो सुकविकी काव्यलीलाके समान है? और रथश्रीकी तरह रथांग (चक्रवाक और चक्र) को दिखानेवाली है ? हिमवन्त सरोवरसे निकलनेवाली जो मानो धरतीरूपी वधूके चलनेकी भंगिमा है।

घत्ता—यह पर्वत, आकाश, धरणीतलो और समुद्रके विवरोंकी शोभा धारण करती है। तीनों लोकोमे परिभ्रमण करनेवाली जनमनोंके लिए सुन्दर यह चन्द्रमाकी दीप्तिवाली तुम्हारी कीर्तिके समान है ॥८॥

९

जिसमे यक्षिणियों और यक्षोंका क्रीड़ाविकार है ऐसे उस वनमे, गंगानदीके सुन्दर तटपर राजसेनाध्यक्षकी आज्ञासे सैन्य ठहर गया। वह सैन्य दौड़ते हुए महागजोके मदजलसे गन्धयुक्त था, उड़ती हुई तथा बाँसमें लगी हुई पताकाओंसे सहित था, जो वेलों और यशसे अंकित था। उसके

पकीरंति दूरं समा भूमि एसा तडिज्जंति दूसाइं चंदोवहासा।
५ गवक्खंतणिग्गंत[2]धूसोहवासा रइज्जंति संचारिसा भूरिवासा।
विमुच्चंति पल्लाणभारा हयाणं गयाणं पि ढक्कारवेणागयाणं।
भरुम्मुक्कदेहा जहिच्छं वलद्दा[3] गया रासहा रासहीदिण्णसद्दा।
तरूणं तणाणं पधावंति[4] दासा पलिप्पंति चुल्लीणिहित्ता हुयासा।
पइज्जंति णाणाविहा भक्खभेया णरा के वि भुंजेवि णित्तंगसेया।
१० सरिच्छेण दीहेण पंथेण भग्गा पसुत्ता सुहं गेहिणीकंठलग्गा।
बलिज्जंति दिज्जंति गासा करीणं तणं भोयणं खाणलोण[5] हरीणं।
पपेच्छंति[6] अण्णे धयं[7] साहिणाणं पयंपंति अण्णे पईहं पयाणं।
ण संसंति[8] अण्णे णरिंदस्स कामं[9] भमामो कहं णिच्च गामाउ गामं।
इमो वेसरो वेसरी लेउ चारं परेणेव वुत्तो परो वारवारं।
१५ [10]कवद्धुद्धगीवा वणंते पयट्टा लयापल्लवं पाणियं लेंति वट्टा[11]।
हले होउ जत्ताइ पत्ता णिविग्घं पिए पेच्छ दूसाइं आगच्छ सिग्घं।
[12]इणं जत्थ केणावि रीणेण वुत्तं सवेसाणिवासं सचिंधोवउत्तं।
सहट्टं सटेटं सदेवं समिद्धं इमं एव राएण ठाणं णिबद्धं[13]।

घत्ता—णियथवइ विरइयइ मणिगणखइयइ सइं सग्गहु उवइण्णउ॥
२० णं [14]सुरवरसुंदरु देउ पुरंदरु पहु सउहयलि[15] णिसण्णउ॥९॥

१०

सामंत महासामंत जेवि मंडलिय महामंडलिय तेवि।
सेणाहिवसिट्ठिइंसणिलइ थिय रायपसायविइण्णपुलइ।
हुय रयणि पुणु वि उग्गमिउ भाणु सगभत्थिजालजज्जल्लमाणु।
गयमयमलेण मइलिज्जमाणु हरिलालाणीरें धुप्पमाणु।
५ छत्तंधयारछाइज्जमाणु पहरणविप्फुरणहिं दीसमाणु।
झल्लरिभेरीरवगज्जमाणु मणहरकामिणियणगिज्जमाणु।
णग्गोरेणुधवलिज्जमाणु [1]वणधूलियाइ कवलिज्जमाणु।
मरगयपहाइ णीलिज्जमाणु[2] [3]सोणंदु सविक्कमु साहिमाणु।
[4]अंसइंतिइ भडयणभरु महंतु णं वसुहावणियइ पित्तु[5] वंतु।
१० [6]अणडुहवज्जरखरमाणिएण णरणियरकरहसंदाणिएण।
णाणावाहणरहसंकडेण चल्लियउ तुरिउ गंगातडेण[7]।

---

२. MB णिग्गंति। ३ MB वलिद्दा। ४ MBP पवच्चति। ५ M खाणपाणं। ६. K ण पेच्छति। ७. वयसाहिणाण। ८. M णमंसति। ९ MBP णरिंदं सकामं। १०. MB कओउद्धगीवा, P कओवुद्ध°। ११ PK उटा। १२. MBP इमं। १३ BP विवद्धं। १४ MBP सुरवरु सुदरु देव पुरंदरु। १५ M! णिसण्णिउ।

१० १. MBP णव°। २. B omits णीलिज्जमाणु। ३. B omits this foot। ४. B omits this line. ५ MP घित्तु वतु। ६. B omits अणडुह। ७. MBP गंगायडेण।

समतल भूमि दूर-दूर तक फैली हुई थी। कपड़ोंके तम्बू और मण्डप फैला दिये गये थे। जिनके गवाक्षोंसे धूम-समूह निकल रहा था, ऐसे तथा संचार योग्य प्रचुर गन्धवाले निवास बनाये गये। अश्वोंके जीन खोल दिये गये। और ढक्कार शब्दोंसे आते हुए गजोंके भी। भारसे मुक्त है शरीर जिनका, ऐसे बैल भी इच्छापूर्वक चले गये। गधीके लिए शब्द करते हुए गधे भी चल दिये। वृक्षों और घासके लिए दास दौड़ रहे थे। चूल्हों मे दी गयी आग जल उठी। नाना प्रकारके भक्ष्य-भेद बनाये जाने लगे। कितने ही लोग भोजन कर, तथा शरीरके पसीनेसे रहित होकर, समान दीर्घ पथसे थके हुए, गृहिणियोंके गलेसे लगकर सुखसे सोये हुए थे। हाथियोंको घास देकर सन्तुष्ट किया जा रहा था। घोड़ोंके लिए तृण, भोजन और खाननमक दिया जा रहा था। कोई अपने साथियोंसे पूछ रहा था, कोई लम्बे मार्गके बारेमे बात कर रहा था। कोई राजाके कामकी प्रशंसा नहो करते हुए कह रहे थे कि हम दिन प्रतिदिन एक गाँवसे दूसरे गाँव कहाँ तक घूमे। यह खच्चर और खच्चरी और चारा लो, ऐसा एकने दूसरेसे कहा। अपनी गरदने ऊपर करके ऊँट जंगलमें चले गये और वहाँ लताओंके पत्ते तथा पानी लेने लगे। "हे प्रिय, अच्छा हुआ, यात्रासे निर्विघ्न आ गये। तम्बुओंको देखो और शीघ्र आओ।" वेश्याओंके निवाससे सहित, अपने-अपने चिह्नोंसे उपयुक्त, हर्षयुक्त, तम्बुओं और देवोंसे सहित, यह इस प्रकारका स्थान राजाने बनवाया है। इस प्रकार किसी खिन्न व्यक्ति (सैनिक) ने कहा।

घत्ता—अपने स्थपतिके द्वारा विरचित और मणिसमूहसे विजड़ित सौधतलपर बैठा हुआ राजा भरत ऐसा मालूम हो रहा था, मानो स्वर्गसे स्वयं उतरकर सुरवरोंमें सुन्दर इन्द्रदेव आकर बैठा हो ॥९॥

१०

जितने भी सामन्त और महासामन्त, एवं महामाण्डलीक राजा थे वे भी इकट्ठे हुए। सेनाध्यक्षके द्वारा निर्दिष्ट और राजप्रसादसे पुलकित वे निवासमे ठहर गये। रात हुई, फिर अपनी किरणोंके जालसे चमकता हुआ सूर्य उग आया। गजमद-मलसे मैला होता हुआ, घोड़ोंके लारजलसे गीला होता हुआ, छत्रोंके अन्धकारसे आच्छादित हुआ, शस्त्रकी चमकमे दिखाई देता हुआ, झल्लरी और भेरीके शब्दोंसे गरजता हुआ, सुन्दर कामिनी जनोंके द्वारा गाया जाता हुआ, कपूरकी धूलसे धवल होता हुआ, वनकी धूलोंसे ग्रस्त-होता हुआ, मरकत मणियोंसे नीला होता हुआ, सानन्द पराक्रमी और स्वाभिमानी वह सैन्य जो महान् भटजनके भारको सहन न करनेके कारण मानो वसुधारूपी वनिताके द्वारा पित्तकी तरह उगल दिया गया हो। जो बैलों, खच्चरों और गधोंके द्वारा मान्य है, नरसमूहों और ऊँटोंके द्वारा अवलम्बित है, और नाना वाहनों तथा

चक्कीसचमूवइपेरियंगु चक्कहु पच्छइ वलु चाउरंगु।
आरुहिवि विजयगिरिवरकरिंदि केसरिकिसोरु[8] णं गिरिवरिंदि।
खंधोवबद्धतोणीरजुयलु करिणिहिय[9]चावगुणरावमुहलु।
१५ संचलिउ विजयदुंदुहिणिणाउ सुरवइदिसाइ रायाहिराउ।
घत्ता—उल्लंघिवि भीयरु उवरयणायरु पुणु थलमग्गें आइउ॥
महिहरदरिवासइं[10] गोहणघोसइं पहु गोउलइ पराइउ ॥१०॥

११

जहिं मंथिज्जइ अइंथद्धु[1] दहिउं थद्धत्तणु[2] कासु वि होइ ण हिउं।
जहिं कड्ढिउ मंथउ गोवियाइ दीहें गुणेण णं पिउ पियाइ।
चप्पेवि धरिउ मंदीरएण[3] परिभमइ णाइं घणथणकएण।
हो हो हलि गोविणि[4] मइं जि रमइ मंथाणु ण तुह कामग्गि समइ।
५ मा कड्ढहि केयाकड्ढणीइ इय गज्जिउ जहिं णं मंथणीइ।
अइमहणें सिढिलीहूउ[5] देहु किं दहिउं ण अण्णु वि मुयइ णेहु।
तक्कइं एमेव जि जहिं पियंति गामीयण[6] तक्कहिं किं करंति।
घयदुद्धइं जहिं पंथिय[7] पियंति गयपहसम सुहु णिद्दइ[8] सुयंति।
जहि गोविइ पेच्छिवि णरपहाणु वच्छुल्लउ मेल्लिवि[9] वद्धु साणु।
१० मूरविउ[10] तक्कु अविचित्तियाइ[11] घिउ छड्डिउ[12] तग्गयणेत्तियाइ।
महिवइमुहपंकयरसणतण्ह जहिं संठिय णीसासुण्ह सुण्ह।
जहिं कुणरिंदहं रिद्धीउ जेम महिसिउ[13] खलेहिं दुज्झंति[14] तेम।
काहलियवंससद्दं सुणंति ण करइ घरकम्मु[15] वि सिरु धुणंति।
वच्चइ संकेयहु गोवि का वि मज्झण्हएसि वहुडिंभया वि।
१५ जहिं देंति तालु कीलापयासु[16] मंडलिय गोव[17] गायंति रासु।
जहिं सिंगससुक्खयतरुवरेहिं ढक्कारिउ[18] धोरु धुरंधरेहिं।
घत्ता—तं गोट्ठु मुयंतें गहणि चरंतें हरिणसिंगखयकंदहिं।
मयमासाहारइं कुहरागारइं दिट्ठइं सवरपुलिंदहिं[19] ॥११॥

१२

दुवई[1]—वोमणथद्ध[2]थोरवलवलिय[3]कलेवरसंधिवंधणा।
कढिणतिकंडचंडकोदंडकमागयजणणकुलहणा ॥१॥

---

८. MP केसरकिसोरु। ९. MB करि णिहिय°। १०. MBPT °दरवासइं।

११. १. MBP अइयद्ढ। २ MBP थड्ढत्तणु। ३. B मोदीरएण। ४. MBP गोमिणि। ५. MBP सिढिलीहूय। ६. B गामीणय। ७. MBP पंथिय जहिं। ८. B सुहणिद्दइ। ९. MBP नण्णिवि। १० MBP सूरविउ। ११. MBP अवचित्तियाइ। १२. M छंडिउ। १३. MBP महिसीउ खलहिं। १४. MBPK दुब्भंति। १५ M घरकम्मु वि सिरं; BP घरकम्मु सिरं। १६. MBP कीलावयासु। १७. M गोव। १८. MBP ढेक्कारिउ चारु। १९ M समरपुलिंदहिं।

१२. १. M has before this : छंद पद्धटिका। २. MBP थड्ढ। ३. MBP °चलवलिय°।

रथोसे संकीर्ण है ऐसे गंगातटके किनारे-किनारे, चक्रवर्तीके सेनापतिके द्वारा प्रेरित चतुरंग सेना रथके पीछे-पीछे चली। राजाधिराज भरत भी गिरिवरपर सिंहकिशोरकी तरह, विजयगिरि नामक गजवरपर आरूढ होकर, अपने कन्धोंपर तूणीरयुगल बांधे हुए और हाथमे लिये हुए धनुषकी प्रत्यंचाके शब्दसे मुखर होता हुआ नगाड़ोके शब्दोंके साथ पूर्व दिशाकी ओर चला।

घत्ता—भयंकर उपसमुद्रको पार कर वह फिर स्थलमार्गपर आया। वह राजा पहाड़ोकी घाटियोंमे बसे हुए गोधन घोषवाले गोकुलोमे पहुँचा ॥१०॥

११

जहाँ अत्यन्त गाढ़ा दही बिलोया जाता है। अत्यन्त घनत्व किसीके लिए भी हितकारी नही होता। जहाँ गोपीने मन्थक (मथानी) को खीच लिया है, वैसे ही जैसे गुणोसे प्रियाके द्वारा प्रिय खीच लिया जाता है। सघन शब्द करते हुए मंदीरक (सांकल) से चाँपकर पकड़ा हुआ वह मन्थानक घूमता है। "हो-हो, हला, गोपी मेरे साथ रमण करती है; लेकिन यह मथानी तुम्हारी कामपीड़ा शान्त नही कर सकती, इसे मत खीच।" रस्सीसे खीची गयी मथानीके द्वारा, मानो इस प्रकार गाया जाता है ? अत्यन्त मथे जानेसे शिथिल शरीर क्या केवल दही ही स्नेह छोड़ देता है, दूसरा कोई स्नेह नही छोड़ता ? जहाँ तक्र (छाछ) इसी प्रकार छोड़ दिया जाता है। ग्रामीण जन तक्र (तर्क, विचार, और छाछ) से क्या करते है ? जहाँ पथिक घो-दूध पीते हैं, और पथके कामसे मुक्त होकर सोते हैं। जहाँ गोपीने नरप्रमुखको देखकर बछड़ेकी जगह कुत्तेको बांध दिया। अपचित्त (अस्त-व्यस्त चित्त) और प्रियमे लीन हुई गोपीने घी छोड़ दिया, और तक्र तपा दिया। जहाँ राजाके मुखरूपी कमलसे रमण करनेकी इच्छा रखनेवाली वधू गर्म उच्छ्वासोंके साथ बैठी हुई थी। जहाँ खोटे राजाओकी ऋद्धिके समान भैसें, खलो (खलो और दुष्टों) के द्वारा दुही जाती हैं। कोई गोपी काहल और वंशीका शब्द सुनती है, वह घरका काम नही करती और सिर धुनती है। कोई गोपी कृशोदरी और अनेक बच्चोंवाली होकर भी संकेत स्थानके लिए जाती है। जहाँ क्रीड़ाका अवकाश देनेवाली ताली बजाते हुए गोप मण्डलाकार होकर रास गाते हैं। जहाँ अपने सीगोंसे तरुवरोको उखाड़नेवाले वृषभोंके द्वारा गम्भीर ढेक्का शब्द किया जाता है।

घत्ता—ऐसे उस गोकुलको छोड़कर, हरिणके सीगों और उखाड़ी हुई जड़ोवाले शबर पुलिन्दोंसे गहन वनमे जाते हुए उन्होने पशुओंके मांसाहारों और पहाड़ोके मकानोको देखा ॥११॥

१२

बौने तथा सघन स्थूल बलसे, जिनके शरीरोके जोड़ गठित हैं; कठोर बाणोसे प्रचण्ड धनुष जिनका कुलक्रमागत पितृकुलधन है; छोटे स्थूल और विरल दाँतोसे उज्ज्वल, जिनके मुखपर,

सुमडहथूलविरलदसणुज्जलमुहसिहिपिच्छणिवसणा ।
गयमयपडरपंकचच्चिक्कियगुंजादामभूसणा ॥२॥
५ झंपडकविलकेसरुहिरारुणदारुणतंवणयणया ।
तिक्खखुरुप्पपहरपवियारियमारियमोरहरिणया ॥३॥
इसुहयदंतिदंतकयमंदिरसंचियचारुवोरया ।
तलतरुवत्तरत्तणीलुप्पलविरइयकण्णपूरया ॥४॥
दिसिपसरंतविसलससियरणिहणरवइजसभयंगया ।
१० वंसविसेसजायमुत्ताहलचसरीरुहकरग्गया ॥५॥
पीयसुसीयकुसुमरयसुरहियमहिहरकंदरंभया ।
सवरीवयणकमलरसलंपडखंधुद्धरियडिंभया ॥६॥
हरगलगरलमलिणणवजलहरछविसारिच्छकायया ।
आया पहुसमीवि मउलियकर विविहकिरायरायया ॥७॥
१५ गुरुभयवसणिहित्तणियदेहमहीयललग्गभालया ।
ते अवलोइऊण करुणेण णवंतवणंतवालया ॥८॥
ण्हंततरंतजक्खिथणघुसिणामोयसिलंतमहुयरं ।
चंचलसंगलंतकल्लोलगलत्थियखयरवहुवरं ॥९॥
कच्छवसुंसुयारमयरोहरपुंछुच्छलियणीरयं ।
२० पत्तो परियणेण सह महिवइ सुरवरसरिदुवारयं ॥१०॥

घत्ता—आवासिउ साहणु वणि सुपसाहणु णिसि पणविवि परमेसरु ।
णं जिणु जिणसासणि थिउ दब्भासणि उववासेण णरेसरु ॥१२॥

१३

अहिवासिउं राएं चक्करयणु जिह तं तिह अवरु वि दंडरयणु ।
सुयवण्णु अहंगु तुरंगरयणु करिरयणु लोहवलयंकरयणु ।
उग्गमिउ णहंगणि दुमणिरयणु आरूढउ संदणि पुरिसरयणु ।
कइवयणरेहिं सह सूरसंसु णं माणसपंकइ रायहंसु ।
५ पहरणपरिपुण्णु महामहंतु परिभमियचक्कचिक्कारु देंतु ।
चलपंचवण्णधयवडललंतु णाणामणिकिरणहिं पज्जलंतु ।
ओलंवियकिंकिणिरणझणंतु तियसिंदह मणि विम्हउ जणंतु ।
सलिलणिहिसलिलधोइयपएहिं मुहसंमुहघुलियतरंगएहिं ।
तक्कारिचम्मलट्ठीहएहिं रहु कड्ढिउ मारुयजवहएहिं ।
१० छक्खंडपुहइवलयाहिवेण अवलोइउ जणणिहि पत्थिवेण ।

घत्ता—हरिसेण व गज्जइ भरहु ण भज्जइ पहु ण कासु किर रुच्चइ ॥
मरुहयकल्लोलहिं चलभुयडालहिं रयणायरु णं णच्चइ ॥१३॥

---

४. MBP °पिट्ठ । ५ P °चिच्चिक्कय° । ६. MBP °यारियतित्तिरमोर° । ७. M तिलतरु°, T तिल्तरु but gloss ताडवृक्ष° । ८ MBP ठिउ ।

१३. १. P °वल्गिरंद° । २ MP °पग्पुिण्ण° । ३ MBP विम्भउ । ४ MBP °सलिलवुणिहियनएहिं ।

मयूर पंखका आच्छादन है, गजमदकी प्रचुर कीचड़मे सनी हुई गुंजामालाएँ ही जिनके आभूषण हैं, जो घुँघराले और कपिल केशों तथा खूनसे लाल और भयंकर आताम्र नेत्रोंवाले है; जिन्होंने तीखे खुरपोके प्रहारोसे विदीर्ण कर मोरों और हरिणोंको मार डाला है; जिन्होंने, तीरोंसे आहत हाथियोके दाँतोंसे निर्मित घरोंमे अचार और बेर इकट्ठे कर रखे है, जिन्होंने ताल वृक्षके पत्तो, लाल और नीले कमलोंके फर्णफूल बना रखे हैं, जो दिशाओंमे फैले हुए विमल चन्द्रके समान राजाके यशसे भयभीत है, जिनके हाथोंमे वंश-विशेषमे उत्पन्न मोती और चमरी गायके बाल है, जो सुशीतल और कुसुमरजोसे सुरभित महीधरोंकी गुफाओका जल पीते हैं, जो शवरियोके मुखरूपी कमलोके रसके लम्पट और कन्धों-पर अपने बच्चोंको उठाये हुए हैं, जो शिवके कण्ठविषके समान मलिन (श्याम) और नवमेघोंकी छविके समान शरीरवाले है, ऐसे विविध किरातराज हाथ जोड़े हुए राजा भरतके पास आये। भारी भयसे जिन्होने अपने शरीर और भालतलको धरतीपर लगा रखा है, तथा जो अपने बालकोंको झुका रहे हैं, ऐसे उन भील राजाओंको करुणापूर्वक देखकर वह राजा अपने परिजनके साथ उस गंगा नदीके द्वारपर पहुँचा, कि जिसमे नहाती और तैरती हुई यक्षिणियोंके स्तन-केशरके आमोदसे भ्रमर इकट्ठे हो रहे हैं, जिसमे चंचल और संघटित लहरोंके द्वारा विद्याधर-वधुओको उछाल दिया गया है। जिसमे कच्छप, शिशुमार, मगर और मत्स्योकी पूँछोसे जल उछल रहा है।

घत्ता—सुन्दर प्रसाधनोंसे युक्त सैन्य वनमें ठहर गया। रात्रिमे परमेश्वरको प्रणाम कर राजा भरत उपवासपूर्वक दर्भासनपर इस प्रकार बैठ गया, मानो जिन भगवान् जिनशासनमे स्थित हो गये हों ॥१२॥

१३

राजाने चक्ररत्नकी पूजा की। जिस प्रकार उसकी, उसी प्रकार दूसरे दण्डरत्नकी पूजा की। शुकके रंगवाले अभंग अश्वरत्न, और लौह शृंखलाओसे अलंकृत गजरत्नकी (पूजा की)। आकाशमे सूर्य निकल आया। वह पुरुषरत्न (भरत) अपने रथपर आरूढ़ हो गया। वीरोंके द्वारा प्रशंसनीय, कतिपय मनुष्योंके साथ, (मानो जैसे मानसरोवरके पंकमे राजहंस हो) प्रहरणों (शस्त्रों) से परिपूर्ण, अत्यन्त महान् घूमते हुए रथचक्रोंसे चिक्कार करता हुआ, चंचल फहराते हुए पंचरंगे ध्वजोसे सुन्दर, नाना मणिकिरणोसे आलोकित, लटकती हुई किंकिणियोसे रुनझुन करता हुआ, देवेन्द्रोके मनमे भय उत्पन्न करता हुआ, वह रथ, जिन्होने समुद्रके जलमे अपने पैरोंको धोया है, जिनके मुँहके सम्मुख तरंगें व्याप्त है (आन्दोलित हैं); जो सारथिकी चर्मयष्टियों (कोड़ों) से आहत है, ऐसे हवाके वेगवाले अश्वोंके द्वारा खीचा गया। छह खण्ड धरतीके स्वामी राजा भरतने समुद्रको देखा।

घत्ता—वह समुद्र हर्षसे गरजता है, भरतकी सेवा करता है। प्रभु किसके लिए अच्छे नही लगते। पवनसे आहत लहरोंरूपी अपनी सुन्दर हाथरूपी डालोसे मानो रत्नाकर नृत्य कर रहा है ॥१३॥

१४

उक्खिवइ व मोत्तियतंदुलाइं तोयइं णं अग्घंजलिजलाइं।
भीएण व रायहु लइय वेल दावइ व विउलसलिलंतसेल।
णं ढोयइ जलमयगल सरंत जलणरकिंकरकररुहफुरंत।
माणिक्कइं पवरपवालयाइं णं दरिसइ तीरलयालयाइं।
५ णं वोहइ वडवाणलपईवु णं वेढिवि रक्खइ जंबुदीवु।
संखाऊरउ जिह संखु धरइ पहुआणइ किंकरु किं ण करइ।
उम्मुक्कविविहजलयरसणेहिं णं जंपइ पायालाणणेहिं।
किं विद्दुमराएं तुहुं जि राउ तेलोक्कपियामहु जासु ताउ।
मा जोयहि महिवइ तिक्खभल्लि तउ तणिय वाय मज्जायवेल्लि।
१० होएप्पिणु अच्छउं एत्थु ताम णउ लंघमि महियलि वसमि जाम।
तुह मुद्दइ अंकिउ हउं समुद्दु मा किं पि करहि मच्छरु रउद्दु।

घत्ता—खारत्तु ण मेल्लइ जणु किं बोल्लइ णत्थि सहावहु ओसहु॥
जसु णामु जि सायरु अवसें सायरु सो संभासइ णिययपहु॥१४॥

१५

तरुणीअंगाइं व सलवणाइं अहिसिंचियतीरलयावणाइं।
लंघेप्पिणु रयणायरवणाइं पइसेप्पिणु वारहजोयणाइं।
ठाएप्पिणु पुणु तेत्तियहिं तेहिं तंवेहिं सरोसहिं लोयणेहिं।
रिउभवणु पलोइवि णिववरेण अप्फालिउ धणुहुं धणुद्धरेण।
५ अंदोलिय तारागहपयंग महि चलिय विवरणिग्गयभुयंग।
अच्छोडियचंधण विवलियंग णिण्णासिय तासिय रवितुरंग।
थरहरिय धराहर धरण वरुण आसंकियं जम वइसवण पवण।
संचालिय सरिसरसायरंभ गय मयगल मुडियालाणखंभ।
णिवडिय पुरवर पायार गेह मुय कायर णर भयभंतदेह।
१० परवीरहिं खग्गहु दिण्ण दिट्ठि अवर वि चवंति हा णट्ठु सिट्ठि।
दप्पिट्ठ दुट्ठ भुयवलविमद्दु मउभीयरु भावइ भीमु मद्दु।
किं मंदरसिहरु मठाणल्लंमिउ किं जगु कवलिवि कालेण हसिउ।

घत्ता—पायालि फणिंदहिं महिहि णरिंदहिं सग्गि सुरिंदहिं कंपिउ॥
धणुगुणटंकारें अइगंभीरें कासु हूयउं विप्पिउ॥१५॥

१४

जैसे वह मोतीरूपी अक्षत फेंक रहा है, जल ऐसा मालूम होता है मानो अर्घांजलिका जल हो। भयके कारण जैसे उसने राजा (भरत) की मर्यादा ग्रहण कर ली हो, जैसे वह पानीके भीतरके पहाड़ दिखा रहा हो। मानो चलते हुए और जल-मानवरूपी अनुचरोंकी अंगुलियोंसे स्फुरित जलमदगज, प्रवर प्रवाल और माणिक्य उपहारमे दे रहा हो; मानो किनारोंके लतागृह दिखा रहा हो, मानो बड़वानलरूपी प्रदीप जला रहा हो, मानो घेरकर जम्बूद्वीपको रक्षा कर रहा हो। जिस प्रकार शंखोंको बजाता है, उसी प्रकार शंखोंको धारण करता है, प्रभुकी आज्ञासे किंकर क्या नही करता ? जिसमे विविध जलचरोंके शब्द हो रहे हैं, मानो ऐसे बड़वामुखोसे वह कहता है कि हे राजन्! आपको विद्रुमकी ललिमासे क्या प्रेम ? कि जिसके पिता त्रिलोक पितामह हैं। हे महीपति, आप अपनी तीखी भल्लिकाकी ओर न देखें, आपकी बात मेरे लिए मर्यादाकी रेखा है। मैं जबतक यहाँ स्थिर होकर रहता हूँ तबतक महीतलका उल्लंघन नही करूँगा। मै अब आपकी मुद्रासे अंकित समुद्र हूँ। इसलिए मुझपर कुछ भी भयंकर ईर्ष्या नही करिए।

घत्ता—वह अपना खारापन नही छोड़ता। लोग यह क्यो कहते हैं कि स्वभावकी दवा नही होती। जिसका नाम समुद्र है (सायर—सागर); वह अवश्य ही अपने स्वामीसे सायर (सादर) बात करता है ॥१४॥

१५

जो तरुणियोंके अंगोकी तरह सलवण (लावण्यमय, सौन्दर्यमय) है, और जिसके किनारोंके लतावन सिंचित हैं, ऐसे समुद्रजलोंमे बारह योजन तक प्रवेश कर और वहीं स्थित होकर अपने लाल-लाल तथा क्रोधसे भरे हुए नेत्रोंसे शुभ भवनको देखकर धनुर्धारी राजाने अपने धनुषको आस्फालित किया। उससे तारा ग्रह और पतंग (सूर्य) आन्दोलित हो उठे। जिसमे बिलोंसे नाग निकल आये है, ऐसी धरती चलित हो गयी। अपने बन्धनोंको खींचते हुए और काँपते हुए शरीरवाले सूर्यके घोड़े त्रस्त होकर नष्ट हो गये। पर्वत धरण (इन्द्र) और वरुण थर्रा उठे। यम, वैश्रवण और यम आशंकित हो उठे। नदी, सरोवर और समुद्रका जल संचालित हो उठा, जिनके आलानस्तम्भ मुड़ गये है ऐसे मैगल हाथी भाग गये; पुरवर, परकोटे और घर गिर पड़े। भयसे भ्रान्त-शरीर कायर नर मर गये। श्रेष्ठ वीरोंने अपनी तलवारोंपर दृष्टि डाली। दूसरे कहने लगे कि हा, सृष्टि नष्ट हो गयी। दर्पिष्ठ, दुष्ट ! बाहुबलका मर्दन करनेवाला, योद्धाओंको डरानेवाला वह भयंकर शब्द ऐसा लगता है कि क्या मन्दराचलका शिखर अपने स्थानसे खिसक गया है ? क्या विश्वको निगलनेके लिए कालने अट्टहास किया है ?

घत्ता—पाताललोकमे नागेन्द्र और धरतीपर नरेन्द्र तथा स्वर्गमे सुरेन्द्र काँप उठे। अत्यन्त गम्भीर धनुषकी डोरीकी टंकारसे किसका हृदय भयाक्रान्त नही हुआ ? ॥१५॥

१६

धणुवेयजाणु[1] परिछिण्णमाणु वंचेप्पिणु णिरुवमु किं पि ठाणु ।
णं कालें भासुरु कालदंडु णरणाहें पेसिउ वज्जकंडु ।
धम्मुज्झिउ पलयहुयासलीलु गुणकोडिविमुक्कउ णं कुसीलु ।
पिच्छंचिउ चंचलु णं विहंगु उज्जयगइ[2] णं सुयणंतरंगु ।
५ अइदूरगामि णं परमणाणु अइसुद्धिवंतु[3] णं सुक्कझाणु ।
अइदीहायारउ णं भुयंगु अइप्राणहारि[4] णं खलपसंगु ।
अइगुणिहि परंमुहुं होवि[5] गयउं णं माणुसु कुसमयभंत्तिहियउ[6] ।
अइलोहघडिउ णं लुद्धचित्तु[7] अइगयणगमणु णं खेयरत्तु ।
अइमोक्खगामि णं चरमदेहु अइकढिणभेइ णं णइपवाहु ।
१० णावालउ णं तच्चिय महंतु हुंकारें चोइउ णं सुमंतु ।

घत्ता—मागहहु णिहेलणि हरिणीलंगणि खुत्तु कणयपुंखुज्जलु ॥
रुइणिज्जियकज्जलि जउंणाणइजलि णं पप्फुल्लिउ सयदलु ॥१६॥

१७

भूभंगभीसभिउडीहरेण विप्फुरियदसणडसियाहरेण ।
सुरसमरसहासभयंकरेण दुणिरिक्खविवक्खखयंकरेण ।
देवेण समुद्दपरिग्गहेण तं पेक्खिवि गज्जिउं मागहेण ।
भणु केणुप्पाडिय जमहु जीह भणु केण लुहिय खयकाललीह ।
५ णायउलवलयविलुलंतु[1] गीढु भणु केण णिसुंभिउ धरणिवीढु[2] ।
भणु केण कलिउ मंदरु करेण उट्ठाविउ सुत्तउ सीहु केण ।
भणु केण खलिउ णहि भाणु जंतु णिव्विण्णउ प्राणहं[3] को जियंतु ।
भणु कासु करोडिहि रिट्ठु[4] रसिउ भणु को कयंतदंतंति[5] वसिउ ।
भणु केण विहंडिउ मज्झु माणु केणेहु विसज्जिउ कुलिसबाणु ।

१० घत्ता—जेणेउं वियंभिउं रणु पारंभिउं सो महु अज्जु ण चुक्कइ ॥
णिब्भंगु जमाणणु भीयरु काणणु बिहिं वि एक्कु ध्रुवु[6] ढुक्कइ ॥१७॥

१८

इय भणिवि तेण कड्ढिउ करालु धारालउ णावइ मेहजालु ।
पडुताडणखंडियभडयमालु असि अरिकरिमोत्तियदंतुरालु ।
दढमुट्ठिणिवीडियउ वहइ वारि दासु व विंझइरि व वंसधारि ।
वसुणंदउ ससिमंडलसरिच्छु उरि चप्पिवि उट्ठिउ लोहियच्छु ।

१६ १. MB °जाण । २. MBP उज्जुय° । ३. MBP अइसिद्धिवंतु । ४. MBP पाण° । ५. MBP होइ । ६ MBP °भंति° । ७ MBP लुद्धरत्तु ।
१७. १. MBP विलुलंत । २ M धरणिपीढु । ३. MBP पाणहं । ४. B रिट्ठु । ५. P दंतंतवसिउ । ६. MBP धुउ ।
१८. १. MBP °कवाल ।

१६

धनुर्वेदके अनुसार ज्ञात और निश्चित मानवाला बाण राजा भरतने किसी अनुपम स्थान-को लक्ष्य बनाकर प्रेषित किया, मानो कालने भास्वर कालदण्ड प्रेषित किया हो। प्रलयकी आगकी लीलावाला वह बाण धम्मुज्झित (धर्म और डोरीसे मुक्त), कुशीलकी तरह मानो गुणकोटि से (गुणोंकी परम्परासे मुक्त, डोरी और धनुषसे मुक्त), विमुक्त वह (बाण) मानो विहंग (पक्षी) की तरह, पिच्छ (पंख और पुख) से सहित था, सुजनके हृदयकी तरह अत्यन्त सीधी गति-वाला था, परम ज्ञानकी तरह अत्यन्त दूर तक गमन करनेवाला था। शुक्लध्यानकी तरह अत्यन्त शुद्धिवाला था, भुजंगकी तरह अत्यन्त बड़े आकारवाला था, दुष्टके प्रसंगकी तरह प्राणोंका अत्यन्त अपहरण करनेवाला था। वह बाण अत्यन्त गुणी (मुनि और धनुषसे) से विमुख होकर इस प्रकार गया मानो खोटे शास्त्रोकी भक्तिसे आहत मनुष्य हो, लोभीके चित्तके समान वह अति लोह घडिउ (अत्यन्त लोभ, और लोहेसे रचित) था। वह विद्याधरत्वकी तरह मानो आकाशमे अत्यन्त गमन करनेवाला था। मानो चरमशरीरीकी तरह शीघ्र मोक्षगामी था। मानो नदीप्रवाहकी तरह अत्यन्त कठिन भेदनवाला था, वही (तच्चिय) नदीप्रवाह और महान् तात्त्विककी तरह ठाणालउ (नावोसे युक्त और नमनशील) था, वह मानो हुंकारसे प्रेरित सुमन्त्र था।

घत्ता—भरतने हरित और नीले मणियोंसे रचित मागधराजके घरमे स्वर्णपुंखसे उज्ज्वल तीर फेंका, जो ऐसा लग रहा था मानो अपनी कान्तिसे काजलको पराजित करनेवाले यमुना नदीके जलमें शतदल कमल खिला हुआ हो ॥१६॥

१७

भौहोंके भंगसे भयंकर भृकुटी धारण करनेवाला, विस्फुरित दांतोसे ओठोंको चबाता हुआ, हजारों देवयुद्धोमे भयंकर दुर्दर्शनीय शत्रुओंको क्षय करनेवाला और समुद्रका परिग्रह करनेवाला वह मागधदेव उस तीरको देखकर गरज उठा। वह बोला—"बताओ यमकी जीभ किसने उखाड़ी, बताओ क्षयकालकी रेखाको किसने पोंछा? बताओ नागकुलके वलयके द्वारा गृहीत धरिणीपीठको किसने नष्ट कर दिया? बताओ किसने हाथसे मन्दराचल उठाया? सोते हुए सिंहको किसने जगाया? बताओ आकाशमे जाते हुए सूर्यको स्खलित किसने किया? कौन जीते जी अपने प्राणोसे विरक्त हो गया? बताओ किसके सिरपर कौआ बोला है? बताओ यमके दांतोके भीतर कौन बसा हुआ है? किसने मेरे मानको भंग किया है? किसने यहां यह वज्रबाण छोड़ा है?

घत्ता—जिसने यह तीर फेंका है और युद्ध प्रारम्भ किया है, वह आज मुझसे नही बच सकता, अनिष्ट यममुख या भयंकर कानन, दोनोमे-से एक, निश्चित रूपसे उससे भेंट करेगा ॥१७॥

१८

यह कहकर उसने कुशल आघातसे जिसने योद्धासमूहको नष्ट किया है, जो शत्रुरूपी गजके मोतीरूपी दांतोवाली है, ऐसी भयंकर तलवार इस प्रकार निकाल ली जैसे धारावर्षी मेघजाल हो। मजबूत मुट्ठियोसे पीड़ित जो दासकी तरह जल धारण करती है, जो विन्ध्याचलके समान वंश (बांस और कुटुम्ब) को धारण करनेवाली है, चन्द्रमण्डलके समान उस तलवारको अपने

१६

धणुवेयजाणु परिछिण्णमाणु बंधेप्पिणु णिरुवमु किं पि ठाणु ।
णं कालें भासुरु कालदंडु णरणाहें पेसिउ वज्जकंडु ।
धम्मुज्झिउ पलयहुयासलीलु गुणकोडिविमुक्कउ णं कुसीलु ।
पिच्छंचिउ चंचलु णं विहंगु उज्जयगइ णं सुयणंतरंगु ।
५ अइदूरगामि णं परमणाणु अइसुद्धिवंतु णं सुक्कझाणु ।
अइदीहायारउ णं भुयंगु अइप्राणहारि णं खलपसंगु ।
अइगुणिहि परंमुहुं होवि गयउं णं माणुसु कुसमयभंत्तिहयउ ।
अइलोहघडिउ णं लुद्धचित्तु अइगयणगमणु णं खेयरत्तु ।
अइमोक्खगामि णं चरमदेहु अइकढिणभेइ णं णइपवाहु ।
१० णावालउ णं तच्चिय महंतु हुंकारें चोइउ णं सुमंतु ।

घत्ता—मागहहु णिहेलणि हरिणीलंगणि खुत्तु कणयपुंखुज्जलु ॥
रुइणिज्जियकज्जलि जउंणाणइजलि णं पप्फुल्लिउ सयदलु ॥१६॥

१७

भूभंगभीसभिउडीहरेण विप्फुरियदसणडसियाहरेण ।
सुरसमरसहासभयंकरेण दुणिरिक्खविवक्खखयंकरेण ।
देवेण समुद्दपरिग्गहेण तं पेक्खिवि गज्जिउं मागहेण ।
भणु केणुप्पाडिय जमहु जीह भणु केण लुहिय खयकाललीह ।
५ णायउलवलयविलुलंतु गीढु भणु केण णिसुंभिउ धरणिवीढु ।
भणु केण कलिउ मंदरु करेण उट्ठाविउ सुत्तउ सीहु केण ।
भणु केण खलिउ णहि भाणु जंतु णिव्विण्णउ प्राणहं को जियंतु ।
भणु कासु करोडिहिं रिट्ठु रसिउ भणु को कयंतदंतंति वसिउ ।
भणु केण विहंडिउ मज्झु माणु केणेहु विसज्जिउ कुलिसबाणु ।

१० घत्ता—जेणेउं वियंभिउं रणु पारंभिउं सो महु अज्जु ण चुक्कइ ॥
णिब्भंगु जमाणणु भीयउ काणणु विहिं वि एक्कु ध्रुवु ढुक्कइ ॥१७॥

१८

इय भणिवि तेण कड्ढिउ करालु धारालउ णावइ मेहजालु ।
पडुताडणखंडियभडंथमालु असि अरिकरिमोत्तियदंतुरालु ।
दढमुट्ठिणिवीडियउ वहइ वारि दामु व विंझइरि व वंसधारि ।
वसुणंदउ ससिमंडलसरिच्छु उरि चप्पिवि उट्ठिउ लोहियच्छु ।

---

१६ १. MB °जाग । २. MBP उज्जुय° । ३ MBP अइसिद्धिवंतु । ४ MBP पाण° । ५. MBP लोह । ६ MBP °भत्ति° । ७. MBP लुद्धरत्तु ।

१७ १ MBP विलुलंत । २. M धरणिपीढु । ३. MBP पाणहं । ४. B रिट्ठु । ५. P दंततवसिउ । ६. MBP धुउ ।

१८. १ MBP °वसालु ।

१६

धनुर्वेदके अनुसार ज्ञात और निश्चित मानवाला बाण राजा भरतने किसी अनुपम स्थान-को लक्ष्य बनाकर प्रेषित किया, मानो कालने भास्वर कालदण्ड प्रेषित किया हो। प्रलयकी आगकी लीलावाला वह बाण धम्मुज्झित (धर्म और डोरीसे मुक्त); कुशीलकी तरह मानो गुणकोटि से (गुणोंकी परम्परासे मुक्त, डोरी और धनुषसे मुक्त), विमुक्त वह (बाण) मानो विहंग (पक्षी) की तरह, पिच्छ (पंख और पुख) से सहित था, सुजनके हृदयकी तरह अत्यन्त सीधी गति-वाला था, परम ज्ञानकी तरह अत्यन्त दूर तक गमन करनेवाला था। शुक्लध्यानकी तरह अत्यन्त शुद्धिवाला था, भुजंगकी तरह अत्यन्त बड़े आकारवाला था, दुष्टके प्रसंगकी तरह प्राणोंका अत्यन्त अपहरण करनेवाला था। वह बाण अत्यन्त गुणी (मुनि और धनुषसे) से विमुख होकर इस प्रकार गया मानो खोटे शास्त्रोंकी भक्तिसे आहत मनुष्य हो, लोभीके चित्तके समान वह अति लोह घडिउ (अत्यन्त लोभ, और लोहेसे रचित) था। वह विद्याधरत्वकी तरह मानो आकाशमे अत्यन्त गमन करनेवाला था। मानो चरमशरीरीकी तरह शीघ्र मोक्षगामी था। मानो नदीप्रवाहकी तरह अत्यन्त कठिन भेदनवाला था, वही (तच्चिय) नदीप्रवाह और महान् तात्त्विककी तरह ठाणालउ (नावोसे युक्त और नमनशील) था, वह मानो हुंकारसे प्रेरित सुमन्त्र था।

घत्ता—भरतने हरित और नीले मणियोंसे रचित मागधराजके घरमें स्वर्णपुंखसे उज्ज्वल तीर फेंका, जो ऐसा लग रहा था मानो अपनी कान्तिसे काजलको पराजित करनेवाले यमुना नदीके जलमे शतदल कमल खिला हुआ हो ॥१६॥

१७

भौहोंके भंगसे भयंकर भृकुटी धारण करनेवाला, विस्फुरित दाँतोसे ओठोंको चबाता हुआ, हजारों देवयुद्धोंमे भयंकर दुर्दर्शनीय शत्रुओंको क्षय करनेवाला और समुद्रका परिग्रह करनेवाला वह मागधदेव उस तीरको देखकर गरज उठा। वह बोला—"बताओ यमकी जीभ किसने उखाड़ी, बताओ क्षयकालकी रेखाको किसने पोछा? बताओ नागकुलके वलयके द्वारा गृहीत धरिणीपीठको किसने नष्ट कर दिया? बताओ किसने हाथसे मन्दराचल उठाया? सोते हुए सिंहको किसने जगाया? बताओ आकाशमे जाते हुए सूर्यको स्खलित किसने किया? कौन जीते जी अपने प्राणोसे विरक्त हो गया? बताओ किसके सिरपर कौआ बोला है? बताओ यमके दाँतोके भीतर कौन बसा हुआ है? किसने मेरे मानको भंग किया है? किसने यहाँ यह वज्रबाण छोड़ा है?

घत्ता—जिसने यह तीर फेंका है और युद्ध प्रारम्भ किया है, वह आज मुझसे नही बच सकता, अनिष्ट यममुख या भयंकर कानन, दोनोमे-से एक, निश्चित रूपसे उससे भेंट करेगा ॥१७॥

१८

यह कहकर उसने कुशल आघातसे जिसने योद्धासमूहको नष्ट किया है, जो शत्रुरूपी गजके मोतीरूपी दाँतोवाली है, ऐसी भयंकर तलवार इस प्रकार निकाल ली जैसे धारावर्षी मेघजाल हो। मजबूत मुट्ठियोसे पीड़ित जो दासकी तरह जल धारण करती है, जो विन्ध्याचलके समान वंश (बाँस और कुटुम्ब) को धारण करनेवाली है, चन्द्रमण्डलके समान उस तलवारको अपने

पहु पेच्छिवि केण वि लइउ कोंतु[2] आरूढु को वि हणु हणु भणंतु ।
५ मोग्गरु मुसुंढि परसु[3] वि तिसूलु केण वि करि लइयउ भिंडिमालु[4] ।
वावेल्लु[5] सेल्लु झसु सत्ति मुसलु हलु सव्वलु कंपणु[6] जुज्झकुसलु ।
केण वि सुयंगु केण वि विहंगु केण वि तुरंगु केण वि मयंगु ।
केण वि अलियच्छि घुलंतजीहु केण वि खरणहरुक्केरु सीहु ।
१० केण वि संचोइउ करहु सरहु कु वि आहवि धाइउ जाम सरहु ।

घत्ता—ता मागहमंतिहिं कयकुलसंतिहि पणवेप्पिणु उच्चाइउ ॥
छणससहरवयणहि तारहिं णयणहिं रायसिलिम्मुहु जोइउ ॥१८॥

१९

तेहिं[1] लिहियइं[2] दिट्ठइं अक्खराइं सुरमणुयखयरदेसंतराइं ।
जिणतणयहु विविहणिहीसरासु णियकालवट्ट[3]संधियसरासु ।
रायहु भरहहु ण णवंति जाइं[4] णिच्छउ दोहाइं मरंति ताइं[5] ।
मणु रंजिवि जुंजिवि अवहिणाणु दक्खविउ ससामिहि गंपि बाणु ।
५ पुणु अक्खिउ खलयणमइयवट्टि उप्पण्णउ महियलि चक्कवट्टि ।
भो मागह किं जुज्झग्गहेण मुइ पहरणु किं विणडिउ गहेण ।
जइ अज्जु ण इच्छहि तासु सेव तो तुम्हइं णउ अम्हइं मि देव ।
तुहुं एक्कु ण अवरइं सुरसयाइं तहु मंदिरि दासत्तणु गयाइं ।
लिहियहु किं किर[6] कीरइ विसाउ दीसइ पणविवि रायाहिराउ ।
१० तें वयणें सो परिमुक्क[7]दप्पु थिउ मंतपहावें णाइं सप्पु ।
अवलोयवि सरलिविपंतियाउ[8] भावेप्पिणु मंतिपउत्तियाउ[9] ।

घत्ता—मागहिण अगावें[10] सविणयभावें चक्केण व दिवसेसरु ।
पणविवि थुइवयणहिं णाणारयणहिं पूइवि दिट्ठु णरेसरु ॥१९॥

२०

सविहवविम्हाविय[1]सयमहेण विहसेप्पिणु वोल्लिउ मागहेण ।
जय भरह महागयलीलगामि तुहुं इह जम्महु महु परमसामि ।
तुहुं इंदु इंदरिद्धीसणाहु तुहुं हुयवहु अरिवरदिण्णडाहु[2] ।

---

२. MBP कुंतु । ३. MBPK पट्टिसु तिसूल । ४. P भिंडमालु । ५. MBP वावल्ल । ६. MBP कप्पणु ।

१९. १. P तिहिं and gloss बाणे । २. MBP लेहियइं । ३. M °कालवट्टि । ४. M जे वि । ५ M ते वि । ६. B किंकर । ७. K पविमुक्क° । ८. MBP सरलियपंतियाउ । ९ MP add after this भरहेसरायणामंकियाउ, सुरणरखेयरभय (M सय) गारियाउ, ता तेण वि चित्ति चमक्कियाउ, वाए-प्पिणु अक्खरपंतियाउ; B adds : भरहेसरायणामंकियाउ, जुइणिज्जियरवियरकंतियाउ, ता तेण वि चित्ति चमक्कियाउ, चक्कवइभरहणामंकियाउ । १०. M अकुडिल° ।

२०. १ MBP °विभाविय° । २. MBP °दाहु ।

उरमे नांपकर, लाल-लाल आंखोवाला मागधेश वसुनन्द उठा। स्वामीको देखकर किसीने भाला ले लिया, कोई 'मारो-मारो' कहता हुआ क्रुद्ध हो उठा। किसीने मुद्गर, भुशुण्डी, फरसा, त्रिशूल, हल और भिन्दिमाल अपने हाथमें ले लिया। किसीने वावल्ल, सेल, झस, शक्ति, मूसल, हल, मव्वल और युद्धकुशल कम्पन ले लिया। किसीने भुजंग, किसीने विहंग (गरुड़), किसीने तुरंग, किसीने मातंग (गज), किसीने जीभ हिलाता हुआ बाघ, किसीने तीव्र नखोंके समूहवाला सिंह, किसीने ऊँट और श्वापदको प्रेरित किया। कोई तबतक रथसहित युद्धमे दौड़ा।

घत्ता—जिन्होंने कुलकी शान्ति स्थापित की है ऐसे मागध-मन्त्रियोने प्रणाम कर उस तीरको उठाया और पूर्ण चन्द्रमाके समान मुखवाले उन्होने स्वच्छ नेत्रोंसे राजा भरतके उस तीरको देखा ॥१८॥

१९

उसने (मागधेश वसुनन्दने) उसमें लिखे हुए हस्ताक्षर देखे—"जो देव, मनुष्य, विद्याधर और देशान्तरके विविध निधियोके स्वामी तथा अपने कालपृष्ठ नामक धनुषपर तीर साधे हुए, ऋषभनाथके पुत्र राजा भरतको नमस्कार नही करते, वे निश्चित ही दो खण्ड होकर मरेंगे।" तब अवधिज्ञानका प्रयोग कर और अपने मनमे प्रसन्न होकर, उन्होने अपने स्वामीको जाकर वह तीर दिखाया और कहा कि "दुष्टजनोंको चूर-चूर करनेवाला चक्रवर्ती राजा धरतीपर उत्पन्न हो गया है। हे मगधराज, युद्धके आग्रहसे क्या? शस्त्र छोड़ो, क्यों ग्रहसे प्रवंचित होते हो। यदि आज आप उसे स्वीकार नही करते, तो हे देव, न तो तुम हो और न हम लोग। तुम अकेले नहीं, हे देव, दूसरे भी सैकड़ो देवोने उसके घरमें दासता स्वीकार कर ली है, जो भाग्यमे लिखित है, उसका क्या विषाद करना? प्रणाम करके राजाधिराजसे भेंट की जाये।" इन शब्दोसे उसने अपना घमण्ड वैसे ही छोड़ दिया जैसे मन्त्रके प्रभावसे सांप स्थित हो गया हो। बाणकी सरल पंक्तियाँ पढ़कर तथा मन्त्रियोके वचनोका विचार कर—

घत्ता—गर्वरहित मागध नरेशने विनयभावसे प्रणाम कर और नाना रत्नों और स्तुति-वचनोंसे पूजा कर राजाको उसी प्रकार देखा, जिस प्रकार चक्रवाकके द्वारा सूर्य देखा जाता है ॥१९॥

२०

अपने वैभवसे इन्द्रको विस्मित करनेवाले मगधने हँसकर कहा, "हे महागजलीलागामी आपको जय हो, आप मेरे इस जन्मके स्वामी हैं, इन्द्र और कुबेरके स्वामी आप इन्द्र है। शत्रुप्रवर-

	तुहुं जमु जमकरणु ण का विभंति	तुहुं वरुणु सयलजणविहियसंति ।
५	तुहुं धणउ धणउ[३] सुहिणिहियकामु	तुहु पवणु पवलबलदलणथामु ।
	ईसाणु महेसरणवियपाउ[४]	तुहुं एक्कु जि जगि रायाहिराउ ।
	तुह[५] असिजलधारइ हरियछाय	अरिणरवइ[६] तरु के के ण जाय ।
	तुह[७] असिजलधारइ उद्धसासु[८]	वड्ढारिउ भुवणंतरि ण कासु ।
	तुह असिजलधारइ परिल्हसंति	बहुसलिल वि रयणायर तसंति ।
१०	तुह असिजलधारइ अइहुयाइं	रिउवहुणयणंसुयबिंदुयाइं ।
	तुह असिजलधारइ कुलि असोउ	हूयउ णिच्चं चिय मुत्तभोउ ।

घत्ता—तुहुं भरह पयावइ पढमु[९] महीवइ महिणाहहिं मणि भाविउ ।
ताराणक्खत्तहिं पय पणवंतहिं [१०]पुप्फदंतु जिह सेविउ ॥२०॥

इय महापुराणे तिसट्ठिमहापुरिसगुणालंकारे महाकइपुप्फयंतविरइए महाभव्वभरहाणुमण्णिए महाकव्वे मागहपसाहणं णाम बारहमो परिच्छेओ सम्मत्तो ॥ १२ ॥

॥ संधि ॥ १२ ॥

३. MBP धणइं । ४. MBP महीसर° । ५. B omits this line ६. MPK अहिणरवइ ।
७. B omits this line ८ MP उद्धसासु । ९ MBP पढमु । १० M पुप्फयंतु; BP पुप्फयंत ।

को दाह देनेवाले आप अग्नि है, आप दम और यमकरण हैं, इसमे किसी प्रकारकी भ्रान्ति नही है। सुधियोंके लिए निहितकाम, आप धन देनेवाले कुबेर हैं, प्रबल शत्रुदलका दलन करनेकी क्षमता रखनेवाले पवन है ? राजाओंको अपने चरणोंमे झुकानेवाले ईशानेन्द्र है। आप ही विश्वमे एकमात्र राजाधिराज है। तुम्हारो असिवररूपी जलधारासे कौन-कौन, शत्रुराजारूपी वृक्ष हरियछाय (जिनकी छाया / कान्ति छीन ली गयी है, ऐसे तथा हरी-भरी कान्तिवाले) नही हुए। आपकी असिजलधारासे विश्वमे किसकी साँस (श्वास और सस्य) नही बढ़ी ? आपकी असिरूपी जलधारासे अत्यधिक जलवाला होते हुए भी समुद्र त्रस्त हो उठता है और अपना गर्व छोड़ देता है। आपकी असिरूपी जलधारासे शत्रुओंकी अनेक आँखोंके अश्रुबिन्दु और अधिक हो गये। तुम्हारी असिरूपी जलधारासे कुलमे नित्य ही अशोक मुक्त-भोग हो गया।

घत्ता—हे भरत प्रजापति और प्रथम महीपति, पृथ्वीनाथोंके द्वारा चाहे जाते, चरणोंमे प्रणाम करते हुए उनके द्वारा आप वैसे ही सेवित हैं, जैसे कि ताराओं और नक्षत्रोके द्वारा जिन तथा सूर्यचन्द्र सेवित है ॥२०॥

इस प्रकार त्रेसठ महापुरुषोंके गुणालंकारोंसे युक्त महापुराणमें महाकवि पुष्पदन्त द्वारा विरचित एवं महाभव्य भरत द्वारा अनुमत महाकाव्यका मागध प्रसाधन नामका बारहवाँ अध्याय समाप्त हुआ ॥१२॥

संधि १३

सोहिवि मागहु गंहविसमु[2] णविवि पसिद्धसिद्धिणेयारहो ॥
रंजिवि सीहु व वरतणुहि भरहराउ गउ दाहिणद्दारहो ॥ ध्रुवकं ॥

१

धरणीसरो चलइ गरुडद्धओ घुलइ ।
सिमिरं समुल्ललइ धूली णहे मिलइ ।
५ सुरसिरिहरं[3] कमइ पडिवलइं उवसमइ ।
हरिवयणलालाइ करिदाणवेलाइ ।
जणजणियसंकेण तंवोलपंकेण ।
चरणाइं लिप्पंति हारेहिं गुप्पंति ।
अइगरुयभारेण सामंतचारेण ।
१० दसदिसिवहं भमइ पुहईयलं णमइ ।
णाइणिहिं णउ रमइ विसवाणियं वमइ ।
कह कंह[4] व भरु सहइ मउ मुयइ गइ महइ ।
फणिपुंगमो तसइ लवण्णवो रसइ ।
णरवइमुए वसइ रणजयसिरी हसइ ।
१५ परणिववलं गसइ विसमत्थलि कसइ ।
वरवाहिणी चरइ दुंग्गं पि पइसरइ ।
जलदुग्गमं तरइ तरुदुग्गमं हरइ ।
गिरिदुग्गमं समइ गयणंगणं कमइ ।
भडथडहिं तुरएहिं संदणहिं दुरएहिं ।
२० अमरेहिं खयरेहिं रिउवग्गखयरेहिं ।
छव्विह वि संकमइ अरिपत्थिवे दमइ ।
रायस्स वसि करइ अवसो भिसं रमइ ।

MBP give, at the commencement of this Samdhi, the following stanza :—

तीव्रापद्दिवनेपु दन्तुरहितेनैपेन तेजस्विना
गंतानफ्लजो गतापि हि रमा कृष्टा प्रभो· सेवया ।
यस्यावासपदं वदन्ति कवयः सौजन्यसत्यास्पदं
सोऽयं श्रीभरतो जयत्यनुपम काले कलौ नाप्रनम् ॥

GK do not give it.

१ १ P लोहिवि । २ MB गंडिवि मधु, P गडिवि गधु । ३ P सुरसिरिहर संकमइ । ४ MBP कह कि । ५ M कणे वि । ६ MBP पत्थिवे । ७ MBP रमइ, K रमइ, but writes above it रमइ ।

सन्धि १३

आक्रमण करनेमे विषम मागधराजको सिद्धकर तथा प्रसिद्ध सिद्धिके नेता जिन भगवान्‌को प्रणामकर, सिंहके समान गर्जनाकर, राजा भरतने दक्षिण द्वारके वरदामा तीर्थके लिए प्रस्थान किया।

१

राजा चलता है। गरुड़ध्वज फहराता है। सेनाएँ तेज गतिसे चलती हैं, धूल आकाशमें छाती है। सुरलक्ष्मीके घरका अतिक्रमण करती हैं। वह घोड़ोंके मुखोकी लारों, हाथियोंकी मद-जल-रेखाओंसे प्रतिबल सेनाओंको शान्त करती है। लोगोको शंका उत्पन्न करनेवाले पानों (ताम्बूलो) की कीचड़से पैर लथपथ हो जाते हैं, हारोमे उलझ जाते है। अत्यन्त भारी भारसे तथा सामन्तोंके चढ़नेसे दसों दिशापथ घूमने लगते हैं, पृथ्वीतल झुक जाता है। नागिने रमण नही करती, विषकी ज्वाला उगलने लगती है। किसी प्रकार भार सहन करती है, मद छोड़ देती हैं, कही भी जाना चाहती हैं। नागराज त्रस्त होता है। लवणसमुद्र गरजता है। रण-विजय-श्री राजाके हाथमे निवास करती है और हँसती है। शत्रु-राजाओके सैन्यको ग्रस्त करती है, विषम-स्थलोंको चूर-चूर करती है; श्रेष्ठ सेना चलती है, दुर्गमे प्रवेश करती है, जलदुर्गको पार करती है, तरुदुर्गोका अपहरण करती है। गिरिदुर्गमोको शान्त करती है। गगनांगनका अतिक्रमण करती है; भटघटाओं, घोड़ों, रथो, गजों, देवों, विद्याधरों, शत्रुवर्गके विद्याधरोके द्वारा छह प्रकारकी सेना संक्रमण करती है और शत्रुराजाका दमन करती है, राजाको वशमें लाती है। जो सेना वशमे नही होती वह प्राणोसे वियुक्त होती है।

घत्ता—काणणि वईजयंतिणियडे वलु आवासिउ परगहणायरु ॥
गज्जइ गज्जंतहिं गयहिं पलयकालि णं खुहियउ सायरु ॥१॥

२

उवजलहिजलहितीराइयउ गिरिगेरु[1]यरेणु[2]यराइयउ ।
सालालइ णंदु[3]सालसहिउ तालालइ तूरतालमहिउ ।
उ[4]त्तुंगमड्डि कयसे[5]ड्डवरु र[6]त्तासोयंकि असोयघरु ।
कंचणवंतइ कंचणफुरिउ पुण्णायपउरि पुण्णायरिउ ।
५ ससिरीसि सिरीसपसाहियउ वहुवंसि णिवंसविराइयउ ।
संठियँसुवेसि वेसाभवणु सभुयंगइ भमियभुयंगगणु ।
सिहिगलरवि संगलरवगहिरु स[8]रिवहरिसु कूरवइरिवहिरु ।
सविसायइ अविसायउ सविहु माइंदथइइ मायंदणिहु ।
कइलुकइ कईहिं पसंसियउ थिय ह[9]रिवरि हरिवरभूसियउ ।
१० परलच्छीगहणुक्कंठियउ वणि साहणु सयलु वि संठियउ ।
अत्थमिउ सूरु तमभरियदिसि थिउ णिसि उववासें रायरिसि ।

घत्ता—महिणाहेण समच्चियइं णियकुलचिंधइं चावइं चक्कइं ।
झाइउ मंतु महारिहरु[10] दीवकवाडइं विहडिवि थक्कइं ॥२॥

३

तहिं अवसरि दिणयरु उग्गमिउ भरहेसें जिणवरिंदु णमिउ ।
रहु वाहिउ सहसा तेण किह संपुण्णमणोहरु[1] पुण्ण जिह ।
कसपहरतुरियपेरियतुरउ मरुफंसफारफरहरियधउ ।
विरसियरहंगरोसियउरउ पहरणपरिपुण्णसुवण्णमउ ।
५ मणिघंटाजालहिं झणझणइ भडभारक्कंतउ णं कणइ ।
कइवयजोयणइं महासरहो जलु लंघिवि पुणरवि सायरहो ।
पव्वालंकरियउ णं वरिसु कोडीसरु किं ण जणइ हरिसु ।
सुविसुद्धवंसु गुणणमियतणु सुकलत्तु व पहुणा लइउ धणु ।
गुणु कड्ढिवि लीलइ जे णियउ[2] करु सवणि ससि व्व सहइ थियउ ।
१० रेहइ णरु दिणयरणिम्मलहो णवणालु व कुंडलसयदलहो ।

घत्ता—कहइ व जाइवि णरवइहिं महु संगेण वि वहइ खलत्तणु ।
गुणथिरकरपरियड्ढियउ कण्णालग्गु[3] चावकुडिलत्तणु ॥३॥

---

८ MPT वइजयइ°; B वइजयंते ।

२ १ M गेरुय°, but records a p °गेरुय° । २ P °रेणुविराइयउ । ३. दूनागाल° । ४. MB उत्तुंग- मड्डि । ५. MB °सेड्डयर, P सेडवरु । ६ P रत्तासोयसियसोय° । ७. MP संठिउ । ८. MBP सरिवहरिसु, K °वरिसु but corrects it to वरिरिसु । ९. MBP हरिवरेहिं हरि भूसियउ । १० MBP सं ति ।

३. १. MBP °मणोरहु । २. MBP णेमियउ । ३ MBP °लग्गचाव° ।

घत्ता—वैजयन्तके निकट वनमे उसने शत्रुको ग्रहण करनेवाली सेनाको ठहरा दिया, जो गजोंके गरजनेपर इस प्रकार लगती है, मानो प्रलयकालमे समुद्र क्षुब्ध हो उठा हो ॥१॥

२

उपसमुद्र वैजयन्त और समुद्रके किनारोंपर ठहरा हुआ पहाड़की गेरूकी धूलसे शोभित वह सैन्य शाल वृक्षोंके घरोमे नृत्यशालाओंसे सहित था, तालवृक्षोंके घरमें तूर्योंके तालोंसे महनीय था, ऊँचो अटवीमे वह बलात्कार करनेवाला था, रक्ताशोक वृक्षकी गोदमे अशोकको धारण कर रहा था। चम्पक वृक्षोमे वह स्वर्णसे युक्त था। पुन्नागप्रवरमे श्रेष्ठ चरितवाला था। शिरीष वृक्षोमे शिरोष (मुकुट) से प्रसादित था। अनेक वंशवृक्षोमे जो नृवंशोंसे विराजित था, अपने सुन्दर रूपमे स्थित वह वेश्याभवनके समान था, भुजंग वृक्षोसे सहित होनेपर उसमे लम्पट घूम रहे थे, मयूरोके सुन्दर शब्दोंमे वह मंगल ध्वनिसे गम्भीर था। नदियोंके कूटतटोपर वह क्रूर शत्रुओंके वधमे आदर करनेवाला था। शाकवृक्षोसे सहित होनेपर प्रभुके साथ वह विषादहीन था। मातंग (आम्रवृक्ष) में स्थित होनेपर वह लक्ष्मी और चन्द्रमाके समान था। कवि (राजा विशेष) के छिपनेपर वह कवियोके द्वारा प्रशंसनीय था, जो हरिवरके निकट होनेपर हरिवरसे भूषित था। दूसरोकी लक्ष्मीको ग्रहण करनेमें उत्कण्ठित समस्त सैन्य इस प्रकार वनमे ठहर गया। सूर्य अस्त हो गया। दिशाएँ अन्धकारसे भर उठी। राजा रातमे उपवासमे स्थित हो गया।

घत्ता—पृथ्वीके स्वामीने निज कुलचिह्नो, धनुषों और चक्रोकी पूजा की। महान् शत्रुओका हरण करनेवाले मन्त्रका ध्यान किया। उस द्वीपके किवाड़ खुलकर रह गये ॥२॥

३

उसी अवसरपर सूर्य उग आया। भरतेशने जिनवरेन्द्रको नमस्कार किया। उसने शीघ्र अपना रथ इस प्रकार हाँका कि जैसे सम्पूर्ण सुन्दर पुण्य हो। कोड़ोके प्रहारोसे घोड़े शीघ्र प्रेरित हो गये, हवाके स्पर्शके विस्तारसे ध्वज फहरा उठे। शब्द करते हुए चक्रोंसे सांप क्षुब्ध हो उठे। रथ प्रहरणोसे परिपूर्ण और स्वर्णमय था। मणियोके घण्टाजालोसे जो झनझनां रहा था, मानो योद्धाओके भारसे आक्रान्त होकर शब्द कर रहा हो, महासर (जल या स्वर) वाले समुद्रके जलको कई योजनो तक लांघनेके बाद राजाने धनुष हाथमे ले लिया। कोटीश्वर (धनुष) क्या पर्वकी तरह, पर्वालंकृत (उत्सवोंसे अलंकृत / गांठोसे अलंकृत) हर्ष उत्पन्न नही करता। वह सुकलत्रकी तरह सुविशुद्ध वंश (कुलीन बांस) था, तथा उसका शरीर गुणोंसे (दया नम्रतादि गुण / डोरी) से नमित था। डोरी खीचकर कानो तक लीलापूर्वक ले जाया गया हाथ ऐसा शोभित हो रहा था, मानो श्रवण नक्षत्रमे चन्द्रमा स्थित हो। उसपर तीर इस प्रकार सोह रहा था जैसे सूर्यसे निर्मल (विकसित) कुण्डलरूपी शतदलपर नव दण्ड नाल हो।

घत्ता—डोरी और स्थिर हाथसे आकर्षित कानों तक लगा हुआ वह (तीर) जैसे जाकर राजाओसे धनुषकी कुटिलता कहता है कि वह मेरे साथ भी दुष्टता धारण करता है ॥३॥

४

जीयोविमुक्कु जीवियहरणु णं दिणयरु खरपसरियकिरणु ।
वहुलक्खगाहि मो मग्गणउ णं पेसिउ दूयउ अप्पणउ ।
णिवडिउ सहमंडवि वरतणुहि कह कह व ण लग्गउ तहु तणुहि ।
कंचणपुंक्खेणुज्जोइयउ सो तेण लएवि पलोइयउ ।
५ सुरदणुयदप्पलीलाहरइं दिट्ठइं णरवइणामक्खरइं ।
अरविंदचंदविमलाणणहो महु आइजिणेसरणंदणहो ।
भरहहु जो जो ण सेव करइ सो सो अहि णरु अमरु वि मरइ ।
ता तेण जि तं जि समिच्छियउ थोवउ णियपुण्णु दुगुंछियउ ।
गउ तहिं जहिं सइं अच्छइ भरहु मयरहरमज्झि खंचियसरहु ।
१० घत्ता—अक्खिवि णाउं सगोत्तु कुलु पणविउ सो महिवइभत्तारहु ।
सुरहं मि तुच्छधम्मफलिण लग्गइ सिरि करु परपडिहारहु ॥४॥

५

इंदीवरलोयणु सच्छमणु पभणइ वरतणुमहिलुलियतणु ।
तुह विग्गहु णिग्गहु विग्गहहो तुह संधाणु जि कारणु महहो ।
पइं सामिय संधिउ जासु सरु वउसंधिउ भक्खइ तहु खयरु ।
पिउ जासु अणिंदु जिणिंदु सइं पुण्णहिं विणु पहु को लहइ पइं ।
५ लइ लइ एयउ हारावलिउ णं महिघुलियउ तारावलिउ ।
लइ सुरधरणीरुहसंभवइं कुसुमइं णिच्चं चिय णवणवइं ।
लइ णेउराइं लइ कंकणइं लइ दिव्वइं सत्थइं घणघणइं ।
लइ दिव्वंगइं वत्थइं वरइं लइ खीरतरंगइं चामरइं ।
धम्मु व जीवहु अब्भुद्धरणु परमेसर तुहुं जि मज्झु सरणु ।
१० तं णिसुणिवि भरहें बोल्लियउ एउ वि अवरु वि मोक्कल्लियउ ।
जज्जाहि लएप्पिणु णिययवरु अच्छहि महु होइवि आणयरु ।
घत्ता—पूरइ महु महिवइ जसेण दविणविलासु वासु किं वण्णिउ ॥
उत्तमु जगि अहिमाणु धणु एउ वयणु किं पइं णायण्णिउ ॥५॥

६

पप्फुल्लियदुमरसदावणिय सुयपिंछरिंछकोड्डावणिय ।
वरतणु सुरु जिणिवि सुहावणिय वेइय धरेवि दीवहु तणिय ।
पुणु जयदुंदुहिसद्दहु मिलिउ सहुं राएं साहणु संचलिउ ।
पच्छिमदिसि संमुहु धाइयउ सव्वत्थ जि कहिं मि ण माइयउ ।

४. १. MBP जीयाइ मुक्क । २. MBP दूवउ । ३ M तउ । ४. MP °पुखेणु° । ५. MBP महिवइ-भत्तारहु । ६ MBP सुरहम्मि धम्मतुच्छफलिण ।

५ १. MBP तुहुं । २. B सयिय । ३. M चउसंधिउ । ४ MBP देवंगइ । ५ MP मोकल्लियउ । ६. M विलासु । ७ MBP अहिमाण° । ८ MBP पइ किं ।

६ १. MP सुयरिच्छपिच्छ°; B सुयरिछपिंछ° । २. B °दिससंमुहु ।

४

ज्या (प्रत्यंचा) से विमुक्त जो जीवनका हरण करता है, मानो प्रखर प्रसरित किरणोंवाला सूर्य हो। वह मानो मार्गण (बाण / याचक) है जो बहुलक्ष्यग्राही है। मानो अपना प्रेषितदूत है। वह जाकर वरदामतीर्थके राजाके सभामण्डपमे गिर पड़ा। उसके शरीरमें किसी प्रकार लगा भर नहीं। स्वर्णपुंखसे आलोकित उसे राजाने उठाकर देखा। देवों और दानवोंकी दर्पलीलाका अपहरण करनेवाले राजाके नामके ये अक्षर उसने उसमें देखे—"अरविन्द और चन्द्रमाके समान विमलमुख आदि जिनेश्वरके पुत्र मुझ भरतकी जो-जो सेवा नही करता, वह चाहे नाग, नर और अमर हो, मुझसे मरेगा।" तब उस राजाने भी इसकी इच्छा की और अपने थोड़े पुण्यकी निन्दा की। वह स्वयं वहाँ गया जहाँ राजा भरत सागरके मध्यमे तीरोंसे अंचित था।

घत्ता—अपना नाम, गोत्र और कुल बताकर उसने शत्रुका प्रतिहार करनेवाले धरतीके राजाको प्रणाम किया। देवोंको भी तुच्छ धर्मके फलसे लक्ष्मी हाथ लग जाती है ॥४॥

५

इन्दीवरके समान नेत्रवाला स्वच्छ मन वरतनुकी धरतीपर अपने शरीरको झुकाते हुए वह कहता है—"तुम्हारा शरीर युद्धोंका निग्रह करनेवाला है, तुम्हारा सन्धान पूजाका कारण है। हे स्वामी, तुमने जिसपर सर-सन्धान किया है उसके शरीरकी सन्धियाँ गीध खा जाता है। जिसका पिता स्वयं अनिन्द जिनेन्द्र है, हे स्वामी! पुण्योंके बिना तुम्हें कौन पा सकता है? लो यह हारावलि, स्वीकार करो, मानो यह धरतीपर पड़ी हुई तारावलि है। लो देवभूमिके वृक्षों (कल्पवृक्षों) से उत्पन्न नित्य नव-नव पुष्प लीजिए। नूपुर लें, कंकण लें, घन-घन दिव्य शस्त्र लें। श्रेष्ठ दिव्यांग वस्त्र लें, दूधकी तरंगोंकी तरह चामर स्वीकारें, जिस प्रकार जीवके लिए अभ्युद्धरण है, उसी प्रकार तुम्हीं मेरे लिए शरण हो।" यह सुनकर भरतने कहा, "इसे और दूसरेको मैंने बन्धनमुक्त किया, इसे लेकर अपने घर आओ और मेरे आज्ञाकारी होकर रहो।"

घत्ता—"मेरा राजा यशसे पूरित रहता है, द्रव्यविलास और नाशका क्या वर्णन करूँ। विश्वमे अभिमान धन ही उत्तम है, क्या यह वचन तुमने नही सुना" ॥५॥

६

खिले हुए वृक्षोके रसको दरसानेवाली, शुकसमूहके पंखोंकी कतारसे कुतूहल उत्पन्न करनेवाली, द्वीपकी सुहावनी सीमाओंको ग्रहण कर, वरतनु देवको जीतकर, फिर जयके नगाड़ोके शब्दोसे मिली हुई सेना राजाके साथ चली। वह पश्चिम दिशाके सम्मुख दौड़ी। सर्वत्र वह कही

५ हयमुहपयलियफेणुज्जलउ सव्वत्थ जि भंडथडसंकुलउ[3] ।
सव्वत्थ जि गयमयसिंचियउ सव्वत्थ जि धयमालंचियउ ।
सव्वत्थ जि गेज्जावलिरणिउ सव्वत्थ जि [4]बंदिविंदझुणिउ ।
सव्वत्थ जि छत्तणिरुद्धदिसु सव्वत्थ जि सुरहिगंधसरसु[5] ।
सव्वत्थ जि भमियसमिरभमरु[6] सव्वत्थ जि चलियचवलचमरु ।
१० सव्वत्थ जि परिधाइयअमरु[7] सव्वत्थ जि संचरंतखयरु ।
सव्वत्थ जि कामिणिगीयसरु सव्वत्थ जि विलसियकुसुमसरु ।

घत्ता—रुक्ख मलंतु दलंतु गिरि जलु सोसंतु णिवेण णिवेइउ[8] ॥
साहणु एम चलंतु पहे सिंधुमहाणइदारु पराइउ ॥६॥

७

अयलोइय राएं सिंधु किह विब्भमधारिणि वरवेस जिह ।
दावियमय णावइ हत्थिहड[1] विवुहासिया वि संगहियजड ।
गिरितवसिहि णं परिघुलियजड रणवित्ति व सोहइ झसपयड ।
अइकुडिल णाइं सुरमंतिमइ[2] मलणासणि णं पंचमिय गइ[3] ।
५ धणुलट्ठि य दीसइ मुक्कसर बहुरायहंसपिय णाइं धर ।
कमलेण कोसलच्छि[4] व धरइ जा महिवइसचिहि अणुहरइ ।
चलसारसजुयलपयोहरिय कणइल्लपक्खिपंतिहिं हरिय ।
रंगंतवयावलिपंडुरिय पवहंतकुसुमरयपिंजरिय ।
णं गहियविचित्तवरुत्तरिय[5] अहवा णं मंडणकव्वुरिय ।
१० गयहयचंदणरसपरिमलिय चंदकवकलावसुकोंतलिय[6] ।
जा मिलिय गंपि रयणायरहो रत्ती घुत्ति व रय णायरहो ।

घत्ता—ताहि तीरि मुक्कु सिमिरु तामत्थइरिसिहरु[7] संपत्तउ ॥
णं वारुणिदिसिकामिणिहि[8] णिवडिउ मित्तु णिरारिउ रत्तउ ॥७॥

८

अत्थमिइ दिणेसरि जिह सउणा तिह पंथिय थिय माणियसउणा ।
जिह फुरियउ दीवयदित्तितउ[1] तिह कंताहरणहदित्तियउ ।
जिह संझाराएं रंजियउ तिह वेसाराएं[2] रंजियउ ।
जिह भुवणुल्लउ संतावियउ तिहं चक्कउलु वि संतावियउ ।
५ जिह दिसि दिसि तिमिरइं मिलियाइं तिह दिसि दिसि जारइं मिलियाइं ।
जिह रयणिहि कमलइं मउलियइं तिह विरहिणिवयणइं मउलियइं ।

---

३ B णडयड° । ४. M वंदविंद° । ५ MBP °गंधरसु । ६ MBP° भमरिभमरु । ७. M परिधाविय° । ८ B विओइउ, P णिवोइउ ।

७. १ B हत्थियड । २ P सुरमतमइ । ३ MP °णासिणि पंचमिय° । । ४. MBP कोमु । ५. P °वहुत्तरिय । ६ MBP चदक्क° । ७ MBP °मिहरि । ८. MBP वारुणदिसि° ।

८ १ P दीवउ । २. B omits this foot,

भी नहीं समा सकी। घोड़ोंके मुखोंसे निकलते हुए फेनसे उज्ज्वल वह सर्वत्र भटघटा व्याप्त थी। सर्वत्र हाथियोंके मदजलोंसे सिंचित थी। सर्वत्र ध्वजमालाओंसे अंचित थी। सर्वत्र गीतावलिसे मुखरित थी। सर्वत्र चारण समूहसे ध्वनित थी। सर्वत्र छत्रोंसे दिशाएँ अवरुद्ध थीं। सर्वत्र सुरभि-का रसगन्ध प्रसरित था। सर्वत्र भ्रमर मड़रा रहे थे, सर्वत्र चंचल चमर चल रहे थे। सर्वत्र विद्याधरोंका संचार हो रहा था। सर्वत्र स्त्रियाँ गीत गा रही थीं। सर्वत्र ही कामदेव विलसित था।

घत्ता—वृक्षोंको मलते, पहाड़ोंको दलते, जलको सोखते हुए राजाके द्वारा निवेदित सैन्य रास्तेमें चलता हुआ सिन्धु महानदीके द्वारपर पहुँचा ॥६॥

७

भरतने सिन्धुनदीको इस प्रकार देखा, जैसे विभ्रमको धारण करनेवाली वरवेश्या हो। जैसे मदका प्रदर्शन करनेवाली हस्तिघटा हो, विबुधों (देवो/पण्डितों) के आश्रित होते हुए भी जिसने जड़ (मूर्ख / जल) संगृहीत कर रखा है। वह वनकी आगकी तरह है जो परिघुलियजड (जिसमें जड नष्ट हो गया/जल घुल गया है), वह युद्धवृत्तिकी तरह झसपयड (जिसमें प्रकट है मछली और तलवार) शोभित है। जो मानो बृहस्पतिकी मतिकी तरह अत्यन्त कुटिल है, जो मानो मोक्षगतिकी तरह मलका नाश करनेवाली है, जो धनुर्यष्टिकी तरह मुक्तसर (मुक्त बाण और मुक्त तीर) है, जिसके लिए धराकी तरह अनेक राजहंस (श्रेष्ठ राजा और हंस) प्रिय है, जो कमलकी तरह कोशलक्ष्मीको धारण करती है, जो राजाकी शक्तिका अनुसरण करती है, चंचल सारसरूपी पयोधरोंको धारण करनेवाली जो शुकके पंखोंकी कतारोंसे हरित है (हरी है) खेलते हुए बलाकाओंसे जो सफेद है, बहते हुए कुसुमोंके परागोंसे जो नीली है, मानो जिसने विचित्र श्रेष्ठ उत्तरीय धारण कर रखा है, अथवा जो शृंगारके कारण रंग-बिरंगी है। गज, अश्व और चन्दनके रससे मिश्रित और मयूरपिच्छोंके कुन्तलोंवाली जो जाकर रत्नाकरसे उसी प्रकार मिल जाती है, जिस प्रकार कोई धूर्त स्त्री रत नागरजनसे मिल जाती है।

घत्ता—उसके किनारे भरतने डेरा डाला, इतनेमें सूर्य अस्ताचलपर पहुँच गया। मानो पश्चिम दिशारूपी कामिनीमें अत्यन्त अनुरक्त मित्र (सूर्य) गिर पड़ा हो ॥७॥

८

दिनेश्वरके अस्त होनेपर जिस प्रकार पक्षी स्थित हो गये उसी प्रकार शकुनको मानने-वाले पथिक भी स्थित हो गये। जिस प्रकार दीपकोंकी दीप्तियाँ स्फुरित हो उठीं उसी प्रकार कान्ताओंके अधरों और नखोंकी दीप्तियाँ भी। जिस प्रकार सन्ध्यारागसे लोक रंजित हो उठा, उसी प्रकार वह वेश्यारागसे। जैसे विश्व सन्तापित हुआ, उसी प्रकार चक्रकुल भी। जिस प्रकार दिशा-दिशामें अन्धकार मिल रहे थे, उसी प्रकार दिशा-दिशामें जार मिल रहे थे। जिस प्रकार रात्रिमें कमल मुकुलित हो गया, उसी प्रकार विरहिणियोंके मुख मुकुलित हो गये थे। जिस

जिह घरहं कवाडइं दिण्णाइं तिह वल्लहखेवइं[3] दिण्णाइं।
जिह चंदें णियकरपसरु किउ तिह पियकेसहि करपसरु किउ।
जिह कुवलयकुसुमइं वियसियइं तिह कीलियमिहुणइं वियसियइं।
१० जिह पीयइं पाणइं महुराइं तिह अहरइं[4] महुरसमहुराइं।
जिह जिह गलंति जामिणिपहर तिह तिह विड्ढ्ण मउरइपहर।
जिह णहि[5] सुक्कुग्गमु दरिसियउ तिह विडि सुक्कुंग्गमु[6] दरिसियउ।

घत्ता—ता चक्कउलहं पंकयहं तंबकिरणपूरियभुवणोयरु।
विरयहं णरणारीयणहं जीविउ देंतु समुग्गउ दिणयरु ॥८॥

९

सिंधूसरिदारइ सुरहिसमीरइ सुरभवणे
कोइलकुलकलयलि वियसियसयदलि रंभवणे।
उववासु करेप्पिणु जिणु पणवेप्पिणु पीणभुउ
णरवइ जयभायरु कयणियभायरु रिसहसुउ।
५ जसभउंहाभावइं चक्कइं चावइं जियरणइं
अहिअंचिवि दिव्वइं हयरिउगव्वइं पहरणइं।
णं भूरिपहायरु चंडु दिवायरु णहवडिउ।
मणिगणवेयडियइ कंचणघडियइ रहिं चडिउ।
पेरिय जोत्तारें हरि हुंकारें तिक्खमइ
१० मणपवणमहाजव अमुणियखुररव गयणगइ।
कयभडकडवंदणु[2] वाहियसंदणु चवलधउ[3]
करिमयररउद्दहु लवणसमुद्दहु[4] मज्झि गउ।
ता खंचिउ[5] रहवरु भेसियजलयरु सलिलवहे
जोयंति सुरासुर किंणर खेयर जक्ख[6] णहे।
१५ रायं सुइसोक्खर णियणामक्खरभूसियउ
थिरु ठाणु णिबंधिवि सरु गुंणि[7] संधिवि पेसियउ।
अवरणवणाहहु लच्छिसणाहहु पडिउ घरे
तडिदंडु व भीसणु काणणणासणु गिरिसिहरे।
सो णिवडिउ महियलि सहसा करयलि ढोइयउ
२० सुरवइसंकासें[8] बाणु पहासें जोइयउ।
ता तम्मि विसिट्ठइं लिहियइं दिट्ठइं अक्खरइं
णं मत्ताचित्तइं मत्ताजुत्तइं णायरइं।

---

३. MRP °खेमइं। ४ MB अवरइं महरइं; M records a p महुरइं, for महरइं; P अहरइं महुरइं। ५. MP सुक्कग्गमु। ६. MP सुक्कग्गमु।

९. १. M चिक्कमइ; B चिकमइ। २. P °मद्दणु। ३. MBP धवल°। ४. MBP मज्झि समुद्दहु सो ज्जि गउ। ५ MBP खंचिय°। ६. MBP थक्क। ७. P गुणु। ८. MBPK सुरवर°।

प्रकार घरोंमें किवाड़ दे दिये गये थे, उसी प्रकार प्रियोंको आलिंगन दिये गये थे। जिस प्रकार चन्द्रमा अपनी किरणोंका प्रसार कर रहा था, उसी प्रकार प्रियाके केशोंमें करप्रसार किया जाता था। जिस प्रकार कुमुद कुसुम विकसित हो गये, उसी प्रकार क्रीड़ा करते हुए जोड़े विकसित थे। जिस प्रकार मधुर पानी पिया जाता था, उसी प्रकार मधुरसके समान मधुर अधर पिये जाते थे। जिस-जिस प्रकार रात्रिके प्रहर समाप्त हो रहे थे, उसी-उसी प्रकार कोमल रतिके प्रहर भी बीत रहे थे। जिस प्रकार आकाशमें शुक्र नक्षत्र उगा हुआ दिखाई दे रहा था, उसी प्रकार विटमें शुक्र (वीर्य) का उद्गम दिखाई दे रहा था।

घत्ता—तब नभकुलों, पंकजों और विरत नर-नारीजनोंको जीवनदान देता हुआ तथा अपनी रक्त किरणोंसे भुवनलोकको आपूरित करनेवाला सूर्य उदित हुआ ॥८॥

९

सिन्धु नदीके द्वारपर सुरभित पवनवाले सुरभवनमें कोकिलकुलके कलकलसे पूर्ण तथा खिले हुए कमलदलवाले रम्भावनमें, उपवास कर और जिनकी वन्दना कर स्थूलबाहु विजय-लक्ष्मीका सम्पादन करनेवाला, अपने ऐश्वर्यको बढ़ानेवाला ऋषभपुत्र राजा भरत, यमकी भौंहोंके समान भयंकर चक्र और युद्धको जीतनेवाले धनुष और शत्रुओंका गर्व हरण करनेवाले प्रहरणोंकी पूजा कर मणिसमूहसे जड़ित और स्वर्णनिर्मित रथपर इस प्रकार चढ़ गया मानो अत्यन्त प्रकाश फैलाता हुआ प्रचण्ड सूर्य आकाशमें आ पड़ा हो। जोतनेवालोंसे प्रेरित, हुंकारोंसे तीक्ष्णमति, मन और पवनके समान महावेगवाला, खुरोंके शब्दोंको नहीं गिननेवाला गगनगति, भटसमूहका मर्दन करनेवाला चपलध्वज, रथको भगाता हुआ अश्व, जलगज और मगरोंसे रौद्र लवण समुद्रके मध्य गया। तब जलचरोंको भयभीत करता हुआ रथ जलपथमें स्थित हो गया। आकाशमें सुर, असुर, किन्नर, विद्याधर और यक्ष देखने लगे। राजाने कानोंके लिए सुखकर अपने नामाक्षरोंसे विभूषित तीर स्थिर स्थानको लक्ष्य बनाकर और डोरीपर चढ़ाकर प्रेषित किया। वह लक्ष्मीसे सनाथ पश्चिम समुद्रके घरमें जाकर इस प्रकार गिरा, जिस प्रकार वनका नाश करनेवाला भीषण विद्युद्दण्ड गिरिशिखरपर गिरा हो। धरतीपर पड़े हुए तीरको सहसा हाथमें ले लिया और इन्द्रके समान राजा प्रभासने बाणको देखा। तब उसने उसमें लिखे हुए विशिष्ट अक्षरोंको

हउं दाणवमद्दणु कालवणद्दणु चक्कवइ
महु भरहहु केरी जगभयगारी सेव जइ ।
तुहुं करहि पियारी परिहवगारी तो[1] जियहि
णं तो असिवाणिउ जयसिरिमाणिउ [12]ध्रुवु पियहि ।
15 इय तेण पवाइउ कज्जु विवेइउ गयउ तहिं
अमरिंदसमाणउ पुहइहि राणउ थियउ जहिं ।
पविमुक्कपहासें[11] दिट्ठ पहासें भरहु किह
भविगं सपणामें सुहपरिणामें अरहुं जिह ।

घत्ता—कुसुमइं कप्परुक्खफलइं [13]वाहणइं मि वरवाहणवाहहो ।
रयणइं वत्थइं भूसणइं दिण्णइं तेण वसुंधरिणाहहो ॥९॥

१०

सुरसिंधुनरिंदिं देहलिय धरिवि / पइसरणु करिवि ।
पुव्वावरेसु परिसंठियाइं / वइरट्ठियाइं ।
वेयड्ढगिरिहि ओइल्लयाइं / सुधणिल्लयाइं ।
चंडाइं मेच्छखंडाइं ताइं / दोसाहियाइं ।
5 करवालें णिज्जिउ अक्खंडु / पट्ठविवि दंडु ।
मालव मागह वंगंग गंग / कालिंग कोंग ।
पारस बब्बर गुज्जर वराड / कण्णाड लाड ।
आहीर कीर गंधार गउड / णेवाल चोड ।
चेईस चेर मरु ढुंढरंडि / पंचाल पंडि ।
10 कोंकण केरल कुरु कामरूव / सिंहल पहूय ।
जालंधर जावव पारियाय / णिज्जिणिवि राय ।
पवणंधासि णासेवि लेवि / णियमुद देवि ।
हेलाइ णिवंशावणि हरेवि / अमि करि करेवि ।
विजयद्धहु संमुहु चलिउ राउ / सेणासहाउ ।
15 दिवसिहि पत्तु तं सिहरि जेम / अंणि मोक्खु जेम ।
[illegible] महिहर गुंमरेण सुमक / [illegible] कुरुक ।
[illegible] विरंचिय अंगमरडु / [illegible] मयडु ।
[illegible] / [illegible] ।
[illegible] / [illegible] ।

पढ़ा जो मानो मात्रावृत्तवाले मात्राओंसे युक्त नागर अक्षर हों। "मै दानवोंका मर्दन करनेवाला ऋषभका पुत्र चक्रवर्ती हूँ। यदि तुम मुझ भरतको विश्वमें भय उत्पन्न करनेवाली प्रियकारी और पराभव करनेवाली सेवा करते हो तो जीवित रह सकते हो, नही तो तुम विजयश्रीको माननेवाले मेरी तलवारके पानीको निश्चित रूप पिओगे।" उसने उसे इस प्रकार बाँचा और अपना काम समझ लिया। वह वहाँ गया जहाँ देवेन्द्रके समान पृथ्वीका राणा स्थित था। अपनी कान्तिको छोड़ देनेवाले राजा प्रभासने भरतको इस प्रकार देखा जिस प्रकार शुभ परिणाम भव्यने प्रणामपूर्वक अरहन्तको देखा हो।

घत्ता—श्रेष्ठ वाहनोमे चलनेवाले उस वसुन्धरानाथको कुसुम, कल्पवृक्षोके फल, रत्न, वस्त्र और भूषण उसने प्रदान किये ॥९॥

१०

गंगा और सिन्धु नदियोके द्वारा अपनी सीमा निश्चित कर पूर्व और पश्चिम दिशामे प्रवेश कर उसने वैरभाव धारण करनेवालोको परिस्थापित किया। विजयार्ध पर्वतके ऊपर स्थित अत्यन्त सम्पन्न, दोषोसे प्रचुर उन म्लेच्छ खण्डोको तलवारसे जीतकर, आर्यखण्डमे दण्ड स्थापित कर मालव, मागध, बग, अंग, गंग, कलिंग, कोग, पारस, बब्बर, गुर्जर, वराड, कण्णाड (कर्णाटक), लाट, आभीर, कीर, गान्धार, गौड़, नेपाल, चोड (चोल), चेदीस, (चेदि), चेर, मरु, दुन्तरणी, पांचाल, पण्डि (पाण्डु ?), कोकण, केरल, कुरु, कामरूप, सिंहल, प्रभूत, जालन्धर, यादव और पारियात्रके राजाओंको जीतकर, समस्त प्रत्यन्तवासियोको लेकर, अपनी मुद्रा देकर, खेल-खेलमें तीन खण्ड धरती जीतकर, तलवार अपने हाथमे लेकर सेनाकी सहायतासे भरत विजयार्द्ध पर्वतके सम्मुख चला। कुछ दिनोंमे वह उस पर्वतके शिखरपर इस प्रकार पहुँचा जैसे मन मोक्षपर पहुँचा हो। उसने पर्वत देखा। सुस्वर उसने मुसरोवर, और पर्वतने राजाको देखा। रय महित उसने भीमसरोवर (मानसरोवर) नष्ट कर दिया, और पूजा सहित उसने मधुयुक्त को। कटक (सेना) से अंकित उसने कण्टकित भागको, तुंग उसने तुंगको, गुरु (महान्) वंशमें उत्पन्न उसने

२० गज्जियगउ पडिगज्जियगएण[10] उब्भियधएण ।
हिंसियउ[11] तुरंगु सतुरंगएण सरओरएण ।
अच्चंतससावउ सावएण पालियवएण ।
आसंधिउ पत्थिउ पत्थिवेण विजयहु कएण ।
घत्ता—गिरि सोहइ दीहत्तणेण पुव्वावरसमुद्दु[12] संपत्तउ ॥
२५ तिहिं तिहिं खंडहिं मेइणिहि मेरादंडु व दइवें घित्तउ ॥१०॥

११

तहिं अवसरि गुहदारहु दूरें[1] सुरतरुवरकरढंकियसूरें[2] ।
आवासिउ गहणि सडंगु[3] बलु करिदसणपहरकलुसियउ जलु ।
महिसउलमइकद्दविउ[4] सरु कम्मयरकुढारहिं छिण्ण तरु ।
आलुंखियाइं पिक्कइं फलइं णिल्लूरियाइं सद्दलदलइं ।
५ गोमंडलेहिं चिण्णइं तणइं मुसुमूरियाइं अंबयवणइं ।
उड्डावियाइं कोइलकुलइं भयतसियइं रसियइं णाहलइं ।
णिल्लुक्कइं मुक्कइं[5] सयदलइं दसदिसु गयाइं सउयणकुलइं ।
मयवंदइं रुंदइं णिग्गयइं एत्तहि तेत्तहि सहसा[6] गयाइं ।
सुत्तइं रत्ताइं रईहरहिं[7] णरमिहुणइं णववेल्लीहरहिं[8] ।
१० णिवकरिहिं वियारिय विंझकरि सुहडेहिं णिहय रुंजंति[9] हरि ।
घत्ता—वणसिरि उव्वासिय सुइरु एवहिं जणवएण णिरु णिवसइ ॥
पेच्छिवि भरहाहिवणिवइ[10] कुंदपुप्फयंतहिं णं विहसइ ॥११॥

इय महापुराणे तिसट्ठिमहापुरिसगुणालंकारे महाकइपुप्फयंतविरइए महाभव्वभरहाणुमण्णिए महाकव्वे तिखंडवसुंधरापसाहणं णाम तेरहमो परिच्छेओ समत्तो ॥ १३ ॥

॥ संधि ॥ १३ ॥

---

१० GK add after it उब्भूयधउ । ११. MBPT सतुरंगवयणु । १२. MB समुद्द° ।

११ १ MBP अवरगुहादारहु सदूरि । २ MBP °ढंकियइ सूरि । ३ MB सडंग° । ४ MBP कद्दमिउं । ५. MBPK सुक्कइं । ६ MBP सहसइं । ७. MBP रईयरेहिं । ८ MBP °वल्लीहरेहिं । ९. MB रुजंत, P रुजंति । १०. BPK पुप्फदंतहिं ।

गुरुवंशको, स्थिरने स्थावरको, प्रतिगर्जन करनेवाले गजने गरजते हुए गजको, ऊर्ध्वध्वज और तुरंग सहित उसने हिनहिनाते अश्वको, प्रतिज्ञा पालन करनेवाले उस श्रावकने अत्यन्त श्वापदोंको और राजाने राजाको विजयके लिए नष्ट कर दिया।

घत्ता—पूर्व और पश्चिम समुद्र तक फैला हुआ पर्वत अपनी लम्बाईसे ऐसा शोभित है, मानो तीन-तीन खण्डोंके लिए दैवने भूमिका सीमादण्ड स्थापित कर दिया हो ॥१०॥

११

उस अवस पर गुहाद्वारसे दूर, जहाँ सुर-तरुवरोंके कारण सूर्य ढका हुआ था, ऐसे गहन वनमें षडंग सेना ठहरा दी गयी। वहाँ जल हाथियोंके दाँतोंके प्रहारसे कलुषित था, सरोवर भैंसोंके समूहके मर्दनसे कीचड़मय था, वृक्ष काटनेवालोंके कुठारोंसे छिन्न थे। पके फल चख लिये गये, आर्द्र पत्ते तोड़ लिये गये, गोमण्डलोंके द्वारा घास चर लिया गया, आम्रवन मसल दिये गये, कोकिलकुल उड़ा दिये गये, भयसे त्रस्त होकर भील चिल्लाने लगे। कमल तोड़कर छोड़ दिये गये। भ्रमरकुल उड़कर दसो दिशाओंमे चले गये। सुन्दर मृगकुल भाग गये, यहाँ-वहाँ सहसा तितर-बितर हो गये। रतिघरोंमे और नवलताघरोंमे अनुरक्त नरमिथुन सो रहे थे। राजाके हाथियोंने विन्ध्याके गजको विदीर्ण कर दिया। और गरजते हुए सिंहको सुभटोंने मार डाला।

घत्ता—वनश्री अच्छी तरह उजाड दी गयी इस समय जनपद यहाँ निवास करेगा, यह देखकर भरताधिप राजा मानो कुन्दपुष्पोंके द्वारा हँस रहा था ॥११॥

इस प्रकार त्रेसठ महापुरुषोंके गुणालंकारवाले इस महापुराणमें महाकवि पुष्पदन्त द्वारा रचित और महाभव्य भरत द्वारा अनुमत महाकाव्यका त्रिखण्ड वसुन्धरा प्रसाधक नामका तेरहवाँ परिच्छेद समाप्त हुआ ॥१३॥

संधि १४

वरतणुसयमहेण जियमागहेण भुयबलणिद्दलियपहासें ।
हयपरमहिवइहि सेणावइहि आएसु दिण्णु भरहेसें ॥ध्रुवकं॥

१

दुवई—[1]ससिविरु जाम [2]तेत्थु पहु णिवसइ सिद्धतिखंडमंडलो ।
ता पत्तो मयासि मणिसेहरु सवणविलंबिकुंडलो ॥१॥

५ सो पभणइ पणवियसिरु संहरिसु मुहससिकिरण[3]पसरधवलियदिसु ।
णव[4]घणथणियमहुरमण[5]हरगिरु सुयणु सुयणभरधरु णिरुवमु णिरु ।
भो कयविजयविजयगिरि उत्तर. दिसि अवर वि सुर णर रवि तुह धर ।
सा[6] वि तिखंड चंडरिउखंडण भो णाहेयतणय कुलमंडण ।
सिहरिगुहादुवारु उग्घाडहि कुलिसदंडखरपहरें ताडहि ।
१० जइ[7] तो मग्गु भडारा होसइ पुण्णु तुहारउ गरुयउ दीसइ ।
जयगिरिवरसिहर[8]ग्गणिकेयउ जासु अहं पि दासु संजायउ ।
ता चमुपमुहहु वयणु णिरिक्खिउ जसवइपुत्तें पेसणु अक्खिउ ।
भो मेहेसर करहि महुत्तउ हणहि गिरिंदकवाडु णिरुत्तउ ।
णिविडु विहंडिवि पडउ विसट्टउ जिह हयदुज्जणमणु तिह फुट्टउ ।
१५ सपहुमणोरहकरणुक्कंठिउ सो पसाउ पभणंतु समुट्ठिउ ।
[10]परिणयसुयतणुमरगयहरियइ णाणागमणविलासहुं भरियइ ।
वरभडसंगरपहरणपोढउ चडुलतुरंगरयणि[11] आरूढउ ।
जाएवि पट्ठि देवि गिरिदारहु धरिवि तुरउ संमुहुं खंधारहु ।

२० घत्ता—अवहत्थिवि छलेण णियभुयबलेण हुंकारिवि णिरु रत्तच्छें ।
परणरपडिखलणु[12] महिहरदलणु उम्मुक्कु दंडु परिहच्छें ॥१॥

MBP give, at the commencement of this Samdhi, the following stanza :—

केलासुब्भासिकन्दा धवलदिसिगउग्गिण्णदन्तङ्कुरोहा
सेसाहीवद्धमूला जलहिजससमुब्भूयडिण्डीरवत्ता ।
बम्भण्डे वित्थरन्ती अमयरसमयं चन्दबिम्बं फलन्ती
फुल्लन्ती तारमोहं जयइ णवलया तुज्झ भरहेस कित्ती ॥

M however reads °पिण्डीर° for °डिण्डीर° । GK do not give it.

१ १. MB संपइ जाम, P एत्तहि जाम । २. P सुहरिसु । ३. B °पसरि° । ४ MBPT °घणझुणिय° । ५. K °मणहरि । ६. MBP साधि । ७. MBP तउ । ८. P °सिहरणिकेयउ । ९. MBP करि महु वुत्तउ । १० M परियण° । ११. MB °रयणआरूढउ । १२ P °परिखलणु महिहरदलमलणु ।

सन्धि १४

जिसने मगधराजको जीता है और अपने भुजबलसे प्रभासको दलित किया है, ऐसे वरतनुके मदको चूर करनेवाले भरतेशने परम शत्रु-राजाओंको नष्ट करनेवाले सेनापतिको आदेश दिया।

१

दुवई—तीन खण्ड धरतीको जीतनेवाला राजा जब अपने शिविरके साथ निवास कर रहा था, तभी कानोमे कुण्डल पहने हुए मणिशेखर नामका देव वहाँ आया। अपने मुखरूपी चन्द्रमा-की किरणोंसे दिशाओको धवलित करनेवाला वह प्रणामपूर्वक बोला, "नवमेघके समान गूँजती हुई मधुर और सुन्दर वाणीवाले तथा भुवनका भार उठानेवाले हे अत्यन्त अद्वितीय सज्जन, तथा विजयार्ध पर्वतपर विजय करनेवाले हे देव, उत्तरदिशामे जो देव मनुष्य-सूर्य और तीन खण्ड धरती है यह भी तुम्हारी है। प्रचण्ड शत्रुओंको खण्डित करनेवाले कुलमण्डन हे नाभेयतनय देव, तुम यदि पर्वतके गुहाद्वारको खोलते हो, वज्रके तीव्र दण्डप्रहारसे उसे प्रताड़ित करते हो, तो हे आदरणीय, मार्ग हो जायेगा! तुम्हारा पुण्य महान् दिखाई देता है कि विजयार्ध पर्वतके शिखरके अग्रभागपर रहनेवाला मै भी, जिसका दास हो गया हूँ।" तब राजा भरतने सेनापतिका मुख देखा। यशोवतीके पुत्रने उसे आदेश दिया, "हे मेघेश्वर, मेरा कहा करो। निश्चित रूपसे तुम पहाड़के किवाड़को प्रताड़ित करो। वह अच्छी तरह विघटित होकर, उसी प्रकार खुल जाये जिस प्रकार आहत दुर्जनका मन फूट जाता है।" अपने स्वामीके मनोरथको पूरा करनेके लिए उत्कण्ठित वह (सेनापति) 'जो प्रसाद' यह कहता हुआ उठा। तरुण तोतेके शरीर और पन्नेके समान हरे तथा नाना प्रकारके गमनके विलासोसे भरे हुए उस चंचल अश्वरत्नपर श्रेष्ठ योद्धाओंके युद्धमे प्रहारोसे प्रौढ़ वह सेनापति आरूढ़ हो गया। जाकर गिरिद्वारको पीठ देकर स्कन्धावारके सम्मुख 'अश्वको थामकर—

घत्ता—लाल-लाल आँखोंवाले उसने हुंकारते हुए (उस दरवाजेको) हटानेके लिए शत्रुमनुष्योंको प्रतिस्खलित और पहाड़को चूर-चूर करनेवाला वह दण्डरत्नपूरे वेगसे फेंका ॥१॥

२

दुवई—मुक्कइ पहरणम्मि हरि [१]णिग्गउ खुरदरमलियकाणणो।
वलपुंगमु वि णविउ णरणियरहिं जगजयपहसियाणणो ॥१॥

ता दंडरयणणिट्ठुरपहारविहडियकवाडकिंकारसद्दसंभडखुहविद्दवियसप्पमुहमुक्कफार-
फुक्कारजालियवि[२]संसिहिजालं।

५ जालामालाकलावहेलापलित्तणासंतमत्तकरिचरणपेल्लणुल्ललियमणिसिलाव[३]डणकुद्धरुंजंत-
सद्दूलरोलभीमं।

भी[४]मुब्भापब्भारभरियकुहरंतणिग्गयाहिंदसुंदरीमुक्कसिचयपयडियपयोहरुल्लि[५]हियहियय-
रइरसियतावसुद्ध[६]रियचरियभारहारं।

[७]हारवमुयंतसवरीपुलिंदसिसुदीसमाणकेसरिकिसोरणहकुलिसकोडिदारियकुरंगरुहिरं-
१० भवाह[८]दुग्गं जायं गुहादुवारं।

घत्ता—उज्झंतहं खगहं महिहरमृ[९]गहं घोसेणप्पाणउं णिंदइ।
अमुणियवेयणु वि णिच्चेयणु वि णं दंडें ताडिउ कंदइ ॥२॥

३

दुवई—ता मंजीरहारकेऊरकिरीडफुरंतभूसणो।
अमरो अमरसमरसंघ[१]ट्टविहट्टियवइरिसासणो ॥१॥

छड्डि[२]यावलेवो इच्छियंघिसेवो।
रिद्धिवुद्धिवंतो आगओ तुरंतो।
५ भू[३]यभत्तिकामो तग्गिरिंदणामो।
सेलसिंगवासो सुद्धसेयवासो।
वंदिओ णरिंदो तेण वी[४]रचंदो।
हारमिंदुधामं दिव्वपुप्फदामं।
कंकणं किरीडं कुंभसंभ[५]णीडं।
१० पंडुरं पसत्थं चारु हारि वत्थं।
कुंजरारिवूढं हे[६]मरण्णवीढं।
हित्तकंजलीलं भम्मदंडणालं।
सव्वलोयसोक्खं कित्तिवेल्लिफुल्लं।
चामरेण जुत्तं णिम्मलायवत्तं।
१५ हासहंसवण्णं राइणो विइण्णं।
मंगलं पहाणं तित्थतोयण्हाणं।
रुक्खरोहियासे तम्मि भूपएसे।

२ १. MBP °जणिय°। २. M विसग्गिसिहि°। ३. MBP °वडणरुट्ठरुंजंत (P रुजंत) मत्तसद्दूल°। ४. MBP भीमुण्हा°। ५ B °ल्लिहियरइ°। ६. B °रियभार°। ७. P हाहारव°। ८ G °दुग्ग। ९ MBP °मिगहं।

३. १. MB °सहट्ट°। २. MB छडिया°। ३. P भूप°। ४. MB वीरचंदो। ५ MB °मडणीड। ६. MBP हेमवण्ण°।

२

अस्त्रके फेंके जानेपर अपने खुरोंसे वनको रौंदता हुआ अश्व चला। जिसका मुख विश्व-विजयके लिए हँसता हुआ है, ऐसा बलमें श्रेष्ठ भी वह नरसमूहके द्वारा नम्र बना दिया गया। तब दण्डरत्नके निष्ठुर प्रहारसे विघटित किवाड़ोंके किंकार शब्दके कोलाहलसे क्षुब्ध और दलित साँपोंके मुखोंसे छोड़ी गयी फूत्कारोंसे विषाग्निकी ज्वाला जल उठी, ज्वालामालाओंसे एक साथ प्रदीप्त और नष्ट होते हुए, हाथियोंके पैरोंकी चपेटसे उछलती हुई मणिशिलाओंके पतनसे क्रुद्ध और गरजते हुए सिंहोंके शब्दोंसे जो भयंकर हो उठा। भयंकर तापके भारसे भरित गुफाओंके भीतरसे निकलती हुई अहीन्द्र सुन्दरियों (नागिनों) के द्वारा मुक्त सिचय (वस्त्र, केंचुल) से प्रकट हुए स्तनोंसे विदारित हृदयवाले रतिरसिक तपस्वियोंके चरित्रभारके हरणको जो धारण किये हुए है। 'हा' रव (शब्द) कहते हुए शबरी पुलिन्दोंके शिशुओंके द्वारा देखे गये सिंह किशोरोंके नखरूपी वज्र कोटिके द्वारा विदारित हरिणोंके रक्तरूपी जलके प्रवाहसे वह गुहाद्वार दुर्गम हो उठा।

घत्ता—दग्ध होते हुए पक्षियो, पहाड़ोंके पशुओंके घोषसे वह (सेनापति) अपनी निन्दा करता है कि वेदनाको नहीं जाननेवाला अचेतन भी यह दण्डरत्नसे ताड़ित होनेपर आक्रन्दन करता है ॥२॥

३

तब मंजीर, हार, केयूर और किरीटके चमकते हुए आभूषणोंवाला तथा देवताओंके युद्धमें संघर्षके द्वारा जिसने शत्रुशासन समाप्त कर दिया है, ऐसा देव अहंकार छोड़कर चरणोंकी सेवा चाहता हुआ ऋद्धि और बुद्धिसे सम्पन्न शीघ्र वहाँ आया। प्रचुर भक्तिका अभिलाषी विजयार्ध नामक, शैलके अग्रभागका निवासी और शुद्ध श्वेत वस्त्रधारण करनेवाला। उसने वीरश्रेष्ठ नरेन्द्रकी वन्दना की। चन्द्रमाकी तरह स्वच्छ हार, दिव्यपुष्पदाम, कंकण मुकुट, जलका नीड घट, सफेद धवल प्रशस्त सुन्दर उत्तम वस्त्र, स्वर्णनिर्मित सिंहासन, कमलकी लीलाका हरण करनेवाला स्वर्णदण्डनाल, चामरोंसे सहित निर्मल आतपत्र कि जो मानो कीर्तिरूपी लताका फूल था, जिसका मूल्य समस्त लोक था और जो हास और हंसके रंगका था, राजाको दिया। तीर्थमें जलका स्नान ही मुख्य और मंगलमय होता है। वृक्षोंसे आच्छादित देवदार वृक्षवाले उस भूमिप्रदेशमें वह राजा

अच्छिओ छमासं देवदारुवासं ।
वल्लरीललंतं माणियं वणंतं ।
२० णिग्गयग्गिजालं मंदधूमसालं ।
मुक्कदीहसासं णं महीहरासं ।
दावियंधयारं तं गुहादुवारं ।
णट्ठताववेयं सिट्ठमग्गभेयं ।
लग्गसीयवायं सीयलं च जायं ।
२५ घत्ता—चंदणचच्चियउ कुसुमंचियउ ता पेसिउ पालियखत्तें ॥
आरासयफुरियउ सुरपरियरिउ संचलियउ चक्कु पयत्तें ॥३॥

४

दुवई—पुणु चक्काणुमग्गलग्गंतमहाभडकरितुरंगयं ।
चलियं साहणं पि रहभमियरहंगाहयभुयंगयं ॥१॥
वसहकरहखरवरवलइयभरु हरिखुरदलियमलियवणतणतरु ।
मयगलमयजलपसमियरयमलु दसदिसिमिलियमणुयकयकलयलु ।
५ कसझसमुसलकुलिससरकरयलु जणवयपयभरपणवियमहियलु ।
असिवरसलिलपवहधुयपरिहवु सतिलयविलयवलयखणखणरवु ।
मसिणघुसिणरससुपुसियउरयलु पवणपहयधयचयचियणहयलु ।
चवलचमरवियलणपसरियकरु परिमलुलियललियमहुलिहसरु ।
मरुवहविगयखयरसुरवरघरु अमरिसकसणपिसुणजयसिरिहरु ।
१० सहपरिभमियजिमियसुरसियसहु पहुसुहजणणकहियमणहरकहु ।
पहरविहुरु सुमरिवि मयमयरु णिवबलु गिलइ व गुहमुहगिरिवरु ।
घत्ता—तेण जि रिउमहहो मग्गियपहहो घरु आयहु फणिवहुलालिउ ॥
भरहहु भयवसेण सगुहामिसेण णियहियवउं दक्खालिउ ॥४॥

५

दुवई—कज्जलणीलबहलतमपडलविणासियणयणमग्गए ।
वच्चइ वाहिणीइ ण सुहेण महीहरकुहरदुग्गए ॥१॥
इय चिंतिवि करि ढोइवि कागणि चमुपमुहेण लिहिय ससि दिणमणि ।
ते सोहंति विवरघरभित्तिहि णावइं णयणइं णरवइकित्तिहि ।
करणियरेण ताइं तसु सारिउ णिसि दिवसइं सोहंति णिरारिउ ।
५ वहइ सेण्णु जयदुंदुहि वज्जइ पलयकालि णं जलणिहि गज्जइ ।

७ MBP सिद्धमग्ग° ।

४. १. B °मग्गलग्ग महा° । २. B °खरखुरवलइय° । ३. MBP °पणमिय° । ४ B °चुवपरि° । ५ M धयचयवियणहलु, P °धयचुंबियणहलु । ६. P °वियलिण । ७. MBP पहसुह° । ८ MBP °विहुर । ९. MBP घर । १०. MBP °हियवउ णं दक्खालिउं ।

छह माह रहा। लताओंसे शोभित उस वनका उसने आनन्द लिया। जिसकी अग्निज्वाला शान्त हो चुकी है, धूममाला मन्द पड चुकी है, जो दीर्घ सांसें छोड़ रहा है मानो पर्वतका मुख हो, जो अन्धकारको दिखा रहा है, ऐसे उस गुहाद्वारका तापवेग समाप्त हो गया, उसमें मार्गका भेद बन गया, हवा ठण्डी लगने लगी और वह शीतल हो गया।

घत्ता—तब चन्दनसे चर्चित, फूलोंसे अंचित सौ आराओंसे चमकता हुआ देवोंसे घिरा हुआ चक्र उसने भेजा। वह भी प्रयत्नपूर्वक चला ॥३॥

४

चक्रके पीछे लगे हुए महाभट, हाथी और तुरंग हैं जिसमें, ऐसी तथा रथोंके घूमते हुए पहियोंसे सर्पोंको आहत करती हुई सेना चली। जिसमें बैलों, ऊँटों और खच्चरों द्वारा भार ढोया जा रहा है, घोड़ोंके खुरोंसे वनके तृण-तरु चकनाचूर हो गये हैं, मदवाले गजोंके मदजलसे रजोमल शान्त हो गया है, दसों दिशाओंमें मिले हुए लोगोंका कलकल शब्द हो रहा है, जिसके हाथमें कशा, झस, मूसल और तीर हैं, जिसने जनपदोंके पदभारसे धरतीको झुका दिया है, असिवरोंके जलप्रवाहमें पराभव धो दिया गया है, तिलक सहित चूड़ियोंके समूहका खन-खन शब्द हो रहा है, मसृण केशररससे उरतल सुपोषित है, जिसमें पवनसे आहत ध्वजसमूहसे आकाश आच्छादित है, चंचल चामरोंको हिलानेके लिए हाथ उठे हुए हैं, परिमलपर झूमते हुए सुन्दर भ्रमरोंका स्वर हो रहा है, आकाशमार्गसे जिसमें देवों और विद्याधरोंके घर (विमान) छोड़ दिये गये हैं, जो अमर्ष, कठोर और दुष्टोंकी विजयश्रीका अपहरण करनेवाली है, जिसमें सुरसभा साथ रहती, घूमती और खाती है, जिसमें स्वामीके लिए शुभ करनेवाली कथाएँ कही जा रही हैं, प्रहारसे जो विधुर है, ऐसा मद और भय उत्पन्न करनेवाला राजाका सैन्य स्मरण कर गुहाके मुख-विवरको जैसे निगल रहा है।

घत्ता—इसी कारण मानो रास्ता भोगनेवाले शत्रुओंमें महान् और घर आये हुए भरतके लिए डरकर अपनी गुहाके बहाने बहुतसे नागोंसे सुन्दर उसने अपना हृदय दिखा दिया ॥४॥

५

काजल और नीलके समान प्रचुर तमपटलसे जिसमें नेत्रोंका मार्ग नष्ट हो गया है, महीधरके ऐसे गुहादुर्गमें सेना सुखसे नहीं जा पा रही थी—यह सोचकर कागणी मणि लेकर सेनाप्रमुखने सूर्य-चन्द्र अंकित कर दिये। वे विवरकी दीवालोंपर इस प्रकार शोभित हुए मानो जैसे राजाकी कीर्तिकी आँखें हों। किरणसमूहसे उन्होंने अन्धकार-समूह हटा दिया और रात्रिमें दिन अत्यन्त रूपसे सोहने लगा। सेना चलती है। जयका नगाड़ा बजता है, मानो प्रलयकालमें समुद्र गरज रहा

उग्गमंतपडिरवगंभीरहिं दुरयघडाघंटाटंकारहिं ।
संदणमुक्कचक्कचिक्कारहिं धाविरवीरधीरहुंकारहिं ।
महिहरविवरमग्गु णं फुट्टइ रोलें तिहुयणु णाइं विसट्टइ ।
१० इंदु वरुणु वइसवणु विसूरइ मेइणि कह व भारु साहारइ ।
सायरु कह व ण महीयलु रेल्लइ मंदरु कह व ण ठाणहु चल्लइ ।
चंदाइच्चजुयलु णहि झुल्लइ णीलु णिसहु केलासु वि हल्लइ ।
एम सेण्णु गच्छंतउ दिट्ठउ अद्धगुहाधरणियलि पइट्ठउ ।

घत्ता—रायहु केरएण परिवारएण पहि जंतें परमयसाडें ।
१५ मणि आसंकियउ मुहुं वंकियउ फणिसंखकुलियकंकोडें ॥५॥

६

दुवई—किंणरगरुडभूयकिंपुरिसमहोरयजक्खरक्खसा ।
पहुणो तणिवासि संजाया वेंतर के ण के वसा ॥१॥

तओ दोण्णि भूमीहरंते णईओ सुकारंडभेरुंडलीलारईओ ।
समुम्मग्गणिम्मग्गणामालियाओ जलावत्तकीलंतमीणालियाओ ।
५ तडालग्गडिंडीरपिंडुग्गयाओ गिरिंदस्स गुज्झंतरा णिग्गयाओ ।
विसुल्लोलवेलावलीवंकियाओ पहंसंतरे राइणो थक्कियाओ ।
महाणायरायस्स णं णाइणीओ झसुप्पिच्छसिंधुस्सरीजाइणीओ ।
अभग्गाइं दुग्गाइं णित्थारएणं सविण्णाणिणा संकमेणं कएणं ।
सरीसारतीराइं संदाणिऊणं पुरो भिच्चसंचारयं जाणिऊणं ।
१० दरीमाणियं पाणियं लंघिऊणं परं पारमाधारमासंघिऊणं ।

घत्ता—गिरिकुहरंतरहो रमियामरहो णिग्गंतउ सालंकारउ ।
सहइ महारुहहो वियलिउ मुहहो बलु कव्वु व सुकइहि केरउ ॥६॥

७

दुवई—ता णिग्गंति भरहि भेरीरवकंपियमेच्छमंडलं ।
परबलदलणवीरकोलाहलमिच्छियसमरगोंदलं ॥१॥

जं गुलुगुलंतचोइयसयंगयपयभूरिभारभारिज्जमाणभूकंपणमियणाइंदमुक्कपुक्कार-
रावघोरं ।
५ जं हिलिहिलंतवाहियतुरंगखरखुरखयावणीचलियधूलिणासंततियसतरुणीविचित्त-
घोलंतचेलचित्तं ।

---

५ १. MBP वीरवीर° । २. MBP वि जूरइ । ३. B णीलि णिसहु; K णोलणिसहु । ४ K धरणियलु ।
५. P कंकोड्ं ।

६. १. MBP वितर । २. M पहासंतरे; B पहासंतरे । ३ MB झसुप्पत्तिसिंधूसरी°; P झसोपित्य
सिंधूसरी°; T उपित्य उल्वण । ४. BP पारमावार° ।

७ १. MBPK °णविय° । २. MP °फुकार°; B सुकार; K °पुकार° । ३. MP °खुरखरखयावणी° ।

है। उठते हुए प्रतिशब्दोंसे गम्भीर गजघटाके घण्टोंकी टंकारो, रथोंसे छोड़ी गयी चीत्कारों, दौड़ते हुए हुंकारोंके द्वारा मानो महीधरका विवरमार्ग फूट पड़ता है और कोलाहलसे त्रिभुवन जैसे ध्वस्त होना चाहता है। इन्द्र-वरुण-वैश्रवण अफसोस करते हैं, धरती किसी प्रकार भारको सहन करती है। समुद्र किसी प्रकार धरतीपर नहीं बहता, मन्दराचल किसी प्रकार अपने स्थानसे नहीं डिगता, चन्द्रमा और सूर्य दोनों आकाशमे काँपते हैं। नीला असहाय कैलास भी हिलने लगता है। इस प्रकार चलता हुआ सैन्य दिखाई देता है, वह आधी गुफाके धरतीतलपर पहुँच जाता है।

घत्ता – शत्रुके मदका नाश करनेवाले राजाके परिवारके पथमे जानेपर नाग, शंख, कौलिय और कर्कोट जातिके नागोंको मनमे शंका हो गयी और उन्होने अपना मुख टेढ़ा कर लिया ॥५॥

६

वहाँ निवास करनेवाले किंनर, गरुड, भूत, किंपुरुष, महोरग, यक्ष, राक्षस और व्यन्तर कौन-कौन देवता प्रभुके वशमे नही हुए। उस समय पर्वतके मध्यमें, जिनमे सुन्दर कारण्ड (हंस) और भेरुण्ड लीलामे रत है, जलोके आवर्तोमे मीनावलियाँ क्रीड़ा कर रही है, जो तटमे लगे हुए फेनसमूहसे उग्र हैं, ऐसी समुन्मग्ना और निमग्ना नामवाली पर्वतराजके मध्यसे निकलनेवाली, जलकी लहरावलियोंसे वक्र दो नदियाँ राजाके रास्तेके बीच आकर इस प्रकार स्थित हो गयी, मानो जैसे महानागराजकी दो नागिनें हों जो मानो मत्स्योंसे उत्कट सिन्धु नदीके लिए जा रही हो। तब अभग्न दुर्गोसे निस्तार दिलानेवाले, कुशल स्थपतिरत्नके द्वारा निर्मित सेतुबन्धसे नदियोके श्रेष्ठ तीरोंको बाँधकर, नगरमे सेनाका संचार जानकर, घाटियोके द्वारा मान्य पानीको लाँघकर श्रेष्ठ उस पारके आधारको पार कर—

घत्ता—जिसमे देव रमण करते है ऐसी पहाड़की गुफामें-से निकलता हुआ अलंकार सहित सैन्य इस प्रकार शोभित हो रहा था, जैसे मुँहसे निकलता हुआ महायोग्य सुकविका काव्य हो ॥६॥

७

भरतके निकलनेपर नगाड़ोकी ध्वनियोंसे म्लेच्छ मण्डल काँप उठा। शत्रुसेनाके दलनके लिए वीरोमे कोलाहल होने लगा, युद्धकी भिड़न्त चाही जाने लगी। चिग्घाड़ते हुए और चलाये जाते हुए हाथियोंके पैरोके भूरिभारके दबावसे उत्पन्न भूकम्पसे नमित नागराजोके द्वारा मुक्त फूत्कार शब्दोसे जो भयंकर हो उठा है। हिनहिनाते हुए और चलाये गये घोडोके तीखे खुरोसे खोदी गयी धरतीसे उठी हुई धूलसे नष्ट होती हुई देवांगनाओके वस्त्र और चित्र-विचित्र हो रहे है।

जं हणु[4]भणंतपक्कलपढुक्कपाइक्कमुक्कलल्लक्क[5]हक्करिउसुहडविहडणुग्घुट्ठरोलफुट्टंत-
गयणभायं ।
जं रहियमुक्कपग्गहविसेसरंगंत[6]रहरसाचलणपेंडियगुरुसिहरिसिहरचुण्णजाय-
१० चंदणकुचंदणोहं ।
जं हारदोरकेऊरकडयकंचीकलावमउडावलंबिमंदारदामसोभंतजक्खजक्खीविमाण-
छण्णं ।
जं भीयरं वराराकरालचक्काणुगामिमंडलियसूरसामंतकोंतकरवालचावसंघाय-
संकडिल्लं ।
१५ जं दंतिदाणधारापवाहपसमंतरेणुदीसंतदसदिसाणणभरंतसेणाणरुद्धरियविविह-
छत्तचिंधं ।
जं भिच्चदेहपरियलियसेयणीसंदबिंदुहयफेणसलिलचिक्ख[10]ल्लतल्लखुप्पंतसयडसंकिण्ण-
कुहिणिदेसं ।

घत्ता—तं पेच्छिवि पवलु उत्थरिउ बलु बोल्लिज्जइ[11] मेच्छकुलेसहिं ॥
२० एवहिं को सरणु ढुक्कउ मरणु रिउ धाइय चउहुं मि पासहिं ॥७॥

८

दुवई—गिरिदरिसरिमुहाइं जो लंघइ पहु सामत्थवंतओ ।
सो अम्हारिसेहिं किं जिप्पइ णिज्जियदहदियंतओ ॥१॥

बहुकालहु दइवेण णिवेइउ हा हा पलयकालु संप्राइउ[2] ।
वयणु सुणिवि आवत्तचिलायहं मेच्छमहामंडलमहिरायहं ।
५ धीरें मंतें एउ पवुच्चइ आवइ[3]कालइ धाह ण मुच्चइ ।
सव्वु सहिज्जइ जं जिह ढुक्कइ हयविहिविहियहु को वि ण चुक्कइ ।
जहिं भंडणु तहिं अवसें खंडणु धीरत्तणु जि मणूसहु मंडणु ।
विसहर परणरसेण्णवियारा ते तुम्हहं कुलदेव भडारा ।
सुमरहु सामिसाल सब्भावें किं भएण किं किर वलगावें ।
१० तेहिं मि ए आलाव विवेइय णाय मेहमुह[5] मणि णिज्झाइय ।
वियडफडाकडप्पदप्पुब्भड गरलाणलपलित्तगिरितडवड ।
उज्जलंत[6]तदूधूममलीमस सिरमणिगणमऊहदीवियदिस ।
अग्घकुसुमरसवासुद्धाइय चलवलंत[7] ते झत्ति पराइय ।

घत्ता—बोल्लिउ उरगइणा विसहरवइणा किं पाडमि गहणक्खत्तइं ॥
१५ कीलियसुरवरहो माणमसरहो णिल्लूरमि किं सयवत्तइं ॥८॥

४. MBP हणुहणुभणंत° । ५ MBP °कक्कार° । ६. P °रंगंततुरयरह° । ७ MP °[illegible]; B °[illegible] । ८ MBP °[illegible]° । ९. MB भीयरंवदाढाकराल°; P भीयरायदाढाकराल° ।
१०. MBP °[illegible]° । ११. MBP बोल्लिज्जइ ।
८ १ MBP °[illegible] । २. MBP [illegible] । ३. MBP आवइकालि [illegible] । ४. MBP [illegible] । ५. °[illegible] । ६. MBP उज्जलंतघूम° । ७. K [illegible] ।

मारो-मारो कहते हुए समर्थ और प्रौढ़ पैदल सेनाके द्वारा मुक्त भयंकर हुंकारोंसे शत्रुसुभटोंके विघटनसे उठे हुए शब्दोंसे आकाशमार्ग विदीर्ण हो गया है। रथिकों द्वारा छोड़ी गयी विगेप-लगामसे चलते हुए रथोंसे डगमगाती हुई धरतीपर गिरे हुए पहाड़ोके शिखरोंसे चन्द्रमा और रक्त चन्दन वृक्षोंका समूह चूर्ण-चूर्ण हो गया है। हार-दोर-केयूर-कटक-करधनी-कलाप और मुकुटोंपर अवलम्बित मन्दार मालाओंसे शोभित यक्ष तथा यक्षिणियोके विमानोसे जो आच्छादित है; जो श्रेष्ठ आराओसे कराल चक्रोंका अनुगमन करते हुए माण्डलीक सूर सामन्त भालो, तलवारो और चाप-समूहसे संकीर्ण और भयंकर है। गजोके मदजलके धाराप्रवाहसे धूलके शान्त हो जानेपर, दिखाई पड़नेवाले दसों दिशाओके मुखोको भरते हुए सैनिक नरों द्वारा विविध छत्रचिह्न उठा लिये गये है। जहाँ अनुचरोके शरीरसे परिगलित स्वेद निर्झरकी बूँदो और अश्वोके फेन-जलोंगे गीले तलभागमें गड़ते (खचते हुए) शकटोसे मार्गप्रदेश सकीर्ण हो चुका है।

घत्ता—(ऐसी) उस प्रबल सेनाको आक्रमण करते हुए देखकर म्लेच्छकुलके राजाओंने कहा—"अब कौन शरण है, मरण आ पहुँचा है, चारो ओर शत्रु दौड़ रहा है ॥७॥

८

जो सामर्थ्यवान् राजा गिरिघाटी और नदियोंके मुखोंका उल्लंघन करता है, दसों दिग्गजों-को जीतनेवाला है, ऐसा राजा हम-जैसे लोगोंसे कैसे जीता जा सकता है। [illegible] बाद दैवसे निवेदित प्रलयकाल आ पहुँचा।" इस प्रकार म्लेच्छ [illegible] तथा किलातोंके वचन सुनकर धीर मन्त्रीने कहा,—"आपत्तिके समय 'हा' नहीं [illegible] जिस प्रकार जीवनमे जो प्राप्त हो, उस सबको सहन करना चाहिए, [illegible] नही बचता। जहाँ युद्ध होगा, वहाँ मारकाट अवश्य होगी। [illegible] दूसरेकी सेनाका विदारण करनेवाले जो विषधर हैं, वे तुम्हारे [illegible] श्रेष्ठ, तुम उनका सद्भावसे स्मरण करो। [illegible] राजाओने भी इन वचनोंको समझ लिया। उन्होंने [illegible] किया, जो विकट फनोंके समूहसे उद्भट, [illegible] याले उठते हुए धुएँके समान थे, [illegible] थे। अर्घ्य पुष्पोंको [illegible]

घत्ता—विषधरोंके राजा [illegible] करते हैं ऐसे [illegible] ॥८॥

९

दुवई—ता मेच्छाहिवेण भणिया फणिणो गज्जंतगयवरं।
णिहणह[1] वेरिसेण्णमिणमो तरुणीकरचलियचामरं ॥१॥

खंधावारहु उप्परि अहणिसु ता णायहिं वेउव्विउ पाउसु।
सयवलु तसइ रसइ वरिसइ घणु पीयलु सामलु विलसइ सुरधणु।
5 सहिणीहरिउ हरिउ वड्ढइ तणु पवसियपियहि पियहि तप्पइ मणु[2]।
फुल्लकलंबतंबु[3] दीसइ वणु तिम्मइ तम्मइ मणि जूरइ जणु।
तडि तडयडइ पडइ रुंजइ हरि तरु कडयडइ फुडइ विहडइ गिरि।
जलु परियलइ घुलइ घुम्मइ दरि अइरय सरइ भरइ पूरें सरि।
जलु थलु सयलु जलु जि संजायउ मग्गु अमग्गु[4] ण किं पि वि णायउ।
10 सरु कुसुमसरु णिरारिउ संधइ विरहें मंथिय पंथिय विंधइ।

घत्ता—पाणिउ णीयगइ विज्जु वि डहइ धणु णिग्गुणु कुडिलु सुरिंदहो।
पाउसु हयमणहो समु दुज्जणहो जो वरिसइ उवरि णरिंदहो ॥९॥

१०

दुवई—सलिलुत्थल्लरेल्लपडिपेल्लणहयदुमविगयरिंछओ[1]।
णवघणरावमुइयचंदक्ककलावुद्धसियपिंछओ ॥१॥

दीसइ लग्गउ वासारत्तउ सेणामहिलहि णावइ रत्तउ।
असिजलि णिवडिवि जलु पुणु धावइ भडसुयदंडहु संमुहुं आवइ।
5 तहिं तं ण मिलइ गमणु जि मग्गइ लोहें गिलियहु को किर लग्गइ।
धुवइ किं पि अलिपिंछहिं दलियउ बहुमुहलिहियउ पत्तावलियउ।
को मंडणु विसहइ रिउघरिणिहि ढालइ सिरसिंदूरइं करिणिहिं।
वंस वंस तुहुं मइं वड्ढारिउ एवहिं परचिंधें वेयारिउ।
महु सरु[2] प्राणहारि णावइ सरु इय गज्जंतु व पभणइ जलहरु।
10 धोयइ मयमायंगहं दाणइं दुम्मेहहं रुच्चंति ण दाणइं।
थक्क सचक्कवाय रह णं सर तोइ तरंति ण के के किर णर।
ता[3] पभणइ णरणाहपुरोहिउ लोउ देव उवसग्गें रोहिउ।
एयहु पडिविहाणु लहु किज्जइ अईणु[4] वारिवारणु चिंतिज्जइ।
ता राएं वलवइमुहुं जोइउ तेण वि पेसणु झत्ति विवेइउ।

15 घत्ता—णियमणि चिंतियउ तेलि घित्तियउं[5] तं चम्मरयणु जणभरधरु।
उप्परि पुणु थविउ जगगउरविउ धवलायवत्तु जियससहरु[6] ॥१०॥

९ १. MB णिहणिवि। २. MBP तणु। ३. BP °कलंबु तंबु। ४. MBP अमग्गु वि किं पि ण णायउ।
१०. १. K सलिलुच्छल्ल°। २. MB पाणहारि; P पाणिहारि। ३. MBP ताम भणइ। ४. M अयणु।
५ MBP घत्तियउ। ६. K °आयपत्तु जिह ससहरु।

९

तब म्लेच्छराजने नागोंसे कहा—'जिसमें गजवर गरज रहे है, और तरुणीजन द्वारा स्वर्ण चामर ढोरे जा रहे है, ऐसी इस शत्रुसेनाको मार डालो।" तब नागोंने स्कन्धावारके ऊपर विद्यासे दिन-रात वर्षा शुरू कर दी। पशुकुल त्रस्त होता है, घन-कुल गरजता है और बरसता है, पीला और श्यामल इन्द्रधनुष शोभित है। मही निखर उठी है, हरी घास बढ़ रही है, प्रोषित-पतिकाओका मन पियके लिए सन्तप्त हो रहा है, बान खिले हुए कदम्ब वृक्षोसे आरक्त दिखाई देते हैं, गीला-गीला होकर जन-मनमें खेदको प्राप्त होता है, बिजली तड़तड़ पड़ती है, सिंह गरजता है, वृक्ष कड़कड़ करके टूटते है, पहाड़ विघटित होता है। जल बहता है, फैलता है, घाटीमे घूमता है। वेगसे दौड़ता है, नदी पूरसे भरती है, जल और थल सब कुछ जलमय हो गया। मार्ग-अमार्ग कुछ भी नही मालूम पड़ता। कामदेव अपने तीरका अच्छी तरह सन्धान करता है और विरहसे पीड़ित पथिकको विद्ध करता है।

घत्ता—पानी निम्नगति है, बिजली भी जलाती है, देवेन्द्रका धनुष निर्गुण और कुटिल है। पावस हतमन दुर्जनके समान है कि जो राजाके ऊपर बरस रहा है ॥९॥

१०

जिसमे जलकी धाराओंकी रेलपेलसे वृक्ष आहत है और पशु चले गये है, जिसमे नवमेघोंकी ध्वनिसे अपने चन्द्रकलाप फैलाकर मयूर नाच रहे हैं, ऐसी वर्षा ऋतु आ गयी दिखाई देती है, जैसे वह सेनारूपी महिलापर आसक्त हो। तलवारके जलपर गिरकर पानी फिर दौड़ता है, और योद्धाओंके भुजदण्डोंके सम्मुख आता है, वह वहाँ भी नही ठहरता और वहाँसे जाना चाहता है, लोभसे ग्रस्त कौन किससे लगता है, वह भ्रमरोंके पंखोसे दलित होकर वधुओंके मुखोंपर लिखित पत्रावलीको कुछ-कुछ धोता है। शत्रुकी गृहिणीके मण्डनको कौन सहन करता है, वह हथिनियोके सिरोंका सिन्दूर ढोर देता है। "हे ध्वजदण्ड, तुम्हे मैने बड़ा किया है इस समय दूसरोके ध्वज-चिह्नोंसे शोभित हो, मेरा सर (स्वर) अब प्राणहारी (प्राण धारण करनेवाला / प्राण हरण करनेवाला) सर (सर/तीर) के समान है।" मानो मेघ गरजते हुए इस प्रकार कह रहा है। वह मैगल गजोंके मदजलको धोता है, मानो दुष्ट मेघोके लिए दान अच्छा नही लगता। चक्रवाक सहित रथ ठहर गये है मानो सरोवर हों, पानीमे कौन-कौन मनुष्य नही तिरते। राजाका पुरोहित तब कहता है—"हे देव, लोक उपसर्गसे अवरुद्ध है, इसका कोई प्रतिविधान करना चाहिए, पानीका निवारण करनेवाले चर्मरत्नकी चिन्ता की जाये।" तब राजाने सेनापतिका मुख देखा, वह भी शीघ्र आदेश समझ गया।

घत्ता—अपने मनमे विचारकर, जनोंके भारको धारण करनेवाले चर्मरत्नको उसने तलभागमें डाल दिया। और ऊपर जगके गौरव, चन्द्रमाको जीतनेवाले धवल आतपत्र स्थापित कर दिया ॥१०॥

११

दुवई—बारहजोयणाइं वित्थारें सिविरु कुलीरमाणिए।
पविउलछत्तचम्मकयसंपुडि थिउ वरिसंतु पाणिए ॥१॥

गयणयलु धरणियलु गिरिसिहरु रेल्लियउ पडिएण पउरेण तोएण पेल्लियउ।
अइणायवत्तेहिं रइए समुग्गम्मि णिवसंति णरवइणरा णाइं सग्गम्मि।
५ ते दोण वरिसंति ते णेय जाणंति इट्ठाइं मिट्ठाइं सोक्खाइं माणंति।
रयणोयरे साहणं जाम संचरइ अरविंदगब्भम्मि अलिउलु व रइ करइ।
खलबलहरोवाय हियम्मि संभरइ कागणिकयाइच्चससियरहिं वावरइ।
सत्ताहरत्ते गए णवर कुद्धेहिं चूडामणिल्लेहिं मारणविरुद्धेहिं।
इंगालहरिणीलकालिंदिकालेहिं मुहकुहरणिम्मुक्कगरलग्गिजालेहिं।
१० उत्तुंगभूभंगभंगुरियभालेहिं सिसुससहरायारदाढाकरालेहिं।
णिट्ठवियपरदंडजमदंडदीहेहिं आरत्तलोलंतचलजमलजीहेहिं।
गरुयाहिमाणेहिं परिगहियमेच्छेहिं कलहिच्छदुप्पेच्छरोसारुणच्छेहिं।
णीसासविसलवमलोलित्तचंदेहिं मरु मरु भणंतेहिं मरुगासिवंदेहिं।
हरिकरिमहाजोहसामंतपब्भारु विउणयरु तिउणयरु वेढियउ खंधारु।
१५ रामाहिरामेण संगामधुत्तेण रूसेवि देवाहिदेवस्स पुत्तेण।

घत्ता—परणरदुज्जयहो राएं जयहो वीरपट्टु सइं बद्धउ।
सो विसहरवरहं णवजलहरहं जुगखयकयंतु णं कुद्धउ ॥११॥

१२

दुवई—ता सोलहसहासजक्खामरविरइयगंधवाहिणं।
भग्गा सलिलवाह पीलू विव चलयरहरिणणाहिणं ॥१॥

चक्कें वइरिमहाभड छिण्णा दइवें णाइं दिसाबलि दिण्णा।
तं अवलोयवि गय भयवस फणि गय णवघण गय सा सोदामणि।
मेच्छणरिंदहिं सकरुणु रुण्णउं दोजीयहं किं किर पडिवण्णउं।
५ विसंभरियहं किं किर सुयणत्तणु वंकगइल्लहं किं गुणकित्तणु।
छिद्दण्णेसिहि को रंजिज्जइ अणिलासिहिं किं परु पोसिज्जइ।
चरणविवज्जिउ को जसु पावइ णिव्वभुयंगहं णिव्वु जि आवइ।
रणजइ जउ गज्जिउ घणणाएं घणणाउ जि सो कोक्किउ राएं।

११. १. MBP वरिसंत। २. MBP °विलुद्धेहिं। ३. B °ससिहरापार°। ४. MBPK °थोलंत°। ५ MBP °मलालित्तदेहेहिं। ६. MBP मरुगासिमंडेहिं। ७. P °देवेसपुत्तेण। ८ MBP सइ वीरपट्टु सिरि बद्धउ। ९ MB °धरहं; P °धारहं। १० °हारहं; GK omit णवजलधरहं। ११. MBP जुगखइ कयंतु।

१२. १. MBP सोलस°। २. MBP दोजीहहिं। ३ MB किंकर। ४. P विसहरियहं। ५. P छिद्दा-णेसिहिं। ६. MBP कोक्किउ सो।

१२

तब सोलह हजार यक्षामरोके द्वारा विरचित पवनोके द्वारा मेघ उसी प्रकार नष्ट हो गये, जिस प्रकार चंचल हरिणोके स्वामी (सिंह) से गज नष्ट हो जाते हैं। चक्रसे शत्रु महायोद्धा इस प्रकार छिन्न हो गये, मानो देवने दिशावलि छिटकी हो। यह देखकर नाग डरकर भाग गये। नव-घन चले गये और वह बिजली चली गयी। तब म्लेच्छ राजाओने करुणापूर्वक रोना शुरू कर दिया कि द्विजिह्वोंने यह क्या किया? जो विषसे भरे होते है उनमे क्या सज्जनता हो सकती है? जो टेढ़ी गतिवाले हैं उनका क्या गुणकीर्तन? छिद्रोंका अन्वेषण करनेवालोंसे कौन प्रसन्न हो सकता है? जो हवाका पान करते है, उनसे दूसरोका क्या पोषण होगा? चरण (चारित्र पैर) से रहित कौन यश पा सकता है? नित्य भुजंगो (गुण्डों और सांपो) को नीचता ही आ सकती है। युद्धके

१० सिरचूलाचुंवियभूभायहिँ दूरंतरहु णमंसियपायहिँ ।
दिण्णहिरण्णवत्थसंघायहिँ दिट्ठु राउ आवत्तचिलायहिँ ।
साहिवि मेच्छराउ गंजोल्लिउ अणुतीरेँ सिंधुहि पुणु चल्लिउ ।
पहु हिमवंतु पराइउ जावहिँ आइय सिंधु भडारी तावहिँ ।
देवय दिव्वदेह णउ सा सरि सिंधुकूडवासिणि परमेसरि ।
१५ राउ णिहालिवि कलसविहत्थइ लहु भद्दासणि णिहिउ पसत्थइ ।

घत्ता—सिंधूँदेवयए जलयरधयए अहिसिंचिवि थुउ मउलिवि कर ॥
दिण्णी माल तहो भरहाहिवहो णवपुप्फयंतथियमहुयर ॥१२॥

इय महापुराणे तिसट्ठिमहापुरिसगुणालंकारे महाकइपुप्फयंतविरइए महाभव्वभरहाणुमण्णिए महाकव्वे आवत्तचिलायपसाहणं णाम चोद्दहमो परिच्छेओ सम्मत्तो ॥ १४ ॥

॥ संधि ॥ १४ ॥

जीत लेनेपर राजा घननाद गरजा, राजाने घननादको भी बुलाया। अपने सिरोंके चूड़ामणियोंसे भूमिका भाग छूते हुए, दूरसे पैरोंमें नमस्कार करते हुए, हिरण्य वस्तु-समूहका दान करते हुए आवर्त और किरात राजाओंने राजासे भेंट की। इस प्रकार म्लेच्छराजको साधकर हर्षसे उछलता हुआ वह सिन्धु नदीके किनारे-किनारे फिरसे चला। जब राजा हिमवन्तके निकट पहुँचा तब आदरणीय सिन्धु देवी आयी। वह नदी नहीं, दिव्य स्वरूप धारण करनेवाली देवी थी, जो परमेश्वरी सिन्धुकूटमें निवास करती थी। राजाको देखकर उसे भद्रासनपर बैठाकर कलश हाथमें लिये हुए प्रशस्त—

घत्ता—जलचर ध्वजवाली सिन्धु देवीने अभिषेक कर दोनों हाथ जोड़कर उसकी स्तुति की। और उस भरताधिपके लिए नवपुष्पोंपर स्थित मधुकरोंवाली पुष्पमाला अर्पित की ॥१२॥

इस प्रकार त्रेसठ महापुरुषोंके गुणों और अलंकारोंवाले इस महापुराणमें महाकवि पुष्पदन्त द्वारा विरचित एवं महाभव्य भरत द्वारा अनुमत महाकाव्यमें आवर्त-किलात प्रसाधन नामका चौदहवाँ परिच्छेद समाप्त हुआ ॥१४॥

संधि १५

मेल्लिवि सिंधुसरि पणवेप्पिणु रिसहजिणिंदहो ॥
पुणु संचलिउ पहु भयरसु जणंतु अमरिंदहो ॥ १ ॥ ध्रुवकं ॥

१

सेणासेणाहिवपरियरिय हिमवंतु धरेप्पिणु संचलिय ।
सोहइ गच्छंती पुव्वमुह कुरुवंसणाहपत्थिवपमुह ।
५ दीसइ सेलत्थलि काणणउं महिसीदुद्धु व साहाघणउं ।
णाणामहिरुहफलरसहरइं कत्थइ किलिगिलियइं वाणरइं ।
कत्थइ रइरत्तइं सारसइं कत्थइ तवतत्तइं तावसइं ।
कत्थइ झरझरियइं णिज्झरइं कत्थइ जलभरियइं कंदरइं ।
कत्थइ वीणियवेल्लीहलइं दिट्ठइं भज्जंतइं णाहलइं ।
१० कत्थइ हरिणइं उल्ललियाइं पुणु गोरीगेयहु वलियाइं ।
कत्थइ हरिणहरुक्कत्तियइं करिकुंभुच्छलियइं मोत्तियइं ।
कत्थइ सुम्मइ जक्खिणिझुणिउं खयरीकरवीणारणरणिउं ।
कत्थइ भसलउलहिं रुणुरुणिउं कत्थइ सुएण किं किं भणिउं ।

घत्ता—कत्थइ किंणरहिं गाइज्जइ सवणपियारउ ॥
१५ रिसहणाहचरिउ फणिणरसुरलोयहु सारउ ॥१॥

२

णिक्खित्तसुरासुररइणियले हिमवंतकूडतलधरणियले ।
णवचंपयकुसुमावासियउ साहणु सव्वंगु आवासियउ ।
बहुदोरहिं दूसइं ताडियइं रणवडहसहासइं ताडियइं ।

MBP give, at the commencement of this Samdhi, the following stanza:—

त्यागो यस्य करोति याचकमनस्तृष्णाङ्कुरोच्छेदनं
कीर्तिर्यस्य मनीषिणा वितनुते रोमाञ्चवच्चं वपु. ।
सौजन्यं सुजनेषु यस्य कुरुते प्रेमान्तरां निर्वृतिं
श्लाघ्योऽसौ भरत. प्रभुर्वत भवेत्त्वाभिर्गिरा सूक्तिभिः ॥

MB read प्रेम्णोऽन्तरां for प्रेमान्तरां. G does not give it.

U K give it at the commencement of Samdhi XCV.

१ १. MB °महिरुहरुहरस°; P °महिरुहफलरस°, but records a *p* °महिरुहरुहरस° । ४. MBP किलिकिलियइं । ३. MBP °कुंभत्थलियइं ।

सन्धि १५

सिन्धु नदीको छोड़कर और ऋषभ जिनेन्द्रको प्रणाम कर राजा भरत अमरेन्द्रोंको भयरस उत्पन्न करता हुआ चला।

१

सेना और सेनापतिसे घिरा हुआ हिमवन्तको अपने अधीन कर वह चल पड़ा। जिसमे कुरुवंशके स्वामी राजा प्रमुख हैं ऐसी सेना पूर्वकी ओर मुख किये हुए शोभित है। शैलके स्थलमे कानन इस प्रकार दिखाई देता है, मानो महिषीके दूधके समान साहाघन (शाखाओं और दुग्ध-धारासे सघन) है, कहीपर नाना वृक्षोके फलरसको चखनेवाले वानर किलकारियाँ भर रहे हैं, कहीं सारस रतिमे रक्त हैं, कही तपस्वी तपसे सन्तप्त हैं, कही निर्झर झर-झर बह रहे हैं, कही गुफाएँ जलसे भरी हुई हैं, कही झुके हुए बेलफल हैं जो भीलोके द्वारा भग्न होते हुए दिखाई देते हैं, कही हरिण चौकड़ी भर रहे हैं, फिर गोरीके गीतसे मुड़ते हैं, कहीपर सिंहके नखोसे उखाड़े गये मोती हाथियोंके गण्डस्थलोंसे उछल रहे है। कहीं पर यक्षणियोंकी ध्वनिलहरी सुनाई देती है, कहीपर विद्याधरीके हाथोकी वीणा रुनझुन कर रही है। कहीपर भ्रमरकुलोके द्वारा गुंजन किया जा रहा है, और कहींपर शुक 'किं किं' बोल रहा है।

घत्ता—कहीपर किन्नरियोके द्वारा कानोंको प्रिय लगनेवाला नाग, नर और सुरलोकमें श्रेष्ठ ऋषभनाथ चरित गाया जा रहा है ॥१॥

२

जहाँ सुर-असुरोकी रति शृंखलाएँ निक्षिप्त हैं ऐसे हिमवन्तके कूटतलके धरातलपर नव-चम्पक कुसुमोसे सुवासित छह अगोवाले सैन्यको ठहरा दिया गया। बहुत-सी रस्सियोंसे तम्बू ठोक दिये गये, हजारों युद्धपटह बजा दिये गये। गजशाला और नाट्यशालागृह और प्रवरशाला-

करिसालाणडसालाहरइं उब्भियइं पउरसालाहरइं ।
५ हरिवरमंदुरउ समुंडियउ णं घडदासीउ सुमुंडियउ ।
ठवियइं मणिमंडवियासयइं[1] अवराइं मि दिव्वइं आसयइं[2] ।
दुव्वारवइरिसयपहरणइं अहिवासिवि भूसिवि पहरणइं ।
दक्खालियससहररयणियहि[3] पोसहु पडिवज्जिवि रयणियहि ।
कुससयणि पसुत्तउ सइं भरहु उग्गमिउ दिणाहिवु णहि भरहु ।
१० करि धरिउ सरासणु राणएण बहु विहरिउ मंडलराणएण ।
आरुहिवि रहंगि[4] ण संकियउ वइसाहठाणु सइं संकियउ ।
जो लोहवंतु परमग्गणउ सो गुणि संणिहियउ मग्गणउ ।
किं अच्छइ णवर उद्धु[5] गयउ हिमवंतकुमारहु णं गयउ ।

घत्ता—पडिउ सपंगणए[6] उप्पुंखु[7] बाणु अवलोइउ ॥
१५ चिंतिउ तेण मणे को एहउ कालें चोइउ ॥२॥

३

किं पाणि पसारिउ फणिमणिहे तडयडिहे णहि सोदामणिहे ।
दीहरजालामालाजलिउ पलयाणलु केण पडिक्खलिउ[1] ।
केसरिकेसरु उल्लूरियउ कालाणिलु[2] केण वियारियउ ।
किउ केण गरुडपक्खाहरणु भणु केण णिसुंभिउ जमकरणु ।
५ बलवट्टिउ भाणु पुरंदरहो किं सिहरु पलोट्टिउ मंदरहो ।
णियहत्थें णिम्मंथिउ[3] जलहि पडिकूलिउ केण हवंतु[4] विहि ।
दिट्ठीविसवयणु णिरिक्खियउ कें[5] हालाहलु विसु भक्खियउ ।
जगि केण भाणु णित्तेइयउ महु केण रोसु उप्पाइयउ ।
को पारु पराइउ णहयलहो को सुपहुत्तउ णियभुयबलहो ।
१० कि ण मरइ करवालेण हउ ण वियाणहुं किं सो वज्जमउ ।
सरु मज्झु वि केण विसज्जियउ खयडिंडमु[6] कासु पवज्जियउ ।

घत्ता—जेण विमुक्कु सरु[7] अइदीहु समाणु फणिंदहो ॥
सो महु मरइ रणे जइ पइसइ सरणु सुरिंदहो ॥३॥

---

२. १. P reads after this : मिहुणइं रमंति रत्तासयइं, अवराइं मि दिव्वइं आसयइं, णियपहणिज्जयदेवासयहि । २. MB read after this : मिहुणइं रमंति रत्तासयइं, णियपहणिज्जियदेवासयइं । ३. BP ससिहररयणियहि । ४. P रहंगि । ५. MBP उद्धगयउ । ६. M पपंगणए; B पसंगणए । ७ MB उप्पंखु ।

३. १. MBPK पडिखलिउ । २. MBP कालाणलु । ३. M णिमत्थिउ; BP णिम्मत्थिउ । ४. P हणतु । ५. MBP किं । ६. MBP खयडिंडिमु । ७. M विमुक्क सरु ।

गृह खड़े कर दिये गये। दोनों ओर उत्कीर्ण काष्ठोंसे युक्त अश्वशाला ऐसी मालूम होती थी मानो सुमुण्डित घटदासी हो। मणिमय मण्डपोंके घर स्थापित कर दिये गये, और भी दूसरे घर निर्मित कर दिये गये। दुर्वार वैरियोंके मदपर प्रहार करनेवाले अस्त्रोंको अधिष्ठित और भूषित कर दिया गया। अपने चन्द्रमारूपी चूड़ामणिको दिखानेवाली रात्रिमें उपवास स्वीकार कर स्वयं भरत कुशासन पर सो गया। सवेरे आकाशमें नक्षत्रोंको ढकनेवाला दिनाधिप उग आया। राजाने धनुष अपने हाथमे ले लिया, मण्डल राणाने खूब क्रीड़ा की। रथके अग्रभागपर चढ़ते हुए उसने शंका नही की। उसने स्वयं वैशाख-स्थान किया।[1] जो लोहवन्त (लोभ और लोहेसे युक्त) ऐसे उस मग्गण (बाण और याचक) को गुणि (डोरी / गुणी व्यक्ति) पर रख दिया गया। क्या वह रहता है, नही केवल वह ऊपर गया मानो हिमवन्त कुमारके पास गया हो।

घत्ता—अपने आँगनमे पड़े हुए पुंख सहित बाणको उसने देखा और अपने मनमे विचार किया यह कौन है जिसे कालने प्रेरित किया है? ॥२॥

३

क्या उसने नागमणिके लिए हाथ फैलाया है, या आकाशमे कड़कती हुई बिजलीके लिए? दीर्घ ज्वालमालाओसे प्रज्वलित प्रलयाग्निको किसने छेड़ा है? सिंहकी अयालको किसने उखाड़ा है? कालानलको किसने क्षुब्ध किया है? किसने गरुड़के पंखोंका अपहरण किया है? बताओ किसने जमकरणको नष्ट करना चाहा है? किसने देवेन्द्रका मान चूर-चूर किया है, क्या उसने मन्दराचलके शिखरको उलटाया है? किसने अपने हाथसे समुद्रका मन्थन किया है, होते हुए भाग्यको किसने प्रतिकूल कर लिया है? दृष्टि और विषमुख किसने देखा है? किसने हालाहल विष खाया है? विश्वमे सूर्यको निस्तेज किसने बनाया? मुझे किसने क्रोध उत्पन्न किया है? आकाशतलके पार कौन जा सका है? अपने बाहुबलके लिए अत्यन्त पर्याप्त कौन है? क्या वह तलवारसे आहत होकर भी नही मरता? हम नही जानते कि क्या वह वज्रमय है? मुझे किसने यह तीर विसर्जित किया? किसका क्षयका नगाड़ा बज उठा है?

घत्ता—जिसने नागेन्द्रके समान अति दीर्घ लम्बा तीर छोड़ा है वह युद्धमे मुझसे मरेगा, भले ही वह देवेन्द्रकी शरणमे चला जाये? ॥३॥

---

१. बाये पैर और घुटनेको धरतीपर रखकर, दूसरेके ऊपर उठाना वैशाख स्थान कहलाता है।

४

इय तेण गज्जियउं पुणु कज्जु सज्जियउं ।
पिंछेहिं पत्तियउ दित्तीइ दित्तीयउ ।
चित्तेण चित्तियउ मंतेण मंतियउ ।
हिययम्मि चिंतियउ राएण घत्तियउ ।
५ गंधेहिं चच्चियउ फुल्लेहिं अंचियउ ।
पुण्णेहिं संचियउ केण वि ण वंचियउ ।
हयवेरिसंताणु अवलोइओ बाणु ।
ता तम्मि लिहियाइं सुरणियरमहियाइं ।
णिज्जियदियंताइं परिछेयवंताइं ।
१० वाईसिअंगाइं छंदाणुलग्गाइं ।
बिंदुयहिं चप्पियइं मत्तावियप्पियइं ।
वेल्लीहिं वलियाइं अक्खरइं ललियाइं ।
गाढं विसिट्ठाइं सरसाइं मिट्ठाइं ।
इट्ठाइं दिट्ठाइं हियए पयट्ठाइं ।
१५ अरिसीहसरहस्स आणाइ भरहस्स ।
जो जियइ सो जियइ इयरस्स खयणियइ ।
अइरेण अवयरइ वइवसु वि ध्रुवु मरइ ।
पुणु पुणु वि जोएवि इय तेण वाएवि ।
सह समियसमरेहिं अवरहिं मि अमरेहिं ।

२० घत्ता—दिट्ठउ चक्कवइ चमरहिं चामीयरदंडहिं ॥
रयणहिं मोत्तियहिं पणवंतें णियसुयदंडहिं ॥४॥

५

णरणाहें रयणहिं पुज्जियउ हिमवंतु कुमारु विसज्जियउ ।
सो किंकरत्तु मणि धरिवि गउ राणउ पुणु तिहुयणलद्धजउ ।
हरिसहसुभीमगुहाहरहो सइं आइउ वसहमहीहरहो ।
दीसइ गिरिमेहलघुलियघणु णं धरणिहि केरउ एक्कु थणु ।
५ णिज्झरजलदुद्धपवाहधरु णिरु णाहलडिंभहुं सोक्खयरु ।
रइगारउ णावइ कुसुमसरु मयवंतु णाइ कुपुरिसपसरु ।
रसवंतु णाइं णच्चणु पवरु बहुणावालंकिउ बहुविवरु ।
बहुविद्दुमोहु णं मयरहरु बहुफलपयासि णं पुण्णभरु ।
बहुकंकणु णं महिसंहिलियरु बहुओसहिल्लु णं भिसयवरु ।

४. १ MK चिंतियउ । २. M अच्चियउ । ३. MP परिच्छेयवत्ताइं । ४. MBP पइट्ठाइं । ५ MBP धुउ । ६. MBP अवरेंहि । ७. MBP पणवंतहिं ।

५ १. MBP हिमवतं° । २ B किं करंतु । ३. MBP आयउ । ४ M एक्क । ५ MBP णच्चण° ।
६. MBP महिलयरु ।

४

उसने इस प्रकार गर्जना की और फिर अपना काम सम्हाला। उसने वैरी परम्पराका अन्त करनेवाले बाणको देखा, जो पुंखोंसे पत्रित, दीप्तिसे दीप्त, चित्रसे चित्रित और मन्त्रसे मन्त्रित था, जो हृदयमें सोचा गया और राजा (भरत) के द्वारा छोड़ा गया था। गन्धसे चर्चित, फूलोंसे अंचित और पुण्योंसे संचित उसे कोई नही बांच सका। तब उसमे लिखे हुए सूरसमूहके द्वारा महनीय, दिग्गजोंको जीतनेवाले निर्णायक वागेश्वरी देवीके अंगस्वरूप छन्दोंमे रचित, बिन्दुओंसे युक्त मात्राओंसे रचित, पंक्तियोंमे मुड़े हुए सुन्दर, सघन रूपसे लिखे गये सरस और मीठे और इष्ट, सुन्दर अक्षरोंको उसने देखा। वे हृदयमे प्रवेश कर गये। "शत्रुरूपी सरभके लिए सिंहके समान भरतकी आज्ञासे जो जीता है वही जीता है, दूसरेका क्षयकाल शीघ्र आ जाता है, यम भी निश्चित रूपसे मरता है।" बार-बार उस पत्रको देखकर और इस प्रकार उसे पढ़कर युद्धको शान्त करनेवाले दूसरे देवोंके साथ—

घत्ता—चामरों, स्वर्णदण्डों, रत्नों, मोतियोंके द्वारा और अपने भुजदण्डोंसे प्रणाम करते हुए उसने चक्रवर्तीसे भेंट की ॥४॥

५

राजाने रत्नोंसे पूजा कर हिमवन्त कुमारको विसर्जित कर दिया। वह दासता स्वीकार कर चला गया। त्रिभुवनमे जय प्राप्त करनेवाला राजा भरत सिंहकी गर्जनासे भयंकर गुहारूपी घरवाले वृषभ महीधरके निकट आया। पहाड़की मेखलासे व्याप्त घन ऐसा दिखाई देता है, मानो धरतीका एक स्तन हो। निर्झरके जलरूपी दूधके प्रवाहको धारण करनेवाला जो भीलोंके बच्चोंके लिए अत्यन्त सुखकर है, कामदेवके समान रतिकारक है, कुपुरुषके प्रसारके समान मदवाला है, प्रवर नृत्यके समान रसमय है, बहुत-से नामोंसे अलंकृत बहुविवर (बहुछिद्रवाला, बहुत श्रेष्ठ पक्षियोंवाला) है। जो मानो बहुविद्रुमोघ (प्रवालौघ, विशिष्ट द्रुमौघ) वाला समुद्र है, जो मानो बहुपुण्य प्रकाशित करनेवाला पुण्यका भार है, मानो अनेक कंकणवाला धरतीरूपी महिलाका

१० हरिसेविउ णं जिणु परमपरु ।
करिदसणमुसलणिब्भिण्णतणु णं को वि महाभडु रइयरणु ।
सुरदाणवरमणीप्राणपिउ णं णिवजससासणखंभु थिउ ।
घत्ता—तहु महिहरउ तडु पच्छाइउ चउहुं मि पासहिं ।
णरलिहियक्खरहिं गयपत्थिवणामसहासहिं ॥५॥

६

जहिं दीसइ तहिं अक्खरसहिउ मोक्खु व गिरिंदु मुणिगणसहिउ ।
चिंतइ भरहाहिउ बहुगुणउ कहिं णामु लिहिज्जइ महु तणउ ।
अण्णण्णहिं रायहिं भुत्तियइ इह एयइ वसुमइधुत्तियइ ।
बोलाविय के के णउ णिवइ मोहंधहु मुज्झइ तो वि मइ ।
५ धण्णउ परमेसरु एक्कु पर जो हुउ पव्वइयउ मुएवि घर ।
बहुणरवइकरयललालियइ हउं विणडिउ सिरिपुण्णालियइ ।
सत्तंगरज्जभारेण हय मयमइरइ मत्ती मुच्छ गय ।
धारागलंतलीलावयहिं अहिसिंचिय मंगलघडसयहिं ।
जा विज्जिय चलचमरहिं जियइ जा छत्तें छाइय णउ णियइ ।
१० असिवाणियकक्कसत्तु महइ अंकुससंगें वंकिम वहइ ।
चवलत्तणु कुलधयवडवरहो गुणु मेल्लिवि गमणु पासि सरहो ।
सिक्खियउ जाइ तहि गोमिणिहि आसत्तपुरिस णरयावणिहि ।
णिवडंति महंत वि झत्ति किह वारिहि करिणीरय पीलु जिह ।
घत्ता—ताएं भुत्त चिरु पुणु पुत्तें सहुं सुहुं अच्छइ ।
१५ वसुमइ झेंदुलिय जगि केण वि समउ ण गच्छइ ॥६॥

७

णक्खहु वि ण लब्भइ यत्ति जहिं किं णाउं लिहिज्जइ एत्थु तहिं ।
मइं जेहा पत्थिव को गणइ जे जे गय ते पुरोहु भणइ ।
परमेस महायणु जेण गउ सो पंथु जयम्मि ण केण कउ ।
परु फेडवि जिह चेप्पइ पुहइ तिह णामु वि फेडिज्जइ णिवइ ।
५ ता बालमरालीलगइणा वीलामलमलिणेण वि पइणा ।
राएं रायहु ओहारियउ अण्णहु कासु वि उत्तारियउ ।
करकागणिरेहादावियउ णियणाउं गिरिंदि चडावियउ ।
रिसहहु रइरमणखयंकरहो हउं पुत्तु पढमतित्थंकरहो ।

---

७. MBP °पाणपिउ ।

६. १. MBP हय । २. MB °रज्जहारेण । ३ MBP असिपाणिय° । ४. MBP °वडघरहो । ५. MBP परहो । ६. MP आसत्तु पुरिसु; B आसत्तपुरिसु । ७. MBPT झिंदुलिय ।

७ १. P किउ । २ MB °मलिणाणण वि पइणा; P °मलिणाणणपइणा । ३. MBP णियणामु । ४. MB पदमु ।

हाथ है, जो मानो वैद्यकी तरह कई औषधियोंवाला है। जो मानो हरि सेवित (देवेन्द्र और सिंह) जिनवर हो। हाथियोंके दांतोंके मूसलोंसे आहत शरीर जो मानो कोई युद्ध करनेवाला महासुभट हो। देव, दानव और मनुष्योंकी पत्नियोंके लिए प्राणप्रिय जो मानो जिनवरके शासनका स्तम्भ स्थित हो।

घत्ता—उस महीधरका तट चारों ओरसे मनुष्योंके द्वारा लिखे गये अक्षरों और विगत राजाओंके हजारों नामोंसे आच्छादित था ॥५॥

६

जहाँ दिखाई देता है वहाँ अक्षर सहित है, वह पर्वत मोक्षकी तरह मुनिगणके द्वारा पूज्य है। बहुगुणी भरत अपने मनमें सोचता है कि मेरा नाम कहाँ लिखा जाये ? दूसरे-दूसरे राजाओंके द्वारा भोगी गयी इस धूर्त धरतीके द्वारा कौन-कौन राजा अतिक्रमित (त्यक्त) नहीं हुए ? तब भी मोहान्ध मेरी मति मूर्छित होती है ? केवल एक परमात्मा धन्य हैं जो धरती छोड़कर प्रव्रजित हुए। अनेक राजाओंके हाथोंसे खिलायी गयी इस लक्ष्मीरूपी वेश्यासे मैं प्रवंचित किया गया। सप्तांग राज्यभारसे यह आहत है, मदरूपी मदिरासे मत्त और मूर्छाको प्राप्त है। धाराओंमें गिरते लीलारूपी जलोंवाले सैकड़ों मंगल घटोंसे अभिसिंचित है, जो चंचल चमरोंके द्वारा हवा की जाती हुई जीवित रहती है, जो छत्रोंसे आच्छादित होनेके कारण नहीं देख पाती, तलवारके जलकी कर्कशताको महत्त्व देती है। अंकुशके साथ टेढ़ी चलती है, कुलध्वजोंके श्रेष्ठ पदोंकी जो चंचलताको धारण करती है, और जो गुण छोड़कर दूसरेके पास जाती है। शिक्षित भी पुरुष इस धरतीमें आसक्त होकर नरकभूमिमें जाता है। बड़े-बड़े लोग भी शीघ्र किस प्रकार गिर पड़ते हैं जिस प्रकार हथिनीमें अनुरक्त हाथी गड्ढेमें गिर पड़ता है।

घत्ता—पिताके द्वारा बहुत समय तक भोगी गयी, यह फिर पुत्रके साथ सुखपूर्वक रहती है। यह धरती वेश्याके समान किसीके भी साथ नहीं जाती ॥६॥

७

जहाँ एक नखके लिए भी स्थान नहीं है, वहाँ यहाँ मैं अपना नाम कहाँ लिखूँ ? मेरे-जैसे राजाको कौन गिनेगा, जो-जो राजा जा चुके हैं, उन्हें पुरोहित कहता है ? जिस रास्ते परमेश्वर महाजन (ऋषभ) गये हैं, जगमें उस मार्गका अनुसरण किसीने नहीं किया। दूसरेको नष्ट कर जिस प्रकार धरती ग्रहण की जाती है हे राजन्, उसी प्रकार नाम भी मिटाया जाता है। तब बालहंसके समान लीलागतिवाले तथा लज्जारूपी मलसे मलिन स्वामी राजाने किसी राजाकी अवधारणा अपने मनमें की और किसी दूसरे राजाका नाम उतार दिया (मिटा दिया), तथा हाथके कागणी मणिकी रेखासे प्रदीप्त अपना नाम पहाड़पर चढ़वा दिया कि "मैं कामका क्षय

णामेण भरहु भरहाहिवइ बोल्लउ परु महियलि अत्थि जइ।
१० हिमवंतजलहिपेरंत सइं छक्खंड वि णिज्जिय वसुह मइं।
ता तियसहिं साहुक्कारियउ भरहेसरु जयजयकारियउ।
पइं जेहउ को वि ण चक्कवइ को एम ससंकि णाउं थवइ।
केहु अग्गइ धावइ कमलकरि कमलालव कमलाणणिय सिरि।
दोलिद्दहारि किर कासु वसु जिजगत्तंगामि किर कासु जसु।
१५ असि कासु वइरिविद्धंसयरु पइं मेल्लिवि को किर कप्पयरु।
पइं मेल्लिवि णाणहु कवणु घरु परमप्पु कासु देउ पियरु।
घत्ता—रूवें विक्कमेण गोत्तें वलेण[10] [11]णयजुयत्त॥
तुज्झु समाणु तुहुं किं अण्णें माणुसमेत्तें॥७॥

८

सरवरजलकीलियसारसयं दरिसावियचंपयसारसयं।
काणणपरिहिंडियकुंजरयं गयणंगणविगयणिकुंजरयं।
फलभारोणयसुरतरुविडवं रइयरेणिलयहिं खेयरविडवं।
ओसहिओसारियविसहरयं वणसुरहिसमीहियविसहरयं।
५ मोत्तूणं तममलं धरणिहरं सधयं सेण्णं परंधरणिहरं।
चलियं सह पहुणा पउरहयं सारहिकरकसचोइयरहयं।
अहिमाणवंतु णीसंकमइ पुव्वदिसभाएं संकमइ।
हिमवंततलेण जि चिक्कमइ दियहेहिं जंतु वसुहं कमइ।
गोगहहहरिकरिमहिसयल अवठंभिवि रुंभिवि महि सयल।
१० णियवइहि णिहालिवि चंदबलु मंदाइणिपुलिणइ थियउ बलु।
जगसंसियअसिधारासियहिं अणुयहिं णिवखंधारासियहिं।
घत्ता—दीसइ पंडुरउ हिमवंतसिहरि सिंगग्गउं॥
णं भरहहु तणउं जसविलसिउं सग्गि विलग्गउं॥८॥

९

ससिरयणमए परिभमियमए।
उववणगहिरे घणविहुरहरे।
खगणियरहरे सुरसरिसिहरे।
णिवसइ गुणिणी अमरवइरमणी।

---

५. P वहुअग्गइ। ६. M दारिद्दहरि। ७. MBP तिजगंत°। ८. MBP वइरिवीरंतयरु। ९. MBP परमप्पु। १०. MB कुलेण। ११ MBP णयजुत्तें।

८. १. MBPT °णिलएहिं। २. MP add after this : सिंगग्गवत्तु धुयविसहरयं, जं सहइ चक्कि-जसविसहरयं; सइं सेवियविसहरसेहरयं, महिवहुसिरि णं मणिसेहरयं B adds after this : सइं सेवियविसहरसेहरय, सिंगग्गवत्तु धुयविसहरयं; जं सहइ चक्किजसविसहरयं, महिवहुसिरि णं मणिसेहरयं। ३. MBP मोत्तूण तलमलधरणिहरं। ४. MP परयरणिहरं। ५ MBP मणुयहिं।

९. १ MK यमरवररमणी but T अमरवइरमणी।

करनेवाले प्रथम तीर्थंकर ऋषभ जिनका पुत्र हूँ, नामसे भी भरत, जो धरतीतलपर श्रेष्ठ भरताधिपति कहा जाता है, और मैंने हिमवन्त समुद्र पर्यन्त छह खण्ड धरतीको स्वयं जीता है।" तब देवोंने साधुकार किया और भरतका जयजयकार किया कि तुम्हारे समान कोई चक्रवर्ती नही है, कौन इस प्रकार चन्द्रमामें अपना नाम अंकित करता है, कमल हाथमें लिये कमलमे निवास करनेवाली और कमलमुखी लक्ष्मी किसके आगे-आगे दौड़ती है? किसका धन दारिद्र्यका अपहरण करनेवाला है? किसका यश त्रिलोकगामी है? किसकी तलवार शत्रुका ध्वंस करनेवाली है? तुम्हे छोड़कर कौन कल्पवृक्ष है? तुम्हे छोड़कर ज्ञानका घर कौन है?' और किसका पिता परमात्मा देव है?

घत्ता—रूप, विक्रम, गोत्र, बल और न्याय-युक्तिमें तुम तुम्हारे समान हो दूसरे मनुष्य मात्रसे क्या? ॥७॥

८

जिसमें (पर्वतमे) सारस सरोवरोंमें क्रीड़ा कर रहे हैं, चम्पक वृक्षोंकी लक्ष्मी दिखाई दे रही है, काननमें गज परिभ्रमण कर रहे है, कुंजोंका पराग आकाशके आँगनमे छा गया है, कल्पवृक्ष फलोंके भारसे नत हो गये है, सुखकर लतागृहोंमे विद्याधर विट हैं, औषधियोसे नाग हटा दिये गये है, वन सुरभियाँ (गाये) वृषभरतिको चाह रही हैं, ऐसे उस स्वच्छ पर्वतको छोड़कर, ध्वज सहित दूसरोकी धरती छीननेवाली, प्रचुर अश्वोंवाली और सारथियोंके द्वारा हाँके गये रथोंसे युक्त सेना अपने प्रभुके साथ चली। अभिमानी और निःशंक मति वह पूर्व दिशाकी ओर प्रस्थान करता है। वह हिमवन्तके तलभागसे जाता है। और जाते हुए कुछ ही दिनोंमें धरतीका अतिक्रमण कर जाता है। जिसमे गौ, गर्दभ, गज और महिषदल हैं, ऐसी समस्त भूमिका आश्रय लेकर और रौंधकर सैन्य अपने स्वामीका चन्द्रबल देखकर मन्दाकिनी नदीके किनारे ठहर गया। विश्वमें प्रसिद्ध तलवारोंकी धाराओके समान निर्मल राजाकी छावनियोमे स्थित अनुगामी सैनिकोसे—

घत्ता—हिमवन्त पहाड़के शिखरका सफेद अग्रभाग ऐसा दिखाई देता है मानो भरतका स्वर्गमें लगा हुआ यशविलास हो ॥८॥

९

जो चन्द्रकान्त मणियोसे युक्त है, जिसमे पशु विचरण करते हैं, जो उपवनोंसे गम्भीर है, जिसमे बादलोसे रहित घर हैं, जो पक्षि-कुलको धारण करती है, ऐसी गंगाके शिखरपर गुणी

५ चलहारमणी जणमणदमणी ।
छणससिवयणा कुवलयणयणा ।
वरगयगमणा कयजिणण्हवणा ।
पविउलरमणा पीवरसिहिणा[2] ।
पंकयचलणा[3] सिरकयसुमणा ।
१० पसरियपुलया वणसुरकुलया ।
विरइयतिलया मणसियणिलया ।
णरणियपया चलमयरधया ।
मुणिमइविमला हिमकरधवला ।

घत्ता—गंगा णाम सइ सुरसुंदरि णयणपियारी ।
रूवें जोव्वणेण देवाहं मि विम्हयगारी[4] ॥९॥
१५

१०

णरवइचरियं गुणविप्फुरियं
हियए[1] धरियं चलिया तुरियं ।
तिवलितरंगा देवी गंगा ।
णिवसासीवं पीणियभावं ।
५ पत्ता धीरा सालंकारा ।
सुवणपसत्था मंगलहत्था ।
दुत्थियमित्तो परहियजुत्तो ।
जगगुरुपुत्तो पंकयणेत्तो ।
चत्तमसत्तो गुरुयणभत्तो[2] ।
१० जायविवेओ भावियभेओ ।
ढोइयदाणो कयसंमाणो ।
खलकुलचंडो दावियदंडो ।
भासियसामो ससिरविधामो ।
रामाकामो पायडणामो ।
१५ हयसिरिविरहो दिट्ठो भरहो ।
भत्तिभराए कुसुमकराए ।
थोत्तगिराए णवियसिराए ।
दिण्णासीए पुणरवि तीए ।

घत्ता—वरुणदिसासियहो णं पुण्णिमाइ ससिकंदहो ।
अमयभरिउ कलसु पल्हत्थिउ सीसि णरिंदहो ॥१०॥
२०

२. K omits पीवरसिहिणा । ३ K omits पंकयचलणा । ४. MBP विंभय° ।

१० १. MBP हियवइ । २. K गुणयणभत्तो ।

इन्द्राणी निवास करती है। चंचल हारमणिवाली जो लोगोके मनका दमन करनेवाली है। पूर्णिमाके चन्द्रमाके समान मुखवाली जो कमलनयनी है। उत्तम गजके समान चलनेवाली, जिनेन्द्र भगवान्‌का अभिषेक करनेवाली, अत्यन्त सुन्दरी स्थूल स्तनोवाली, कमलोंके समान चरणवाली, सिरमे फूल गूँथनेवाली, प्रसरित पुलकवाली, व्यन्तरकुलमे उत्पन्न हुई, तिलककी रचनावाली, कामदेवकी घर, जिसके चरणोंपर नर नत है, ऐसी चचल मकरध्वजवाली, मुनियोकी बुद्धिके समान पवित्र हिम-किरणोकी तरह धवल—

घत्ता—गंगा नामकी नेत्रोको प्यारी लगनेवाली सती सुरसुन्दरी थी, जिसने अपने रूप और यौवनसे देवोको आश्चर्यमे डाल दिया था ॥९॥

१०

नरपतिके गुणोसे विस्फुरित चरितको हृदयमे धारण कर, त्रिवली तरंगोवाली देवी गगा तुरन्त चली। सालंकार धीर भुवनमे विख्यात मंगल हाथमे लेकर वह प्रीतिभावसे राजाके समीप पहुँची। दुःस्थितोके मित्र, परकल्याणसे युक्त विश्वगुरुके पुत्र, कमलनयन, उत्तम सत्त्ववाले, गुरुजनोके भक्त, विवेकशील, भेदको जाननेवाले, दानकर्ता, संग्राम करनेवाले, दुष्टकुलके लिए प्रचण्ड, दण्डका प्रदर्शन करनेवाले, कान्ति और लक्ष्मीके स्वामी, रमणियोके द्वारा काम्य, प्रकट-नाम, लज्जाकी श्रीसे रहित भरतको उसने देखा। फिर भक्तिसे भरी हुई कुसुम हाथमे लिये हुए, स्तोत्रोंकी वाणीमें प्रणाम करते हुए, आशीर्वाद देते हुए उस स्त्रीने—

घत्ता—राजाके सिरपर अमृतसे भरा हुआ कलश इस प्रकार उड़ेल दिया मानो पश्चिम दिशामे स्थित चन्द्रमापर पूर्णिमाने कलश उड़ेल दिया हो ॥१०॥

११

कडचल्लउ कडयाणंदु करे कर मउलिवि मंउलु वि णिहिउ सिरे ।
सणहारु हारु णीहारणिहु उरबंधु बंधु माणिक्कसिहु ।
हिमवंतसिहरसिहरेसरिए दिण्णउ देविइ सुरवरसरिए ।
जिह बंभसुत्तु तिह बंभसुए ण सहइ परम्मि आयारचुए ।
रसणा महुरसणा घंटियहिं मालौ अलिमालारुंटियहिं ।
सोहंती दिण्णी णरवइहि उल्लंघियचउसायरवइहि ।
पंतीउ विइण्णउ सुरयणहं रंजिउ हियवल्लउ सुरयणहं ।
छत्तइं सयवत्तइं सिरिलयहे वत्थइं णेवत्थइं भणमि तहे ।

घत्ता—इय गेण्हिवि विवेण मणहरमरालल्लीलागइ ।
पुज्जिवि पट्ठविय णियभवणु गय गंगाणइ ॥११॥ १५

१२

पहु विजयलच्छिआलिंगियउ भणु केण ण दंसणु मग्गियउ ।
सुरसरि साहेप्पिणु णीसरइ बलु दिण्णदाणु कयणीसरइ ।
सरितीरेण जि पुणु संचरइ हा हरिणवंदु तहिं किं चरइ ।
जहिं धूलि होंति गिरि तरुवर वि उल्ललियरओहें रहिउ रवि ।
सरि छज्जइ उग्गयपंकयहिं बलु छज्जइ चिंतछत्तसयहिं । ५
सरि छज्जइ हंसहिं जलयरहिं बलु छज्जइ धवलहिं चामरहिं ।
सरि छज्जइ संचरंतझसहिं बलु छज्जइ करवालहिं झसहिं ।
सरि छज्जइ चक्कहिं संगयहिं बलु छज्जइ रहचक्कहिं गयहिं ।
सरि छज्जइ सरतरंगभरहिं बलु छज्जइ जलतुरंगवरहिं ।
सरि छज्जइ कीलियजलकरिहिं बलु छज्जइ चल्लियमयकरिहि । १०
सरि छज्जइ बहुजलमाणुसहिं बलु छज्जइ किंकरमाणुसहिं ।
सरि छज्जइ सयडहिं सोहियहिं बलु छज्जइ सयडहिं वाहियहिं ।

घत्ता—जिह जलवाहिणिय तिह महिवइवाहिणि सोहइ ॥
महिहरसेयणिहिं एयहिं किं किर को णउ बीहइ ॥१२॥

११. १. MBP कडयाणंद । २. B मउलिवि । ३. MB मणहारा । ४. MB °सिहरसिहरे° । ५. B मालइ । ६. B पत्तीउ ।

१२. १. MBP °आलिंगियउ । २. MBP दिण्णदाण । ३. MBP हरिणविंदु किं तहिं । ४. MBP गय । ५. MBP किवछत्त° । ६. M चक्कहिं हंसगयहिं । ७. P °तरंगतरहिं, but gloss तरङ्गसमूहैः । ८. M adds after this : बलु छज्जइ कीलियजलकरिहिं, which obviously is the scribe's mistake. ९. MB किं किर । १०. MBP णिवइ° । ११. M महिहरभोयणिहिं । १२. MBP एयहं किर ।

११

सैन्यको आनन्द देनेवाला कड़ा हाथमे, और हाथ जोडकर सिरपर मुकुट रख दिया। नीहारके समान सुन्दर हार और माणिक्योंका ब्रह्मसूत्र हिमवन्त पर्वतकी शिखरेश्वरी देवी गंगा नदीने दिया। जिस प्रकार ब्रह्मसूत्र ब्रह्मपुत्रको शोभा देता है, आचारसे च्युत दूसरे आदमीको शोभित नही होता। दी गयी क्षुद्रघण्टिकाओसे गूँजती हुई करधनी, भ्रमरमालासे निनादित सुमन-माला, चारों समुद्रपतियोका अतिक्रमण करनेवाले राजाको शोभा देती है। देवरत्नोकी मालाएँ दी गयी। देवजनोके हृदय प्रसन्न हो गये। कमल ही उस लक्ष्मीलता गंगाके छत्र, वेष और वस्त्र थे।

घत्ता--इस प्रकार उन्हे ग्रहण कर राजाने सुन्दर हंसके समान चालवाली गंगानदीकी पूजा कर उसे भेज दिया, वह अपने घर चली गयी ॥११॥

१२

विजयरूपी लक्ष्मीसे आलिंगित उस स्वामीका दर्शन बताओ किस-किसने नही माँगा। गंगानदीको प्रसन्न कर दरिद्रोसे प्रेम करनेवाला और दान देनेवाला सैन्य वहाँसे कूच करता है। हरिणसमूह वहाँ क्या चर सकता है, कि जहाँ वृक्ष और पेड़ धूल हो जाते हैं, उछलती हुई धूलसे सूर्य ढक गया है। उगे हुए कमलोसे नदी शोभा पाती है और सेना रंग-बिरंगे सैकड़ो छत्रोसे। नदी, हंसों और जलचरोसे शोभा पाती है, और सेना धवल चमरोसे। नदी शोभित है, तैरती हुई मछलियोंसे, और सेना शोभित है तलवारों तथा झस अस्त्रोसे। नदी शोभित है संगत जलावर्तोसे, सेना शोभित है रथचक्रो और गजोसे। नदी शोभित है स्वरों और तरंगोंके भारसे, सेना शोभित है श्रेष्ठ जल तुरंगोसे। नदी शोभित है क्रीड़ा करते हुए जलगजोसे, सेना शोभित है चलते हुए मैगल गजोसे। नदी शोभित है बहु जलमानुसोसे, सेना शोभित है किन्नर मानुसोसे। नदी अपने तटोंसे शोभित है, सेना शोभित है चलाये हुए शकटोसे।

घत्ता—जिस प्रकार जलवाहिनी (नदी) शोभित है, उसी प्रकार महीपतिवाहिनी (राजाकी सेना) शोभित है। महीधरों (पर्वतों) का भेदन करनेवाली इन दोनोसे कहाँ कौन नही डरता ? ॥१२॥

१३

अक्खिउ णिग्गमणपवेसु जहिं पत्तउ णरणाहु दिणेहिं तहिं।
वेयड्ढगिरिंदहु पच्छिमहे जिह आसि तिमीसहि दुग्गमहे।
मृगसग्गलग्गअलियक्लियहि कंदयगुहाहि पुव्विल्लियहि।
तहिं णियडउ सेण्णु णिसण्णु किह ण विलग्गइ गिरिकुहरुम्ह जिह।
५ णिहिणाहें भणिउ वलाहिवइ तुहु जोग्गउ पेसणु दिण्णु लइ।
हणु दंडें पुणु वि कवाडु तिह विहडेप्पिणु वचइ झत्ति जिह।
पचंतु पसाहिवि एहि लहुं जज्जाहि तुरयसेण्णेण सहुं।
छम्मास वसेवउ एत्थु मइं जाएसमि पडिआएण पइं।
असिजलधाराधुयजसवडेण ता चमुपमुहेण महाभडेण।

१० घत्ता—पुव्वकमेण पुणु हरिरयण चडेवि पयंडे ॥
आरूसिवि हयउ गिरिगुहकवाडु पविदंडें ॥१३॥

१४

जिणदंसणि जिह दुक्कियपडलु जिह दिवसयरुग्गमि तिमिरमलु।
जिह सुद्धसहावें मयणसरु जिह पिसुणें दूसिउ णेहभरु।
सुकइंदसमागमि कुकइ जिह विहडिउ कवाडु फुडु झत्ति तिह।
तहिं सद्दु भीमु जो णीहरिउ तहु भइयइ को वि ण थरहरिउ।
५ तेत्थु जि सिहरत्थलि रइयपुरु सिरिणट्टमालि णामेण सुरु।
पडिहारें रायहु दरिसियउ कमकमलालोयणहरिसियउ।
वलवइणा साहिय मेच्छमहिं वसि हूई तहु जयलच्छिसहिं।
आवेवि णमंसिय पहुहि पय तहिं णिवसंतहुं छम्मास गय।

घत्ता—ण वर गुहाकुहरु णरवइगइजोग्गउ जायउ ॥
१० सव्वहं सीयलउ णं दीसइ कज्जु परायउ ॥१४॥

१५

ता मंतिहिं गुज्झें ण रक्खियउ परमप्पयतणयहु अक्खियउ।
तुह माउयाहि मंथरगइहि ते दोण्णि वि भायर जसवइहि।
णामें णमि विणमि कुमारवर गंभीर धीर रणभारधर।
णहयरवइ हूया अवियलहे णिवसंति एत्थु गिरिमेहलहे।
५ हल्लियसाहाफुल्लियवणइं पण्णास सट्ठि खगपट्टणइं।

१३. १. M णिग्गमणु। २. MBP मिग°। ३. MBPK तिह। ४. MB °कुहरुंभ; P कुहरुंभ; K कुहरुम्ह।
५. MBP पुव्वकवाडु। ६. P जाजाहि। ७. MBP तुरिय सेण्णेण। ८. MBP हरिरयणि।
१४. १. MBP णीसरिउ। २. MBP को व ण। ३. MBP °लोयणि। ४. MBP णिवसंतहिं। ५ P °जोग्गा।
१५. १. MBP गुज्झु।

१३

जहाँपर निर्गम प्रवेश कहा जाता है, कुछ दिनोंमें राजा वहाँ पहुँचा। विजयार्ध पर्वतकी दुर्गम पश्चिम दिशामें जहाँ तिमीस गुहा थी। मृगोंके मार्गमें लगे हुए हैं व्याघ्र जिसमें ऐसी पूर्वकी कंडय गुहाके निकट सैन्य इस प्रकार ठहर गया, मानो जैसे गिरिकुहरकी ऊष्मा हो। निधियोंके स्वामीने सेनापतिसे कहा—"लो तुम्हारे योग्य आदेश दे रहा हूँ, दण्डरत्नसे किवाड़को फिर इस प्रकार आहत करो जिससे वह खुलकर रह जाय। तुंग सेनाके साथ शीघ्र जाओ और इस प्रत्यन्त देशको सिद्ध कर शीघ्र आओ। मैं यहाँ छह माह रहूँगा और तुम्हारे लौटनेपर जाऊँगा।" तब असिधाराके जलसे अपने यशरूपी वस्त्रको धोनेवाले सेनाप्रमुख महायोद्धाने—

घत्ता—पूर्व क्रमके अनुसार अश्वरत्नपर चढ़कर और क्रुद्ध होकर वज्रदण्डसे गिरिगुहाके किवाड़को आहत किया ॥१३॥

१४

जिस प्रकार जिन भगवान्‌के दर्शनसे पापपटल, जिस प्रकार सूर्यके उद्‌गमसे अन्धकार-मल, जिस प्रकार शुद्ध स्वभावसे काम, जिस प्रकार दुष्टतासे स्नेहभार दूषित होता है, जिस प्रकार सुकवीन्द्रके समागमसे कुकवि विघटित हो जाता है, उसी प्रकार शीघ्र वह किवाड़ विघटित हो गया। वहाँ जो भयंकर शब्द हुआ उसके भयसे कौन नहीं थर्रा उठा? वहीं शिखरस्थल पर श्रीनृत्यमाल नामका देव अपना घर बनाकर रहता था। प्रतिहारने उसे राजाको दिखाया, वह चरणकमलोंको देखकर प्रसन्न हो गया। सेनापतिने म्लेच्छ धरती सिद्ध कर ली और उसे विजय-लक्ष्मीकी सहेली सिद्ध हो गयी। आकर उसने प्रभुके चरणोंमें नमस्कार किया। वहाँ रहते हुए भरतके छह माह बीत गये।

घत्ता—लेकिन वह गुहाकुहर राजाके जानेके योग्य नहीं हो सका। उसे सब कुछ शीतल दिखाई दिया, जैसे पराया कार्य हो ॥१४॥

१५

तब मन्त्रियोंने राजासे कुछ भी छिपाकर नहीं रखा और परमात्मा (ऋषभ) के पुत्र (भरत) से कहा, "तुम्हारी मन्थरगतिवाली माता यशोवतीके वे दो भाई हैं, कुमारवर, नामसे नमि और विनमि, धीर-वीर और युद्धभार उठाने... वे इस अविचल गिरिमेखला (पर्वत-

उद्दामहं गामहं तेत्तियउ कोडिउ धरणेण विहत्तियउ।
भुंजंति रसंति गमंति दिणु पणवंति तुहारउ जणणु जिणु।
तं णिसुणिवि भूसियसमरधुर पहुणा पेसिय गणबद्ध सुर।
गय तेहिं भणिय खयराहिवइ छक्खंडमंडलावणिविजइ।
१० महियलि उप्पण्णउ चक्कवइ जो रिसहणाहु भुवणाहिवइ।
तहु पुत्तु भरहु लहु अणुसरहो अहिमाणु मडप्फरु परिहरहो।

घत्ता—पत्थिववित्ति जइ णउ सयणवित्ति पडिवज्जइ॥
गुरुहुं सडिंभहं[2] मि दोसिल्लहं दंडु पउंजइ॥१५॥

१६

तो[1] बंधुणेहभउ भावियउ खयरिंदहिं कज्जु विहावियउ।
हियउल्लउ धीरु वि कंपियउ पणएण णएण पयंपियउ।
तणुतेयपूरपिंगलियणहु जिह देवदेउ तिह पुणु भरहु।
अम्हहं आराहणिज्जु हवइ भणु तवणहु उप्परि को तवइ।
५ भणु जलणहु उप्परि को जलइ भणु पवणहु उप्परि को चलइ।
भणु मोक्खहु उप्परि कवण गइ भणु भरहहु उप्परि को णिवइ[2]।
इय घोसिवि ताइं विसज्जियइं आयइं अमरउलइं पुज्जियइं।
तूरइं गुरुरवइं वियंभियइं कुलचिंधसयाइं समुब्भियइं।
चोइय हरिकरिवरसंदणइं[3] आहूयइं णियणियपरियणइं।
१० खणि वे वि सहोयर णीहरिय[4] दिब्भित्तिचित्तजाणहिं[5] भरिय।

घत्ता—खेयरकिंकरहिं परिवारिय देव समाणहिं॥
जहिं णिवसइ णिवइ तहिं आइय रयणविमाणहिं[6]॥१६॥

१७

मउलियकरेहिं पणवियसिरेहिं पहु बोल्लिउ णमिविणमीसरेहिं।
अम्हारउ णिव कुलसामि तुहुं पइं दिट्ठइ णयणहं होइ सुहुं।
पइं दिट्ठइ आवइ[1] ओसरइ पइं दिट्ठइं घरि सिरि पइसरइ।
तुहु तायहु हयवम्मीसरहो आएसें परमजिणेसरहो।
५ चामीयरमणिणिम्मियघरइं अइरम्मइं खेयरपुरवरइं।
अहिराएं आसि विइण्णाइं जइ एवहिं पइं पडिवण्णाइं।
तो भुंजहुं णं तो तुहुं जि लइ[2] अम्हहं पुणु दइयंवरिय[3] गइ।
तं णिसुणिवि राएं भासियउ अप्पाणउं जं[4] ण विणासियउ।
महु[5] आणावयणु ण णिरसियउ तं तुम्हहिं चंगउ ववसियउ।

---

२. P सडिंभरहं।

१६ १. MBP ता। २. MBP णिवइ। ३. P दंसणइं। ४. MBP णीसरिय। ५. M दिहिभित्तिचित्त°; B दिहिचित्तिचित्त°; P दिब्भित्तिहि। ६. MBP अमरविमाणहिं।

१७ १. M आवय। २. MBP तुहुं मि लइ। ३. MB दईयंवरिय। ४. B णु। ५. B पहु°।

श्रेणी) के विद्याधरपति होकर रहते हैं। झुकी हुई शाखाओं और खिले हुए वनोंवाली यहाँ पचास साठ विद्याधर पट्टियाँ है। और वह उतने ही करोड़ उद्दाम गाँवोंको धारण करनेके कारण विभक्त हैं। वे (दोनो भाई) वहाँ भोग करते हैं, रहते हैं, दिन बिताते हैं और तुम्हारे पिता ऋषभ जिनको प्रणाम करते है।" यह सुनकर राजा भरतने युद्धकी धुरासे अलंकृत गणबद्ध सुर वहाँ भेजे। वे गये। और उन्होंने विद्याधरपतिसे कहा कि छह खण्ड भूमिमण्डलका विजेता चक्रवर्ती राजा भूमितलपर उत्पन्न हो गया है। और जो भुवनाधिपति ऋषभनाथ है, उसके पुत्र भरतका तुम शीघ्र अनुगमन करो, अभिमान और घमण्ड छोड़ दो।

घत्ता—यदि पार्थिववृत्ति नही, तो स्वजनवृत्ति स्वीकार कर लो, क्योंकि दोषी चाहे गुरु हों या अपने गोत्रवाले, वह दण्ड प्रयोग करता है ॥१५॥

१६

तव वे बन्धुके स्नेह और भयको समझ गये। विद्याधर राजाओंने अपना काम समझ लिया। उनका धीर हृदय भी काँप गया। उन्होंने प्रणय और न्यायसे निवेदन किया—"अपने शरीरके तेजके प्रवाहसे आकाशको पीला कर देनेवाले देवदेव ऋषभ जिस प्रकार है, उसी प्रकार भरत भी हम लोगोके लिए आराध्य हैं, बताओ सूर्यके ऊपर कौन तपता है ? बताओ आगके ऊपर कौन जलता है ? बताओ पवनके ऊपर कौन चलता है ? बताओ मोक्षके ऊपर कौन-सी गति है ? बताओ भरतके ऊपर कौन राजा है ?" यह घोषित करनेपर उसके द्वारा विसर्जित पूजनीय अमर-कुल आये, महाशब्दवाले नगाड़े बज उठे। सैकड़ों कुलचिह्न उठा लिये गये; अश्व, गज और रथ हाँक दिये गये। अपने-अपने परिजनोंको बुला लिया गया। शीघ्र ही वे दोनों भाई निकले, दिशारूपी दीवालोंके चित्रयानोंसे भरे हुए।

घत्ता—विद्याधरोंके अनुचरों, घिरे हुए अपने रत्नविमानोंसे मानवाले वे वहाँ आये, जहाँ राजा निवास कर रहा था ॥१६॥

१७

हाथ जोड़े हुए और सिरसे प्रणाम करते हुए नमि और विनमि राजाओंने राजासे कहा—हे नृप, आप हमारे कुल स्वामी है, आपको देखनेसे हमारी आँखोंको सुख मिलता है, आपको देखनेसे आपत्ति दूर हो जाती है, आपको देखनेसे लक्ष्मी घरमे प्रवेश करती है। कामदेवको नष्ट करनेवाले परम जिनेश्वर तुम्हारे पिताके आदेशसे स्वर्ण और मणियोसे निर्मित घरोंवाले अत्यन्त रमणीय विद्याधर-पुरवर, अत्यन्त स्नेहके कारण, हमे दिये गये थे, यदि इस समय आप इन्हें देते हैं तो हम इनका भोग करते हैं, नही तो आप ही इनको ले ले, हम फिर दिगम्बर दीक्षा ग्रहण करते हैं।" यह सुनकर राजा बोला, "जो तुमने अपनापन नष्ट नही किया, मेरे आज्ञावचनको नही

१०	जिह मउडुग्गयचूडामणिणा	चिरयालि महायरेण फणिणा।
	तिह एवहिं मइ वि समप्पियइं	पालहि खेयरणयरइं पियइं।

घत्ता—जिणवरणंदणहो बलवंतहु रिद्धिसणाहहो ॥
णमिविणमीसरेहिं पडिवण्ण सेव णरणाहहो ॥१७॥

१८

	रायहु कंपावियतिहुयणहो	पणवेप्पिणु गय सणिहेलणहो।
	ते बंधव सिरिधव पट्ठविवि	रणधीरइं वइरइं णिट्ठविवि।
	संचल्लइ डोल्लइ धरणियलु	उद्धरियसूलकरवालहलु।
	मरुचलियलुलियचलचिंधबलु	गुहदारि उदारि ण माइ बलु।
५	णउ जंपइ कंपइ फणिणिवहु	पहु वच्चइ णच्चइ तियसवहु।
	पउ गुप्पइ घिप्पइ आहरणु	परिघोलइ लोलइ पंगुरणु।
	अइमल्हइ मेल्लइ सद्दु करि	रहु थक्कइ वंकइ कंठु हरि।
	तहु दाणें फेणें समिय रय	चिक्खल्लइं खोल्लइ खुत्त पय।

घत्ता—बंदिण पढिएहिं जयणंदवड्ढणिग्घोसहिं ॥
१० गज्जइ गिरिविवरु वज्जंतहिं पडहसहासहिं ॥१८॥

१९

	जणु जूरइ पूरइ मग्गु ण वि	णरलिहियउ णिहियउ चंदु रवि।
	कागिणियइ घणियइ मट्टियइ	अंधारवियारविहट्टियइ।
	उज्जोयउ जायउ उज्जलउ	खंधारु वीरु धारियपुलउ।
	संकमेण कमेण जि संचरइ	सरभरियउ सरियउ उत्तरइ।
५	तहु कुहरहु कुहरहु णिग्गयउ	केलासगिरीसहु लहु गयउ।
	सुरणियरहिं खयरहिं परियरिउ	णिज्झरझरंतवारिहिं भरिउ।
	गंधव्वहिं भव्वहिं सेवियउ	सिहिजालहिं चवलहिं तावियउ।
	तरुजालहिं णीलहिं छाइयउ	कइबुक्कारेहिं णिणाइयउ।

घत्ता—सो महिहरपवरु दीसइ गयणंगणि लग्गउ ॥
१० णं महिकामिणिहि भुयदंडु पदंसियसग्गउ ॥१९॥

२०

जो अच्छरचित्तालिहियसिलु	विसहरसिररयणारुणियबिलु।
जो दरिसियसीहसिलिंबमुहु	सद्दूलपसाहियरुंदगुहु।
जहिं दिट्ठइं दुमसाहागयइं	किंणरवीसरियहारसयइं।

---

१८. १. P कंपाविउ। २. MBP रणवीरइं। ३ P °चिंधउलु। ४. MBT उयारि, P उयरि। ५. B वंचइ णंचइ। ६ M खंधु; BP कंधु। ७. MBP चिक्खिल्लइ। ८. MBP वढ। ९. P गिज्जइ।
१९. १. MBP कागणियइ मणिमइ। २. MB सकमेण। ३. MBP जलभरियउ। ४. MB णिण्णाइयउ।
२०. १. MBP °मुहु। २. MBP दीसहिं दुमं°।

टाला, यह तुमने अच्छा किया। मुकुटमे उत्पन्न है चूड़ामणि जिसके, ऐसे महादरणीय धरणेन्द्रने पूर्वकालमे जिस प्रकार समर्पित किये थे, उसी प्रकार मै भी समर्पित करता हूँ, अपने प्रिय विद्याधर नगरोंका तुम पालन करो।"

इस प्रकार नमि और विनमीश्वरके द्वारा जिनवरके पुत्र बलवान् और ऋद्धिसे सम्पन्न नरनाथ भरतकी सेवा स्वीकार कर ली गयी ॥१७॥

१८

वे दोनों त्रिभुवनको कँपानेवाले राजाको प्रणाम कर अपने घर चले गये। लक्ष्मीके स्वामी अपने उन दोनों भाइयोंको भेजकर तथा युद्धमे धीर शत्रुओंको नष्ट कर जिसने शूल, करवाल और हल उठा रखा है और जो हवासे चलते—उड़ते चंचल ध्वजोंवाला है, ऐसा सैन्य चलता है, धरती हिल जाती है। उधर गुहाद्वारमे सैन्य नही समाता। नागसमूह कांप उठता है परन्तु कुछ कहता नही। प्रभु चलता है, देववधू नृत्य करती है। पैर जमाती है, आभरण ग्रहण करती है, घूमती है, साड़ी हिलाती है। हाथी धीरे-धीरे चलता है, और शब्द करता है, रथ रुक जाता है, और घोड़ा गर्दन टेढ़ी करता है। गजके दान (मदजल) और घोड़ेके फेनसे रज शान्त हो जाती है। परन्तु कीचड़-भरे गड्ढेमे पैर फँस जाता है।

घत्ता—वन्दीजनोके द्वारा पठित जय हो, प्रसन्न रहो, बढ़ो, आदि शब्दोंके घोषों और वजते हुए सहस्रों नगाड़ोसे गिरिविवर गरजने लगता है ॥१८॥

१९

लोग पीड़ित हो उठते हैं, परन्तु मार्ग समाप्त ही नही होता। तब मनुष्यके द्वारा लिखित सूर्य-चन्द्र रख दिये गये, अन्धकारके विकारको नष्ट करनेवाली भद्रिय कठिन कागणीमणिके द्वारा उजला प्रकाश कर दिया गया। स्कन्धावार और वीर भरत पुलकित हो उठा। वह सेतुबन्धके द्वारा क्रमसे चलता है और जलसे भरी हुई नदी पार करता है। उस पर्वतकी गुफासे निकलकर शीघ्र ही वह कैलास गिरीशपर पहुँच गया। सुरसमूहों और विद्याधरोंसे घिरा हुआ निर्झरोके झरते हुए जलोसे भरा हुआ भव्य गन्धर्वोके द्वारा सेवित, चंचल अग्निज्वालाओंसे सन्तप्त, हरे वृक्ष-समूहोंसे आच्छादित वानरोकी आवाजोंसे निनादित—

घत्ता—वह प्रवर महीधर आकाशसे लगा हुआ ऐसा दिखाई देता है मानो धरतीरूपी कामिनीका स्वर्गको दिखानेवाला भुजदण्ड हो ॥१९॥

२०

जिसकी चट्टानें अप्सराओंके चित्रोसे लिखित हैं, जिसके विल विषधरोके शिरोमणियोसे आलोकित हैं, जो सिंह शावकोको सुख देनेवाला है, जिसकी विशाल गुफाएँ सिंहोसे प्रसाधित हैं,

अलि झंकारेहिं[3] ण रडि मुयइ जहिं णाहलडिंभउ सुहुं सुअइ।
५ जहिं सलहिज्जंति असच्छरहिं[4] सवरीरूवाइं[5] वि अच्छरहिं।
जहिं मणिभित्तिहि पेच्छिवि सयणु महिसिहिं कीरइ पडिवक्खमणु।
जहिं दोमंवीढु[6] मणिवि तरुणु मरगयवट्ठहु धावइ हरिणु।
जहिं चंदणमहिरुहु[7] परिहरिवि णहयरवहु सुत्ती संभरिवि।
मुहसासवासु विसहरु पियइ अवरहु वि सुयंगहु एह मइ।
१० घत्ता—पेच्छिवि जमसहिसु जहिं जक्खिणिसीहु ण रूसइ॥
जिणमाहप्पएण पडिवक्खपक्खि खम दीसइ॥२०॥

२१

जहिं इंदणीलरुइरंजियउ सिहि मज्जारें[1] ण विभंजियउ[2]।
किं मोत्तिउ किं व[3] तुसारकणु जहिं संकइ संजउ सीलहणु।
जहिं ओसहिदीवउ पज्जलइ रयणिहिं पुलिंदु सुहुं संचलइ।
जहिं जायउ गुणगणसंडियउ मुणिसंगे सुयउलु पंडियउ।
५ जिणणाहें घोसियँ[4] जीवदय जहिं पसु वि चिलाय वि धम्मरय।
सुरहत्थिणि सेवइ जासु तडु जहिं हिंडइ चक्केसरिगरुडु।
पोमावइहंसु कडक्खियउ जहिं वरुणहु मयरु णिरिक्खियउ।
जसु तीरइ पवणहु तणउ मउ सिहि मेसें सहुं कीलाणिरउ।
बारहकोट्ठेहिं अहिट्ठियउ जहिं समवसरणु सइं संठियउ।
१० घत्ता—तहु गिरिवरहु तले धरणीसें सिविरु[5] विमुक्कउं[6]॥
णावइ मंदरहो चउदिसु तारायणु थक्कउं[7]॥२१॥

२२

मणिमउडपट्टभूसणहरिहिं[1] सुरवरकरिकरदीहरकरहिं।
कंठोलंबियमुत्तावलिहिं उच्चाइयणवकुसुमंजलिहिं[2]।
तणुतेउज्जलियवणत्थलिहिं उवसमवंतहिं पसमियकलिहिं।
कइवयणिवेहिं सहुं[3] सुद्धमइ पहु गिरिसिहरारोहणु करइ।
५ आवंतहु रायहु सो सिहरि णिज्झरजलधाराभरियदरि।
सीहासणचमरीचामरइं[4] छायादुमछत्तइं सुंदरइं।
मयणिब्भर वर गज्जंत गय वणयर किंकर गंडय गवय।
णं दरिसणु अग्गग्गइ ठवइ णं कोइल कलरवेण लवइ।
घत्ता—तरुवत्तें[5] गिरिणा फलु फुल्लु पत्तु णं दिण्णउं॥
१० महिहरु महिहरहु अवसें पालइ पडिवण्णउं॥२२॥

३ M °झकारेण णं रडि; B °झंकारण णं रडि; P °झंकारेण ण रडि। ४. MB अमरच्छरहिं। ५. MBP °रूवाइं वरच्छरहिं। ६. MBP दोवपीढ। ७. MBP °महिरुह।

२१. १. B मज्जारेण। २. MBPT विहंडियउ and gloss in T विवेचितः। ३. P च। ४. MBP पोसिय। ५. P सिमिरु। ६ MBP पमुक्कउ। ७. B थक्कइ।

२२ १. MBP °हरहिं। २. B °णउकुसुम°। ३. MBP सह। ४. MBP सिंहासण°। ५. MB तरुवंतें।

जहाँ वृक्षोंकी शाखाओंपर किन्नरोंके द्वारा विस्तृत सैकड़ों हार दिखाई देते हैं, जहाँ भ्रमर झंकारोंसे अपना गान नही छोड़ता, जहाँ भीलका बच्चा सुखसे सोता है, जहाँ अप्सराओंके द्वारा बिना किसी ईर्ष्याभावके शबरियोंके रूपकी सराहना की जाती है, जहाँ मणिभित्तियोंमे अपने ही प्रिय (स्वजन) को देखकर पट्टरानियोंके द्वारा सापत्न्यभाव धारण किया जाता है। जहाँ मरकतमणिके पृष्ठ (खण्ड) को दूबका समूह मानकर तरुण हरिण दौड़ता है, जहाँ साँप चन्दनवृक्षको छोड़कर सोती हुई विद्याधर वधूको (चन्दनवृक्ष) जानकर उसके मुखके श्वासवासको पीता है दूसरे भुजंगकी भी यही वृद्धि हो रही है।

घत्ता—जहाँ यममहिषको देखकर यक्षिणीका सिंह क्रोध नही करता, जिन भगवान्के माहात्म्यसे प्रतिपक्ष और पक्षमे क्षमाभाव दिखाई देता है ॥२०॥

२१

जहाँ इन्द्रनील मणिकी कान्तिसे रंजित मयूरको मार्जार नही जान सका। जहाँ शीलधनवाले संयमी मुनिको भी यह शंका होती है कि यह मोती है या हिमकण। जहाँ औषधिरूपी दीप प्रज्वलित है, और रात्रिमे शबरसमूह सुखसे चलता है। जहाँ मुनियोंके संगसे शुक समूह गुणगणसे मण्डित और पण्डित हो गया है। जहाँ जिननाथने जीवदया घोषित कर दी है, जहाँ पशु भी और किरात भी धर्ममे रत हैं। जिसके तटकी सेवा देवहथिनी करती है, जहाँ चक्रेश्वरीका गरुड़ भ्रमण करता है। पद्मावतीका हंस कटाक्ष मारता है। जहाँ वरुणका मगर देखा जाता है, जिसके तीरपर पवनका मृग और मयूर मेढेके साथ क्रीड़ानिरत हैं। जहाँ बारह कोठोंसे अधिष्ठित स्वयं समवसरण स्थित है।

घत्ता—उस कैलास गिरिवरके नीचे धरणीशने अपना शिविर ठहरा दिया मानो मन्दराचलके चारों ओर तारागण स्थित हों ॥२१॥

२२

तब शुद्धमति राजा भरत मणि, मुकुट, पट्ट और भूषण धारण करनेवाले ऐरावतकी सूँड़के समान दीर्घ बाहुवाले, कण्ठमे मुक्तामालाएँ धारण किये हुए, नव कुसुमोंकी अंजलियोंको उठाये हुए, अपने शरीरके तेजसे वनस्थलीको उजला बनाते हुए, शान्त और कलहका शमन करते हुए कुछ राजाओंके साथ कैलास पर्वतके शिखरपर आरोहण (चढ़ाई) करता है। निर्झरोंकी जलधाराओंसे जिसकी घाटी भरी हुई है, ऐसा वह पर्वत आते हुए राजाके लिए सिंहासन, चमरी, चामर, सुन्दर छायाद्रुमरूपी छत्र, मदनिर्भर गरजते वर गज, गंडक (गेंड़े)-गवय आदि वनचररूपी किंकरोंको उपहाररूपमे आगे-आगे स्थापित करता है, मानो कोयल कलरवमे आलाप करती है।

घत्ता—वृक्षवाले गिरिने मानो फल-फूल और पत्ते उसे दे दिये मानो महीधर (राजा) महीधर (पर्वत) की स्वीकृतिका अवश्य पालन करता है ॥२२॥

२३

आरुहिवि धरोहरवरसिहरु   अइरुंदचंदकररासिहरु ।
परमप्पय पयपइ पइसरइ   जिणसमवसरणि तहिं पइसरइ ।
दिट्ठउ परमेसरु णिहयसरु   तिसिएण व हरिणें कमलसरु ।
भरहें बहुछंदपसंगिरए   थुउ सुहु सुलक्खणाइ गिरए ।
५ अरहंत अणंत भव्वभवइ   तुह सेवइ सोक्खु समुब्भवइ ।
तिट्ठासरितीरु पराइयउ   तुहुं कामें पर ण पराइयउ ।
पइं रोसजलणु उवसामियउ   तुहुं रिसि भुवणत्तयसामियउ ।
पइं पेच्छिवि देउ अहिंसवरु   ण हणइ दंडेण अहिं सवरु ।
णं वि भक्खइ तं कया वि णउलु   महिसंतयारि वग्घहं ण उलु ।
१० घत्ता—पइं संबोहियइं केलासवासगउ लेप्पिणु ॥
थक्कइं खेयरइं केलासवास मेल्लेप्पिणु ॥२३॥

२४

तुह वयणु विणीसिउ काणणए   णिसुणेप्पिणु इह गिरिकाणणए ।
ण पवत्तइ कत्थ वि जीववहु   जय संदरिसियपरलोयपहु ।
सीहु वि सरहु वि एक्कहिं वसइ   सिहिचुयपिच्छइं सवरी वसइ ।
कलु गेउ ण गायइ सावयहो   सामिय पइं लाइय सा वयहो ।
५ पइं मंसगिद्धि मज्जारयहं   सोडत्तणु महुमज्जारयहं ।
परयारु वि वारिउ जारयहं   तुहुं णाहु सुहु विज्जारयहं ।
जं अणुहरियउ अलियंजणहो   तं गाढु पाउ अलियं जणहो ।
मुहणिग्गंतउ पइं खंचियउ   तुह संभवि देवहिं खं चियउ ।
घत्ता—इय भरहेण थुउ परमेसरु जियपंचिंदिउ ॥
१० अमरासुरमणुयखगपुप्फदंतफणिवंदिउ ॥२४॥

इय महापुराणे तिसट्ठिमहापुरिसगुणालंकारे महाकइपुप्फयंतविरइए महाभव्वभरहाणुमण्णिए महाकव्वे उत्तरभरहपसाहणं णाम पण्णरहमो परिच्छेओ समत्तो ॥ १५ ॥

॥ संधि ॥ १५ ॥

---

२३ १. MBP धराधर° । २. MB परमप्पय पइपइ पयसरइ; T पयपइ प्रजापतिः; P परमप्पय पयवइ पइसरइ and gloss परमात्मपादौ प्रजापतिर्भरतः स्मरति । ३ BP णिहियसरु । ४. MBP सुलक्खणाइ । ५. K रोसु जलणु । ६ K णउ । ७ MBP °वासवउ ।

२४ १ MBP तुहु । २. K ° लोयवहु । ७. MBPK °पिंछइं । ४ MBP कलगेउ । ५ B सा चिय; P सा विय; T साविय स्वामिन्, अथवा साविय श्राविका; K सा मि य and gloss सा शबरी । ६. P मंजारयहं । ७. MBP परदारु णिवारिउ । ८. B जिउ पंचि° । ९ KBP °पुप्फयंत° ।

२३

अत्यन्त विशाल चन्द्रमाकी किरणराशिका हरण करनेवाले पर्वत शिखरपर चढ़कर परमात्माका पुत्र प्रवेश करता है और जहाँ समवसरण है वहाँ पहुँचता है। कामदेवका नाश करनेवाले परमात्माको उसने इस प्रकार देखा जैसे प्यासे हरिणने कमलसरोवरको देखा हो। तब भरतने तरह-तरहके छन्दोंके प्रस्तारवाली सुलक्षण वाणीमे खूब स्तुति की, हे अरहन्त अनन्त, भव्यरूपी नक्षत्रोंके चन्द्रजिन, तुम्हारी सेवासे सुख होता है, तुम तृष्णारूपी नदीके तीरपर आ गये, परन्तु काम तुम्हारे पास नही पहुँचा। तुमने क्रोधकी ज्वालाको शान्त कर दिया है। हे ऋषि, तुम भुवनत्रयके स्वामी हो, हे अहिंसाश्रेष्ठ देव, तुम्हे देखकर शबर दण्डसे साँपको नहीं मारता। उसे नकुल भी कभी नहीं खाता और व्याघ्रोंका समूह, महिषोंका अन्त करनेवाला नही होता।

घत्ता—हे कैलासवासी, आपके द्वारा सम्बोधित खेचर कैलासपर रहनेका व्रत लेकर, कैलासवास (मद्यभाजन और मद्य पीनेकी आशा) छोड़कर स्थित है ॥२३॥

२४

हे ब्रह्मन्, तुमसे निकले हुए वचन सुनकर इस गिरि-काननमें कही भी वध नही होता। हे परलोक पथको दिखानेवाले आपकी जय हो। यहाँ सिंह और शरभ एक साथ रहते है, मयूरोके च्युत पंखोंमें शबरी निवास करती है। हे स्वामी, उसने आपसे व्रत ग्रहण कर लिया है अतः वह श्वापदोंके लिए (वधके) गीत नही गाती। हे स्वामी, तुमने मार्जारोंको मांसगृद्धि (लोभ) और मधु (सुरा) के मार्जारों (मद्यपों) को मदिरा, जारोंको परदाराका निवारण कर दिया। तुम विद्यारतोंके अच्छे स्वामी हो। हे स्वामी, आदमीका जो पाप और झूठ भ्रमर और अंजनका अनुकरण करता है (पाप लिप्त होता है) उसे मुँहसे निकलते ही तुम पकड़ लेते हो। हे देव, आपके होनेपर आकाश देवताओंसे व्याप्त हो जाता है।

घत्ता—इस प्रकार अमरों, असुरों, मनुजों, पक्षियो, नक्षत्रों और नागोंके द्वारा वन्दित पंचेन्द्रियोंको जीतनेवाले परमेश्वरकी भरतके द्वारा स्तुति की गयी ॥२४॥

इस प्रकार श्रेसठ महापुरुषोंके गुणालंकारोंसे युक्त इस महापुराणमें महाकवि पुष्पदन्त द्वारा विरचित तथा महामव्य भरत द्वारा अनुमत महाकाव्यका उत्तर भरत प्रसाधन नामक पन्द्रहवाँ परिच्छेद समाप्त हुआ ॥१५॥

संधि १६

पणवेप्पिणु जिणवरकमकमलु ओयरेवि कइलासहो ॥
साकेयहु संमुहुं संचलिउ धरणिणाहु णियवासहो ॥ ध्रुवकं ॥

१

आरणालं—रविणिहकण्णकुंडला रयणमेहला मउडपट्टधारा ।
चलिया मंडलेसरा खेयरसुरणरा कंठवद्धहारा ॥१॥

होइ गिरित्थलु णिविसें[2] समथलु — किं ण किं ण किर कद्दमियउं[3] जलु ।
किं ण किं ण किर संचूरिउ[4] वणु — किं ण किं ण धूली जायउ तणु ।
५ किं ण किं ण देसंतरु लंघिउ — किं ण किं ण दुग्गु वि आसंघिउ ।
किं ण किं ण पहरणु अवलोइउ — किं ण किं ण पडिसेण्णु णिवाइउ ।
किं ण किं ण वरवाहणु वाहिउ — किं ण किं ण परमंडलु साहिउ ।
कणयदंडमंडियपडिहारें — आवेंतें[5] पहुखंधावारें ।
पुरणारिहिं आहरणु लइज्जइ — मउ देवंगवत्थु[6] परिहिज्जइ ।
१० कुंकुमेण छडउल्लउ दिज्जइ — कप्पूरें रंगावलि किज्जइ ।
घिप्पइ कुसुमकरंबु ससंडयणु[7] — बज्झइ सुरतरुपल्लवतोरणु ।
घरि घरि गाइज्जइ[8] जिणणंदणु — दोवंदहियसिद्धत्थयचंदणु[9] ।
[10]दप्पणु कलसु धरिज्जइ अण्णहिं — उग्घोसिउ मंगलु सुरकण्णहिं ।
सलहिज्जंतु महंतु सुरिंदहिं — सहुं जक्खिदखगिंदणरिंदहिं ।
१५ करिवरकंधरत्थु [11]मणहारिहिं — विज्जिज्जंतउ चामरधारिहिं[12] ।

घत्ता—महि सयल वि खग्गें णिज्जिणिवि कयदिग्विजयविलासहिं[13] ॥
उज्झहि [14]भरहाहिउ पइसरइ सट्ठिहिं वरिससहासहिं ॥१॥

GMBP give, at the commencement of this Samdhi, the following stanza :—

प्रतिगृहमटति यथेष्टं बन्दिजनैः स्वैरसंगता वसति ।
भरतस्य वल्लभा सा कीर्तिस्तदपीह चित्रतरम् ॥

MBP read स्वैरसंगमा for स्वैरसंगता; and वल्लभासौ for वल्लभा सा । K does not give it.

१. १ MBP खयरणरसुरा । २. M अवसें; B णिवसें; P णिवसि and gloss निमेषेण; T णिविसें । ३. कद्दावियउं । ४. M संचूलिउ । ५. MBP आवंतें । ६ M देवंगु वत्थु । ७. P ससयडणु but gloss सपद्चरण. । ८. MBP घाइज्जइ । ९. MB दुव्व°; P दोव्व° । १० MP दप्पण । ११. M मणिहारिहिं । १२ MBP °धारहिं । १३. MBP विलासिहिं । १४. MBP भरहेसरु ।

सन्धि १६

जिनवरके चरणकमलोंको प्रणाम कर और कैलाससे उतरकर पृथ्वीका स्वामी भरत अपने निवास साकेतके सम्मुख चला।

१

सूर्यके समान कर्णकुण्डल और रत्नोंकी मेखलावाले, मुकुटपट्ट धारण किये हुए और गलेमें हार पहने हुए मण्डलेश्वर, विद्याधर, सुर और मनुष्य चले। गिरि-स्थल एक पलमे समतल हो गया। कौन-कौन जल-कीचड़मय नही हुआ? कौन-कौन-सा वन चूर-चूर नहीं हुआ? कौन-कौन तृण धूल नही हुआ। किस-किस देशान्तरको उन्होंने नहीं लांघा? किस-किस दुर्गका आश्रय नही लिया? किस-किस आयुधको नही देखा? किस-किस शत्रुसेनाका प्रतिपतन नही किया? किस-किस श्रेष्ठ वाहनको नही चलाया? किस-किस शत्रुमण्डलको नहीं साधा? स्वर्णदण्डोंसे अलंकृत है प्रतिहार जिसमें, प्रभुके ऐसे स्कन्धावारके आनेपर पुरस्त्रियाँ अपने आभरण ग्रहण कर रही हैं। कोमल देवांग वस्त्र पहने जा रहे हैं। केशरका छिड़काव किया जा रहा है। कपूरसे रांगोली की जा रही है। भ्रमर सहित कुसुम फेंके जा रहे हैं, देववृक्षों (कल्पवृक्षों) के पल्लव-तोरण बांधे जा रहे है। घर-घरमे जिनपुत्रका गान किया जा रहा है। दूध, दही, तिल और चन्दन, दर्पण, कलश धारण किये जा रहे हैं। दूसरी देव कन्याओं द्वारा मंगलघोष किया जा रहा है। यक्षेन्द्र, खगेन्द्र और मानवेन्द्रोंके साथ सुरेन्द्रोंके द्वारा प्रशंसा की जा रही है। गजवरके कन्धेपर बैठा हुआ सुन्दर चमर धारण करनेवाली स्त्रियोके द्वारा हवा किया जाता हुआ—

घत्ता—समस्त धरतीको तलवारसे जीतकर साठ हजार वर्षों तक दिग्विजय-विलास करनेके बाद भरत राजा अयोध्या नगरीमें प्रवेश करता है ॥१॥

२

आरणालं—णउ पइसरइ पुरवरे रयणमयहरे[1] जयसिरीवरंगं ॥
भंगुरभासुरारयं[2] णिसियधारयं राइणो रहंगं ॥१॥

थक्कउ चक्कु ण पुरि परिसक्कइ कुक्कइहि कव्वु व णउ चिम्मक्कइ ।
णं कोवाणलजालामंडलु णं पुरलच्छिइ परिहिउ कुंडलु ।
५ भरहपयावें कायरिजायउ[3] भाणुबिंबु णं छज्जइ आयउ ।
इंदचंदपडिकूलणसीलउ धगधगंतु खयहुयवहलीलउ ।
एहु जि चक्कवट्टि अवलोयहु णयरें दीवु[4] धरिउ णं लोयहु ।
मणिमऊहमालावेलोहलु[5] रायदिवायरपुण्णयरुज्जलु ।
सुरहिगंधु सिरिसेविउ सभसलु णं णहसरि विहसिउ[6] रत्तुप्पलु ।
१० वलयायारहु णिरु सच्छायहु अवसें देइ धरणि करु[7] आयहु ।

घत्ता—तं चक्कु ण णयरिहि पइसरइ वेसहि जणियवियारउ ॥
हियउल्लउ[8] कवडसयहं भरिउ णावइ धुत्तहं केरउ ॥२॥

३

आरणालं—फणिणरसुरपसंसियं जसविहूसियं गुणगणोहदित्तं ।
णं दुविणीयमाणसे[1] पिसुणमाणुसे[2] सुयणसच्छवित्तं[3] ॥१॥

अक्कमियंकउ[4] बाहिरि थक्कउ णावइ दइवें खीलिवि मुक्कउ ।
णउ पइसइ पुरि चक्कु णिरुत्तउ[5] सुइघरि[6] णं अण्णायविढत्तउ ।
५ परपुरिसाणुराइ सइचित्तु व परदासत्तणम्मि सवसित्तु व ।
मायाणेहणिबंधणि मित्तु व पत्तदाणि पाविट्ठहु चित्तु व ।
चुणयविलीणइ दिण्णउ भत्तु व रइरसतुरियइ णवउ कलत्तु व ।
सुद्धसिद्धमंडलि जमकरणु व पत्थणिसेविरि रुववित्थरणु व ।
णिव्वलणीसणिहेलणि[7] सरणु व दुरियमलिणमणि पंडियमरणु व ।
१० ईवसमिज्झि[8] सामरिसायरणु व णिव्वियारि तणुभूसायरणु[9] व ।
णिसिसमयागमि रविउग्गमणु व वुड्ढत्तणि तरुणीयणरमणु व ।
पुण्णहीणि जिणगुणसंभरणु व णिद्धणि णिग्गुणि विहलुद्धरणु व ।

घत्ता—थिउ चक्कु ण पुरवरि पइसरइ णावइ केण वि धरियउ ॥
ससिबिंबु व णहि [10]तारायणहिं सुरवरेहिं परियरियउ ॥३॥

---

२ १. MBP °मयहरे । २. MB भासुराययं । ३. MBP कायरु जायउ । ४. MBP धरिउ दीउ । ५. K °वेलाजलु । ६. MBP वियसिउ । ७. MBPKT करु । ८. M हियडुल्लउ ।

३. १. M °माणुसे । २. B पिसुणु माणुसे । ३. M °चित्तं । ४. B °मियंकओ । ५. MP णिरुत्तउ । ६. M सुइघणि । ७. M णिच्चल°; BP णिव्वल° । ८. B reads this foot after 11*a*. ९. K भूसाकरण । १०. MBP तारासयहिं सुरणरेंहि ।

२

विजयश्रीकी लीला धारण करनेवाला, क्षण-क्षणमें प्रदीप्त होनेवाला, और पैनी धारवाला राजाका चक्र रत्ननिर्मित पुरवरमे प्रवेश नही करता। चक्र स्थित हो गया, वह नगरमें प्रवेश नही कर सकता, कुकविके काव्यकी तरह चमत्कार उत्पन्न नही करता। मानो कोपरूपी आगका ज्वालामण्डल हो, मानो नगरलक्ष्मीने कुण्डल पहन लिया हो। भरतके प्रतापसे कायर हुआ मानो आया हुआ भानुबिम्ब शोभित है। इन्द्र और चन्द्रमाको प्रतिकूल करनेवाला मानो धकधक करता हुआ प्रलय कालकी लीलाके समान है। इस चक्रवर्तीको देख लो मानो लोकने (इसके लिए) नगरमे दीपक रख दिया है। मणियोंकी किरणमालाओंके ठहरनेका तट, राजारूपी दिवाकरके पुण्यरूपी हाथों (करों) से उज्ज्वल, सुरभित गन्ध और लक्ष्मीसे सेवित तथा भ्रमर सहित जो चक्र मानो आकाशरूपी नदीका रक्त कमल है। वलयकी आकृतिवाले सुन्दर कान्तिसे युक्त इसके लिए धरती अवश्य कर देगी।

घत्ता—वह चक्र नगरीमे प्रवेश नही करता उसी प्रकार, जिस प्रकार सैकड़ो कपटोंसे भरा हुआ धूर्तका विकारग्रस्त हृदय वेश्यामे प्रवेश नही करता ॥२॥

४

आरणालं—ता भणियं णिराइणा रूढराइणा चंडवाउवेयं।
किं थियमिह रहंगयं णिच्चलंगयं तरुणतरणितेयं ॥१॥
तं णिसुणेप्पिणु भणइ पुरोहिउ जेणेयहु गइपसरु णिरोहिउ।
अक्खमि तं णिसुणहि परमेसर देवदेव दुज्जय भरहेसर।
५ भुयजुयबलपडिबलविवद्दवणहं पयभरथिरमहियलकंपवणहं।
तेओहामियचंददिणेसहं जणणदिण्णमहिलच्छिविलासहं।
कित्तिसत्तिजणमेत्तिसहायहं को पडिमल्लु एत्थु तुह भायहं।
सेव करंति ण णहभाईवइं णउ णवंति तुह पयराईवइं।
देंति ण करभरु केसरिकंधर पर मुहियइ भुंजंति वसुंधर।
१० अज्ज वि ते सिज्झंति ण जेण जि पइसइ पट्टणि चक्कु ण तेण जि।
घत्ता—रइवरु परमेसरु उच्छुधणु धरणिहरणरणपरियरु ॥
कासवतणुरुहु णवणलिणमुहु भुवणुद्धरणधुरंधरु ॥४॥

५

आरणालं—विलसियकुसुममग्गणो गरुयगुणगणो तरुणिहियथेणो।
असरिसविसमसाहसो वसि हयालसो णिहयवेरिसेणो ॥१॥
अण्णु वि जसवइतणयहं जेट्ठउ पुत्तु सुणंदहि तुज्झु कणिट्ठउ।
सायरु जिह तिह मयरधयालउ चावहं चारुवयणु चरियालउ।
५ पंचसयाइं सवायइं तुंगउ भण्णइ संपहिं सो ज्जि अणंगउ।
बालु बंभसुंदरिहि सहोयरु पिउपयपयरुहरयरउ महुयरु।
हरियदेहु णं मरगयगिरिवरु अरिकरिदसणमुसलपसरियकरु।
विमलकुलालवालसुरतरुवरु चरमदेहु सासयसुहसिरिहरु।
गुरुचरणारविंदरइरसवसु मंदरकंदरंतगाइयजसु।
१० दुत्थियदीणाणाहहं दिहियरु णरहरिसरणागयपविपंजरु।
लीलादलियमहीयलमयगलु कढिणबाहु बाहुबलि महाबलु।
घत्ता—सो अच्छइ उवसमु धरिवि मणे जइ रणि कह वि वियंभइ ॥
तो सहुं चक्कें सहुं साहणेण पइं मि णरिंद णिसुंभइ ॥५॥

१५

६

आरणालं—जो जिप्पइ ण हारिणा कुलिसधारिणा पयडसुहडरोलें।
सो णिम्महइ माणवे जिणइ दाणवे देव कलहकाले ॥१॥

४. १ MBP पयथिरभर°।
५ १. MBP °वयण। २. MBP सपइ। ३. M बाल। ४ B पिउपयरुह°। ५. MBP हरियवण्णु। ६. K चरिम°। ७ BPK °महियलु। ८. MBP कह व।

४

तब प्रसिद्ध मनुष्यराजा भरतने कहा, "प्रचण्ड वायुके समान वेगवाला, तरुण तरणिके समान तेजवाला यह चक्र निश्चलांग क्यो हो गया ?" यह सुनकर पुरोहित बोला, "जिस कारणसे इसके गति प्रसारका निरोध हुआ है उसे मै बताता हूँ। हे नरेश्वर, देव-देव, हे दुर्जेय भरतेश्वर, सुनिए, जिन्होंने अपने बाहुबलसे शत्रुओंका दमन किया है, पैरोके भारसे धरतीतलको कँपाया है, तेजसे सूर्य और चन्द्रको पराजित किया है, पिताने जिन्हें महीलक्ष्मीका विलास दिया है तथा कीर्ति, शक्ति और जनमात्रा जिनकी सहायक है, ऐसे तुम्हारे भाइयोंका यहाँ प्रतिमल्ल कौन है ? नखोंकी कान्तिसे प्रदीप्त तुम्हारे चरणकमलोंको वे नमस्कार नही करते। सिंहके समान कन्धोवाले जो तुम्हें कर नही देते, वे व्यर्थ ही धरतीका उपभोग करते है। जिस कारणसे वे आज भी सिद्ध नही हो सकते हैं, उसी कारण चक्र नगरमें प्रवेश नही कर रहा है।

घत्ता—कामदेव परमेश्वर इक्षुधनुषसे युक्त धरतीके अपहरण और युद्धके परिकरवाला, कासवका पुत्र, नवकमलमुखी और भुवनके उद्धारमें धुरन्धर—॥४॥

५

कामदेवसे विलसित, भारी गुणोंसे युक्त, युवतियोके हृदयको चुरानेवाला, असामान्य विषम साहसवाला, वशी, आलस्यको नष्ट कर देनेवाला और शत्रुसेनाको समाप्त कर देनेवाला। और भी यशोवतीके पुत्रोंसे जेठा परन्तु तुमसे छोटा, सुनन्दाका पुत्र, जिस प्रकार कामदेव, उसी प्रकार, मकरध्वजालय (मकररूपी ध्वजोंका घर, कामदेवका घर), सुन्दर मुख, चरित्रका आश्रय, और सवा पाँच सो धनुष ऊँचा, उसीको इस समय कामदेव कहा जाता है, ब्राह्मी सुन्दरीका भाई, पिताके चरणरूपी कमलोंमे रत भ्रमर, श्याम शरीर जैसे मरकतका पहाड़ हो, शत्रुरूपी गजोंके दाँतोरूपी मूसलोके लिए हाथ फैलानेवाला, पवित्र कुलरूपी आलबाल (क्यारी) का कल्पवृक्ष, चरमशरीरी, तथा शाश्वत सुखश्रीको धारण करनेवाला, गुरुके चरणकमलोके प्रेमरसके अधीन, पर्वतोकी गुफाओ तक जिसका यश गाया जाता है, दुस्थित दीन और अनाथोका भाग्यविधाता, मनुष्यश्रेष्ठ, शरणागतोके लिए वज्रपंजर (वज्रकवच), महापर्वतो और मदवाले महागजोंको खेल-खेलमे दलित कर देनेवाला। दृढ़बाहु और महाबली बाहुबलि।

घत्ता—वह मनमे उपशम भाव धारण कर स्थित है। यदि वह कही भी युद्धमें भड़क उठता है तो चक्रके साथ, सेनाके साथ हे राजन्, वह तुम्हे भी नष्ट कर देगा ॥५॥

६

प्रकट है सुभट शब्द जिसका, ऐसे उत्तम वज्र धारण करनेवालेसे जो नही जीता जा सकता, हे देव जो कलहकालमे मनुष्यमे सम्मान पाता है और दानवको जीतता है। जिसने

हित्तभिण्णमहिवइसामंतें दसदिसिवहपेसियसामंतें।
रूवरिद्धिरंजियरामोहें अइपरिवड्ढियसुधरामोहें।
५ णियभुयसत्तिपरज्जियभरहें तं णिसुणेवि पयंपिउ भरहें।
जमहु जमत्तणु को दरिसावइ मइं मुएवि किर कवणु रसावइ।
एम को वि किं जगि संतावइ को किर सिहिसिहाहि[1] सं तावइ।
कहु महु तणउं पहुत्तु ण भावइ कें[2] पडिखलिउ जंतु णहि[3] भावइ।
केर महारी कों णावज्जइ एह पुहइ को[4] किर णावज्जइ।
१० आसमुद्दमेइणिकरवालहु को णासंकइ महु करवालहु।
को किर मिच्च महारा मारइ को विणिवारइ मज्झु वि मारइ।
किं किर[5] वण्णिएण कंदप्पें अणवंतहु णिवडइ कं दप्पें।

घत्ता—इय जंपिवि राएं णिक्करुणु अविणयविहियमणोज्जहं ॥
सयलहं मि सयलसंपयधरहं[6] लेहु दिण्णु दाइज्जहं ॥६॥

७

आरणालं—ता विगया[1] बहुयरा जणमणोहरा णिवकुमारवासं।
दुमदललुलियतोरणं[2] रसियवारणं छिण्णभूमिदेसं ॥१॥
तेहिं भणिय ते विणउ करेप्पिणु सामिसालवणुरुह पणवेप्पिणु।
सुरणरविसहरभयइं जणेरी करहु केर णरणाहहु केरी।
५ पणवहु किं बहुवेण[3] पलावें पुहइ ण लब्भइ मिच्छागावें।
तं णिसुणेवि कुमारगणु घोसइ [4]तो पणवहुं जइ वाहि ण दीसइ।
तो पणवहु जइ सुसुइ[5] कलेवरु तो पणवहु जइ जीविउ सुंदरु।
तो पणवहु जइ जरइ ण झिज्जइ तो पणवहु जइ पुट्ठि ण भज्जइ।
तो पणवहु जइ बलु णोहट्टइ तो पणवहु जइ सुइ ण विहट्टइ।
१० तो पणवहु जइ मयणु ण तुट्टइ तो पणवहु जइ कालु ण खुट्टइ।
कंठि कयंतवासु ण[8] चुहुट्टइ तो पणवहु जइ रिद्धि ण तुट्टइ।

घत्ता—जइ जम्मजरामरणइं हरइ चउगइदुक्खु[10] णिवारइ ॥
[11]तो पणवहु तासु णरेसहो[12] जइ संसारहु तारइ ॥७॥

---

६. १. MB °सेहाहि। २. MBP किं। ३. P णहु। ४. MBP किर को। ५. M करि। ६. MBP °सपयहरहं।

७ १. MBP बमोहरा, T वउहरा दूताः। २. BPK °लुलिय°। ३ MBP बहुएण। ४ MBP तह and throughout elsewhere in this Kadavaka। ५ MBP सुथिरु but T सुसुइ। ६. MBP फिट्टइ। ७. MBP आउ। ८. MBP कयंतपासु। ९ MBP चहुट्टइ। १०. MBP °दुक्खइं वारइ। ११ MP ता, B तहो। १२. MBPK णरेसरहो।

महीपति सामन्तोंको पकड़ लिया है और उखाड़ दिया है, जिसने दसों दिशाओंमें अपने सामन्त भेजे है, जिसने अपनी रूपऋद्धिसे रमणी समूहको रंजित किया है, जिसमें पृथ्वीका मोह अत्यन्त बढ़ रहा है, जिसने अपने बाहुबलसे भरत क्षेत्रको पराजित कर दिया है, ऐसे भरतने यह सुनकर कहा—"यमको यमत्व कौन दिखाता है ? मुझे छोड़कर पृथ्वीपति कौन है ? इस प्रकार जगमें कौन सन्ताप पहुँचा सकता है ? आगको ज्वालाओंसे कौन अपने आपको सन्तप्त करना चाहता है, किसे मेरी प्रभुता अच्छी नही लगती, आकाशमे स्खलित होकर जाते हुए किसे अच्छा लगता है ? कौन मेरी सेवा नही ग्रहण करता, यह धरती कौन नही अर्जित करना चाहता, समुद्र पर्यन्त धरतीसे कर वसूल करनेवाली मेरी तलवारसे कौन आशंकित नही होता, कौन मेरे अनुचरोंको मारता है ? कौन प्रतिकार करता है और मुझे भी मारता है ? कामदेवका वर्णन करनेसे क्या ? नही प्रणाम करते हुए किसका सिर दर्पसे गिरता है ?"

घत्ता—यह कहकर राजाने अविनयके कारण अमनोज्ञ समस्त सब प्रकारकी सम्पत्ति धारण करनेवाले शत्रुओंको कठोर लेख दिया ॥६॥

७

तब जनोंके लिए सुन्दर दूत, जहाँ द्रुमदलोंके सुन्दर तोरण है, गज चिग्घाड़ रहे हैं, और जिनका भूमिप्रदेश ढका हुआ है, ऐसे नृपकुमारोंके आवासपर गये। स्वामीश्रेष्ठके उन पुत्रोंको प्रणाम करते हुए उन्होंने विनयके साथ निवेदन किया, "सुर-नर और विषधरोमे भय उत्पन्न करनेवाली राजाकी सेवा करो और उन्हे प्रणाम करो, बहुत प्रलापसे क्या ? मिथ्या गर्वसे धरती प्राप्त नही की जा सकती।" यह सुनकर कुमारगण घोषित करता है—"हम तब प्रणाम करते है यदि उसमे कोई व्याधि दिखाई नही देती। तब प्रणाम करते हैं यदि उसका शरीर पवित्र है, तब प्रणाम करते है यदि उसका जीवन सुन्दर है। तब प्रणाम करते है यदि वह जरासे क्षीण नही होता। तब प्रणाम करते हैं यदि वह पीठ देकर नही भागता, तो प्रणाम करते हैं यदि उसका बल नष्ट नही होता, तो प्रणाम करते हैं यदि उसकी पवित्रता नष्ट नही होती, तो प्रणाम करते हैं यदि कामदेव नष्ट नही होता, तो प्रणाम करते है यदि काल समाप्त नही होता, तो प्रणाम करते हैं यदि गलेमे यम नही लगता और ऋद्धि समाप्त नही होती।

घत्ता—यदि वह जन्म-जरा और मरणका अपहरण करता है, चार गतियोके दुःखका निवारण करता है, और संसारसे उद्धार करता है तो हम उस राजाको प्रणाम करते है।" ॥७॥

८

आरणालं—पुणरवि तेहिं गहिरयं सवणमहुरयं एरिसं पउत्तं ।
आणापसरधारणे धरणिकारणे[1] पणविउं ण जुत्तं ॥१॥
पिंडिखंडु महिखंडु महेप्पिणु किह पणविज्जइ माणु मुएप्पिणु ।
वक्कलणिवसणु कंदरमंदिरु वणहलभोयणु वर[2] तं सुंदरु ।
५ वर[3] दालिद्दु[4] सरीरहु दंडणु णउ[5] पुरिसहु अहिमाणविहंडणु ।
परपयरयधूसर किंकरसंरि असुहाविणि[7] णं पाउससिरिहरि[6][8] ।
णिवपडिहारदंडसंघट्टणु को विसहइ करेण उरलोट्टणु ।
को जोयइ मुहुं भूभंगालउ[9] किं हरिसिउ किं रोसें कालउ ।
पहु आसण्णु लहइ धिट्ठत्तणु पविरलदंसणु णिण्णेहत्तणु ।
१० मोणें[10] जडु भडु खंतिइ कायरु[11] अज्जवु पसु पंडियउ पलाविरु ।
अमुणियहियचारुगरुयत्तें कलहसीलु भण्णइ सुहडत्तें ।
महुरपयंपिरु चाडुयगारउ केम वि गुणि ण होइ सेवारउ ।

घत्ता—अइतिक्खहं धम्मगुणुज्झियहं[12] वम्मवियारणवसणहं ॥
को बाणहं संमुहुं थाइ रणे को महिवइघरि पिसुणहं ॥८॥

९

आरणालं—अहवा तेहिं किं हयं जं समागयं दुक्खहं णरत्तं ।
तं जो विसयविसरसे[1] धिवइ परवसे[2] तस्स कि बुहत्तं ॥१॥
कंचणकंडे जंदुउ विंधइ मोत्तियदामें मंकडु[3] बंधइ ।
खीलयकारणि देउलु मोडइ सुत्तणिमित्तु दित्तु[4] मणि फोडइ ।
५ कप्पूरायरुरुक्खु[5] णिसुंभइ कोद्दवछेत्तहु वइ पारंभइ ।
तिलखलु पयइ डहिवि चंदणतरु विसु गेण्हइ सप्पहु ढोयवि[6] करु ।
पीयइ कसणइं लोहियसुक्कइं तक्कें विक्कइ सो माणिक्कइं ।
जो मणुयत्तणु भोएं णासइ तेण वमाणु हीणु को सीसइ ।
चित्तु समत्तणि णेय णियत्तइ पुत्तु कलत्तु वित्तु संचिंतइ ।
१० मरइ रसणफंसणरसदड्ढउ मे मे मे करंतु जिह मेंढउ[7] ।
खज्जइ पलयकालसद्दूलें डज्झइ दुक्खहुयासणजालें ।
संजरु कुंजरु महिसउ मंडलु होइ जीउ मक्कडु[8] माहुंडलु ।

---

८ १ B omits धरणिकारणे, P महिहि कारणे । २. MBP वरि । ३. MBP वरि । ४. M दारिहु । ५. MBP ण हि । ६. MBP °सिरि and a long note in M: यथा वर्षाकालनदी परः अन्यहीनस्याना झिल्लरादिपयै (?) मलिनै रजोभि' धूसरिता मलिना प्रवहति हिरि अतिलज्जाकारिणी, तथा किंकरश्री शोभा परपदरजोभिः धूसरिता । ७. MBP असुहावणि । ८ MBP °हिरि; K °हिरि but corrects it to °हरि । ९ P भूभगा° । १० MBP मउणें । ११. MBP अज्जउ । १२ KBP मम्म° ।

९ १. P °रसो । २. P परवसो । ३. MBP मक्कडु । ४. MBP दित्तमणि । ५. MBP कप्पूरायररुक्ख । ६. MBP अप्पइ पर । ७. M मिंढउ, BP मेढउ । ८. MBP मकडु ।

८

उन्होंने और भी गम्भीर कानोंके लिए मधुर इस प्रकार कहा कि धरतीके लिए और आज्ञाका प्रसार करनेके लिए प्रणाम करना उचित नहीं है। शरीरखण्ड या धरतीके खण्डको महत्त्व देकर और मान छोड़कर क्यों प्रणाम किया जाये। वल्कलोंका पहनना, गुफाओंका घर, और वनफलोंका भोजन, यह सुन्दर है। दारिद्र्य और शरीरका खण्डन अच्छा, परन्तु मनुष्यका अभिमानको खण्डित करना ठीक नही। किंकररूपी नदी दूसरोके पदरजसे घूसरित है। पावसकी श्रीको धारण करनेवाली असुहावनी है। राजाओंके प्रतिहारोंके दण्डोंका संघर्षण और हाथ उरको स्पर्श करना कौन सहे ? भौहोंसे टेढ़ा मुख कौन देखे कि वह प्रसन्न है या क्रोधसे काला है, यदि राजाके निकट है तो वह ढीठपनको प्राप्त होता है, यदि कभी-कभी दर्शन करता है तो स्नेहहीन समझा जाता है, मौन रहनेसे जड़ (मूर्ख) और शान्तिसे रहनेपर कायर, सीधा रहनेपर पशु और पण्डित होनेपर प्रलाप करनेवाला, अपने हृदयकी सुन्दर गुरुताको न समझनेवाली शूरवीरतासे कलहशील कहा जाता है और मीठा बोलनेपर चापलूस। इस प्रकार सेवामे रत व्यक्ति किसी भी प्रकार गुणी नही होता।

घत्ता—अत्यन्त तीखे धर्मरूपी गुणसे रहित/डोरीसे रहित, वम्म (मर्म/कवच) के विदारणके स्वभाववाले बाणोंके सम्मुख रणमे और दुष्टोके सम्मुख राजाके घरमे कौन खड़ा रह सकता है ॥८॥

९

अथवा उनसे क्या, जिन्होंने प्राप्त दुर्लभ मनुष्यत्वको नष्ट कर दिया। और जो उसे परवश होकर नष्ट करता है, उसका क्या पाण्डित्य ? वह स्वर्णके तीरसे सियारको वेधता है, मोतीकी मालासे बन्दरको बाँधता है, कीलके लिए देवकुलको तोडता है, सूत्रके लिए दीप्त मणिको फोड़ता है, कपूर और अगुरु वृक्षको नष्ट करता है और (उनसे) कोदोके खेतकी वागर बनाता है। चन्दन वृक्षको जलाकर तिल खलोंकी रक्षा करता है। साँपको हाथमें लेकर उससे विष ग्रहण करता है, पीले, काले, लाल और सफेद माणिक्योको छाछमे बेचता है, जो मनुष्यत्वको भोगमे नष्ट करता है, उसके समान हीन व्यक्ति कौन कहा जाता है। जो अपने चित्तको समतामें नियोजित नही करता, पुत्र-कलत्र और धनकी चिन्ता करता है, रसना और स्पर्शरसमे दग्ध होकर उसी प्रकार मर जाता है, जिस प्रकार मे-मे-मे करता हुआ मेढक मरता है। प्रलयकालरूपी सिंहके द्वारा खाया जाता है, दुःखरूपी आगकी ज्वालासे जला दिया जाता है। यह जीव मार्जार, कुंजर, महिष, कुक्कुर, बन्दर और सर्प विशेष उत्पन्न होता है।

घत्ता—केलासहु जाइवि तवयरणु ताएं भासिउ किज्जइ ॥
जेणेह सुदूसहतावयरि संसारिणि तिस छिज्जइ ॥९॥

१०

आरणालं—इय भणियं[1] कुमारया मारमारया समरंभा[2] पसण्णा ।
दरिवियरियवराहयं सवररा[3]हयं काणणं पवण्णा ॥१॥

दिट्ठु तेहिं केलासि जिणेसरु संथुउ रिसहणाहु परमेसरु ।
जय रिसिणाह वसह वसहद्धय जय तियसिंदमउलिलालियपय ।
५ जय जाणियपरमक्खरकारण जय जिण मोहमहातरुवारण ।
जय सुहवास दुरासावारण जय ससहरसियवारिणिवारण ।
पुणु वि पंच परमेट्ठि णवेप्पिणु पंचमुट्ठि सिरि लोउ करेप्पिणु ।
पंचमहारिसिवयइं लएप्पिणु पंचासवदाराइं पिहेप्पिणु ।
पंचिंदियपमाउ वज्जेप्पिणु पंच वि सर मयणहु तज्जेप्पिणु ।
१० पंचायारसारु पावेप्पिणु पंचपंचविहु धम्मु धरेप्पिणु ।

घत्ता—दढगुणि मणमग्गणु संणिहिउ मोक्खहु संमुहु पेसिउँ ॥
संतहिं अरहंतहु तणुरुहहिं अप्पउ चरिएं भूसिउँ ॥१०॥

११

आरणालं—ता पत्तो चरो पुरं णिवइणो घरं भणइ सुणसु राया ।
इसिणो तुह सहोयरा सीलसायरा अज्जु देव जाया ॥१॥

एक्कु जि पर बाहुबलि[2] सुदुम्मइ णउ तउ करइ ण तुम्हहं पणवइ ।
तं णिसुणेवि पुरोहें उत्तउं[3] भडसामंतमंतिसंजुत्तउं ।
५ कोसु देसु परियणु पयभत्तउ मणहरु अंतेउरु अणुरत्तउ ।
कुलु छलु बलु सामत्थु सुइत्तणु णिहिलजणाणुराउ जसकित्तणु ।
विणउ वियारहारि गुरुसंगमु पोरिसु बुद्धि रिद्धि दइवुज्जमु ।
कुंजर णावइ महिहर जंगमु अत्थि तासु रह करह तुरंगमु ।
अत्थसत्थु जावज्ज वि ण सरइ जाम सहायसहासइं ण करइ ।
१० जाम ण लग्गइ खलसंसग्गे खत्तधम्मणिम्महणुम्मग्गे ।

घत्ता—जावज्ज वि चाउ ण करि धरइ तोणाजुयलु ण बंधइ ॥
णिम्मज्जिए भालसेयलवहिं जाम ण गुणि सरु संधइ ॥११॥

१० १. MBP भणिओ । २ MBP समरभापसण्णा and gloss in MP [illegible] । ३ MP [illegible], but T सवरराहयं शबरणा [illegible] । ४ MP [illegible] । ५. B [illegible] । ६. B [illegible] । ७. MBP पेसियउ । ८. MBP भूसियउ ।
११ १. MBP [illegible] । २ MBP स दुम्मइ । ३. MBP वुत्तउ । ४. MBP कोसु । ५. MB [illegible] । ६. MBP [illegible] । ७. [illegible] । ८. MBP [illegible] ।

घत्ता—पिताके द्वारा कहे गये तपको कैलास पर्वतपर जाकर करना चाहिए, जिसके कारण अत्यन्त सन्तापकारी संसारके प्रति तृष्णा क्षीण होती है ॥९॥

१०

यह कहकर कामको मारनेवाले उपशमरूपी लक्ष्मीके धारक और प्रसन्न कुमार, जिसकी गुहाओंमे वराह विचरण करते हैं और जो शवरोकी शोभासे युक्त है ऐसे वनमे चले गये। उन्होने कैलास पर्वतपर जिनेश्वरके दर्शन किये और परमेश्वर ऋषभकी स्तुति की—"हे वृषभ वृषभध्वज, आपकी जय हो। देवोंके मुकुटोंसे ललितचरण आपकी जय हो। परम अक्षयपदके कारणस्वरूप आपकी जय हो। मोहरूपी महावृक्षका निवारण करनेवाले हे जिन आपकी जय हो। सुखमे वास करनेवाले, दुराशाका निवारण करनेवाले आपकी जय हो। चन्द्रमाके समान श्वेत छत्रवाले आपकी जय हो।" फिर पांच परमेष्ठियोको नमस्कार कर, पांच मुट्ठी केशलोच कर, पांच महामुनियोके पांच महाव्रत लेकर, पांच आस्रवके द्वारोको रोककर, पांच इन्द्रियोके प्रमादोंको छोड़कर, कामदेव-के पांच बाणोंको त्यागकर, पांच आचारश्रेष्ठोको पाकर, दस प्रकारके धर्मोको धारण कर—

घत्ता—मनरूपी तीरको दृढ़ गुण (गुण डोरी) मे रखकर मोक्षके सम्मुख प्रेषित किया। इस प्रकार अरहन्त ऋषभके सन्त पुत्रोने आत्माको चारित्रसे विभूषित किया ॥१०॥

११

तब दूत राजा भरतके घर आया और बोला—"हे राजन् सुनो, शीलके सागर तुम्हारे भाई, हे देव आज ही मुनि हो गये है, एक बाहुबलि ही दुर्मति है, न तो वह तुम्हे प्रणाम करता है और न तप करता है।" यह सुनकर पुरोहितने भट, सामन्त और मन्त्रियोके लिए उपयुक्त यह कहा, उसके (बाहुबलिके) पास कोश, देश, पदभक्त, परिजन, सुन्दर अनुरक्त अन्तःपुर, कुल, छल-बल, सामर्थ्य, पवित्रता, निखिलजनोंका अनुराग, यशकीर्तन, विनय, विचारशील बुधसंगम, पौरुष, बुद्धि, ऋद्धि, देवोद्यम, गज, राजा, जंगम, महीधर, रथ, करभ और तुरंगम है। जबतक वह अर्थशास्त्रका अनुसरण नही करता और जबतक सैकड़ो सहायकोको नही बनाता, जबतक दुष्टोंकी संगति और क्षात्रधर्मके निर्मूलनके मार्गमे नही लगता।

घत्ता—जबतक वह धनुष हाथमे नहीं लेता, तरकस युगलको नही बांधता और भाल तथा कान तक निमज्जित होनेवाली डोरपर तीरका सन्धान नही करता ॥११॥

१२

आरणालं—ण हु मारइ महाहवे जा महाहवे दाइओ समत्थो ।
जा ण हरइ णिराउलं तुह महीयलं तिक्खखग्गहत्थो ॥१॥

ताम तासु दूयउ[1] पेसिज्जइ   जइ पइ पणवइ तो पालिज्जइ ।
णं तो पुणु बाहुबलि धरिज्जइ   बंधिवि कारागारि णिहिज्जइ ।
५ एम मंतु जं तेण पउंजिउ   ता राएं तहु दूउ विसज्जिउ ।
णियवइरत्तु सत्तुविद्धंसणु[2]   सुहडु सुलक्खणु सोमु सुदंसणु ।
देसजाइकुलसुद्धु पसिद्धउ   पंडिउ पडु पहुलच्छिसमिद्धउ ।
विविहविसयभासाभासिल्लउ   दिट्ठुत्तरु महिमाइ महल्लउ ।
तेयवंतु रक्खियपहुतेयउ   महुरवाणि आदेउ[3] अजेयउ ।
१० गउ[4] दूयउ परिचोइयपत्तउ   पोयणपुरु बहुदिवसहिं[5] पत्तउ ।
जहिं वणतरुसाहहिं महु वियलइ   चलकंकेल्लीपल्लवु[6] विलुलइ ।
अइदीहरपवाससममहियहिं   पइसंतहिं वि समंतहिं[7] पहियहिं ।
रसविसेसधारामहमहियइं   जहिं खज्जंति फलाइं सुरहियइं[8] ।
पुप्फहिं[9] गुप्फइ माल विहिंडिर[10]   चउदिसु रुणुरुणंति इंदिंदिर ।
१५ घत्ता—सरु मेल्लिवि करेण णियइढियउ रत्तु पवड्ढुलु[11] रसियउ ।
बिंबीफलु[12] अहरु व वणसिरिहे जहिं कणइल्लें डसियउ ॥१२॥

१३

आरणालं—वरकेदारदारए[1] सालिसारए कसणधवलपिच्छा[2] ।
अणुझणझणियघणकणं कणिसमणुदिणं जहिं चुणंति[3] रिंछा ॥१॥

णिद्धणत्तु जहिं चंदें दाविउ   माणुसि कत्थइ णेय विहाविउ ।
जहिं विहारु पासाउ पियारउ   णउ णारियणकंठु[4] रइगारउ ।
५ उववासु वि चउएण रइज्जइ   णउ रोएं दुक्कालिं किज्जइ ।
जहिं केण वि कीरइ ण सुरागमु   होइ गुणीण गुणेहिं सुरागमु ।
दिट्ठु सिहाछेउ वि रिसिदिक्खहिं   णउ माणिक्कमऊहपरिक्खहिं ।
असिलाहवरूउं[5] जहिं लेप्पइ   णउ विसिट्ठमारणसंकप्पइ ।
वहइ सया णवत्तु वणु[6] जोवणु[7]   णउ णिरुवहउ णिवसंतउ जणु ।
१० जेत्थु कुसादूसणु[8] णीसंगइ[9]   णासवारि णउ रायवयं गइ ।
[10]थद्धत्तणु णिवडणु थणउल्लइ   धरणु णिवीडणु जहिं अहरुल्लइ ।

---

१२ १. MBP दूवउ । २ M पत्तु विद्धंसणु । ३. MBP आदेय । ४. MBP गयउ दूउ । ५ MBP °दियहहिं । ६. MBP पल्लउ । ७ MBP समत्तहिं । ८. MP add after this ' ण कामिणिवयणइं मइसरसइं, पुणु पिज्जहिं जलाइं सरिसरसहिं । ९ MBP गुंफइ । १० MBP विहंडिर । ११. MBP पवट्टलु । १२. MBP बिंबीहलु ।

१३. १. MBP वरु; T केयार° । २. MBP °पिंछा । ३. MBP चरति । ४. MBP णारियणदेहु । ५. MBP °हवरुवउं; K °हवरूवउं but corrects it to °रूउं । ६ MBPT धणु । ७ MBP जोव्वणु । ८. MT कुसादूसण । ९. P णीसग्गइ । १०. MBP थद्धत्तणु ।

१२

जबतक महायुद्धमें समर्थ शत्रु तुम्हें युद्धमे नही मारता और जबतक तीखी तलवार हाथमे लिये हुए वह तुम्हारी निराकुल धरतीका अपहरण नहीं करता, तबतक आप उसके पास दूत भेजें। यदि वह प्रणाम करता है तो उसका पालन किया जाये, नही तो फिर बाहुबलिको पकड़ लिया जाये और बांधकर कारागारमे डाल दिया जाये।" जब उसने (पुरोहितने) यह मन्त्रणा दी तो राजाने उसके पास दूत भेजा। वह दूत अपने स्वामीमें अनुरक्त शत्रुका विध्वंस करनेवाला सुभट, सुलक्षण, सौम्य, सुदर्शन, देश-जाति और कुलसे सिद्ध-प्रसिद्ध, पण्डित, चतुर, प्रभुकी लक्ष्मीसे समृद्ध, विविध विषय और भाषाओंका बोलनेवाला, उत्तरको देख लेनेवाला और महिमासे महान्, तेजस्वी, प्रभुका तेज रखनेवाला, मधुरभाषी, आदरयुक्त और अजेय था। अपने वाहनको प्रेरित कर दूत चल दिया और कई दिनोंमें पोदनपुर नगर पहुँचा। जहाँ वनतरुओंकी शाखाओसे मधु निकल रहा था, चंचल अशोक वृक्षोंके पत्ते हिल रहे थे। अत्यन्त लम्बे प्रवासके श्रमसे सब ओरसे प्रवेश करते हुए पथिकोके द्वारा रस विशेषकी धारासे महकते हुए जहाँ सुरभित फल खाये जाते है। पुष्पोके द्वारा मालाएँ गूँथी जाती है और भ्रमणशील मधुकर चारो दिशाओमे गुनगुना रहे हैं।

घत्ता—जहाँ शब्द करके और चोंचरूपी करसे खीचकर रसीले लाल-लाल वनश्रीके अधरके समान कुंदरु फलको शुकने काट खाया ॥१२॥

१३

धान्यके श्रेष्ठ खेतोंके मार्गमे काले और सफेद बालवाले रीछ झनझनाते हुए घन कणोंवाले धान्यको प्रतिदिन चुगते हैं। जहाँ निर्धनता (स्निग्धत्व) चन्द्रमाके द्वारा दिखायी जाती है मनुष्यमे निर्धनता दिखाई नही देती। जहाँ विहार शब्द प्रासादोमे प्रियकारक होता है, प्रेम उत्पन्न करनेवाला नारीजनके कण्ठ विहार (हार रहित) नही है। जहाँ चटकके द्वारा (गौरैया) उपवास (गृहोके भीतर वास) किया जाता है, वहाँके लोग रोग और दुष्कालके कारण उपवास नहीं करते। जहाँ किसीके द्वारा सुरागम नही किया जाता (मदिरापान), गुणियोके गुणोसे सुरागम (देवागम) होता है। जहाँ मुनि दीक्षामे ही शिखाउच्छेद होता है माणिक्योकी किरण परीक्षामे शिखाच्छेद नही होता है। जहाँ लेपकर्ममे असिलाभवरूप (अमूर्तसे उत्पन्न रूप) होता है, विशिष्ट मारण संकल्पमे नही। जहाँ वन और यौवन सदैव नवत्व धारण करते है, निरुपद्रव रूपसे रहता जन नवत्व धारण नही करते (पुरानी व्यवस्थाका त्याग नही करते)। जहाँ अनासंग (संसारसे विरक्त) मुनियोंके लिए कुसादूषणु (पृथ्वी और लक्ष्मी दूषण है) अश्वारोही और राज्यपदको प्राप्त व्यक्तिके लिए पृथ्वी और लक्ष्मी दूषण नही है। जहाँ स्तनोंमे सघनता और पतन है, वहाँ लोगोंमे सघनता और पतन नही है। जहाँ अधरोमे धरण (पकड़ा जाना) और निष्पीड़न है, वहाँके जनोमे ये बातें नही हैं।

घत्ता—पुक्खरिणिहिं कीलागिरिवरहिं जलखाइयपायारहिं ॥
जं सोहइ मोत्तियतोरणहिं मंडिउ चउहुं मि दारहिं ॥१३॥

१४

आरणालं—तहिं सुरगुरुसुरूयओ रायदूयओ पट्टणे पइट्ठो ।
रायालयदुवारए हिययहारए णायरेहिं दिट्ठो ॥१॥
कणयदंडयरु भल्लउ भाविउ तहिं पडिहारु तेण बोल्लाविउ ।
बुद्धिवंतु अचक्खुयभूयउ भणु अच्छइ दुवारि पहुदूयउ ।
५ तं णिसुणिवि गउ लट्ठिविहत्थउ कहइ कुमारहु पणमियसत्थउ ।
अच्छइ दारि णरिंदवओहरु अत्थि णत्थि भणु सामिय अवसरु ।
ता कंदप्पें भणिउं म वारहि आयरकिंकरु लहु पइसारहि ।
ता कट्ठियहरेण जसणिम्मलु पइसारिउ पसण्णमुहमंडलु ।
वाहुवलीसु देउ कयमंडलु दूएं दिट्ठउ णं आहंडलु ।
१० संथुउ मउलियपंजलिपोमें को वसि ण कियउ तुह परिणामें ।
घत्ता—तुह धणुगुणटंकारएण केणँ ण माणु णिहित्तउ ॥
पइं वम्मह पंचहिं मग्गणहिं सयलु वि तिहुयणु जित्तउ ॥१४॥

१५

आरणालं—पियवयणं पि भासियं सुइसुहासियं मुत्तकामभोया ।
तुह जयवडहसद्देणं जगविसद्देणं णउ सुणंति लोया ॥१॥
जय कुसुमाउह रइरमणीवर अलिमालाजीयासंघियसर ।
पइं पेच्छिवि घोलइ उप्परियणु वियलइ णारिहि णीवीवंधणु ।
५ चिहुरभारु दढवंधु वि पसिढिलु हवइ रयंबु सवइ सोणीयलु ।
चलइ वलइ लोयणजुयलुल्लउ दीसइ अंगु वूढसेल्लउ ।
रंभा णवरंभा इव डोल्लइ रइवाएं आहल्ल वि हल्लइ ।
देवें तिलोत्तिम तिलु तिलु खिज्जइ विरहें उव्वेंसि उव्वेइज्जइ ।
मेणइं मीणि व थोवइ पाणिइ पिय संतप्पइ रवियरमाणिइ ।
१० एम थुणंतहु दिण्णउं आसणु णिवसणु भूसणु किउ संभासणु ।
हिमइरिजलहिमज्झि महिरायहु कुसलु खेउं भरहहु महु भायहु ।
कुसलु खेउं कुरुवंसणरेसहु कुसलु खेमु जलहरणिग्घोसहु ।
कुसलु खेमु णमिविणमिकुमारहु कुसलु खेउं पत्थिवपरिवारहु ।
दूवें वुत्तउ कुसलु णरिंदहु कुसलु णाह णिहिलहु णिवविंदहु ।
१५ एक्कु जि अकुसलु सुहिउक्कंठिउ जं तुहुं देवें दूरि परिसंठिउ ।

१४. १. MBPT सरूयओ । २ MB सयालए । ३. MBP °दडकरु । ४. MBP पणमियं° । ५. MBP वारि । ६ M °टंकारवेण । ७. MBP केणहिमाणु ण चत्तउ; T णिहित्तउ त्यक्तः ।
१५ १ MB जयवडसद्देण । २. B सिढिलु । ३ P देवि । ४. MBP उव्वस । ५. MBP मीणइ । ६. MBP दूरि देव ।

घत्ता—जो पुष्करिणियों, क्रीड़ागिरिवरों, जलखाइयों, प्राकारों तथा मोतियोके तोरणोंवाले चारों द्वारोसे अलकृत-शोभित है ॥१३॥

१४

ऐसे उस पोदनपुर नगरमें वृहस्पतिके समान रूपवाला प्रवेश करता हुआ राजदूत राज्यालयके सुन्दर द्वारपर लोगोके द्वारा देखा गया। वहाँ स्वर्णदण्ड धारण करनेवाले सुन्दर विचारशील आश्चर्यचकित एवं वुद्धिमान् प्रतिहारसे वह बोला, "राजासे कहो कि द्वारपर प्रभुका दूत खड़ा है।" यह सुनकर लाठी हाथमें लिये हुए मस्तकसे प्रणाम कर प्रतिहार कुमारसे कहता है, "द्वारपर राजाका दूत स्थित है, हे स्वामी अवसर है कि 'हाँ-ना' कुछ भी कह दें।" तब कामदेव बाहुबलिने कहा, "मना मत करो। भाईके अनुचरको शीघ्र प्रवेश दो।" तब यष्टि धारण करनेवाले प्रतिहारीने यशसे निर्मल प्रसन्न मुखमण्डल दूतको प्रवेश दिया। सभाके बीच बैठे हुए बाहुवलीश्वरको दूतने इस रूपमें देखा मानो इन्द्र हो। हस्तकमलोको अंजलि जोड़कर उसने संस्तुति की—"तुमने अपने परिणामसे किसको वशमे नही कर लिया।"

घत्ता—तुम्हारी धनुष-डोरीके टंकारसे किसने मान नही छोड़ दिया। हे कामदेव, तुमने अपने पाँच ही तीरोसे समस्त त्रिलोकको जीत लिया ॥१४॥

१५

"काम और भोगोको जिन्होने भोगा है ऐसे लोग, कहे गये श्रुतिमधुर प्रिय वचन और जगका विमर्दन करनेवाले तुम्हारे विजयके नगाड़ोंका शब्द नही सुनते। हे रतिरूपी रमणीके वर कामदेव, आपकी जय हो। भ्रमरबालाकी डोरीपर सर-सन्धान करनेवाले आपको देखकर नारीके ऊपरका वस्त्र गिर जाता है, और नीवि-निबन्धन खुल जाता है। पक्का बँधा हुआ भी केशभार खुल जाता है, रज होने लगता है, श्रोणीतल खिसक जाता है। नेत्रयुगल चंचल होकर मुड़ने लगता है, शरीर पसीना-पसीना हो जाता है। रम्भा नवकदलीकी तरह हिलने लगती है, रतिकी हवासे और अधिक कँपने लगती है। हे देव, तिलोत्तमा क्षण-क्षण खेदको प्राप्त होती है और विरहसे उर्वशी खेदको प्राप्त होती है। हे स्वामी, मेनका थोड़े पानीमे मछलीकी तरह सूर्यकी किरणोके सन्तापसे सन्तप्त हो उठती है।" इस प्रकार स्तुति करते हुए दूतको उसने आसन, वसन और भूषण दिये और सम्भाषण किया—"हिमगिरिसे लेकर समुद्र पर्यन्त, महीराज मेरे भाई भरतका कुशल-क्षेम तो है? कुरुवंशके राजाका कुशल-क्षेम तो है, समुद्रके समान निर्घोषवाले (उनका) कुशल-क्षेम तो है। नमि-विनमि कुमारका कुशल-क्षेम तो है, राजाके परिवारका कुशल-क्षेम तो है।" दूत बोला—"हे राजन्, कुशलक्षेम है, समस्त राजसमूहका कुशलक्षेम है? सुधीजनोमे उत्कण्ठा पैदा करनेवाला एक ही अकुशल है और वह यह कि हे देव आप बहुत दूर हैं?

घत्ता—दूरत्थहं बंधुहुं णेहु जइ णासइ पिसुणकयंतरु ॥
रवि मेल्लइ किरणइं पंकयहं ताइं णिवारइ जलहरु ॥१५॥

१६

आरणालं—भो भो दणुयणिम्महा सुणसु वम्महा कुणसु चारु चित्तं ।
सहु गुरुएण भाइणा तिजगताइणा रूसिउं ण जुत्तं ॥१॥

को ससहरु को किर करमेलउ को समुद्दु को जलकल्लोलउ ।
को तुहुं भरहु कवणु किर वुच्चइ एहउ बुहहं वियप्पु ण रुच्चइ ।
५ कप्परुक्खु किं कुसुमहिं अंचमि रयणायरु करसलिलें सिंचमि ।
सूरहु अग्गइ दीवउ बोहमि हउं णिहीणु किं पइं संबोहमि ।
तायहु अच्छइ भरहु जि राणउ तुहुं जुयराउ जगेक्कपहाणउ ।
माणु मरट्टु विसट्टु मुएप्पिणु जीवहु एक्कमेक्क अणुणेप्पिणु ।
तरुणिकंठकंटइयपवट्टहिं अरिवरदंतिदंतपरिहट्टहिं ।
१० आयड्ढियपईहकोदंडहिं आलिंगियउ जेहिं भुयदंडहिं ।
तेहिं ण पुणरवि रणि जुज्झिज्जइ गुरुयणि अविणएण लज्जिज्जइ ।

घत्ता—कुलसामि महाबलु सुयणु गुणि णउ णवंति जे राणउ ॥
घरि ताहं होइ दालिद्दडउ अह जमपुरिहि पयाणउं ॥१६॥

१७

आरणालं—जो वरचरमकुलयरो पढमणिववरो पंकयच्छियाए ।
जिणवंसो पयासिओ जेण भूसिओ रायलच्छियाए ॥१॥

जासु चक्कु रिउचक्कु णिसुंभइ जासु दंडु परदंडु णिरुंभइ ।
जासु पुरोहु पुराइउ पेच्छइ तुरउ तुरिउ हियएं सहुं गच्छइ ।
५ कागणि दिणमणि ससि वि दुगुंछइ थवइ थवइ तिहुयणु जइ इच्छइ ।
छायइ छत्तु होंतु विवरेरउ असि असु कड्ढइ सत्तुहुं केरउ ।
चम्मु चमू धरंतु अइभासइ सेणावइ सेणावइ णासइ ।
मागहु वरतणु जेण पहासु वि णिज्जिउ सुरु वेयड्ढणिवासु वि ।
जेण तिमीसकवाडु विहट्टिउ सिंधुदेविअहिमाणु पलोट्टिउ ।
१० दिण्ण केर हिमवंतकुमारहु पुणु आइउ वसहइरिसुतीरहु ।
तहिं अप्पणउं णाउं संणिहियउ छाहिछलेण व ससिणा गहियउ ।
तं तहिं दीसइ ण उण कलंकउ णिवणामंकिउ भमइ ससंकउ ।
विसहरउलइं सविसहरवरिसइं जित्तइं मेच्छउलइं सामरिसइं ।
णं पालेययसेलकिरीडहु पुणु भउ जणियउं गंगाकूडहु ।

---

१६. १. M °णिम्मुहा । २ MBP गरुएण । ३. MB हउं मि हीणु । ४. MP जगेक्कु पहाणउ ।
५ MBPK माणु मरट्टु विसट्टु । ६. P परिवट्टहिं and gloss परिपूर्णैः । ७. MBP °पयंड° ।
८. MBP गुरुयण° ।

१७ १. MBP अइहासइ । २ MBP वसहइरिउ तीरहु । ३. MBP °णामंकउ । ४ MBP मिच्छाउलइं ।

घत्ता—दुष्टोंके द्वारा अन्तर पैदा कर देनेपर दूरस्थ भाइयोंका स्नेह नष्ट हो जाता है, सूर्य कमलोंके लिए किरणें भेजता है परन्तु जलधर उनका निवारण कर देता है ॥१५॥

१६

हे दानवोंको नष्ट करनेवाले कामदेव, सुनो और अपना चित्त सुन्दर बनाओ। त्रिलोकको सतानेवाले अपने बड़े भाईसे रूठना ठीक नहीं। चन्द्रमा कौन और उसकी किरणोंका समूह कौन? समुद्र कौन और उसकी जलतरंगे कौन? तुम कौन और भरत कौन? पण्डितोंको यह विकल्प (या भेदभाव) अच्छा नही लगता। क्या मैं कल्पवृक्षकी फूलोंसे पूजा करूँ? क्या समुद्रको हाथके जलसे सींचूँ? क्या सूर्यके आगे दीप जलाऊँ, मैं हीन हूँ क्या तुम्हें सम्बोधित करूँ? तात (ऋषभ) के बाद भरत राजा है और तुम भुवनमे एकमात्र प्रधान युवराज हो। अतः चित्तभेद मान और अहंकार छोड़कर जीवको एकमेक मानकर, तरुणीजनोंके कण्ठोंको कण्टकित करनेवाले, शत्रुरूपी गजोंके दाँतोंको परिभ्रष्ट करनेवाले, प्रदीर्घ धनुषोको आकर्षित करनेवाले जिन बाहुओसे (जिस भरतका) आलिंगन किया है उन्ही बाहुओसे उसके साथ युद्धमे नही लड़ा जाना चाहिए, गुरुजनमे अविनयसे लज्जित होना चहिए।

घत्ता—जो राजा, कुलस्वामी, महाबल, सुजन और गुणी व्यक्तिको नमस्कार नही करते उनके घरमें दरिद्रता बढती है और उनका यमपुरीके लिए प्रस्थान होता है ॥१६॥

१७

जो परम चरमशरीरी कुलकर है, पहला राजा है, जिसने जिनके वंशको प्रकाशित किया है, और कमलनयनी राजलक्ष्मीसे भूषित किया है। जिसका चक्र शत्रुचक्रको नष्ट कर देता है, जिसका दण्ड शत्रुदण्डको रोक देता है, जिसका मन्त्री आगेकी बात देख लेता है, जिसका तुरग हृदयके साथ दौडता है, जिसका कागणी मणि सूर्य और चन्द्रमाकी भी अपेक्षा नही रखता, जिसका स्थपति चाहे तो त्रिभुवनकी रचना कर सकता है। विरुद्ध होनेपर वह छत्र छा लेता है, और शत्रुओंके तलवारसे प्राण निकाल लेता है। चमू (सेना) को पकड़ते हुए उसका वर्म अत्यन्त शोभित होता है, जिसने मागध और वरतनुको जीत लिया है और विजयार्ध पर्वत निवासी देवको भी जीत लिया है। जिसने तिमिस्राके किवाड़ोको विघटित कर दिया और सिन्धु देवीका अभिमान चूर-चूर कर दिया। हिमवन्त कुमारको आज्ञा (अधीनता) देकर फिर वह कैलास पर्वतके तटपर आया। वहाँ उसने अपना नाम लिखा, जिसे छायाके छलसे चन्द्रमाने ग्रहण कर लिया, वही नाम चन्द्रमामे दिखाई देता है वह कलंक नही है, राजा भरतके नाममे अंकित होकर चन्द्रमा सशंकित परिभ्रमण करता है। मेघकुलोको बरसानेवाले नागकुलो और अमर्पसे भरे हुए म्लेच्छकुलोंको जिसने जीत लिया है, और मानो जिसने हिमशिखरके मुकुटवाले गंगाकूटको भी भय उत्पन्न कर दिया है।

१५ घत्ता—दुक्की मंदाइणि कलसकर लोएं[5] दीसइ केही ॥
थिय ण्हाणकरणमणणिवणियडि मज्जणवालिणि जेही ॥१७॥

१८

आरणालं—जस्सायासगामिणो खयरसामिणो विहियहियसल्ला[1]।
णमिविणमीसणामया णिरहु णिम्मया जायया वसिल्ला ॥१॥

पुणु वेयड्ढहु कुलिसें ताडिउ पुव्वंकवाडु[2] जेण उग्घाडिउ ।
णट्टमालि साहिउ मालायरु पयजुइ पाडिउ णं पायडणरु ।
५ असमु वइरु किं तेण समाणउं जं[3] माणुसु रिसउ उत्ताणउं ।
पिंछकमंडलुमंडियहत्थहु[4] रोसु जणइ तं मुणिवरसत्थहु ।
चक्कवट्टि गुणमणिरयणायरु आउ जाहुं अवलोयहि भायरु ।
मा पज्जलउ तासु कोवाणलु मा णिड्डहउ[5] तुहारउ भुयबलु ।
हा मा दुरयरएहिं विहिज्जउ[6] पोयणपुरपायारु दलिज्जउ ।
१० मा उच्छलउ छइयदिसमेरउ हरिखुरखयखोणीधूलीरउ[7] ।
मा धावंतु महंत महारह मा पिसुणहं पूरंतु मणोरह ।
काउ कंदलावलिहिं म विरसउ पलयकालु सोणिउं मा करिसउ[8] ।
देहि कप्पु णिइप्पु[9] हवेप्पिणु पेक्खु भरहु भावें पणवेप्पिणु ।
तं णिसुणेप्पिणु बाहुवलीसें पडिजंपिउं भूभंगविहीसें ।

१५ घत्ता—कंदप्पु अदप्पु ण होमि हउं दूययकरउ णिवारिउ ॥
संकप्पें सो महु केरएण पहु उज्झिहइ णिरारिउ ॥१८॥

१९

आरणालं—जं[1] दिण्णं महेसिणा दुरियणासिणा णयरदेसमेत्तं ।
तं महु[2] लिहियसासणं कुलविहूसणं हरइ को पहुत्तं ॥१॥

केसरिकेसरु वरसइथणयलु[3] सुहडहु सरणु मज्झु धरणीयलु ।
जो हत्थेण छिवइ सो केहउ किं कयंतु कालाणलु जेहउ ।
५ हउं सो पणवमि[4] को सो भण्णइ महिखंडेण कवण परमुण्णइ ।
किं जम्मणि देवहिं अहिसिंचिउ किं मंदरगिरिसिहरि समच्चिउ ।
किं तहु अग्गइ सुरवइ णच्चिउ सिरिसइरिणियइ[5] किं रोमंचिउ ।
चक्कु दंडु तं तासु जि सारउ महु पुणु णं कुंभारहु केरउ ।

---

५ M records a *p* राएं for लोएं ।

१८. १ MB विहय° । २. M पुव्विकवाडु । ३. MP ण माणसु, B माणुसु । ४. MBP °कमंडल° । ५. MBP णिद्दलउ । ६. B वहिज्जउ । ७. BP हयखुर° । ८ MBP वरिसउ । ९. MBP णियदप्पु हरेप्पिणु ।

१९ १. MBP दिण्णउं । २. B omits तं महु लिहियसासणं । ३. M वरहइ, but records a *b* वरसइ° । ४ MBP पणवउं । ५ MBP °सइरिणियइ सो रोमंचिउ । ६. BP add after this : हरिगइंद-किंकरछेलयणिहु ।

घत्ता—कलश हाथमें लेकर गंगानदी वहाँ पहुँची, लोगोंको वह ऐसी दिखाई दी जैसे स्नान करनेकी इच्छा रखनेवाले राजाके निकट स्नान करानेवाली दासी खड़ी हो ॥१७॥

१८

आकाशगामी नमि-विनमि नामके विद्याधर स्वामी हृदयमे शल्य धारण कर, बिना किसीके मदके जिसके वशीभूत हो गये, जिसने फिर विजयार्ध पर्वतको वज्रसे आहत किया, जिसने पूर्व-किवाड़का उद्घाटन किया, जिसने नृत्यमालको सिद्ध किया और मालाकरको एक प्राकृत जनकी तरह अपने दोनों पैरोंमें गिरनेके लिए बाध्य किया। उसके साथ असम (विषम) वैर क्या, जो ऊर्ध्वमुख मनुष्यको रिक्त करता है वह पिच्छी और कमण्डलसे मण्डित हाथवाले मनुवर-समूहको भी क्रोध उत्पन्न कर देता है। वह गुणरूपी मणियोंका समुद्र चक्रवर्ती है। आओ भाईको चलकर देखें। उसके क्रोधकी आग न भड़के और तुम्हारा बाहुबल न जले, हा तुम हाथीके दाँतोसे विभक्त न हो, पोदनपुरके परकोटे नष्ट न हो, दिशाकी मर्यादाओंको आच्छादित करनेवाला, घोड़ोके खुरोसे क्षत धरतीका धूल-समूह न उछले, महान् महारथ न दौड़े, दुष्टोके मनोरथ पूरे न हों। मनुष्योके कपालके ऊपर कौआ न बोले। प्रलयकाल रक्तको न खीचे? इसलिए दर्पहीन होकर कर दो, और भावपूर्वक प्रणाम कर भरतसे मिलो। बाहुबलीश्वरने यह सुनकर भौंहोके संकोचसे भयंकर वह बोला—

घत्ता—मैं कन्दर्प (कामदेव) हूँ, अदर्प (दर्पहीन) नही हो सकता। मैंने दूत समझकर मना किया। मेरे संकल्पसे वह राजा निश्चित रूपसे दग्ध होगा ॥१८॥

१९

पापोंको नाश करनेवाले महर्षि ऋषभने जो सीमित नगर देश दिये हैं वह मेरे कुलविभूषित लिखित शासन है, उस प्रभुत्वका कौन अपहरण करता है? सिंहकी अयाल, उत्तम सतोके स्तन-तल, सुभटकी शरण और मेरे धरणीतलको जो अपने हाथसे छूता है, मैं उसके लिए यम और कालानलके समान हूँ? मै उसे प्रणाम करूँ, वह कौन है? धरतीखण्डसे कौन-सी परम उन्नति कही जाती है। क्या जन्मके समय, देवोने उसका अभिषेक किया? क्या सुमेरु पर्वतपर उसकी पूजा की गयी? क्या उसके सामने सुरपति नाचा। वह स्वेच्छाचारिणी लक्ष्मीसे इतना रोमांचित क्यो है? वह चक्रदण्ड उसीके लिए श्रेष्ठ हो सकता है, मेरे लिए तो वह कुम्हारका चक्का है। हाथी-

करिसूयररहवरडिंभयरहं णर णिहणमि रणि जे वि महारह ।
१० भरहु हरइं[7] किं सज्झु सुयाभरु[8] तइं[9] चुक्कइ जइ[10] सुयरइ जिणवरु ।

घत्ता—तहु मेइणि महु पोयणणयरु आइजिणिंदें दिण्णउं ॥
अब्भिडउ पडउ असि सिहिसिहहिं जइ ण सरइ[11] पडिपवण्णउं ॥१९॥

२०

आरणालं—ता दूएण जंपियं किं सुविप्पियं भणसि भो कुमारा ।
बाणा भरहपेसिया पिंछभूसिया होंति दुण्णिवारा ॥१॥

पत्थरेण किं मेरु दलिज्जइ किं खरेण मायंगु खलिज्जइ ।
खज्जोएं[1] रवि णित्तेइज्जइ किं घुट्टेण जलहि सोसिज्जइ[2] ।
५ गोप्पएण किं णहु माणिज्जइ[3] अण्णाणें किं जिणु जाणिज्जइ ।
वायसेण किं गरुडु णिरुज्झइ णवकमलेण कुलिसु किं विज्झइ ।
करिणा कि मयारि मारिज्जइ किं वसहेण वग्घु दारिज्जइ ।
किं हंसें ससंकु धवलिज्जइ किं मणुएण कालु कवलिज्जइ ।
डुंडुहेण[4] किं सप्पु डसिज्जइ किं कम्मेण सिद्धु वसि किज्जइ ।
१० कि णीसासें लोउ णिहिप्पइ किं पइं भरहें[5]णराहिउ जिप्पइ ।

घत्ता—हो होउ पहुप्पइ[6] जंपिएण राउ तुहुप्परि वग्गइ ॥
करवालहिं सूलहिं सव्वलहिं परइ रणंगणि[7] लग्गइ ॥२०॥

२१

आरणालं—ता भणियं सहेउणा मयरकेउणा एत्थ कहिं मि जाया ।
जे परदविणहारिणो कलहकारिणो ते जयम्मि राया ॥१॥

वुड्ढउ जंबुउ सिवें[1] सहिज्जइ एण णाइं महु हासउ दिज्जइ ।
जो बलवंतु चोरु सो राणउ णिब्बलु[2] पुणु किज्जइ णिप्राणउ[3] ।
५ हिप्पइ मृगहु मृगेण[4] जि आमिसु हिप्पइ मणुयहु मणुएण जि वसु ।
रक्खाकंखइ जूहुं[5] रएप्पिणु एक्कहु केरी आण लएप्पिणु ।
ते णिवसंति तिलोईगविट्ठउ[6] सीहहु केरउ वंदु[7] ण दिट्ठउ ।
माणभंगि वरं[8] मरणु ण जीविउ एहउ दूय सुट्ठु मइं भाविउ[9] ।
आवउ[10] भाउ घाउ तहु दंसमि संझाराउ व खणि विद्धंसमि ।

---

७. MBPT भरइ । ८. M भुयातरु; T भुयाहरु बाहुसामर्थ्यम् । ९. MBP ता । १०. M सुमरइ ।
११. MBP पडिवण्णउं ।

२०. १ MBPK किं खज्जोएं । २. P सोखिज्जइ । ३. P मण्णिज्जइ । ४. MBP डिंडुहेण । ५. MBP भरहु । ६. MBP पहुच्चइ । ७. K रणंगणु मग्गइ ।

२१. १. MBP सिउ । २. M णिब्बल । ३. MBP णिप्पाणउ । ४. MBP मिगहु मिगेण । ५. MBP जूहु । ६. B तिलोउ । ७. MBP विंदु । ८. MBP वरि । ९. M भामिउ । १०. MBPK राउ, G भाउ but writes above it राउ in second hand.

रूपी सुअरों और रथवररूपी छकड़ोंके जो भी महारथी मनुष्य है, उनको मैं मारूँगा? भरत मेरे भुजाभारका क्या अपहरण करेगा? वह तभी बच सकता है कि जब जिनवरकी याद करता है?

घत्ता—उसकी धरती और मेरा पोदनपुर नगर, दोनों आदिजिनेन्द्रने दिये। यदि वह स्वीकार किये हुएको नही मानता, तो वह तलवारसे लडता हुआ, अग्निकी ज्वालामें पड़ेगा? ॥१९॥

२०

तब दूतने कहा, "हे कुमार, यह अप्रिय क्या कहते हो? भरतके द्वारा प्रेषित पुखविभूषित तीर दुर्निवार होंगे? पत्थरसे क्या सुमेरु पर्वत दला जा सकता है? क्या गधेसे हाथी स्खलित किया जा सकता है? जुगुनूके द्वारा क्या सूर्य निस्तेज किया जा सकता है? क्या घूँटसे समुद्र सोखा जा सकता है, गोपदसे क्या आकाश मापा जा सकता है? अज्ञानसे क्या जिनको जाना जा सकता है, कौएके द्वारा क्या गरुड़ रोका जा सकता है? नवकमलसे क्या वज्रको वेधा जा सकता है? हाथीके द्वारा क्या सिंह मारा जा सकता है? क्या बैलके द्वारा बाघ विदीर्ण किया जा सकता है? क्या मनुष्यके द्वारा काल कवलित किया जा सकता है? मेढकके द्वारा क्या सांप डसा जा सकता है, क्या कर्मके द्वारा सिद्धको वशमे किया जा सकता है? क्या विश्वाससे लोकको आहत किया जा सकता है? क्या तुम्हारे द्वारा भरत नराधिप जीता जा सकता है।

घत्ता—हो-हो, बकनेसे क्या समर्थ हुआ जा सकता है! राजा तुम्हारे ऊपर आक्रमण करता है, करवालों शूलो और सब्बलोंके द्वारा सबेरे तुमसे खांगणमे मिलेगा॥२०॥

२१

तब कामदेव बाहुबलि युक्तिके साथ कहता है—"चाहे यहाँ, या और कही विश्वमें जो कलह करनेवाले और दूसरोंका धन अपहरण करनेवाले है, वे ही राजा हुए है? बूढा सियार शिव-की बात करता है, जैसे यह मुझे हँसी प्रदान करता है, जो बलवान् चोर है, वह राजा है, और जो निर्बल है वे निष्प्राण कर दिये जाते हैं। पशुके द्वारा पशुका मांस अपहृत किया जाता है और मनुष्यके द्वारा मनुष्यके धनका अपहरण किया जाता है। रक्षाकी आकांक्षासे व्यूह रचकर, एककी आज्ञा लेकर वे राजा निवास करते है। लेकिन यह बात त्रिलोकमें गवेषित है कि सिंहका कोई समूह दिखाई नही देता। मानभंग होनेपर मर जाना अच्छा है, जीना नही।" हे दूत, यह बात मुझे बहुत अच्छी लगती है। भाई आये, मै उसे आघात दिखाऊँगा और सन्ध्यारागकी तरह

१० सिहिसिहिहं[11] देविंदु वि ण सहइ महु मणसियहु विसिहं[12] को विसहइ।
एक्कु जि परउव्वारु णरिंदहु जइ पइसरइ सरणु[13] जिणयंदहु।
घत्ता—संघट्टमि लुट्टमि गयघडहु दलमि सुहड रणमग्गइ॥
पहु आवउ दावउ बाहुबलु महु बाहुवलिहि अग्गइ॥२१॥

२२

आरणालं—ता दूउ[1] विणिग्गओ णियपुरं गओ तम्मि णिवणिवासं।
सो विण्णवइ सायरं सारसायरं पणविउं[2] महीसं॥१॥
विसमु देव बाहुबलि णरेसरु णेहु ण संधइ संधइ गुणि सरु।
कज्जु ण बंधइ बंधइ परियरु संधि ण इच्छइ इच्छइ संगरु।
५ पइं णउ पेच्छइ पेच्छइ भुयबलु आण ण पालइ पालइ णियछलु।
माणु ण छंडइ छंडइ भयरसु दयवु[3] ण चिंतइ चिंतइ पोरिसु।
संति ण मण्णइ[4] मण्णइ कुलकलि पुहइ ण देइ देइ बाणावलि।
तुज्झु ण णवइ णवइ मुणितंडउ अंगु ण कड्ढइ कड्ढइ खंडउ।
देव ण देइ भाइ तुह पोयणु पर जाणमि देसइ रणभोयणु।
१० ढोयइ रयणइं णउ करिरयणइं ढोएसइ ध्रुवुं[5] णरउररयणइं।
घत्ता—संताणु कुलक्कमु गुरुकहिउ खत्तधम्मु णउ वुज्झइ॥
मज्जायविवज्जिउ सामरिसु अवसें दाइउ जुज्झइ॥२२॥

२३

आरणालं—ता परिल्हसिउ दिणमणी णं सिरोमणी गयणकामिणीए।
अत्थं पडि णिवेइओ रुइविराइओ णाइ जामिणीए॥१॥
भावेसहि भणेवि अइरत्तउ दिवसहु दिण्णु दीवु[1] सिहितत्तउ।
णं चउपहरहिं वणु अहिकंतिहि जायउ लोहियद्दु णहदंतिहि।
५ णाइं पवालकुंभु[2] दिसणारिइ धरिवि मुक्कु[3] दिक्करिगणियारिइ।
पउलिवि तलिवि[4] दलिवि दलवट्टिवि जीवरासि जगभायणि घट्टिवि।
दंडरहियजणलोहियलित्ती कालें[5] विव दिसिवहि[6] घित्ती।
उग्घाडिवि ससहरमुह णिद्धहि संमुहियहि तियसासासुद्धहि।
णं सिंदूरकरंडु झसच्छिइ दाविउ लवणजलहिजललच्छिइ।
१० मयरंदुल्लोलु व जगकमलहु णिउ वाएण वरुणसुहकमलहु।
गोमिणीइ हरिरइरसभरिउं[7] पोमरायवत्तु[8] व वीसरिउं[9]।
अत्थमियउ जाइवि अवरासइ रत्तु मित्तु णं गिलियउ वेसइ।

---

११ M सिहसिहिहिं देविंदु ण वि ण सहइ। १२. MT विसह। १३. MBPK जिणइंदहु।

२२ १ MBP दूवउ। २ MB पणवउ; P पणविओ। ३. MBP दइउ। ४ BPP मग्गइ मग्गइ। ५. MBP धुउ।

२३. १. MBP दीउ। २. MBP कुंभ। ३ MBP मुक्क। ४. MBP मलिवि। ५. B कालि दाविय। ६. MB दिसवहिं; P दिवसहि। ७. MBP °भरियउ। ८ MBP °पत्तु। ९ MBP वीसरियउ।

एक क्षणमें उसे नष्ट कर दूँगा ! आगकी ज्वालाओंको देवेन्द्र भी नहीं सह सकता, मुझ कामदेवके बाणको कौन सहता है ? राजाका एक ही परोपकार हो सकता है कि यदि वह जिनेन्द्रकी शरण में चला जाये।

घत्ता—संघर्ष करूँगा, गजघटाको लोटपोट करूँगा और रणमार्गमें सुभटोंको दलन करूँगा। राजा आये और मुझ बाहुबलिके आगे बाहुबल दिखाये ? ॥२१॥

२२

तब दूत अपने नगरके लिए गया और वहाँ राजाके निवासपर लक्ष्मी और पृथ्वीके आकर राजासे सादर निवेदन करता है—"हे देव, बाहुबलि नरेश्वर विषम है, वह स्नेह नहीं बाँधता, गुणपर तीर बाँधता है (संधान करता है) वह कार्य नहीं बाँधता, अपना परिकर बाँधता है, वह सन्धि नहीं चाहता, युद्ध चाहता है। वह तुम्हें नहीं देखता, अपना भुजबल देखता है, आज्ञाका पालन नहीं करता, अपने कौशलका पालन करता है, मान नहीं छोड़ता, भयरस छोड़ता है, दैवकी चिन्ता नहीं करता, वह अपने पौरुषकी चिन्ता करता है, वह शान्ति नहीं चाहता, वह गृहकलह चाहता है, वह धरती नहीं देता, बाणावलि देता है, वह तुम्हे प्रणाम नहीं करता, मुनिसमूहको प्रणाम करता है, वह अंग नहीं निकालता, अपनी तलवार निकालता है, हे देव, भाई तुम्हें पोदनपुर नगर नहीं देता, परन्तु मै जानता हूँ कि वह रण भोजन देगा, वह रत्नों और गजरत्नोंको उपहारमे नहीं देता वह मनुष्य-वक्षोंके रत्नोंको लेगा।

घत्ता—वह परम्परा कुलक्रम गुरु द्वारा कथित क्षात्रधर्म नहीं समझता, मर्यादा विहीन सामर्ष वह शत्रु अवश्य युद्ध करेगा ॥२२॥

२३

इतनेमे दिनमणि (सूर्य) खिसक गया, मानो गगनरूपी कामिनीका चूड़ामणि हो, जैसे यामिनीने शान्तिसे शोभित उसे अस्ताचलके प्रति निवेदित किया हो। 'प्रवेश मत करो' यह कहनेके लिए जैसे उसने दिवसके लिए आगसे सन्तप्त दीप दिया हो, मानो चार प्रहर तक अभिक्रान्त करते हुए नभरूपी गजसे वन लोहूसे लाल हो उठा। जैसे दिशारूपी नारीने प्रवालोंका घड़ा धारण कर दिग्गजकी हस्तिनीके ऊपर फेक दिया हो, मानो विश्वरूपी भाजनमे फैलकर तलकर दलकर चूरचूरकर और घोटकर, कालने, दण्डरहित जनरक्तसे लिप्त जीवराशि दिशापथमे फेक दी हो, मानो सामने आयी, स्निग्ध पूर्वदिशारूपी मुग्धाका चन्द्रमुख उघाड़कर, मछलियोंकी आँखोवाली लवणसमुद्रकी जलरूपी लक्ष्मीने उसे सिन्दूरका पिटारा दिया हो, मानो पवनने वरुणके मुख कमल, और विश्वरूपी कमलके चचल पराग उड़ा दिया हो अथवा गोपिनीके द्वारा कृष्णकी क्रीड़ा रससे भरा हुआ पद्मरागपात्र भुला दिया गया हो, पश्चिम दिशामे जाकर लाल सूर्य अस्त हो गया, जैसे वेश्याने उसे निगल लिया हो।

घत्ता—पुणु दीसइ संझारायएण भुवणु असेसु वि रत्तउ ॥
सहुं [10]गिरिदरिसरिणंदणवर्णाहिं लक्खारसि णं घित्तउ ॥२३॥

२४

आरणालं—आसोसियखमारसो खवियतावसो तरुणिदंसणाओ ।
णं णरमणि ण माइओ दिसहिं धाइओ सहइ मयणराओ ॥१॥

संझारायजलणु [1]जो भमियउ सो तमजलकल्लोलहिं समियउ ।
संझारायघुसिणु जं संकिउ तं तमोहमयणाहें ढंकिउ ।
५ संझारायविडवि जो फुल्लिउ सो तमतंबेरसवइपेल्लिउ ।
चंदसइंदें तमकरि भग्गउ किं जाणहुं सो तासु जि लग्गउ ।
मयणिहेण दीसइ सुहयारउ तप्पवेसु [2]वइरिहिं भल्लारउ ।
विसइ गवक्खहिं थणयलि घोलइ चहुहारु व [3]ससितेउ णिहालइ ।
[4]रंधायारु[5] थियउ अंधारइ दुद्धसंक पयणइ मज्जारइ ।
१० रइपासेयबिंदु तेणुज्जलु दिट्ठ भुयंगहिं णं मुत्ताहलु ।
दिट्ठउ कत्थइ दीहायारउ घरि पइसंतउ किरणुक्केरउ ।
मोरें पंडरु सप्पु वियप्पिवि मुद्धें कह व ण गहिउ झडप्पिवि ।

घत्ता—गंगासरि हंसपक्खदलइं [6]पियविरहिणिगंडयलइं ॥
जायइं ससियरपक्खालियइं धवलाइं जि णिरु धवलइं ॥२४॥

२५

आरणालं—[1]मम्मणमणियजंपिरं मयणकंपिरं पणयविणयवंतं ।
रइरसरहसरंजियं पिययमा पियं रमइ णिसि रसंतं ॥१॥

केण वि घणथणि णिहियउ करयलु कणयकलसि णावइ रत्तुप्पलु ।
काइ वि को वि [2]सुहउ आलिंगिउ [3]मंडुमडुमुहचुंबणु मग्गिउ ।
५ णीहरंति पडिवहुरोसुब्भवि केण वि का वि धरिय करपल्लवि ।
पणपकलहि रसणीचरणंगउ को वि सकुंकुमेण पाएं हउ ।
सोहइ विद्धु अइरा रिउ संकिउ णं मयरद्धयमुद्दइ अंकिउ ।
हारें वद्ध का वि सयणालइ ताडिय णाहें चंपयमालइ ।
विंवाहररसघयसंसित्तउ [4]कांहं वि मयणहुयासु पलित्तउ ।
१० उल्हाविउ रइसलिलपवाहें काइ वि किलिकिंचिउ उच्छाहें ।
का वि [5]रयावसाणसमरीणी चंदणकद्दमवाविहि लीणी ।
को वि का वि सवहहिं रंजइ गुणि अक्कसमाण मज्झु परपणइणि ।

---

१०. MBP गिरिसरसरि° ।

२४ १. MBP जं । २. P वेरिहि । ३. M सियतेउ । ४. B omits this foot । ५ M रंधायार ।
६. M पियविरहिणं ।

२५ १ B म्हुमजपियं । २ MBPK सुहडु । ३ MBP मंडमंड । ४. MBP कामु । ५ P°रयावसाणि ।

घत्ता—पुनः अशेष भुवन सन्ध्यारागसे आरक्त दिखाई देता है, मानो पहाड़ों, घाटियों, नदियों और नन्दनवनोंके साथ वह लाक्षारसमें डुबा दिया गया हो ॥२३॥

२४

क्षमारूपी रसको सोख लेनेवाला, तापसोंका नाशक, युवतियोंको पीड़ित करनेवाला मदनराज चूँकि मनुष्यमनमें नही समाता हुआ, मानो दिशाओंमें दौड़ रहा है। सन्ध्यारागरूपी जो आग घूम रही थी, उसे अन्धकाररूपी जलतरंगोंके द्वारा शान्त कर दिया गया, जिस सन्ध्यारागरूपी केशरकी आशंका की गयी थी, उसे तमःसमूहरूपी सिंहने ढक दिया। सन्ध्याराग-रूपी जो वृक्ष खिला हुआ था उसे अन्धकाररूपी गजराजने उखाड़ डाला, चन्द्रमारूपी मृगेन्द्रने अन्धकाररूपी गजको भगा दिया। क्या जाने वह उसीको लग गया जो मृगलांछनके रूपमे शुभ करनेवाला दिखाई देता है। तल्पवेशमे जो शत्रुओंको अच्छा लगता है। गवाक्षोंसे प्रवेश करता है, स्तनतलपर गिरता है, शशिका तेज अनेक हारोंके समान दिखाई देता है, अन्धेरेमें रन्ध्राकार दिखाई देता है, और मार्जारोंके लिए दूधकी आशंका उत्पन्न करता है, उससे (चन्द्रमा) रतिका प्रस्वेदजल उज्ज्वल दिखाई देता है, जो मानो सर्पिणीके मोतीके समान जान पड़ता है। कहीं पर घरमे दीर्घ आकारमें प्रवेश करता हुआ किरण-समूह दीख पड़ता है, मयूरने उसे सफेद साँप समझकर किसी प्रकार झपटकर खाया भर नही।

घत्ता—गंगा नदी, हंसोंके पक्षदल और प्रियसे विरहिताओंके गण्डतल एक तो धवल थे ही, परन्तु चन्द्रमाकी किरणोसे प्रक्षालित होकर वे और भी धवल हो उठे ॥२४॥

२५

अपने मनमे कामदेवका जाप करते हुए कामसे काँपते हुए प्रणयसे विनीत रतिरस और हर्षसे रंजित, रमणशील प्रियसे प्रियतमा रातमें रमण करती है। किसीने सघन स्तनपर अपना करतल रख दिया, मानो स्वर्णकलशपर लाल कमल हो। किसीके द्वारा कोई सुभग (प्रिय) आलिंगित किया गया, और बलपूर्वक मुख चुम्बन माँगा गया। प्रतिवधू (सपत्नी) के कारण क्रोध उत्पन्न होनेके कारण बाहर जाती हुई किसीको किसीने करपल्लवमे पकड़ लिया। प्रणयकलहमें रमणी चरणमे पड़ा हुआ कोई केशर सहित पैरसे आहत किया गया। थोड़ी देरके लिए शत्रुके रूप-मेंशंकित किया गया कोई विट शोभित है, मानो वह कामदेवकी मुद्रासे अंकित हो। शयनतलमे हारसे बँधी हुई कोई प्रिया, स्वामी द्वारा चम्पकमालासे ताड़ित की गयी। बिम्बाधरोंके रसरूपी घीसे सीची गयी किन्हीकी कामाग्नि भड़क उठी, जिसे रतिरूपी जलके प्रवाहसे शान्त किया गया। किसीने उत्साहसे किलकिंचित् किया। कोई रतिके अवसानमे श्रमसे खिन्न चन्दनकी कीचड़की बावड़ीमे लीन हो गयी। कोई गुणी किसीको शपथोसे समझाता है कि दूसरीकी प्रणयिनी मेरे लिए

जाम एहु वेसाणरु अच्छइ तावण्णहिं को वयणु णियच्छइ।
जणणि महेली मणि अवहारमि गुरुपय छिवमि ण पइं अवहेरमि।
१५ घत्ता—इय कवडकूडमउजंपियहिं दाणेण वं वसिहूयउ॥
णारीयणु रमिउ विडाहिवहिं वेढिवि णिरुवमरूवउ॥२५॥

२६

आरणालं—दीहा वि रयमिहुणहं चक्कवियणहं पहियवंदयाणं।
मउहा हवइ रयणिया चंदवयणिया रयविडिंदयाणं॥१॥
ता उग्गमिउ सूरु पुव्वासइ रइरंगु व दरिसिउ कामासइ।
किंसुयकुसुमपुंजु णं सोहिउ णं जगभवणि पईवु पवोहिउ।
५ चारु सूरु वंसहु णं कंदउ लोहिउ ससि रोसेण दिणिंदउ।
मज्झु परोक्खइ आवइ पाविय कमलिणि वेल्लि भणिवि संताविय।
एम भणंतु व गयणि व लग्गउ णं रयणियरहु पच्छइ लग्गउ।
तंवु करोहउ रुहिरु णिसाडे चिंतिउ एंतु सछिद्दकवाडें।
कुंकुमलोलु व मणिणउं घरिणिइ रत्तु दुवंकुरु कंदरहरिणिइ।
१० मिलियउ सोहइ विद्दुममहियलि मिलियउ सोहइ कंकेल्लीदलि।
मिलियउ सोहइ रत्तइ सयदलि मिलियउ सोहइ रमणीकरयलि।
मिलियउ सोहइ जण अहरुल्लइ महिहरतीर घाउ जलरेल्लइ।
राउ मुयंतु जि गुणसंजुत्तउ अरहंतु व रवि उण्णइं पत्तउ।
घत्ता—हयतिमिरें भरहपयासएण रविणा किं ण वि दाविउ॥
१५ सिरिरामासेवियसच्छसरपुप्फयंतु वियसाविउ॥२६॥

इय महापुराणे तिसट्ठिमहापुरिसगुणालंकारे महाकइपुप्फयंतविरइए महाभव्वभरहाणुमण्णिए महाकव्वे बाहुबलिदूयसंपेसणं णाम सोलहमो परिच्छेओ सम्मत्तो॥ १६॥
॥ संधि ॥ १६॥

माताके समान है। जब तक यह वेश्यावर है, तबतक अन्यका मुख कौन देखता है। अन्य महिलाको मैं मनमे माताके रूपमें धारण करता हूँ, गुरुके चरणको छूता हूँ कि तुम्हारी उपेक्षा नहीं करूँगा।"

घत्ता—इस प्रकार विटराजो द्वारा कपट कूट और कोमल उक्तियों तथा दानसे वशीभूत कर अनुपमरूपवाला नारीजनका आलिंगनकर रमण किया गया ॥२५॥

२६

रमण करते हुए जोड़ों, चक्रवाक पक्षियों और पथिकसमूह और रत विटराजके लिए चन्द्रमुखी लम्बी भी रात छोटी लगी। तब पूर्वदिशामे सूरज उग आया, जो कामकी आशासे रतिरंग (कामदेव) के समान दिखाई दिया, मानो पलाशपुष्पोंका समूह शोभित हो, मानो विश्वरूपी भवनमे प्रदीप प्रबोधित कर दिया गया हो, सुन्दर सूर्य मानो वंशका अंकुर हो। मानो दिनेश चन्द्रमाके क्रोधसे लाल हो उठा हो कि यह पापी (चन्द्रमा) मेरे परोक्षमे आता है और कमलिनीको लता कहकर (समझकर) सताता है। ऐसा कहकर जैसे वह आकाशसे लग जाता है मानो निशाचरोके पीछे लग गया हो। निशाचरने लाल किरण-समूहको रुधिर समझा, लेकिन गृहिणीने छेदवाले किवाड़ोंसे आते हुए उसे (किरण-समूह) केशरपराग माना, गुफामे रहनेवाली हरिणीने लाल दूर्वांकुर समझा। लाल कमलमे मिला हुआ वह शोभित है, अशोकके पत्तोंमे मिला हुआ शोभित है। जनोके अधरोमे मिला हुआ शोभित है, वह राग (लाल रंग) महीधरोके तट और जलकी लहरियोमे दौड़ा। इस प्रकार 'राग' (रागभाव और लालिमा) छोड़ते हुए और गुणोंसे संयुक्त अरहन्तके समान सूर्य भी उन्नतिको प्राप्त हुआ।

घत्ता—भरतके प्रसादसे अन्धकारको नष्ट करनेवाले सूर्यने क्या नही दिखाया। लक्ष्मीरूपी रमासे सेवित स्वच्छ सरोवर और पुष्पोको विकसित कर दिया ॥२६॥

इस प्रकार त्रेसठ महापुरुषोंके गुण और अलंकारोंवाले इस महापुराणमें महाकवि
पुष्पदन्त द्वारा विरचित और महाभव्य भरत द्वारा अनुमत महाकाव्य
का बाहुबलि दूत संप्रेषणवाला सोलहवाँ परिच्छेद
समाप्त हुआ ॥१६॥

संधि १७

दूवागमि[1] रविउग्गमि चलकरवाललालियजीहहो ॥
जाइवि णंदाणंदणहो भिडिउ भरहु रणि सीहु व सीहहो ॥ध्रुवकं॥

१

ता समरचित्तु विसरिसु विरुद्धु विप्फुरियदसणडसियाहरुद्धु[2] ।
कढिणयरपाणिपीडियकिवाणु उद्धुयमीसियहयभउंहकोणु[3] ।
५ तिवलीतरंगभंगुरियभालु णं सीहु कुडिलदाढाकरालु ।
अरुणच्छिछोहरंजियदियंतु णं पलयजलणु धगधगधगंतु ।
दूयवयणहिं[4] वड्ढियकसाउ जंपइ सरोसु रायाहिराउ ।
सुयरेप्पिणु[5] तायहु तणउं चारु जइ कह[6] व ण मारमि रणि कुमारु ।
तो धरिवि णिरुंभिवि[7] करमि तेम अच्छइ करि[8] जिह णियलत्थु जेम ।
१० महु कुद्धहु रणि देव वि अदेव सो ण करइ किं महु तणिय सेव ।
इय गज्जिवि असितासियसुरिंदु जा उट्ठिउ भरहु महाणरिंदु ।
ता[9] मउडबद्ध मंडलिय[10] चलय केऊरसकंठाहरणघुलिय ।
महिचडियकणयकंचीकलाव अइभीसण थिय णं कालभाव ।
एक्केक्क पहाण गिरिंदधीर[11] सहुं राएं लहु संणद्ध वीर[12] ।
१५ घत्ता—संणज्झंतहु[13] तहु भडयणहु का वि णारि पभणइ जइ जाणहि ॥
किं पि महारउ[14] उवयरिउ तो पियथम सुररमणि म माणहि ॥१॥

२

वहु का वि भणइ हत्थागएण किं कीरइ मणिकंकणसएण ।
अरिकरिदंतुब्भउ एक्कु जइ वि वलउल्लउ सोहइ हत्थि तइ वि ।
तं धवलउ तुह पोरिसजसेण आणेज्जसु पिय महु रइवसेण ।

MBP give, at the commencement of this Samdhi, the following stanza:–

वलिभङ्गकम्पिततनु भरतयशः सकलपाण्डुरितकेशम् ।
अत्यन्तवृद्धगतमपि भुवनं वम्भ्रमति तच्चित्रम् ॥

M reads °तनुवर and B reads कम्पितवरं for कम्पिततनु; MP read विभ्रमति for वम्भ्रमति ।
GK do not give it.

१. १ MBP दूयागमि रविउग्गमणे । २. MBP विप्फुरियडसणु डसिया° । ३ M records a *p* for this foot· घणुगुणे रोवि दिढवज्जवाणु । ४. MBP दूयहि वयणें । ५. MBP सुमरेप्पिणु । ६. P मइ वि । ७ MB णिरुंभिवि; B णिरुजिवि । ८. P करिवर णियलत्थु । ९ MBP तो । १०. MBP चलिय । ११ MBP धरिंद । १२. B धीर । १३. MBP संणज्झंतहु भडयणहु । १४. K उवरिउ but gloss उपकृतम् ।

सन्धि १७

दूतके आगमन और सूर्यका उदय होनेपर, जिसकी चंचल तलवाररूपी जीभ लपलपा रही है नन्दानन्दन (बाहुबलि) से भरत रणमें उसी प्रकार भिड़ गया, जिस प्रकार सिंहसे सिंह भिड़ जाता है।

१

तब युद्धके लिए कृतमन, अद्वितीय विरुद्ध, विस्फारित दाँतोसे नीचेका ओठ चबाता हुआ, अपने कठोरतर हाथसे कृपाणको पीटता हुआ, उद्धत मिली हुई आहत भौहोंके कोणवाला, त्रिबलि-तरंगसे भंगुरित भालवाला वह ऐसा प्रतीत हो रहा था मानो कुटिल दाढ़ोसे कराल (भयंकर) तथा अपनी लाल-लाल आँखोंकी आभासे दिगन्तको रंजित करनेवाला सिंह हो। मानो धकधक करती हुई प्रलयकी ज्वाला हो। दूतके शब्दोसे जिसका क्रोध बढ़ गया है ऐसा वह राजाधिराज क्रोधसे कहता है—"पिताके सुन्दर वचनोंकी याद कर, यदि मैं किसी प्रकार कुमारको रणमें मारता नही हूँ, तो उसे पकड़कर और अवरुद्ध कर उसी प्रकार कर दूँगा जिस प्रकार बेड़ियोंसे जकड़ा हुआ हाथी रहता है। मेरे क्रुद्ध होनेपर देव और अदेव मेरी सेवा करते है, फिर वह मेरी सेवा क्यो नही करता ?" इस प्रकार गरजकर, अपनी तलवारसे देवेन्द्रको त्रस्त करनेवाला महान् नरेन्द्र भरत उठा। तब मुकुटबद्ध तथा केयूर और कण्ठाभरणोसे आन्दोलित माण्डलीक राजा चले। जिनके स्वर्णके करधनी-समूह धरतीपर गिर रहे है ऐसे अत्यन्त भीषण वे इस प्रकार स्थित हो गये जैसे कालस्वरूप ही हो। एकसे एक प्रमुख गिरीन्द्र की तरह धीर वे वीर शीघ्र राजाके साथ तैयार हो गये।

घत्ता—तैयार होते हुए उस योद्धाजनसे कोई स्त्री कहती है, "यदि तुम मेरा कोई उपकार मानते हो तो हे प्रियतम, सुर रमणीको मत पसन्द करना" ॥१॥

२

कोई वधू कहती है—"हाथमे आये हुए सैकड़ो मणिकंकणोसे क्या, हाथीदांतका बना एक कड़ा यदि हाथमे सोहता है, उस धवल कड़ेको हे प्रिय तुम अपने पौरुष और यश तथा मेरे प्रेमके

वहु का वि भणइ एहु वि सुतारु किं तुज्झ पसाएं णत्थि हारु।
५ तुह करणिन्तिसुक्कत्तिएहिं [१]परकुंभिकुंभचुयमोत्तिएहिं।
इउं कित्तिलया इव कुसुमियंगि [२]छज्जमि दाविज्जउ[३]सु एह भंगि।
वहु का वि भणइ महिमाहरेण मइं विज्जहि किं चीरें[४] करेण।
रिउचामरु[५] पिय उवयारकारि आणेज्जसु रयसमसेयहारि।
वहु का वि भणइ अहिमाणगाहि लग्गिज्जसु पिय पडिवक्खणाहि।
१० ऊणेण[६] इएण वि णत्थि लाहु उडुगणहु ण रूसइ तेण राहु।
जिम मिहरहु[७] जिम हिमयरहु भिडइ [८]वलिणा हएण जसु चंदि चडइ।
वहु का वि भणइ णीसंकयाइं तावियपिसुणइं पावियजयाइं।

घत्ता—कइणा कव्वें मणोहरए जेण भडेण महाभडगोंदलि॥
दिण्णइं पयइं सुउज्जुयइं तासु कित्ति भमइ[१०] महिमंडलि॥२॥

३

ता रायवयणेण रणतूरलक्खाइं [१]किंकरकराहयइं तासियविवक्खाइं।
सुरदंतिखयजलयजलणिहिणिणायाइं [२]थेगिथगिगिदुगिदुगिगि संदिण्णघायाइं
पडुपडहमद्दलमहारावरोलाइं [३]किंकरकरुब्भमियसल्लसलियतालाइं।
मुहपवण[४]तुरुतुरियकाहलवमालाइं गज्जंतभेरीहि हलबोलाइं[६]।
५ तडिवडणतडयडियगुरुकरडटिविलाइं[५] विरसंतझल्लरिसरोसरियसेलाइं।
णीसासभारेण पूरियइं विमलाइं हूहूहुयंताइं वरसंखजमलाइं[८]।
अवरइं[९] वि पहयाइं परियलियसंखाइं जयविजयसिरिकामिणीसोक्खकंखाइं।
रुंजंतरुंजाइं [१०]भंभंतभंभाइं हल्लावियाहिंदमहिसायरब्भाइं[११]।
चलियाइं सेण्णाइं संणाहसोहाइं वरकुंजरारूढरणरूढजोहाइं।
१० णरकरविमुक्कासखुरखयधरग्गाइं चलधूलिकविलाइं[१२] [१३]विप्फुरियखग्गाइं।
परिमिलियमंडलियबलसारवंताइं [१४]धावंतपाइक्ककरधरियकोंताइं[१५]।
रहचक्कचिक्कारभेसियभुयंगाइं णिवछत्तछाहीहिं छाइयपयंगाइं।
जक्खिदखयरिंदमूमिंदभीमाइं [१६]खयकालकीलाहि [१७]कीलाविरामाइं।

वशसे ले आना।" कोई वधू कहती है—"यह स्वच्छ हार क्या तुम्हारे प्रसादसे मेरे पास नहीं है? तुम्हारे हाथकी तलवारके द्वारा उखाड़े गये और शत्रुगजोंके कुम्भस्थलोंसे गिरे हुए मोतियोंसे कुसुमित अंगोवाली मैं कीर्तिलताकी तरह शोभित होऊँ, तुम मुझे यह भंगिमा दिखाओ।" कोई वधू कहती है—"महिमाका हरण करनेवाले चोर या हाथसे मुझे हवा क्यों करते हो? हे प्रिय रजश्रम और स्वेदका हरण करनेवाला शत्रुका चामर ले आना।" कोई वधू कहती है—"तुम अभिमानी शत्रुपक्षके स्वामीसे लड़ना। छोटे आदमीको मारनेमे कोई लाभ नहीं, यही कारण है कि राहु नक्षत्रगणोसे रुष्ट नहीं होता। वह इसीलिए सूर्यसे लड़ता है, इसीलिए चन्द्रमासे लड़ता है, बलवान्के मारे जानेपर यश चन्द्रमापर चढ़ता है। कोई वधू कहती है कि निशंक दुष्टोको सतानेवाले ही जय प्राप्त करनेवाले होते हैं।

घत्ता—जिस कविने सुन्दर काव्यमें और भटने महासुभटोके युद्धमे अपने सरल पद-उद्यत पद दिये है उसीकी कीर्ति महीमण्डलमें घूमती है ॥२॥

३

तब राजाके आदेशसे अनुचरोंके हाथोंसे आहत विपक्षको सन्त्रस्त करनेवाले लाखों रणतूर्य बज उठे। ऐरावत प्रलयमेघ और समुद्रके स्वरोंवाले धगधग गिदुगिदु गिगि करते हुए आघात दिये जाने लगे। पटु-पटह और मृदंगके महाशब्दोका कोलाहल हो रहा था, किंकरोंके हाथोसे घुमाये हुए सुन्दर ताल होने लगे, मुँहकी हवासे तुर-तुर करते हुए काहलोंका कोलाहल होने लगा, गूँजती हुई भेरियोंके साथ हल-मूसलोंके बोल होने लगे। बिजलीके गिरनेसे तड़तड़ करते हुए विशाल करट और टिविलि (बज उठे)। बजती हुई झल्लरियोंके स्वरसे पर्वत उखड़ने लगे। निश्वासोंके भारसे पूरित विमल और श्रेष्ठ शंखयुगल हू-हू-हू करने लगे। और भी, जय-विजय श्रीकामिनी और सुखकी आकांक्षा रखनेवाले और भी असंख्य शंख बजा दिये गये। शब्द करते हुए रुंज-शंख, भें-भें करते हुए भंभा शंख बज उठे। नाग, मही, समुद्र और मेघोको हिलाती हुई कवचोंसे शोभित सेनाएँ चलीं। योद्धाओके द्वारा मुक्त अश्वखुरोंसे धरतीका अग्रभाग आहत हो उठा। चंचल धूलिसे कपिल रंगकी तलवारें चमक रही थी। बलमे श्रेष्ठ योद्धा मिले हुए और मण्डलाकार थे। हाथमे भाले लिये हुए पैदल सिपाही दौड़ रहे थे। रथोंके चक्रोकी चित्कारोंसे भुजंग भयभीत हो उठे। नृपछत्रोंकी छायासे सूर्य आच्छादित हो गया। जो यक्षेन्द्रो, विद्याधरेन्द्रों और मानवेन्द्रोसे भयंकर और क्षयकालकी क्रीड़ाको अपनी क्रीड़ासे विराम देनेवाली थी।

घत्ता—इय [१८]भरहाहिउ णीसरिउ जाम समउ मंतिहिं सामंतहिं ॥
१५ ता वेयालियचरणहिं विण्णवियउ बाहुबलि णवंतहिं ॥३॥

४

परियणजलेण णहु[1] महि पिहंतु उत्तुंगतुरंगतरंगवंतु ।
करिमयरपसारियचंडसोंडु सियपुंडरीयडिंडीरपिंडु ।
लायण्णपउरगंभीरघोसु [2]दुग्गउं चोद्दह[3]रयणाहिवासु ।
संदणबोहित्थसमूहचवलु पंचंगमंत[4]पायालविउलु ।
५ जसमोत्तियमंडियतिजगतीरु आणंदियणियकुल[5] कुद्दहीरु ।
धयवडजलयरपरि[6]घुलणरंगु दूरयरणिहित्तमलोहसंगु ।
तुज्झुवरि देव असिक्खसरउद्दु उत्थ[7]ल्लिउ णरवइ बलसमुद्दु ।
सुविचित्तपत्त[8]पत्तियसरेण ता वुच्चइ बाहुबलीसरेण ।
हउं एक्कु वइरि किं पउर भणहि किं कालहु अग्गइ जीव गणहि[9] ।
१० किं डज्झइ हुयवहु तरुवरेहिं किं खज्जइ खगवइ विसहरेहिं ।
किं कुसुमबाण जिणमणु हरंति गोमाउ मइंदहु किं करंति ।
छाइज्जइ किं भयणेहिं भाणु पउर वि रिउ महु ण मलंति माणु ।
घत्ता—एक्कु वि पउ ण समोसरमि णायायारहिं पंथु णिरुंभमि[10] ॥
आवंतहु णिवसायरहो[11] सरवरपंतिहिं[12] वरणु णिबंधमि[13] ॥४॥

५

गज्जंतु एम पलयक्केउ संणज्झइ सिरिबाहुबलिदेउ ।
जोयंतहु णियसुयथामसंचु[1] कासु वि वड्ढिउ रोसंचु उंचु[2] ।
हियवइ संणाहु ण माइ केम बहुलोहवंतु काउरिसु जेम ।
केण वि बद्धी जयकामएण असिधेणुय[3] रसणादामएण ।
५ केण वि इच्छिय संगामदिक्ख सरमोक्खहु केरी परमसिक्ख ।
केण वि गुणु वलइउ[4] कहिं वि चावि [5]चप्पिवि णं खलयणि कुडिलभावि ।
केण वि णिबद्धु तोणीरजुयलु णं गरुडें दाविउ[7] पक्खजमलु[6] ।
केण वि कड्ढिउ करवालु चंडु णं मेहें दरिसिउ विज्जुदंडु ।

---

१८ भरहणराहिउ ।

४. १. MB महि णहु । २. MB दुग्गमु । ३. MBP चउदह° । ४. P पायालि । ५. MB °कुलछुद्दहीरु; P °कुलु छुद्दहीरु, K °कुलकुद्दहीरु but corrects it to °छुद्दहीरु T चद्दहीरु चंद्रारगुस्थानम् । ६ MBP °घुलियरंगु । ७. K उत्थल्लउ । ८. MBP °वत्तपत्तिय° । ९. MBP जणहि । १०. BP णिरुंभिवि । ११. MBP °सायरबलहो । १२ MB वरुणु । १३. B णिबंधिमि; K णिरुंभमि ।

५, १. G संतु; K थावसंचु । २. MP उच्चु । ३. MBP असिधेणुव । ४ MBP लाविउ । ५. MBP चप्पेविणु खलयणकुडिलभावि । ६ M पक्खजुयलु; BP पंखजुयलु । ७ P दाविउ ।

घत्ता—इस प्रकार जब भरताधिप मन्त्रियों और सामन्तोंके साथ निकला, तब वैतालिको और चारणोने प्रणाम करते हुए बाहुबलिसे निवेदन किया ॥३॥

४

"हे देव, तुम्हारे ऊपर सैन्यरूपी समुद्र उछल पड़ा है, जो परिजनरूपी जलसे धरती और आकाशको ढकता हुआ, उत्तुंग तुरंगरूपी तरंगोंसे युक्त, हाथीरूपी मगरोसे अपनी प्रचण्ड सूँड़ उठाये हुए, श्वेत छत्रोके फेन समूहसे युक्त लावण्य (सौन्दर्य और खारापन) के प्रचुर गम्भीर घोषवाला, दुर्गम चौदह रत्नोसे अधिष्ठित, रथोंके बोहित्थ-समूहसे चपल, पंचांग मन्त्ररूपी पातालसे विपुल, यशरूपी मोतियोसे त्रिजगरूपी तीरको मण्डित करनेवाला, अपने कुलरूपी चन्द्र-को आनन्दित करता हुआ, ध्वजपटोके जलचरोसे व्याप्त-शरीर, अन्यायरूपी मल समूहको दूर करनेवाला तथा तलवाररूपी मत्स्योंसे भयंकर है।" तब सुविचित्र पुंखोंसे विभूषित तीरोवाले बाहुबलीश्वरने कहा—"ऐसा क्यों कहते हो कि मै अकेला हूँ और शत्रु बहुत हैं ? क्या तुम कालके आगे जीवको गिनती करते हो, क्या आग तरुवरोके द्वारा जलायी जा सकती है ? क्या नागोंके द्वारा गरुड़ खाया जा सकता है ? क्या कामके बाण जिनमनका हरण कर सकते हैं ? सियार सिंहका क्या कर सकते है ? क्या नक्षत्रोके द्वारा सूर्य आच्छादित किया जा सकता है ? प्रवर शत्रु भी मेरा मान मलिन नही कर सकता।

घत्ता—मै एक भी पैर नही हटूंगा, और नागके आकारके तीरोंसे मार्गको अवरुद्ध कर लूँगा। आते हुए राजारूपी समुद्रके लिए मैं सरवरोंकी कतारोसे तट बाँध दूँगा" ॥४॥

५

प्रलयसूर्यके समान तेजस्वी श्री बाहुबलीश्वर देव गरजते हुए तैयार होते हैं। अपने बाहुबलकी स्थिरता और बनावट देखकर किसी योद्धाका रोमांच ऊँचा हो गया, उसके हृदयमे लोहवंत (लोहेसे निर्मित और लोभयुक्त) कवच उसी प्रकार नही समा सका जिस प्रकार कापुरुष। जयके अभिलाषी किसीने छुरी अपनी करधनीके सूत्रसे बांध ली। किसीने संग्राम दीक्षा-की इच्छा की और किसीने तीर चलानेकी परम शिक्षाकी। किसीने धनुषकी डोरीको कहीं चाँपा, मानो कुटिलभाववाले खलजनको चाँपा हो। किसी योद्धाने तरकस युगल इस प्रकार बाँध लिया मानो गरुडने अपने पक्षयुगलको दिखाया हो ? किसीने अपनी प्रचण्ड तलवार निकाल ली

भडु को वि भणइ परु हणमि अज्जु णिक्कंटउ सामिहि देमि रज्जु ।
१० पहु तुच्छु पउर रिउ हउं वि धीरु भणु सुंदरि किं कीरइ वियारु ।
अवरुंडहि लहु दे देहि हत्थु को जाणइ पुणु संजोउ केत्थु ।
आयड्ढिउ पहुहि पसाउ जेहिं रणि जुज्झमि अज्जु सुएहिं तेहिं ।
घत्ता—भासइ को वि महासुहडु मुइ मुइ कंति ण एवहिं [10]मज्झमि ।
णिग्गवि रायहु तणउ रिणु अज्जु सीसदाणेण विसुज्झमि ॥५॥

६

भडु को वि भणइ कयवणमुहेहिं जइ भिज्जइ उरु करिमुहरुहेहिं ।
जइ खज्जइ आमिसु रक्खसेहिं जइ पिज्जइ सोणिउं वायसेहिं ।
जइ अंतइं गिद्धइं लइवि जंति तो मरणमणोरह महु सरंति ।
भडु को वि भणइ हलि हत्थु देमि गयदंतमुसलु कड्ढेवि लेमि ।
५ कंडवि णरकण अवर वि करेणु उड्डावमि अयसतुसोहरेणु ।
भडु को वि भणइ हुइ खंडखंडि महु करु पेक्खेज्जसु पक्खितोंडि ।
सुंदरि गयणंगणि लंबमाणु अविमुक्कवेरि दावियकिवाणु ।
अह धरणिघुलिउ लइ रिउ विहत्तु तुह मंगलंसुकज्जलविलित्तु ।
जं पेच्छहि बहुरुहिरें किलिण्णु पेरिमुक्कदीहणारायभिण्णु ।
१० वच्छयलु महारउ तं जि लेहि सघुसिणु करयलु अहिणाणु देहि ।
हलि सामलंगि उप्फुल्लवयणु जइ णिवडिउं पेच्छहि तंबणयणु ।
घत्ता—तो[10] भेरउ सिरु तरुणि तुहुं चित्ततुलारोहेण विवेयहि ॥
सहुं पत्थिवपरिवालिएण सरिसउ किं व ण सरिसउ जोयहि ॥६॥

७

छुडु गज्जिय गुरु संगामभेरि णं मुक्खिय तिहुयणु गिलिवि मारि ।
छुडु णिग्गउ भुयबलि साहिमाणि छुडु एत्तहि पत्तउ चक्कपाणि ।
छुडु कालें णीणिय दीह जीह पसरिय माणुसमंसासणीह ।
थिय लोयवाल जीवियणिरीह डोल्लिय गिरि रुंजिय गहणि सीह ।
५ छुडु भडभारें ढलहलिय धरणि छुडु पहरणफुरणें हसिउ तरणि ।
छुडु चंदबलाइं पलोइयाइं छुडु उहयबलाइं पधावियाइं ।
छुडु मच्छरचरियइं वड्ढियाइं छुडु कोसहु खग्गइं कड्ढियाइं ।

---

८. K हणिवि । ९. MBP करमि । १०. MBP मुज्झमि and gloss in MP मोहं करोमि; K मज्झमि but मुज्झमि in second hand.

६ १ MBP गिद्ध । २. B मय । ३ K °मुसल । ४ M पेक्खिज्जहि । ५ MBP पक्खितुडि । ६. MBP परमुक्क°, M records a *P* सरु मुक्क° । ७ M अहिणाहु । ८. MBP ओफुल्ल° । ९. M जं णियडउ; BP जं णियडिउं । १०. MBP सो । ११. MBP परिणपालिए ।

७. १. MB °मंमाण सीह । २. MBP गहणसीह । ३. MBP ढलढलिय । ४. MBP चंड° । ५. MBP उभय° । ६. MBP °चडियइं ।

मानो मेघने विद्युद्‌दण्डका प्रदर्शन किया हो। कोई योद्धा कहता है आज मैं शत्रुको मारूँगा और स्वामीको निष्कण्टक राज्य दूँगा। स्वामी तुच्छ है और शत्रु प्रबर है, तो मै भी धीर हूँ, हे सुन्दरी, क्या विचार करना ? जल्दी अपना हाथ दो और आलिंगन करो; कौन जानता है फिर संयोग कहां हो ? मैंने अपने जिन हाथोंसे प्रभुका प्रसाद लिया है आज मै उन्हीं हाथोंसे युद्ध करूँगा ?

घत्ता—कोई महासुभट कहता है कि हे कान्ते छोड़ो-छोड़ो मै कुछ भी सुन्दर नही करूँगा। बाहर निकलकर मै अपने शिरके दानसे राजाके ऋणका शोधन करूँगा ॥५॥

६

कोई सुभट कहता है कि जिनके मुखमे घाव कर दिये गये है, ऐसे गजसूँड़ोंसे यदि मेरे उरतलका भेदन कर दिया जाता है, यदि राक्षसोंके द्वारा मेरा आमिष खा लिया जाता है, यदि कौओंके द्वारा रक्त पी लिया जाता है, यदि गीध आंतोंको लेकर चले जाते है तो मेरे मरणका मनोरथ पूरा हो जाता है। कोई सुभट कहता है कि लो मैं हाथ देता हूँ, मै गजदांतोंके मूसल निकालकर लाऊँगा। योद्धा समूह और हाथियोंको चूर-चूर कर मैं अयशरूपी भूसाकी धूल उड़ाऊँगा ? कोई सुभट कहता है हे सुन्दरी, आकाशरूपी आँगनमे लम्बमान (लम्बा फैला हुआ) जिसने शत्रुको नही छोड़ा है, और तलवारका प्रदर्शन किया है, ऐसे मेरे हाथको, टुकड़े-टुकड़े होनेपर तुम पक्षीके मुखमें देखोगी ? अथवा शत्रुके द्वारा विभक्त, धरतीपर पड़े हुए तुम्हारे मंगलाश्रुओं और काजलसे लिप्त, अत्यधिक रुधिरसे आर्द्र, छोड़े गये लम्बे-लम्बे तीरोसे विदीर्ण यदि तुम मेरे वक्षःस्थलको देखो तो उसे ले लेना और अपने केशर सहित हाथकी पहचान देना। हे श्यामलांगी, यदि तुम मेरे खिले हुए चेहरे और रक्तनेत्रोवाले—

घत्ता—मेरे सिरको गिरा हुआ देखो, तो तुम उसे अपने चित्तरूपी तराजूपर तौलकर पहचान लेना और स्वयं देख लेना कि वह राजाका परिपालन करनेवालेके सदृश है—या सदृश नही है ? ॥६॥

७

शीघ्र ही संग्रामभेरी बज उठी मानो भारी त्रिभुवनको निगलनेके लिए भूखी हो उठी हो। स्वाभिमानी बाहुबलि शीघ्र ही निकल पड़ा। शीघ्र ही इस ओर चक्रवर्ती आ गया। शीघ्र ही कालने अपनी लम्बी जीभ प्रेरित की और मनुष्योंके मांसको खानेकी इच्छासे उसे फैला लिया। जीवनसे निरीह होकर लोकपाल स्थित हो गये। पर्वत हिल उठे और जंगलमे सिंह दहाड़ उठे। शीघ्र ही योद्धाओंकी मारसे धरती डगमगा गयी। शीघ्र ही अस्त्रोंकी प्रभासे सूर्यका उपहास किया जाने लगा। शीघ्र ही प्रचण्ड सेनाएँ देखी गयी, शीघ्र उभयबल दौड़ने लगे। ईर्ष्यासे भरे

छुडु चक्कइं हत्थुग्गामियाइं छुडु सेल्लइं भिच्चहिं भामियाइं।
छुडु कोंतइं धरियइं संमुहाइं धूमंधइं[7] जायइं दिम्मुहाइं।
१० छुडु मुट्ठिणिवेसिय[8] लउडिदंड[9] छुडु पुंखुज्जल[10] गुणि णिहिय[11] कंड[12]।
छुडु गय कायर थरहरियप्राण[13] छुडु ढोइय[14] संदण णं विमाण।
छुडु [15]मेंठचरणचोइयमयंग छुडु आसवारवाहियतुरंग।
घत्ता—छुडु छुडु कारणि वसुमइहि सेण्णइं जाम हणंति परोप्परु॥
अंतरि ताम पइट्ठ तहिं मंति चवंति समुब्भिवि णियकरु[16]॥७॥

८

विहिं वलहं मज्झि जो मुयइ[1] बाण तहु होसइ रिसहहु तणिय आण।
तं णिसुणिवि सेण्णइं सारियाइं चडियइं चावइं उत्तारियाइं।
तं णिसुणिवि रहसाऊरियाइं वज्जंतइं तूरइं वारियाइं।
तं णिसुणिवि धारापहसियाइं करवालइं[2] कोसि णिवेसियाइं।
५ तं णिसुणिवि णिद्धंगइं[3] घणाइं णिम्मुक्कइं कवयणिवंधणाइं।
तं णिसुणिवि मय मायंग रुद्ध पडिगयवरगंधालुद्ध कुद्ध।
तं णिसुणिवि मच्छरभावभरिय[4] हरि फुरुहुरंत[5] धावंत धरिय।
रह खंचिय कड्ढिय पग्गहोह वारिय विधंत अणेय[6] जोह।
घत्ता—परिसेसियरणपरियरइं गुरुयणचरणसवहसंणिहियइं[7]॥
१० सेण्णइं उज्झियकलयलइं थक्कइं कुड्डि णाइं आलिहियइं॥८॥

९

पणमियसिरेहिं मउलियकरेहिं बाहुवलि भरहु महुरक्खरेहिं।
उग्गामियरोसपसमंतएहिं[1] विण्णि वि विण्णविय महंतएहिं।
तुम्हइं[2] विण्णि वि जण चरमदेह तुम्हइं विण्णि वि जयलच्छिगेह।
तुम्हइं विण्णि वि अखलियपयाव तुम्हइं विण्णि वि गंभीरराव।
५ तुम्हइं विण्णि वि जगधरणथाम तुम्हइं विण्णि वि रामाहिराम।
तुम्हइं विण्णि वि सुरहं मि पयंड महिमहिलहि[3] केरा बाहुदंड।

---

७. MB धूवधइं। ८. M °णिवेसिउ। ९ M °दंडु। १०. MBP पंखुज्जलु। ११. M णिहिउ। १२. M कंडु। १३. MBP °पाण। १४. P ढोयइ। १५. MBP मेंठु°। १६ M वररकरु, BP वरकरु।

८ १. MBP मुवइ। २. MBP खग्गइं पडियारि। ३. MBP णद्धंगइं; T णिद्धंगइं दीप्राणि णद्धंगइं वा श्रद्धानि।
४ MB मच्छरभावरहिय, P मच्छरभारभरिय। ५. MB फुरफुरंत। ६. MB अणंत। ७, M चरणसवहसल्लिहियउ, B °चरणवसहसंणिहियइं; T सवहसंणिहियइं। ८. P कोड्डि।

९. १. MBP उग्गमिउ रोसु। २. MBP read: तुम्हइं विण्णि वि जयलच्छिगेह, तुम्हइं विण्णि वि जण चरमदेह। ३. MB महियल केरा।

चरित बढ़ने लगे। शीघ्र ही म्यानोंसे तलवारें निकाल ली गयीं," शीघ्र ही चक्र हाथसे चलाये जाने लगे, शीघ्र ही भृत्योंके द्वारा सेल घुमाये जाने लगे। शीघ्र ही भाले सामने धारण किये गये, दिशाओंके मुख धुएँसे अन्धे हो गये। शीघ्र ही मुट्ठीमे लकुटदण्ड ले लिये गये, शीघ्र ही पुंख सहित तीर डोरीपर चढा लिये गये। शीघ्र ही महावतोंके पैरोंसे हाथी प्रेरित कर दिये गये। शीघ्र ही घुड़सवारोंसे तुरंग चला दिये गये।

घत्ता—शीघ्र ही धरतीके लिए सेनाएं जबतक एक दूसरेपर आक्रमण करती हैं तबतक अपने हाथ उठाकर मन्त्री उन दोनोंके भीतर प्रविष्ट हुए और बोले ॥७॥

८

"दोनो सेनाओंके बीच जो बाण छोड़ता है, उसे श्री ऋषभनाथकी शपथ।" यह सुनते ही सेनाएँ हट गयीं और चढ़े हुए धनुष उतार लिये गये। यह सुनकर हर्षसे आपूरित बजते हुए तूर्य हटा लिये गये। यह सुनकर धाराओंका उपहास करनेवाली तलवारें म्यानके भीतर रख ली गयीं। यह सुनकर चमकते हुए सघन कवच-निबन्धन खोल दिये गये। यह सुनकर मतवाले प्रतिगजोंको वरगन्धसे लुब्ध और क्रुद्ध गज अवरुद्ध कर लिये गये। यह सुनकर ईर्ष्याभावसे भरे हुए फड़फड़ाते हुए अश्व रोक लिये गये। रथ रह गये, लगाम खींच ली गयी। बेधते हुए अनेक योद्धाओंको मना कर दिया गया।

घत्ता—युद्धकी साज-सामग्रीको दूर हटाती हुई, गुरुजनोंकी शपथसे रोकी गयी दोनों सेनाएँ कलकल शब्दको छोड़कर इस प्रकार स्थित हो गयीं, जैसे दीवालपर चित्रित कर दी गयी हों ॥८॥

९

अपने सिरोंसे प्रणाम करते हुए, दोनों हाथ जोड़े हुए, उत्पन्न होते हुए क्रोधको शान्त करते हुए मन्त्रियोंने मधुर शब्दोंमे दोनोंसे निवेदन किया, "आप दोनो चरमशरीरी हैं, आप दोनो विजयलक्ष्मीके घर है, आप दोनो अस्खलित प्रतापवाले है, आप दोनो गम्भीर वाणीवाले है, आप दोनों विश्वको धारण करनेकी शक्तिवाले हैं, आप दोनों ही रमणियोंके लिए सुन्दर है, आप

तुम्हइं बिण्णि वि णिवणायकुसल   णियतायपायपंकरुहभसल।
तुम्हइं बिण्णि वि जण जणहु चक्खु   इच्छहु अम्हारउ धम्मपक्खु।
खरपहरणधारादारिएण   किं किंकरणियरें मारिएण।
१० किर काइं वराएं दंडिएण   सीमंतिणिसत्थें रंडिएण।
दोहं मि केरा मज्झत्थ होवि   आउहु मेल्लिवि खमभाउ लेवि।

घत्ता—अवलोयंतु धराहिवइ एत्तिउ किज्जेउ सुत्तु सुजुत्तउ ॥
तुम्हहं दोहं मि होउ रणु तिविहु धम्मेणाएण णिउत्तउ ॥९॥

१०

पहिलउ अवरोप्परु दिट्ठि धरह   मा पत्तलपत्तणचलणु करह।
बीयउ हंसावलिमाणिएण   अवरोप्परु सिंचहु पाणिएण।
तइयउ पुणु णहि जोयंतु देव   करु करि घिवंतें सुरदंति जेंव।
जुज्झह बिण्णि वि णिवमल्ल ताम   एक्केण तुलिज्जइ एक्कु जाम।
५ अवरोप्परु जिणिवि परक्कमेण   गेण्हहु कुलहरसिरि विक्कमेण।
तणुसोहाहसियपुरंदरेहिं   ता चिंतिउ दोहिं मि सुंदरेहिं।
किं दूहवियहि णवजोव्वणेण   किं फलिएण वि कडुएं वणेण।
किं सलिलें चंडोलंकिएण   किं दाणें पेसणसंकिएण।
किं राएं गुरुपडिकूलएण   सुविणीयसुयणसिरसूलएण।

१० घत्ता—जे ण करंति सुहासियइं संतिहिं भासियाइं णयवयणइं ॥
ताहं णरिंदहं रिद्धि कओ कहिं सीहासणछत्तइं रयणइं ॥१०॥

११

इय चिंतिवि इच्छिउ मंतिमंतु   वुड्ढाणुगामि णीसेसु संतु।
अवलंबिउ रोसु ण परियणेहिं   आयंबकसणसियलोयणेहिं।
सकसायभाव आसण्णु ढुक्कु   दोहिं मि अवलोइउ एक्कमेक्कु।
उद्धाणणु पहु भुयबलिहि तोंडु   पेच्छइ रविबिंबु व किरणचंडु।
५ हेट्ठिल्ल दिट्ठि उवरिल्लियाइ   णिज्जिय दिट्ठिइ अविहल्लियाइ।
णं होंति कुगइ पंचमगईइ   विसयासा इव मुणिवरमईइ।
णं तावसि भग्गी विडरईइ   णं सेलभित्ति गंगाणईइ।
णं कमलपंति ससियरतईइ   कुमुओलि व मउलिय रविरुईइ।

४. MBP आउह। ५. MBP किज्जइ सुट्ठु। ६. MBP धम्मु णाएण।

१०. १. MP पत्तलयत्तणु चवलु; B पत्तलयत्तणु चलणु; T पत्तलयत्तणु। २. B करि करु। ३ MBP घिवंतु। ४. MBP अणुहुंजहु मेइणि। ५. T चंडालट्ठिएण। ६. MBP कहिं कहिं। ७. MB सिंघासण°; P सिंहासण°।

११. १. MBP आसण्ण ढुक्क। २. MBP एक्कमेक्क. ३. MBP तुंडु। ४. MBP पेक्खिवि। ५ P पंचमगयाइ। ६. MBP विव। ७. P °मयाइ। ८. P °रुईइ। ९. M णं कुमुउलि वररवियरुईइ; B णं कुमुउण्णिव णवरवि°; P णं कुमुउलिव णवरवि°।

दोनों देवोंसे भी प्रचण्ड है, आप दोनों धरतीरूपी महिलाके बाहुदण्ड हैं। आप दोनों राजाके न्यायमें कुशल हैं, आप दोनों अपने पिताके चरणरूपी कमलोंके भ्रमर हैं, आप दोनो ही जनताके नेत्र हैं। इसलिए आप हमारे पक्षको पसन्द करें। तीखे आयुधोंकी धारसे विदीर्ण अनुचर समूहके मारे जानेसे क्या? उन बेचारोंको दण्डित करने और नारी समूहको विधवा बनानेसे क्या? दोनोंके बीच मध्यस्थ होकर आयुध छोड़कर और क्षमाभाव धारण करें।

घत्ता—हे राजन्, देखिए और युक्तियुक्त कहा हुआ इतना कीजिए। तुम दोनोंमें धर्म और न्यायसे नियुक्त तीन प्रकारका युद्ध हों ॥९॥

१०

पहला—एक दूसरेपर दृष्टि डालो, कोई भी अपने पक्ष्मकी पलकोंको न हिलाये, दूसरा—हंसावलीके द्वारा सम्मानित पानीके द्वारा एक दूसरेको सींचो, तीसरे—आकाशमें देवता देखते हैं और जिस प्रकार ऐरावत सूंड़को पकड़ता है, आप दोनों राजमल्ल तबतक मल्लयुद्ध करें कि जबतक एकके द्वारा दूसरा हरा न दिया जाये। पराक्रमसे एक दूसरेको जीतकर पराक्रमसे कुलगृह-श्रीको ग्रहण करें।" तब अपने शरीरकी शोभासे इन्द्रका उपहास करनेवाले दोनों सुन्दरोंने अपने मनमें विचार किया कि अनिष्ट करनेवाले नवयौवनसे क्या? फले हुए कड़ुवे वनसे क्या? चाण्डालसे अलंकृत जलसे क्या? आदेशसे शंकित रहनेवाले दाससे क्या, गुरुसे प्रतिकूल और अत्यन्त विनीत सुजन शिरको पीड़ा पहुँचानेवाले राजासे क्या?

घत्ता—जो मन्त्रियोंके द्वारा भाषित, सुभाषित और नीतिवचन नहीं करते उन राजाओं-की ऋद्धि कहाँ, और सिंहासन, छत्र एवं रत्न कहाँ? ॥१०॥

११

यह विचारकर उन्होंने मन्त्रीकी मन्त्रणा पसन्द की। वृद्धाश्रित सब कुछ उत्तम होता है। लाल, सफेद एवं श्वेत लोचनवाले परिजनोंने क्रोधका आलम्बन नहीं लिया। कषायभावसे वे एक दूसरेके निकट पहुँचे, दोनोंने एक दूसरेको देखा। राजा भरत ऊँचा मुख किये बाहुबलिका मुख देखता है, जैसे किरण प्रचण्ड रविबिम्बको देखता है। ऊपरकी अविचलित दृष्टिसे नीचेकी दृष्टि जीत ली गयी, मानो होती हुई कुगति पाँचवी गतिसे, मानो मुनिवरोंकी मतिसे, विषयाशा मानो, विटकी रतिसे तपस्विनी और मानो गंगानदीसे पर्वतकी दीवार भग्न हो गयी हो। मानो चन्द्रकिरणोंकी परम्परासे कमलपंक्ति, मानो रविकी कान्तिसे कुमुदोंकी पंक्ति मुकुलित हो गयी हो।

घत्ता—ठिउ हेट्ठामुहुं चक्कवइ णिज्जिउ पडिभडदिट्ठिपहावहिं ॥
घल्लियणवकुसुमंजलिहिं णंदातणुरुहु संथुउ देवहिं ॥११॥

१२

मओमत्तमायंगलीलावहारा रसावासवच्छत्थलोलंतहारा[1] ।
फणिंदेण चंदेण इंदेण दिट्ठा पुणो दो वि राया सरंते पइट्ठा ।
सरंतेहिं आलोइयं सच्छणीरं विसालं गहीरं तुसारोहतारं ।
महापोमसुत्ताहिसाणिक्कदित्तं मरुद्धूयतिगिच्छि[2]धूलीविलित्तं ।
५ महीरंगरंगंतकल्लोलमालं मरालीपहालग्गलीलामरालं ।
सिरीणेउरालावणच्चंतसोरं भिसाहारपूरंतचंचूचऊरं ।
तरंतामरं रोयरारद्ध[3]कीलं जलुब्भंतमीणं लयापत्तणीलं ।
ससीछाहिसारंगडेवंतसीहं[4] समुत्तुंगफेणावलीछण्णतूहं ।
झुणंतालिकोलाहलं सारसिल्लं[5] इणुम्मुक्कपायावलीफुल्लफुल्लं ।
१० सुयाणेयपक्खिंद[6]जक्खिंदसद्दं पमज्जंत[7]हत्थिंदसोंडा[8]विमद्दं ।
घत्ता—तहिं विण्णि वि जण ओयरिय पहुणा घित्त जलंजलि भायहु ॥
वियलइ[9] उप्परि मेहलहे णं मंदाइणि हिमइरिरायहु ॥१२॥

१३

वच्छत्थलु पाविवि पुणु वि वलिय[1] हेट्ठामुह खलमेत्ति व घुलिय[2] ।
कडियलि धावंती सुंदरासु दीसइ तारालि व मंदरासु[3] ।
णं मरगयमहिहरि चंदकंति णं णीलमहीरुहि[4] हंसपंति ।
डेवंती दीसइ सलिलधार णं कंठभट्ठ कंठिय सुतार ।
५ णं सुरसरि चवल[5]तरंगफार गयणुल्ललंत झससुंसुमार ।
आरूसिवि पुणु भरहहु विमुक्क णंदातणएं गुरुजलझलक्क ।
पच्छाइउ चउदिसु ताइ राउ धवलइ जिणकित्तिइ णं तिलोउ ।
कणयइरि व सरयब्भावलीइ णं उययसिहरि ससहररुईइ ।
सलिलें णवसोत्तइं पूरियाइं बहुपरियणसयणइं जूरियाइं ।
१० उग्घोसिउ विजउ महासरेहिं बाहुवलिणराहिवकिंकरेहिं ।
घत्ता—सीसु धुणंतु मुयंतु[6] छलु सरवरवारिपवाहें सित्तउ ॥
पडिओसारियउ[7] पुहइवइ णाइं करिंदु करिंदें जित्तउ ॥१३॥

---

१२ १ MBP वच्छत्थलोलंत° । २. M °तिगिन्छ°; B तिगिंछि°; P तिगिंछ° । ३ MB रोयपारद्ध°; P रोयरारद्ध°, T रोयरं चक्कवालं । ४. MBP °सिंहं । ५ M सारिसिल्लं । ६. MP °पेक्खंत° । ७. MBP णिमज्जं° । ८ MBP सुंडा° । ९. MBP वियरइ ।

१३. १. MB पुणु वलिया । २ MBP घुलिया । ३. MBP तारावलि मंदरासु । ४. MP महिरुहि; B महीहरि । ५ MBP धवल° । ६ MBPK मुणंतु । ७ MBP °ओसरियउ ।

घत्ता—प्रतिभटकी दृष्टिके प्रभावोंसे पराजित चक्रवर्ती नीचा मुख करके रह गया, नव-कुसुमांजलियां डालते हुए देवोंने सुनन्दाके पुत्र बाहुबलिकी संस्तुति की ॥११॥

१२

मतवाले गजोंकी लीलाका अपहरण करनेवाले तथा लक्ष्मीके निवासघरस्वरूप जिनके वक्षपर हार आन्दोलित है ऐसे वे दोनों राजा फिर सरोवरके भीतर प्रविष्ट हुए और उन्हें नागेन्द्रों, चन्द्र और इन्द्रने देखा। प्रवेश करते हुए स्वच्छ नीर देखा, जो विशाल गम्भीर और हिमकणोंके समूहकी तरह निर्मल था। हवासे उड़ती हुई पराग-धूलिसे लिप्त था, जिसकी तरंगमाला भूमि-रूपी रंगमंचपर क्रीड़ा कर रही थी, जहाँ लीलामे हंस हंसनियोंके पथमें लगे हुए थे, लक्ष्मीके नूपुरोंके अलापपर मयूर नृत्य कर रहे थे, जहाँ मृणालके आहारसे चकोरकी चोंच भरी हुई थी, भ्रमर तैर रहे थे, जिसमे सुन्दर क्रीड़ा प्रारम्भ की गयी थी, जलसे मछलियाँ निकल रही थी, जो लतापत्रोंसे नीला था, जिसमे चन्द्रमाके प्रतिबिम्बके हरिणपर सिंह झपट रहा था। उठती हुई फेनावलीसे तट ढके हुए थे, गूँजते हुए भ्रमरोंका कोलाहल हो रहा था, जो सारसोंसे भरा हुआ था, सूर्यसे मुक्त किरणावलीसे फूल खिले हुए थे, जिसमें अनेक पक्षीन्द्रों और यक्षेन्द्रोको शब्द सुनाई दे रहा था और जो डूबते हुए गजोकी सूँड़ोसे मर्दित था।

घत्ता—ऐसे उस सरोवरमें वे दोनो उतरे। स्वामीने अपने भाईके ऊपर जलकी धारा छोड़ी मानो हिमालयसे गंगानदी धरतीके ऊपर आ रही हो ॥१२॥

१३

वक्षस्थल पाकर वह फिर मुड़ी और दुष्टकी मित्रताकी तरह नीचा मुख कर गिर पड़ी। उस सुन्दरके कटितटपर दौड़ती हुई ऐसी मालूम हो रही थी, जैसे मन्दराचलपर तारावली हो। मानो मरकत महीधरपर चन्द्रमाकी कान्ति हो, मानो नील वृक्षपर हंसपंक्ति हो, हिलती हुई धारा ऐसी मालूम होती थी, मानो कण्ठसे भ्रष्ट स्वच्छ हार हो, मानो चंचल लहरोसे विस्फारित गंगानदी हो, कि जिसमें आकाश तक मत्स्य और शिशुमार उछल रहे थे। तब क्रुद्ध होकर सुनन्दाके पुत्र बाहुबलिने भरतके ऊपर भारी जलधारा छोड़ी। उसने राजाको चारो ओरसे आच्छादित कर लिया, मानो जिनेन्द्र भगवान्‌की कीर्तिने तीनों लोकोको ढक लिया हो, मानो शरद्‌की मेघावलीने स्वर्णगिरिको, मानो चन्द्रमाकी किरणमालाने उदयाचलको ढक लिया हो। जलसे नवस्रोत पूरे हो गये, बहु परिजन और स्वजन पीड़ित हो उठे। तब बाहुबलि राजाके अनु-चरोने महास्वरोमे विजयकी घोषणा कर दी।

घत्ता—अपना सिर पीटता और छल छोड़ता हुआ तथा सरोवरके जलप्रवाहसे अभि-सिंचित पृथ्वीपति भरत हटाया गया। पृथ्वीपति भरत उसी प्रकार जीत लिया गया, जिस प्रकार हाथीसे हाथी जीत लिया जाता है ॥१३॥

१४

जलभरियसुणासावंसएण वड्ढिपडिभडवलसंसएण ।
वंज्जियमंडलियकुरंगएण परिहच्छें सरतीरंगएण ।
रोसारुणच्छिरंजियदिसेण सप्पेण व अइआसीविसेण ।
सीहेण व उद्धुयकेसरेण णिब्भच्छिउ भाइ णरेसरेण ।
५ पीलिज्जइ तेरउ उच्छुचाउ रसु पिज्जइ खज्जइ गुलु सुसाउ ।
फुल्लसर वि कयधम्मेल्लसोह पई जेहा कहिं लब्भंति जोह ।
अवियाणियखत्तियधम्मसार महिलाण गोहहो मोट्टियार ।
किं किर वयणेण पलोइएण जीवंतहं सलिलें ढोइएण ।
ए पहिं देहि भुयजुज्झु तेम अज्जु जि पयंतरु होइ जेम ।
१० ता भणइ जइणि णिप्फलु जि भसहि धणुबाण महारा काइं हसहि ।
जाणंतु वि देवि णिरत्थु भणहि पियविरहुव्वेइउ किं कणहि ।
महिलाण गोहुं हउं सयणमग्गि गोहाण गोहु कड्ढियइ खग्गि ।

घत्ता—जइ सयणत्तणु मण्णियउं तो किं मग्गहि पुहइ भडारा ॥
णियधणकणमयकयविवस पत्थिव सयल होंति विवरेरा ॥१४॥

१५

तओ भुयमंडणि भायर लग्ग णरिंदसिरोमणि घट्टपयग्ग ।
कुलीण कुकारणि माणमहल्ल पहाण महाबल बिण्णि वि मल्ल ।
सुकंचणकुंडलमंडियगंड पसारियबाहु सरोस पयंड ।
चिराउस चंदचडावियणाम सुविक्कमवंत णराहिवकाम ।
५ समत्थ सिरीण रईण णिकेय महारह भारह भक्खरतेय ।
असंक खगंक झसंक विपंक जसंसुपसाहियपुण्णससंक ।
मिलंति मिलेप्पिणु हत्थि धरंति धरेप्पिणु देह धडेवि पडंति ।
पडंत जि गाहणिबंधणु देंति कडीयलु कंठु णिरुंभिवि ठंति ।
विरुद्ध वि गाह बलेण मुयंति मुएप्पिणु ढुक्कवि झत्ति वलंति ।
१० अलंभुयजुज्झविहाणसयाइं पचप्पणकड्ढणवेढणयाइं ।
करंति वि धीर अविहवियंग णिरंकुस णाइं मयंध मयंग ।
पयाणभरस्स धरित्ति ण तिण्ण विमुक्क रवेण दिसाकरि चुण्ण ।
फलोणयपायवपिट्टु व छुण्ण णहे गय पक्खि वणेयर रुण्ण ।
ण चल्लिय कुंचिय कूर फणिंद दरीकुहरेसु णिलीण पुलिंद ।
१५ तओ हयमाणिणिमाणमएण णरामरसंगरलद्धजएण ।

---

१४ १ MBPK तज्जियº । २. MBP ºघम्मिल्लº । ३. MB किंकरवयणेण । ४. P भुयजुयलु ।
५. BK देव । ६ MBP कुणइ । ७. M मोहु, but records a *p* गोहु । ८. P कणयमयº ।
१५. १. K ºघुट्ठº and gloss घृष्ट । २. P सकंचणº । ३. MBP बारहभक्खरº । ४. MBP घडेण ।
५. MBP पडंति जि गाढº । ६. MBP णिरुद्धु वि वाहु; K णिरुद्ध वि गाह । ७. MBP जंति ।
८. MBP पचप्पणº । ९ PK चुण्ण ।

१४

जिसकी नाककी नली जलसे भर गयी है, जिसे प्रतियोद्धाके बलमें संशय बढ़ गया है, जिसने माण्डलीक राजारूपी भी हरिणोंको छोड़ दिया है, ऐसे नरेश्वर भरतने वेगसे तीरपर जाकर क्रोधसे लाल आँखोंसे दिशाको रंजित करते हुए अत्यन्त विषदाढवाले सर्पके समान अथवा अयाल उठाये हुए सिंहके समान भाईकी भर्त्सना की—"जो अपने ईखके धनुषको पीड़ित कर उसका रस पीता है, और सुस्वादु गुड़ खाता है और जिसके पुष्परूपी तीर भी चोटीकी शोभा करनेवाले है ऐसा तुम्हारे जैसा योद्धा कहाँ पाया जा सकता है। क्षत्रियोंके श्रेष्ठ धर्मको नही जाननेवाले, महिलाओं और अपने ग्रामप्रमुखका अहंकार रखनेवाले तुम्हें मेरा मुख देखनेसे क्या, जीवितोंको पानी देनेसे क्या ? ओ आओ और मुझे ,इस तरह बाहुयुद्ध दो जिससे दोनोका अन्तर स्पष्ट हो जाये।" तब जिनपुत्र बाहुबलि बोला—"तुम व्यर्थ बोलते हो, मेरे धनुष-बाणका उपहास क्यों करते हो, हे देव जानते हुए भी तुम व्यर्थ बोलते हो, प्रियविरहसे उद्विग्नके समान तुम क्यो नही रोते। महिलाओंका साथी मै स्वजनमार्ग (शयनमार्ग) में हूँ, लेकिन तलवार निकल आनेपर मै योद्धाओंका योद्धा हूँ।"

घत्ता—यदि तुम स्वजनत्व मानते हो तो हे आदरणीय, धरती क्यों माँगते हो, हे राजन् अपने धनकणोंके मदसे विवश किये गये सभी लोग विपरीत हो उठते है ? ॥१४॥

१५

उस समय महेन्द्र शिरोमणि दोनो भाई अपने पैरोके अग्रभागको रगड़ते हुए बाहुयुद्ध करने लगे। दोनों ही कुलीन और मानमे महान् पृथ्वीके कारण (लड़ गये)। दोनो ही प्रधान और महाबल-मल्ल। दोनों ही संकुचित कुण्डलोसे अलंकृत कपोल, दोनो ही क्रुद्ध और प्रचण्ड अपने बाहु फैलाये हुए, चिरायु, चन्द्रमाके समान प्रसिद्ध नाम, विक्रमसे युक्त नराधिपकी कामनावाले और समर्थ, लक्ष्मी और रतिके आश्रय, महारथी आभासे युक्त और सूर्यकी तरह तेजस्वी। शका-रहित गरुड़ और मत्स्यके चिह्नवाले, पंकसे रहित, और यशकी किरणोंसे पुण्यरूपी चन्द्रमाको प्रसाधित करनेवाले थे। वे दोनो मिलते हैं, मिलकर हाथ पकड़ते हैं। हाथ पकड़कर देहसे लगकर गिरते हैं। गिरते हुए मजबूत पकड़ करते है और कमर और गलेको रुद्ध कर रह जाते है। विरुद्ध भी पकड़को बलसे छुड़ा लेते है, छूटकर उठकर शीघ्र मुड़ते हैं, और समर्थ बाहुयुद्धके सैकड़ों विधान (दावँपेंच) जैसे चाँपना, काढ़ना, वेठन (लिपटना) आदि करते हैं। दोनो ही धीर और अस्खलित अंगवाले तथा निरंकुश हैं, जैसे मदान्ध महागज हों। पैरोंके भारसे धरती इन्होंने नही छोड़ी। शब्दसे दिग्गज दुःखी हो गये, फलोसे उन्नत वृक्षोंकी पीठ छिन्न हो गयी, पक्षी आकाशमे चले गये, वनचर खिन्न हो उठे, क्रूर नागराज वही संकुचित हो गये—चल नहीं सके, और भील घाटियो और गुफाओंमे छिप गये। उस समय मानिनियोंके मान और मदका हनन करनेवाले

सुरिंदकरीकरथोरभुएण अणिंदजिणिंदसुणंदसुएण ।
पहुस्स करेण करा परताविं परेण थिरेण धरेण[10] कमावि ।

घत्ता—कुंअरें[11] राउ समुद्धरिउ णायणियंबिणिसेवियकंदरु ॥
कयइच्छाकोउहलेण किं ण[12] पुरंदरेण गिरि मंदरु ॥१५॥

१६

उद्धरिउ सुपुत्तें णं सुवंसु कमलायरेण णं रायहंसु ।
णं सुहपरिणामें जीवें भव्वु णं सुयणसमूहें सुकइकव्वु ।
णं मुणिवरणाहें वयविसेसु णं णरवरिंदणाएण देसु ।
णं गमणवियारें बालभाणु णं वाएं चंपयकुसुमरेणु ।
५ णं कामुयसत्थें कामचारु णं सो जि तेण संसारसारु ।
खयरामरमाणविमद्दणेण पढमेण पढमजिणणंदणेण ।
अइलुद्धें बहुमणिणियधणेण कुद्धें अवगणियसज्जणेण ।
परिपालियसयलवसुंधरेण ता चिंतिउ चक्कु सुकंधरेण ।
जमदाढावलयहु अणुहरंतु उद्धाइउ चंचलु विप्फुरंतु ।
१० रविबिंबेण व जियविसमवेउ तें परियंचिउ बाहुबलिदेउ ।
थिउ दाहिणभुयदंडहु समीउ को एहउ किर णियकुलपईउ ।
को सुरयधुत्तिचित्ताणुवट्टि को एम जिणइ जगि चक्कवट्टि ।

घत्ता—विंभिउ भरहणराहिवइ बाहुबलीसु जणेण पसंसिउ ॥
गयणभाउ सुरमुक्कियहिं पुप्फदंतपंतिहिं णं पहसिउ ॥१६॥

इय महापुराणे तिसट्ठिमहापुरिसगुणालंकारे महाकइपुप्फयंतविरइए महाभव्वभरहाणुमण्णिए महाकव्वे भरहबाहुबलिजुज्झवण्णणं णाम सत्तारहमो परिच्छेओ समत्तो ॥ १७ ॥

॥ संधि ॥ १७ ॥

१०. P धरेवि । ११. MBP कुमरें । १२. M णाइ, but T किं गिरिमंदरो पुरंदरेण नोद्धृतः ।
१६ १ MBP जीउ । २. MBP गयण° । ३. BP बहुमाणिय° । ४. K °विसमवेउ । ५. K बाहुब। मेरु । ६. MBP पुप्फयंत° ।

मनुष्यों और देवोंके संग्राममें जय प्राप्त करनेवाले, ऐरावतकी सूँड़के समान बाहुवाले अनिन्द्य जिनेन्द्र और सुनन्दाके पुत्रने प्रभुके हाथको हाथसे पीड़ित कर दूसरे स्थिर हाथसे पकड़कर आक्रमण कर—

घत्ता—कुमारने राजाको उसी प्रकार उठा लिया, जिस प्रकार नागोंकी स्त्रियो (नागिनों) से जिसकी गुफाएँ सेवित है, ऐसे मन्दराचलको अपनी इच्छाके कुतूहल मात्रसे इन्द्रने उठा लिया हो ॥१५॥

१६

मानो सुपुत्रने अपने वंशका उद्धार किया हो, मानो कमलाकरने राजहंसको उठा लिया हो, मानो शुभ परिणामने भव्य जीवको, मानो सुजन समूहने सुकविके काव्यको, मानो मुनिवर स्वामी-ने व्रत विशेषको, मानो किसी श्रेष्ठ राजाने देशको, मानो गमनव्यापारने बालसूर्यको, मानो पवनने चम्पक कुसुमकी धूलको, मानो कामशास्त्रने कामाचारको, या मानो उसीने संसारके सारको उठा लिया हो। तब विद्याधर और अमरोंके मानका मर्दन करनेवाले, अत्यन्त लोभी, धनको सब कुछ समझनेवाले, सज्जनकी अवहेलना करनेवाले, समस्त धरतीके पालक अच्छे कन्धोंवाले जिनेन्द्रके प्रथम पुत्र भरतने चक्रका ध्यान किया। वह यमके दंष्ट्रावलयका अनुकरण करता हुआ चंचल और स्फुरायमान हो उठा और रविबिम्बके समान उसने विषम वेगको जीतनेवाले बाहुबलि-के देहकी प्रदक्षिणा की, तथा उनके दायें हाथके पास जाकर स्थित हो गया। ऐसा अपने कुलका प्रदीप कौन हुआ है ? सुरतिमे धूर्त चित्रोंका अनुकरण करनेवाला कौन है ? इस प्रकार विश्वमे चक्रवर्तीको कौन जीत सकता है ?

घत्ता—भरत नराधिप विस्मित हो उठा। बाहुबलीश्वरकी विश्वने प्रशंसा की। देवोके द्वारा बरसाये गये कुन्दकुसुमोकी पंक्तियोसे मानो आकाशका भाग हँस उठा ॥१६॥

इस प्रकार त्रेसठ महापुरुषोंके गुणालंकारोंसे युक्त इस महापुराणमें महाकवि पुष्पदन्त द्वारा विरचित और महाभव्य भरत द्वारा अनुमत महाकाव्यका भरत-बाहुबलि युद्ध-वर्णन नामका सत्रहवाँ परिच्छेद समाप्त हुआ ॥१७॥

संधि १८

णहु लंघिउ सुरगिरि चालियउ धीरे सायरु मवियउ ॥
करडिंसु व वंभहु तणउं सुउ उच्चाइवि[1] पुणु थवियउ ॥ ध्रुवकं ॥

१

णं कमलसरु हिसोहयकायउ[2]   दवदड्ढउ[3] रुक्खु व विच्छायउ ।
जं ओहुल्लियमुहु[4] पहु दिट्ठउ   तं वलि भणइ हउं जि णिक्किट्ठउ ।
५ चक्कवट्टि णियगोत्तहु सामिउ   जेणु महंत[5] भाइ ओहामिउ ।
हा किं किज्जइ सुयवलु मेरउ   जं[6] जायउ सुहिदुण्णयगारउ ।
महि पुण्णालि व केण ण भुत्ती   रज्जहु पडउ वज्जु समसुत्ती ।
रज्जहु कारणि पिउ मारिज्जइ   वंधवहुं[7] मि विसु संचारिज्जइ ।
जिह अलि गंधें गउ संघारहु   तिह रज्जेण जीउ तंवारहु ।
१० भडसामंतमंतिकयभायउ   चिंतिज्जंतउ सव्वु परायउ ।
तंडुलपसयहु कारणि राणा   णरइ पडंति काइं अवियाणा ।
डज्झउ रज्जु जि दुक्खु[8] गुरुक्कउ   जइ सुहु तो किं ताएं मुक्कउ ।
सुहणिहि भोयभूमि संपयंयर[9]   कहिं सुरतरु कहिं गय तें कुलंयर ।
घत्ता—दुल्लंघहु[10] दुक्कियलंछणहो   दूसहदुक्खदुरंतहो[11] ॥
१५ भणु दाढापंजरि पडिउ णरु को उव्वरिउ कयंतहो ॥१॥

२

कालभुयंगहु को वि ण चुक्कइ   सुयणत्तणु जि एक्कु पर थक्कइ ।
मइं पइ जेहा वहु वेहाविय   पुहइ पुहइपाल वोलाविय ।
एयहि अइअहिलासु ण गम्मइ   जणणि जणणु भायरु किह हम्मइ ।
पडिवण्णउं ण केम पालिज्जइ   किह हियवउ कलुसें मइलिज्जइ ।

MBP give, at the commencement of this Samdhi, the following stanza :-

शशधरविम्बात्कान्ति तेजस्तपनाद्गभीरतामुदधे. ।
इति गुणसमुच्चयेन प्रायो भरतः कृतो विधिना ॥

GK do not give it.

१. १. P उच्चाविवि । २. P हिमहय° but gloss हिमाहत । ३. P दवदट्ठु व । ४. B ओहुल्लिय महुं । ५. MBP महंतु । ६. P हा जं जायउ । ७. P वंधवाहुं विसु । ८. B दुक्खगुरुक्कउ । ९. P संपयघर । १०. B दुल्लंघियदुक्किय° । ११. MB दूसहो ।

सन्धि १८

उस धीरने आकाश लाँघ लिया, मन्दराचलको चला दिया, सागरको माप लिया और ब्रह्माके (आदिनाथके) पुत्र भरतको हाथमें बालककी तरह उठाकर फिरसे स्थापित कर दिया।

१

जब बाहुबलिने प्रभुको अधोमुख देखा तो उसे लगा मानो हिमसे आहत शरीर कमल सरोवर हो, जैसे दावानलसे दग्ध कान्तिरहित वृक्ष हो, वह कहता है "मै ही निकृष्ट हूँ जिसने अपने ही गोत्रके स्वामी भरतको अपमानित किया। हा ! मेरे बाहुबलने क्या किया कि जो वह सुधियोंका दुर्नय करनेवाला बना। धरतीरूपी वेश्याका उपभोग किसने नही किया ? यह उक्ति ठीक ही है कि राज्यपर वज्र पड़े। राज्यके लिए पिताको मारा जाता है, भाई लोगोंमे विषका संचार किया जाता है; जिस प्रकार भ्रमर गन्धसे नाशको प्राप्त होता है, उसी प्रकार राज्यसे जीव विनाशको प्राप्त होता है। भट, सामन्त, मन्त्र, मन्त्री आदिके रूपमे किया गया विभाजन विचार करनेपर सब पराया प्रतीत होता है। चावलोंके माड़के लिए अज्ञानी राजा नरकमे क्यों पड़ते है। इस राज्यमे आग लगे, यही सबसे बड़ा दुःख है। यदि इसमे सुख होता तो पिताजी इसका परित्याग क्यों करते ? सुखकी निधि भोगभूमि, सम्पत्ति पैदा करनेवाले वे कल्पवृक्ष और वे कुलकर राजा कहाँ गये ?

घत्ता—दुर्लंघ्य पापोंसे लांछित असह्य दुःखों और पापोंवाले यमकी दाढ़ोमे पड़ा हुआ कौन मनुष्य उबर सका है ? ॥१॥

२

कालरूपी महानागसे कोई नही बचता, केवल एक सुजनत्व बच रहता है। मैंने तुम-जैसे बहुतोंको प्रवंचित किया है। पृथ्वीके लिए पृथ्वीपालोपर अतिक्रमण किया है। फिर भी इसमें, अभिलाषा समाप्त नहीं होती। इसके लिए जननी, जनक और भाईकी हत्या क्यो की जाती है, जो स्वीकार कर लिया है, उसका परिपालन क्यो नही किया जाता। अपने हृदयको आगमे ठेला४

५ जं माणुसु धम्मेण ण भिज्जइ [1]सो णिक्किट्ठु तेण किं किज्जइ।
देव मज्झु खमभाउ करेज्जसु जं पडिकूलिउ तं म रूसेज्जसु।
अप्पउ लच्छिविलासें रंजहि लइ महि तुहुं जि णराहिव भुंजहि।
णहणिवडियणीलुप्पलविट्ठिहि हउं पुणु सरणु जामि परमेट्ठिहि।
तं णिसुणिवि भरहेसें वुच्चइ परिहवदूसिउ रज्जु ण रुच्चइ।
१० घत्ता—अंतेउरसयणहं परियणहं णीसेसहं मि णियंतहं॥
हउं जित्तउ पइं तुहुं सइं [2]खमिउं खम भूसणु गुणवंतहं॥२॥

३

जइ पइं णियभुएहिं अंदोलिउ [1]भूमंडलि तडत्ति अप्फालिउ।
तो किं चक्कु [2]रयणु मइं रक्खइ पुणु जीयंतु को वि किं पेक्खइ।
पइं जित्ती खमा वि खमभावें पइं तोसिउ कोउसिउ सपयावें।
पइं जिह तेयवंतु ण दिवायरु णउ गंभीरु होइ रयणायरु।
५ पइं दुज्जसकलंकु पक्खालिउ णाहिणरिंदवंसु उज्जालिउ।
पुरिसरयणु तुहुं जगि एक्कल्लउ जेण कयउ महु बलु वेयल्लउ।
को समत्थु उवसमु पडिवज्जइ जगि जसढक्क कासु किर वज्जइ।
पइं मुएवि तिहुयणि को चंगउ अण्णु कवणु पच्चक्खु अणंगउ।
अण्णु कवणु जिणपयकयपेसणु अण्णु कवणु रक्खियणिवसासणु।
१० घत्ता—ससि सूरहो मंदरु मंदरहो इंदहु इंदु अणीयउ॥
पर एक्कहु णंदाएविसुय तुह ण णिहालमि बीयउ॥३॥

४

जं तुहुं दुव्वयणेहिं णिब्भच्छिउ जं दिट्ठीइ सरोसु णियच्छिउ।
जं सरवाणिएण णिरु सित्तउ जं जुज्झंतें पेल्लिवि घित्तउ।
तं एवहिं खम करि महुं बंधव जिणवरतणय तिजगमणसंभव।
आउ जाहु उज्झाउरि पइसहि अज्जु जि तुहुं सिहामणि वइसहि।
५ पट्टु णिबंधमि भालि तुहारइ अक्ककित्ति जीवउ तुह केरइ।
एवहिं रज्जु करंतउ लज्जमि एवहिं परमदिक्ख पडिवज्जमि।
एवहिं इंदियछंदु विवज्जमि एवहिं पुण्णु ण पाउ समज्जमि।
एवहिं कम्मणिबंधण भंजमि एवहिं जोएं प्राणें विसज्जमि।
घत्ता—बंधव वणवासहु पट्ठविवि धरणिमोहरसभंतें॥
१० मइं एवहिं दुज्जसभायणेण भायर काइं जियंतें॥४॥

---

२ १. MBP णिक्किउ काइं तेण किर किज्जइ; K णिक्किट्ठु तेण काइं किर किज्जइ; but corrects it to सो णिक्किट्ठु तेण किं किज्जइ। २. MBP खमिउ।

३ १. MBP महिमंडलि। २ MBP चक्करयणु। ३. MB पुणु वि जयंतु; PK पुणु वि जियंतु। ४ MB तोसिउ। ५. M पोउसिउ; B कोसिउ।

४. १. MBP जं दुव्वयणेहिं। २. M महुं खम करि। ३. MBPK °णिबंधणु। ४ MBP पाण।

क्यों किया जाता है ? यदि मनुष्य धर्ममें अनुरक्त नही होता तो वह निकृष्ट है, उससे क्या होगा ? हे देव, मुझपर क्षमाभाव कीजिये और जो मैने प्रतिकूल आचरण किया है उसपर क्रुद्ध मत होइए। अपनेको लक्ष्मीविलाससे रंजित कीजिए, यह धरती आप ही लें, और इसका भोग करें। मै, जिनपर आकाशसे नीलकमलोकी वृष्टि हुई है, ऐसे परमेष्ठी आदिनाथकी शरणमे जाता हूँ।" यह सुनकर भरतेश्वरने कहा—"पराभवसे दूषित राज्य मुझे अच्छा नही लगता।"

घत्ता—अन्तःपुर, स्वजनों, परिजनों और शेष लोगोंके देखते हुए मै तुम्हारे द्वारा जीता गया और तुम्हारे द्वारा स्वयं क्षमा किया गया। तुम गुणवानोंमे क्षमाभूषण हो ॥२॥

३

जब तुमने मुझे अपने बाहुओंसे आन्दोलित किया और लड़ करके भूमिपर पटक दिया, तो चक्ररत्न मेरी क्या रक्षा करता है ? फिर जीवित रहते हुए कोई क्या देखता है ? तुमने अपने क्षमाभावसे क्षमाको जीत लिया, तुमने अपने प्रतापसे कौशिक (इन्द्र) को भी सन्तुष्ट कर लिया। तुम जितने तेजस्वी हो, उतना दिवाकर भी तेजस्वी नही है। तुम्हारे समान समुद्र भी गम्भीर नही है। तुमने अपयशके कलंकको धो लिया है और नाभिराजके कुलको उज्ज्वल कर लिया है। तुम विश्वमे अकेले पुरुषरत्न हो जिसने मेरे बलको भी विकल कर दिया। कौन समर्थ व्यक्ति शान्तिको स्वीकार करता है। विश्वमे किसके यशका डंका बजता है। तुम्हे छोड़कर त्रिभुवनमे कौन भला है ? दूसरा कौन प्रत्यक्ष कामदेव है। दूसरा कौन जिनपदोंकी सेवा करनेवाला है और दूसरा कौन नृपशासनकी रक्षा करनेवाला है।

घत्ता—शशि सूरसे, मन्दर मन्दराचलसे और इन्द्र इन्द्रसे उपमित किया जाता है, परन्तु हे नन्दादेवी-पुत्र, एक तुम्हारा दूसरा प्रतिमान (उपमान) दिखाई नही देता ॥३॥

४

"जो तुमने दुर्वचनोसे मेरी निन्दा की, जो दृष्टिसे क्रोधपूर्वक देखा, जो सरोवरके पानीसे मुझे सिक्त किया, और जो लड़ते हुए ठेलकर गिरा दिया; हे मेरे भाई, उसके लिए तुम मुझे क्षमा करो, आओ और अयोध्याके लिए जाओ, तुम आज भी सिंहासनपर बैठो, मै तुम्हारे भाल-पर पट्ट बाँधूगा। यह अर्ककीर्ति तुम्हारा जीवन होगा। इस समय राज्य करते हुए मै लजाता हूँ। अब मै परम दीक्षा ग्रहण करूँगा। इस समय इन्द्रियोके प्रपंचको छोड़ूँगा। मै इस समय पुण्य या पापका आदर नही करूँगा। इस समय कर्मोके निबन्धनको नष्ट करूँगा। इस समय योगसे प्राणों-का विसर्जन करूँगा।

घत्ता—हे भाई, मै वनवासमे प्रवेश करूँगा। धरतीके मोह रससे भ्रान्त अपयशके भाजन इस जीवनको जीनेसे क्या ?" ॥४॥

५

सज्जणकरुणें सज्जणु कंपइ तं णिसुणिवि भरहाणुउ जंपइ।
जइयहुं हउं सिसुत्ति सहकीलिउ तइयहुं पेइं वि किं ण परितोलिउ।
मज्झु वि तुज्झु वि कवणु पराहउ मज्झु वि तुज्झु वि कवणु महाहउं[2]।
जे गय ते सयल वि मग्गिवि मिसु भावइ भोउ ताहं णावइ विसु।
५ तेत्थु ण काइं वि दोसु तुहारउ वंदणिज्जु तुहुं जगि गरुयारउ।
जइ एवहिं धरित्ति ण समिच्छहि ता[3] जें दिण्णी तहु जि पयच्छहि।
तहिं अवसरि वयणेहिं णिरोहिउ मंतिहिं भूमिणाहु संबोहिउ।
सुउ संताणि थवेवि महाबलि गउ केलासु परायउ भुयबलि।

घत्ता—वणु जंतु मुयंतु णरिंदसिरि महि महंतु अहिमाणिउ ॥
१० साकेयहु राउ विसण्णमणु मंतिहिं मंडइ आणिउ ॥५॥

६

एत्तहि गिरिवरि बाहुबलीसें अइदूराउ पणावियसीसें।
णिट्ठाणिट्ठउ णट्ठाणट्ठउ दिट्ठउ भट्ठदुट्ठकम्मट्ठउ।
अइदट्ठोट्ठरुट्ठपाविट्ठहिं हेट्ठाकोट्ठगयहिं दप्पिट्ठहिं।
जो णउ दीसइ कुंठियवायहिं संसासिहिं मज्जवहिं सवायहिं।
५ वयणुग्गयगहीरजयकारें सो जिणु संथुउ तेण कुमारें।
रोसु तुज्झु रोसेण व णिग्गउ राउ ण याणहुं संझहि लग्गउ।
पइं मेल्लिवि दोसु[3] वि दोसायरि थियउ कलंकमिसेण व ससहरि।
तुह झाणग्गिभएण व णट्ठउ मोहु मोहणोसेंहिहिं पइट्ठउ।
पइं तासिउ वड्ढारियसंगउ लोहु वि सव्वलोहभावं गउ।
१० कंदप्पहु वि दप्पु पइं साडिउ कालहु उप्परि कालु भमाडिउ।
तुहुं णिग्गंथु अणीहियगंथउ तवणियमं थउ दावियपंथउ।
विज्जा णावइं पइं जम्मंबुहि उल्लंघिउ तुहुं रवि हरि हरु विहि।
एम देउ गरु भत्तिइ वंदिवि मिच्छादुक्किउ गरहवि णिंदिवि।
णावइ भवतरुमूलुप्पाडणु करिवि ससिरवरि चिहुरुप्पाडणु।

१५ घत्ता—सर पंच वि घल्लिय वम्महेण धणु रइ विण्णि वि मुक्कइं ॥
पडिवण्णइं पंच महव्वयइं पयजुयपाडियसक्कइं ॥६॥

---

५. १ MBP किं ण पइं मि। २. P adds after this: तुहुं जि जेट्ठु महु सामि महारउ। ३ MPK तो। ४ MBP मंडइं।

६ १. MBP पणामियº। २. G कुट्टियº। ३. P दोसु दोसायरि। ४. MP मोहणोसहहिं। ५. MB सव्बु लोहº। ६ MBT ºमत्यउ; T records a *p*: तेम णिमत्यउ इति पाठे ज्ञानावरणविनाशकः। ७. MB गरहेवि, P गिरिहिं वि। ८ MBP ससिरि वरचिहुरº।

५

"सज्जनकी करुणासे सज्जन द्रवित होता है।" यह सुनकर भरतानुज बाहुबलि कहता है—"जब मैं शैशवमें तुम्हारे साथ खेलता था, तब क्या तुमने मुझे नहीं उठाया था। मेरा और तुम्हारा कौन-सा पराभव। मेरा-तुम्हारा कौन-सा महायुद्ध। जितने भी लोग गये हैं वे यहाँसे खोज करके गये हैं, उनको भोग ऐसे लगे जैसे विष हो। वहाँ भी तुम्हारा कोई दोष नहीं है, तुम जगमें महान् और वन्दनीय हो। यदि इस समय तुम धरतीकी इच्छा नहीं करते तो जिसने तुम्हें यह दी है, वह उसीको दो।" उस अवसरपर मन्त्रियोंने मना किया, और भूमिनाथको शान्त शब्दोंमें सम्बोधित किया। महाबलि अपने पुत्रको परम्परामें स्थापित कर चले गये और कैलास-पर जा पहुँचे।

घत्ता—नरेन्द्रश्री और धरतीको छोड़ते हुए और वनको जाते हुए महान् अभिमानी विषण्णमन राजा भरतको मन्त्रियों द्वारा बलपूर्वक अयोध्या ले जाया गया ॥५॥

७

णत्थि उवाणहाउ सयणासणु मुक्कउं छत्तु असेसु विहूसणु ।
विसहइ दंसमसयसीउण्हइं छुहजणदुव्वयणाइं सयण्हइं ।
चरिय णिसेज्ज सेज्ज रइ अरइ वि वहबंधणु गयजण वणवसइ वि ।
सीहु सरहु तणु लग्ग ण वारइ मुणि जच्चिवण्णेहि चित्तु ण पेरइ ।
५ जल्लमलेहिं मि लित्तउ अच्छइ वउसक्कारु किं पि ण समिच्छइ ।
असुहसुहेसु समत्तणु मण्णइ विविहातंक रोय अवगण्णइ ।
लोयकएहिं ण मुज्झइ दोहि मि सक्कारेहिं पुरक्कारेहिं मि ।
अहंसण अलाहु रिसिसारउ पण्णपरीसहु सहइ भडारउ ।
वयसमिदिंदियरुंभणु लोउ वि अच्चेलकावासयजोउ वि ।
१० ण्हाणविवज्जणु महिसंसोवणु दंतोधोवणु कयठिदिभोयणु ।

घत्ता—वणि णिवसइ दुक्खसयइं सहइ ण चवइ थोवउ जेवइ ॥
परमित्ति करइ णिद वि जिणइ मणु वेरग्गें भावइ ॥७॥

८

एम चरंतु चरित्तु सुदुच्चरु महि विहरंतु पइट्ठु वणंतरु ।
तहिं थिउ एक्कु वरिसु लंबियकरु वेल्लीवलयहिं वेढिउ णं तरु ।
जासु अंगि पयघट्टियसिंगहं कंडुविणोउ सरइ सारंगहं ।
जासु वच्छि फणिमणि पविराइउ बहुसो विसहरेहिं हाराइउ ।
५ जासु गत्तु कयमयजलण्हवणउं जायउ करिहिं करडकंडुयणउं ।
चरणंगुट्ठयणक्खि णिहिज्जइ सरहलु वणयरणरहिं णिसिज्जइ ।
देहि चडंति जासु सुरघरिणिहिं वल्लूरिय लय णहयरतरुणिहिं ।
तणुकंतीइ जासु हयछाया हंस वि हरियवण्ण संजाया ।
जासु रत्तकंदासिइ वट्टइ पण्हिय सूयरु घोणइं घट्टइ ।

१० घत्ता—आसण्णइं जासु मुणीसरहो तवपहावउवसंतइं ॥
करि केसरि णउलइं फणिउलइं सह हिंडंति रमंतइं ॥८॥

९

एक्कहिं दियहि पउत्तु सपत्तिइ तासु भरहु गउ वंदणहत्तिइ ।
थुणइ णराहिउ पयपडियल्लउ पइं मुएवि जगि को वि ण भल्लउ ।
पइं कामें अकामु पारद्धउ पइं राएं अराउ कउ णिद्धउ ।

---

७. १. MBP सतण्हइं; T सयण्हइं । २. B जच्चिहे । ३. MBP अद्दसणु । ४. M अच्चेलक्क आवासयजोइ वि, B अच्चेलक्क पवासयजोउ वि । ५. MP दंताघोयणु; B दंताभोयणु ।
८. १. BP सुदुद्धरु । २. MBP णं वेढिउ । ३ MBPK कंदासइ । ४. MB घोणें; P घोणिहि ।
५. B घुट्टइ ।
९. १ BP भत्तिइ ।

७

न तो उनके पास जूते है, न शयन और आसन। उन्होंने अशेष आभूषण और छत्र भी छोड़ दिये। वह दंशमशक, शीत और उष्णता सहन करते है। क्षुधा, लोगोके दुर्वचन (क्रोध) और तृष्णा सहन करते हैं। चर्या, निषद्या, शय्या, स्त्री, अरति, लोगोके चले जाने और वनमे रहनेपर, वधबन्धन, सिंह-शरभ और तृणके शरीरसे लगनेपर भी वह निवारण नही करते, मुनि याचनामें भी अपने चित्तको नही लगाता, सूखे पसीने और मलसमूहसे लिप्त होनेपर भी वह स्थित रहते है, व्रतसत्कार वह कुछ भी नही चाहते। अशुभ और शुभमे वह समता भाव धारण करते हैं, विविध आतंक और रोगोंकी अवहेलना करते है, लोगोंके द्वारा लगाये गये दोषोंसे भी वह मूर्च्छित नही होते। मुनियोमें श्रेष्ठ अदर्शन और अलाभ (परीषह) प्रज्ञा परीषह भी वह आदरणीय सहन करते है। व्रत-समिति और इन्द्रियोंका निरोध, केशलोच अचेलकत्व वासयोग, स्नानका त्याग, धरतीपर शयन, दाँत नही धोना और मर्यादाके अनुसार भोजन करना।

घत्ता—वनमे निवास करते हैं, सैकड़ों दुःख उठाते है, सहते हैं, बोलते नही, थोड़ा खाते हैं। सीमित नीद लेते है, मनको जीतते है, वैराग्यकी भावना करते है ॥७॥

८

इस प्रकार कठोर चरितका आचरण करते हुए धरतीपर वह विहार करते हुए वनके भीतर प्रविष्ट हुए। वहाँ वह एक वर्षपर हाथ लम्बे करके स्थित रहे। मानो लताओके वेष्टनोसे वृक्षको घेर लिया हो। उनके अंगपर पैरोसे सीग घिसते हुए हरिणोका खाज खुजलाना होता है। उनके वक्षपर नागमणि विराजित है, और बहुत-से विषधरोसे हारकी तरह आचरण कर रहा (हार-जैसा लग रहा है)। उनका शरीर हाथियोंकी मदजलोसे स्नान करनेवाली सूँड़ोके खुजानेका साधन हो गया। उनके चरणोके अँगूठोके नखपर तीरफलक रखे जाते हैं और वनचर मनुष्यों द्वारा पैने किये जाते हैं। सुरबालाएँ और नभचर तरुणियाँ उनके देहपर चढ़ जाती हैं और लताओको तोड़ती हैं। उनकी शरीरकी कान्तिसे निष्प्रभ होकर हंस भी हरे रंगके हो गये हैं। उसकी रक्त कन्दशयके समान एड़ी है जिससे सूअर अपनी नाक रगड़ता है।

घत्ता—उस मुनीश्वरके तपके प्रभावसे शान्त पास बैठे हुए सिंह और गज, नागकुल और नकुल साथ-साथ रमण करते है और घूमते है ॥८॥

९

एक दिन पुत्र भरत अपनी पत्नीके साथ उन बाहुबलिको वन्दना-भक्तिके लिए गया। पैरोमे पड़कर राजा उसकी स्तुति करता है—"आपको छोड़कर जगमे दूसरा अच्छा नहीं है, आपने कामदेव होकर भी अकामसाधना प्रारम्भ की है। स्वयं राजा होकर भी अराग (विराग) से

पइं बालें अबालगइ जोइय पइं अपरेण वि पेरि मइ ढोइय ।
५ पइं णियसुयबलेण हउं जोक्खिउ पइं जि पुणु वि कारुण्णें रक्खिउ ।
पइं महु दिण्णी पुहइ सहत्थें[3] तुहुं परमेसरु[4] जगि परमत्थें ।
परउवयारि[5] धीर दमवंता महि मुएवि णियमेणुवसंता ।
पइं जेहा जगगुरुणा जेहा एक्कु दोण्णि जइ तिहुयणि तेहा ।
अत्थि रसणफंसणरसलालस अम्हारिस घरि घरि जि कुमाणुस ।
१० रोसवंत हियपर विस्संभर पावबहुल परवस अप्पंभर ।

घत्ता—हा मइं बहुकम्मपरव्वसेण विसयबलाइं ण महियइं ॥
एक्कहो णियजीवहु कारणिण जीवसयाइं वि वहियइं ॥९॥

१०

इंदचंदवंदारयवंदें तहिं अवसरि बाहुबलिमुणिंदें ।
एक्कु जीवहु गुण मणि भाविय राय रोस[1] दोण्णि वि उड्डाविय ।
तिण्णि वि सल्लइं हियउद्धरियइं तिण्णि वि रयणइं लहु संभेवियइं[2] ।
तिण्णि वि डंभे[3] मुक्क संखेवें गारव तिण्णि विवज्जिय देवें ।
५ चउगइकम्मणिबंधणरमियेंउ[4] सण्णउ चत्तारि वि उवसमियउ ।
पंचमहव्वयाइं अविहंडइ पंचासवदारइं णिच्छड्डइ[5] ।
पंचिंदियइं कयाइं णिरत्थइं पंच वि णाणावरणइं गंथइं ।
छावासयउज्जमु[6] सविसेसिउ[7] छज्जीवहं दयभाउ पयासिउ ।
छह लेसहं परिणामु[9] वइट्टइं[8] छ वि दव्वइं पच्चक्खइं दिट्ठइं ।
१० सत्त भयाइं हयाइं गहीरें सत्त वि तच्चइं णायइं धीरें ।
अट्ठ वि मय णिट्ठविय अदुट्ठें अट्ठ सिद्धगुण भरिय वरिट्ठें ।
णवविहु बंभचेरु परिपालिउ णवपयत्थपरिमाणु णिहालिउ ।

घत्ता—[10]दसविहु जिणधम्मु [11]वियाणियउ एयारह हयजडिमउ ॥
[12]अवियारहं धीरहं सावयहं बारह भिक्खुहुं पडिमउ ॥१०॥

११

तेरह किरियाठाणइं मुणियइं तेरहभेय चरित्तइं गणियइं ।
चोद्दह गंथमला वि समुज्झिय चोद्दह भूयगाम सइं बुज्झिय ।
पण्णारह[1] पमाय मेल्लंतें पुण्णपावभूमिउ जाणंतें ।

२. B मरे मइ । ३. M समत्थें, but records a *p* सहत्थें । ४. MB परमेसर । ५. MBP °उवयार° ।

१०. १ BP राय दोस । २. MBP सभरियइ, K सभवियइ but corrects it to गभरियइं । ३ MBP थंभ । ४ P रमियउ । ५ BP णिच्छंडइ । ६. B छावासउ । ७ PK सुविसेसिउ । ८ B उवट्टइ । ९ MBP परिणामु । १० MB दहविहु । ११. MP वियारियउ । १२. M अवियारहं, but records a *p* अवियारहं ।

११. १ B पन्नरह ।

स्नेह किया है, बालक होते हुए भी आपने पण्डितोंकी गतिको देख लिया है। अपर (जो पर न हो) होते हुए भी आपने पर (अरहन्त) में अपनी मति लगायी है। तुमने अपने बाहुबलसे मुझे माप लिया है। और तुम्हीने फिर करुणाभावसे मेरी रक्षा की है। तुमने अपने हाथसे मुझे धरती दी है, वास्तवमे तुम्ही जगमें परमेश्वर हो। दूसरोंका उपकार करनेमे धीर और शान्त। जो धरतीका परित्याग कर अपने नियममे स्थित हो गये। तुम्हारे-जैसे और विश्वगुरु ऋषभनाथ-जैसे मनुष्य इस दुनियामे एक या दो होते हैं। लेकिन हम-जैसे रसना और स्पर्शकी लालसा रखनेवाले खोटे मानुष घर-घरमे हैं। क्रोधी, दूसरोंका हरण करनेवाले, विषसे भरे पापबहुल, पराधीन और अपनेको भरनेवाले।

घत्ता—हा ! मैने बहुकर्मोके परवश होकर विषयबलोंको नष्ट नही किया और एक अपने जीवके लिए सैकड़ों जीवोंका बध किया ॥९॥

१०

उस समय इन्द्र, चन्द्र और देवोंके द्वारा वन्दनीय बाहुबलि मुनीन्द्रने एक जीवके ही गुणका चिन्तन अपने मनमें किया। राग ओर द्वेष दोनोको उड़ा दिया। हृदयसे तीनों शल्योंको निकाल दिया। और तीन रत्नों (सम्यक्‌दर्शन, ज्ञान और चारित्र्य) को अपने मनमे उत्पन्न किया। संक्षेपमे उन्होंने तीनों प्रकारके दम्भ छोड़ दिये। देवने तीन गौरव छोड़ दिये। चार गतियों और कर्मोके निबन्धनमें रमनेवाली चारों संज्ञाओंको शान्त कर दिया। उनके पांच महाव्रत अखण्डित थे और पाँच आस्रव-द्वार नष्ट हो चुके थे। उन्होंने पाँचों इन्द्रियोंको व्यर्थ कर दिया था और पाँच ज्ञानावरणकी ग्रन्थियोंको भी। विशेष रूपसे छह आवश्यकोमे उद्यम किया था। छह प्रकारके जीवोमे दयाभाव प्रकाशित किया था। छहों लेश्याओंके परिणाम शान्त हो गये, छहों द्रव्य प्रत्यक्ष दिखाई देने लगे। गम्भीर उन्होंने सातो भयोको समाप्त कर दिया, उस धीरने सातों तत्त्वोंका ज्ञान प्राप्त कर लिया। सदय उसने आठों मदोंका नाश कर दिया, उस वरिष्ठने आठों सिद्ध गुणोंका स्मरण कर लिया। उसने नौ प्रकारके ब्रह्मचर्यका परिपालन किया, नवपदार्थ-परिमाणको देख लिया।

घत्ता—दस प्रकारके जिनधर्मको और अविकारी धीर श्रावकोकी जड़मतिको नष्ट करने-वाली ग्यारह प्रतिमाओं तथा मुनियोंकी बारह प्रतिमाओंको जान लिया ॥१०॥

११

उन्होने तेरह प्रकारके क्रिया स्थानोंको समझ लिया और तेरह प्रकारके चारित्रोंको गिन लिया, चौदह परिग्रह मलोको छोड़ दिया, प्राणियोंके चौदह भेदोको जान लिया है। पन्द्रह प्रमादोंको छोड़ते हुए पुण्य-पापकी भूमिको जानते हुए सोलह प्रकारकी कषायोंको शान्त करते

सोलहविह कसाय पसमंतें सोलहविहवंयणेसु रमंतें ।
५ अवि य असंजमोह सत्तारह जाणिवि संपराय अट्ठारह ।
इउणवीस वि णाहज्झयणइं वीसविहइं असमाहीठाणइं ।
एक्कवीस सवल वि णिरु णीसइं सहिवि दुवीस दुसज्झ परीसह ।
तेवीस वि सुत्तयडइं सुत्तइं चउवीस वि जिणतित्थइं होंतइं ।
पंचवीस भावणउ धरंते छव्वीस वि पुहवीउ णियंतें ।
१० सत्तवीस जइगुण सुमरंतें ।
अट्ठवीस णियचित्ति समप्पिवि पवरायारकप्प पवियप्पिवि ।
एउणतीस वि दुक्कियसुत्तइं तीस मोहठाणइं बलवंतइं ।
एक्कतीस मलवाय थुणंतें जिणुवएस बत्तीस मुणंतें ।

घत्ता—थिरु सुक्कझाणु आऊरियउ घाइचउक्कु पणट्ठउ ॥
१० उप्पाइउ केवलु मुणिवरेण लोयालोउ वि दिट्ठउ ॥११॥

१२

ता सुर चल्लिय समउ सुरिंदें तारायणु चल्लिउ सहुं चंदें ।
णरवइ धाइय समउ णरिंदें उरय समागय सहुं धरणिंदें ।
तेहिं कसायविसायवियारउ संथुउ सिरिबाहुबलि भडारउ ।
रायचक्कु पइं तणु परिगणियउं कम्मचक्कु झाणाणलि हुणियउं ।
५ देवचक्कु तुह अग्गइ धावइ चक्कु वि चक्किहि रमणु ण भावइ ।
पइं दिट्ठइं रिसि राउ ण वड्ढइ पइं मुएवि को णरयहु कड्ढइ ।
जीवरासि णिब्भरु विहडंती विहुरंभोहिविवरि णिवडंती ।
भोयासत्तएण पुहईसरु दिक्ख लेवि णिज्जिउ वम्मीसरु ।
को किर भण्णइ तुज्झ समाणउ तुहुं जि मुंडकेवलिहिं पहाणउ ।
१० एम थुणंतें बुद्धिसमिद्धें इंदें वेउव्वियउ खणद्धें ।

घत्ता—पउमासणु चवलु चमरजुयलु एक्कु जि छत्तु मणोहरु ॥
दीसइ पप्फुल्लिउ पंडुरउ णं तवसरि इंदीवरु ॥१२॥

---

२. MBP °वयणें सुमरंतें । ३. P दुसज्झ दुवीस । ४. MBP संतइं । ५. P सुमरंतें । ६. MBP add after this . पुणु वि तेण मुणिणा भयवंतें । ७. P एम ण यारकप्प । ८ MBP जिणउवएस । ९. P लोयालोय ।

१२ १ MBP read the first two lines as : ता सुर चल्लिय समउ सुरिंदें, उरय समागय सहुं धरणिंदें; णरवइ धाइय समउं णरिंदें, तारायणु चल्लिउ सहु चंदें । २. MB वयणु; P रयणु, T रमणु रमणीयम् । ३ MBP सिरिराउ । ४. MBP णिरु मवि हिंडंती । ५. MBK विवडंती । ६. P मुहंसिरु । ७. BPK णिज्जिउ । ८. K भण्णउं and gloss भणामि । ९. MBP हरियासणु धवलु ।

हुए, सोलह प्रकारके वचनोंमें रमण करते हुए और भी सत्तरह असंयम मोहनीय, अट्ठारह सम्पराय मोहनीय, उन्नीस प्रकारके नाहध्यान (नाथध्यान), बीस असमाधिस्थानों, इक्कीस मन्द अपवित्र कार्यों और बाईस असाध्य परिसहोंको सहकर। तेईस सूत्रकृतांग-सूत्र और चौबीस जिनतीर्थोंमे होते हुए, पच्चीस भावनाओको धारण करते हुए, छब्बीस क्षेत्रोको देखते हुए, सत्ताईस मुनिगुणोंको स्मरण करते हुए अट्ठाईस मूलगुणोंको अपने मनमे समर्पित कर प्रवर आचारकल्पके प्रति अर्पित कर, उनतीस दुष्कृत सूत्रों, तीस बलवान् मोहस्थानों और इकतीस मलपापोको नष्ट करते हुए और बत्तीस जिनगुणोंका मनन करते हुए—

घत्ता—स्थिर शुक्लध्यानकी अवतारणा कर चार घातिया कर्मोको नष्ट कर दिया। मुनिवरको केवलज्ञान उत्पन्न हो गया और उन्होंने लोकालोकको देख लिया ॥११॥

१२

तब देवेन्द्रके साथ देव चले। तारागण चन्द्रमाके साथ चले। राजा लोग नरेन्द्रके साथ दौड़े। सांप धरणेन्द्रके साथ आये। उन्होंने कषाय और विषादको नष्ट करनेवाले आदरणीय बाहुबलिकी स्तुति की—"आपने राजचक्रको तिनकेके समान समझा, कर्मचक्रको ध्यानाग्निमे आहुत कर दिया और देवचक्र आपके सामने दौड़ता है, चक्रवर्तीका चक्र सुन्दर नही लगता। हे मुनि, आपको देखनेसे राग नही बढ़ता, आपको छोड़कर कौन निश्चित रूपसे नष्ट होती हुई और विधुर समुद्रके विवरमे पड़ती हुई जीवराशिको नरकसे निकाल सकता है ? पृथ्वीश्वरने कामकी आसक्तिसे दीक्षा लेकर कामदेवको जीत लिया। तुम्हारे समान किसे कहा जा सकता है, आप मुण्ड केवलियोमे प्रमुख हैं।" इस प्रकार बुद्धिसे समर्थ इन्द्रने स्तुति करते हुए आधे पलमें विक्रियासे—

घत्ता—पद्मासन चपल चमरयुगल एक ही सुन्दर छत्र जो ऐसा दिखाई देता है मानो तप-रूपी नदीमे इन्दीवर हो ॥१२॥

१३

पयणियजणणमरणविड्डमरइ संसमंतु भावग्गयतिमिरइं ।
देंतु देसजइजइवरचरियइं संवोहंतु भव्वपुंडरियइं ।
पायपोमपाडियसंकंदणु[1] भूमि भमंतु सुणंदाणंदणु ।
गउ केलासहु पावपरंमुहु समवसरणि णियतायहु संमुहु ।
५ आसीणउ पसण्णु पसमियकलि देउ समाहि बोहि महु भुयबलि ।
भायरणाणलंभसंतुट्ठउ[2] एत्तहि णरणारीयणदिट्ठउ[3] ।
उज्झाणयरिहि भरहु पइट्ठउ उरपमाणि हरिवीढि वइट्ठउ ।
वज्जंतहिं जयवज्जणिहायहिं गाइयणारयतुंबुरुगेयहिं ।
दरिसियमेइणिरिद्धिविहोयहिं उव्वसिरंभाणट्टविणोयहिं ।
१० मंडलियहिं मंडियणियवक्खहिं[4] अहिसिंचिउ मंगलघडलक्खहिं ।

घत्ता—चउसट्ठि सरीरइ लक्खणइं बहुवंजणइं[5] अणिंदहो ॥
जं णिहिलहं भारहणरवइहिं[6] तं वलु भरहणरिंदहो ॥१३॥

१४

वण्णु तत्ततवणीयपहायरु सासणु जासु चक्कलच्छीहरु[1] ।
वज्जरिसहणारायणिबंधउ[2] समचउरंसु ठाणु रुइरिद्धउ ।
पुण्णपहावें अतुलु वि लद्धउ छक्खंडु[3] वि महिमंडलु सिद्धउ ।
दोण्णि तीस सहसाइं सुदेसहं दोसत्तरि पुरवरहं पयासहं ।
५ णवइ णव जि दोणामुहसहसइं पट्टणाहं[4] अडदाल सहरिसइं ।
खेडहं सोलह ताइ पउत्तइं चोद्दह संवाहणहं[5] णिरुत्तइं ।
कलवकणिसभरभारियसीमहुं छण्णवइ जि कोडिउ वरगामहुं ।
सत्तसयाइं कुकुच्छिणिवासहं पंचें तहं मि धरियपरिहासहं ।
अट्ठवीस वणदुग्गइं रिद्धइं छप्पण्णंतरदीवइं सिद्धइं ।
१० सहसट्ठारह मेच्छणरेसहं बत्तीस जि मंडलियमहीसहं ।

घत्ता—देवीहि दुतीस बत्तीस पुणु मेच्छणराहिवदिण्णहं[10] ॥
बत्तीससहस[11] अवरुद्धियहं णिरु णिरुवमलायण्णहं ॥१४॥

---

१३. १. MBPT सक्कदणु । २. MBP णाणलमि । ३. MBP °णारीयणि । ४ MBP खंडियसवि वक्खहिं । ५. M वहुवेंजणइं; BP वहुविंजणइं । ६. M °णरवरहिं ।

१४. १. MBP चक्कु । २. MBP °णिबद्धउ । ३. MBP छक्खंड । ४. MP पट्टणाइं । b ५. MB संवाहणइं । ६. MBP पच्चतहं । ७. M मेंछ° । ८. P °सहासहं । ९. M मेंछ° । १०. MB °कण्णहं । ११. MP अवरुद्वियहं ।

१३

जन्म और मृत्युके प्रेम और भयको नष्ट करनेवाले भावोंमें उत्पन्न होनेवाले अन्धकारको शान्त करते हुए, एकदेशचरित्र और सकलदेशचरित्र प्रदान करते हुए, भव्यरूपी कमलोंको सम्बोधित करते हुए, चरणकमलोंमे इन्द्रको झुकाते हुए, सुनन्दानन्दन पापसे पराङ्मुख बाहुबलि भूमिपर विहार करते हुए कैलास पर्वतपर गये। अपने पिताके समवसरणमे सम्मुख बैठे हुए पापको नष्ट करनेवाले हे बाहुबलि मुझे ज्ञान और समाधि प्रदान करें। तब भाईके ज्ञानलाभसे सन्तुष्ट और नरनारीजनके द्वारा देखे गये भरतने अयोध्या नगरीमें प्रवेश किया और अपने वक्षःस्थलके समान ऊँचे सिंहासनपर बैठ गया। बजते हुए जयविजय वाद्यों, गाये जाते हुए नारद तुम्बुरुके गीतो, दिखाये जाते हुए धरतीके ऋद्धि विभागों, उर्वशी और रम्भाके नृत्य विनोदोके साथ एकत्रित हुए राजाके पक्षसमूहोंके द्वारा लाखों मंगल-कलशोसे उसका अभिषेक किया गया।

घत्ता—अनिन्द्य शरीरपर चौसठ लक्षण और बहुत-से व्यंजन चिह्न थे, जो समस्त भारत-नरेश्वरोंका बल था, उतना बल अकेले भरतराजके पास था ॥१३॥

१४

जिसका रंग तपे हुए स्वर्ण और सूर्यके समान था, जिसका शासन चक्र और लक्ष्मीको शोभा धारण करता था, जिसका शरीर वज्रवृषभ नारायण बन्ध और समचतुरस्र संस्थानवाला तथा कान्तिसे समृद्ध था। पुण्यके प्रभावसे उसने अतुलको प्राप्त कर लिया और छह खण्ड धरती भी सिद्ध हो गयी। साठ हजार सुदेश थे, बहत्तर हजार श्रेष्ठ नगर थे। निन्यानवे हजार द्रोणा-मुख गांव थे और अड़तालीस हजार पट्टन थे। सोलह हजार खेड़े और निश्चित रूपमे संवाहन, धान्यके अग्रभागोके भारसे दबे हुए क्षेत्रवाले छियानवे करोड़ उत्तम गांव थे। सात सो रत्नोंको खदानें, उनमे-से पांच तो दूसरोका उपहास करनेवाली, अट्ठाईस हजार समृद्ध वनदुर्ग थे और छप्पन अन्तरद्वीप सिद्ध हुए। अठारह हजार म्लेच्छ राजा और बत्तीस हजार माण्डलीक राजा।

घत्ता—म्लेच्छ नराधिपोके द्वारा दी गयी बत्तीस (दो और तीस) फिर बत्तीस हजार और भी अत्यन्त अनुपम लावण्यवती, अविरुद्ध म्लेच्छ राजाओंके द्वारा दी गयी बत्तीस हजार स्त्रियोंसे युक्त था ॥१४॥

१५

घरि भावाणुविभावपयासइं णडइं णडंति[1] दुतीससहासइं ।
चउरासीलक्खइं[2] मायंगहं तेत्तीयं[3] जि रहाहं सरहंगहं[4] ।
तइं[5]कोडिउ किंकरहं अहंगहं अट्ठारह भणियाउ तुरंगहं ।
चुल्लिहिं कोडि रसायणरसियहं सट्ठइं[6] तिण्णि सयइं भाणसियहं ।
५ करिसणि णंगरु[7]कोडि पयट्टइ फलभारेण धरित्ति[8] विसट्टइ ।
कालणामु णिहि देइ विचित्तइं वीणावेणुपडहवाइत्तइं ।
णिवहु महाकालु वि संजोयइ पंडु[9] देइ णाणाविहवण्णइं ।
[10]सालिवीहिपमुहइं बहुधण्णइं असिमसिकिसिउवयरणइं ढोयइ ।
णेसप्पु वि सयणासणभवणइं वत्थइं पोमु पिंगु आहरणइं[11] ।
१० अत्थइं सत्थइं[12]माणवु देंतउ संखु ण थाइ सुवण्णु वहंतउ
सव्वरयणणिहि सव्वइं रयणइं देइ सिरीवहु उरयलि णयलइं

घत्ता—असि चक्कु दंडु छत्तु वि धवलु पहरणसालहिं जायइं ॥
कागणि मणि चम्मु वि सिरिभवणे[13] सइं णरणाहहु आयइं ॥१५॥

१६

रुप्पयमहिहरि सोहियवयणहं संभउ हरिकरिणारीरयणहं ।
पच्छइ पुणु संपत्तइं णरवइ घरवइ[1] थवइ पुरोहिउ बलवइ ।
चत्तारि वि हूयइं साकेयइ घरसिरधयवारियरवितेयइ ।
णव णिहि ते वि तहिं जि संभूया संपाइयइच्छियहलरूया ।
५ णिच्चमेव तणुरक्खालुद्धहं सोलहसहस सुरहं गणबद्धहं ।
विविहइं[2]घरइं कणयधरणियलइं विविहासणइं विविहसयणयलइं ।
विविहइं छत्तइं मुत्ता[3]दामइं विविहइं आहरणाइं सकामइं[4] ।
विविहइं वत्थइं कयव[5]उसोक्खइं विविहइं सरसइं भोयणभक्खइं ।
को सो[6] बंभु कासु सुकइत्तणु को वण्णइ चक्कवइपहुत्तणु ।

---

१५. १ M णडतिउ; B णडंतिहुं । २. MBP लक्खहं । ३ MBP तेत्तियइं । ४. MBP सारंगहं । ५ M तईयकोडिउ । ६. B सड्ढइं । ७. MBP लंगल° । ८ M धरत्ति° । ९. MBP omit this foot । १०. MBP omit this foot । ११ MBP add after this . सव्वइं धण्णइं सव्वरसोहइ, पंडु वि णिहि वि देइ अविरोहइं । १२. MBP माणउ । १३ M °भुवणे ।

१६. १. MB घर घर । २. MBP विविहइं घरइं । ३. P मोत्तिय° । ४. MP संकामइ । ५. MB कयउवसोक्खइं । ६. M सइ ।

१५

उसके घर भाव और अनुभावका प्रदर्शन करनेवाले बत्तीस हजार नट नृत्य करते थे। चौरासी लाख हाथी, तैंतीस लाख चक्रसहित रथ, तीन करोड़ अभंग अनुचर, अठारह करोड़ घोड़े, एक करोड़ चूल्हे, तीन सौ साठ सुन्दर रसोई बनानेवाले रसोइये। खेतीमे एक करोड़ रथ चलते थे। फलोंके भारसे धरती फूटी पड़ती थी। काल नामकी निधि विचित्र वीणा, वेणु और पटह आदि वाद्य देती थी। महाकाल भी राजाके लिए असि, मषी, कृषि आदि उपकरणोका संयोजन करती थी। पाण्डुक निधि नाना रंगके व्रीहि (शालि) प्रमुख अनेक प्रकारके धान्य प्रदान करती थी। नैसर्प निधि शयन, अशन और भवन। पद्म वस्त्रोंको, पिंग आभरणोंको अस्त्र-शस्त्र माणव देती थी। स्वर्ण ढोते हुए शंखनिधि नही थकती थी। समस्त रत्ननिधियाँ सब प्रकारके रत्नो और लक्ष्मी उसके उरतलपर अपने नेत्र प्रदान करती थी।

घत्ता—असि, चक्र, दण्ड, धवल छत्र उसकी आयुधशालामे उत्पन्न हुए। कागणी मणि और चर्म मणि भी अपने आप राजाके भाण्डागारमे आ गये ॥१५॥

१६

विजयार्ध पर्वतपर शोभित मुख अश्व, गज और स्त्रीरूपी रत्नोकी उत्पत्ति हुई। उसके बाद राजाको गृहपति, स्थपति, पुरोहित और सेनापति प्राप्त हुए। अपने गृहशिखरोंके ध्वजोंसे सूर्यके तेजका निवारण करनेवाले ये चार रत्न साकेतमे उत्पन्न हुए। जो नवनिधियाँ थी वे भी उसे प्राप्त हुईं कि जो अभिलषित फलरूपोंको सम्पादित करनेवाली थी। जहांपर देहरक्षामें दक्ष गणवद्ध सोलह हजार देवोंके विविध घर और स्वर्णधरणीतल थे, विविध आसन और विविध शयनतल थे। विविध छत्र, मुक्तामालाएँ, चित्तमे अनुराग उत्पन्न करनेवाले विविध आभरण, शरीरको सुख देनेवाले विविध वस्त्र और विविध सरस भोजन। वह कौन-सा विधाता है, यह

१० णारी रयणत्तणविक्खायइ खेयररायवंससंजायइ।
रूवें सोहग्गें लायण्णें णेहें रइयसुरयणेउण्णें।
अब्भुयभूयइ जणमणमहइ सुहुं भुंजंतउ समउ सुहद्दइ।
घत्ता—सिरिरमणीवरघणथणजुयलंसिहरुप्पेल्लियउरयलु॥
थिउ उज्झहि भरहणराहिवइ पुप्फदंततेउज्जलु॥१६॥

इय महापुराणे तिसट्ठिमहापुरिसगुणालंकारे महाकइपुप्फयंतविरइए महाभव्वभरहाणुमण्णिए महाकव्वे भरहविलासवण्णणं णाम अट्ठारहमो परिच्छेओ समत्तो॥ १८॥
॥ संधि॥ १८॥

७. MBP रयणत्तणि। ८. M समुद्दइ। ९ MB °रवणी°। १०. M °जुयलु। ११. MB पुप्फयंत°; P पुप्फयंतु।

कौन-सा सुकवित्व है ? चक्रवर्तीकी प्रभुताका वर्णन कौन कर सकता है ? स्त्रीरूपी रत्नत्वके लिए विख्यात, विद्याधर कुलमे उत्पन्न आश्चर्यके रूपमें उत्पन्न जनमनका मर्दन करनेवाली सुभद्राके साथ रूप, सौभाग्य, लावण्य एवं और कामके नैपुण्यकी रचनाके द्वारा सुख भोगता हुआ—

घत्ता—जिसका वक्षःस्थल लक्ष्मीरूपी रमणीके श्रेष्ठ सघन स्तनयुगलके शिखरोंसे पीड़ित है ऐसा भरत अयोध्यामे रहने लगा ॥१६॥

इस प्रकार त्रेसठ महापुरुषोंके गुणालंकारोंसे युक्त महापुराणमें महाकवि पुष्पदन्त
द्वारा रचित और महाभव्य भरत द्वारा अनुमत महाकाव्यका भरत-विलास
वर्णन नामवाला अठारहवाँ परिच्छेद समाप्त हुआ ॥१८॥

NOTES

[*The references in these Notes are to Saṃdhis in Roman figures and Kadavakas and lines in Arabic figures.*]

I

[The Poet offers homage to Rsabhanātha, the first of the Tīrthaṃkaras, and to the goddess of learning, and declares his intention to compose a Mahāpurāṇa. By way of introduction the poet says that once in the Siddhārtha year (881 of the Śaka era, i. e., 959 A. D.) he arrived at the outskirts of the town of Mepādi (Mānyakheṭa, modern Malkheḍ) and being fatigued with a long journey rested there in the grove. Two men of the town, Annaīya and Indarāya, approached him and requested him to visit the minister Bharata who would give him a good reception. The poet was at first unwilling to do so because of his bitter experiences at the court of king Bhairava *alias* Vīrarāja, but these men assured him that Bharata was quite a different person and would receive him well. Accordingly the poet saw Bharata, was well-received, and rested there for a few days. Bharata then requested the poet to compose a Mahāpurāṇa so that he would make the right use of his poetic gifts, and offered him all help. The poet was at first unwilling, because he was afraid of the wicked who criticised even good works. Bharata asked him not to mind them. The poet then modestly said that he was not competent to undertake the task as he was ignorant of the great philosophical systems, works of the poets of the past, works on grammar, rhetoric and metrics, still he would undertake the task out of devotion to the personages figuring in the Mahāpurāna. The poet thereupon invoked the aid of Gomukha Yaksa of Rsabhadeva and of Padmāvatī Yaksiṇī, the goddess of learning.

The poet proceeds: There is in the Jambūdvīpa a country called Magadha with its capital Rājagrha. King Śreṇika was one day seated in his court with Cellaṇādevī, when a messenger brought to him the report that Mahāvīra had arrived at the garden outside the city. The king immediately rose form his seat to pay homage to him and recited a prayer glorifying him.]

1. The poet pays homage to Risaha, the first Tīrthaṃkara.

1. 3*a* सुपरिक्खिय, सम्यग् ज्ञात्वा, T., having undrstood well the animate and inanimate divisions of the world. 3*b* दिव्वतणुं, निःस्वेदत्वादिदशातिशयोपेतशरीरम्, T., the Jina possesses a body which is divine, i. e., it possesses ten excellences such as absence of perspiration. The number of atiśayas which a Jina possesses is 34. See Abhidhāna Cintāmani I. 57-64. Of these ten are peculiar to the body of the Jina. See IV. 2. 4*a* पयडियसासयपयणयरवहं, प्रकटितः शाश्वतपदनगरस्य मोक्षस्य पन्था मार्गो रत्नत्रयरूपो येन तम्, T., one who preached the path leading to the city of eternal abode, i. e. emancipation or Siddhi. 5*a* सुहसीलगुणोहणिवासहरं, शुभाः प्रशस्ताश्च ते शीलगुणाश्च तेषामोघः समूहस्तस्य निवासगृहम्, T., the home of a large number of auspicious qualities. 10*a* चित्तलियणहं कर्बुरिताकाशम्, T. The sky was rendered variegated by flowers which Indra dropped down from heaven. 15*b* मत्तासमयं, the poet wants to suggest incidently the name of the metre which is मात्रासमक. 17 जासु तित्थि, यस्य तीर्थे, in whose preachings.

2. The poet pays homage to the five dignitories of the Faith, usually called पञ्चपरमेष्ठिन्, viz., तीर्थंकर, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय and साधु, and also invokes the aid of the goddess of learning.

2. 3*b* कोमलपयाइं, कोमलानि चक्षुःप्रीतिजनकानि श्रोत्रमनःसुखदानि च, पयाइं पदन्यासाः पदरचनाश्च, T. The poet describes the goddess of learning under the image of a fair woman; all the epithets used are therefore applicable to सरस्वती as well as स्त्री. 5*a* छंदेण जंति, going at will (applicable to a lady); moving in a metrical form (applicable to poetry). 6*a* चोद्दसपुव्विल्ल, चतुर्दशपूर्वैः युक्ता सरस्वती, स्त्री तु चतुर्दशैः (?) पूर्वैः पूर्वपुरुषैर्युक्ता मात्रन्वये हि सप्त पुरुषास्ततपतेः (?) पित्रन्वये च सप्तेति, T. The goddess possesses fourteen Pūrva books, ancient texts of the Jainas, now lost, the woman possesses purity of seven ancestors on the mother's side and seven on the father's side. दुवालसंगि; सरस्वती द्वादशाङ्गैर्युक्ता, स्त्री तु—

नलया बाहू य तहा नियं च (णियंब ?) पुट्ठी उरो य सीसं च ।
अट्ठेव दु अङ्गाइं सेस उवङ्गा दु देहस्स ॥

इत्यष्टौ, कर्णनासिकानयनोष्ठाश्चत्वार इति द्वादशाङ्गैर्युक्ता, T. The twelve aṅgas are the famous books of the Jain Canon such as आचाराङ्ग etc. The woman's body also is fancifully divided into twelve parts, two legs, two arms, the hips, back, chest, head, ears, nose, eyes and lips. 6*b* सत्तभंगि, सरस्वती सप्तभङ्गोपेता स्त्री तु सत्तभंगि धैर्यरहिता प्राणिषु कौटिल्ययुक्ता च, T. It would be better to interpret सत्तभंगि applicable to a woman as सत्त्वभङ्गिनी पुरुषाणां धैर्यनाशिका.

3. 3 *a-b* भुवणक्केरामु तुडिगु, कृष्णराजः तस्येदं बिरुदम् T. We know that the Rāṣṭrakūṭa kings had a number of *Birudas*, we have in Puṣpadanta's works a few others such as Śubhatuṅga (see I. 5 2a and note thereon) and Vallabhadeva.

तुडिगु seems to be of Kannaḍa origin. *7b* मायदगोछगोदलियकीरि, आम्रलुम्बिमीलितशुके, (garden) where parrots have gathered on the blossom of mango trees. गोंदलिय comes from गोदल, a Deśī word. which means a gathering. Compare गोघळ, गोघळी in Marathi. *9b* खंड means पुष्पदन्त ; so also अहिमाणमेरु in *12a* below 14 वर or वरि, an explative of frequent occurrence, means 'it is better,' 'I would rather prefer.' 15 म णिहालउ सुरगमे, let him not see in the morning the face of a king who is under the influence of the wicked.

4. Drawbacks of royalty condemned.

4 *3a* सत्तंगरज्ज, kingdom with its seven constituents, viz., स्वामी, अमात्य, सुहृत्, कोश, राष्ट्र, दुर्ग, and बल. *4a* विससहुजम्मइ, fortune born along with हालाहल poison at the time of the churning of the ocean.

5. Bharata glorified.

5. *3a* पाययकइकव्वरसावउद्धु, connoisseur of tha flavour of the poems of Prakrit poets. This epithet has a special significance, probably because Prakrit poetry was not much admired or understood and even ignored altogether at this rime.

6. The poet's reception at the house of Bharata, and his proposal to him to compose a Mahāpurāna.

6. *9a* देवीसुएण, by the son of Devī, i. e., by Bharata.

7. The poet shows his timidity to undertake the task because of the wicked who censure even good works like the Setubandha of Pravarasena.

7. 3a. गोवज्जिएहिं etc. This series of epithets have double meaning : one applicable to वणदिण etc. and the other applicable to the wicked.

8. Bharata assures Puspadanta that wicked people are always like that and that the wise should pay no heed to them.

8. *7b* भुक्कउ छणयंदहु सारमेउ, let the dog bark at the full moon. *9b* कव्वपिसल्लएण, another epithet of Puspadanta; compare कव्वपिसाय, कव्वरक्खस.

9. The poet, by way of modesty, shows that he is not qualified to undertake the Mahāpurāṇa, and yet he does so out of devotion to the adorable persons.

9. *1a* अकलंक etc. For these writers see notes at the bottom of the page, and also Introduction to Ṇāyakumāracariu, page XXIII. *13b* कुडवेण सयरु को जलणिहाणु, who can measure the waters of the ocean by means of a Kuḍava, a small measure ? 17 विवरोमखए किं अक्खइ, why should I say at the back i. e,

I say it openly, I challenge the people to point out drawbacks in my work if they notice any.

10. The poet invokes the aid of Gomuha Yakṣa and Cakkesarī Yakṣiṇī who are the guardian deities of ऋषभ, and of the goddess of learning.

10. 14 जो णरु भसइ णिबंधहो, he who barks at my work.

11. The location of the Magadha country.

12. Description of Rājagṛha, its capital.

12. 9*b* मंथामथियमंथणिरवाइं, मन्थेन रविकया मथिताद्धिलोडिताम्मन्थनीरवाः शब्दा यत्र, T., where there are sweet songs of churning women when they are engaged in the act of churning. It is the practice of cowherd women to sing sweet songs at the time of churning.

13. Description of the outskirts of Rājagrha.

13. 11*b* संगहु सिरिणयणंजणहु णाइं, it was, as it were, a storehouse, संगहु, o collyrium of श्री. The lotus flower, with a black bee sitting in it, appeared tc be a collyrium box of the goddess of beauty.

14. Description of the town of Rājagrha.

14. 9*b* अण्णाणिय णाइं कुसासणेहिं, like ignorant people who are misled by fals doctrines (कु + शासन).

15. Description of Rājagrha continued.

16. King Śreṇika described.

18. King Śreṇika receives the report of the arrival of Mahāvīra.

18. 6*b* चउदेवणिकाय, the four classes of gods are भवनपति, व्यन्तर, ज्यो and वैमानिक. 7*a* चउतीसातिसय, the Arhats possess thirtyfour atiśayas or excellen which are enumerated in Hemacandra's Abhidhāna Cintāmaṇi and severa other works. See page 5, notes of Miss Johnson's Translation of Trisasti. अट्ठविहपाडिहेर, these Prātihāryas, miraculous possessions of Arhats, are ei viz , अशोक, सुरपुष्पवृष्टि, दिव्यध्वनि, चामर, सिंहासन, भामण्डल, दुन्दुभि and त्रिछत्र. 10*b* विउलइरि is a small hill in the neighbourhood of Rājagrha. 15 पुप्फयंततेयाहिय, the poe puts his name in the last line of a Saṃdhi of each of his three kno works. It is thus his अङ्क, or mark, and is interpreted in several ways, bu more frequently as चन्द्र and सूर्य, and the Tīrthaṃkara of that name. Th term पुप्फयंत is at times paraphrased by पुप्फदसण, कुसुमदसण etc. भरत, the poet' patron, is also mentioned in the Ghattā lines. The term भरत also may b regarded as another अङ्क of the poet and is interpreted as भारतवर्ष or भरत, th first Cakravartin.

II

[King Seṇiya, on hearing the news of the arrival of Mahāvīra, proceeds along with his retinue to see him. After paying his respects to the Jina, the king asked his disciple Goyama to recite to him the Mahāpurāṇa which he does.

Goyama then begins his narration by first mentioning the divisions of time, the Kulakaras and their countribution to the civilization of the Universe. The last of these Kulakaras was Nāhi (Sk. Nābhi), and his queen was Marudevī. Now Indra remembered that a Jina was to be born in their house and therefore ordered Dhaṇaya, i. e., Kubera, to make the town of Ujjhā (Ayodhyā) gay and pleasant so that it should be a fit place for the birth of the Jina.]

1. 6*b* णं वररायविति रिउदारिणि, a lady who took in her hand a कुवलय, i e., a lotus flower, is compared to royalty (वररायविति) which also holds कुवलय, i. e, the globe of the earth, and chastises the enemies (रिउदारिणि).

2. 13 जणजणणत्तिहरु, (Jina) who removes the misery (अत्ति-आर्ति) of birth (जणण) of the people 14. भुवणभोरुहदिवसयरु, the sun to the lotus, viz., the universe, the Jina gladdens the universe as the sun blooms the lotus.

3. 5–11. These lines contain a long epithet of Jina वरुण ..सिरणमणमउड-यलमणिसलिलधुयविमलकमकमल, (Jina) who lotus-like feet are washed by waters flowing from the gems in the coronets of वरुण and other gods when they bend their heads (सिरणमण) before him 35 मइ णेज्जसु पचमगइहे, you will please lead me to the fifth गति, i. e., सिद्धावस्था, emancipation from ससार, the first four गतिs being देव, नारक, तिर्यक् and मनुष्य

4. 7*a* णाइ णउ भाविणिहि णिरुत्तउ, there is no beginning (न + आदि) and no end (न + अन्त) to the list of the coming Jinas, i. e., the number of the future Jinas is infinite 8–9 कालु अणाइउ etc. Time has no beginning and no end, i. e., it is infinite. Time is an associating cause of change in the Universe. It has no flavour, no odour, no colour and no weight Time in abstract (निश्चय-काल) is marked by its fleeting i. e, constantly passing (प्रवर्तन). 12 ववहारकालु, Time as understood in our daily practice.

5. 3*b* पियकारिणितणएं, by महावीर who is the son of प्रियकारिणी, popularly known as त्रिशला. Compare कल्पसूत्र, 109, where the name given is पीइकारिणी. 10*a* ताडिज्जइ, गुण्यते, T., is multiplied.

6. 10*a* भेज्जउ, भेद्य; divisible, to be divided.

8. 4–5 उच्छप्पिणि, i. e., उत्सर्पिणीकाल is defined as one in which strength, prosperity, height of the body, piety, knowledge, gravity and courage are on

the increase; ओसप्पिणि, i. e., अवसर्पिणीकाल is one in which these qualities are on the decrease. 7*b* दहविहविडवि, the ten कल्पवृक्षs, enumerated in the foot-notes.

9. 3*a* पडिसुइ, the first कुलकर of the Jain mythology. 4*a* अममियाउ, having life of the length of an अमम, a large number. The other कुलकरs or मनुs mentioned in 9 and 10 are : सम्मइ, खेमंकर, खेमंधर, सीमंकर, सीमंधर, विमलवाहु, चक्खुम्मउ (चक्षुष्मान्), जसस्सि, अहिचंद, चंदाह, मरुदेव, पसेणइ and नाहि (नाभि).

11. 1 The first कुलकर explained to the world, i. e., discovered for the first time, the functions of the sun and the moon who were not noticed by the people upto this time because the world was full of the light supplied by the कल्पवृक्षs. The second discovered the stars and planets. Similarly each कुलकर contributed something towards the human civilization. The last कुलकर i. e. नाभि, discovered the method of cutting the नाल of children, and also discovered clouds which, by rain, rendered the earth full of various crops so that nobody felt the absence of the कल्पवृक्षs. He also discovered fire, the art of cooking and weaving for the benefit of humanity.

17. 5*b* सुयरइ सुरवइ णियमणि तइयहुं, Indra, on learning that a तीर्थंकर is to be born at a particular place, orders Dhanaya, i. e. Kubera, to make the city beautiful and rich, so that it becomes fit for the birth of a Jina.

19. 1*a* छुडु छुडु—Hemacandra in his grammar under IV. 422 gives छुडु as a substitute for यदि. I do not think that छुडु always means यदि, in fact the usual sense of छुडु seems to be क्षिप्रम् which sense suits the context here as well as elsewhere. The marginal notes in Mss. here render it as यदा but I do not think it to be correct.

III

[The birth of a Jina in Jain works is described in such a monotonous way that we are often tempted to think that we are in the field of mythology rather than that of history. When the parents of a Jina are determined, Indra orders Kubera to make the town of his parents beautiful and fit to be worthy of such event. The Jina in the immediately preceding birth is born in heaven. Six months before his period of life in heaven is to end, Indra sends six goddesses, सिरि, हिरि, दिहि, कंति, कित्ती, and लच्छी to the earth to purify the womb of the lady where the Jina is to be born. They then come to the mother of the Jina and wait upon her as her maids. The mother then sees sixteen objects (according to the Śvetāmbara tradition, fourteen) in a dream towards the end of the night. She sees her husband the next morning and tells him that she saw, the previous night, sixteen dreams. The husband then explains to her the

fruit of her dreams which in substance is that she would be the mother of a Jina. The Jina then descends into the womb in the form of some object (in the case of Rsabha, the first Tīrthamkara, a white bull). Gods attend this event. There is shower of gems sent by Kubera. Jina is then born in due course, Gods headed by Indra arrive at the birth place of the Jina, see the Jina born go round him three times, offer him prayers. Indra then hands over to the mother a babe produced by his magic, takes away the Jina to the mountain Meru, puts him on a jewelled seat and gives him a ceremonious bath, the waters of which, flowing over the mountain Meru, are subsequently saluted by all gods. Indra then recites some hymns in praise of the Jina, and then brings him back to his parents. This event is usually called a कल्लाण (Sk. कल्याणक) or more particularly जिनजन्माभिषेककल्याण These events are almost monotonously described in the life of a Jina, but Puspadanta has on every occasion, enlivened the details with his poetic skill. The particulars about Risaha, the first Tīrthamkara are :—

(1) Town of birth—Ayodhyā.
(2) Parents—Nābhi and Marudevī.
(3) Descent in the womb—as a white bull.
(4) Date of Descent—month Āsāḍha, dark half, second day, Uttarāsāḍhā Naksatra.
(5) Date of birth—month Caitra, a dark half, ninth day, Sunday, Uttarāsāḍhā Naksatra, Brahma yoga.
(6) Name—Risaha, Ṛsabha or Vrsabha.]

4. 9*a* णिवप्रंगणति, in the courtyard of the king. Although Prakrits in general do not allow conjunct consonants with र्, we get such conjuncts in Apabhramśa. See Hemacandra IV. 398 and 399. Of our Mss. G and K only give conjuncts with र् while MBP do not. I have therefore considered G and K to preserve older recension of our text on this account as also on account of their retaining forms with ऋ such as मृग, सृय etc. 11 मरुइ, i. e., मरुदेवी.

5. This Kaḍavaka gives the list of sixteen objects which Marudevī sees in a dream, and which foreshadows the birth of a Jina. The Śvetāmbara tradition differs from the Digambara one in that they mentions only fourteen objects of the dream (चोद्दस महासुमिण). Compare कल्पसूत्र 4, and 32-47.

गय वसह सीह अभिसेय दाम ससि दिणयरं झसं कुम्भं ।
पउमसर सागर विमाणभवण रयणुच्चय सिहिं च ॥
एए चउदस सुविणे सव्वा पासेइ तित्थयरमाया ।
जं रयणिं वक्कमई कुच्छिसि महायसो अरिहा ॥

These objects, according to the Digambara tradition, are :—

(1) An Elephant breaking open the mountain slopes.
(2) A Bull loudly roaring.
(3) A roaring Lion.
(4) Goddess Lakṣmī being bathed in waters from the trunks of the elephants of the quarters (दिसागज). The Śvetāmbaras designate this under अभिसेय.
(5) Wreaths, two in number, of fresh flowers.
(6) The rising moon.
(7) The rising sun.
(8) A pair of Fish.
(9) A pair of Jars filled with water.
(10) A fine lotus-pond.
(11) A surging sea
(12) A royal seat marked which lion's head (सिंहासन). The Śvetāmbaras omit this object ftom their list.
(13) A heavenly palace or mansion-house.
(14) A palace of snakes or of the king of snakes (नागभवन); this object is omitted in the list of the Śvetāmbaras.
(15) A heap of Gems.
(16) Burning Fire.

It will be seen from above that the Śvetāmbaras omit 12 and 14 from e above list and thus reduce the number of objects to fourteen.

7. 5*a* सोलह् वि तवभावणाओ पहावेवि, having meditated upon the sixteen rms (भावना) of penance such as दर्शनविशुद्धि etc. These भावनाs are —दर्शनशुद्धिः, विनयसंपन्नता, शीलव्रतेष्वनतिचार', अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोग, अभीक्ष्ण संवेग', शक्तितस्त्यागः, क्तितस्तपः, साधुसमाधि', वैयावृत्यकरणम्, अर्हद्भक्ति, आचार्यभक्तिः, बहुश्रुतभक्तिः, प्रवचनभक्तिः, वश्यकापरिहाणिः, मार्गप्रभावना and प्रवचनवत्सलत्वम्. Compare also नायाधम्मकहाओ, VIII. ; तत्त्वार्थाधिगमसूत्र VI. 24.

19. 14 तहु देसहु मइं णेहि, take me to that region where there is no birth c., i. e., to the region of the Siddhas.

21. 11*a* विसु धम्मु तेण भाइ त्ति, the Jina is called वृषभ because he shines rth (भाइ, भाति) by विस (वृष), i. e., धर्म or piety.

IV

[Prince Risaha grew in the royal house in ideal surroundings. He ossessed ten bodily atiśayas or excellences such as bodily purity, want of

perspiration etc. He grew strong and powerful and young. His father then thought of getting him married. The prince was at first unwilling, but being pressed by the king, agreed to be married to जसवई and सुणंदा, daughters of the kings of Kaccha and Mahākaccha. The marriage was celebrated with great pomp. On the evening of the celebration, under the moon-lit sky, a concert was arranged by celestial nymphs with dance, music and singing. The ceremony was rounded off by gifts which the king made to everybody so as to satisfy all his desires.]

1. 10*a* उत्ताणसेज्ज, lying on his back the young boy was looking up, but the poet fancies that he is watching the path to emancipation which, as it were, goes in the upward direction. 15*a* दर देंतें पयाइं, while walking slowly in the childhood. 16*b* चउसट्ठि वि कलाउ, sixty-four arts, and not seventytwo as with the Śvetāmbaras. For that list see Rāyapaseṇiyasutta or Paësilahāṇayam, para 39 and my note thereon.

2. The Kaḍavaka mentions some of the atiśayas which a Jina possesses.

3. 10*a* जो कप्परुक्खु सो कट्ठु कट्ठु, the so-called wish-tree is, alas ! a mere log of wood.

4. 14*b* अम्माहीरएण, स्वदेशस्त्रीबालप्रसिद्धरागध्वनिना, T., i. e., lullaby or song to make the baby sleep. 15 होहुल्लरु जो जो, these are the expressions which the mother uses to make the baby sleep.

9. 10*a* चदोवचीणपट्टेहिं छइउ, covered with fine canopy (चंदोव) of China cloth.

10. 3*a* सुहाइ, सु + भाति shines forth.

17. 2*b* दुध्दुं व धोयउ, दुग्धेनेव धौत', as if washed or bathed in milk. Note that दुध्दु is the Inst. sing. from which is obtainable by a confusion of अनुस्वार of the Instr (Cf. Hemacandra IV. 342) and उ of the Nom and Acc. 4*a* आउज्जहुं जेण मुहेण वासु, the arrangement of the musical instruments for a concert is described here, which arrangement is called पच्चाहार or प्रत्याहार. 9*b* कम्मारवी is an act of cleaning the musical instruments 10*b* उट्टिक्खणु किउ हिंदोलएण, the introductory notes of the हिंदोलराग were sung first 11*b* कउ णच्चणीहिं पुणु तहिं पवेसु, the dancing girls then entered presenting the three methods of keeping time (ताल), viz वण्ण, छडय and धारा. T adds :—समस्तनाटकार्थवर्णनाद्वर्णतालः, शृङ्गाररसाभिनयश्छटकातालः, वीररसाभिनयो धारातालः.

18 The various technical terms of the art of dancing have been explained and their subdivisions enumerated in T. which I quote fully here .— चारी पदप्रचारः, सा द्वात्रिंशत्प्रकारा, तत्र समपादा स्थितावर्ता सकटास्या अध्यड्डिका चापगतिः विच्यवा एलका

क्रीडिता वद्धा उरूद्वृत्ता आदिता उच्छंदिता वा जतिता स्पंदितजिनिता अपस्पंदिता मतुली मत्तली चे षोडश भौम्यार्य:; अतिक्रांता अपक्रांता पार्श्वक्रांता अर्द्धजानु: सूची नूपुरपादिका दोलापाला पादा आक्षिप्ता आविद्धा उद्घृता विद्युद्भ्रांता आलत्ता भुजंगत्रासिता हरिणप्लुता भ्रमरी चेत्येता: षोडश कांसोद्भवाश्चार्य: 3*b* अंगवलनं अंगहार:, स च स्थिरहस्तक: सूचीविद्ध: आक्षिक: कटीछेद: विष्कंभ: अपरात: आक्रीड: भुजंग भ्रमणमदादिविलसित इत्यादिविकल्पात् द्वात्रिंशत्प्रकार:. 4*b* शरीरमनेकधा प्रतिष्ठाप्य क्रियंते इति क र णा नि तलपुष्पपुटं वर्तितं अपविद्धं लीनं स्वस्तिकं अर्वस्वस्तिकं अर्धस्वस्तिकरेचितं निकूटकं अलातं उन्मत्तं तिलमित्याद्यष्टोत्तरशतसंख्यानि. दि ण्णु दत्तानि 5*a* च उ द ह वि सी स. उक्तं च—

अकंपितं कंपितं च धुतं विधुतमेव च ।
परिवाहितमाधूतमथाचितनिकुंचितं ॥
× × × पराहृतमक्लिष्टं चाप्यधोगतं ।
लोलितं प्रकृतं चेति चतुर्दशविधं शिर. ॥

5*b* भू तं ड व इं नृत्यानि सप्त—

आक्षेप: पातनं चेव भ्रूकुटिश्चतुरं भ्रुवो: ।
कुंचितं रेचितं कर्म सहजं चेति सप्तधा ॥ इत्यभिधानात् ।

6*a* ण व गी व उ । तदुक्तं—समानता आनता अस्ता रचिता कुंचिता कंचिता चिता ललिता च निवृत्ता च ग्रीवा नवविधा स्मृता. 6*b* छ त्ती स वि दि द्ठी उ—तथाहि कांता भयानिका हास्या करुणा अद्भुता रौद्रा वीरा वीभत्सा चेत्यष्टौ रसदृष्टय:; स्निग्धा हृष्टा दीना क्रुद्धा तृप्ता भयान्विता जुगुप्सिता चेत्यष्टौ स्थायिभा दृष्टय:; स्तान्पांमलिना (?) श्रांता सलज्जा ग्लाना शंकिता विषण्णा मुकुला अभितप्ता जिह्मललिता कुंचिता विभ्रान्ता विप्लुता ककिकरा (?) विकोसा त्रस्ता मेदिरा चेति षट्त्रिंशद् दृष्टय 7*a* अं ति मे त्या दि

शृंगार (?) बीभत्सा हास्यरौद्रभयानका: ।
करुणाद्भुतशांताश्च........रसा स्मृता: ॥

तत्राष्टौ रसा अंतिमरसवर्जिता:.

ज णि य भा व

रतिर्हासश्च शोकश्च क्रोधोत्साहौ भयं तथा ।
जुगुप्सा विस्मयश्चाष्टौ स्थायिभावा: प्रकीर्तिता: ॥
स्तंभस्तनूरुहोद्भेदा (?) हृद. स्वेदवेपथू ।
वैवर्ण्यमश्रु प्रलय इत्यष्टौ सात्त्विका: स्मृता: ॥

तनूरुहोद्भेदो रोमांच । वेपथु: कंप:, वैवर्ण्यं म्लानता निर्वेद:, ग्लानता निर्वेदग्लानि., शंकाश्रमधृतिजडता हर्षदैन्योग्रचिंतात्रासेर्ष्यामर्षगर्वा: स्मृतिमरणमदा: सप्त निद्राविवोधा व्रीडाअपस्मारमोह शमनिरलसताऽवेगतर्क विहृछ्याव्युन्मानादौ विषादौत्सुक्यचपलयुतास्त्रिंशादतेत्रयश्च (?) । अपस्मार: डमारी (?) । वर्क: विमर्श उवहिन्थ आकारगोपनं युता: संबद्धा इति । 8*a* अ वे त्या दि अपराप्यपूर्वभावेभ्यो विलक्षणा:. भा वा णु भा व भावानुभावेन्योऽनु पश्चाद्भवतीत्यनुभावा. तच्चतुर्विधा (?) मानो (?) वाग्बुद्धिशरीराश्च य दर्शिता:. 9*a* फु र ण इं स्फुरणानि शरीरगतानि. 10*b* छ ड्ढ ण य प ओ एं नृत्योपसंहारहेतुस्तालविशेषपरछट्टणकप्रयोगस्तेन. The Ms. of T. is illegible at numerous places, but as the contents seemed to me to be important I have reproduced them.

V

[One day Jasavaī, the wife of Risaha, saw in a dream the mount Meru, the sun, the ocean and the entry of the globe into her mouth. She told this dream to Risaha who told her that she would get a son who would be a sovereign ruler. In course of time, Jasavaī bore a son who was named Bharaha (Sk. Bharata). As the boy grew the father himself taught him various arts as also the science of government, duties of different castes and classes, and the principles of inter-state relations. Jasavaī bore ninty-nine more sons, Vasahasena etc., and one daughter named Bambhī. Sunandā also bore one son named Bāhubali and one daughter named Sundarī. Bharaha himself taught both the daughters the various literary and fine arts. Now once it so happened that there occurred a severe famine which worked a havoc on the people. They came to Risaha and asked for relief. He then taught the people various arts and professions. When he attained the age of twenty lacs of pūrva years, he was put on the throne by king Nābhi.]

2. 8*b* छक्खड वि मेइणि, the six continents of the भारतवर्ष. The भारतवर्ष, according to Jain cosmology is bounded on the North by Himavanta Mountain; right through its centre passes the Veyaḍḍha (Sk. Vaitāḍhya) mountain from east to west; the rivers Gaṅgā and Sindhu pass through it form North to South; it is in this way that it is divided into six Khaṇḍas or continents. A Cakravartin rules over all these six continents of the भारतवर्ष. 10*b* अहमिन्दु or अहमिन्द्र is a god of a very high class residing in the ग्रैवेयक or अनुत्तरविमान heaven.

3. 2 तिहुयणवइजयकरेहारहियं, The loss of folds on the belly of Jasavaī, as a result of her pregnancy, is here considered by the poet as the wiping off of the marks of victory over the lords of three worlds. It means that the son that is to be born to Jasavaī will wipe off all marks of supremacy so far held by kings whom he will subdue.

5. 7*a* खुल्लउ कीडुल्लउ, a small insect (क्षुद्रः कीटकः).

6. 13*a* चित्तलेप्पसिलवरतरुकम्मइं, painting, plaster-work (लेप्प), sculpture, and wood-work.

7. 2 गिरियणि....विसयं पयासए, explains (to Bharaha) the subject of governance of his consort, viz., the earth (गिरियणिथरणि) with mountains standing for her breasts.

8. 12 पढमुवाउ, प्रथम. उपायः, i. e., resolution, resolve.

9. *7a* करेवा, See for the formation of Potential participles Hemacandra IV. 438. *9a* अय तिवरिस जव, the goats to be offered in sacrifices are and should be यव corn three years' old. *13a* जिणपडिमापूयणु, worship of the images of the Jinas. This is clearly an anachronism unless we accept that Risaha means by it not himself but the Jinas of the past. To a Jain his religion has no beginning and there were Jinas in the past.

11. *8b* कामुप्पण्णु चउविहु दारुणु, the four व्यसनs or addictions, viz., woman, gambling, wine and hunting.

12. 1 एक्कंतरिउ मित्तु णिरंतरु सत्तु. In the मण्डल or द्वादशराजचक्र, the immedia neighbour is an enemy while the next one is a friend (एकान्तरितं मित्रम्, निरन्तर शत्रु). The immediate neighbour is often in conflict with him because of the common boundary, while the next one is to be on good terms with him in order that both of them have the middle one as their common enemy. *8b* अट्ठारहतित्थहं, the eighteen तीर्थs are :—

सेनापतिर्गणकमन्त्रिपुरोहिताश्च वर्णा बलौघबलवत्तरदण्डनाथा ।
श्रेष्ठीमहंमहत्तर इतश्च महाद्यमात्योऽमात्यो वदन्ति दश चाष्ट च तीर्थमार्या. ॥

—Marginal gloss in K.

The वर्णs in the above list are ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य and शूद्र; the बलौघ is the fourfold division of the army. viz., हस्ती, अश्व, रथ and पादात.

18. *6a* अवहंसउ i. e., अपभ्रंश which is counted as a distinct language. Note the items which were taught to ladies in those days, or even in the days o the poet.

19. 1–2 सयमह...वारिणा धुयकमकमलजुयल परमेसर, O Lord, pair of whose lotus-like feet is washed by water dropped down from the gems in the coronet of Indra. *6a* लग्गणखंभु अण्णु को अम्हहं, who, other than yourself, will be our supporting pillar ?

20. 5–11 पल्लव etc.—This passage gives a long list of the names of the countries or different parts of the भारतवर्ष.

21. 3–5 खेडइं etc.—This passage gives the list of several types of towns, villages, cities etc., such as खेड, कव्वड, मडंब, पट्टण, दोणामुह and संवाहण.

22. 4 घरि उच्छुरसु,—the race was named इक्ष्वाकु because its founder brought to his house the juice of suger-cane for drinking.

VI

[One day, while prince Risaha was enjoying his royal fortune and was engrossed in it, Indra thought of reminding him of the mission that he was expected to fulfil on the earth, viz., the propagation of the Jain faith,

and sent a celestial nymph named Nīlamjasā to perform a dance before him. She arrived, performed the dance and at the end of it fell down dead. Risaha, on seeing her dead, was filled with horror at the momentariness of the worldly life.]

2. 3 णियमंति जण, the porters and peons were regulating the conduct of the people in the court-room. The Kadavaka mentions a large number of things which should not be done in the king's presence.

3. 5a भुजंतहु महि तेसट्ठि गय, King Risaha enjoyed his kingship for sixty three lacs of the pūrva years, and still likes these worldly pleasures and is not disgusted with them.

4. 11–12 पुण्णाउस णीलंजस—If नीलजसा who completed her period of life, dances before him and after that falls dead, the event will cause disgust for wordly life in his mind.

5. 4b णाहेयणिहेलणि, to the house of Nābheya, i. e., Risaha, the son of Nābhi 6b वीणंगु वि पुव्वरंगु—The technical terms of dancing and music used in this Kadavaka and the two following are explained in T. as follows :— वी स मि त्या दि—नाटकस्येह प्रथमप्रस्तावनावतारः पूर्वरंगस्तस्य च प्रत्याहारोऽवतरणा आद्यारभ आश्रवणा गीतविधिरूपस्थापना परिवर्तन रंगद्वार चारी महाचारी इत्यादीनि विंशतिरंगानि. 7a ति पु क्ख रु चर्मावनद्धं वाद्यं पुष्करं तत्त्रिविधं उत्तममध्यमजघन्यभेदेन. 7b सो ल ह अ क्ख र उ क ख ग घ ट ठ ड ढ त थ द ध स र ल ह इति षोडशाक्षरं. 8a च उ म ग्गु आलिप्त-अर्दित-गोमुख-वितस्ति-भेदात् चतुर्मार्गं, दु ले व णु वामलेपनं ऊर्ध्वलेपन, छ क्क र णु रूप कृत परिति भेदो रूपशेषी उद्यश्चेति षट् वाद्यकरणानि; 8b ति य ति ल्ल उ समो श्रोतोगति गोपुच्छ. चेति त्रियतियुक्तं; ति ल य उ द्रुतमध्यविलं-बितास्त्रयो लयाः. 9a ति ग य उ तद्वाम नुत उघ (,?) श्चेति त्रीणि गतानि, ति य चा रु समप्रचारं विषमप्रचारश्चेति; ति जो य य रु गुरुसयोगो लघुसंयोगो गुरुलघुसंयोगश्चेति त्रिसयोगकरं. 9b ति क रि ल्ल उ गृहीतोऽर्धगृहीतो गृहीतमुक्तश्चेति त्रयः. 10a ति म ज्ज ण उ मायूरी अर्द्धमायूरी कर्मारवी चेति मार्जनकम्, 10b वी सा ल का र स ल क्ख ण उं अलक्रियते वाद्यं यैस्तेऽलकारा. प्रहारास्तैः सलक्षणं मनोज्ञं चेति विंशत्यलंकारा :—चित्र समः विभक्त. छिन्नः छिन्नविद्ध अनुविद्ध' विद्ध. वाद्यसश्रय. अनुसृतः प्रतिच्युतः दुर्ग. अवकीर्णं वद्धावकीर्णं' परिक्षिप्तः एकरूप. नियमान्वितः साचीकृतः समेखल सामवायिक. दृढः चेति 11a अ ट्ठा र ह जा इ हिं तथाहि—सुद्धा दुक्करणा विषमनिष्क्रमितैकल्पा च पार्श्विसमापर्यस्ता समविषमकृता विकीर्णा च पर्यवसाने चितिकिसंयुक्ता संप्लुता तथारभा विगतक्रम चललिगा वचितिका चैकयाद्या चेत्यष्टादशजातिभिर्मंण्डितम्; 12a च च्च उ डु चाचपुटस्त्र्यस्त्रस्त्रिकलतालप्रवृत्तिहेतुः, चा च उ डु चचपुटश्चतुरस्रश्चतु कलतालप्रवृत्तहेतुः, 12b छ प्पि य पु त्ते वि षे (?) षिजापुत्र. (?) कोपि मिश्र उभयतालप्रवृत्तिहेतुः; म ण हा रि चचपुटीदिस्त्रिप्रकारापि (?) मनोहर.; 13a इ य इत्यादि एतैश्चचपुटा-दिभिर्वाद्यतालविषयैस्त्रीभिरलकृता 14a ओ ण द्ध उ व ज्ज उ व ण्णि य उ इत्थंभूतं यदवनद्ध वाद्यं तत्त्रिप्रकार वर्णित वामं ऊर्ध्वं आलिंगकसज्ञितं चेति द्विश्रुतिका' स्वरो जातो निषादो गंधारश्च त्रिभुव-समश्रुतिसंख्यया त्रिश्रुतिकरुषतो धैवतश्च जलि (?) षिमसमसख्यया चतुःश्रुतिका षड्जपंचममध्यमा 16 च व ल हिं स्थितमुक्ताभिः; अ द्ध हिं अर्धमुक्ताभिः कंपमानस्वरूपाभि ; मु क्कि य हिं वशसुषिरसघन्व-

रहिताभि. (?); व त्ता व त्तं गु लि य हिं उक्तविशेषणविशिष्टाभिव्यक्तव्यक्तागुलिभि: व्यक्तागुलि स्थित-स्थितांगुलि अव्यक्तागुलि.

6. 1a प वि र इ हं इत्यादि—वाशस्वरो जात:; कथंभूते 1b व ज्जि य मु सि रे वादित. सुषिरे; सु अ त्थ सु इ शाश्वता: श्रुतयश्च; 3a थि ये त्यादिना चतु:श्रुतिकाविस्वराणामुत्पत्तिप्रक्रिया प्रदर्शयति, स्थितमुक्तागुलि स्वरे इव; सु अ ट्ठ सु इ चतु:श्रुतिक: 4a कंपमानयांगुल्या उद्गतस्त्रिश्रुतिक; 4b मुक्तांगुल्या जातो द्विश्रुतिक', 5a व त्तं गु ली त्यादिनोत्पत्तिक्रमेण प्रत्येकं चतु श्रुतिकादीना नामानि कथयति, व्यक्तागुले' सुषिरोपरिस्थितागुले'; 6b सा म ण्ण स रं त र स ण्णि य ए सामान्यस्वरत्वसज्ञया युक्त:. 7b अ द्ध ए मु क्क ए अं गु लि य ए अर्द्धया मुक्तया अगुल्या; सामान्यसज्ञित स्वरो निषाद: अंतरसंज्ञितो गाधार:. 9a तं ती र णि उ वीणावाद्यं तच्च द्विविधं 9b णि क्क लु ते प्प वि निष्कल त्रिपंच. 10a घ णु इत्यादि—घनं वाद्यं कांस्यतालयुगलादिकं. 10b स मे त्या दिसमं यौगपद्येन हस्त दत्त्वा यत्र रंगे वादित 12a उ प्प ण्ण इत्यादि—उत्पद्यमानो हि नाद: प्रथमत उ र ठा णं त र ए उरो-लक्षणस्थानकविशेषे उत्पद्यते तत' कंठे तत: शिरसि. 12b बा वी स वि सु इ उ द्विश्रुतिकयो: द्वयो चतस्र. श्रुतय त्रिश्रुतिकयो' षट् चतु:श्रुतिकाना त्रयाणा द्वाविंशतिश्रुतय ; 13a क म र इ य प मा ण हिं क्रमोच्च-रितसप्तेस्वरर (?) प्रमाणैर्न्नंद (?), 13b व ड्ढं तु मद्रमध्यमतारभेदेन यथाक्रमं उरसि कंठे शिरसि च वर्धमानो नाद. स्वर: श्रुतिर्मंद्रादिरूपतया; 14b स र स त्त सरिगमादिनामान: सरसत: स्वरा: सप्त ते सु तेषु सप्तस्वरेषु; दो ण्णि जि गा म द्वावेव च ग्रामौ, षड्जग्रामो मध्यमग्रामश्च; ग्राम समुदाय: कस्मिन्ग्रामे कियत्यो जातय. सभवंतीत्याह 15 सु रे त्यादि सुरै. पूज्य: स ज्ज ए षड्जग्रामे; जा इ उ जातय: स त्त प उ त्त उ सप्त प्रयुक्ता: शुद्धाश्चतस्र ; जायते पुष्टि लभंते स्वरा आभ्य इति जातय.. 16 म ज्झि म ए मध्यमे ग्रामे, तिस्र: शुद्धा अष्टौ संकीर्णा:.

7. 2a जा इ णि ब द्ध हं तासु जातिषु निबद्धाना. 2b ल क्ख वि सु द्ध हं गीतप्रयोगविशुद्धाना. 3a अं स हं अंसाना; स उ चा ली सा हि य उ शतं चत्वारिंशदधिक 3b ए क्कु त्त रू त पि चत्वारिं-शदधिकशतं एक्कोत्तरं; प सा हि य उ प्रसाधिता:. तथा हि अष्टादशजातिषु यथाक्रमसंभवमेको द्वौ त्रय-श्चत्वारि पच षट् सप्त चासंभत्तो (?) मिलिता एक्कोत्तरचत्वारिंशदधिकशतसंख्या भवंति. 4b गी य उ गीतय: शुद्धेत्यादिनामान:, पं च उ उ प्प णि य उ पंचोत्पन्ना:, किंस्वरूपास्ता इत्याह. 5a b ऊयु (?) भिलंतै शुद्धा सूक्ष्मैर्व्यक्तैश्च भिन्नका: । स्वरैर्हृततरैर्गौडी हृतैरेवेति वेसरा: । सर्वासा उक्तियोगात् गीति: साधारणा स्मृता. 6a त हिं इत्यादि तर्हि भट्ठादिगीतिषु तत्संबंधत्वेनापरे परिग्रामरागा' त्रिशद्भणिता:, तत्र शुद्धगीतिसंबधत्वे सय (?) गणनया सप्तग्रामरागा. भणिता., भिन्नगीतिसबधत्वेन व्रतगण नया पंच वेसररागा. सप्तैवमेते. 7a क मे ण जि कथितशुद्धादिगीतिसबंधक्रमेणैव संगृहीता. समुदितास्त्रिशत् 7b उ डु मा ण ऋतुप्रमाणा: षडेव, 8a प हि ला र उ तेषु मध्ये प्रथम. ढक्कराग:. 8b भ णु वे क्खा स म भा स हिं सा हि उ द्वादशभाषासमन्वित'; उक्तं च—कोलाहला मालववेसरा च सौराष्ट्रका च त्रवणोद्भवा च । स्यान्मालवा सैंधविका च ताना तत पर पंचमलक्षिता च । भाषा मध्यमदेहा च ललिता वेगरंजिका । त्रवणा ढक्करागस्य द्वादशैता: 9a अ ट्ठे त्या दि—आभीरी मागधी सैंधवी कौशिकी सौराष्ट्री गौर्जरी दाक्षिणात्या त्रवणा चेत्यादि अष्टभिर्भाषाभिस्सहित:; 9b वि हि मित्यादि द्वाभ्यामेव विभाषाभ्या अधाली-भावनिकाभ्या संविभूषित . 10a आ वा हि ये त्या दि—आवाहिता आकारिता, मोहिता विह्वलीकृता जगद्विलयास्त्रिय:. 10b हिंदोलकश्चतसृणां मालववेसरिका गौडी छेवट्टिका कबोजी चेत्यमीपा निलय. स्थानं. 11a मा ल वे त्यादि मालवाभ्या विभाषाभ्याम्. 12a भि ण्णे त्यादि—भिन्नषड्जोऽपि शुद्धा त्रवण (?) भागलो सैंधवी ललिता श्रीकंठी दाक्षिणात्येति सप्तभि: भाषाभि: कलित: युक्त:. 12b क

कु ह इत्यादि ककुभोऽपि, आभीरी रगती भिन्नपंचमी चेति त्रिभिर्भाषाभिः; सं च लि उ सचलितो युक्त'. 13 सु इ लो ण उं श्रुत्यनुप्रविष्ट. 14 म णे त्या दि मनोहरारामकृति मल्लकृतिः डौवकृतिः गोडकृति-रित्येवमादय', दा वि य उ दर्शिताः

8 1–2 द हे त्यादि—दश चतुर्भिर्गुणिताश्चत्वारिंशत्सख्या समुदिताना भाषाणा भणिता तथा षडपि विभाषाः, 3*b* ए या र हे त्यादि—एकादशा एकविंशति षड्जादिग्रामत्रये प्रत्येकं, सप्त सप्त मूर्च्छना इत्येकविंशति, मूर्च्छंति उच्छ्रयमुन्नतिं लभन्तेश्वरा (?) आम्य इति मूर्च्छना, उत्तरमद्रा उत्तरायता रजनी अश्वक्रांता सौवीरी कालोपनता सुमध्यमाः पौरीवीत्यादयः 4*a* ए वकु णे त्या दि—स्वरस्य तननात्प्रयोगविस्तारात्तानाः अग्निष्टोम-राजसूय-अश्वमेध-वाजपेयादियज्ञनामानस्वहा(?)नेयपुण्योत्पन्ने, ते च प्रतिग्राममेकोनपंचाशद्भेदा. प्रतिपत्तव्याः, तथा हि सप्ततन्त्रीवीणाया प्रत्येकमेकैकतन्त्र्या सप्त सप्त स्वराणा तननात्सप्तसप्तगुणिना एकोनपचाशद्ग्रामे तथा मध्य-मग्रामादावपि. उक्तं च-सास(?)श्चयं च सप्तानामेकैका भजते यतः । अत एकोनपंचाशत्के(?) त्याठे सहोदिता. ॥ 5*a* स जो य ता णु तथा हि षड्जग्रामे सप्तसङ्(?) नाना षाडवौडविता, काकलि अंतरं काकल्यंतरं; स्वरसंयोगे सति पंचत्रिसप्त योगताना भवति, एवं मध्यमगामेऽपि; 7*a* ते र हे त्या दि त्रयोदशाविध शीर्षं प्रनर्तित प्राकृत-शीर्षं च (?) ज्यंते. 7*b* तथा षट्त्रिंशद्दृष्टिभिर्युक्तमेतच्च प्रागेव व्याख्यातं. 8*a* ण व ता र उ नव ताराकर्माणि । तदुक्तं—भ्रमणं चलनं पातो वलन संप्रवेशन । विवर्तन समुद्गतं निष्काम प्राकृतं तथा, ॥ 8*b* अ ट्ठ वीत्यादि अष्टौ परिचिता दर्शनगतय ; उक्तं च—सम्मंसप्पनुवृत्तं च आलोकित प्रलोकितोल्लोकितेरवलोकित (?) सा तिर्यक् (?) 9*b* ण दे त्यादि—नवनदास्तत्प्रकार पुड (?) पक्ष्मपटकर्म दर्शितं उन्मेषश्च निमेषश्च प्रसृतं कुचितं सर्वतितं सस्फुरित पिहितं सविताडितं 10*a* भू स त्त भे य भ्रू सप्तभेदा, 10*b* छव्विहेत्यादि—तत्र नासा षड्विधा, उक्तं च—नता मदा विकृष्टा च सोच्छ्वासा सविकूणिता । स्वाभाविकी चेति बुधैं षड्विधा नासिका' स्मृता. ॥ तथा कपोल षड्विधं-क्षामं फुल्ल च पूर्णं च कंपितं कुंचित सममित्यभिधानात्; तथा अधरः षड्विधः; तदुक्त-विवर्तनं कंपनं च विसर्गो विनिगूहनं । संदष्टकं समुद्गश्च षट्कर्माण्यधरस्य च ॥ 11*a* स त्त वि हु चि बु उ सप्तचिबुकं, च उ मु ह हु राय कुट्टनं ख (?) रागा स्वाभाविकप्रसन्नश्च रक्तः समर्थानुरोधतः प्रयोजनवशात् 11*b* नव गला नव ग्रीवानृत्यानि उक्तलक्षणानि; च उ स ट्ठि वि क र ण भा व चतु षष्टिरपि हस्तभेदा. पताक. कर्तरिमुखः अर्द्धचंद्र आराल शुकतुंडः खटकामुख' पद्मकोषः चतु (?) रथ भ्रमर इत्यादयः 12*a* सो ल ह् वि हु सर्वहस्ताना षोडशविध कर्म । तथाहि-आकंपनं कर्षणं च उत्कर्षणमथापि च । परिग्रहो निग्रहश्च आह्वानं नोदन तथा ॥ सश्लेषश्चदि (?) योगश्च रक्षणं मोक्षण तथा । छेदनं भेदनं चैव स्फोटनं मोटन तथा । ताडनं चेति विज्ञेय ता (?) ज्ञे. कर्मकराश्रित, तथाहि सर्वोऽपि हस्तप्रचारस्त्रिप्रकारो भवति, तदुक्त-उत्तान पार्श्वगश्चैव तथाधोमुख एव च । हस्तप्रचारस्त्रिविधो नाट्यवृत्तसमाश्रय ॥ च उ वि ह वि सर्वमपि हस्तकर्म चतुर्विध भवति, उक्त च-अपचेष्टितमेकं स्यात् उद्वेष्टितमथापरम् । व्यावर्तित तृतीयं च चतुर्थं परिवर्तितम्॥ 12*b* भु उ द ह वि हु वि भुजवृत्तमार्गो दशविधोऽपि कृत , उक्त च-तिर्यग् ऊर्ध्वगतिश्चैव तथाधोमुख एव च । आविद्धश्च प्रविद्धश्च मंडल. स्वस्तिकं तथा ॥ अंजित. क्षुचितश्चैव पृष्ठतश्चेति ते दश. 13*a* ऊ रु स र वि हु उरोनृत्य शरविधं पचप्रकारं, उक्तं च—नत समुन्नत चैव प्रसारितविवर्तिते । तथापसृत-मेव तु पार्श्वकर्मापि पचधा ॥ 13*b* पो ट्ठ वि पा य डि य उ तं ति वि हु—क्षाम खल्ल च पूर्णं च सप्रोक्त-मुदरं त्रिधा । इत्यभिधानात् 14*a* क डि य लेत्यादि कटीतलजंघाक्रमकमलानि त्रीण्यपि । तत्र कटी तावत्पंच-प्रकारा, तथा हि-छिन्नावनिवृत्ता च रेचिता कपिता तथा । उद्वाहिता चेति कटी नाचे वृत्येव पंचधा ॥ तथा जघा पंचधा । उक्तं च-आवर्तिता अत क्षिप्तमुद्वाहितमथापि च । परिवृत्तिस्तथा चैव जंघाकर्मापि पंचधा ॥ तथा क म क म ला इ पचधा । उक्त च-उद्वहित समश्चैव तथाग्रतलसंचर । अंचित. कुंचितश्चैव पादः पचविधः स्मृत' ॥ 15*b* च ले त्यादि—चला द्वात्रिंशदगहारा मिता परिच्छिन्ना यत्र करणान्यंगहाराश्च प्रागेव कथितानि. 16*a* च उ रे य य चत्वारो रेचका , तदुक्तं-पादरेचक एक. स्याद्द्वितीयः कटिरेचक । तृतीयः

-कर (?) स्वस्यस्य ग्रीवायां च चतुर्थक. ॥ 16*b* स त्ता र ह् पिंडी वं ध कय-ऐश्वरी वा (?) ज्जं भो।ण्नी सिंहवाहिनी ऐरावती मान्मथी पद्मा पिंडीत्यादि सप्तदश पिंडीनां वंधाः कृताः. 17*a* चा रि उ सो ल ह डु सं खि य उ चार्यः षोडश द्विकसंख्या द्वात्रिंशत्संख्याः. 18*a*. वी स वि मं ड ल इं प या सि य इं अतिक्रं विचित्रं ललितं संचरं आलातकं आक्रांतं आकाशगामि इत्यादि संचारिभिर्भावैः स्थायिभिश्च प्रागुक्तलक्षणैरुद्धृ- रनेकैर्नृत्यति.

VII.

[The death of Nīlamjasā brought about a change in Risaha's outlo k of the world. He thought that everything in the universe was impermanen momentary, helpless, solitary; the soul has to pass through a series of birth and deaths, and experience sufferings, commits sins and thus prolongs wanderings in samsāra. If the soul therefore wants to secure his good, h should first stop doing sinful activities so that his stock of already acquire acts does not increase, and he should practise penance in order to exhaust th stock of old acts. Thus thinking, Risaha decided to renounce the worldly lif Gods at this juncture arrived there to encourage him in his resolve an requested him to propagate the Jain doctrine. Risaha then put his son Bharata on the throne of Ayodhyā, gave Poyaṇapura to Bāhubali, and sat in a palan quin to leave the worldly life. This event was celebrated by gods with thei presence on the earth. Risaha was followed by his aged parents and by wives and his ninety-nine sons. He then went to the forest, sat on a slab o stone, and pulled out five handfuls of hair. The hair was received by Indr in a jewelled plate and were disbursed in the milk-ocean. He then took th five great vows and became a naked monk.]

1. 11 तुयहि लवणु जमु उत्तारिज्जइ, a person over whom salt is passed b women, i. e., one who is so much loved by women, is taken down on a grass bed on his death. It refers to the practice of passing salt over the body of a person that is dear to them by women in the house. It also refers to th practice of taking down the dead body from its usual bed and of placing it on straw.

2. 6*a* पण्णारहखेत्तुब्भव, born in fifteen कर्मभूमिs, i. e., five in भारतवर्ष, five in ऐरावतवर्ष, and five in विदेह. It is in one of the कर्मभूमिs that a man is able to attain any state after death as a result of his acts. 12 तियरणु चरित्तु, activities of mind, body and speech (त्रिकरणं चरित्रम्).

7. 11–12 पसु फाडिवि etc.—If a person, i. e., a Brahmin, can obtain emancipation by eating the flesh of animals and by drinking wine, what is the use of Dharma ? Wait upon a hunter (who does exactly the same things.)

10. 8*a* जाउ मसाणहु तं मणुयत्तणु—Let this human life go to the burial place, as we say in Marathi मसणात जावो, i. e., I care a straw for the human life.

11. 1*a* तिप्पयारसंठाणय, the world is divided into three sections each having a different shape; the region of demons and creatures in hell has the shape of an earthen plate (शराव) turned downwards · the region of human beings and lower animals has the shape of a वज्रमणि, the region of gods has the shape of a मृदङ्ग. 9*a* मोक्खु वि आयवत्तसणिहयरु, the place of region of emancipated souls has the shape of an umbrella.

12. 4*a* पासुलियातुलाहिं, by beams made of ribs.

13. 4*a* णाणावरणिउ पंचपयारउ—Acts which obscure knowledge are of five types, viz., मतिज्ञानावरणीय, श्रुतज्ञानावरणीय, अवधिज्ञानावरणीय, मनःपर्ययज्ञानावरणीय and केवलज्ञानावरणीय. See उत्तराध्ययनसूत्र xxxiii. 4. 5*a* णवविहृदसणु, acts which obscure दर्शन fall under nine heads —निद्रा, निद्रानिद्रा (deep sleep), प्रचला (drowsiness), प्रचलाप्रचला (heavy drowsiness), स्त्यानर्धि (somnambulism), चक्षुर्दर्शनावरणीय, अचक्षुर्दर्शनावरणीय, अवधिदर्शनावरणीय and केवलदर्शनावरणीय. See उत्तराध्ययन, xxxiii. 5–6. For other divisions of कर्म see the same text and Appendix II in Miss Helen Johnson's translation of Trisasti. 13 तिगइ i. e., पाणियुक्ता, लाङ्गली and गोमूत्रिका, straight, curved and zigzag movements.

14. 12–13 पिहियासवदारहु etc.—If a person stops all sources of sin and conducts himself properly, new acts do not enter the soul, and those acts which long remained with it are destroyed by bodily sufferings as they do not get any nourishment.

15 2*b* होमि दियंबरो, I shall be a naked monk. The emphatic and express mention of this term here and also in 26. 15*b* below and at several other places shows that the work is written form the point of view of the Digambara Jains. 10*b* देज्जवित्तिसखाविण्णासहि by particular permutations and combinations of morsels of food obtained by begging. It refers to the various भिक्षुप्रतिमाs in which food is regulated on the basis of counting the दत्ति or dole obtained or the morsels to be eaten. See below 16. 3*a*.

16. 12–13 जिह हयणिज्झरणें etc.—Just as a pond is dried up by the rays of the sun, and also when water already therein is drained and the influx of it is stopped by building dams (बद्धें वरणें), in the same way acts done in various births are exhausted by the control of senses (which prevents the influx of sinful acts) and by the practice of penance (prescribed for a monk).

19. 1*b* अणुवेक्खाओ, reflections of twelve types on the momentoriness, impurity etc. see तत्त्वार्थाधिगम, IX. 7.

21. 4a सोणंदेयहु, to the son of सुणन्दा, i. e. बाहुबलि. सुणन्दा is the second of रिसहु.

24. 7b जसवइणंदउ, i. e., जसवई and सुणन्दा, the two wives of रिसहु.

26. 16 The passage gives the date of the निष्क्रमण which is the nin day of the dark half of Caitra with उत्तराषाढा नक्षत्र.

VIII

[Risaha thereafter began to practise the life of a Jain monk and o the rules of conduct prescribed for him. Nami and Vinami, sons of kings of Kaccha and Mahākaccha and his brothers-in-law, came to him the forest, and after having greeted him, said that Risaha did not assign them even a small portion of the earth when he divided it among his s... Risaha, of course, as a monk, could not make any reply as he had complete dissociated himself from the affairs of the world. The king of snakes at juncture felt a tremor and learnt by his अवधिज्ञान how Risaha was placed in difficult situation. He therefore came to him, saw Nami and Vinami standi before him and said to them that Risaha had told him (the king of before he (Risaha) renounced the worldly life, that when they would c to him and ask for a portion of earrh, the king of snakes should assign them the southern and northern slopes, belonging to Vidyādharas, of th Vaitaḍhya mountain. The king of snakes then showed to them the vario cities situated on the slopes, saved Risaha from the awkward situation went home.]

1. 9b मयसिमिरइं, मदस्य सैन्यानि, T. I think that सिमिर comes form camp of the army, but is loosely used to designate army. 12b सुइवइणी, con sisting of pure vows (शुचिव्रतयुक्ता). 19 थिउ सग्गहु etc.—He stood, standing a if he was the path leading to heaven as also to emancipation (य + अपवग्गहु).

2. 1–4 विसयवसा etc.—Those great warriors who took vows of asceti simultaneously with Rishaha, were sinking (भग्गा) in a few days' time a they were unable to bear unpleasant contacts, were frightened by terrifi tigers, lions, and Sarabhas, and were overcome by tortures of thirst an hunger.

6. 7b सालएहिं, by his brothers-in-law. 9a पर तेण विमुक्कु घरत्थकम्मु, but has left all activities of a householder. 12a कूरमुट्ठि, a handful of cooked rice.

7. From line 6 to 20 note the दामयमक or शृंखलायमक. The sets of a large number of दुवईs, constituting a kaḍavaka, is not rare in this work, although normally दुवई forms only its opening couplet. The passage ḍescribes the

commotion caused by the coming out from the nether world of the king of snakes. 26 जीहहिं दससयसंखहिं, with his thousand (tentimes hundred) tongues. P reads दुसहससंखहिं which means two thousand tongues as the tongues of snakes are cut into two when they licked nectar lying on the darbha grass on the occasion of its distribution.

11. 8*b* रसवाइ व सइं णिवडियसुवण्णु, like the alchemist who always attempts to prepare gold out of baser metals, the mount वेयड्ढ always showed gold

12. 15*b* सुय दूयत्तणु हलिणिहिं करंति, parrots act as messengers of ploughing women to carry their love-messsages to their lovers.

13. 9*b* The passage gives the list of fifty cities situated on the right side of वेयड्ढ which are assigned to नमि.

14. 5*a* The passage gives the list of cities situated on the left hand side of वेयड्ढ which were assigned to विनमि The cities are enumerated from west to east (वारुणासामुहाओ)

IX

[Risaha then spent six months in meditation, and controlled the activities of his mind completely. He considered that reduction of food was one of the best means of attaining purity. He therefore decided to accept food which would be free from forty-six flaws, and pure from nine points of view. The principle of his life was that food exhausts the body, this reduction of food constitutes penance, this penance controls senses, the control of senses exhausts all acts which event leads to emancipation. He therefore practised these rules of life, and while wandering on the earth came to Gayapura where king Somaprabha, the son of Bāhubali, was ruling. His younger brother, Seyaṃsa, saw in a dream the previous night objects like sun, moon etc. and told this dream to his brother. The fruit of this dream was that some great person was to visit his house. In fact Risaha did arrive the next day to his house to break his fast. Prince Seyaṃsa thereupon offered him reception and a jar of sugar-cane juice, which Risaha accepted. There was a divine voice to proclaim "what a noble gift !". Risaha thereafter proceeded with his wanderings and in due course obtained the fourth knowledge called Maṇapajjavanāṇa, knowledge by which minds of others are known. He then proceeded to Nandanavana, and under a bunyan tree acquired the Guṇasthānas, and in due course attained kevalajñāna by which he was able to see the entire universe. Gods arrived at this juncture to celebrate the event, and built up a

samavasaraṇa on the occasion. All the thirty-two Indras graced it with t
presence. They then offered prayers to Risaha.]

1. 7 उज्झिउ आहाकम्मुद्देसहि, food which is to be offered to Jain m
should be free from flaws such as आधाकर्म, which the marginal note expla
as नीचं कर्म स्वयंपाकादिकम्, but elsewhere it is explained as आधानं आधा साधुनि
चेतसः प्रणिधानं तस्याः कर्म पाकादिक्रिया, तद्योगाद् भक्ताद्यपि आधाकर्म. 15a पाणिपत्ति, in the pla
viz., the palm. 17 ए णर, these men, i. e., his followers who became mo
along with him.

3. 3a ससिप्पहाणुजम्मिणा, by the younger brother of ससिप्पह, i. e, सोमप्रभ,
son of बाहुबलि. 3b भवाणुबद्धधम्मिणा, by one who stored meritorious deeds in
previous births.

4. 15b भुवणिबंधु, भुजनिबन्धः, arms.

5. 5a भरहहु तुम्हहुं मेइणि दिण्णी, by whom the earth was given to Bhara
and to you, i. e., to Somaprabha and Sreyāṃsa, of course through their fath
Bāhubali.

6. 2 सिरिमइवज्जजंघजम्मंतरायारो, the incidents in the sixth previous bir
of Risaha when he was born as वज्जजंघ and his consort was सिरिमइं. At tha
time सेयंस was the charioteer and knew that वज्जजंघ (or वज्रनाभ) was destin
to be the first तीर्थंकर. For details see Hemacandra, Triṣaṣṭi, III. 284–287 an
also this work XXIV.

7. 16a सद्दहाणु णव पंचहुं सत्तहुं, i.e. faith in nine पदार्थs, five अस्तिकायs an
seven तत्त्वs. 18a देसचरित्तालंकिउ, marked by a partial observance of the vows
as in the case of a householder who takes the अणुव्रतs and not the महाव्रतs.

9. 2 दायय देज्जपत्तववहारसारमग्गं, principles in essence of the classification c
the donor (दायय, दायक), the gift (देज्ज, देय) and the receiver (पत्त, पात्र). 11–1
असणेण तणु etc.—food helps the body to practise penance, penance produce
forbearance, forbearance results in the removal of impurities, the remova
brings about kevalajñāna, which in its turn secures bliss. Compare for th
objects of begging alms :—

वेयण वेयावच्चे इरियट्ठाए य संजमट्ठाए ।
तह पाणवत्तियाए छट्ठं पुण धम्मचिन्ताए ॥
—पिण्डनिर्युक्ति, 662

11. 8–9 तह दिवसहु etc., the day on which Seyaṃsa served alms to Risaha
was the third day of the bright half of वैशाख, which day, even now, is called
अक्षय्यतृतीया. The passage explains the Jain view why the day is so called.

12. *7a* पंचवीसवयमायउ, the mothers of the vows which are the twenty-five भावनाs. Compare तत्त्वार्थाधिगमसूत्र, VII. 4-8.

15. *10b* अप्पमत्ति गुणठाणि व लग्गउ, he stuck to अप्रमत्तगुणस्थान which is the seventh गुणस्थान. This गुणस्थान enables the monk to possess 18000 शीलाङ्गs. The monk is engaged in धर्मध्यान and there is a beginning of शुक्लध्यान *11b* खणि अउव्वु आरूढउ तावहिं, he then rose to अपूर्वकरणगुणस्थान which is the eighth. शुक्लध्यान is now fully developed here *13b* अणियट्टिहि छत्तीस जि जित्तउ, in the अनिवृत्तिबादरगुणस्थान, which is the ninth, he conquered the thirty-six kinds of कर्म *14a* सुहुमसंपरायउ पावेप्पिणु, having acquired the सूक्ष्मसंपरायगुणस्थान which is the tenth, he destroyed the संज्वलनलोभ *15a* पुणु जायउ उवसंतकसायउ, he then pacified his passions. उपशान्तमोह is the eleventh गुणस्थान. 16 खीणकसायचरिउ पडिवण्णउ, he reached the क्षीणकषाय or क्षीणमोह गुणस्थान which is the twelfth where the second शुक्लध्यान begins. In this गुणस्थान the monk destroys sixteen कर्मप्रकृतिs, viz., five ज्ञानावरणीय, six out of nine दर्शनावरणीय and five अन्तराय At this stage he attains केवलज्ञान, and becomes a सयोगिकेवली which is the thirteenth गुणस्थान.

20. *7a* अक्खयधारिणि, अक्षयांना सिद्धाना धारिका सिद्धिवधू, T. *14b* धणए समवसरणु किउ तावहिं, at that time Kubera built a meeting place for gods etc. who arrived there to celebrate the attainment of Kevalajñāna by Risaha.

X

[Indra and other gods glorified Jina on his attaining the Kevalajñāna. Jina also possessed twenty-four more atiśayas or excellences as a result of this knowledge. At this juncture a report was brought to Bharata that his father obtained the kevala, that the cakraratna has made its appearance in his armoury and that his queen got a son.—King Bharata was hesitating for a moment whether he should first see his son, or cakra or father, but ultimately decided to see his father, went to him and praised him and thereafter returned home.

On seeing that the Jina has obtained the kevala, pious persons, desirous of attaining emancipation from samsāra went to him. To them the Jina began to describe categories of Jīva and Ajīva. He first explained the six pajjattis, i. e., faculties to develop, then the lower species of animals, then the lower animals with five senses, then the number of dvīpas and samudras and finally the dimensions of their bodies.]

2. 3 अइसय दह etc. The Jina had already ten atiśayas from his birth such as निस्वेदत्व etc, but when he attained केवल, he got twenty-four more as a result of his knowledge. They are described here and in the following kaḍavaka.

4. 3a दहकुमार i. e., ten gods belonging to the class of भवनपति.

5. 1–8 The Jina is here described in terms of the epithets of god Siva but is shown superior to him, e.g. वामाविमुक्क, god Śiva is always associated with his consort, but the Jina is devoid of her. 9–13. Similarly the Jina is shown superior to Brahmā, and in 14–17 to Viṣṇu.

9. 4a चउरासिलक्खजोणिहिं परिभमन्ति, तया नित्येतरनिगोदयोः पृथिव्यप्तेजोवायुकायानां च प्रत्येकं सप्त योनिलक्षाणि, वनस्पतिकायिकानां दश, द्वित्रिचतुरिन्द्रियाणां प्रत्येकं द्वे द्वे, सुरनारकतिरश्चां चत्वारि, मनुष्याणां चतुर्दशेति, तदुक्तम्—

णिच्चेदरधादु सत्त य तरु दस वियलिंदिएसु छच्चेव ।
सुरणरयतिरिय चदुरो चोद्दस मणुए सदसहस्स ॥ T.

6–7 आहार....पज्जत्ति त्ति भणंति एत्थु. The passage defines पर्याप्ति as a faculty which helps the development. These पर्याप्तिs are six, viz. आहार, eating food and digesting it; सरीर, body; इंदिय, sense-organs; आणापाण, breathing; भासा, speech, and मण, mind.

19. 11 सुहुमणिगोयसमुब्भवहं, of those that spring form the subtle णिगोय or निगोद; this निगोद is a physical body with infinite lives or souls.

XI

[The Jina proceeds further to define the functions of different sense-organs and creatures that posses them. He then mentions the duration of their life. After a general description of the Geography of the Jambūdvīpa and other dvīpas with their rivers and mountains and antaradvīpas, the Jina proceeds to describe the human species with their characteristics and capacities. He then goes on to detail the heavenly regions and gods. He explains the fourteen Guṇasthānas, the various prakṛtis of karman, the characteristics of the Siddhas and their happiness. On hearing the discourse the eighty-four lacs of princes renounced the worldly life and became monks who were then called his Gaṇadharas. Similarly Bambhī and Sundarī became the first nuns of the Order. Only Marīci remained unenlightened. The first lay disciple was Suyakitti and the lady disciple was Piyaṃvayā or Priyaṃvadā. The first disciple to obtain emancipation was Aṇaṇtavīra.]

6. 6b वयगुणियउ, multiplied by वय i. e. five, because there are five vows.

8. 9–10 मइरंगहिं etc. The passage gives the names of the ten कल्पद्रुमs.

9. 2b णिरूह, परामर्शशून्याः, T., incapable of guessing or imagination.

10. 4 सावयवयहलेण सोलहमउ सग्गु लहइ माणुसु, a human being obtains the sixteenth heaven as a result of his vows of Śrāvaka. The sixteen heavens

are : सौधर्म, ऐशान, सानत्कुमार, माहेन्द्र, ब्रह्म, ब्रह्मोत्तर, लान्तव, कापिष्ठ, शुक्र, महाशुक्र, शतार, सहस्रार, आनत, प्राणत, आरण and अच्युत. According to the Śvetāmbaras the number of heavens is twelve, which number they obtain by dropping from the above list ब्रह्मोत्तर, कापिष्ठ, शुक्र and शतार

11. 10 राम उड्ढगइ etc. The passage says that the nine बलदेवs or रामs are destined to obtain heavens while the nine वासुदेवs are destined to go to hells.

17. 8*b* चंगउ कउलु तुज्झु वक्खाणइ, the creatures in hell are made to drink as wine hot liquid juice of metals like copper. When they are so made to drink it, the keepers of hell say to them ironically that they were well taught by the Kāpālikas not to observe the vows and as they followed their advice they suffer the miseries in hell.

22. 1*a* अद्धकविट्ठसरिससंठाणइं, the shape of the heavenly abodes resembles the कपित्थ fruit cut into two.

25. 12 पडिचार, attendance, service, or cure.

26. 3*b* अतुलसोक्खु णिहिलहु अहमिंदहु, all अहमिंद्रs enjoy happiness for which there is no parallel.

29. 8–15 मग्गणठाणइं चोद्दसभेयइ etc. The passage gives the list of fourteen Guṇasthānas. They are :—मिथ्यात्व, सास्वादनसम्यग्दृष्टि, (सासण of our text) सम्यग्-मिथ्यादृष्टि (मीसु of our text), अविरतिसम्यग्दृष्टि, देशविरति (विरयाविरउ of our text), प्रमत्त, अप्रमत्त, अपूर्वकरण (अउव्वउ of our text) अनिवृत्तिबादर (अणियत्ति of our text), सूक्ष्मसंपराय (सुहुमराउ of our text), उपशान्तमोह (उवसंतु of our text), क्षीणमोह (परिखीण-कसाय of our text), सयोगिकेवलि (सजोइजिणु of our text), and अयोगिकेवलि (अजोइ of our text). For details see Miss Johnson's Triṣaṣṭi, Appendix III, Pages 429–436.

32 5*b* अडयालीसउं सउ, i e. one hundred and thirty-eight प्रकृतिs of कर्म. In the Guṇasthānas form number four to seven, one hundred and thirty-eight कर्मप्रकृतिs are destroyed. They are . ज्ञानावरणीय 5, दर्शनावरणीय 9, वेदनीय 2, मोहनीय 21, आयु 3 (i e. नारक, तिर्यक् and देव), नाम 93, गोत्र 2, and अन्तराय 5. The total of these comes to 138 as stated above. 11*a* अट्ठमपुहईवट्ठि, i.e., on the सिद्धभूमि or सिद्धशिला.

35. 12*b* एक्कु मरीइ णेय पडिबुद्धउ, only मरीचि who is the son of भरत and grandson of ऋषभ, was not enlightened as he was overcome by दर्शनावरणीयकर्म and मोहनीयकर्म. The Śvetāmbara version says that he, by his boasting and pride, was not fit to obtain सम्यक्त्व. See Hemacandra, Triṣaṣṭi, VI. 385–390.

XII

[Now Bharata started on a campaign for the conquest of the six continents of the earth or Bhāratavarṣa In the season of autumn, when the sky was clear and the roads dry, he saluted the holy beings and after going round the cakra, made some gifts to the needy and the poor. He consulted his ministers, took a huge army and, led by the cakra, proceeded to the eastern direction. After crossing the Ganges he went to the shore of the eastern ocean and wanted to conquer the Māgadha Tīrtha. He first observed a fast and then took his bow and discharged the arrow in the direction of that region The arrow was dropped down in the house of the king who was very much enraged at its sight. He was however pacified by his minister by saying that it was no use thinking of waging war against a Cakravartin, that Bharata was the Cakravartin of the Bhāratavarsa and that it would be well for all to pay tribute to him and to accept his sovereignty. The king of Māgadha Tīrtha did accordingly.]

1. *3a* छुडु छुडु, immediately, quickly. 15–16 सारयमयलंछणु etc. If the autumnal moon that pleases the heart of men by its lustre, had not been spotted or spoiled by the deer-mark, I would have given it (this very moon) as the simile, i. e., I would have compared the fame of the Jina to it (the moon)

5. 30 साडी णं हिमवंतहो, the river Ganges looked like the upper garment of the mount Himavat The next three Kaḍavakas contain a fine description of the river.

12 12 खंधुद्धरियडिंभया, the Kirāta chiefs carried their children on their shoulders as is the custom with them.

14. 12 णत्थि सहवाहु ओसहु, there is no cure for nature. Compare proverbs like स्वभावास औषध नाही in Marathi.

19. *2a* विविहणिहीसरासु, to the master of various Nidhis or treasures. The Nidhis are nine in number and their names are :—नैसर्प, पाण्डुक, पिङ्गल, सर्वरत्नक, महापद्म, काल, महाकाल, माणव and शङ्खक. For the functions of these Nidhis see Hemacandra, Triṣaṣṭi, IV. 574–782 and also below XVIII. 15. 6–10. *2b* णियकालवट्टसंधियसरासु, to one who has fixed an arrow to his bow named कालवट्ट or कालपृष्ठ Miss Johnson's note (see page 223 of her Tran. of Triṣaṣṭi) on this word is not justified in view of this evidence which is quite independent of Hemacandra. *7b* तो तुम्हहं णउ अम्हइं मि देव, my lord, in that case there will remain neither we nor you. Compare तुम्हीही नाही आणि आम्हीही नाही in Marathi.

XIII

[King Bharata then proceeded to the South and arrived at the entrance to the region belonging to Varatanu (of Varadāma Tīrtha). He again performed a fast, and after it discharged an arrow which fell in the house of Varatanu. King Varatanu immediately came to Bharata with a tribute and accepted him as his sovereign. Thereupon Bharata proceeded towards the west, came to the entrance of the river Sindhu. There too he practised a fast, and having penetrated the Lavanasamudra, discharged an arrow at the king of Prabhāsa Tīrtha. The king arrived and accepted Bharata as his sovereign. Bharata thereafter conquered different countries such as Mālava etc., and thus established his rule over the entire Āryan region. Thereafter Bharata proceeded to Vijayārdha or Vaitāḍhya mountain to complete his conquest of the remaining three continents or Khaṇḍas.]

1. 4*a* सिमिरं समुल्ललइ, the camp of the army is making rapid movements. 23 वइजयंतिणियडे, in the neighbourhood of वैजयन्ती, i. e, a narrow strip of water or channel of the sea through which acress to the sea is possible.

2. 13 दीवकवाडइं विहडिवि थक्कइ, the gates of different dvīpas or islands in the लवणसमुद्र stood opened before him, i. e., as soon as Bharata recollected the holy chant, it was certain that his enemies would be defeated and the dvīpas conquered.

4. 3*a* सहमंडवि वरतणुहि, in the court-room of वरतणु, the king of वरदामतीर्थ. Hemacandra does not mention the name of the king in his Trisaṣṭi

9. 20 पहासें, by the king of the Prabhāsa Tīrtha, situated at the confluence ot th river Sindhu and the sea

10. 1*a* सुरसिंधुसरिहि देहलिय धरिवि, i. e., regions standing between the Ganges (सुरसरि) on the east and the Sindhu on the west. 5*a* अज्जखइ, the continents where the Āryans live 14*a* विजयद्ध संमुह, towards the विजयार्ध mountain. This is another name of mountain Vaitāḍhya as can be seen from lines 24–25 below where it is said that the mountain विजय divides the earth into three Khaṇḍas on either side and crosses the continent from east to west.

XIV

[After having conquered the three southern continents King Bharata came to Vaitāḍhya and encamped there. A god arrived there and requested him to strike the opening of a cave in the mountain so that he would obtain passage through it to the other side. Bharata then ordered his general to do

13. *2b* तिमीसहि दुग्गमहे, तिमीसा or तमिस्रा is a dark cave through which Bharata had to pass along with his army.

15. *6b* धरणेण, by धरण, the king of snakes who gave on behalf of ऋषभ, the towns to नमि and विनमि.

17. *7b* अम्हहं पुणु दइयंबरिय गइ, to us there will be the mode of life peculiar to sky-clad monks. The expression दइयंबरिय indicates the sectarian attitude of the present work along with several other similar expressions like sixteen heavens.

22. 10 महिहर महिहरहु etc. the mountain (महिहर, महीधर) certainly observes all formalities towards a king (महिहरहु).

XVI

[Having saluted the Jina, Bharata got down from the Kailāsa mountain and then proceeded in the direction of Ayodhyā, and having crossed various countries he came to gates of the city. The disc or Cakra however did not enter the city but stood outside it. His priest then told him that it did not enter the town because Bāhubali, his younger brother, was not yet conquered and thus his conquest of the world remained still incomplete. Bāhubali was very strong and might even defeat Bharata, but he kept quiet so long. Similarly his other brothers also did not pay tribute to him. On hearing this Bharata got angry and sent messengers to his brothers to accept his sovereignty. They declined to do that but went to Kailāsa mountain and became monks. Bāhubali on the other hand would not accept the sovereignty of his brother and challenged Bharata to fight with him].

1. 2 साकेयहु संमुहु, towards Sāketa, i. e. Ayodhyā, of which it is another name. See Geographical Dictionary of Nundo Lal Dey. *12a* कुंकुमेण छडउल्लउ sprinking with water mixed with saffron छडउल्लउ is a Deśī word. Compare सडा in Marathi. 19 सट्ठिहि वरिसमहासहि, after sixty thousand years which was the period taken by Bharata for his conquest of the world.

4. 10 अज्ज वि ते etc., in as much as they are not yet won, the cakra does not enter the town. The idea is that the disc cannot enter the town unless the conquest is complete.

6. *12a* किं किर अणिज्जइ कंदप्पे, how can one describe (fully) god of love or Cupid ? Bāhubali, the son of Risaha, looked like god of love and the poet says it is not possible to do justice to his beauty by a description.

7. 11-11 जइ जम्मजरामरणइं हरइं etc.—we shall pay homage to King Bharata if he can ward off birth, oldage and death from us, if he can save us from birth in fourfold species or from saṃsāra.

11. 7b बुहसगमु, i. e., बुधसंगम:, company of the wise. Note the appearance of रेफ in the word as sanctioned by Hemacandra, IV. 399

18. 12a काउ कदलावलिहि म विरसउ, let not the crow cry on the skulls of your head The crying of a crow over the head is considered as a sign of approaching death. 13a देहि कप्पु, pay tribute or homage to Bharata.

21. 4a जो बलवंतु चोरु सो राणउ, he becomes a king, who is the strongest or most powerful thief. A successful thief becomes a king, while an unsuccessful one is called a robber or traitor.

24. 14 धवलाइं जि णिरु धवलइं, on the sandy banks of the Ganges the wings of swans and cheek of ladies away from their lovers, which are already white, became whiter when bathed in the rays of the moon.

XVII

[Bharata then declared that if he does not kill Bāhubali because it would be an offence to his father, he would hold him firm as an elephant is held in chains. The armies of both Bharata and Bāhubali met and trumpets blown and drums beaten, when Bāhubali said to his ministers that he would not move a step from his place but would stop the progress of Bharata's army. When their armies were about to strike, the ministers stood between them and adjured them not to discharge an arrow, and then requested both Bharata and Bāhubali not to engage themselves into a war which would lead to the destruction of poor soldiers, but that they should fight with each other in three ways, viz., they should fix their gaze on each other so that none would move his eye-lashes, that they should strike each other with water, and that they should go in for a wrestling match till one holds or weighs the other on his arms. Both of them agreed to fight accordingly. But in all the three forms of fight Bāhubali came out victorious. When Bharata was lifted up by Bāhubali, he thought of his cakra which immediately went round Bāhubali and stood by the right hand side of Bharata. Bāhubali thereupon dropped his brother Bharata on the ground.]

1. 2 णंदाणंदणहो, of the son of णंदा, i. e., सुणंदा, i. e., बाहुबलि.

2. 9b पडिवक्खणाहि, with the lord or prominent member of your enemy. 10 ऊणेण हएण etc. There is no gain by killing a low man, and therefore Rāhu, the eclipsing planet does not get angry with stars.

लक्षणम्), or better still, the एकत्वभावना. In the Uttarādhyayana Sūtra however we find:

एगओ विरइं कुज्जा एगओ य पवत्तणं ।
असजमे नियत्तिं च संजमे य पवत्तणं ॥ XXXI. 2.

i. e, one should practise abstinence in one respect, and advancement in the other, i e., Jīva should abstain for असंजम, indisciplined life, and advance with self-discipline.

(2) राय रोस दोण्णि वि उड्डाविय, he sent away, (lit made to fly) both राग and रोष. The Uttarā. however mentions राग and द्वेष which is more in keeping with the usual list. Our text certainly reads रोस in all Mss.

(3) (a) तिण्णि वि सल्लइं हियउद्धरियइं, he removed from his heart the शल्यs, viz., मायाशल्य, निदानशल्य and मिथ्यादर्शनशल्य.

(b) तिण्णि वि रयणइं लहु संभवियइं, he soon acquired the three jewels viz., सम्यग्ज्ञान, सम्यग्दर्शन and सम्यक्चारित्र.

(c) तिण्णि वि डंभ मुक्क संखेवें, he left quickly (संखेवें, संक्षेपेण, शीघ्रम्) the three types of crookedness, viz, bodily, verbal and mental. The Uttarā. has मनोदण्ड, वाग्दण्ड and कायदण्ड in place of डंभ of our Text.

(d) गारव तिण्णि विवज्जिय देवें, the divine one, i. e. Bāhubali, avoided three गारवs (गौरव), viz., रिद्धिगारव, रसगारव and सायागारव. The Uttarā. adds three उपसर्गs here :

दिव्वे य जे उवसग्गे तहा तेरिच्छमाणुसे ।
जे भिक्खू सहई जयई न से अच्छइ मण्डले ॥ ५ ॥

(4) चउगइकम्मणिबंधणरमियउ सण्णउ चत्तारि वि उवसमियउ, he suppressed or pacified the four appetites or emotions, viz., आहार, भय, परिग्रह and मैथुन, which take delight as it were in forming कर्म which puts the Jīva in the fourfold संसार viz., देव, नारक, तिर्यक् and मनुष्य. The Uttarā. has

विगहाकसायसन्नाणं झाणाणं च दुयं तहा ।
जे भिक्खू वज्जई निच्चं न से अच्छइ मण्डले ॥ ६ ॥

There are four विकथाs, viz., राज्य, देश, भोजन, and स्त्री; there are four कषायs, viz., क्रोध, मान, माया and लोभ; the four संज्ञाs are mentioned above, the four ध्यानs are आर्त, रौद्र, शुक्ल and धर्म out of which first two types are bad.

(5) (a) पंच महव्वयाइं, the five great vows of the monk, viz., अहिंसा, अदत्तादानवर्जन, असत्यवर्जन, परिग्रहत्याग, and ब्रह्मचर्य.

(b) पंचसवदारइं, the five sources of sin, viz., हिंसा, अदत्तादान, असत्य, परिग्रह and मैथुन.

(c) पंचिंदियइं कयाइं णिरत्थइं, he avoided the (enjoyment of-) objects of five senses, viz., शब्द, स्पर्श, रूप, रस and गन्ध.

(d) पंच वि णाणावरणइ ग्रंथइ, he (cut off) the knots of five types of ज्ञानावरणीयकर्म viz., श्रुतज्ञानावरणीय, आभिनिबोधिकज्ञानावरणीय, अवधिज्ञानावरणीय, मनःपर्यय-ज्ञानावरणीय and केवलज्ञानावरणीय.

(6) (a) छावासयउज्जमु सविसेसिउ, he made a special effort to observe the six आवश्यकs viz., सामाइय, चउवीसइत्थव, वन्दण, पडिक्कमण, काउस्सग्ग and पच्चक्खाण

(b) छज्जीवहं दयभाउ पयासिउ, he manifested kindness or compassion towards six classes of living beings, viz., पृथ्वी, अप्, तेजस्, वायु, वनस्पति and त्रस.

(c) छह् लेसहं परिणामुवइट्ठइं, he got stopped the effect of the six लेश्या, viz., कृष्ण, नील, कपोत, तेजस्, पद्म and शुक्ल.

(d) छ वि दव्वइं पच्चक्खइ दिट्ठइं, he saw or realised all the six entities, viz., धर्म, अधर्म, आकाश, पुद्गल, जीव and काल.

(7) (a) सत्त भयाइं हयाइं गहीरें, the serene one (i e. Bāhubali) destroyed the seven fears or risks, viz., इहलोकभय, परलोकभय, आदानभय, अकस्माद्भय, आजीवभय, मरणभय and अश्लोकभय.

(b) सत्त वि तच्चइं णायइं धीरें, the wise one knew all the seven truths, viz., जीव, अजीव, आस्रव, संवर, निर्जर, बन्ध and मोक्ष.

(8) (a) अट्ठ वि मय णिट्ठविय अदुट्ठें, the unsoiled one exhausted or destroyed all the eight prides, viz., जातिमद, कुलमद, बलमद, रूपमद, तपोमद, ऐश्वर्यमद, श्रुतमद, and लाभमद.

(b) अट्ठ सिद्धगुण भरिय वरिट्ठें, the excellent one remembered the eight qualities of the सिद्धs, viz.,

सम्मत्तणाणदंसणवीरियसुहुमं तहेव अवगहणं ।
अगुरुलहुमव्वाबाहं अट्ठ गुणा होन्ति सिद्धाणं ॥

—सिद्धभक्ति, २०

शुद्धात्मादिपदार्थविषये विपरीताभिनिवेशरहितः परिणामः क्षायिकसम्यक्त्वमिति भण्यते । जगत्त्रय-कालत्रयवर्तिपदार्थयुगपद्विशेषपरिच्छित्तिरूपं केवलज्ञानं भण्यते । तत्रैव सामान्यपरिच्छित्तिरूपं केवलदर्शनं भण्यते । केवलज्ञानविषये अनन्तपरिच्छित्तिशक्तिरूपं अनन्तवीर्यं भण्यते । अतीन्द्रियज्ञानविषयत्व सूक्ष्मत्वं भण्यते । एकजीवावगाहप्रदेशे अनन्तजीवावगाहदानसामर्थ्यमवगाहनत्वं भण्यते । एकान्तेन गुरुलघुत्वस्याभाव-रूपेण अगुरुलघुत्व भण्यते । वेदनीयकर्मोदयजनितसमस्तबाधारहितत्वादव्याबाधगुणश्चेति ॥

—परमात्मप्रकाशटीका

(9) (a) णवविहु बंभचेरु परिपालिउ, he observed the ninefold celibacy, viz.,

इत्थिविसयाहिलासो अङ्गविमोक्खो य पणिदरससेवा ।
संसत्तदव्वसेवा तहिन्दियालोयणं चेव ॥ १ ॥
सक्कारपुरक्कारो अदीदसुमरणमणागदहिलासो ।
इट्ठविसयसेवा वि य णवभेदमिदं अवम्भत्तं ॥ २ ॥

—T. in Ms. K.

Devendra's Com. on Uttarā. XXXI. 10 however gives the nine rules o celibacy as follows :

वसहि कह निसिज्जिन्दिय कुड्डिन्तरपुव्वकीलिय पणीए ।
अइमायाहार विभूसणा य नव बम्भगुत्तीओ ॥ १ ॥

(b) णवपयत्थपरिमाणु णिहालिउ, he realised the extent of nine entities, viz जीव, अजीव, पुण्य, पाप, आस्रव, संवर, निर्जरा, बन्ध, and मोक्ष.

(10) दसविहु जिणधम्मु वियाणियउ, he knew the tenfold qualities of th Jina, viz.,

खन्ती य मज्जवज्जव मुत्ती तव संजमे य बोद्धव्वो ।
सच्चं सोयं आकिंचणं च बम्भं च जइधम्मो ॥१॥

(11) एयारह हुयजडिमउ अवियारहं धीरहं सावयहं....पडिमउ, he also understood th eleven प्रतिमाs which lay disciples practise. These eleven प्रतिमाs are :—

दंसण वय सामाइय पोसह पडिमा अबम्भ सच्चित्ते ।
आरम्भ पेस उद्दिट्ठवज्जए समणभूए य ॥

For dteails see my notes on Uvāsagadasāo, pages 224–229.

(12) बारह भिक्खुहं पडिमउ, he also knew the twelve प्रतिमाs of the monk These are described in Devendra's Com. on Uttarā. XXXI 11, as follows :

मासाई सत्तन्ता पढमा बिइ तइय सत्तराइदिणा ।
अहराइ एगराई भिक्खुपडिमाण बारसगं ॥१॥

The duration of the fitst भिक्षुप्रतिमा is one month, of the second two months an so of the seventh seven months ; of the eighth one week, of the ninth .. weeks, of the tenth three weeks, of the eleventh one day and night, and the twelfth one night. There are several things which the monk pra .. these प्रतिमाs is called upon to observe. Devendra describes them as follows :—

पडिवज्जइ एयाओ संघयणधिईजुओ महासत्तो ।
पडिमाउ भावियप्पा सम्मं गुरुणा अणुन्नाओ ॥१॥
गच्छे च्चिय निम्माओ जा पुव्वा दस भवे असंपुण्णा ।
नवमस्स तइयवत्थुं होइ जहन्नो सुयाभिगमो ॥२॥
कोसट्ठचत्तदेहो उवसग्गसहो जहेव जिणकप्पी ।
एसण अभिग्गहीया भत्तं च अलेवडं तस्स ॥३॥
गच्छा विणिक्खमित्ता पडिवज्जइ मासियं महापडिमं ।
दत्तेग भोयणस्सा पाणस्स वि तत्थ एग भवे ॥४॥
जत्थत्थमेइ सूरो न तओ ठाणा पयं पि संचलइ ।
नाएगराइवासी एगं व दुगं व अन्नाए ॥५॥
दुट्ठस्सहत्थिमाईण नो भएणं पयं पि ओसरइ ।
एमाइनियमसेवी विहरइ जाखण्डिओ मासो ॥६॥

पच्छा गच्छमईई एव दुमासी तिमासि जा सत्त ।
नवरं दत्तीवुड्ढी जा सत्त उ सत्तमासीए ॥७॥
तत्तो य अट्ठमीया भवई हु पढम सत्तराइंदी ।
तीइ चउत्थचउत्थेणऽपाणएणं अह विसेसो ॥८॥
दोच्चा वि एरिस च्चिय बहिया गामाइयाण नवरं तु ।
उक्कुड लंगडसाई दण्डायय उद्ध ठाइत्ता ॥९॥
तच्चाए वी एव नवरं ठाणं तु तस्स गोदोही ।
वीरासणमहवा वी ठाएज्जा अंबखुज्जो हु ॥१०॥
एमेव अहोराई छट्ठं भत्तं अपाणयं नवरं ।
गामनगराण बहिया वग्घारियपाणिए ठाणं ॥११॥
एमेव एगराई अट्ठमभत्तेण ठाण बाहिरओ ।
ईसीपब्भारगए अणिमिसनयणेगदिट्ठा य ॥१२॥

(13) (a) तेरह किरियाठाणइं मुणियइं, he understood the thirteen क्रियास्थानs, which are enumerated below :

अट्ठाणट्ठा हिंसाऽकम्हा दिट्ठी य मोसऽदिन्ने या ।
अज्झत्थ माण मेत्ती माया लोभेरियावहिया ॥१॥

For details of these see सूयगड II. 2.

(b) तेरहभेय चरित्तइं गणियइं, he also counted upon the thirteen types of good conduct, viz., पञ्चास्रवसंवर, पञ्चसमिति and गुप्तित्रय

(14) (a) चोद्दह गंथ, he avoided the fourteen knots which are enumerated in T. as follows :—

मिच्छत्तवेदरागा तहासादिया (?) य छद्दोसा ।
चत्तारि तह कसाया चोद्दह अब्भन्तरा गन्था ॥१॥

(b) (चोद्दह) मला वि समुज्झिय, he avoided the fourteen impurities enumerated in T. as follows :—

नहरोमजन्तुअट्ठी कणकोडयपूयचम्ममंसरुहिराणि ।
बीय फलकन्दमूलानि मला चोद्दसा होन्ति ॥१॥

(c) चोद्दह भूयगाम सइं बुज्झिय, he understood fourteen groups of creatures. These fourteen groups are enumerated in T. as follows :—

एकेन्द्रिया सूक्ष्मबादरपर्याप्तापर्याप्तिभेदाच्चत्वारः, द्वित्रिचतुरिन्द्रिया पर्याप्तापर्याप्तिभेदात् षट्, पञ्चेन्द्रियाः संज्ञ्यसंज्ञिपर्याप्तापर्याप्तिभेदाच्चत्वारः इति चतुर्दशविधो भूतग्रामः ।

बादरसुहुमे इन्दियदुतिचतुरिन्दियसन्नीया ।
पज्जत्तापज्जत्ता....चतुदस भूदसंगामा ॥१॥

(15) (a) पण्णारह पमाय मेल्लंतें abandoning the fifteen प्रमादs or flaws, enumerated in T. as follows :—

विकहा तह य कसाया इन्दिय निद्दा य पणगो य ।
चउ चउ पण एगेगं होन्ति पमाया हु पण्णरसा ॥१॥

i. e., four types bad talk, viz., राज्यकथा, देशकथा, भोजनकथा and स्त्रीकथा, four कषायs viz., क्रोध, मान, माया and लोभ, faults of five senses, sleep and drink (पणग, पानक ?)

(b) पुण्णपावभूमिउ जाणंतें, knowing the (fifteen kind of) regions w men act (to acquire merit and demerit), viz., five in each of भारत, ऐ and विदेह.

(16) (a) सोलहविह कसाय पसमतें, pacifying the sixteen forms of pas T. notes these as : कषायाः क्रोधमानमायालोभाः प्रत्येकमनन्तानुबन्धिअप्रत्याख्यानप्रत्याख्यानसंज्व विकल्पाः सन्तः षोडशविधा भवन्ति.

(b) सोलहविहवयणेसु रमंतें taking delight in sixteen types of expressio T. records them as follows :—काललिङ्गवचनानि प्रत्येकं त्रीणि नव, तथा वि (?) कोनमिश्र वचनानि त्रीणि समयलोकदृष्टपरोक्षवचनानि चत्वारीति षोडश. The Uttarā, has ... which refers to the sixteen lessons of the first volume of सूयगडं of which th sixteenth is called गाहज्झयणं.

(17) असंजमोह सत्तारह, seventeen types of असंयम, indiscipline, Dev has enumerated these as follows :—असंयमे सप्तदशभेदे पृथिव्यादिविषये, तत्संख्यात्वं ... तत्प्रतिपक्षस्य संयमस्य सप्तदशभेदत्वात् । यत उक्तम्—

पुढवि-दग-अगणि-मारुय-वणप्फई-बि-ति-चउ-पणिन्दिअज्जीवे ।
पेहोपेहुसमज्जण-परिठवण-मणो-वई-काए ॥

T. has the following explanation : पृथिव्यप्तेजोवायुवनस्पतयः द्वित्रिचतु. ... लेखन (?) दुष्प्रतिलेखनापहृत्योपेक्षाणि (?) जीवमनोवाक्कायाः अपहृत्य (?) गृहीताण्डादिजन्तून् ... लेख्ये (?) उपेक्षा (?)...। अथवा—

पञ्चासवेहि विरमणं पञ्चिन्दियनिग्गहो कसायजओ ।
तिहि दण्डेहि य विरदी संजमो सत्तरसभेओ ॥

तत्प्रतिषेधादसंयमः सप्तदशविधः ।

(18) जाणिवि संपराय अट्ठारह, having known eighteen types of संपराय vi ten यतिधर्मs such as क्षान्ति etc., five समितिs and three गुप्तिs.

(19) एउणवीस वि णाहज्झयणइं having known nineteen lessons or cha of the book on Illustration (नाय-ज्ञात or न्याय ?). This is clearly a referen to the sixth Aṅga of the Jain Canon which in the Śvetāmbara tradition for the first part of the नायाधम्मकहाओ. This book consists of two parts Nāy Jñātas or illustrations and धम्मकहा or sacred narratives. Our Mss. invariab read ह so that our reading is णाहज्झयणइं. This reading is supported by T. al Uttarā. reads नायज्झयणेसु. The change of Sk. त to ह is not unusual, comp नरह for भरत. It also appears that ज्ञात or न्याय constituted at one time an ind pendent work of the Canon to which a small section of धम्मकहा might ha been added later. The present text of the नायाधम्मकहाओ in the Śvetāmba Canon contains nineteen sections called नायs and are named as :

उक्खित्तनाए सघाडे अण्डे कुम्मे यं सेलए ।
तुम्बे य रोहिणी मल्ली मायंदी चन्दिमा इय ॥१॥
दावद्दवे उदगनाए मण्डुक्के तेयली इय ।
नन्दिफले अवरकङ्का आइन्ने सुंसु पुण्डरिए ॥२॥
—Devendra on Uttara. XXXI. 14.

It appears that in the Digambara tradition there was also a book of the sacred canon called नाह or णाह; it contained nineteen lessons as in the Śvetāmbara tradition, but the names of the Nāhas with the Digambaras had a different order as can be seen from the list given below :—

1. उक्कोडणाग constituted the first अज्झयण. The story as given in T. is as follows :—उक्कोडणाग श्वेतहस्ती । अस्य कथा । उत्तरापथे कनकपुरे राजा कनको, महाराज्ञी कनका । पुत्रो नागकुमार. तपो गृहीत्वा विहरमाण अटव्या दावानलेन दह्यमानः समाधिना मृत्वा अच्युतेन्द्रो जातः । तदर्धदग्धकलेवर दृष्ट्वा तुङ्गभद्रो नाम तत्रत्यो भिल्लो जातपश्चात्तापो मृत्वा तत्रैव श्वेतगजो जातः । सोऽच्युतेन्द्रेण जिनधर्मं ग्राहितः पुनर्दावानलेन दह्यमान शशक स्वपादतले स्थितं रक्षित्वा (दह्य) मानोऽपि दृढव्रतो भूत्वा मृत्वा देवो जातः If we compare this narrative with the one in the first ज्ञात called उत्क्षिप्तज्ञात of the Śvetāmba.a version, we shall see that there is no reference there to a Bhilla being taught by अच्युतेन्द्र, although there is agreement in that the elephant saved the life of a rabbit that crept under his foot It thus appears that the Digambara version of the narrative may have been different from the Śvetāmbara one.

2. कुम्म—This is second in the Digambara tradition, but fourth in the Śvetāmbara one. T. gives the narrative as follows :—कुम्म कूर्माख्यानम् । यथा कूर्मेण मुखचरणसंकोचं कृत्वात्मनो ब्राह्मणामरणं निवारितं तथा मुनिभिरपि पञ्चेन्द्रियसङ्कुचितैर्मरणपरंपरा निवारयितव्या.

3. अण्ड—This is the third ज्ञात in both the versions. T. says :—अण्डज-कथा पञ्चप्रकारा । तद्यथा कुक्कुटकथा माताप्येका पिताप्येक' इति । तापसपल्लिकास्थितशुककथा । चारणा-स्यव्याकरणवेदकशुककथा । अगन्धनसर्पकथा । हंसयूथबन्धनमोचक कथा In the Śvetāmbara version we get only one story of the eggs of a peahen and not five as T. seems to indicate.

4. रोहिणी—This is the seventh story in the Śvetāmbara version while it is fourth in the Digambara one. T. reads . सुपुत्रबलदेवेन सह रोहिणी तिष्ठतीति लोकप्रवादं श्रुत्वा रोहिण्या भणितं यद्यसौ शुद्धा तदा यमुनानदी शौरिपुरं वेष्टित्वा पूर्वाभिमुखं वहत्विति । तन्माहात्म्यात्तथैव जातम् । The story in the ज्ञाताधर्मकथा is altogether different.

5. सेस—This seems to correspond to सेलए which is the fifth narrative in the Śvetāmbara version. T. reads : शेषे शिष्यकथा यथा चेलिणीपुत्रवारिषेणप्रतिबोधितः पुष्पडालः. The story in the ज्ञाताधर्मकथा is altogether different.

6. तुंब (and not इंब as read in foot-notes)—This is the sixth story in both the versions. T. reads : तुम्बकथा रोषेण दत्तकटुककुभोजनमुनिकथा. The story in the ज्ञाताधर्मकथा is different as can be seen from its summary in the com which runs as follows :—

जह मिउलेवालित्तं गरुयं तुम्बं अहो वयइ एवं ।
आसवकयकम्मगुरु जीवा वच्चन्ति अहरगयं ॥१॥
त चेव्व तव्विमुक्कं जलोवरिं ठाइ जायलहुभावं ।
जह तह कम्मविमुक्का लोयग्गपइट्ठिया होन्ति ॥२॥

7. सघाद—This is called संघाड and is the second in the Śvetāmb version. T. reads :—संघादे । अस्य कथा । कौशाम्ब्या नगर्यामिन्द्रदत्तादयो द्वात्रिंशदिभ्याः, ते समुद्रदत्तादयो द्वात्रिंशत्पुत्राः परस्परमित्रत्वमुपागताः । सम्यग्दृष्टयस्ते केवलिसमीपे स्वल्पं निजजीवितं ज्ञात्वा तपो गृहीत्वा यमुनातीरे पादोपयान (पादपोपगमन ?) मरणेन स्थिताः । अतिवृष्टौ जातायां [illegible] यमुनामध्ये सर्वेऽपि ते पातिताः । परमसमाधिना कालं कृत्वा स्वर्गं गताः The narrative in ज्ञाताधर्मकथा is altogether different from the above.

8. मादंगि—It appears that मायन्दी which is the ninth story in the Śvetāmbara version should be the counterpart of मादंगि of the Digambara version. T. seems to make मादंगिमल्लि as one narrative which would however reduce the number of narratives to eighteen. T. reads : मादंगिमल्लिकथा [illegible] वज्रमुष्टिमहाभटभार्यया मंगि (मादंगि ?) नामाया. मल्लिपुष्पमालाभ्यन्तरस्थितसर्पदष्टायाः कथा. narratives of the Śvetāmbaras and the Digambaras do not at all agree.

9. मल्लि—This is the eighth narrative in the ज्ञाताधर्मकथा. For remarks see above.

10. चंदिमा—This is the tenth narrative in both the versions. T. says चंदिमा चन्द्रावधकथा (चन्द्रवृद्धिकथा). Perhaps both the versions give the same narrative.

11. तावद्दव—The eleventh narrative in the Śvetāmbara version is दावद्दव which is the name of a tree in that version. T. however seems to mean a different story. T. reads : तावद्दव तोपद्रवदेशोत्पन्नघोटकहरणसगरचक्रवर्तिकथा.

12. तिका—It appears that this तिका should correspond with तेयली which is the fourteenth story is the ज्ञाताधर्मकथा. T. reads : तिका [illegible] कर्कण्डमहाराजकृतच्छत्रे ध्वजांकुशदण्डकथा. The Śvetāmbara version of तेयली does not seem to agree with the above.

13. तडाया—This seems to correspond to दद्दुर which is the thirteenth story is the Śvetāmbara version. T. reads : तडाया [illegible] गन्धर्वारिघनकथितकथा. This has no correspondence with दद्दुर of the Śvetāmbara version.

14. किन्न (आकीर्ण ?)—This seems to be आइण्ण of the Śvetāmbara version which is the seventeenth story there. T. reads : आहिमर्दनस्थितकर्षकपुरुषसत्यकथा. This story also does not seem to have any correspondence with the Śvetāmbara version.

15. सुसुकेय—This should correspond with सुंसुमा of the Śvetāmbara version which is the eighteenth story there. T reads : आराधनाकथितसुंसुमारव्रहनिक्षिप्तपाणकथा. There seems to be agreement between the two versions.

16. अवरकंके—This is called अवरकंका in the Śvetāmbara version where also it is the sixteenth narrative. T. reads : अवरककनामपत्तनोत्पन्नजनचोरकथा. There is mention of the town of अवरकंका in the Śvetāmbara version, but beyond this there seems to be no nothing common between the stories in the two versions.

17. नदिफलं—This is called the same in the Śvetāmbara version but there it is the fifteenth story. T. reads : अटव्या स्थितबुभुक्षापीडितधन्वन्तरिविश्वानुलोमभृत्यानां किंपाकफलकथा. The narrative seems to be similar in both the versions.

18. उदगनाह—This seems to correspond to उदगनाअ of the Śvetāmbara version which is the twelfth story there. T. reads : उदगनाह उदकनाथ (?) कथा यथा राजामात्यसमक्षगडुककथा. The story seems to be similar in both the versions.

19. पुडरिगो य—This is the last story in both the versions. T. reads : पुडरिगो य पुण्डरीकराजपुण्याः कथा. The Śvetāmbara version seems to be different from the above as will be seen from the extract from the com.

वाससहस्सं पि जई काऊणं संजमं सुविउलं पि ।
अन्ते किलिट्ठभावो न विसुज्झइ कण्डरीउ व्व ॥
अप्पेण वि कालेणं के वि जहागहियसीलसामण्णा ।
साहिन्ति निययकज्जं पुण्डरीयमहारिसि व्व ॥

T. adds . अथवा—गुण जीवा प(?)जत्तीपाणासायामभाणा उ य ।
एउणवीसा एदे णाहज्झयणा मुणेयव्वा ॥
अथवा—नव केवललद्धीओ कम्मक्खयजं जं हवन्ति दस चेव ।
णाहज्झयणा एए एउणवीसा वियाणेहि ॥

कर्मक्षयजाः घातिकर्मक्षयजा. दशातिशयाः It is clear that the names of the अज्झयणs agree in the two versions largely, but their contents seem to differ widely. Of course this is a mere hypothesis based upon somewhat imperfect evidence of T.

(20) वीसविहइं असमाहीठाणइं—Twenty types or causes of असमाधि, absence of transquility of mind. These twenty causes are given in Devendra's com. as follows :—

1. दवदवचारी–दुयं दुयं वच्चन्तो इहेव अप्पाणं पवडणाइणा अन्ने य सत्ते वावायणाइणा असमाहीए जोयइ, परलोगे य अप्पयं सत्तवहजणियकम्मुणा असमाहीए जोयइ.

2 अपमज्जिए ठाणनिसीयणाइ करेइ.

3. दुप्पमज्जिए ठाणनिसीयणाइ करेइ.

4. अइरित्ताए सेज्जाए आसणे वा निवसइ.

5. राइणिए परिभवइ.

6 थेरोवघाई–सीलाइदोसेहिं थेरे उवहणइ त्ति वुत्तं भवइ.

7. भूओवघाई–अणट्ठाए एगिन्दियाइए उवहणइ त्ति वुत्तं भवइ.

8. मुहुत्ते मुहुत्ते संजलइ.

9. सइं कुद्धो य अच्चन्तकुद्धो हवइ.

10. पिट्ठिमंसिए हवइ.

11. अभिक्खणमोहारिणिं भासइ जहा दासो तुमं चोरो व त्ति.

12. नवाइं अहिगरणाइं करेइ.

13. उवसन्ताणि य उईरेइ

14. ससरक्खपाए अथंडिलाओ थण्डिलं संकमइ, ससरक्खेहिं वा हत्थेहिं भिक्खं गेण्हइ.

15. अकाले सज्झायं करेइ

16. असंखडसद्दं करेइ राईए वा महया सद्देण उल्लवइ.

17. कलहं करेइ, तं वा करइ जेण कलहो हवइ.

18. तारिसं करेइ भासइ वा जेण सव्वो गणो झञ्झविओ अच्छइ.

19. सूरोदयाओ अत्थमणं जाव भुञ्जइ.

20. एसणासमिइं न पालेइ.

T. also gives a similar list of twenty causes, but the text is very corrupt.

(21) एक्कवीस सवल वि, i.e. twentyone impurities or impure and sinful acts (शवल). They are given by Devendra as :—

तं जह उ (१) हत्थकम्मं कुव्वन्ते (२) मेहुणं हु सेवन्ते ।
(३) राइं च भुञ्जमाणे (४) आहाकम्मं च भुञ्जन्ते ॥१॥
(५) तत्तो य रायपिण्डं (६) कीयं (७) पामिच्च (८) अभिहड (९) अछेज्जं ।
(१०) भुञ्जन्ते सबले ऊ पच्चक्खियऽभिक्ख भुञ्जन्ते ॥२॥
(११) छम्मासब्भन्तरओ गणा गणं संकमं करिन्ते य ।
(१२) मासब्भन्तर तिण्णि य दगलेवा ऊ करेमाणे ॥३॥
मासब्भन्तरओ च्चिय माइट्ठाणाइं तिण्णि कुणमाणे ।
(१३) पाणाइवायाउट्टि कुव्वन्ते (१४) मुसं वयन्ते य ॥४॥
(१५) गिण्हन्ते य अदिन्नं (१६) आउट्टि तह अणन्तरहियाए ।
पुढवीए ठाण सेज्जा निसीहियं वा वि चेएइ ॥५॥
(१७) एवं ससिणिद्धाए ससरक्खाए चित्तमन्तसिललेलू ।
कोलावासपइट्ठा कोलघुणा तेसि आवासो ॥६॥
(१८) सण्डसपाणसबीए जाव उ संताणए भवे तहियं ।
ठाणाइ चेयमाणे सबले आउट्टियाए उ ॥७॥

(१९) आउट्टि मूलकन्दे पुप्फे य फले य बीयहरिए य ।
भुञ्जन्ते सबले ऊ (२०) तहेव संवच्छरस्सन्तो ॥८॥
दस दगलेवे कुव्वं तह माइट्ठाण दस य वरिसन्तो ।
(२१) आउट्टिय सीओदगवग्घारियहत्थमत्ते य ॥९॥
दव्वीइ भायणेण य दिज्जन्तं भत्तपाण घेत्तूण ।
भुञ्जइ सबलो एसो इगवीसो होइ नायव्वो ॥१०॥

(22) सहिवि दुवीस दुसज्झ परीसह, having borne twenty-two unpleasant contacts, viz., क्षुत्, पिपासा etc. For details see तत्त्वार्थाधिगमसूत्र IX. 9.

(23) तेवीस वि सुत्तयडइं, i. e. twenty-three chapters of the सूत्रकृताङ्ग, the second Aṅga of the Canon of the Jains, beginning with समयाध्ययन and so forth. T. reads . ससमए वेदालिज्जोए उवसग्गं इत्थिपरिणामे निरयन्तर वीरथुदी कुसीलपरिभासिए धम्मो य अग्गमग्गे समसरणं तिकालागन्थसाहयए (?) आदा तदित्था (?) पुडरीको वीरियट्ठाणे पयआराहेयपरिणामे पच्चक्खाण अणगारगुणकित्ती सुद अत्थ णालन्दे सुदयडज्झयणाणि तेवीसं द्वितीयाङ्गश्रुतवर्णनाधिकाराश्च. It we are to trust the text of T. which is admittedly corrupt, the order of adhyayanas in the Digambara version would be different from the Śvetāmbara one.

(24) चउवीस वि जिणतित्थइं—the twentyfour तीर्थ s of the twentyfour Jinas.

(25) पञ्चवीस भावणउ—For details see तत्त्वार्थाधिगम, VII 3-8. T. reads : एकैकस्य परिपालनार्थं वाङ्मनोगुप्तीर्या (?) दानसमित्यादयः पञ्च भावनाः; अथवा, त्रयोदश क्रिया. द्वादश तपांसि च पञ्चविंशतिर्भावनाः.

(26) छव्वीस वि पुहवीउ, the twentysix regions; T. reads : सौधर्मादिमोक्षपर्यन्ता एका (?) पृथ्वी उत्सर्पिण्योर्भरतैरावतयोरवसर्पिण्या शुद्धा नाम पृथ्वी भवति। उत्सर्पिण्या च सैव खारा इत्युच्यते इत्येका पृथ्वी। रत्नप्रभो (?) मौखरभागचित्रादयः (?) पङ्कभागादय. सप्त नरकभूमयः इति षड्विंशति. पृथिव्यः.

(27) सत्तवीस जइगुण, twentyseven vows of a monk, viz., द्वादश भिक्षुप्रतिमाः, अष्टौ प्रवचनमातर, क्रोधमानमायालोभमोहरागद्वेषणाममभावश्च सप्त, T. Devendra however gives a different list :—

वयछक्कमिन्दियाणं च निग्गहो भावकरणसच्चं च ।
खमया विरागया वि य मणमाईणं निरोहो य ॥१॥
कायाण छक्क जोगम्मि जुत्तया वेयणाहियासणया ।
तह मारणन्तियहियासणा य एएऽणगारगुणा ॥२॥

(28) अट्ठवीस पवरायारकप्प—There are twenty-eight (?) मूलगुणs as T. says; but Devendra gives them as . प्रकृष्टः कल्पः यतिव्यवहारो यस्मिन्निति प्रकल्पः, स चेहाचाराङ्गमेव शस्त्रपरिज्ञाद्यष्टाविंशत्यध्ययनात्मकम्.

(29) एउणतीस वि दुक्कियसुत्तइ, twenty-nine books of heretics which they believe to be sacred. T. reads : चित्रकर्मादिसूत्र गणितसूत्रं वैद्यसूत्रं नृत्यसूत्रं गान्धर्वसूत्रं पटहसूत्रं अगदसूत्रं मद्यसूत्रं द्यूतसूत्रं राजनीतिसूत्रं मजुरंगसूत्रं (?) चतुरंगसूत्रं गजतुरगसूत्रं पुरुषस्त्रीगोमहिषगजनाना (?)

लक्ष (लक्षण ?) सूत्राणि अंगं सरं वंजनलक्खणं च छिण्णं वीभोमंसमिणंतरक्खं (?) इत्य ङ्गानि। सूत्राणीति एकोनविंशत्यपसूत्राणि । अथवा

अट्ठारह य पुराणा सडंगविण्णा (विज्जा ?) य लोइयाणं तु ।
बुद्धाइ पंच समया परूवणा जा सुदी लोए ॥१॥

Devendra gives a different list :

अट्ठ निमित्तंगाइं दिव्वुप्पायन्तलिक्खंभौमं च ।
अङ्गं सरं लक्खण वंजणं च तिविहं पुणेक्केक्कं ॥१॥
सुत्तं वित्ती तह वत्तियं च पावसुयमउणतीसविहं ।
गन्धव्व नट्ट वत्थं आउ धणुवेयसंजुत्तं ॥२॥

For still another list see नन्दीसूत्र under मिच्छासुयं.

(30) तीसविहइं मोहट्ठाणइं, thirty causes or types of infatuation. T. reads तथा हि—व्रतविषये पञ्चप्रकारो मोहः । पञ्चप्रकारमनुष्यविषये पञ्चप्रकारमोहः । पञ्चप्रकारमनुष्याः [illegible] मनुष्याः विद्याधरत्रिषष्टिशलाकापुरुषमनुष्याः पञ्चदशकर्मभूमिजचतुर्थकालोत्पन्नमनुष्याः भरतैरावतेषु दुःषमा- दुःषमकालोत्पन्नमनुष्याः समुद्रमध्यद्वीपोत्पन्नकर्णप्रोचरणादि (कर्णप्रावरण ?) मनुष्याश्च । [illegible] संवरनिर्जराबन्धमोक्षपुण्यपापाना स्वरूपे नवप्रकारो मोहः । कर्मबन्धनस्वरूपे एको मोहः । [illegible] एको मोहः । दर्शनस्वरूपे एको मोहः । नैगमसंग्रहव्यवहारऋजुसूत्रशब्दसमभिरूढैवंभूतानां सप्तनयानां [illegible] सप्त मोहाः । व्रतविनाशविषये एको मोहः ॥ अथवा—क्षेत्ररत्नस्वरूपा (?) सुव [illegible] दण्डलक्षणबाह्यग्रन्थविषयो दशप्रकारो मोहः । मिथ्यात्ववेदरागादिलक्षणाभ्यन्तरग्रन्थविषयश्चतुर्दशप्रकारः पञ्चेन्द्रियदुष्टमनोविषयः षट्प्रकारो मोहः. Devendra's list is altogether different from t[illegible] for which see his com.

(31) एक्कतीस मलवाय धुणंतें, shaking off the thirty-one types of impure a[illegible] They are given in T. as follows :—तथाहि ज्ञानावरणीयं पञ्चप्रकारं दर्शनावरणीयं नवधा वेदनीय सातासातरूपतया द्विभेदं मोहनीयं दर्शनमोहनीयचारित्रमोहनीयभेदाद् द्विप्रकारं आयुश्चतुर्भेदं शुभमशुभं च गोत्रमुच्चैः (?) अन्तरायाः पञ्चप्रकारा..

(32) जिणुवएस बत्तीस मुणन्तें, meditating upon thirty-two preachings of t[illegible] Jinas. They are given in T. as follows :—

आवासयंङ्गपुव्वा छव्वारसचोद्दसा य ते कमसो ।
वत्तीसमिमे नियमा जिणोवएसा मुणेयव्वा ॥१॥

□

अँगरेजी टिप्पणियोंका हिन्दी अनुवाद

I

[कवि ऋषभनाथकी वन्दना करता है, कि जो तीर्थंकरोंमें प्रथम है, तथा सरस्वती भी, जो विद्याकी देवी है। वह महापुराणकी रचना करनेका इरादा प्रकट करता है। परिचयके बहाने कवि बताता है कि सिद्धार्थ संवत् (881 शक संवत्; अर्थात् 959 ईसवी सदी) में एक समय, वह मेपाडी (मान्यखेट आधुनिक मलखेड) के बाह्य उद्यानमें पहुँचा और लम्बा रास्ता पार करनेके कारण थका हुआ वह, वहाँ एक गुफामें ठहर गया। नगरके दो आदमी अन्नया एवं इन्दरैया उसके पास पहुँचे और उन्होंने उससे मन्त्री भरतसे भेंट करनेकी प्रार्थना की जो उसका अच्छा स्वागत करेगा। पहले-पहल तो कविने ऐसा करनेमें अपनी अनिच्छा प्रकट की क्योंकि उसका इस विषयमें राजा भैरव (वीर राजा) के दरबारका कड़ुवा अनुभव था। परन्तु उक्त आदमियोंने कविको विश्वास दिलाया कि भरत एकदम भिन्न आदमी हैं और वह उसकी अच्छी आवभगत करेगा। फलस्वरूप कविने भरतसे भेंट की। उसका अच्छा स्वागत किया गया और वह कुछ समयके लिए वहाँ रहा। तब भरतने कविसे महापुराणके लिखनेकी प्रार्थना की। क्योंकि इससे वह अपनी कवित्व-शक्तिका सही उपयोग कर सकता है, उसने उन्हें सब प्रकार की सहायता देनेका प्रतिवेदन किया। पहले तो कविने अपनी अनिच्छा व्यक्त की क्योंकि वह उन दुष्ट लोगोंसे भयभीत था जो अच्छी रचनाकी भी आलोचना करते हैं। भरतने उनपर ध्यान न देनेकी कविसे प्रार्थना की। तब कविने विनयपूर्वक कहा कि वह महापुराणकी रचना करनेके लिए योग्य है, यद्यपि वह महान् दार्शनिक सम्प्रदायों और अतीतके महान् कवियोंकी रचनाओं, व्याकरण अलंकार और छन्द-सम्बन्धी रचनाओंसे अनभिज्ञ नहीं है, फिर भी महापुराणमें वर्णित महान् व्यक्तित्वोंके प्रति भक्तिके कारण वह महापुराणकी रचना करेगा। इसके बाद कवि गोमुख यक्ष, ऋषभनाथ और पद्मावती यक्षिणी (विद्याकी देवी) से सहायताकी याचना करता है।

कवि महापुराणकी रचना प्रारम्भ करता है: जम्बूद्वीपमें मगध देश है, जिसकी राजधानी राजगृह है। एक दिन जब राजा श्रेणिक मन्त्रियोंके साथ दरबारमें सिंहासनपर बैठा था, तो उद्यानपालने आकर सूचना दी कि भगवान् महावीर नगरके बाहर उद्यानमें ठहरे हुए हैं। राजा तुरन्त सिंहासनसे उठा, उसने वन्दना की तथा उनको गौरवान्वित करनेवाली प्रार्थना की।]

पृष्ठ 418

I. कवि ऋषभनाथकी वन्दना करता है कि जो प्रथम तीर्थंकर है।

1. *3a*. अच्छी तरह परीक्षा कर, अच्छी तरह जानकर; T संसारके जड़-चेतन विभागको अच्छी तरह जानते हुए। *3b* दिव्यतनु निस्वेदत्व (पसीनेसे रहित) आदि अतिशयोंसे मुक्त शरीरवाले। T जिनेन्द्र भगवान्‌का शरीर दिव्य होता है। उनके शरीरमें दस अतिशय होते हैं जैसे पसीना नहीं आना इत्यादि। इस प्रकार जिनेन्द्र भगवान्‌के चौंतीस अतिशय होते हैं। देखिए अभिधान चिन्तामणि I. 57-64। इनमें-से जिनेन्द्रके शरीरमें दस विशेष होते हैं। देखिए IV. 2. *4a* जिन्होंने शाश्वत पदरूपी नगर (मोक्ष) का पथ (रत्नत्रय) प्रकट किया है, ऐसे जिनेन्द्र भगवान्। T., वह जिन्होंने मोक्षको ले जानेवाले पथका उपदेश दिया है जिसे

मुक्ति या सिद्धि कहते हैं। 5a– जो शुभ शील और गुण समूहके निवास गृह हैं। 10a– जिन्होंने आकाशको रंग-बिरंगा कर दिया है। इन्द्रने स्वर्गसे जो पुष्प बरसाये उनसे आकाश रंग-बिरंगा हो गया। 15b– यहाँ कवि प्रसंगवश छन्दका नाम बताता है, जो है मात्रासम। 17 जिसके तीर्थ में—

2. कवि पाँच परमेष्ठियोंकी वन्दना करता है—तीर्थ, सिद्ध, आचार्य, आध्याय और साधु, और विद्याकी देवी सरस्वतीसे सहायताकी याचना करता है।

2 3b कोमल पद (पद = चरण और पैर); कवि विद्याकी देवीका वर्णन करता है; वह एक सुन्दर नारीके प्रतीकके रूपमें। इसीलिए, जो उपमाएँ प्रयुक्त की गयी हैं वे सरस्वती और स्त्रीपर लागू होती हैं। 5a अपनी इच्छासे चलती है (स्त्री) सरस्वती भी छन्दसे चलती है। 6a चौदह पूर्वोसे युक्त। T सरस्वती चौदह पूर्व ग्रन्थ रखती है, जो जैन वाङ्गमयके प्राचीन ग्रन्थ हैं; जो अब अप्राप्य हैं। सरस्वती द्वादश अंगोसे युक्त है। द्वादश अंग जैनोके प्राचीन आकर ग्रन्थ हैं, जैसे आचारांग इत्यादि। सरस्वती अंगोसे उपयुक्त हैं।

3. 3 a-b हम जानते हैं कि राष्ट्रकूट-राजाके कई विरुद थे। पुष्पदन्तकी रचनाओंमें इसी प्रकारके कुछ और नाम हैं। जैसे शुभतुंग, वल्लभदेव।

पृष्ठ 419

तुडिगु = कन्नडमूलक शब्द प्रतीत होता है। 7b = जहाँ आम वृक्षोके ऊपर तोते इकट्ठे हो रहे हैं ? खण्ड = पुष्पदन्त। अहिमाणमेरु = अभिमानमेरु = कविका उपनाम। 14 = वरि, वर = यह अच्छा है; 15 = सूर्योदय न देखें ?

4. राज्यकी बुराइयोकी निन्दा।

4. 3 a सप्तागराज्य-स्वामी, अमात्य सुहृत, कोश, राष्ट्र, दुर्ग और बल। 4a विषके साथ, जिसका जन्म हुआ।

5. भरत (मन्त्री) की प्रशंसा।

5. 3 a प्राकृति कवियोके काव्यरसका आस्वादन करनेवाला। इस उपमाका विशेष महत्त्व है। सम्भवतः इसलिए कि उस समय प्राकृत-काव्यकी विशेष प्रशंसा नही की जाती थी या वह समझा नही जाता था, और सम्भवत. उसकी उपेक्षा की जाती थी।

6. भरतके भवनमें कविका स्वागत। और भरतका कविसे महापुराणकी रचनाका प्रस्ताव।

6. 9 a देवीसुत = भरत।

7. कवि महापुराण लिखनेकी अपनी असमर्थता व्यक्त करता है क्योंकि दुर्जन अच्छी रचनाओंकी भी आलोचना करते हैं जैसे प्रवरसेनके सेतुबन्धकी।

7. 3 a उपमाओकी यह शृंखला दोहरे अर्थ रखती है, जो घनदिन और दुर्जनपर एक साथ घटित होते हैं।

8. भरत पुष्पदन्तको विश्वास दिलाता है कि दुर्जन मनुष्य हमेशा वैसे होते हैं, परन्तु बुद्धिमान् व्यक्तिको उसपर ध्यान नही देना चाहिए।

8. 7b कुत्तेको पूर्णचन्द्रपर भौंकने दो, काव्यपिसल्ल = पुष्पदन्तका दूसरा उपनाम। काव्य पिशाच/काव्य राक्षस।

9. आत्मविनयके व्याजसे कवि बताता है कि महापुराणके रचनेकी प्रतिभा उसमें नही है, फिर भी आदरणीय व्यक्तियोके बहाने वह इस काममें प्रवृत्त हुआ है।

9. 1*a* इन लेखकोंके लिए पृष्ठके नीचे देखिए, और साथ ही णायकुमार चरिउका XXIII। 13 *b* कुड़वके द्वारा समुद्रको कौन माप सकता है ? 17 परोक्षमें मुझे क्यों कुछ कहना चाहिए। मैं लोगोंको अपनी रचनाकी कमियोंको बतानेकी खुली चुनौती देता हूँ।

पृष्ठ 420

10. कवि गोमुख यक्ष और योगिनी चक्रेश्वरीसे सहायताकी प्रार्थना करता है। जो (यक्ष) ऋषभ जिनके शासनदेवता हैं और (चक्रेश्वरी) विद्याकी देवी है।

10. 14 कौन मेरी रचनापर भौंकता है ?

11. मगध देशकी स्थितिका वर्णन।

12 राजगृहका वर्णन, जो मगधकी राजधानी है।

12. 9*b* जिसमें ग्वालिनोंके द्वारा मथानीसे मन्थन करते हुए शब्द हो रहा है। ग्वालिनोंकी यह आदत होती हैं कि वे दही बिलोते समय मधुर गीत गाती हैं।

13. राजगृहके बाह्य उद्यानका वर्णन।

13. 11*b* यह सौन्दर्यकी देवीका भण्डारगृह।

14. राजगृह नगरका वर्णन।

14. 9*b* जो कुशासनके कारण अज्ञानी हैं।

15. राजगृहका वर्णन जारी है।

16. राजा श्रेणिकका वर्णन।

18. राजा श्रेणिकको भगवान् महावीरके आनेकी सूचना मिलती है।

18. 6*b* देवोंके चार निकाय। भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिष्क और वैमानिक। 7*a* चौंतीस अतिशय, अर्हंतोंको चौंतीस अतिशय होते हैं जिनका हेमचन्द्रके अभिधान कोश तथा दूसरे ग्रन्थोंमें वर्णन है। कुमारी जानसनके द्वारा अनूदित त्रिषष्ठीशलाकापुरुषका पृष्ठ 5 देखिए। 9*b* अर्हंतोंके आठ प्रातिहार्य होते हैं, अशोक, सुरपुष्पवृष्टि, दिव्यध्वनि, चामर, सिंहासन, भूमण्डल, दुन्दुभि, और त्रिछत्र। 10 *b* विपुल गिरि राजगृहकी एक छोटी-सी पहाडी है। 15 सन्धिकी अन्तिम पक्तिमें अपना नाम जोड़ता है (पुप्फयन्ततेयाहिय) इस प्रकार यह उसका चिह्न है, और उसकी कई तरहसे व्याख्या की जाती है। ज्यादातर उसका अर्थ सूर्य और चन्द्र होता है। पुष्पदन्तकी समानता कभी पुष्पदशन और कुसुमदशनसे की जाती है। 'भरत' नामका एक अर्थ भारतवर्ष या भरत भी होता है, जो पहले चक्रवर्ती हैं।

II

पृष्ठ 421

[राजा श्रेणिक, महावीरके आगमनका समाचार सुनकर अपने परिवारके साथ उनके दर्शनके लिए जाता है। जिनवरकी वन्दना-भक्तिके बाद राजा, उनके गणधर गौतमसे महापुराणका वर्णन करनेके लिए कहता है। गणधर कहते हैं। तब गौतम, समयविभागका वर्णन करते हुए अपना कथन प्रारम्भ करते हैं, कुलकरों-का और विश्व सभ्यताके प्रति उनके प्रदेयका वर्णन। इन कुलकरोंमें नाभिराजा पहले थे। मरुदेवी उनकी रानी थी। इन्द्रको याद आया कि जिनवरका जन्म कुलकर नाभिराज और मरुदेवीके घर होना है, इसलिए उसने कुबेरको आदेश दिया कि वह अयोध्या नगरीकी रचना करे। वह इतनी समृद्ध और प्रसन्न हो कि जिससे वह जिनवरके जन्मका उचित स्थान सिद्ध हो सके।]

1. 6*b* एक स्त्री, जिसने कुवलय अपने हाथमें ले लिया, यह कुवलय (नीलकमल) की तुलना राजवृत्तिसे की गयी है; राजवृत्ति भी कुवलय (पृथ्वीमण्डल) धारण करती है, तथा शत्रुओंका नाश करती है।

2. 13 जो दूसरोंकी पीड़ा दूर करती है। भुवनरूपी कमलके विकासके लिए सूर्यके समान। जिनवर विश्वको उसी प्रकार प्रसन्न रखते है जिस प्रकार सूर्य कमलको रखता है।

3. 5–11 इन पंक्तियोंमें जिनकी लम्बी उपमा है, कि जिनके कमलके समान चरण, कुबेर और दूसरे देवोंके मुकुटमणियोंकी कान्तिके जलसे धोये जाते है कि जब वे जिनवरके चरणोंमें अपना सिर झुकाते है। 35 आप कृपा कर मुझे पाँचवी गति (मोक्ष) में ले जाइए। सिद्धावस्था = संसारसे मुक्ति। पहली चार गतियाँ है देव, नरक, तिर्यक् और स्वर्ग।

4. 7*a* जिनका आदि और अन्त नही है। कहनेका तात्पर्य है—भावी तीर्थंकरोंकी संख्या अनिश्चित है। 8–9 समयका न आदि है और न अन्त। वह अनिश्चित है। समय, विश्वमे परिवर्तनका सहायक कारण है; इसमें रूप, गन्ध, रंग और सार नही है। समय अपने निश्चयकालमें परिवर्तन द्वारा प्रवर्तन करता है, व्यवहारकाल हमारे दैनिक व्यवहारसे पहचाना जाता है।

5. 3*b* प्रियकारिणीके पुत्र महावीर; जो त्रिशलाके नामसे प्रसिद्ध है। कल्पसूत्र 109 से तुलना कीजिए कि जिसमें प्रीतिकारिणी नाम दिया गया है। 10*a* गुणा किया जाता है।

6. 10*a* विभाजन करने योग्य।

8. उत्सर्पिणी काल, जिसमें शक्ति बढ़ती है, शरीरकी ऊँचाई, क्षमता, ज्ञान, पवित्रता, गम्भीरता और साहस। अवसर्पिणी—इसमें योग्यताएँ क्षीण होती है। 7*b* दश कल्पवृक्ष।

पृष्ठ 422

9. 3*a* प्रतिश्रुति प्रथम कुलकर, जैन पौराणिक कथाके अनुसार। अममके बराबर लम्बाईकी आयु रखनेवाले। अमम (बड़ी संख्या)। दूसरे कुलकर या मनु हैं जो नौ-दसमें वर्णित है—सम्मति, क्षेमंकर, क्षेमन्धर, सीमंकर, सीमन्धर, विमलवाहू, चक्षुष्मान्, यशस्वी, अभिचन्द्र, चन्द्राभ, मरुदेव, प्रसेनजित् और नाभि।

11. 1 प्रथम कुलकरने विश्वकी व्याख्या की, तथा पहली बार उन्होंने सूर्य और चन्द्रमाके कार्योंकी खोज की, जो कि इस समयके पूर्व दूसरे मनुष्योंके द्वारा देखे नही गये थे क्योंकि संसार कल्पवृक्षों द्वारा वितरित प्रकाशसे भरपूर था। दूसरेने नक्षत्रों और ग्रहोंकी खोज की। इसी प्रकार प्रत्येक कुलकरने विश्वमानव सभ्यतामें कुछ न कुछ योगदान दिया। अन्तिम कुलकर नाभिराज थे। उन्होंने बच्चोंके नाल काटनेकी प्रथाकी खोज की। और बादलोंका पता लगाया। धरतीको विभिन्न खाद्यान्नोंसे भर दिया। लोगोंको बुनने और भोजन बनानेकी कला सिखायी। मानव सभ्यताकी भलाईके लिए।

17. 5*b* यह जानकर कि तीर्थंकरका जन्म किसी स्थान विशेषपर होता है, इन्द्र कुबेरको आदेश देता है कि वह सम्पन्न सुन्दर अयोध्या नगरी बनाये जिससे जिनवर जन्म ले सकें।

19 1*a* हेमचन्द्रने अपने व्याकरणमें IV पृष्ठ 422, छुडुको यदिका पर्यायवाची बताया है। परन्तु मैं नही समझता कि छुडु सदैव यदिके अर्थमें प्रयुक्त हो। मेरे विचारमें छुडुका अर्थ 'क्षिप्र' है, जो यहाँ उपयुक्त है। और दूसरे जगह भी। नीचे टिप्पणीमें इसका अर्थ 'यदा' किया गया है, परन्तु मेरे विचारमें यह शुद्ध नही है।

III

[जैन पुराणोंमें जिनके जन्मका वर्णन इतने एकरूप ढंगसे वर्णित है कि कभी-कभी हमें यह सोचनेके लिए विवश होना पड़ता है कि हम इतिहासके बजाय पौराणिक कथामें हैं। जब जिनवरके माता-पिता कृतसंकल्प होते हैं तो इन्द्र कुबेरको सुन्दर नगरीकी रचना करनेका आदेश देता है; जन्म लेनेके पूर्व वह स्वर्गमें जन्म लेते हैं। उनके जन्मके छह माह पूर्व इन्द्र छह देवियाँ भेजता है; वे जिनेन्द्रकी माताके पास आती हैं और सेवाके लिए प्रतीक्षा करती हैं; माँ सोलह सपने देखती है, (श्वेताम्बर परम्पराके अनुसार चौदह) वह अपने स्वामीसे इनका फल पूछती है दूसरे दिन सवेरे। तब पति उसे फल बताता है।

पृष्ठ 423

उसका सार यह है कि माता ऋषभको जन्म देगी। जिन (प्रथम तीर्थंकर ऋषभ, एक सफेद वृषभके रूपमें) गर्भमें जन्म लेते हैं। देव इस घटनामें उपस्थित होते हैं। कुबेरके द्वारा रत्नोंकी वर्षा की जाती है। उचित समयपर जिनका जन्म होता है। इन्द्रके नेतृत्वमें देवता जन्म-स्थानपर आते हैं और प्रार्थना करते हैं, इन्द्र माताको मायावी बालक देता है और जिनको सुमेर पर्वतपर ले जाता है। उन्हें सिंहासनपर स्थापित करता है; उनका जन्माभिषेक किया जाता है। पहाड़के ऊपर बढ़ते हुए अभिषेक जलका सभी वन्दना करते हैं, जिनेन्द्रकी प्रशंसामें इन्द्र कुछ पद्य पढ़ता है, वह उन्हें वापस माता-पिताके पास लाता है; इस घटनाको सामान्यत कल्याण कहा जाता है, खासकर जिन-जन्माभिषेक कल्याण, इन घटनाओंका जिनके जीवनमें एकरस वर्णन किया जाता है। परन्तु पुष्पदन्त अपनी काव्य-प्रतिभासे उसे सजीव विस्तार देते हैं। प्रथम तीर्थंकरके जीवनकी प्रमुख विशेषताएँ हैं]

(I) जन्म-स्थान—अयोध्या

(II) मातापिता—नाभि और मरुदेवी।

(III) धवल वृषभके रूपमें गर्भमें अवतार।

(IV) अवतारतिथि आषाढ़ कृष्णपक्ष द्वितीय, दिन रविवार, उत्तरा नक्षत्र, ब्रह्मयोग।

(V) जन्म-तिथि—चैत्र कृष्ण पक्ष नवमी, उत्तरा नक्षत्र, ब्रह्मयोग।

(VI) नाम—ऋषभ या वृषभ।

4. 9*a* णिवपंगणंति = राजाके प्रांगणमें यद्यपि प्राकृत संयुक्त व्यंजनोंकी अनुमति नहीं देती, फिर भी महापुराणमें बहुत-से संयुक्त व्यंजन मिलते हैं। हेमचन्द्रका IV पृष्ठ 398-99 सिद्ध हेम-व्याकरण देखिए। हमारी पाण्डुलिपियो (G और K) मे र् के साथ संयुक्त व्यंजन हैं, जबकि 'MBP' में नहीं है। इसलिए मैंने G और K को अपने टेक्स्टके प्राचीन रूपको सुरक्षित रखनेवाला सोचा है। इस कारण, और ऋ वाले रूपको रखनेके कारण जैसे मृग, सृय इत्यादि।

5. यह कडवक उन सोलह वस्तुओंके नाम गिनाता है कि जिन्हें जिनेन्द्रकी माता स्वप्नमे देखती है और जो जिनेन्द्रके जन्मका पूर्वाभास देती है। श्वेताम्बर परम्परा दिगम्बर परम्परासे इस अर्थमें है। वह केवल चौदह स्वप्नोंका उल्लेख करती है। कल्पसूत्र 4, and 32-47.

पृष्ठ 424

दिगम्बर परम्पराके अनुसार ये वस्तुएँ हैं—

(1) पर्वतकी ढालको तोड़ता महागज।

(2) जोरसे गर्जन करता हुआ एक वृषभ।

(3) गरजता सिंह।

18. अवहंस = अपभ्रंश।

VI

[एक दिन जब ऋषभनाथ राजसुखोंका भोग कर रहे थे तो इन्द्र उनके बचे हुए कार्यका चिन्तन करता है कि उन्हें इस धरतीको पूर्ण बनाना है, विश्वमें जिनधर्मका उपदेश करना है।

पृष्ठ 429

उन्होंने नीलांजना अप्सरा नृत्य करनेके लिए भेजी। वह आयी, उसने नृत्य किया और वह मर गयी। उसे मृत देखकर जिनको संसारकी क्षणभंगुरताका बोध हुआ।]

2. पोर्टर और चपरासी राजभवनमें जीवन नियन्त्रित करते हैं। कवि उन बहुत-सी बातोंका उल्लेख करता है जो राजाके सामने नहीं की जानी चाहिए।

5. स्पष्ट है।

पृष्ठ 430

स्पष्ट है।

पृष्ठ 431

स्पष्ट है।

पृष्ठ 432

VII

[नीलांजनाकी मृत्युके कारण ऋषभका दृष्टिकोण बदल गया। उन्होंने सोचा कि संसारमें प्रत्येक वस्तु क्षणभंगुर है, असहाय और एकान्त है। आत्माको जन्म और मृत्युकी परम्परामें-से जाना पड़ता है। अनुभव दुःखमें गुजरना होता है। पुण्य-पाप करता है और संसारमें परिभ्रमण करता है। इसलिए यदि आत्मा अपना भला चाहता है, तो उसे सबसे पहले पाप-प्रवृत्तियाँ छोड़नी चाहिए। इससे उसकी पूर्व संचित परम्परा नहीं बढ़ेगी। उसे तप करना चाहिए जिससे उसके पहलेके कर्मकी निर्जरा होगी। इस प्रकार विचार करते हुए उन्होंने तपका निश्चय कर लिया। इस अवसरपर देव आये और उन्होंने उत्साह बढ़ाया और संसारमें जैनधर्मके प्रसारकी प्रेरणा दी। ऋषभने भरतको अयोध्याकी गद्दीपर बैठाया, उन्होंने पोदनपुर बाहुबलिको दिया। वह पद्मासनमें स्थित हो गये और उन्होंने संसारसे सम्बन्ध तोड़ लिया। माता-पिताने इसका अनुकरण किया। देवताओंने तपकल्याण मनाया। वह वनमें तप करने चले गये। पत्नी और पुत्रोंने भी उनका अनुकरण किया। उन्होंने केश लौंच किया। उसने हीरोंकी तश्तरीमें उन्हें रखा तथा उन्हें क्षीर समुद्रमें विसर्जित किया। पाँच महाव्रत धारण करके वह दिगम्बर हो गये।]

1. 11 जिस मनुष्यपर स्त्रियाँ नमक उतारती हैं अर्थात् वह मनुष्य, जिसे स्त्रियाँ इतना प्यार करती हैं। इसमें उस प्रथाका सन्दर्भ है जिसमें स्त्रियाँ मनुष्यको कितना प्यार करती हैं। वह इस प्रथाको भी सन्दर्भित करती है जिसमें मृत शरीरको नीचे उतारकर लकड़ियोंपर रख दिया जाता है।

2. पन्द्रह कर्मभूमियोंमें उत्पन्न। मनुष्य अपने कर्मके अनुसार, मृत्युके बाद कोई भी स्थिति प्राप्त कर सकता है।

7. ब्राह्मण यदि पशुओंका मांस खाकर, शराब पीकर मोक्ष पा सकता है तो धर्मकी क्या आवश्यकता है। शिकारीकी प्रतीक्षा करो।

पृष्ठ 433

10. यह मानव-जीवन यदि श्मशानमें जाता है तो जाये, जैसा कि हम मराठीमें कहते हैं 'मसणात' जावो। मैं मानव-जीवनको तिनकेके बराबर समझता हूँ।

11. 1a—तिप्पयार संठाणयं शब्द तीन भागोमें विभक्त है, प्रत्येकका अलग-अलग रूप है; नरकमें राक्षसो और प्राणियोके क्षेत्रका आकार 'शराव' जैसा है, जो उलटा हुआ है; मनुष्यो और छोटे प्राणियोके क्षेत्रका आकार वज्रमणिका है। देवोके क्षेत्रका आकार मृदंगका है।

9a मुक्त आत्माओके क्षेत्रका स्थान छत्रके आकारका है।

14. यदि मनुष्य कर्मोंके आस्रवको रोक देता है और सम्यक् आचरण करता है, तो नये कर्म आत्मामें नही आते, और जो कर्म पूर्वसंचित है, वे शरीर कष्टसे नष्ट हो जाते हैं और उन्हें कोई प्रश्रय नही मिलता।

15. मैं दिगम्बर मुनि बनूँगा। इस शब्दका प्रभावशाली और स्पष्ट वर्णन, यहाँ और २६वें कड़वकमें है।

15b नीचे और अन्य स्थानोके वर्णनसे स्पष्ट है कि इस ग्रन्थकी रचना दिगम्बर जैन मुनिके दृष्टिकोणसे हुई है।

16 12-13 जिस प्रकार तालाब सूर्यकी किरणोंसे सूख जाता है, और उसमें रहनेवाला पानी भी सूख जाता है उसमें नये पानीके आनेका स्रोत नही रहता और तालाबका बनना रुक जाता है उसी प्रकार पूर्वमें अनेक जन्मोके किये गये कर्म इन्द्रियोंके सयमसे रुक जाते हैं [वह कर्मोंके आगमनके ज्ञानको रोक देता है, और तपस्याके द्वारा (जो मुनियोंके लिए निर्धारित है)]

26. यह अवतरण निष्क्रमणकी तिथिका सूचक है जो उत्तराषाढा नक्षत्र है।

पृष्ठ 434

VIII

[इसके बाद ऋषभनाथने मुनिकी तपस्या प्रारम्भ की। और उनके लिए निर्धारित आचरणके नियमोका पालन किया। राजा कच्छ और महाकच्छके बेटे नमि और विनमि, तथा ऋषभनाथके साले उनके पास जंगलमें आये, तथा उनकी स्तुति करनेके बाद वे बोले कि ऋषभने उन्हें धरतीका कोई भाग नही दिया जबकि अपने पुत्रोको सारी धरती बाँट दी। दरअसल, मुनिके रूपमें वह कोई उत्तर नहीं दे सकते थे, क्योकि संसारके कार्योंका उन्होने पूर्णत: परित्याग कर दिया था। इस अवसरपर नागोंके राजा धरणेन्द्रको कम्पन हुआ और अवधिज्ञानसे उसने जान लिया कि ऋषभ इस समय कठिन स्थितिमें हैं। इसलिए वह उनके पास आया; उसने नमि और विनमिको उनके पास खड़ा देखा। उसने उन लोगोंसे कहा—"ऋषभने दीक्षा लेनेके पहले उससे कहा था कि जब वे (नमि-विनमि) मेरे पास आयें और धरतीका हिस्सा माँगें, तब धरणेन्द्र उन्हें विजयार्ध पर्वतकी उत्तर-दक्षिण श्रेणियाँ दे दें। तब धरणेन्द्रने उन्हें विजयार्धपर स्थित कई नगरियाँ दिखलायी और इस प्रकार धरणेन्द्र ऋषभ जिनको कठिन स्थितिसे बचाकर घर चला गया।]

1. 9a मैं सोचता हूँ सिमिर दिविरसे बना है। अर्थ है सेनाका कैम्प, परन्तु यहाँ सेनाके लिए प्रयुक्त है।

2. 1-4 विसयवसा—वे बडे राजा (योद्धा) जो ऋषभके साथ संन्यस्त हुए थे । कुछ ही दिनोंमें कठोर तपस्या नही सह सकनेके कारण खण्डित होने लगे, और भयकर सिहों, तेन्दुओं और शरभोंसे भयभीत हो उठे। भूख और प्यास की वेदनाने उन्हे अतिक्रान्त कर लिया ।

7 ६ से २०वी पंक्ति तक दामयमक अथवा शृंखलायमक। यह दुवईका लम्बा युग्म है। जो इस रचनामें दुर्लभ नहीं है। यद्यपि साधारणतः दुवई, कडवकके प्रारम्भमें आती है। यह अवतरण धरणेन्द्रकी प्रार्थनाका वर्णन करता है।

पृष्ठ 435

IX

[ऋषभ तब छह् माह तपस्यामें व्यतीत करते है और अपने मनकी सारी गतिविधियाँ पूर्णतः नियन्त्रित कर लेते है। उन्होने सोचा कि भोजन कम करना पवित्रता प्राप्त करनेका सबसे उत्तम कारण है; इसलिए उन्होने वह आहार ग्रहण करना स्वीकार कर लिया जो छयालीस प्रकारके दोषोंसे मुक्त हो—और जो नौ प्रकारके दृष्टिकोणोसे पवित्र हो। उनके जीवनका सिद्धान्त था कि आहार शरीरको समाप्त कर देता है। भोजनको कम करना तपस्याका अंग है, यह इन्द्रिय चेतनाका नियन्त्रण करता है, और जब इन्द्रिय चेतना समाप्त हो जाती है तो सारी प्रवृत्तियाँ मुक्तिकी ओर ले जाती है, इसलिए वे जीवनके इन नियमोका पालन करते हैं। धरतीपर विहार करते हुए जब वे गयपुर आये, जहाँ कि बाहुबलिका पुत्र सोमप्रभ राजा था। उसका छोटा भाई श्रेयास था। उसने पूर्व रात्रिमें स्वप्नमें सूर्य-चन्द्रमा आदि चीजें देखी। उसने यह स्वप्न अपने भाईको बताया। इस स्वप्न दर्शन का फल यह था—कि कोई महान् आदमी उनके घर आयेगा। वास्तवमें दूसरे दिन ऋषभ उनके घर आये, आहार ग्रहण करनेके लिए। तब राजा श्रेयासने उनका स्वागत किया और उन्हें इक्षुरस का आहार दिया, जो उन्होंने स्वीकार कर लिया। तब आकाशमें दिव्यवाणी हुई कि कितना उत्तम दान है? उसके बाद ऋषभ अपने विहारपर चले गये, और समयके अन्तरालमें उन्होंने चौथा ज्ञान (मनःपर्ययज्ञान) प्राप्त कर लिया, वह ज्ञान जो दूसरोके मनकी बात जानता है। तब वह नन्दन वनकी ओर गये। वहाँ वटवृक्षके नीचे उन्होने गुणस्थानोंको प्राप्त किया, और उचित समयमे केवलज्ञान प्राप्त किया, जिससे वह समस्त विश्वको देखनेमें समर्थ हो गये। उस अवसरपर, इस घटनाका महोत्सव मनानेके लिए देव आये। कुबेरने समवसरणकी रचना की। बत्तीसों इन्द्रोंने अपनी उपस्थितिसे इसका महत्त्व बढ़ाया। फिर उन्होने जिनकी प्रार्थना की।]

1.7 जैन साधुको जो आहार दिया जाये, वह आधाकर्म आदि दोषोंसे मुक्त होना चाहिए।

पृष्ठ 437

X

[इन्द्र और दूसरे देव केवलज्ञान प्राप्त करनेपर ऋषभ जिनकी स्तुति करते है, जिनके चौवीस अतिशय और है, जो केवलज्ञानके कारण उन्हें उत्पन्न होते है। इस महत्त्वपूर्ण अवसरपर, भरतके पास यह खबर पहुँची कि उसके पिताने केवलज्ञान प्राप्त किया है, आयुधशालामें चक्ररत्न प्रकट हुआ है; और यह कि रानीको पुत्र हुआ है; थोडी देरके लिए भरत दुविधामें पड गया कि वह पहले पुत्रको देखे, या चक्रको या पिताको। परन्तु अन्तमें उसने पिताको देखनेका निश्चय किया। वह उनके पास गया, प्रार्थना की और घर वापस आ गया। यह देखकर कि जिनवरने केवलज्ञान प्राप्त किया है, पवित्र और भव्य लोग संन्यास ग्रहण करनेके लिए ऋषभ जिनके पास गये। उनके लिए उन्होने जीव-अजीव आदि श्रेणियोका

उपदेश देना शुरू किया। सबसे पहले उन्होने पर्याप्तियोका कथन किया। पर्याप्ति यानी विकासका निकाय। फिर वह निम्न श्रेणीके जीवोका वर्णन करते हैं; फिर पाँच इन्द्रियोवाले निम्न श्रेणीके जीवों का। फिर विभिन्न द्वीपों और समुद्रोका वर्णन करते हैं और अन्तमें उनके विस्तार का।]

पृष्ठ 438

XI

[ऋषभ जिन भगवान्, इसके बाद विभिन्न इन्द्रियोके कार्यो और प्राणियोका वर्णन करते हैं कि जो उन्हें धारण करते है, फिर उनकी आयुका वर्णन करते हैं। जम्बूद्वीपके सामान्य भूगोलका, उसके द्वीपो-उपद्वीपों और नदियोका वर्णन करनेके बाद; ऋषभ जिन मानवी विशेषताओ और उनके गुणोका वर्णन करते हैं। फिर वे स्वर्ग और देवोंका विस्तारसे वर्णन करते है, फिर विभिन्न गुणस्थानो और कर्मप्रकृतियो और सिद्धोकी विशेषताओ और सुखोंका वर्णन करते है। जिनेन्द्र भगवान्का उपदेश सुनकर चौरासी लाख राजाओने दीक्षा ग्रहण कर ली। जो उस समय उनके गणधर कहलाते थे। इसी प्रकार ब्राह्मी और सुन्दरी भी साध्वी बन गयी। अकेला मारीचिको बोध नही हो सका। उनके पहले शिष्य सुयक्षी थे और शिष्या पियंवया या प्रियंवदा। उनके पहले मुक्ति प्राप्त करनेवाले शिष्य अनन्तवीर्य थे।]

पृष्ठ 440

XII

[अब भरतने भारतवर्षके छह खण्डोपर दिग्विजय प्राप्त करनेके लिए कूच किया। शरद् ऋतुमें, जब आसमान स्वच्छ था और सडकें सूखी थीं। वह पवित्र लोगोकी वन्दना करता है और चक्रकी परिक्रमा देता है, तथा गरीब एव जरूरतमन्द लोगोको दान करता है। उसने अपने मन्त्रियोंसे मन्त्रणा की। उसने बहुत बडी सेना ली और चक्रके साथ वह पूर्वी समुद्रके किनारे गया, वह मगध तीर्थपर विजय प्राप्त करना चाहता था। पहले उसने उपवास किया, और तब धनुष ग्रहण कर पूर्वदिशामें तीर चलाया। तीर राजाके घरमें गिरा, राजा उसे देखकर बहुत क्रुद्ध हुआ; परन्तु उसके मन्त्रियोने किसी प्रकार यह कहकर उसे शान्त किया कि चक्रवर्तीसे युद्ध करनेमें कोई लाभ नही है, और यह सबके हितमें होगा कि उन्हें सम्मान देकर उनकी अधीनता स्वीकार कर ली जाये। मगध तीर्थके राजाने ऐसा ही किया।]

XIII

[उसके बाद भरत दक्षिणकी ओर गया और (वरतनु) वरदामा तीर्थके केन्द्रपर पहुँचा। उसने फिर एक उपवास किया, और उसके बाद तीर चलाया, जो वरतनुके घरके आंगनमें गिरा। राजा वरतनु शीघ्र ही भरतके पास प्रणतिपूर्वक आया और उसकी अधीनता स्वीकार कर ली। उसके बाद भरत पश्चिम दिशाकी ओर गया और सिन्धु नदीके प्रवेशद्वारपर पहुँचा। उसने वहाँ भी उपवास किया। और लवणसमुद्रमें रास्ता बनानेके लिए प्रभास तीर्थके राजापर तीर छोडा। राजा आया और उसने उसकी अधीनता स्वीकार कर ली। उसके बाद भरतने कई देशोंपर विजय प्राप्त की, जैसे मालवा इत्यादि। और इस प्रकार समूचे आर्यावर्तपर अपना साम्राज्य स्थापित किया। उसके बाद भरत विजयार्ध पर्वतपर गया तीन खण्डोकी अपनी बाकी विजय पूरी करनेके लिए ']

पृष्ठ 441

XIV

[दक्षिणकी-तीन खण्ड धरतीकी विजय प्राप्त करनेके बाद वह विजयार्ध पर्वतपर आया। एक वहाँ आया और उससे पर्वतके गुहामुखपर प्रहार करनेके लिए कहा जिससे उसे गुफाके दूसरी जानेका रास्ता मिल सके। तब भरतने अपने सेनापतिको तदनुसार आदेश दिया।

जब उसने प्रहार किया तो गुफा फट गयी। उसके निवासियोंमें गहरी उत्तेजना हुई। पर्वतकी देवी उपहार लेकर भरतके पास आयी। भरत वहाँ छह माह रहे। उसने चक्ररत्नको गुहाके भीतर और सेनाको उसका अनुकरण करनेका निर्देश दिया। परन्तु अन्धकारमे चलना कठिन था। तब से कागणी रत्न लिया और गुहाकी दीवालपर सूर्य और चन्द्रमाका अंकन किया। उसके प्रकाशमें सेना और नागलोकमें जा पहुँची। दो नदियाँ सेनाके सामने अड़ गयी। परन्तु स्थपति (इंजीनियर) ने बनाया और सेनाने उन्हें पार किया। आवर्त और किरात दो म्लेच्छ राजा अपने क्षेत्रपर आक्रमण हुए देखकर मेहमुखसे वर्षा करवाने लगे। उन्होने एक दिन और रात वर्षा की। पुरोहितने भरतको सू दी कि सेना किस प्रकार संकटमें है! तब उसने सेनापतिको चक्ररत्नका उपयोग समूची सेनाके लिए रूपमें करनेके लिए कहा। तब सेनाने आवर्त और किरातपर आक्रमण किया। उन्होंने भरतकी अ स्वीकार कर ली। इसके बाद भरत हिमवान् पर्वतको ओर मुड़ा, सिन्धु नदीके किनारे-किनारे; उस अधिष्ठात्री देवीने उन्हे पुष्पमाला समर्पित की।]

XV

[उसके बाद भरत हिमवन्त पर्वतकी ओर गया। दूबपर बैठे हुए उसने उपवास किया, और पर्व अधिष्ठात्री देवीके उद्यानमें तीर छोड़ा। पहले उसने युद्ध करनेका इरादा किया उस योद्धाके साथ तीर छोड़ा था। परन्तु तीरपर भरतका नाम पढकर उसने उसका सम्मान करनेका निश्चय किया। आयी और भरतको उसने उपहार दिये। भरतने भी बदलेमें उसे कुछ उपहार दिये, और उसे अपने भेज दिया। आगे कूच करते हुए भरत वृषभ पर्वतके पास गया। उसने देखा कि पर्वतपर इतने नाम हुए हैं कि उसमें एक भी ऐसा स्थान नही है कि जहाँ वह अपना नाम लिख सके। किसी प्रकार उसने उस अपना नाम लिखा और इस प्रकार छह खण्ड धरतीको अपनी विजययात्रा पूरी की। देवोने इस अवसर उसकी प्रशसा की। फिर वह आगे हिमवन्त पर्वतके प्रत्यन्त प्रदेशपर चला और उचित समयपर गंगा आ गया। तब गंगा देवीने आकर उसका अभिषेक किया और सम्मानके प्रतीकस्वरूप उसे उपहार दिं भरतने भी उसे उचित सम्मानके साथ उपहार देकर विदा किया। वह विजयार्धकी तमिस गुफाके नि आया। उसने सेनापतिको आदेश दिया। उसने उसके द्वारपर पहलेकी तरह प्रहार किया। वहाँ वे माह रहे। वहाँका निवासी नृत्यमाली देव वहाँ आया, और भरतको कर दिया। गुफा फिर भी भरत सम्भव नही हुई। जब उसके मन्त्रियोंने बताया कि उसके मामा नमि और विनमि विजयार्ध पर्वतके स्वामी रूपमें पर्वत श्रेणियोंपर रहते हैं और जबतक वे मार्गसे जानेकी अनुमति नही देते तबतक भरत आगे न जा सकता। तब भरतने उनके पास सन्देशवाहक भेजा कि वे भरतको कर दें। यदि राजाके रूपमें न स तो सम्बन्धीके रूपमें सही? दोनोने यह स्वीकार कर लिया। उन्होने राजा भरतके प्रति अपना आदर-भा व्यक्त किया। कागणी मणिने प्रकाश उत्पन्न किया उसके सहारे उसकी सेना आगे बढी। उसके बाद भर कैलास पर्वतपर आया जहाँपर उसके पिता परमजिन ऋषभ तप कर रहे थे। उनके दर्शन कर उस प्रार्थना की।]

XVI

[ऋषभ जिनकी वन्दना करनेके बाद भरत कैलास पर्वतसे नीचे उतरा। उसने अयोध्याके लिए कूच किया; कई देशोंको पार कर वह अयोध्याके प्रवेशद्वारपर पहुँचा, उसके चक्रने अयोध्यामें प्रवेश नही किया। पुरोहितने बताया कि चक्रने इसलिए प्रवेश नही किया क्योंकि तुम्हारा छोटा भाई बाहुबलि अभी तक नही जीता गया और इसलिए तुम्हारी विजय अधूरी है। बाहुबलि बहुत बलवान् है और सम्भवत: भरतको हरा सकता है। परन्तु वह शान्त है। और तुम्हारे दूसरे भाई भी तुम्हें कर नही देते। यह सुनकर भरत नाराज हुआ। उसने भाइयोके पास दूत भेजे कि वे उसकी अधीनता स्वीकार कर लें। भाइयोने यह स्वीकार करनेके बजाय कैलास पर्वतपर जाना उचित समझा। बाहुबलिने अधीनता स्वीकार न करते हुए लड़नेकी चुनौती दे डाली।]

XVII

[भरतने घोषणा की कि यद्यपि वह बाहुबलिको नही मारता है क्योकि यह पिताके प्रति अपराध होगा, फिर भी वह उसे हाथीकी तरह बेडियोमें जकड देगा। भरत और बाहुबलिकी सेनाएँ आमने-सामने आ खड़ी हुईं, युद्धके नगाडे बज उठे। बाहुबलिने अपने मन्त्रीसे कहा कि वह अपने स्थानसे एक भी कदम नही बढेगा परन्तु भरतकी सेनाकी प्रगतिको रोक देगा। जब दोनोकी सेनाएँ टकरानेको थी, मन्त्रियोंने उन्हें रोक दिया क्योंकि इससे भयंकर विनाशकी सम्भावना थी। उन्होने दोनोसे द्वन्द्व युद्ध करनेकी प्रार्थना की। युद्धके तीन प्रकार थे—दृष्टियुद्ध, जलयुद्ध और मल्लयुद्ध। दोनोने इसे स्वीकार कर लिया। परन्तु सभी तीनों युद्धोमें भरत बाहुबलिसे हार गया। जब भरतको बाहुबलिने उठा लिया तो उसने अपने चक्रका ध्यान किया जो शीघ्र बाहुबलिकी परिक्रमा कर उनके दायी तरफ स्थित हो गया। बाहुबलिने अपने भाई भरतको जमीनपर उतार दिया।]

XVIII

[भरतको अपने बाहुओपर उठाते हुए बाहुबलिने उसे तीसरी बार पराजित किया। बाहुबलिने अनुभव किया कि उसने अपने बड़े भाईका अपमान किया है जो कि चक्रवर्ती है। इसलिए उसने भरतसे क्षमा माँगी और दीक्षा ग्रहण करनेकी इच्छा प्रकट की। भरतने किसी भी प्रकार भाईका राज्य लेनेकी इच्छा नही की, खासकर तब जब उसे यह याद आया कि उसे सेनाके सामने पराजित किया गया है। इसलिए उसने बाहुबलिको राज्य देना चाहा और स्वयं सासारिक जीवनसे सन्यास लेना चाहा। बाहुबलि इसके लिए तैयार नही था। मन्त्रियोने हस्तक्षेप किया और बाहुबलिने अपने पुत्रोको गद्दीपर बैठाया। वह कैलास पर्वतपर गया तपस्या करनेके लिए। उसने वहाँ एक वर्ष तप किया। भरत उससे मिलने और प्रशंसा करने आया। बाहुबलि तटस्थ रहे। वह उन योग्यताओंको सम्पादित करनेमें लगे रहे जो एक जैन मुनि अर्जित करता है। समय बीतनेपर बाहुबलिको केवलज्ञान प्राप्त हो गया इससे सभीको प्रसन्नता हुई। भरतको भी प्रसन्नता हुई कि उनका भाई केवली हो गया। इसके बाद भरतने छह खण्ड धरतीपर छह खण्ड राज्यका परिपालन किया।]